न्यायविशारद न्यायाचार्य महोपाध्याय
श्रीयशोविजय स्मृतिग्रन्थ

संपादक :
पू. मुनिप्रवर श्रीयशोविजयजी

રૂપ. ન્યાયાચાર્ય ન્યાયવિશારદ તાર્કિકશિરોમણિ મહોપાધ્યાય શ્રી ૧૦૮ શ્રીમદ્ યશોવિજયજી ગણિ સદ્ગુરુભ્યો નમઃ
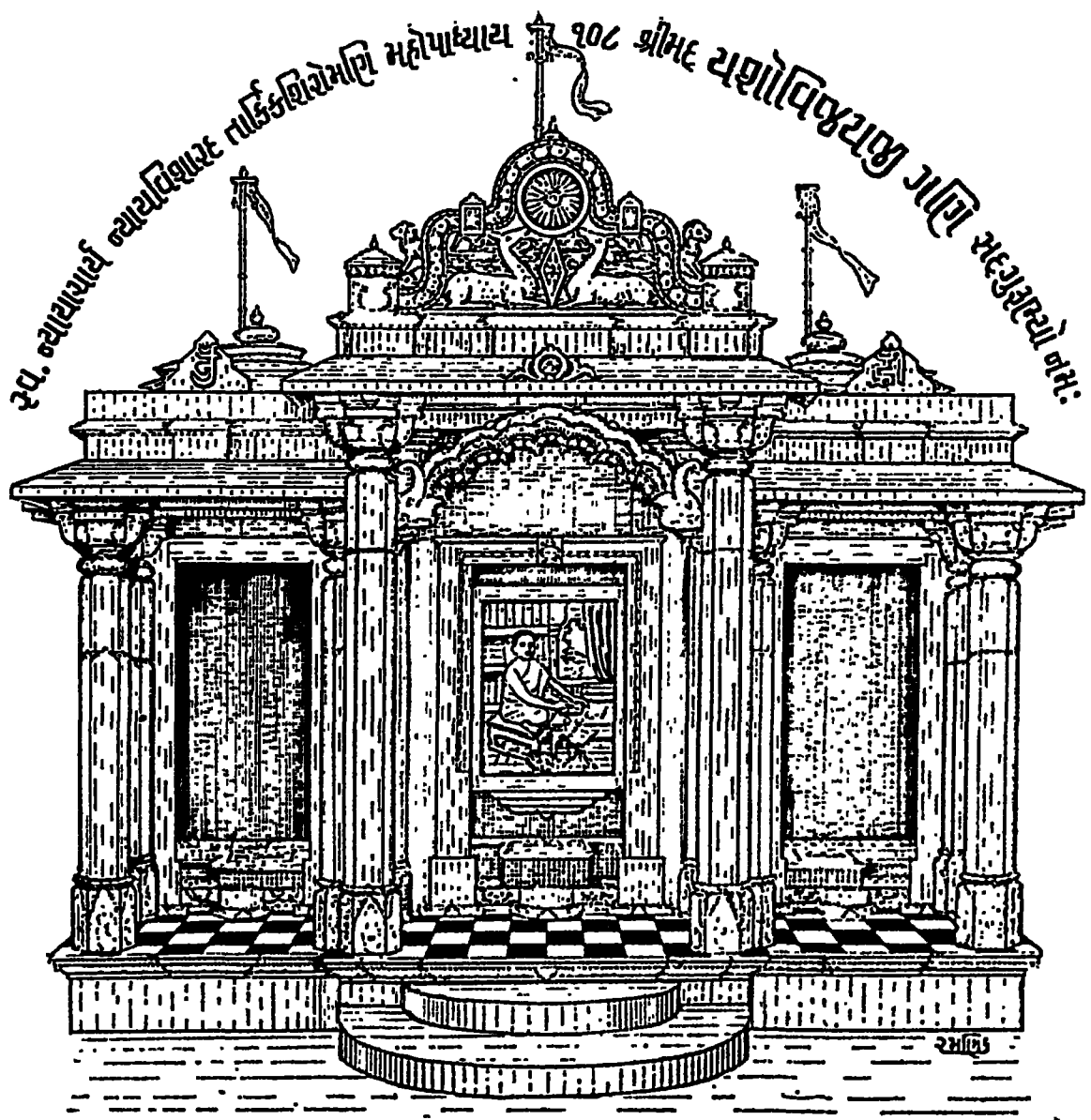
न्यायविशारद न्यायाचार्य महोपाध्याय
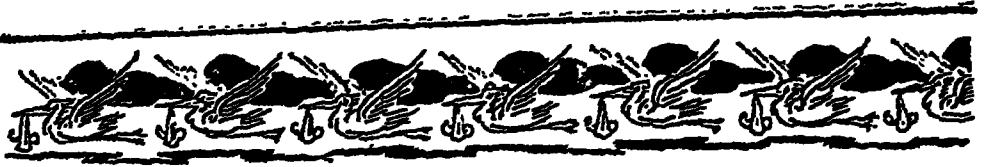
श्रीयशोविजय
स्मृतिग्रन्थ

न्यायविशारद न्यायाचार्य

महोपाध्याय श्रीयशोविजयस्मृतिग्रन्थ

☆

प्रकाशक :—

यशोभारती प्रकाशन समिति

ठे. रावपुरा महाजनगली,

वडोदरा.

☆

१९५७

☆

मूल्य रू. १२–८–०

☆

Nyaya Visharad Nyayacharya,

Mahopadhyaya

Shri Yashovijay Smruti Granth,

Published by

Yashobharati Prakashan Samitee,

Add. Raopura; Mahajana Gali;

BARODA.

1957

Price

Rs. 12-8/-

☆

प्रिन्टींग : नयन प्रि. प्रेस, नवप्रभात प्रेस तथा वसंत प्रि. प्रेस, मुद्रक जयन्ति दलाल, घीकांटा, अमदावाद.

प्रकाशक : यशोभारती प्रकाशन समिति तरफथी वकील श्रीनागकुमार नाथाभाई मकाती तथा शाह लालचन्द नंदलाल वडोदरा.

॥ जयन्तु वीतरागाः ॥

आमुख

.आजे माननीय विद्वानोना करकमलमां "न्यायविशारद न्यायाचार्य महोपाध्याय श्रीयशोविजय स्मृतिग्रंथ" अर्पण करवामां आवे छे. एमां अनेक विद्वानोए विविध दृष्टिए आलेखेली महोपाध्याय श्री. यशोविजयजीना जीवनने स्पर्शती विविध प्रकारनी सामग्रीनो संग्रह थया छे. महोपाध्यायश्रीनुं जीवन सागर जेवुं गंभीर अने प्रेरणादायी जीवनसाधनाना महा तरंगोथी ऊभरातुं अने छलकातुं हतुं, एनो कांइक साक्षात्कार आपणने प्रस्तुत स्मृतिग्रंथना अवलोकनथी थइ शकशे. प्रस्तुत ग्रंथ भविष्यमां उपाध्यायश्रीना विशिष्ट जीवनचरित्रना लेखकने मार्गदर्शक थइ पडशे. आ दृष्टिने लक्षमां राखी मारा प्रस्तुत आमुखमां हुं पण श्रीउपाध्यायजी महाराजना जीवनने समग्रपणे स्पर्शती केटलीक महत्त्वनी वीगतोनो उमेरो करुं छुं.

जन्म, दीक्षा अने अध्ययन

महोपाध्याय श्रीयशोविजयजीनो जन्म कया वर्षमां थयो हतो ? एनो उल्लेख आपणने मळतो नथी, पण **श्रीकांतिविजयजीकृत सुजसवेलीभासमां** "तेमनो जन्म **कनोडा** गाममां थयो हतो, मातानुं नाम **सोभागदे** अने पितानुं नाम **नारायण** शेठ हतुं. तेमनुं पोतानुं नाम जसवंत हतुं अने मोटाभाइनुं नाम पद्मसिंह हतुं. पंडित श्रीनयविजयजी महाराजना उपदेशथी बन्नेय भाइओए एकी साथे पाटणमां दीक्षा लीधी हती" एम जणाव्युं छे. दीक्षा लीधा पछी तेमनो अभ्यास कई रीते अने कोनी पासे थयो ?—ए तेमां जणाव्युं नथी; तेम छतां उपाध्यायश्रीना गुरु, पितामह-गुरु अने प्रपितामहगुरु विषे प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथोनी पुष्पिकाओमां **"तार्किक-शाब्दिक-सैद्धान्तिकशिरोमणीयमान सुविहितपरम्पराप्रधान महोपाध्याय श्रीकल्याणविजयगणि"**. आदि विशेषणो जोवामां आवे छे, ए उपरथी संभवतः अमुक अभ्यास तेमणे पोताना गुरु प्रगुरु आदिना सान्निध्यमां ज कर्यो हशे अने ए रीते उपाध्यायजी संस्कृत प्राकृत व्याकरण, साहित्य, तर्कशास्त्र, सैद्धान्तिक आदि विषयमां ठीक ठीक आगळ वध्या हशे अने पारंगत थया हशे. परंतु दार्शनिक अने नव्यन्यायनुं विशिष्ट ज्ञान तो तेमणे बनारसमां भट्टाचार्यना सान्निध्यमां ज मेळव्युं हतुं. ए निर्विवाद हकीकत छे.

पांडित्य

उपाध्यायजीनुं पांडित्य मात्र ग्रंथोना अध्ययन के वाचन सुधी ज मर्यादित न हतुं, तेमनुं पांडित्य घणुं ऊंडुं अने व्यापक हतुं, ए आपणे तेमणे रचेलो ग्रंथराशि उपरथी समजी कल्पी शकीए छीए. संस्कृत–प्राकृत–गूजराती आदि अनेक भाषाओ, छंद–अलंकार–काव्य आदि साहित्यग्रंथो, जैन आगमो, कर्मवाद अने जैन तत्त्वज्ञानना प्राणरूप अनेकान्तवाद उपर तेओश्रीनुं विश्वतोमुखी आधिपत्य हतुं. प्राचीन अने अर्वाचीन बन्नेय न्यायप्रणालिकाओने तेमणे एक सरखी रीते पचावी हती. पोताना जीवनमां तेओ सर्वदेशीय विशाळ ग्रंथराशिनुं अवगाहन अने पान करी गया हता. तेओश्री समर्थ तत्त्वचिंतक अने प्रौढ ग्रंथकार हता. जैन संप्रदायमां रहेली खामीओनी तलस्पर्शी समीक्षा करनार पण हता. ए ज कारणसर तेमना युगमां तेओ साधु यतिवरो अने गृहस्थ श्रीसंघने घणा कडवा थई पड्या हता, अने तेथी तेमनी तथा तेमना ग्रंथराशिनी अक्षम्य उपेक्षा के अवज्ञा थई हती. तेम छतां तेमना पांडित्यने छाजे तेवी निर्भयता अने धीरता तेमनामां सदाय एक धारी रीते टकी रह्यां हतां. आपणने जाणीने आश्चर्य अने दुःख थाय तेवी बाबत छे के—तेओश्रीना अनेकानेक ग्रंथो लगभग बीजी नकल थया सिवाय ज रही गया छे. जैन श्रीसंघना सौभाग्यनी ए खरेखर खामी छे के–तेने त्यां सिद्धसेन दिवाकर, यशोविजयोपाध्याय आदि जेवी ज्ञानस्वरूप विभूतिओ द्वेष्य बनी छे. श्रीसिद्धसेन दिवाकरे तो विंशतिद्वात्रिंशिका ग्रंथना अंतमां पोता माटे "द्वेष्य श्वेतपट" एवुं विशेषण पण आप्युं छे, ए एक विचारवा जेवी वस्तु छे. पूनाना भांडारकर इन्स्टीट्युटना संग्रहनी विंशति-द्वात्रिंशिकानी प्राचीन ताडपत्रीय प्रतिमां "द्वेष्य श्वेतपट" ए प्राचीन विशेषण आजे पण सचवाएलुं छे. आवी ज फरियाद आचार्य श्रीहरिभद्र, आचार्य शीलांक, श्रीयशोविजयोपाध्याय आदिए पण पोताना ग्रंथोमां करी छे.

ग्रंथनिर्माण

उपाध्यायश्रीए पोताना जीवनमां विशाळ ग्रंथराशिनुं निर्माण कर्युं हतुं. अनेक विषयोने स्पर्शतो तेमनो ए ग्रंथराशि छे. तेओश्री प्राचीन–अर्वाचीन बन्नेय न्यायप्रणाळीओमां पारंगत होवा छतां तेमणे पोताना ग्रंथोमां नव्यन्यायनी सरणिने ज अपनावी छे. गमे तेवो नानो के मोटो, दार्शनिक के आगमिक, कर्मवादविषयक के अनेकान्तवादविषयक, स्तुति के स्तोत्र आदि गमे ते विषयनो ग्रंथ होय, तेमां उपाध्यायजीनुं नैयायिकपणुं झळक्या सिवाय क्यारेय रह्युं नथी. एकना एक विषयने तेओ गमे तेटली वार चर्चे तो पण तेमां नवीनता ज जोवामां आवे, ए उपाध्यायश्रीना चिंतन अने प्रतिपादननी महत्ता अने विशेषता छे. उपाध्यायजीए पोताना जीवनमां केटला ग्रंथो रच्या हता? तेनी निश्चित संख्या क्यांय नोंधाई नथी, तेम छतां तेमणे पोते पोताना ग्रंथोमां जाते ज जे जे ग्रंथोनां नामोनो उल्लेख कर्यो छे, ते द्वारा जाणवा मळे छे के—आजे आपणे तेमना संख्याबंध ग्रंथोना दर्शनथी ज

नहिं, नामश्रवणथी पण वंचित छीए. जेम जेम तेमना अलभ्य ग्रंथोनी प्राप्ति थती जाय छे तेम तेम तेमना नवा नवा अलभ्य ग्रंथोनां नामो मळतां ज जाय छे. छेल्लां वर्षोमां अणधारी रीते तेमना अप्राप्य जे ग्रंथो प्राप्त थया, ते द्वारा अलभ्य ग्रंथोनां नामो जाणवामां पण आव्यां छे. एटले आपणे निरंतर अप्रमत्त रही आपणा स्थान–स्थानना नाना–मोटा ग्रंथभंडारोमां तेओश्रीना अलभ्य ग्रंथोने काळजीपूर्वक शोधवा–तपासवाना ज रहे छे. जो झीणवट पूर्वक आपणा प्राचीन ज्ञानभंडारोने तपासीशुं तो आशा छे के—हजु पण आपणे तेमना अनेक ग्रंथो मेळवी शकीशुं. छेल्लां वर्षोमां ज्ञान-भंडारना खंतभर्या अवलोकनने प्रतापे आपणे नीचे मुजबना सत्तर ग्रंथो मेळवी शक्या छीए— १ अस्पृशद्गतिवाद अपूर्णनी पूर्णता २ आत्मख्याति ३ आर्षभीयचरितमहाकाव्य अपूर्ण ४ काव्यप्रकाश टीका खंडित, ५ कूपदृष्टान्तविशदीकरण अपूर्णनी पूर्णता ६ प्रमेयमाला अपूर्ण ७ वादमाला ८ वादमाला अपूर्ण ९ विजयप्रभसूरि क्षामणक विज्ञप्तिपत्र १० विषयतावाद ११ वैराग्यरति किंचिदपूर्ण १२ स्याद्वादरहस्य (लघु) १३ स्याद्वादरहस्य (मध्यम) अपूर्ण १४ स्याद्वादरहस्य (बृहद्) अपूर्ण १५ सिद्धान्तमंजरी शब्दखंड टीका अपूर्ण. १६ योगविन्दुअवचूरि १७ योगदृष्टिसमुच्चय अवचूरि अपूर्ण. आ सत्तर ग्रंथो पैकी नव ग्रंथो अधूरा ज मळ्या छे, बे ग्रंथो के जे पहेलां अपूर्ण मळ्या हता ते पूर्ण थया छे अने बाकीना छ ग्रंथो नवा संपूर्ण मळ्या छे. आ ग्रंथो सूरिसम्राट् श्रीविजयनेमिसूरीश्वरजी म०, श्रीविजयउदयसूरीश्वरजी म०, श्रीविजयमनोहरसूरिजी म०, पं० श्रीरमणीकविजयजी अने श्रीयशोविजयजी म० आदिना परिश्रमपूर्वकना ज्ञानभंडारोना अवलोकनथी प्राप्त थया छे. उपरोक्त ग्रंथोना उपलक अवलोकनथी **श्रीपूज्यलेख, सप्तभंगीतरंगिणी न्यायवादार्थ** आदि अलभ्य ग्रंथोनां नामो नवां पण जाणवा मळ्यां छे. श्रीपूज्यलेख ए कोई सामान्य विज्ञप्तिलेख नथी, परंतु ए एक दार्शनिक पदार्थोनी चर्चा करतो प्राकृत भाषानो पत्ररूप ग्रंथ ज हतो. सप्तभंगीतरंगिणी ए नामनो दिगंबराचार्यकृत ग्रंथ होवानी जाण तो आपणने हती ज, परंतु श्रीउपाध्यायजी महाराजे पण ए नामनो ग्रंथ रच्यो हतो ए जाणवामां आव्युं होई हवे दरेक विद्वानोए सप्तभंगीतरंगिणी नामना ग्रंथनी प्रति कोई पण भंडारमां होय तो तेने चोकसाइथी तपासवी जोइए. उपाध्यायश्रीए **न्याय-विशारद** थया पछी सो ग्रंथोनी रचना करी त्यारे तेमने **न्यायाचार्य** तरीके संबोधवामां आव्या हता, ए सो ग्रंथो कया? तेनो कशो पत्तो नथी. परंतु **तिङन्वयोक्ति विषयतावाद काव्यप्रकाशटीका अलंकार-चूडामणिटीका** वगेरे साहित्यिक ग्रंथो न होइ शके? ए विचारवा जेवो प्रश्न छे. एज प्रमाणे रहस्य-पदांकित १०८ ग्रंथो रचवानो तेमनो संकल्प हतो, ते पैकीना केटला ग्रंथो तेमणे रच्या हता अने पोताना ए संकल्पने तेओ सर्वांशे पार पाडी शक्या हता के नहिं?—ए वात पण अज्ञात ज छे. आज सुधीमां आपणे तेमना रहस्यपदांत प्रमारहस्य, नयरहस्य, स्याद्वादरहस्य, भाषारहस्य अने उपदेशरहस्य ए पांच ग्रंथोनां नामोने जाणी शक्या छीए. आ सिवाय बीजा कोई रहस्यपदांत ग्रंथना नामनो उल्लेख आपणने तेमना कोई ग्रंथमांथी हजी सुधी मळ्यो नथी. एटले आ विषयमां केम बन्युं हशे ए शंकास्पद

वस्तु छे. आटली वात संस्कृत–प्राकृत ग्रंथो विषे थई. गूजराती भाषामां पण द्रव्यगुणपर्यायरास, सम्यक्त्वचतुष्पदी–षट्स्थानकरास, जंबूस्वामिरास, श्रीपालरास जेवी मोटी कृतिओ अने बीजी मध्यम अने लघु शास्त्रीय, आध्यात्मिक अने भक्तिरस विषयक रचनाओ तेमणे घणी घणी करी छे. केटलीक संस्कृत-प्राकृत–गूजराती कृतिओ उपर बालावबोधो – गूजराती अनुवादो पण रच्या छे. ए रचनाओ जोतां आपणुं लक्ष्य एक वात तरफ खास जाय छे के–जेम तेओश्रीए दार्शनिक आदि विषयोने संस्कृत–प्राकृत भाषामां आलेख्या छे तेज रीते तेमणे संस्कृत–प्राकृत भाषाथी अपरिचित तत्त्वज्ञानरसिक महा-नुभावोनी जिज्ञासा पूरवा ए विषयोने गूजराती भाषामां पण उतार्या छे. दार्शनिक, तात्त्विक, चार्चिक आदि गंभीर विषयोने लोकभोग्य भाषामां उतारवा माटेनी विरलजनसुलभ कुशलता उपाध्यायश्रीमां केवी हती? अने तेओश्री पोताना वक्तव्यने परिमित शब्दोमां गद्य के कवितामां केवी रीते आलेखी शकता हता? तेनुं भान आपणने तेमनी द्रव्यगुणपर्यायरास बालावबोध सहित, सम्यक्त्वचतुष्पदिका बालावबोध सहित, श्रीपालरास चतुर्थखंड, विचारबिंदु, तत्त्वार्थ बालावबोध, ज्ञानसार बालावबोध, अध्यात्ममतपरीक्षा बालावबोध आदि कृतिओ द्वारा थाय छे. आजे तेओश्रीनी आवी भाषाबद्ध नानी–मोटी रचनाओ एकंदर पचास उपरांत प्राप्त थाय छे. तेमना ग्रंथराशिनी संपूर्ण यादी स्मृतिग्रंथना संपादक विद्वान् मुनिवरे आ ग्रंथने अंते आपी छे.

उपाध्यायजीनी स्वहस्त लिखित प्रतिओ

उपाध्यायजी महाराजे जे जे ग्रंथो रच्या हता, ते बधायनी नहि, तो पण नोंधपात्र गणी शकाय एटली तेमणे रचेला ग्रंथोनी निश्चितरूपे मानी शकाय तेवी स्वहस्तलिखित प्रथमादर्शरूप प्रतिओ आजे आपणा ज्ञानभंडारोमां जोवा मळे छे. — १ अस्पृशद्गतिवादनुं प्रथम पत्र २ आर्षभीय महाकाव्य अपूर्ण ३ तिङन्वयोक्ति अपूर्ण ४ निशाभुक्तिप्रकरण ५ विजयप्रभसूरिक्षामणक विज्ञप्तिपत्र ६ सिद्धान्तमंजरी शब्दखंड टीका अपूर्ण ७ जंबूस्वामिरास, आ सात प्रतिओ मारा पोताना संग्रहमां छे. १ आराधक-विराधकचतुर्भंगी स्वोपज्ञ टीकासह पाटण तपागच्छना भंडारमां छे. १ अध्यात्मसार २ प्रमेयमाला अपूर्ण ३ द्रव्यगुणपर्यायरास बालावबोध, ४ धर्मपरीक्षा स्वोपज्ञ टीकामां उमेरण, आ चार ग्रंथो अमदावाद पगथीआना–संवेगीउपाश्रयना ज्ञानभंडारमां छे. १ आत्मख्याति २ गुरुतत्त्वविनिश्चय ग्रंथनो अंतिमभाग ३ नयरहस्य ४ भाषारहस्य ५ वादमाला ६ वादमाला अपूर्ण ७ स्याद्वादरहस्य ८ मार्गपरिशुद्धि, ९ वैराग्यकल्पलता १० योगबिन्दुअवचूरि ११ योगदृष्टिसमुच्चयअवचूरि अपूर्ण १२ स्याद्वादरहस्य (बृहद्) अपूर्ण. आ बार प्रतिओ अमदावाद देवशाना पाडाना ज्ञानभंडारमां छे. १ तत्त्वार्थवृत्ति २ वैराग्यरति किंचिदपूर्ण ३ स्तोत्रत्रिक ४ उत्पादादिसिद्धिप्रकरण-टीका त्रूटक अपूर्ण, आ चार ग्रंथो अमदावाद डेलाना ज्ञानभंडारमां छे. आ उपरांत मारी धारणा प्रमाणे डेलाना भंडारमां १ उपदेशरहस्य २ कर्मप्रकृतिवृत्ति ३ वीरस्तुति न्यायखंडखाद्य स्वोपज्ञ वृत्तिसह आदि ग्रंथो पण उपाध्यायजी महाराजना स्वहस्तलिखितज होवा जोइए. न्यायालोकनी प्रति सुरत जैनानंदपुस्तकालयमां छे. योगविंशिकावृत्तिनी प्रति भावनगर श्रीआत्मानंद जैन सभामां

रहेला भक्तिविजयजी म०ना ज्ञानभंडारमां छे. १ विषयतावाद अने २ स्तोत्रावली—स्तोत्रत्रिक, आ बे ग्रंथो खंभात श्रीजैनशाळामांना श्रीनीतिविजयजी महाराजना ज्ञानभंडारमां छे. अष्टसहस्री पूना भांडारकर इन्स्टीट्युटमां छे. १ काव्यप्रकाशटीका त्रूटक अपूर्ण २ वादमाला, आदि ग्रंथो पूज्य सूरिसम्राट् श्रीविजयनेमिसूरीश्वरजी म०ना संग्रहमां छे. मानविजयोपाध्याय कृत धर्मसंग्रहनी संशोधित अने परिवर्धित करेली प्रति पूज्यपाद आचार्य श्रीसिद्धिसूरीश्वरजी म०ना विद्याशाळाना ज्ञानभंडारमां छे. आ सिवाय तेमना हस्ताक्षरनी भ्रान्ति करता अनेक ग्रंथो जोवामां आव्या छे ते छतां जेने विषे चोक्कस खात्री नथी थई तेनां नामोने अहीं जतां कर्यां छे.

उपर जणाव्या प्रमाणे उपाध्यायश्रीना स्वरचित ग्रंथोनी स्वहस्तलिखित मूळ प्रतिओ—पहेला खरडाओ, जे आजे आपणा सामे विद्यमान छे, ए जोतां आपणने प्रतीति थाय छे के—तेमनी तलस्पर्शी विचारधाराओना प्रवाहो केटला अविच्छिन्न वेगथी वहेता हता? साथे साथे तेमनुं प्रतिभापूर्ण पांडित्य, भाषा, विषय अने विचारो उपरनुं प्रभुत्व एटलां आश्चर्यजनक हतां के तेमनी कलम अटक्या विना दोडी जती आ खरडाओमां देखाय छे. आवे समये तेओ शाही कलम कागळ के लिपिना जाडा—पातळापणा आदिनो विचार करवा जराय थोभता नहोता. तेमनी रचनाओना आ खरडाओमां चेर—भूस पण घणी ओछी जोवामां आवे छे. परंतु स्याद्वादरहस्यना खरडामां विषयनी गंभीरताने लीधे के गमे ते कारणे घणीज चेर—भूस थई छे. आवा मूळ खरडाओने "परडो" "वीवू" ए नामोथी ओळखता हता. भाषारहस्य ग्रंथनी प्रतिमां "भाषारहस्यवीवू" एम लखेलुं छे. वैराग्यकल्पलतामां "वैराग्यकल्पलतापरडो" एम लखेलुं छे. विश्वनी विभूतिस्वरूप महापुरुषनी आवी स्वहस्तलिखित मूळ प्रतिओनो आटलो विशाळ राशि, ए कोई एक व्यक्ति के प्रजानाज नहि, पण आखा विश्वना अलंकार समान छे.

आ उपरांत उपाध्यायश्री पोता माटे काम पडे अन्यकृत ग्रंथोनी नकलो पण करी लेता हता. भंडारोमां आवी केटलीक प्रतिओ जोवामां पण आवी छे. भावनगरना ज्ञानभंडारमां हरिभद्रसूरिकृत अष्टकनी प्रति तेओश्रीना हस्ताक्षरमां छे. पगथीआना उपाश्रयना ज्ञानभंडारमां विंशतिद्वात्रिंशिकानी प्रति श्रीनयविजयजी - श्रीयशोविजयजी गुरु - शिष्ये मळीने लखी छे. देवशाना पाडाना ज्ञानभंडारमांथी रुद्रनाथ वाचस्पति भट्टाचार्यकृत वादपरिच्छेदनी प्रति तेओश्रीए जाते ज लखेली मळी आवी छे. पं. श्रीमहेन्द्रविमलगणिना देवशाना पाडाना ज्ञानभंडारमांथी मळेली द्वादशारनयचक्र उपरनी श्रीसिंहवादि गणि क्षमाश्रमण विरचित टीकानी प्रतिनी नकल तेमना तेमज तेमना साथीओना हाथे लखायेली छे. आ प्रति तो जैनशासन अने वाङ्मयना शृंगाररूपज गणाय. आ प्रतिनो परिचय प्रस्तुत स्मृतिग्रंथमां जुदो छापवामां आव्यो छे. आ बधुं जोतां अने विचारतां तेओश्रीना अप्रमत्तभाव अने सततोपयोगिपणा माटे समर्थ योगिओने पण मान जागे तेवी वात छे. आवा सतत जाग्रत महापुरुषो पण पोताना जीवननी समग्र भावनाओने क्यांय परिपूर्ण करीने विश्वमांथी विदाय छे, एम बनतुं ज नथी. अने तेथी ज आजे तेमना प्रमेयमाला, कर्मप्रकृति अवचूरि, आर्षभीय चरित महाकाव्य

आदि ग्रंथो त्रुटक त्रुटक अपूर्ण रहेला पण जोवामां आवे छे. संसारमां कुदरतानुसार क्यांक क्यांक ज आवी विशिष्टज्ञानसंपन्न संस्कारी विभूतिओ जगतना प्राणीओना पुण्यराशिथी आकर्षाईने अवतार ले छे. जेमना अवतारथी विश्व कृतकृत्य थई जाय छे. अने ए विभूतिओ विश्वने अपूर्व वारसो अर्पण करीने विलय थई जाय छे.

ज्ञानभंडार

उपाध्यायजी महाराजनो एक ज्ञानभंडार—एटले विशिष्ट पुस्तकोनो संग्रह हतो. ए क्यां स्थळे हतो तेनी माहिती आपणने मळी नथी, पण ते जरूर विशिष्ट होवो जोईए—एमां शंका नथी. एमनो ए भंडार आजे वीखराई गयो छे. ए पण एक आश्चर्यनी वात छे के तेमना पोताना ग्रंथोनी पोताना हाथनी नकलो पण जुदे जुदे स्थळे विखराएली जोवामां आवे छे. आपण दरेक मानी साधनोनां प्रबळता माटे कई नवाज पानाना संग्रहमांथी योगविंशिकावृत्ति आदि जेवा ग्रंथो मळी आव्या छे. आम केम थयुं हशे?—ए एक कल्पनानी वस्तु ज छे. आम छतां तेमनो पुस्तकसंग्रह—ज्ञानभंडार हतो, ए वातने देवशाना पाडाना भंडारमां अलंकारचूडामणि, उणादिगणविवरण आदि ग्रंथोने अंते मळता "संवत् १७४५ वर्षे चैत्र शुदि ५ श्रीयशोविजयगणिचित्कोशे इयं प्रतिः पं० श्रीमानविजयगणिना निजगुरूणां चित्कोशे मुक्ता पुण्यार्थम् ॥" इत्यादि उल्लेखो द्वारा निश्चित रीते जाणी शकीए छीए.

गुरु-शिष्यनुं वात्सल्य अने भक्ति

महोपाध्याय श्रीनयविजयजी महाराज अने श्रीयशोविजयजी महाराज—आ गुरुशिष्यनी जोडी, ए अनेरभावनुं एक शुभ प्रतीक ज हतुं. श्रीनयविजयजी महाराजे पोताना प्राणप्रिय अतिसुयोग्य बाळशिष्यने पुत्रनी जेम सदा पाळ्या छे. शैशव कालथी आरंभी जीवनभर तेओए तेमनी चिंता करी छे अने सहकार आप्यो छे. सानिध्यथी मांडीने ग्रंथरचनाना कार्य सुधीमां तेमणे श्रीयशोविजयजी महाराजने वात्सल्यथी साथ आप्यो छे. पोताना शिष्यने अभ्यास कराववा माटे तेओश्रीए काशीनो प्रवास खेड्यो हतो, अने साथे रही केटलीक सहायता करी हती. श्रीयशोविजयोपाध्याय जे ग्रंथो रचे तेनी विशिष्ट शुद्ध नकलो पण तेओ करता हता. द्वादशारनयचक्र, सिद्धसेनीया द्वात्रिंशिका विगेरे ग्रंथोनी शुद्ध प्रामाणिक नकलो करवामां पण तेमनी सहाय हती. वैराग्यकल्पलता, नयरहस्य, प्रतिमाशतक आदि ग्रंथोनी तेओए करेली नकलो आजे पण जोवा मळे छे. श्रीयशोविजयजी महाराजमाटे अध्ययन आदिमां उपयोगी कालनिबंध ग्रंथोनी तेमणे नकलो करी हती. सांप्रदायिक विषम प्रसंगोमां पण तेओश्री पोताना शिष्यना सहकार अने वात्सल्यथी डग्या नथी. आवा गुणभंडार परमगुरु प्रत्ये श्रीयशोविजयजी महाराजनी भक्ति पण अपूर्व अने अखंड हती अने तेथी ज प्रसंगे प्रसंगे तेमना मुखमांथी "[illegible]" अने "ते गुरुना गुण गाइ शकुं केम गावाने गहगहिओ रे, हरखवडो" आदि वाक्यो सरी पड्यां छे. आवी गुरु-शिष्यनी जोडी अंतरमां

स्नेह, वात्सल्य अने भक्तिनी ऊर्मिओने अनुभवी केटली मलकाती हशे ! ए तो तेओ जाते के ज्ञानी ज जाणी शके.

उपाध्यायजीनी अनेकरूपता

मानवस्वभाव सामान्य रीते हंमेशां संयोगवशवर्त्ती ज छे, अने प्रसंग आवतां तेमां विविध भावो जागी ऊठे छे. एटले उपाध्यायजीना ग्रंथो अने तेमना जीवनप्रसंगोनो आपणे विचार करीए तो तेमनामां अनेक भावो जोवामां आवे छे. तेओश्री एकांत गुरुभक्त हता. एज कारणसर तेमणे गुरुतत्त्वविनिश्चयना प्रारंभमां "अम्हारिसा वि मुक्खा पंतीए पंडियाण पविसंति । अण्णं गुरुभत्तीए किं विलसियमब्भुयं इत्तो ? ॥" एम गायुं छे. पोताना विचारो माटे तेओ अडग अने निर्भय हता. न्यायालोकना अंतमां तेमणे "अस्मादृशां प्रमादग्रस्तानां चरणकरणहीनानाम् । अब्धौ पोत इवेह प्रवचनरागः शुभोपायः ॥" एम लखी पोतानी वास्तविक अपूर्णताने व्यक्त करी छे. क्यारेक पोतानी ग्रन्थ रचनाना विषयमां विषम वातावरणनो अनुभव थतां तेमना अंतरमांथी "अनुग्रहत एव नः कृतिरियं सतां शोभते, खलप्रलपितैस्तु नो कमपि दोषमीक्षामहे ।" तेमज "ग्रन्थेभ्यः सुकरो ग्रन्थो मूढा इत्यवजानते ।" इत्यादि कटु अने हृदयनो उकळाट दर्शावती उक्तिओ पण नीकळी पडी छे. प्रतिमाशतकनी टीकामां "एतेन लुम्पाकानां मुखे मषीकूर्चको दत्तः ।" ए प्रमाणे सांप्रदायिक कठोरताने रजू करता पण तेओ जोवामां आवे छे. दार्शनिक पदार्थनुं विवेचन करतां दार्शनिकोनी अहंता पण जोवा मळे छे. सीमंधरजिनविनतिस्तवन आदिमां साधुजीवन अने गृहस्थजीवननी सदोषता जोई ते उपर कटाक्ष करता पण तेओ देखाय छे. अने ज्ञानसार, अध्यात्मसार, द्वात्रिंशद्द्वात्रिंशिका अने सुजसविलासमांना आध्यात्मिक पदोमां तेओ मध्यस्थभाव, असाम्प्रदायिकता अने समरसमां झीलता दृग्गोचर थाय छे. द्वात्रिंशद्द्वात्रिंशिकानी २० मी द्वात्रिंशिकामां "महर्षिभिरुक्तम्" एम लखीने तेओश्रीए दिगंबराचार्यकृत ग्रन्थनी साक्षी आप्या पछी आ प्रमाणे जणाव्युं छे— "न च एतद्गाथाकर्तुर्दिगम्बरत्वेन महर्षित्वाभिधानं न निरवद्यम्' इति मूढधिया शंकनीयम्, सत्यार्थकथनगुणेन व्यासादीनामपि हरिभद्राचार्यैस्तथाभिधानादिति" अर्थात् "आ गाथाना कर्ता आचार्य दिगंबर होवाथी तेमने महर्षि तरीके लखवुं योग्य नथी—एवी कोइए शंका न करवी. कारण के तात्त्विक वस्तुने कहेवाना गुणने ध्यानमां लई श्रीहरिभद्राचार्ये व्यास आदिने पण महर्षि तरीके जणाव्या छे." आ प्रमाणे तेओश्री विविधभावोथी भरपूर देखाता छतां समप्रभावे विचार करतां तेओ तात्त्विक ज्ञान अने शुद्धजीवनसाधनाना पिपासु साधक महापुरुष हता.

सुजसवेलीभास

श्रीयशोविजयजी म०ना जीवनचरित्रने लगती टूंक माहिती आपणने मुनि श्रीकांतिविजयजी (अनुमान महोपाध्याय श्रीविनयविजयजीना गुरुभाई)ए रचेली चार ढाळ अने ५२ गाथा प्रमाण सुजसवेलीभासमांथी मळी आवे छे. जेनो टूंक सार आ प्रमाणे छे.

"गूजरातमां कनोडुं नामे गाम, नारायण नामे व्यापारी अने तेनी पत्नी सोभागदे. तेमने पद्मसिंह अने जसवंत नामे पुत्रो हता. सं. १६८८ मां श्रीनयविजयजी पंडिते कुणगेरमां चोमासुं कर्युं. त्यांथी कनोडे गया. एमना उपदेशथी जसवंते अणहिलपुर पाटणमां श्रीनयविजयजी पासे दीक्षा लीधी. नाम यशोविजय राख्युं. मोटाभाई पद्मसिंहे पण साथे ज दीक्षा लीधी अने नाम पद्मविजय राख्युं. यशोविजयजीए [गुरुपासे] अभ्यास कर्यो. वि० सं० १६९९मां अमदावादमां संघसमक्ष आठ अवधान कर्यां. एमनी प्रतिभाथी प्रसन्न थई शा० धनजी सूरा नामना शेठे श्रीनयविजयजी म०ने कह्युं के—आ साधु (यशोविजयजी) घणा सुयोग्य छे, भणावो तो हेमाचार्यजी जेवा थशे. ए शेठनी प्रेरणाथी यशोविजयजीए काशी जई षड् दर्शननो अभ्यास कर्यो अने न्यायविशारद थया. धनजी सूराए यशोविजयजीना पठन माटे बे हजार सोनामहोरनुं खर्च कर्युं. भणीने पाछा अमदावाद आव्या. श्रीसंघे तेमनो सत्कार कर्यो. नागोरीशाळामां ऊतर्या. महबतखाननी सभा समक्ष अढार अवधान कर्यां. एथी प्रसन्न थई यशोविजयजीने उपाध्याय पदवी आपवा माटे महबतखाने जाते ज श्रीविजयदेवसूरिने विनंति करी अने सं. १७१८ मां तेमनी उपाध्याय पदवी थई. सं. १७४३ मां डभोईमां चोमासुं कर्युं अने त्यां ज स्वर्गवासी थया. त्यां शीत तळावडी पासे तेमनुं थूभ कराव्युं छे".

उपाध्यायजीना समकालीन (?) मुनिवरे सुजसवेलीभासमां आटली विगत रजू करी छे. परंतु आजे आपणा सामे बीजा पुरावाओ विद्यमान छे ते जोतां भासमांना संवतो वगेरे ते कारणे विसंवादित ठरे छे.

१. भासमां 'उपाध्यायजी कनोडामां जन्म्या हता.' ए अने मातपितानां नाम आपवामां आव्यां छे, पण जन्मसंवत अने दीक्षा समये उपाध्यायजीनी वय केटली हती? ते विषे भासकार मौन छे.

२. भासकारे उपाध्यायजीनी दीक्षानुं वर्ष सं. १६८९ (?) जणाव्युं छे. परंतु आजे आपणा सामे श्रीनयविजयजी महाराजे श्रीजयविजयजी म० माटे सं. १६६३ मां लखेल मेरुपर्वतनो चित्रपट, तेमज श्रीयशोविजयजी महाराजे सं. १६६५ मां लखेल हैमधातुपाठनी प्रति अने सं. १६६९ मां लखेल [illegible] आदि विद्यमान छे. ए स्थितिमां भासकारे आपेला दीक्षासंवतनो मेळ केम बेसे? ए एक कोयडा जेवी बीना छे.

३. सं. १६९९मां अमदावादमां आठ अवधान कर्यां पछी यशोविजयजी दर्शनशास्त्रोना, खास करीने न्यायना अभ्यास माटे काशी गयानुं भासकारे जणाव्युं छे. ज्यारे स्याद्वादरहस्य जेवा समर्थ ग्रन्थनी रचना सं. १७०१मां कपडवंज पासेना आंतरोली गाममां करी छे अने ते पहेलां प्रमारहस्य, [illegible], वादमाला आदि संख्याबंध समर्थ दार्शनिक आदि ग्रन्थोनी रचना तेओ करी चूक्या छे. एटले ए प्रश्न ऊभो थाय छे के तेओ काशी पहोंच्या क्यारे? अध्ययन केटलो समय कर्युं? अने

न्यायाचार्यपद मेळववा पहेलां जे सो ग्रन्थोनी रचना करी ते क्यारे करी ? आ बधो विचार करतां १६९९ मां काशीए जवुं असंगत ज ठरे छे.

४ स्वर्गवासने लगतुं अंतिम चोमासुं उपाध्यायजीए डभोइमां कर्युं, परंतु एनुं वर्ष भासकारे १७४३ आप्युं छे ए विचारणीय छे. कारण के उपाध्यायश्रीए प्रतिक्रमणहेतुगर्भस्वाध्यायमां

"सुरति चोमासु रही रे, वाचक जस करि जोडी, वइ० ।
युग युग मुनि विधु वत्सरइ रे, देयो मंगल कोडी वइ० ॥६॥"

ए प्रमाणे १७४४नुं चातुर्मास सुरतमां कर्यानुं जणाव्युं छे. अगियारअंगनी सज्झायोने अंते पण "युग युग मुनि विधु वच्छरइ रे, श्री जसविजय उवझाय, टोड० । सुरत चोमासु रही रे, कीधो ए सुपसाय, टो०॥६॥" आ रीते सं० १७४४ नुं चातुर्मास सुरतमां रह्यानुं जणाव्युं छे. केटलाकनुं मानवुं छे के 'युग' शब्दथी बे संख्या लई '१७२२ वर्ष' मानवुं, पण 'युग' शब्दथी मुख्यपणे चार संख्या लेवाय छे. ए दशामां अहीं बे संख्या लेवी ए एकाएक घटमान करवुं कठिन छे. ए निर्णय एक रीते थइ शके के—जो आ बे स्वाध्यायनी के बेमांथी कोई एकनी सं. १७४४ पहेलां लखेली प्रति मळी आवे. एटले आ निर्णय करवा माटे आपणे भंडारोनी तपास करवी रही.

आ रीते विचार करतां एकंदर भासकारनी संवतने लगती वातनो कोई मेळ मळतो नथी. एटले उपाध्यायजीना जीवनचरित्र अंगेना आ प्रश्नो विद्वानोए पुनः गंभीर रीते चर्चवाना ज रहे छे.

अंतिम निवेदन

अंतमां सौनावती निवेदन छे के–ज्ञानतेजोमूर्त्ति महोपाध्यायश्रीए जे धरा उपर पोताना पुनीत जीवननी समाप्ति करी समाधि लीधी हती, एज धरामां अवतार लेनार एज नामधारी मुनिवर श्रीयशोविजयजी "यशोविजयसारस्वतसत्र" ऊजववा पूर्वक आपणने एक अपूर्व स्मृतिग्रंथ अर्पण करे छे, तेनो आपणे सौ धन्यवाद प्रदानपूर्वक बे हाथ पसारीने स्वीकार करीए छीए.

तेओ उपाध्यायजी महाराजश्रीना जीवनने स्पर्शती बीजी विशिष्ट कृति आपणने आपवा माटे प्रयत्नशील छे. ए आपणा सौ माटे सविशेष आनंदनी वात छे. सौने जाणीने आनंद थशे के–श्रीयशोविजयजी अने तेमना गुरु–प्रगुरुश्रीनी जीवंत प्रेरणाथी आवी एक कृति माटे प्रो० भाईश्री हीरालाल रसिकलाल कापडीया–जेओ एक सुयोग्य विद्वान् लेखक छे–प्रयत्न करी रह्या छे.

आ उपरांत उपाध्यायजी महाराजनी अपूर्व रचनाओने प्रकाशित करवा माटे पण तेओ उद्यमशील छे, ए ते करतां य विशेष आनंदनी वात छे. आपणे सौ आशा राखीए छीए के आ बधी सामग्री आपणने सत्वर प्राप्त थाय ।

—मुनि पुण्यविजय

॥ श्रीवाचकवर्येभ्यो नमः ॥

प्रकाशकीय निवेदन

जैनधर्मना महान प्रभावक, भारतीय विभूति, कूर्चालशारदा, गुजरातना ज्योतिर्धर पू. उपाध्यायजी भगवानना जीवन अने कवनने स्पर्शता लेखोथी समृद्ध 'न्यायविशारद न्यायाचार्य महोपाध्याय श्रीयशोविजय स्मृतिग्रन्थ' प्रगट करतां आजे अमने अत्यन्त आनंद थाय छे. वधु आनंद तो एथी थाय छे के आवो प्रयत्न अभूतपूर्व थयो छे. ने वळी तेओश्रीना नाम साथे संकळायेली, नवी स्थपायेली 'श्रीयशोभारती प्रकाशन समिति' तरफथी बहार पडे छे. ए रीते समिति प्रकाशननी दिशामां पहेलुं डग भरी रही छे.

भगवान जिनेन्द्रदेवना शासनना विश्वकल्याणकर सिद्धान्तो अने तेनी पवित्र संस्कृतिना संवाहको, रक्षको अने प्रचारको आचार्यो उपाध्यायो अने श्रमण साधुओ छे. तेओ विश्वना मानवीओने सत्य अने ज्ञाननो दिव्य सन्देशो संभळावे छे. मानवी तेने सांभळीने पोतानुं यथायोग्य कल्याण साधे छे.

पू. श्रीयशोविजयजी, उपाध्याय पदे बिराजमान हता. तेथी तेओश्री उपाध्याय श्रीयशोविजयजी अथवा ए पदनुं नामान्तर 'वाचक' होवाथी वाचक श्रीयशोविजयजी तरीके ख्यात थया छे. तेओश्रीनी सतत ज्ञानोपासना, चारित्रनी साधना अतिउत्कृष्ट हती. तेओश्रीए सिद्धान्तोना रक्षण खातर महान् फाळो आपीने खरेखर आपणा उपर अनन्य उपकारो कर्या छे. आवी एक महान विभूतिना महान कार्यने आ ग्रन्थद्वारा नम्र अने नानीशी श्रद्धांजलि अर्पण करवानो अमोए विनम्र प्रयास कर्यो छे. अमारा आ प्रयासने श्रीसंघ समाज के जनता जरूर वधावी लेशे, एम अमारुं अन्तःकरण कहे छे.

आ ग्रन्थने मुख्यपणे बे विभागमां विभक्त करवामां आव्यो छे. पहेलामां श्रीउपाध्यायजीनुं जीवन तथा कवन अने बीजामां जुदा जुदा विषयो उपरना निबंधोनो समावेश थाय छे. आ उपरांत "श्रीयशोविजयजीनी मूर्तिनी प्रतिष्ठा अने श्रीयशोविजय सारस्वतसत्रनो हेवाल" ए शीर्षक नीचे मुंबई–डभोई जैनसंघमां थयेली उजवणीओनो कार्यक्रम अने 'जैन' पत्रमां प्रगट थयेलो अहेवाल उद्धृत करीने छापवामां आव्यो छे. सारस्वतसत्र प्रसंगे आवेला संदेशाओ त्यारपछी मुनिवर्य श्रीयशो-विजयजी महाराज उपर आवेला पत्रोमांथी उपयोगी नोंधो पण संघरवामां आवी छे अन्तमां डॉ.

श्रीयुत भोगीलाल सांडेसरा अने वकील श्रीनागकुमारे आलेखेलां संस्मरणो पण आप्यां छे. आम कुल ४६० पानांना लखाणथी प्रस्तुत ग्रन्थ समृद्ध बन्यो छे.

सत्रनी ऊजवणी पूर्वे विद्वानो उपर एक परिपत्र मोकलवामां आवेलो अने तेमां 'लेखो वगेरे छापी प्रसिद्ध करवामां आवशे' एवुं वचन आपवामां आवेलुं, ते आजे पूर्ण थतां आनंद थाय छे.

एक ज स्थले उपाध्यायजी अंगेनी वधुमां-वधु जीवनसामग्री होय तो भविष्यमां तेमना विषे वधु अभ्यास करवानी के लखवानी कामना करनारने ते सहायभूत थइ पडे, ए दृष्टिने लक्ष्यमां राखी 'सुजसवेलीभास' तथा अगाउ प्रगट थयेला, कोई कोई लेखोने सुधारी वधारीने दाखल कर्या छे, उपाध्यायजीनुं आधारभूत जीवन चरित्र हजू सुधी मळी आव्युं नथी. जे कांइ थोडी घणी विगतो मळे छे ते सुजसवेलीभासमांथी. बाकी रही दंतकथाओ. आम पूरती सामग्रीना अभावे तेमना जीवन–कवन साहित्यनी व्यापक अने ऊंडा अभ्यास पूर्वक समीक्षा करनार व्यक्तिओ गणीगांठी छे. आ महापुरुषनी प्रगल्भ विद्वत्ता अने तेओश्रीना महान व्यक्तित्वनी छाप तेमना ग्रन्थोना साचा अभ्यासको उपर पडे छे, तेनो परिचय विशाल जनता अने अन्य विद्वद्वर्गने थाय ए इष्ट छे. आ ग्रन्थ ते उद्देशने सफल करी भविष्यना अभ्यासकोने अभ्यासमां प्रवेशवा प्रस्तावना रूप थई पडशे एवी आशा राखवी वधु पडती नथी.

लेखोने ग्रन्थस्थ करवानो निर्णय लेवायो त्यारे कशी ज मुडी न हती अने रेतीमां ज नाव हंकारवामां आवेलुं. सद्भाग्ये पाछळथी डभोईना श्रीविजयदेवसूर जैन संघे, सारी एवी मदद करी, तेम छतां तेनाथी पांच छ गुणो खर्च थयो छे आर्थिक संकोचना कारणे ग्रन्थने बने तेटलो सादो बनाव्या सिवाय छूटको न हतो. सुशोभनोना सौंदर्य करतां सादाईनी मनोरमता पण कदिक दिल हलावनारी होय छे. आवा सादा ग्रन्थनी आंतरसमृद्धि ओछी नथी, एवी वाचकोने खात्री आपीए छीए.

प्रेस वगेरेनी पारावार मुश्केलीओने लीधे मुद्रण कामे त्रण त्रण प्रेस जोया. छतां कहेवुं जोईए के छेल्ले वसंत प्रिन्टींग प्रेस लि. ना संचालक भाई श्रीजयन्तिलाल दलाले अमारुं आ कार्य पोतानुं मानीने उत्साहपूर्वक करी आप्युं छे. अने प्रेसना मुख्य कार्यकर श्रीशान्तिलाल शाह अने तेमना सहकार्यकरोए पण पूर्ण सहकार आप्यो छे.

श्रीयशोविजय सारस्वतसत्रनी ऊजवणी तथा पू. उपाध्यायजीना पवित्र हस्ताक्षरने लगता श्लोको तथा ग्रन्थावरण वगेरे छापी आपवानुं काम अमदावाद दीपक प्रिन्टरीना मालिक श्रीनटुभाईए करी आप्युं छे. ग्रन्थनुं आवरण डभोईना उत्साही चित्रकार श्रीरमणिकलाल चुनिलाल शाहे तैयार कर्युं छे. पंडित श्रीअंबालाल प्रेमचंद शाहे प्रुफ संशोधन वगेरे कार्यमां लागणीपूर्वक सहाय करी छे. बाइन्डिंग श्रीफकीरभाई वाघुभाईए करी आप्युं छे. आ सौनो अमे अंतःकरणपूर्वक आभार मानीए छीए.

आ ग्रन्थना संपादननुं कार्य अथथी इति सुधी अध्यात्मकार परमपूज्य विद्वान **मुनिवरश्री यशोविजयजीए** संभाळ्युं छे. संभाळ्युं छे एटलुं ज नहि, पण उत्साह, खंत अने भक्तिभावपूर्वक तमाम जवाबदारी उपाडी समय अने शक्तिनो सतत भोग आपी पार उतार्युं छे. तेमना आ ऋणनो अमे बहुमानपूर्वक स्वीकार करीए छीए. साथेसाथे आ कार्य माटे तेमने अनुज्ञा आपनार तेओश्रीना वडिल गुरुदेवो परमपूज्य आचार्यश्री प्रतापसूरीश्वरजी तथा परमपूज्य आचार्यश्री धर्मसूरीश्वरजी आदि मुनिवरोने अमे केम भूली शकीये? ग्रन्थनी कर्त्ताविषयक सुविस्तृत 'आमुख' लखी आपीने, तेम ज बीजी रीते पण सुसहायक बननार जाणीता साक्षरवर्य पू. **मुनिश्री पुण्यविजयजी** महाराजनुं ऋण तो केम भूलाय!

सुशोभनब्लोको तथा पू. उपाध्यायजीना हस्ताक्षरो तथा अन्य ब्लोको आपवानुं औदार्य दाखववा बदल, श्रीमहावीर जैन विद्यालय अने तेना कार्यवाहकोना पण अमे ऋणी छीए. जे जे मुनिवरो तथा श्री रतिलाल दीपचंद देसाई वगेरे अन्य बंधुओए प्रत्यक्ष के परोक्ष रीते आ कार्यमां मदद करी छे, ते सौना अमे आभारी छीए. छेल्ले आर्थिक मदद द्वारा ग्रन्थ प्रकाशनने शक्य बनावनार व्यक्तिओ अने संघोना अमे अनहद आभारी छीए. अने हवे पछी पू. उपाध्यायजी महाराजना थनारा ग्रन्थ मुद्रण-कार्यमां जैन श्रीसंघ पोतानो सक्रिय आर्थिक सहकार आपी पू. उपाध्यायजी भगवानना अनेकविध महाउपकारोनुं जैन संघ उपर जे ऋण छे, ते अदा करशे तेवी विनम्र विनंति छे.

अन्तमां आ ग्रन्थना वाचनथी मुमुक्षु वाचको उपाध्यायजीना तत्त्वभरपूर सूक्ष्मग्रन्थोना अभ्यास माटे प्रेराय अने तेमांथी कल्याणकारी ऊर्ध्वमुखी प्रेरणा मेळवी पोताना जीवनने उन्नत बनावे एज अभिलाष!

श्रीनागकुमार नाथाभाई मकाती

देरापोळ हाथीखाना

लालचंद नंदलाल शाह

महा सुदि ५, सं. २०१३

मंत्रीओः— श्रीयशोभारती प्रकाशन समिति. वडोदरा

संपादकीय निवेदन

जयन्तु जिनवराः ।

नमो उवज्झायाणं ।

परमाराध्य परमोपास्य, प्रातःस्मरणीय, पूज्यपाद साधुशार्दूल, तार्किकशिरोमणि, न्यायविशारद न्यायाचार्य महोपाध्याय श्रीयशोविजयजी महाराजना जीवन अने कवनथी संकलित 'न्यायविशारद न्यायाचार्य महोपाध्याय श्रीयशोविजय-स्मृतिग्रन्थ' नुं संपादनकार्य सद्भाग्ये मारा शिरे आव्युं, अने आजे ते कार्य शासनदेव–गुरुनी कृपाथी, मित्रमुनिवरो, विद्वानो अने अन्य सहायकोनी शुभेच्छाथी पूर्णाहुतिने पण पाम्युं, एमाटे आनंद थाय छे अने लांबा समयथी सेवेला स्वप्नानो एक भाग आकार ले छे, तेथी संतोष प्रगटे छे.

रसोई रांधता घणुं घणुं कष्ट अनुभवाय छे, पण ज्यारे ते तैयार थाय छे त्यारे, तेना आनंदमां पूर्वक्रियानुं कष्ट के खेद विसारे पडे छे. एमांय रसोई जो सुंदर, स्वादु अने पक्व बनी होय तो तेनो संतोष अने आनंद कोई जुदो ज होय छे. पण जो रसोई असुंदर, बेस्वादु अने अपक्व बनी होय त्यारे तेनो असंतोष अने खेद रही जाय छे. मारा माटे पण कंईक एवुं ज बन्युं छे. प्रारंभथीज प्रेसना प्रतिकूल संजोगो, खंतीला कार्यकरनो अभाव, एटले काम लंबायुं, गुंथायुं, आशातीत विलंब थतां एनी पाछळ निराशा आवी अने एणे नानोशो कंटाळो पण ऊभो कर्यो, परिणामे आ अंकने अंगे सेवेलुं स्वप्नुं पूर्ण आकार न लई शक्युं, तेटलो विषाद छे. छतांय अन्तःसामग्रीनुं जीवंत चैतन्य मारा विषादनी विस्मृति करावे छे.

स्मृतिग्रन्थमां शुं छे ?

आ स्मृतिग्रन्थने बे विभागमां वहेंची नांखवामां आव्यो छेः पहेला विभागने 'महोपाध्याय श्रीमद् यशोविजयजी जीवन-कवनदर्शन' नाम आप्युं छे. आ विभागे ३२॥ फोर्म एटले २६० पृष्ठो रोक्यां छे. बीजा विभागने 'अन्यविषयक निबन्धो' ए नामथी रजू कर्यो छे. आ विभाग, लगभग १० फोर्म एटले ७५ पृष्ठनां समाप्त थाय छे, त्यार पछी वडोदरा श्रीयुत नागकुमार ना० मकाती तथा श्रीयुत जसुभाई जैनना संपादन नीचे पू. उ. श्रीयशोविजयगुरुमंदिर-प्रतिष्ठा अने श्रीमद् यशोविजयसारस्वत सत्रनो सुविस्तृत हेवाल, तार-टपालना संदेशाओ तथा कुछ अंग

विद्वान मित्र डॉ. श्रीयुत भोगीभाई सांडेसरा तथा वकील श्रीयुत नागकुमार मकातीए आलेखेलां संस्मरणो वगेरे, अने अन्तमां उपाध्यायजी भगवानना ग्रन्थोनी बहु शुद्ध अने विशिष्ट ग्रन्थयादी* आपी छे. आ रीते आखा ग्रन्थनी पृष्ठ संख्या ४९० थई छे.

आ अंकमां साध्वीजी महाराज तथा श्राविकाना लेखने पण खास स्थान आप्युं छे; कारण के जैन संघनां आ बे अंगो ज्ञानना क्षेत्रमां घणां दुर्बल रह्यां छे, तेथी आ अंगोमां पण आ दिशामां कंईक उत्साह वर्धन थाय.

एक वातनो गौरवपूर्वक उल्लेख करवो जोईए के समितिए लेखकोने लेखो लखवा माटे दोढथी बे मास जेटली अल्पसमय-मर्यादा आपेली; वळी, उपाध्यायजी अंगे ज कंईक लखवा आग्रह सेवेलो ज्यारे बीजी बाजुए उपाध्यायजीना जीवन उपर लखवा माटे, आज सुधी नहीं जेवी कशी सामग्री विद्यमान न हती, म्होटो वर्ग तेमनां जीवन-कवनथी अपरिचित हतो, आ संजोगोमां कार्यसागरमां-गळाडूब डूबेला विद्वानो पासेथी बौद्धिक सामग्री मेळववी, ए केटलुं मुश्केल कार्य छे ते तद्विदोथी अज्ञात नथी. एटले ज समितिए ज्यां मात्र पंदरेक लेखोनी आशा राखेली त्यां धारणाथी द्विगुणाधिक लेखो मेळवी शकी, ते खरेखर, ख्यातनाम पुण्यश्लोक महापुरुषना पुण्यबळने ज आभारी हतुं.

सुजसवेलीभास अंगे

पू. उपाध्यायजी भगवानना जीवननी टूंकी नोंध मात्र 'सुजसवेलीभास' नामनी चार ढाळमां विभक्त थएली, ५२ कडीओमां पूर्ण थती एक नानकडी गूजराती पद्यकृति रजू करे छे (जे काव्यकृति आ ज अंकना २२५मा पृष्ठमां छे) आपणा दुर्भाग्ये आ कृति सिवाय एमना जीवन अंगे बीजी कोई व्यवस्थित नोंधो, विविध घटनाओ, विहारप्रदेशो, शिष्यसंपत्ति अने ग्रन्थनामो वगेरे बाबतो अंगे कोई खास सामग्री मळती नथी. वर्षो वर्षो बादलो उपर अंधारपट ज पथरायलो छे; एम छतां सुजसवेलीकारे एक महापुरुषनी जीवनघटनाने पद्यमां गूंथीने तेओश्री विषे जे कंई परिचय आप्यो छे ते अपूर्व छे ने अद्वितीय छे; तेथी जैन संघ खरेखर! तेमनो ओशिंगण छे.

उपाध्यायजीनो जन्मसमय कयो?

अहीं एक वात विचारवानी छे. सुजसवेलीकारे जन्मनी साल+ के तिथि जणावी नथी. मात्र दीक्षावडीदीक्षा ने उपाध्यायपदनी सालो ज जणावी छे, पण तिथि जणावी नथी. स्वर्गगमननी साल स्पष्ट जणावी नथी, तिथि पण जणावी नथी. दीक्षानी साल १६८८ जणाव्या बाद १० वरसना

* એકે એકના ઉપલબ્ધ અનુપલબ્ધ તમામ ગ્રન્થોનું પ્રમાણ, ભાષા, વિષય, રચનાસંવત, કોના શાસનમાં લખી, ટીકા વગેરે કર્યાં છે, મુદ્રિત અમુદ્રિતના પ્રકાશક કોણ? વગેરે અનેક હકીકતો સાથેની સુવિસ્તૃત ગ્રન્થયાદી આપવામાં આવશે.

+ શ્રીમહાવીર જૈનવિદ્યાલયના શ્રીવિજયવલ્લભસૂરિ સ્મારક અંકમાં પટના પરિચયમાં દૃષ્ટિ કે પ્રેસ દોષથી 'જન્મ-સ્વર્ગગમનની સાલો મળે છે,' એવું છપાયું છે તે બરાબર નથી માટે સુધારી લેવું

गाळा बाद १६९९ नी अवधान कर्यानी साल नोंधे छे अने त्यार पछी काशीगमन सूचवे छे, पण ते क्यारे ?–ते विषे मौन सेवे छे. आगळ चालतां काशी अने आग्रामां [४+३] सात वर्ष रह्यानो उल्लेख करे छे. पण ते माटे चोक्कस सालनिर्देश नथी करता; गुजरातमां पुनरागमन क्यारे थयुं ? वगेरे हकीकतो उपर पण संपूर्ण अन्धारपट छे.

१६८८ नी दीक्षा जणावीने सीधो १६९९ नो, ने त्यांथी सीधा उपाध्यायपदार्पणनो १७१८ नो, ने छेवटमां डभोई चातुर्मास कर्यानो १७४३ नो, आम चार संवतोनो ए उल्लेख करे छे. आ सिवाय बीजी कोई तवारीख के साल नोंधी नथी.

सुजसवेलीकार, उपाध्यायजी श्रीविनयविजयजीना गुरुभ्राता ज होय तो, तेओ तेमना समयना कवि होवा छतां, तेओए प्रस्तुत कृतिमां महत्त्वनी हकीकतोनी केम कशी नोंध न लीधी !–ते घटना खरेखर ! एक कोयडो बनी जाय छे.

अने उपाध्यायजी तो, खरेखर ! त्यागमय अने निस्पृह जीवन जीवता जैन महर्षिओनी परंपराने ज अनुसर्या छे. एटले स्वजीवननी नोंध अंगे तेमणे तो केवळ उपेक्षा ज सेवी छे.

आयुष्य केटलुं ?

सुजसवेलीनी संवतोनी सचाईने उपलब्ध अन्यान्य उल्लेखोए पडकारी छे. सुजसवेलीना आधारे उपाध्यायजीनी आवरदा ६० थी ७० वर्ष अंदाजी शकाय, ज्यारे अन्य साधनो ९० थी १०० वरसनुं आयुष्य नक्की करी आपे छे. सुजसवेलीकारे दीक्षा १६८८ मां जणावी छे; तेओश्रीने बालदीक्षित गणीने, दीक्षानी वय आठेक वर्षनी जो कल्पीए तो जन्म संवत १६८० आसपास अंदाजी शकाय.

हवे वि. सं. १६६३मां खुद उपाध्यायजीना गुरुजी श्रीनयविजयजीए उपाध्यायजी माटे चीतरेला मेरुपर्वतनी आकृतिवाळा पटमां उपाध्यायजीने, ए वखते 'गणि' तरीके उल्लेख्या छे, त्यारे तेमनी दीक्षा क्यारे गणवी ? जन्म क्यारे कल्पवो ? वळी तर्कभाषा, दशार्णभद्रसज्झाय वगेरेनी प्रतिओने अन्ते मळेला उल्लेखो जोतां तेओश्रीनो जन्मसमय साहजिक रीते पाछळ जाय, एटले के १६४० थी १६५० वच्चेनो कल्पी शकाय. स्वर्गगमन तो १७४५ पहेलां ज थयुं छे ए हकीकत निर्विवाद छे. एथी तेओश्रीने शतायुः मानवामां कोई बाध जणातो नथी.

१६९९ मां राजनगरमां अवधान–धारणाशक्तिना प्रयोगो कर्या पछी ज काशी गयानी वात सुजसवेलीकार करे छे, पण तेथी ते तुरत ज गया छे के बे–चार वरसो बाद ! ते सूचवता नथी. आना अचूक निर्णय माटे अन्य साधनो गवेषवां जोईए.

कालधर्मनी तिथि कई ?

उपाध्यायजीनुं आयुष्य अने स्वर्गगमननां संवत अंगे विद्वानोमां पचासेक वरसथी मतभेद

चाले छे. एमां कालधर्मनी साल तरीके मोटो भाग १७४५नो उल्लेख करतो आव्यो छे, ज्यारे वस्तुस्थिति तेथी जुदी छे. त्यारे आम केम चाल्युं हशे? एना कारणमां प्रधान कारण तो पादुकानो शिलालेख ज लागे छे. एना उपर “१७४५ नी साल अने मागशर सुदि ११” लख्युं छे. प्रथम प्रथम कोणे उतावळाईथी अनुमान बांध्युं हशे तेमणे प्रस्तुत साल–तिथिने कालधर्मनी साल–तिथि जाहेर करी दीधी हशे! अने पछी तो घेटे घेटे बहु उल्लेख करता गया हशे! परिणामे आपणा भींतिया पंचांगोमां पण आ खोटी तिथिनो उल्लेख थई रह्यो छे. परंतु ते साल नथी तो जन्मनी के नथी स्वर्गगमननी! माटे चाली आवती आ भूलने सत्वर सुधारी लेवी जोईए. प्रस्तुत १७४५नो उल्लेख ते तो अमदावादनी पादुकानी प्रतिष्ठानो छे.

आथी एक वात निःशंकपणे निश्चित थई जाय छे के तेओ १७४५ना मागशर सुदि ११ पहेलां स्वर्गवासी थया हता. पण ते क्यारे? ते निर्णय करवानो रहे छे.

सुजसवेलीकार गाय छे—

“सत्तरत्रयालि चोमासु रह्या, पाटक नगर डभोई रे;
तिहां सुरपदवी अणुसरी, अणसणकरि पातिक धोई रे.”

आ पद्य उपाध्यायजी डभोईमां चोमासु रह्यानुं स्पष्ट जणावे छे. पण स्वर्गगमन चातुर्मासमां थयुं के ते पछी थयुं? ते विषे ते संपूर्ण मौन छे. जोके आ कृतिनी साले ए मारी शंका ऊभी करी छे, तेथी तेने केटलुं वजन आपवुं ते संशोधननो विषय छे; एटले ए वातने बाजु पर मूकीए, पण उपाध्यायजीए ज छेल्ला चातुर्मासमां बे गूजराती पद्यकृतिओ बनावी छे; ए कृतिमां रचनानी साल पण जणावी छे, तेनुं अन्तिम पद्य आ प्रमाणे छे—

सूरति चोमासु रही रे, वाचक जस करि जोडी, बड़०
जुग-जुग-मुनि-विधु वत्सरइ रे, दियो मंगल कोडी.

[प्रतिक्र० हेतुगर्भ स०]

जुग-जुग-मुनि-विधु वत्सरइ रे, श्रीजसविजय उवज्झाय, टोड०
सूरत चोमासु रही रे, कीधो ए सुपसाय. टो० ॥६॥

[अगियार अंग स०]

उपरनी बन्ने कडीओमां ए कृतिओ रच्यानी साल जणावी छे. आमां बंनेमां ‘जुग जुग’ शब्द वपरायो छे. हवे सवाल ए छे के, आ शब्द बे अने चार बंने संख्यानो वाचक छे; तो अहीं कई संख्या लेवी? बे के चार? आ माटे केटलाक विद्वानो जुगथी चारनी ज संख्या गणवानो आग्रह धरावे छे; ज्यारे हुं तेथी जुदो पडुं छुं. अलबत्त प्रस्तुत निर्णय करवा माटे अकाट्य साधन तो कोई ज नथी. परंतु अहीं जुगनो अर्थ चार करवा करतां बे करवो वधु संगत छे, एटलुं अन्तःपरीक्षण

द्वारा अनुसन्धान करीने निर्णयनी नजीकमां जरूर जई शकीए छीए. त्यारे थोडोक विचारविमर्श करीए:
जो बंने युग शब्दनो अर्थ चार चार करीए तो १७४४नी सालमां सुरतना चातुर्मासमां बंने स्वाध्यायोनी रचना करी " एम निश्चित थाय. एटले जैन साधुना नियम मुजब कार्तिक सुदि चौदस सुधी (चातुर्मास समाप्तिदिन) त्यां ज रह्या हता ते सुनिश्चित थयुं. हवे पादुका उपरना लेखमां १७४५नी साल अने मागसर सुदि ११ नी अंजनशलाका ने ते राजनगर–अमदावादमां कर्यानुं जणाव्युं छे. तेमनो देह डभोईमां ज पड्यो ते वात सुनिश्चित छे. सुरतनुं १७४४ नुं चातुर्मास कार्तिक सुदि चौदसे पूर्ण थाय. एटले वहेलामां वहेलो विहार कार्तिक सुदि पूनमे करी शके. पूनमे विहार करी डभोई तरफ प्रयाण कर्युं होय एम मानीए तो पूनम अने पादुकानी अंजन–प्रतिष्ठा (तेय अमदा-वादमां) वच्चेनो गाळो मात्र २७ दिवसनो छे. अहीं विचारवानुं ए छे के, आटला दिवसोमां, तेओ एकाएक विहार करे, सुरतथी ८० माईल दूर डभोई आवी पहोंचे, तुरतातुरत अनशन करवाना संयोगो ऊभा थाय; कालधर्म पामे; अने पाछा रेलगाडी के मोटरना साधन विनाना जमानामां अमदावाद समाचार पहोंची जाय, संगेमरमरनी कमलासनस्थ पादुका पण बनी जाय, अने अंजन थई जाय–आ बधुं संभवित लागे छे खरुं ! मारो अंगत जवाब तो 'ना' छे. छतांय घडीभर मानो के संभवित छे, तो पछी डभोईमां चातुर्मास कर्यानी कई साल नक्की करवी ! आ बधी विषमापत्ति टाळवा युगयुगनो अर्थ चार न करतां जो बे करीए तो बधी समापत्ति थई जाय. जोके युगयुगथी तो २२, २४, ४२, ४४ आम चार विकल्पो कल्पी शकाय छे. छतांय बीजा पुरावा-साधनो तपासवा अने विचारविनिमय करवा माटेनां द्वारो खुल्लां ज छे.

उपाध्यायजी अंगेनी केटलीक बाबतो साफसूफी ने परामर्श मागी रही छे, तेमांथी महत्त्वनी बाबतो हुं रजू करु छुं.

१–" उपाध्यायजी काशी* गया त्यारे विनयविजयजी तेमनी साथे गया हता; त्यांना ब्राह्मण भट्टाचार्य जैनमुनिने भणावे तेम न हता, तेथी ते बंने साधुओ नामांतर अने वेषांतर करीने रह्या, 'चिंतामणि' नामनो न्यायग्रन्थ गुरुनी गेरहाजरीमां गुरुपत्नी पासेथी मागीने एकरातमां बंने जणाए कंठस्थ करी लीधो "–आवी जे किंवदन्ती चाली आवी छे ते तद्दन खोटी छे. श्रीयशोविजयजी साथे तेमना गुरु श्रीनयविजयजी ज गया हता. पण 'नय'नी आगळ 'वि' वधीने 'विनय' विजय बनी गयुं छे. अन्य स्थळे पण 'श्रीनयविजय'मांनो 'श्री' बराबर न वंचावाथी, अथवा के प्रमादथी 'श्री'ने ठेकाणे 'वि' वांचीने विनयविजय करी नांख्युं छे. बाकी अनेक पुरावाओथी हकीकत निश्चित छे के उपाध्यायजी साथे नयविजयजीज हता. वळी विनयविजयजीनी संवत्सरनादिकनी माहितीथी पण विनयविजयजी न ज हता ए सुनिश्चित थाय छे. एटले आवी दन्तकथाओ कमसे के बोलवी बंध थवी जोईए.

बीजुं काशीगमनमां गुरु, शिष्य साथे अन्य कया कया मुनिवरो हता !

* આ વાતની સાક્ષી ઉપાધ્યાયજીના ગ્રન્થોની અનેક પ્રશસ્તિઓ આપે છે.

२–टवर्णोना चार छेडे तेओ पाण्डित्यना गर्व सूचक चार ध्वजाओ बांधता हता; एमणे सुवर्णसिद्धि मेळवी हती ते, माफीपत्र लख्यानी वात, यति साथेना सम्बन्धनी वातो, तेमना जीवन साथे अघटमान लागती अतिशयोक्तिमरी अन्य किंवदन्तीओ सम्यग् आलोचना मागी रही छे.

३–(१) न्यायविशारद, (२) न्यायाचार्य, अने (३) उपाध्याय–आ त्रण पदवीओनो श्रीमदे स्वयं उल्लेख कर्यो छे. १–३ आ बे पदवी कोणे ने क्यां आपी तेनो तो, तेओश्री तेम ज भासकार उल्लेख करे छे. पण नंबर बे वाळी पदवी कया स्थळे अने कोने मळी? तेनो निर्देश नथी मळतो; तेमज; तेमणे जे सो ग्रन्थो रच्या, ते कया? ते पण गंभीर विचारणा मागी ले छे.

४–जन्मस्थान कनोडु ज हतुं के केम?

५–योगीश्री आनन्दघनजी साथेनुं मिलन क्यारे ने क्यां थयुं?

६–कहेवाय छे के उपाध्यायजी सिनोर पासे नर्मदाना किनारे आवेला निकोरा गाममां घणो समय रह्या हता. अने त्यां तेमनो ग्रन्थसंग्रह हतो, तो आ वात शुं साची छे?

७–खंभातनो वाद अने त्यां ज काशीथी आवेल विद्यागुरुनुं करेलुं गौरवपूर्ण बहुमान ए हकीकत यथातथ्य छे खरी?

८–तेओश्रीनो प्राण लेवा माटेना थयेला प्रयासो अंगे, तेमणे स्वयं श्रीशंखेश्वरजीना स्तवनमां जे हृदयोद्गार काढ्या छे ते शुं सूचवे छे?

९–कविश्री बनारसीदास आदिनी कोई कोई पद्य रचना साथे उपाध्यायजीनी पद्यकृतिनुं अक्षरशः साम्य आवे छे, तो तेनो शो अर्थ? अने तेम बनवानुं कारण शुं?

१०–उपाध्यायजीने जैन जगत् आगळ हलका चीतरवा विरोधीओए कोई कोई कृति तेमना नामे चढावी दीधी छे ते अंगे.

आवी आवी अनेक हकीकतो चकासवानी छे.

खेदजनक घटना—

शासन शासनना आवा एक परमप्रभावक, असाधारण विद्वान, महान सर्जनकार, कूर्चालशारद अविरत ज्ञानोपासना अने अखण्ड तत्त्वचिन्तनना परिपाक रूपे ज्ञाननिधिनी समृद्ध अने अणमोल भेट आपनार, सत्यने माटे सतत झझूमनार, क्रान्तिकारी संत, जैन संघमां पेठेली शिथिलताओ सामे जेहाद जगावनार, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रनी अहालेक जगावनार, तात्त्विक चर्चाओ, वादविवादो द्वारा वस्तुना सर्वांगी सत्यने स्थापित करनार, दरेक पदार्थने के हकीकतोने सर्वांगी दृष्टिथी जोतां शीखवनार, भौतिक अनुशासन उपर आध्यात्मिक अनुशासननी अनिवार्य आवश्यकतानी उद्घोषणा करनार, ज्ञानांजनशलाकाथी अज्ञानतिमिरान्धोनां नेत्रोन्मिलन करनार, आत्मानी शुद्धि-

विशुद्धिना मध्यवर्तुलसमा, स्वरचितज्ञानराशिथी अनेकने प्रभावित करनार, जैन सिद्धान्तो अने तेनी परंपराना जागरुक रखेवाळ, निश्चय अने व्यवहारनी तुलाना समधारक, मूर्ति अने मूर्तिपूजा प्रत्येना विरोधी आन्दोलनो, क्रियाशून्य अध्यात्मवादीओनी मान्यता अने तेना प्रचार सामे शास्त्र अने तर्क बन्ने द्वारा बुलंद सिंहनाद करनार, वीतरागदेवना सन्मार्गने सुरक्षित राखनार आ महापुरुषनी जीवन अने मौलिक विशेषताओनी नोंध, तेओश्रीना समकालीक अनेक मित्रमुनिवरो, विद्वानो होवा छतां केम कोईए न करी ? ए घटना एक प्रश्नार्थक बनी रहे छे. एम छतां तेओश्रीना साहित्य-कवनना-ओछावत्ता अभ्यासीओए के परिचित जनोए जे कंई पीरस्युं छे, ते पण ओछुं मूल्यवान नथी.

लेखकोने धन्यवाद

लेखकोए जुदा जुदा दृष्टिकोणथी, भिन्न भिन्न बनावो अने घटनाओथी, अने तेओश्रीनी सर्वांगी साहित्य-साधनानी विशेषताओथी तेओश्रीनुं बाह्य अने आभ्यन्तर जीवनचित्र उपसाववानो अने तेओश्रीने भावभरी श्रद्धांजलि आपवानो खरेखर, (टूंकी मुदत छतां) स्तुत्य अने सुन्दर प्रयत्न कर्यो छे, अने तेथी ज प्रस्तुत प्रयत्न सहु कोईना धन्यवाद मागी ले तेवो छे.

खरेखर, आ अंकमां प्रगट थयेली काची सामग्री भविष्यमां तेओश्रीनुं सुसंकलित, व्यवस्थाबद्ध अने स्वतंत्र जीवनचरित्र आलेखवा माटेनी श्रेष्ठ भूमिका पूरी पाडशे एमां शक नथी.

अंकना लेखो अंगे

सत्र-समितिए पोताना विनंतिपत्रमां खास करीने उपाध्यायजी महाराज अंगे ज लेखो लखवा आग्रह करेलो, एटले प्रथम पंक्तिना घणा विद्वानोनी समृद्ध ने अभ्यस्त कलम नो लाभ लेवानुं अमारा माटे अशक्य ज हतुं. खुद उपाध्यायजी महाराज अंगे पण समिति अभ्यसनीय लेखो पूरती संख्यामां मेळवी शकी नथी. अही ए पण स्पष्ट करुं के मारा मित्रोनो मने एक अभ्यसनीय लेख लखवा माटेनो आग्रह छतां, सकारण लखवानुं मुलतवी राखवुं पड्युं छे.

बीजुं ए के, उपाध्यायजी महाराजना जीवन-साहित्य अंगेनी सामग्री संघरवा पूरतो ज आ प्रयास होई, नाना मोटा, सामान्य के विशेष तमाम लेखोने स्थान आपवा उपरांत वधुमां वधु प्राप्य सामग्री आपी छे, जेथी केटलीक पूर्वप्रकाशित सामग्रीनुं पुनर्दर्शन पण कराव्युं छे. आनंदनी वात ए छे के, आ अंकमां जैन संघना साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविकारूप चारेय अंगोए भाग लीधो छे.

लेखोमां ज्यां ज्यां एक ने एक वात वेवडाती हती, नवो दृष्टिकोण के कोई विशिष्टता रजू करती न हती, तेम ज तेओश्रीना जीवनने फरती झाडांझांखरानी जेम वाती गणाती असत् दन्तकथाओ अने वधु पडती अनुचित अने अप्रस्तुत हकीकतो हती, तेनी ज मात्र बादबाकी करी छे. ते माटे लेखको क्षमा करे !

साथे साथे ए पण स्पष्ट करुं के आ अंकना केटलाक मुद्रित लेखोमां वर्षोथी चाल्या

आवता केटलाक अनुचित प्रवाहो, विचारो अने हकीकतो पण जोवा मळ्यां. पण में जाणी जोईने ज तेनुं नामनिर्देश न करतां अस्तित्व गण्युं छे, ते एटला ज माटे के व्यवस्थित जीवनना अभावे, आभ्यंतर महापुरुषोना जीवनने फरती केवी केवी हकीकतो प्रदक्षिणा करती होय छे, तेनो वर्तमान प्रजाने ख्याल आवे.

गोठवणी, जे लेखकोनी जे हती बहुधा, तेज राखी छे. केटलाक लेखो दुर्वाच्य होवाना कारणे, तेम ज दृष्टिदोष के प्रेसदोषना कारणे, जे कंई क्षतिओ रही गई देखाय ते बदल लेखको अने वाचको क्षमा करे !

पू. उपाध्यायजीए केटली कृतिओ रची हती ? तेनो चोक्कस संख्यानिर्णय करवानुं कोई साधन नथी. परंतु तेओश्रीनी कृतिओनां अथवा बीजा फुटकळ हस्तपत्रनां मळेली नोंध मुजब हाल तेनी निम्न संख्या नक्की करी शकीए—

प्राकृत-संस्कृतभाषानी कृतिओ

प्राकृत-संस्कृत भाषाना उपलब्ध अने अनुपलब्ध ग्रन्थोनी कुल संख्या ८३ नी छे;

एमां उपलब्ध ६१ अने अनुपलब्ध २२ छे.

१—उपलब्ध ६१ मां ४६ मुद्रित अने १५ अमुद्रित छे.

२—उपलब्ध ६१ मां, ४६ ग्रन्थो स्वकृत; मूळ अने टीकावाळा छे. जेमांना ३७ मुद्रित अने ९ अमुद्रित छे.

३—अने शेष १५ अन्य आचार्यकृत ग्रन्थो उपरनी टीकावाळा छे. एमांथी ९ मुद्रित अने ६ अमुद्रित छे.

गूजराती, मिश्र भाषानी कृतिओ

उपलब्ध-अनुपलब्ध

गूर्जर-मिश्रभाषानी कुल, उपलब्ध अने अनुपलब्ध, नानी-मोटी थईने ५४ कृतिओ छे; तेमांथी ५३ उपलब्ध अने एक अनुपलब्ध छे. ५३, मांथी ४५, मुद्रित अने ८, अमुद्रित छे.

आ उपरांत अन्य ग्रन्थोनुं संशोधन अने संपादनकार्य पण तेओश्रीए कर्युं छे, ते अन्तमां आपेली ग्रन्थसूचीमां दर्शावेलुं छे.

उपर नं. २—३ मां बतावेली १५ संस्कृत कृतिओ, अने ८ गूजराती कृतिओमांथी केटलीक कृतिओनुं संशोधन थयुं छे ने केटलाकनुं थई रह्युं छे. कार्य गंभीर, गहन अने विशाळ छे, ज्यारे साधनो अल्प छे. एम छतां य विशाळ डग मांड्युं छे तो हवे 'शनैः पन्था शनैः पन्था' करतां करतां धीमानो अने श्रीमानोना सहकार अने शुभेच्छाओ अने शासनदेवनी कृपाथी इष्ट उद्देशनी मंझिले पहोंचीशुं.

सत्रोत्सवनी उजवणी पछीनुं सरवैयुं अमाग माटे उत्साह जगाडनारुं बन्युं छे. सत्रोत्सवनी उजवणीए उपाध्यायजी परत्वे जैन–जैनेतर वर्गनुं ठीक ठीक ध्यान दोर्युं छे, अने एना ठीक ठीक छाभो पण सर्जाता जाय छे. वळी, एमनी कृतिओ शोधी काढवानी भावनाने पण वेग मळ्यो छे; परिणामे सत्रोत्सव पछी ज नवीन पूर्णापूर्ण १३ कृतिओ लभ्य थई छे, अने हजु अमदावादना भंडारमांथी वधु कृतिओ मळवानी संभावना छे.

आ तेर कृतिओ अने सत्रोत्सव पहेलांनी नव कृतिओ मळी कुल २२ प्रतिओ मुद्रण मागी रही छे. तेमांथी घणी कृतिओनुं संशोधन पूर्ण थवानी अणी उपर छे. आ ग्रन्थोनुं प्रकाशन वडोदरानी यशोभारती प्रकाशन समिति तरफथी थनार छे.

—ते उपरांत प्रशस्तमहिम उपाध्यायजी महाराजना तमाम ग्रन्थोना आदि अने अन्तना भागो तैयार थई गया छे.

—सुभाषितोनो संग्रह, सन्मतितर्क अंगेनी नोंधो अने तारवण, तथा अन्य पृथक्करण वगेरे तैयार थनार छे.

—तेओश्रीनुं व्यवस्थित प्रमाणभूत ' जीवन–कवन ' चरित्र पण तैयार करवानुं छे.

—भावि योजनाना संदर्भमां गुर्जरसाहित्यसंग्रह भाग १–२ जे तेओश्रीनी मूळभाषामां छपायेल नहीं होवाथी तेनी तेओश्रीनी भाषामां ज पुनरावृत्ति करावबी.

—तेमज शास्त्रवार्तासमुच्चय टीका आदिनी पुनरावृत्तिओ अने साथे साथे अनुपयोगी ग्रन्थोना अनुवादो पण प्रगट कराववा.

आटलुं कार्य पार पडशे त्यारे उपाध्यायजी भगवानना श्रीसंघ उपरना अमाप अने अनिर्वचनीय ऋणनो पूर्वार्ध पूरो कर्यो गणाशे.

उपाध्यायजीनुं जीवन–कवन लखाई रह्युं छे

अहीं एक आनन्दप्रद समाचार जणावुं के घणा वखतथी हेमसमीक्षानी जेम यशःसमीक्षा लखवानी मारी भावना हती अने ए भावना आजे पण ऊभी ज छे. दरमियान जाणीता विद्वान प्रो. श्रीयुत हीरालाल र. कापडीआने मळवानुं थयुं. तेमनी पोतानी पासे उपाध्यायजी अंगेनी केटलीक नोंधो छे एवुं तेमणे जणाव्युं. मने थयुं के उपाध्यायजी अंगे लखवानी सामग्री एटली विशाळ अने विपुल छे के एमने अंगे एक नहीं पण अनेक समीक्षाओ लखाय तो पण कंई ज खोटुं नथी; अने उपाध्यायजी अंगे जेमणे जे वांच्युं–विचार्युं होय तेमनी शक्ति, चिन्तन अने कलमनो लाभ लई लेवो, एटले आ कार्यनी वरमाळा श्री. कापडीआना गळामां पहेरावी छे. तेओ कुशळ संशोधक अने विशिष्ट कोटिना समीक्षक पण छे एटले आपणने एक सारी भेट अर्पण करशे एवी आशा राखीए।

सौथी वधु स्वहस्तप्रतिओ

आज सुधीमां कोई कोई विशिष्ट व्यक्तिना हस्ताक्षरवाळी प्रतिओ मळवा पामी छे. ज्यारे एक भव्य भारतीय विभूतिना हस्ताक्षरो आपणने मळे त्यारे आपणने खरेखर, आनन्द ने गौरवनो अनुभव थया वगर न रहे. तेओश्रीनी स्व-हस्ताक्षरी प्रतिओ आपणने उपराउपरी मळवा पामी छे, तेनुं प्रमाण जोतां आटली वधी स्वहस्ताक्षरी प्रतिओ जैन संघना आवा अन्य कोई पण महर्षिनी हशे के केम? ते सवाल थाय छे. आथी जैन श्रीसंघ तो खरेखर बडभागी ज छे. आजे तेओश्रीनी स्वहस्ताक्षरी त्रीस प्रतो मळी छे. ए आ जैन संघ माटे ज नहिं पण गुजरात अने राष्ट्र माटेनी एक गौरवपूर्ण घटना छे. एक तपस्वी त्यागमूर्तिना हस्ताक्षरो ए कोई एक व्यक्ति के समाजनुं नहीं पण समग्र प्रजानुं राष्ट्रीय धन छे. अने ए रीते ज एनुं जतन थवुं जोईए.

मुनिवरश्री पुण्यविजयजीनो फाळो

अहींयां मारे सहर्ष कहेवुं जोईए के उपाध्यायजीनी स्वहस्ताक्षरी प्रतिओ के अन्य साहित्यने मेळववानुं महद्पुण्य श्रेष्ठ संशोधक, विद्वान मित्र मुनिवर श्री पुण्यविजयजी महाराजने फाळे जाय छे. अने हजु तेओ आपणने घणुं घणुं नवुं आपवाना ज छे. तेओश्रीने उपाध्यायजी उपर अथाग गुणानुराग छे, तेथी तेओ वरसोथी उपाध्यायजीनी ग्रन्थसामग्री आदि अंगे भक्ति अने खंतभर्यो पुरुषार्थ करता आव्या छे.

ते उपरांत उपाध्यायजी रचित ग्रन्थोना संशोधन अने प्रकाशनमां पूज्यपाद प्रौढप्रतापी सूरिसम्राट् आचार्य श्री विजयनेमिसूरीश्वरजी महाराज साहेब तथा तेमना परिवारनो फाळो सहुथी वधु प्रशंसा ने धन्यवाद मागी ले तेवो छे.

उपाध्यायजीना साहित्य अंगे कंईक

कोई पण महापुरुषनी साहित्यकृतिओ ए तेमनुं जीवन, तेमनी प्रतिभा, तेमना जीवनना उदात्त तत्त्वो, बहुश्रुतता अने तत्कालीन परिस्थितिनुं माप काढवानी आदर्श अने सचोट पाराशीशीओ गणाय छे.

ज्ञानमूर्ति उपाध्यायजीनो चार चार भाषाओमां रचायेलो विपुल अने समृद्ध ग्रन्थराशि जोईए छीए त्यारे तेओ नवसर्जननी रंगभूमि उपर एक सिद्धहस्त नटराजनी अदाथी न्याय, व्याकरण, साहित्य, अलंकार, नय, प्रमाण, तर्क, आचार, अध्यात्म, तत्त्वज्ञान अने योगशास्त्रस्वरूप अंग-भंगोद्वारा जाणे चित्तहारी नृत्य करी रह्या होय तेवुं दृश्य खडुं करे छे. आम उपाध्यायजी जुदे जुदे प्रसंगे जूजवे रूपे देखा दे छे. एक वखते नव्यन्यायनी कलम द्वारा कठोर–कर्कशताथी व्याप्त हृदय जोवा मळे छे, त्यारे बीजी वखते काव्यप्रकाश, अलंकारचूडामणि आदि साहित्यालंकारिक कृतिओनी वृत्तिओ द्वारा मृदु अने सुकुमारताथी परिप्लावित हैयानां पण दर्शन थाय छे; त्यारे कवि भवभूतिनी 'वज्रादपि कठोराणि मृदूनी कुसुमादपि'—ए उक्तिनुं स्मरण थई आवे छे.

वैराग्यकल्पलता अने वैराग्यरति जेवी वैराग्यमय रचनाओ द्वारा तेमना हैयामां शान्तरसनो अने करुणानो गंगा--यमुना जेवो केवो स्रोत वहेतो हशे ते जाणी शकाय छे.

अष्टसहस्री विवरण जुओ, अने तमने उपाध्यायजीनी सोळे कलाए खीली ऊठेली विद्वत्प्रतिभानां तेजोमय दर्शन थशे ने मुखमांथी धन्य! अति धन्य! ना उद्‌गारो सरी पडशे. दार्शनिक शिरोमणि एक श्वेताम्बर साधुए दिगम्बरीय कृति तेमज जैनेतर कृति उपर चलावेली प्रौढ कलम, ए तेओश्रीनी हार्दिक विशालता, उदात्त विचारो, सामाना शस्त्र द्वारा ज सामाने जवाब आपवानी अने परकीय ग्रन्थो-द्वारा स्वसिद्धान्तोनुं समर्थन करवानी तेमनी लाक्षणिक कुशळतानुं अजोड दृष्टांत पूरुं पाडे छे.

तेओश्री विरचित के पल्लवित अध्यात्म अने योग विषयक ग्रन्थो जोईए छीए त्यारे, तेओ एक सिद्ध योगी तरीके आपणी समक्ष खडा थाय छे. जैनेतर ग्रन्थ पातंजलयोगदर्शन उपर टीका रची जैन योगप्रक्रियानुं समत्व बताववा साथे तेमांनी अपूर्णताओ दूर करवानुं तेमनुं साहस जोईए छीए त्यारे तेओश्रीनी सर्वांगी प्रत्युत्पन्न मेधाने नतमस्तके भावांजलि अपाई जाय छे।

वेदान्त ग्रन्थो उपर टीका करवानुं खेडेलुं साहस, ए एमणे दार्शनिक क्षेत्रे साधेली ज्ञानसिद्धिनो एक सबळ पुरावो छे.

एमनुं जीवन-कवन जोतां टूंकामां एक वस्तु फलित थाय छे के आध्यात्मिक प्रवणता ए ज तेमनो अन्तश्चरप्राण हतो अने सद्‌धर्मतत्त्वप्रचार ए ज तेमनो बहिश्चर प्राण हतो.

अहीं मारे सगर्व कहेवुं जोईए के, मारी अल्प जाण मुजब, कोई दिगम्बर के जैनेतर विद्वाने जैन श्वेताम्बर दार्शनिक ग्रन्थ उपर टीका—विवरण करवा शक्ति के उदारता बतावी होय, तेवुं जाणवामां नथी. ज्यारे श्वेताम्बरोए केटलांये जैनेतर कृतिओ उपर अने दिगम्बर कृति उपर पण विविध टीकाओ रची पोतानी विशाळ दृष्टि अने उदारतानुं ज्वलंत उदाहरण पूरुं पाड्युं छे त्यारे उदार कोण छे ने संकुचित कोण छे, तेनो निर्णय करवानुं वाचको उपर छोडुं छुं. बीजी एक विशिष्टता ए नोंधवी रही के आज सुधी साहित्यक्षेत्रे संस्कृत-प्राकृत ग्रन्थोना गुजराती अनुवादो गद्य—पद्य द्वारा थया छे, पण एक गुजराती भाषानी पद्यरचनानी अर्थ जटिलताने समजाववा संस्कृत भाषामां टीका रचवी पडे ए गुजराती भाषाना पद्यमय क्षेत्रे एक अपूर्व ने नोंधपात्र घटना छे. उपाध्यायजीना 'द्रव्यगुण पर्याय रास' ग्रन्थ माटे आवुं बन्युं छे.

अने, गुजराती कृतिओने समजवा गुजराती अनुवादो पण लखाया छे.

उपाध्यायजी भगवानती कृतिओमां पण केटलीक कृतिओ विशिष्ट स्थान धरावे छे. एमांथी अहींयां सर्वोपयोगी कृति तरीके बे कृतिओनो उल्लेख करी शकाय: एक छे ज्ञानसार, अने बीजी छे अध्यात्मसार. आ कृतिओ संस्कारसाहित्यमां मूर्धन्य स्थान धरावे तेवी छे. आ कृतिओ जैन उपरांत जैनेतर

समाजने पण अत्युपयोगी छे. आ कृतिओ विश्वने कल्याणनो साचो राह चींधे छे, जीवनने ऊर्ध्वगामी बनाववा माटेनी सुचारु प्रक्रिया रजू करे छे. खरेखर, वर्तमान युगनी प्रजा माटे आ अणमोल भेट छे. सहु कोई माटे ए सुवाच्य अने सुपच खोराक छे. ए जोतां भारपूर्वक कहेवानुं मन थाय छे के लोक-समूहमां आ ग्रन्थनी वधुमां वधु प्रतिष्ठा थवी जोईए, अने आने सर्वमान्य अने सर्वग्राह्य करवा माटे 'गीता'नी जेम आना उपर भिन्न भिन्न पद्धति अने विविध दृष्टिकोणथी, सुंदर शैली अने लोकभोग्य भाषामां अनुवादो, विवेचनो ने व्याख्याओ पण थवां जोईए. अने एना प्रचारने व्यापक बनाववामां सहुए भागीदार बनवुं जोईए. अणु—हाइड्रोजन अने कोबाल्ट बोम्बना आरे आवीने ऊभेला विश्व माटे अध्यात्मवादनां प्रचण्ड बळोने सत्वर जाग्रत करवां ज जोईए. अने ए माटे आध्यात्मिक सिद्धान्तोनो छूटथी वधुमां वधु प्रचार थवो जोईए. आवा सफळ प्रयत्नोद्वारा ज मानवजातनुं अज्ञान घटाडी शकाशे, आत्मवादने दबावी रहेलां भौतिकवादनां परिबळोने नाथी शकाशे अने फळतः मानव-चेतनानुं तेजोमय ऊर्ध्वीकरण साधी शकाशे.

अहींयां प्रसंगोपात्त एक आंतरवेदना जणावुं के आजना विद्वानो अने शिक्षित वर्ग परदेशी विद्वानोनां नाम अने कामने जेटलुं जाणे छे, तेटलुं आ भूमीना महापुरुषोनां नाम अने कामने जाणतो नथी; आ एक कमनसीब ने शरमजनक घटना छे. अरे! खुद गुजरातना ज विद्वानो पोताना ज घरआंगणे प्रकटेली आवी विरल विभूतिने कामथी तो पछी, पण नामथी पण ज्यारे न जाणे, त्यारे आन्तरप्रान्तीय विद्वानोने तो आपणे शुं कही शकीए!

बीजी महादुःखनी वात ए छे के आपणा विद्वानो बीजा धर्मो अंगे सारुं ज्ञान धरावता होय छे, ज्यारे पोताना आंगणे ज रहेला, गुजरातो प्रजाना उत्कर्षमां सर्वोत्तम अने अजोड फाळो आपनार जैनधर्म अंगे के तेमना साधुपुरुषो अंगेनुं ज्ञान मेळववामां खूब खूब पश्चात रह्या छे. अरे, तेओनुं घणीवार तो ओरमाया पुत्र जेवुं ज वलण जोवाय छे. हजारो वर्षथी जीवता जैनधर्मना ज्ञानना अभावे गुजरातना शिक्षण-विभागमां चालता गुजराती आदि भाषानां पुस्तकोमां, अने अन्य साहित्यमां पण, ज्यां ज्यां भगवान महावीर के जैनधर्म विषे लख्युं छे त्यां त्यां दम विनानुं, छीछरुं लख्युं छे अने केटलीक वार तो धर्मना मर्मनी समजणना अभावे खोटां विधानो करीने अन्याय पण कर्यो छे; जाणे-अजाणे खोटी हकीकतो रजू थई गई छे. आ बधांनां कारणोनी समीक्षानुं आ स्थान नथी, परंतु विद्वानोने मारी सानुरोध प्रार्थना छे के, तेओ ऊंडा ऊतरे अने लखवा पहेलां जैन विद्वानोनो संपर्क साधी, हकीकतोनी चोकसाई करी पछी लखे, लख्या पछी पण सुयोग्य विद्वानने बतावी पछी मुद्रित करे, तो अन्याय थवा नहीं पामे. आशा राखीए के हवेथी तेओ पोतानी ज्ञानसाधनामां जैन विद्वानो, कविओ ने ग्रन्थकारोने जरूर स्थान आपशे.

उपाध्यायजी महाराज ए परमात्मा महावीरदेवना एक साचा अने शिस्तपालक सैनिक हता,

अनेक गच्छो, संप्रदायो अने मतभेदोनां मोजांओथी घूघवता जैनशासनसागरमां तोफाने चढेली धर्म-नौकाना ए साचा सुकानी हता.

उपाध्यायजी महाराजे पोताना जीवननां बधांय वर्षो, जीवननुं सघळुं सुख, जीवननी तमाम कमाई जैनशासनने अर्पण करी दीधां हतां. जीवनना अन्तिम वर्ष सुधी साहित्यसर्जन, शासनसेवा अने धर्मरक्षाना श्वास लेनार ए वीर पुरुष आपणी समक्ष सेवा, त्यार्पण अने पुरुषार्थनो आदर्श नमूनो मूकता गया छे. शासनमां बुद्धिमानो घणा पाके छे, परंतु कर्त्तव्यपरायणो अने नव्य सर्जको गण्यागांठ्या ज पाके छे. उपाध्यायजी एक सर्जक अने क्रान्तिकारी पुरुष हता, तेथी तेओश्रीए भारे बलिदानो-आत्मभोग अने मुश्केलीथी मेळवेल सिद्धिओने टकावी राखवा अपूर्व साहित्य सर्जन कर्युं; ए साहित्यनुं अध्ययन-अध्यापन ने प्रचार थाय ए माटे श्रीसंघे 'यशोविद्यापीठ' जेवी एकाद संस्था ऊभी करवी जोईए.

आजे भौतिक विज्ञान अने राजकारण ए ज जाणे जीवननुं पूर्णविराम होय, एवी भावना अने मान्यता विश्वमां मजबूत थई बेठी छे. वळी, प्रजानुं मानस अनात्मवादी अने भोगी विचारोथी सतत घेरातुं जाय छे. बीजी बाजु प्रजाना नेताओ अने प्रचारक साधनो तरफथी मात्र भौतिक साधनोनां सर्जन, संवर्धन के विवर्धनमां ज प्रजानी सुख-शांति अने आबादीनी सिद्धिओ समायेली छे —आवी जोरशोरथी थई रहेली व्यापक उद्घोषणाओ द्वारा प्रजाना हृदय अने मगजमां सतत भयंकर विषपात थई रह्यो छे. प्रजा आत्मवाद के अध्यात्मवादना कल्याण मार्गथी दूर सुदूर हडसेलाती जाय छे आ रीते ज्यारे भारतीय संस्कृतिनो भव्य प्रकाश अवराई रह्यो छे, त्यारे खरेखर, आवा महर्षिओनी आर्ष वाणी ज प्रजाने उगारी शकशे. कारण के उपाध्यायजी भगवाननी वाणी मानवजातना साचा कर्तव्यने चींधे छे, मानवनी मानवताने समजावे छे, विश्वने प्रेरक पयगाम आपे छे, मंगल अने कल्याणना पवित्र राजमार्गनुं दर्शन करावे छे. माटे एमनी वाणीनो खूब खूब प्रचार थवो जोईए.

आजीवन सर्वांगोपकारी पूज्यपाद गुरुदेवोनुं संस्मरण अने आ कार्यमां सहायक अनार शतावधानी न्याय-व्याकरण-साहित्यतीर्थ जयानन्दविजयजी तथा मुनिश्री वाचस्पतिविजयजीनो साथ शे भुलाय !

अन्तमां सरस्वतीना कृपापात्र, गुरुचरणकमलना अखंड उपासक, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रना अनुपम आराधक, महान विचारक, महानत तत्त्वचिंतक, वाचकवर महोपाध्याय न्यायविशारद न्यायाचार्यने अने तेमनी स्वपर कल्याणकारक प्रज्ञाने अगणित वंदन !

वसंतपंचमी
२०१२, अमदावाद } —यशोविजय

अनुक्रमणिका

श्रीयशोविजय जीवन-कवन दर्शन : विभाग पहेलो

गुणस्तुति अने जीवन-कवन

लेखसंग्रह

विभाग बीजो

अन्य विषयक निबन्धो

★

पू. उ. श्रीयशोविजयगुरुमंदिर प्रतिष्ठा

अने

'श्रीमद् यशोविजय सारस्वत सत्र'नो हेवाल

ન્યાયવિશારદ ન્યાયાચાર્ય મહોપાધ્યાયજી ૧૦૦૮ શ્રીમદ્ યશોવિજયજી
મહારાજના સમાધિમંદિરમાં પધરાવેલી

* પવિત્ર ચરણકમળ પાદુકા *
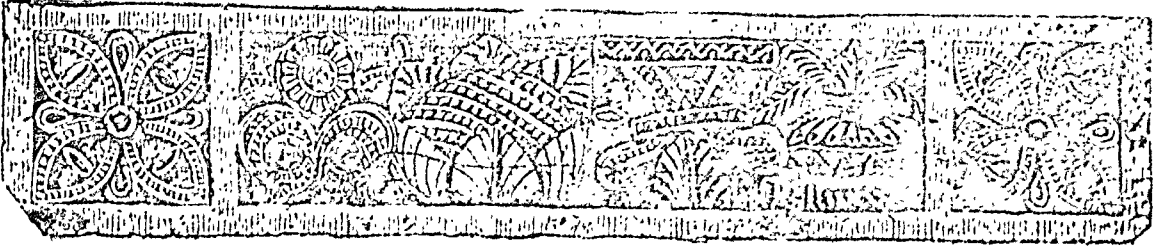
न्यायविशारदन्यायाचार्यतार्किकशिरोमणि

महोपाध्यायश्रीमद्यशोविजयजीस्तुतिः

[स्तुतिकारः उपा. श्रीमानविजयजीगणिवरः]

सत्तर्ककर्कशधियाखिलदर्शनेषु
मूर्द्धन्यतामधिगतास्तपगच्छधुर्याः ।
काश्यां विजित्य परयूथिकपर्षदोऽग्र्या –
विस्तारितप्रवरजैनमतप्रभावाः ॥ १ ॥

तर्कप्रमाणनयमुख्यविवेचनेन
प्रोद्बोधितादिममुनिश्रुतकेवलित्वाः ।
चक्रुर्यशोविजयवाचकराजिमुख्या
ग्रन्थेऽत्र मय्युपकृतिं परिशोधनाद्यैः ॥ २ ॥

(૧) જે મહાપુરુષ સત્યતર્કને કરવાવાળી સૂક્ષ્મ બુદ્ધિવડે–અથવા ઉત્તમ તાર્કિકગ્રંથોના પરિશીલનવડે પ્રખર બનેલી બુદ્ધિથી–સમગ્ર દર્શનોમાં શિરોમણિભાવને પામ્યા છે, તપાગચ્છમાં અગ્રેસર છે, કાશીનગરમાં અન્ય દર્શનીઓની સભાને જીતીને શ્રેષ્ઠ–સર્વોત્તમ એવા જૈનમતના પ્રભાવને જેમને વિસ્તાર્યો છે,—

(૨) અને જેઓશ્રીએ તર્ક, પ્રમાણ અને નય આ ત્રણે ય પદાર્થોથી પ્રધાનપણે કરેલાં શાસ્ત્રીયતત્ત્વોનાં વિવેચનોવડે કરીને પૂર્વકાળના શ્રુતકેવળીઓનું સ્પષ્ટ સ્મરણ કરાવ્યું છે; અને જેઓશ્રીએ આ ગ્રંથનું પરિશોધન કરવાવડે કરીને મારા પર ઉપકાર કર્યો છે, તે શ્રીયશોવિજયોપાધ્યાય વાચકસમૂહમાં મુખ્ય ગણાય છે.

[ઉપાધ્યાય શ્રીમાનવિજયગણિવરે વિ. સં. ૧૭૩૧ની સાલમાં રચેલા
'ધર્મસંગ્રહ' નામના ગ્રંથની પ્રશસ્તિમાંથી, શ્લો. ૧૦–૧૧]
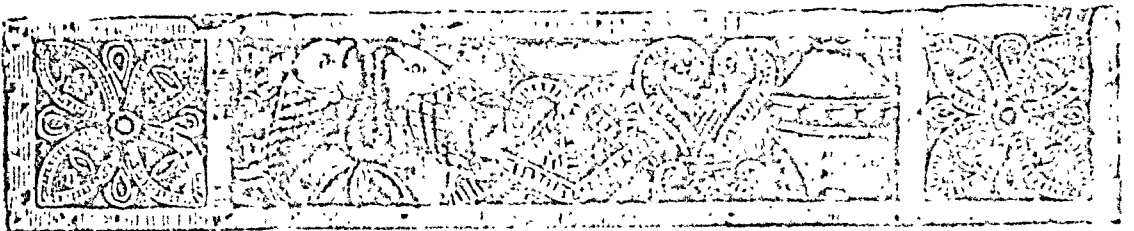
श्रीगौतमस्वामिने नमः ।

श्रीमद्यशोविजयोपाध्यायगुणस्तवनाष्टकम् ।

[वसन्ततिलका]

उद्दामवादिविजयो भुवि येन लब्धः, पादौ नमन्ति विबुधा नु विवादमुक्ताः ।
ध्यायन्ति नाम हृदये गुणिनो गुणज्ञा, यस्याद्भुतं सुचरितं मुनयो नुवन्ति ॥ ॥१॥

श्रीमत्समो न भुवने जिनराजभक्तो, यद्धर्ममर्म निखिलं निहितं स्वचित्ते ।
ज्ञानांशुनेव विहतो ममतान्धकारो, विश्रामवाप्य मनसा वचसा हि तेन ॥ ॥२॥

जन्मोदधिं तरितुमाशु सदा क्रियावान्, यज्ज्ञानसिन्धुतरणे विरला इहायाम् ।
जीयाज्जिनागम-रहस्यभरः सुतर्कैः सज्ज्ञानदर्शनचरित्रनिधेर्हि तस्य ॥ ॥३॥

गुर्वीशवीरजिनशासनरक्षणार्थं रम्यं व्यधायि बहु येन सुतर्कशास्त्रम् ।
वेदान्तबौद्ध–विपटादिविचारदक्षं नन्दन्ति वीक्ष्य निपुणास्तमहं नमामि ॥ ॥४॥

मोदं कुलेऽजनि 'कनोडुपुरे' सुजन्म, यस्या पिता विहितवान् यशवन्तनाम ।
यातो हि तेन यशसा य इह प्रसिद्धिं, नन्दन्ति तस्य जनुषा जिनशासनानि ॥ ॥५॥

दत्त्वा शिवं श्रमणसङ्घजनाय सद्योऽ—स्यन् शेमुषीजविभया जडिमान्धकारम् ।
यस्य क्रिया कलिमलौघविनाशिका जा—तः सर्वदा हितकरस्त्रिदिवे स जीयात् ॥ ॥६॥

यस्य श्रिया सकलशास्त्ररहस्यभव्या शोशोभितो भविकसाधुजनात्मकोषः ।
विज्ञानवैभववरं प्रवरं मुनीनां जन्तोर्हितं शमयुतं सततं तमीडे ॥ ॥७॥

यज्ज्ञानगौरवविमूर्तिमतोऽवगाह्य सेवागता बुधजनाः सुखिनो भवन्तः ।
विद्याविभाविहतमोहनमग्नपङ्क्ति — नः संभवन्ति भुवि नो जननाय मुक्ताः ॥ ॥८॥

अवधानकार पूज्य मुनिश्री यशोविजयान्तेवासी
शतावधानी मुनिश्री जयानन्दविजयजी
न्याय–व्याकरण–साहित्य तीर्थ
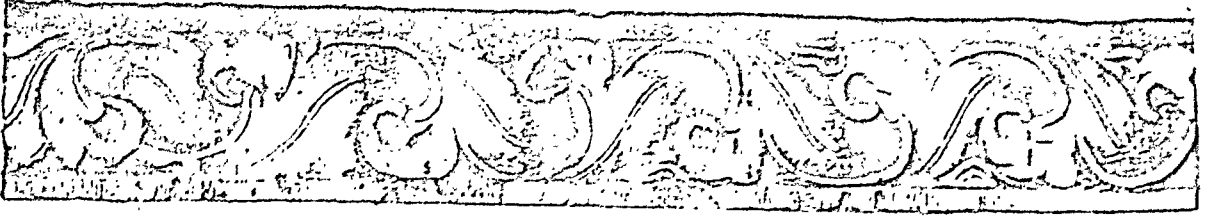
॥ श्रीगौतमस्वामिनेनमः ॥

महोपाध्यायश्रीमद्यशोविजयजिद्गणिवर्याणां

गुणस्तुत्यष्टकम् ॥

[वैतालीयंछन्दः]

यशसा खलु विश्रुतात्मने जिनधर्मैकनिबद्धचेतसे ।
विजयाय यशोऽभिधाय ते सदुपाध्यायवराय नौम्यहम् ॥ १ ॥
जितवादिगजेन्द्रसंहतिं परितः प्रौढविभाविभासितम् ।
जगदेकविपश्चितं न को भुवि जानाति सुतर्कपण्डितम् ॥ २ ॥
मुनिना निजजन्मनाऽमुना महनीयेन 'कनोडु' नामकम् ।
पुरमत्यधिकं पवित्रितं कुरुते किन्नहि सत्समागमः ॥ ३ ॥
स्पृहणीयगुणं नयाभिधं विजयान्तं गुरुमाश्रितः सुधीः ।
तदुपासनया प्रपेदिवान् विमलज्ञानविभासिसत्क्रियाम् ॥ ४ ॥
नगरीं श्रुतसिद्धिसाधिका-मथ काशीमधिगत्य मञ्जुलाम् ।
चिरमेकमनाः सरस्वती-मुपतस्थे तमसो निवृत्तये ॥ ५ ॥
समशास्त्रविमर्शकोविदः सदनेकान्तमताब्धिपारगः ।
हितकारिवरोपदेशकः किमु धन्यो न मुनीश्वरोऽवनौ ॥ ६ ॥
रचिता विविधा गुणोज्ज्वलाः कृतयस्तर्कवितर्कमण्डिताः ।
विदुषा महता सुदुर्ग्रहाः विबुधा याभिरहो चमत्कृताः ॥ ७ ॥
जिनदर्शनतत्त्वदीपकः प्रशमादीद्धगुणौघसंवृतः ।
भविकव्रजबोधदायको गणिराजो नितरां विराजताम् ॥ ८ ॥

[श्रीमन्नेम्यमृत देवचरणाब्जचञ्चरीकायमाणो-हेमचन्द्रविजयो मुनिः]

ન્યાયવિશારદ, ન્યાયાચાર્ય સ્વ. મહોપાધ્યાય ૧૦૦૮

શ્રીમદ્ યશોવિજયજી ગુણગીત

[રાગ—રઘુપતિ રાઘવ રાજારામ]

શ્રી યશોવિજયજી તારૂં નામ, કલ્યાણકારી મંગલ નામ,
મંગલ નામ મંગલ નામ, વિદ્યાવર્ધક તારૂં નામ. શ્રી૦ ૧

ન્યાયવિશારદ મનવિશરામ, પાયા પદ તેં કાશી ઠામ,
ચોથે પાઠકપદ અભિરામ, આપો સુખ શાંતિ આરામ. શ્રી૦ ૨

જિનશાસનના છો શણગાર, કીધી સેવા અપરંપાર,
શાસ્ત્રો રચી કીધો ઉપકાર, કહેતાં નાવે ગુણનો પાર. શ્રી૦ ૩

સરસ્વતી વર દીધો સાર, કાવ્યો રચીયાં તેં રસાળ,
શ્રુતકેવલીના છો અવતાર, સ્મરણ–ભજન છે સુખકાર. શ્રી૦ ૪

અજોડ પ્રભાવક મહામુનિરાજ, શ્રદ્ધાંજલિ અર્પે જૈનસમાજ,
'સુયશ' વંદન લાખલાખ આજ, આપો આશીષ સીઝે કાજ. શ્રી૦ ૫

[સત્ર પ્રસંગે ગવાયેલું ગીત] [ક૦ મુનિશ્રી યશોવિજયજી]

પૂ. उपाध्यायजी भगवाननां वचनो एटले—

[લે : પરમપૂજ્ય આચાર્ય ૧૦૦૮ શ્રીમદ્ વિજયનેમિસૂરીશ્વર મહારાજાન્તેવાસી પરમપૂજ્ય આચાર્ય શ્રીમાન વિજયોદયસૂરીશ્વરજી મહારાજ]

૧. પરમોપાસ્યચરણ ભગવંત ઉપાધ્યાયજીનાં વચનો એટલે—

પ્રમાણ, નય, સપ્તભંગી, સકલાદેશ, વિકલાદેશ, નિક્ષેપ વગેરેના નિષ્કર્ષરૂપ સ્વરૂપ પ્રદર્શન સાથે પદાર્થોના સંસ્કૃત-પ્રાકૃત અને પ્રચલિત લોકભાષામાં ગદ્ય-પદ્યગર્ભિત ઐદમ્પર્ય વિચારપ્રદર્શક દીવાઓ.

* * *

૨. ભગવંત ઉપાધ્યાયજીનાં વચનો એટલે—

શ્રીજિનેશ્વરદેવ પ્રત્યેનો અવિહડ ભક્તિરસ પ્રકટાવનાર પીયૂષના ઝરાઓ. બોધિબીજના અંકૂર ખીલવનાર પુષ્કરાવર્તમેઘ. સુવર્ણમુદ્રામુદ્રિત ટંકશાળી વચનો. અબાધિત સિદ્ધાન્ત વાક્યો.

* * *

૩. ભગવંત ઉપાધ્યાયજીનાં વચનો એટલે—

સમ્યગ્દર્શનની નિર્મળતા અને દૃઢતા કરાવવા સાથે પ્રભાવશાલી પ્રભુશાસન ઉપરના અસીમ પ્રેમભાવ અને બહુમાનને ઉત્તેજિત કરનાર પરમસાધનો.

* * *

૪. ભગવંત ઉપાધ્યાયજીનાં વચનો એટલે—

પદે પદે ન્યાયકોટિની ઉચ્ચકક્ષાનું નિષ્કર્ષ, પ્રાવચનિક-તાર્કિક, કાર્મગ્રન્થિક, સૈદ્ધાન્તિક આદિ પરમસ્વરૂપ યાવત્ ધર્મમેઘ સમાધિ પરમસમરસ ભાવ અને પ્રભુ સાથે સમાપત્તિરૂપ એકાગ્રતા પ્રાપ્ત કરવાની સરણિ.

* * *

૫. ભગવંત ઉપાધ્યાયજીનાં વચનો એટલે—

શ્રુતકેવલી ભગવંતોના અમાપ શ્રુતસમુદ્રનું અવગાહન કરવાને મહાનાવ, આત્માને પ્રભુધર્મથી રસવેધિત તામ્રના સુવર્ણભાવની જેમ, અગર ચોળ મજીઠરંગથી રંગિત વસ્ત્રની જેમ રંગાવનાર નિર્મળ નિરૂપમ રસકૂંપિકાનો ઝરો.

* * *

૬. ભગવંત ઉપાધ્યાયજીનાં વચનો એટલે—

મિથ્યાત્વરૂપ દુર્ગમપર્વતો ભેદવામાં વજ્ર, પદાર્થ તત્ત્વવિષયક–સન્દેહ, વિપરીત જ્ઞાન–અજ્ઞાનાદિ ગાઢ અન્ધકાર, ટાળવામાં ઝગઝગતો સૂર્ય.

* * *

૭. ભગવંત ઉપાધ્યાયજીનાં વચનો એટલે—

પૂર્વના શ્રુતકેવળી ભગવંતોનું સ્મરણ કરાવનાર અથાગ પ્રતિભાશાળી વૈભવ.

આવી આવી અનેક ઉપમાઓ અને સુશ્લાઘ્ય પ્રશંસાને પાત્ર ભગવાન મહોપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજશ્રીની વિશાલ અને આદર્શ પ્રતિજ્ઞા તો જૂઓ કે.

> स्याद्वादार्थः क्वापि कस्यापि शास्त्रे यः स्यात् कश्चिद् दृष्टिवादार्णवोत्थः ।
> तस्याख्याने भारती मत्स्पृहा मे भक्तिव्यक्तेर्नाग्रहोऽणौ पृथौ वा ॥

ભાવાર્થ—દૃષ્ટિવાદ (બારમું શાસ્ત્રાંગ) સમુદ્રથી પ્રકટથએલ સ્યાદ્વાદ પદાર્થપીયૂષ કોઈના પણ શાસ્ત્રમાં કોઈપણ વિભાગમાં, જે હોય તેનું વ્યાખ્યાન કરવામાં, સ્યાદ્વાદ ઉપર પ્રકટ ઉલ્લસતી ભક્તિ હોવાથી મારી બુદ્ધિ–વાણી સ્પૃહાવાળી જ વર્તે છે. ભક્તિની સ્પષ્ટતાથી થોડા–વધારેમાં ન્હાના–મ્હોટામાં, સૂક્ષ્મ–સ્થૂલમાં, અણુ–વિશાલમાં કોઈ જાતનો આગ્રહ–તફાવત નથી.

આ હતી તેઓશ્રીની વિશિષ્ટ ઉદારભાવના.

આવા અનેક ગુણગણસાગર ભગવાન ઉપાધ્યાયજી મહારાજ અને તેમની વાણીને વારંવાર વંદન.

અર્ઘ્યાંજલિ

[લેખક : પરમપૂજ્ય આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજયલબ્ધિસૂરીશ્વરજી મહારાજ]

तत्त्ववाणीप्रकाशेन येन व्याप्ता वसुन्धरा ।
तं यशोविजयं नित्यं यशश्चन्द्रं नमाम्यहम् ॥ १ ॥

तर्कदर्शनवेत्तारं नेतारं मुक्तिवर्त्मनि ।
दर्शनत्रयदातारं श्रीयशोविजयं स्तुवे ॥ २ ॥

काश्यां प्राप्तं पदं येन रम्यं न्यायविशारदम् ।
न्यायाचार्यं वरेण्यञ्च तं यशोविजयं भजे ॥ ३ ॥

૧. ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે શ્રી જિનેશ્વરમહારાજના અનુપમ જૈનશાસનના અનન્ય ભક્ત.

૨. ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે સત્તરમી સદીના જૈન શાસનના વિરોધિઓ સામે ઝઝૂમનાર એક અદ્વિતીય વિજયી સુભટવર.

૩. મહોપાધ્યાય ભગવાન શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે અકાટ્ય યુક્તિઓના ભંડાર, ચરણસિત્તરી અને કરણસિત્તરીમાં દત્તચિત્ત એક અનુપમ અણગાર અને શ્રીજૈનશાસનની ચમક વધારનાર શ્રીજૈનશાસનના અણગાર.

૪. વાચકપ્રવર શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે શ્રીજૈનશાસનના સૂક્ષ્મતત્ત્વોને ખૂબખૂબ ખીલવટ આપનાર અને વિસ્તારથી વર્ણવનાર તાર્કિક ચક્રવર્તિ. દ્વાદશારનયચક્ર ગ્રન્થપ્રણેતા શ્રીમલ્લવાદી આચાર્યભગવંતની ઝાંખી કરાવનાર અપૂર્વ સાહિત્યના સર્જનહાર શ્રીજૈનશાસનના સ્થંભરૂપવાદી.

૫. ન્યાયવિશારદ મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે ૧૪૪૪ ગ્રંથના કર્તા આચાર્ય ભગવંત શ્રીહરિભદ્રસૂરીશ્વરજી મહારાજની જેમ આગમાનુસારી આગમમાં નહિ એવા અદ્ભુત વિચારોનું પ્રદર્શન કરાવનાર આચાર્ય ભગવંત શ્રીહરિભદ્રસૂરીશ્વરજી મહારાજના લઘુભ્રાતા.

૬. ન્યાયાચાર્ય પાઠકશિરોમણિ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે રૂપકાલંકારથી સંસારની અસારતાના દ્યોતક દૃષ્ટાંતોને યોજવામાં સિદ્ધર્ષિની હરોળમાં આવનાર સત્તરમીસદીના એક અપૂર્વ કથાનિર્માતા.

૭. ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે સંસ્કૃત, પ્રાકૃત, માગધી, મારવાડી, મેવાડી, ગુજરાતી આદિ ભાષાઓમાં રોમાંચક કવિતાકાર, વિપુલ સાહિત્ય સમર્પક, જૈનધર્મના એક મહાન ધોરીપુરુષ.

૮. ચતુર્થપદ વિભૂષિત શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે જૈનશાસનના અનેક વિરોધીઓની વચ્ચે જૈનશાસનની સત્યવાતોને કવિતામાં રચી તથા યુક્તિ-પ્રયુક્તિવાળા ગ્રન્થો રચી, વ્યાખ્યાનની વ્યાસપીઠપરથી બુલંદ ધ્વનિએ વ્યાખ્યાનો આપી, વિરોધીઓની જડ ઉખેડનાર, વિરોધીઓ તરફથી થતા આકરા ઉપસર્ગો સહવામાં એક મહાન ધીરપુરુષ.

૯. ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે જિનશાસનના રંગથી જ એકરક્ત.

૧૦. મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજીમહારાજ—એટલે બહારના વિષયોથી સદૈવ અનાસક્ત.

૧૧. વાચકપ્રવર શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે જિનઆગમનાં બારીક તત્ત્વોને વિશદ બનાવનારી વિચારણામાં અને પ્રચારણામાં પ્રસક્ત.

૧૨. પાઠક શેખર શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે દુનિયાના અન્ય ધર્મતત્ત્વોથી શ્રીવીતરાગકથિત તત્ત્વો જ સારભૂત છે એવી સિદ્ધિમાં જ સંસક્ત.

૧૩. ન્યાયવિશારદ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે ચરણસિત્તરી અને કરણ સિત્તરીના પરમ ઉપાસક કોઈ એક મહાન વિરક્તયોગી.

૧૪. વાચકપદ વિભૂષિત શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે ભવિક હૃદયોના હાર.

૧૫. ન્યાયાચાર્ય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે વિશિષ્ટ રચનાકાર.

૧૬. પાઠકપ્રવર શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે અસત્ય તત્ત્વોના અનુપમ ખંડનકાર.

૧૭. ન્યાયવિશારદ ન્યાયાચાર્ય મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ—

એટલે પરમપ્રભાવક શ્રીહીરસૂરીશ્વરજી મહારાજાના સમુદાયના પંડિતસાર.

એઓશ્રીજીને અમારી કોટાનુકોટિ વંદનશ્રેણિ

શાસનપ્રભાવક ન્યાયાચાર્ય ન્યાયવિશારદ મહોપાધ્યાય

શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજ અને જ્ઞાનસાર-કીર્તન

[લેખકઃ-**પરમપૂજ્ય આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજય પ્રતાપસૂરીશ્વરજી** મહારાજ]
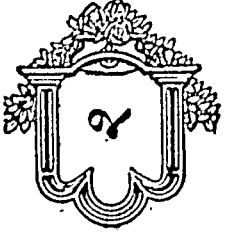
ગતમાં એ જ યોગીપુરુષો વંદનીય હોય છે કે જેઓએ ઐહિક, પારલૌકિક-કાર્યોથી તટસ્થ (પર) રહી આત્મકલ્યાણ વાસ્તે આત્મપરિણતિને નિર્મલ બનાવી છે, ઉભયલોકથી પર-શ્રેયોમાર્ગ અપનાવ્યો છે. એમના ગુણોનું કિંચિત્ સ્મરણ કરવું એ પણ મહાસૌભાગ્યનું ચિન્હ છે. ધન્ય છે તેઓને કે જેઓ સદા ય તત્ત્વદૃષ્ટિ એવા એ પુણ્યપુરુષની સાક્ષાત્ છાયામાં આવ્યા હશે. જેનું આત્મસ્મરણ બાહ્ય-અભ્યંતર, કેવલ અધ્યાત્મમાં જ અવિચળ છે, એમનાં ચરિત્રની ભાવનાની (અંશ) ગણનામાં આપણે પામર મનુષ્ય આવીએ તો એ સદ્ભાગ્ય છે. **એ મહાયોગિ પુરુષોના જે ઉદ્ગાર એ જ આગમ છે.** કેમકે જેમનો આત્મા અધ્યાત્મસ્વરૂપ ઓતપ્રોત છે. તેની જે કંઈ વચનાવલી નીકળે તે સ્વપરકલ્યાણકારક જ હોય છે. એમનું જે આચરણ એ જ **ચરણાનુયોગ.** તથા જે શબ્દોવડે ગુંથી (સાંકળી) એમની પ્રવૃત્તિને લખાય છે એ **ચરણાનુયોગ** એમનો વિહાર એનો જ **તીર્થ** શબ્દ તરીકે વ્યવહાર હોઈ શકે છે. જેમ,-"બીજું તીરથ સેવના સખી તીરથ તારે જેહરે, તેહ ગીતારથ મુનિવરા સખી તેહ શું કીજે નેહરે."-તથા સંસારના કારણરૂપ મોહપર જેણે વિજય પ્રાપ્ત કર્યો એ જ **પરમાત્મપદના અધિકારી છે.** એ શાસ્ત્ર ઉક્તિ, તાત્ત્વિક દૃષ્ટિએ **ખુદ શ્રી ઉપાધ્યાયજી મહારાજના** આશયથી તો એ છે કે "પરમાત્માની કેવળ ઉપાસના અને જપ (ધ્યાન)થી પરમાત્મપદ નથી મળતું, પણ પરમાત્મા-પ્રતિપાદિત (કહેલ) માર્ગ ઉપર ચાલવાથી **પરમાત્મા** થઈ શકાય છે. આવા અનેક ગુણપ્રભાન્વિત પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીનાં ગુણ ગાન કે પ્રશંસા માટે આ લેખિનિમાં એ શક્તિ નથી કે એ પૂજ્યશ્રીનાં ચરિત્રનો અંશ પણ લખી શકે ? તો પણ એમના ઉપર અંતરંગ જે ઉપાસના-ભાવ અને સદ્ગુરૂના ચરણકમળ રજનો પ્રભાવથી મને શ્રદ્ધા છે કે **એમના ચરણરજનો સેવક એની કૃપાથી જરૂર કૃતકૃત્ય બની શકે છે.** પરમપૂજ્ય શ્રીમાન ઉપાધ્યાયજી મહારાજનું અગાધ પાંડિત્ય, એ જ્ઞાનના મહાસાગર, તેમના વિશુદ્ધ ચારિત્રાદિ ગુણો આજે આપણી સામે તેમનો સ્થૂલ દેહ ન છતાં એનું પ્રત્યક્ષ ચિંતામણિ રત્નતુલ્ય વાઙ્મય, અનેક વિષયોથી ભરપૂર અનેક શાસ્ત્ર ગ્રંથો કહી બતાવે છે. એ પ્રભાની છાયાનો મને આંશિક સ્પર્શ ન છતાં એમના વિષે કંઈ કહેવું એ કેમ બને ? ફક્ત મારા લાભ ખાતર એ ગુરુપદના આરાધન માટે કંઈક આ પ્રયાસ છે. એઓશ્રીના અધ્યાત્મવિષયક ગ્રંથો પૈકી **જ્ઞાનસાર** મુખ્ય છે. એમના અનેક ગ્રંથો પૈકી પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજનો શ્રીજ્ઞાનસારનો ગ્રંથ એ ખરેખર જ્ઞાનસાર જ છે. વસ્તુતઃ સ્વઅનુભવનો જ ખજાનો ભર્યો છે. તેમાં બત્રીસ અષ્ટક-પ્રકરણ છે જેમાં એક એક પ્રકરણ રહસ્ય પૂર્ણ વિષયનાં છે.

તે વિષયો જો કે અન્યશાસ્ત્રમાં હોવા છતાં એનું સંકલન સરલ અને રોચક શૈલીથી કરવામાં આવ્યું છે. એકંદર આધ્યાત્મિકદૃષ્ટિએ પ્રતિપાદન કર્યું છે એ જ તેઓની પ્રતિભા અને અનુભવ જૈનેતર ભિન્નભિન્ન અનેક મત દર્શનનો શાસ્ત્રીય અનુભવ એ એમની સૂક્ષ્મ-દૃષ્ટિ જણાઈ આવે છે. આ જ્ઞાનસાર ગ્રંથ કેટલો આધ્યાત્મિક ઉચ્ચકોટિનો છે. એ ઉપાધ્યાયજી શ્રી પોતેજ ઉપસંહારમાં પોતાના જ આત્મવિશ્વાસે રણકાર થતા અવાજે જણાવે છે કે—

स्पष्टं निष्टङ्कितं तत्त्वमष्टकैः प्रतिपन्नवान् ।
मुनिर्महोदयं ज्ञान-सारं समधिगच्छति ॥

[उपसंहार श्लो. ५]

બત્રીસ અષ્ટકો વડે પ્રગટ નિર્ધારેલા તત્ત્વને પ્રાપ્ત થયેલા મુનિ, જેનાથી મહાન ઉદય છે એવા શુદ્ધ ચારિત્ર તથા પરમ મુક્તિરૂપ જ્ઞાનસારને પામે છે.

આગળ એનું જ શાસ્ત્રાધારે પોતે પ્રમાણ આ રીતે આપે છે.

" सामाइअमाइअं सुअनाणं जाव बिंदुसाराओ ।
तस्स हि सारो चरणं, सारो चरणस्स निव्वाणं "॥

સામાયિકથી માંડી ચૌદમા લોકબિંદુસાર પૂર્વ સુધી શ્રુતજ્ઞાન છે, તેનો સાર ચારિત્ર છે અને ચારિત્રનો નિર્વાણ છે. જુઓ એ જ પુષ્ટનો આ એક વધારે પુરાવો.

निर्विकारं निराबाधं, ज्ञानसारमुपेयुषाम् ।
विनिवृत्तपराशानां मोक्षोऽत्रैव महात्मनाम् ॥

[उप० श्लो० ६]

વિકારરહિત અને બાધારહિત એવા જ્ઞાનસારને પ્રાપ્ત થયેલા અને પરની આશા જેની નિવૃત્ત થઈ છે એવા મહાત્માઓને આ જ ભવમાં બન્ધની નિવૃત્તિરૂપ મોક્ષ છે:—

તથા આ ગ્રંથ ઉપર એઓશ્રી એ ગુજરાતી ભાષામાં બાલાવબોધ રુપ અનુવાદમાં કહ્યું છે કે **"બાલિકાનિ લાળ ચાટવા જેવો આ બાલાવબોધ નીરસ નથી, પરંતુ તે** ન્યાયમાલારૂપ અમૃતના પ્રવાહ સરખો છે." જૈનેતરમાં ભગવદ્ગીતાનો આધ્યાત્મિકજ્ઞાન તરીકે આદર છે. કિન્તુ એ મંતવ્યમાં ઘણાં મતાંતરો છે. જ્યારે આ ગ્રંથ તો તેની રચના પ્રૌઢ છતાં સુબોધ, હૃદયંગમ અને સ્વાધ્યાય માટે ખાસ ભાવવાહી પ્રસાદરૂપ જ્ઞાનના ઉપનિષદ્રૂપ છે. જેમ જેમ વાચન, મનન કરાય; તેમ તેમ એનો આધ્યાત્મિક અનુભવ અને સ્વસ્વરૂપરમણ બની શકાય પરંતુ—

केषांचिद्विषयज्वरातुरमहो चित्तं परेषां विषा-
वेगोदर्ककुतर्कमूर्च्छितमथान्येषां कुवैराग्यतः ।
लग्नालर्कमबोधकूपपतितं चास्ते परेषामपि,
स्तोकानां तु विकारभाररहितं तज्ज्ञानसाराश्रितम् ॥

[प्रशस्ति श्लो. २]

અહો ! કેટલાએકનું મન વિષયરૂપ તાવથી પીડિત થયેલું છે, બીજાઓનું મન વિષના આવેગ સરખા અને તત્કાલ છે ફળ જેનું એવા કુતર્ક–કુવિચારવડે મૂર્છિત થયેલું છે, અન્યનું મન કુવૈરાગ્ય–દુઃખગર્ભિત અને મોહગર્ભિત વૈરાગ્યથી કરડેલો છે હડકાયો કૂતરો જેને એવું, એટલે કાલાન્તરે જેનો કટુક વિપાક થાય તેવું છે. બીજાઓનું ચિત્ત અજ્ઞાનરૂપ કૂવામાં પડેલું છે. **પરંતુ થોડાઓનું મન વિકાર ભારથી રહિત જ્ઞાનસાર** વડે આશ્રિત છે.—

ઉપરના ઉપાધ્યાયશ્રીજીના અનુભૂત ઉદ્‌ગાર મુજબ—

“ विरलास्तद्रसास्वादविदोऽनुभवजिह्वया ”

[अनुभवाष्टक श्लो० ५]

એટલે કે અનુભવરૂપ જીભ વડે શાસ્ત્ર રૂપ ક્ષીરના રસાસ્વાદને જાણનારા થોડા છે. એટલે શાસ્ત્રજ્ઞાન તે બાહ્ય છે, **અને અનુભવ** તે **અંતરંગ** બાબત છે.

તો પછી હું આ ગ્રંથનું માહાત્મ્ય શું કહી શકું ?

આ ગ્રંથ રચના–સમાપ્તિ, ગૂજરાત સિદ્ધપુરમાં શ્રી મહાવીરનિર્વાણ દિવાળીને દિવસે પૂર્ણ કરતાં આજ ગ્રંથાન્તે પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીએ પોતે જ કહેલું માહાત્મ્ય રજૂ કરી ગુણ-સ્તવના પૂર્ણ કરૂં છું.

“ આ ગ્રંથ પૂર્ણાનન્દઘન આત્માના ચારિત્રલક્ષ્મીની સાથે પાણિગ્રહના મહોત્સવ રૂપ છે. વળી આ શાસ્ત્રમાં ભાવનાસમૂહરૂપ પવિત્ર ગોમયવડે ભૂમિ લીપી છે. ચોતરફ સમતારૂપ જલનો છંટકાવ કર્યો છે. રસ્તામાં સ્થળે સ્થળે વિવેકરૂપ પુષ્પની માલાઓ લટકાવી છે. અને આગળ અધ્યાત્મરૂપ અમૃતથી ભરેલો **કામકુંભ** મૂકયો છે. આ બધું પૂર્ણાનન્દઘન આત્માને અપ્રમાદનગરમાં પ્રવેશ કરવામાં **મંગલરૂપ** છે.” (પ્રશસ્તિ શ્લોક. ૩)

આ જ્ઞાનસારના અભ્યાસી બની અનેક આત્મહિતેચ્છુ પુન્યવંતો આ જ્ઞાનસારરૂપ ચારિત્રગુણ પ્રાપ્ત કરી સ્વશ્રેય સાધે એ શુભેચ્છા.

यत्र रोधः कषायाणां, ब्रह्मध्यानं जिनस्य च ।
ज्ञातव्यं तत् तपः शुद्धं, अवशिष्टं तु लंघनम् ॥

અર્થ:—જે તપમાં કષાયોનો રોધ, બ્રહ્મચર્યનું પાલન અને વીતરાગદેવનું ધ્યાન થતું હોય, તે જ શુદ્ધ તપ જાણવું અને બાકીનું તો સર્વ લંઘન માત્ર સમજવું.

॥ सकललब्धिसंपन्नाय श्रीमते गौतमगणधराय नमोनमः ॥

વાચકશિરોમણિ ન્યાયાચાર્ય ન્યાયવિશારદ

પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજ આજે પણ અજર-અમર છે

[લે:-પરમપૂજ્ય આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજયધર્મસૂરીશ્વરજી મહારાજ]

કસ્તૂરી કેશર કિંવા કપુર બરાસ વગેરે ભૌતિક સુગંધી પદાર્થોની સુવાસ મર્યાદિત છે. પરંતુ સંત-સાધુઓના અંતરાત્મામાં પ્રગટેલ શ્રદ્ધા-સંયમાદિ સદ્ગુણોની સુવાસ અમર્યાદિત છે. કસ્તૂરી કેશર વગેરે પદાર્થો પોતાની હાજરીમાં તો સુવાસ આપે છે; પરંતુ પોતાની ગેરહાજરીમાં સુવાસ આપવાની તે પદાર્થોમાં શક્તિ નથી. અને કદાચ સુવાસ આપે તો બે પાંચ કલાક પુરતી જ. જ્યારે સંત-સાધુ પુરુષો પોતાની હયાતીમાં તો સુવાસથી મઘમઘતા બગીચા સમાન હોય છે; પરંતુ તેઓનાં સ્વર્ગગમન બાદ સેંકડો-હજારો વર્ષો પર્યંત તે સંત પુરુષોના સદ્ગુણોની સુવાસ વિશ્વમાં પથરાયેલ રહે છે. ભૌતિક પદાર્થોની સુવાસ કરતાં આત્માની સુવાસ દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ અનંતગુણ અધિક છે. પોતાના જીવનમાં જે કોઈ સન્તે આવી આત્મગુણોની સુવાસ પ્રગટાવેલ છે. તે મહાપુરુષનું જીવન ધન્ય છે, સફલ છે, સાર્થક છે.

લગભગ આજથી ત્રણસો વર્ષો અગાઉ વિશ્વમાં શ્રદ્ધા-સંયમની સુવાસ પાથરનાર, ઝાંખી થયેલી જ્ઞાનજ્યોતિને વધુ સતેજ કરનાર અને કટોકટીના સમયે ધર્મશાસનની સુંદર વ્યવસ્થાને સુરક્ષિત રાખનાર ન્યાયાચાર્ય ન્યાયવિશારદ વાચકશિરોમણિ મહોપાધ્યાય શ્રીમાન યશોવિજયજી મહારાજ નામે એક સમર્થ મહાપુરુષની જૈન શાસનને ગુર્જરભૂમિ તરફથી ભેટ પ્રાપ્ત થઈ હતી. પાટણ પાસે કનોડુ ગામ એ સંતપુરુષની જન્મભૂમિ હતી. માતા સૌભાગદે અને પિતા નારાયણનો એ કુલદીપક પુત્ર હતો. જન્મ-જન્મની આરાધનાના પ્રતાપે બાલ્યવયમાં જ સંસ્કાર અને સમ્યગ્જ્ઞાનની પ્રતિભા એ કુલદીપકનાં મુખમંડલ ઉપર સ્પષ્ટ દેખાઈ આવતી હતી. બે ચાર વખત શ્રવણ કરતા માત્રમાં અખંડ ભક્તામર સ્તોત્ર બરાબર કંઠસ્થ થઈ જવું એ જ્ઞાનપ્રતિભાનું પ્રગટ રૂપ હતું.

સદ્ગુરુનો સમાગમ, અંતરનો સાચો વૈરાગ્ય, માતપિતાની શુભાશિષ સાથે સંયમના પુનિત માર્ગનો સ્વીકાર, સંયમના સ્વીકાર પછી સતત શાસ્ત્રાભ્યાસ, શાસ્ત્રોનાં વધુ પરિશીલન માટે કાશી-આગ્રા જેવા દૂરવર્તિ સ્થળોમાં પૂજ્યગુરુદેવ સાથે ગમન અને વર્ષો પર્યંત ન્યાય વગેરે સર્વદર્શનનો અપ્રમત્તભાવે અભ્યાસ તેમ જ તે અભ્યાસ દ્વારા પ્રગટ થયેલ સાચી પરીક્ષાશક્તિ અને સમન્વયશક્તિ વગેરે, એ સંતના જીવન પ્રસંગોનું જેટલું વર્ણન કરીએ તેટલું અલ્પ છે. એ પવિત્ર સાધુ પુરુષે પોતાના અંતરમાં શ્રદ્ધા અને સંયમની અનુપમ આરાધના તેમ જ શ્રુતજ્ઞાનના સતત પરિશીલન દ્વારા દિવ્યપ્રકાશ પાથરનાર આત્મજ્યોતિ પ્રગટાવી. એ પુન્યવિભૂતિએ પોતાના અંતરમાં એ અદ્ભૂત આત્મજ્યોતિ

પ્રગટાવીને જ સંતોષ ન માન્યો, પરંતુ અનેક વિષયો સંબંધી સાહિત્ય સર્જન તેમ જ સદ્દુપદેશદ્વારા સંખ્યાબંધ માનવ હૈયામાં એ દિવ્યપ્રકાશમય આત્મજ્યોતિનો ઝગમગાટ પ્રગટ કરી અનંતકાલનાં અંધકાર પટલોને દૂર કર્યાં.

અનંતજ્ઞાની તીર્થંકર દેવોએ જણાવેલા અનંતશાંતિના માર્ગને સમજવો, એ માર્ગ ઉપર યથાર્થ શ્રદ્ધા થવી, તેમજ અનંતશાંતિના પુનિતપંથે પ્રયાણ કરવું. એ ઉત્તરોત્તર યદ્યપિ વધુને વધુ દુષ્કર છે. પરંતુ એ બધા ય કરતાં અનંતશાંતિના પવિત્ર રાજમાર્ગમાં ડગલે પગલે કંટક વેરનારાઓનો સામનો કરવા, સાથે વેરાયેલા કંટકો દૂર કરી અનેકાનેક મુમુક્ષુ આત્માઓ માટે એ પવિત્ર રાજમાર્ગને સાફ અને સુરક્ષિત રાખવાનું કાર્ય ખૂબ જ વિકટ છે.

બીજા બધાય તીર્થંકર દેવોનાં ધર્મશાસનની અપેક્ષાએ ચરમતીર્થંકર શ્રમણભગવાન મહાવીર પ્રભુનાં ધર્મશાસનની પરિસ્થિતિ ખૂબ જ ભિન્ન પ્રકારની છે. કાળનું પરિબલ માનો કે આત્માઓના પુન્યબલની ખામી માનો, પરંતુ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરપ્રભુનાં ધર્મ-શાસનમાં થોડા થોડા સમયને અંતરે કંટક પાથરનારી વ્યક્તિઓનો વધુ પ્રાદુર્ભાવ થયો છે. શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનાં નિર્વાણથી આજ સુધીનાં લગભગ અઢીહજાર વર્ષોના ઇતિહાસનું સિંહાવલોકન કરવામાં આવે તો બૌદ્ધ વગેરે અન્યદાર્શનિકોનાં આક્રમણ ઉપરાંત સ્વદર્શનમાં પ્રગટ થયેલ સેંકડો ગચ્છ–મત–સંપ્રદાયના ભિન્ન ભિન્ન ભેદોની હારમાળા આપણને જાણવામાં આવશે. સર્વોત્તમ જૈનશાસનની અદ્દભૂત શક્તિનો હ્રાસ કોઈ પણ કારણે થયો હોય તો પોતાના ઘરમાં પ્રગટેલા ભિન્ન ભિન્ન ગચ્છમતોની પરંપરા અને તે માટેનો વધુ પડતો દુરાગ્રહ જ છે.

ધર્મગ્રંથોમાં જૈન ધર્મશાસનને સિંહસમાન ગણ્યું છે. અને ઇતર ધર્મશાસનોને અન્ય વનપશુઓની સાથે સરખાવેલ છે. અન્ય હાથી–ઘોડા વગેરે વન પશુઓથી સિંહને યત્કિંચિત્ પણ ભય સ્થાન નથી હોતું. અન્ય વનપશુઓનાં પ્રચંડ આક્રમણનો સામનો કરવાની શક્તિ એ કેશરીસિંહમાં અવશ્ય હોય છે. પરંતુ એ જ કેશરીસિંહના પોતાના શરીરમાં જ જ્યારે રોગ થાય અને કીડાઓ પેદા થાય છે ત્યારે એ પ્રચંડ પ્રાણીની શક્તિનો વિનાશ સર્જાય છે. જૈન ધર્મશાસન ઇતર ધર્મશાસનોથી કોઈ પણ સમયે પરાભવ પામ્યાનું નથી જાણ્યું. હરકોઈ પળે એ અનેકાન્તવાદની અનુપમ ચાવી ધરાવનાર જૈનશાસનનો પ્રત્યેક પ્રસંગે વિજય થયો છે. એમ છતાં જૈનશાસનની વર્ત્તમાનમાં જે શીર્ણ–વિશીર્ણ દશા છે તે એ જ ધર્મશાસનમાં પ્રગટેલા ગચ્છ–મત–સંપ્રદાયના સંખ્યાબંધ કદાગ્રહી કીડાઓને આભારી છે.

ઉપાધ્યાયજી મહારાજનો સમય એટલે જૈનધર્મશાસનની પેઢી ઉપર ટાંચ આવવા જેવો વિકટ સમય હતો. એક બાજુથી ઈતર સંપ્રદાયોમાં ધર્મના ઓઠા નીચે ભોગ વિલાસનું સામ્રાજ્ય વૃદ્ધિ પામતું હતું. જ્યારે જૈન દર્શનના પોતાના આલિશાન મહેલમાં કોઈએ (શુષ્ક) અધ્યાત્મવાદના નામે, તો કોઈએ (સ્વરૂપ) હિંસાના નામે, કોઈએ નિશ્ચય-

નયવાદના ઓઠા નીચે, તો કોઈએ જ્ઞાનવાદના નામે આગ સળગાવવાના પ્રયત્નો શરૂ કર્યા હતા. જૈન શાસનની એ મ્હેલાતનો અમુક ભદ્રિક વર્ગ એ આગનો ભોગ પણ થઈ ચૂક્યો હતો. એવા વિકટ સમયે એ સળગતી આગના સંતાપની પરવા કર્યા સિવાય તે તે વ્યક્તિઓની સાથે વ્યક્તિરૂપ સગપણ રાખ્યા વિના વાદ-વિવાદો દ્વારા, તે તે સ્થળોએ જઈને શાસ્ત્રીય દલીલો સુક્ત, મધુરી ધર્મદેશના દ્વારા અને તે તે વિષયનું સચોટ પ્રતિપાદન કરનાર-સંસ્કૃત-પ્રાકૃત-હિંદી-ગુજરાતી ભાષામાં સંખ્યાબંધ શાસ્ત્રગ્રન્થોની રચનાદ્વારા ખૂબ ખૂબ શીતલ જળનો છંટકાવ કરીને પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજે આગ ઓલવવાનો ભગીરથ પુરૂષાર્થ કર્યો હતો. તેમ જ તેઓએ પોતાના એ મંગલમય પુરૂષાર્થમાં ખૂબ સફલતા પ્રાપ્ત કરી હતી. જૈનધર્મશાસનની પેઢી ઉપર હાથ નાખનારાઓને પરાસ્ત કરી એ શાસનની પવિત્ર પેઢીને કટોકટિના સમયે સુરક્ષિત રાખનાર આપણા પરમ તારક ગુરુદેવ ઉપાધ્યાયજી મહારાજ હતા.

પૂજનીય ઉપાધ્યાયજી મહારાજને મળેલાં અનેક બિરુદો પૈકી લઘુ હરિભદ્રનું પદ બિરુદ છે. જો કે આદ્યપાદ આચાર્ય ભગવંત હરિભદ્રસૂરિ મહારાજ એટલે તે કાળે જૈન-શાસનના એક સમર્થ પ્રાણવાન અજોડ મહાપુરુષ. એમ છતાં વર્તમાનકાળના જીવો માટે હરિભદ્રસૂરિ મહારાજની અપેક્ષાએ પૂ ઉપાધ્યાયજી મહારાજ વધુ ઉપકારી હતા એમ કહેવામાં જરાય અતિશયોક્તિ નથી. હરિભદ્રસૂરિ મહારાજએ ચૈત્યવાસિઓ વગેરેનાં તથા બૌદ્ધોના પ્રબલ આક્રમણમાંથી જૈન શાસનનો બચાવ કર્યો અને ભવિષ્યની પ્રજાનાં કલ્યાણ માટે સંસ્કૃત-પ્રાકૃત ભાષામાં વિશાલ સાહિત્યનું અનુપમ સર્જન કર્યું. જ્યારે ઉપાધ્યાયજી મહારાજે ષડ્દર્શનોના એકાન્તવાદી સિદ્ધાન્તોથી જૈનશાસનનું સંરક્ષણ કરવા ઉપરાંત જૈન ધર્મના ઓઠા નિચે મિથ્યાત્વનો જોરી પ્રચાર કરનાર અનેક કુમતિઓથી જૈનશાસનને બચાવી લીધું અને ભોળવાઈ જતા ભદ્રિક વર્ગને શુદ્ધ શ્રદ્ધા તેમજ સંયમ માર્ગમાં ટકાવી રાખ્યા. સંસ્કૃત તથા પ્રાકૃત ભાષામાં રચાયેલા વિદ્વદ્ભોગ્ય સંખ્યાબંધ ગ્રન્થોનાં સર્જન ઉપરાંત આબાલ ગોપાલ સર્વ કોઈને સમજ પડી શકે અને જૈન ધર્મના નિશ્ચય વ્યવહાર વગેરે સર્વ સિદ્ધાન્તોનો સુગમતયા બોધ થાય, તેમ જ પ્રભુભક્તિમાં ભાવોલ્લાસની વૃદ્ધિ થાય તે પ્રકારનું મિશ્ર (હિંદી ગુજરાતી) તથા ગુર્જરભાષામાં સંખ્યાબંધ સ્તવનાદિ સાહિત્યનું સર્જન કરી ભાવિપ્રજાને અવર્ણનીય શ્રુતજ્ઞાનનો ખજાનો સોંપી ગયા.

સાહિત્ય સર્જનમાં "શ્રદ્ધા અને સંયમની આરાધના એ જ મુક્તિનાં મંગલદ્વાર છે" એવાં ભાવવાહી પદોની રચનાદ્વારા તેમ જ પોતાનાં જીવનમાં 'ક્ષીર-નીર' ન્યાયે એક થઈ પરિણમેલ શ્રદ્ધા તેમ જ સંયમની સાધના વડે વિશ્વની પ્રજા પાસે આદર્શ રજૂ કર્યો કે "ગમે તેટલું વૃદ્ધિ પામેલું પરંતુ શ્રદ્ધા અને સંયમ શૂન્ય જ્ઞાન-વિજ્ઞાન સંસારની વૃદ્ધિનું કારણ છે. જ્યારે શ્રદ્ધા અને સંયમ સંપન્ન ઓછું પણ જ્ઞાન મુક્તિનું અસાધારણ નિમિત્ત છે. શ્રદ્ધા અને સંયમની ભાવના

વિનાનું જ્ઞાન-વિજ્ઞાન ઉપરથી શોભતાં પણ સુવાસ વિનાનાં આવળનાં ફુલ અથવા ઉપરથી ચળકાટ મારતા નકલી દાગીના જેવું છે. જ્યારે શ્રદ્ધા તથા સંયમયુક્ત ઓછું પણ જ્ઞાન સુવાસથી મઘમઘતા ગુલાબનાં પુષ્પ સરખું અથવા નાના પણ સાચા હીરા સરખું છે."

વંદનીય વાચકશિરોમણિનો સ્થૂલદેહ આજે આપણી પાસે વિદ્યમાન નથી. પરંતુ પોતાના જીવનમાં આરાધેલ રત્નત્રયનો અનુપમ આદર્શ-તેમજ શાસ્ત્રીય સાહિત્યની સુધા સરિતા આપણી પાસે આજે હાજર છે. આપણે સહુ કોઈ એ અનુપમ આદર્શમાં આપણું નિર્મળ પ્રતિબિંબ સ્થાપન કરવા શક્તિમાન બનીએ, તે માટે તેઓની સાહિત્યસુધા સરિતામાં સ્નાન કરીએ અને એ શાસનસંરક્ષક મહર્ષિના આદેશ ઉપદેશોને આચરણમાં મૂકી " **અમારા ઉપાધ્યાયજી-અમારા વાચક જશ વિશ્વમાં અજર અમર છે."** એવી મંગલ ઉદ્‌ઘોષણા કરવાનાં અધિકારી બનીએ. એ જ શુભ કામના.

卐

विभेषि यदि संसारात् मोक्षप्राप्तिं च काङ्क्षसि।
तदेन्द्रियजयं कर्त्तुं, स्फोरय स्फारपौरुषम्॥

અર્થ:—જો તું સંસારથી ભય પામ્યો હોય અને મોક્ષપ્રાપ્તિને ઇચ્છતો હોય તો ઇન્દ્રિયોનો જય કરવાને માટે પ્રચણ્ડ-પરાક્રમ ફોરવ.

卐

अहं ममेति मन्त्रोऽयं, मोहस्य जगदान्ध्यकृत्।
अयमेव हि नञ्पूर्वः, प्रतिमन्त्रोऽपि मोहजित्॥

અર્થ:—'હું અને મારું' એ મોહ રાજાનો જબ્બર મન્ત્ર છે અને તે મન્ત્ર સમગ્ર જગતને અંધ કરનારો છે.

આ મન્ત્રની આગળ નકાર મૂકવામાં આવે [અર્થાત્ 'હું કંઇ નથી ને મારું કંઇ નથી'] તો એ જ મન્ત્ર મોહરાજાને જિતવા માટેનો પ્રતિમન્ત્ર બની જાય છે.

જ્ઞાનસાર] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

વાચકવર શ્રીયશોવિજયજીની જન્મભૂમિ

કનોડુ

[લેખકઃ-પરમપૂજ્ય શ્રીમદ્ પુણ્યવિજયજી મહારાજ—આગમ પ્રભાકર.]

લગભગ ચાલીસ વર્ષ પહેલાં પાટણમાંના પ્રાચીન પ્રકીર્ણક પાનાઓના ઢગલા-માંથી અણધારી રીતે "સુજસવેલી"નું અંતિમ એક પાનું સૌ પ્રથમ મારા હાથમાં આવ્યું હતું. જેનું પ્રકાશન મુનિવર શ્રી જિનવિજયજીએ "જૈનઆત્માનંદ પ્રકાશ" એ માસિકમાં કર્યું હતું. ત્યારથી એ ભાસની સંપૂર્ણ પ્રતિની શોધ પાછળ સૌનું ધ્યાન દોરાયું. અને "સુજસવેલી-ભાસ"ની સંપૂર્ણ પ્રતિ ભાઈ મોહનલાલ દલીચંદ દેસાઈએ પ્રસિદ્ધ કરી. આ ભાસની સંપૂર્ણ પ્રતિની પ્રાપ્તિથી ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ વિષેની કેટલીક અજ્ઞાત વાતો આપણને જાણવા મળી. તે સાથે ઉપર્યુક્ત ભાસે ઉપાધ્યાયજી મહારાજનાં જન્મવર્ષ આદિ અને સ્વર્ગવાસવર્ષ વિષે ભારે વિષમતા પણ ઊભી કરી છે. ઉપાધ્યાયજી મહારાજશ્રીનાં જન્મવર્ષ આદિ વિષેના ગંભીર પ્રશ્નને તો આપણે આપણા સામે વિદ્યમાન સાધનો દ્વારા જુદા લેખમાં જ વિચારીશું. પ્રસ્તુત લઘુ લેખમાં તો માત્ર ઉપાધ્યાયશ્રીજીની જન્મભૂમિ વિષે જ ટૂંક નોંધ લખવાની છે.

પૂજ્યપાદ વિશ્વવિજ્ઞાનમૂર્તિ વાચકપ્રવર શ્રીયશોવિજયજી મહારાજની જન્મભૂમિ "કનોડુ" હોવા વિષેની જે માન્યતા ચાલુ થઈ છે તે મને લાગે છે. ત્યાં સુધી, બહુ સંગત હોય તેવી નથી. કારણ કે "સુજસવેલીભાસ"માં તેના કર્તા મુનિવર શ્રી કાંતિ વિજયજીએ ઉપાધ્યાયજી મહારાજનો જન્મ ક્યાં અને કયા વર્ષમાં થયો એ હકીકત આપી જ નથી. તેઓ તો માત્ર "પંડિત શ્રી નયવિજયજી મહારાજ વિ. સં. ૧૬૮૮માં કુણગેર ચોમાસું કરી કનોડે જાય છે." એ હકીકતથી જ ભાસરચનાનું પ્રયાણ આરંભે છે. આ સ્થિતિમાં ઉપાધ્યાયજીનો જન્મ કયા વર્ષમાં અને કયે સ્થળે થયો—એ હકીકત તો અસ્પષ્ટ જ રહે છે. સુજસવેલીકારે ઉપાધ્યાયજીનાં જન્મ વિષે કશી હકીકત નથી નોંધી એટલે એ પણ સંભવિત હોઈ શકે કે ઉપાધ્યાયજીના પિતાશ્રી વ્યાપારાદિ નિમિત્તે કનોડામાં આવી વસ્યા હોય? આ વસ્તુ વિદ્વાનોએ વિચારવા જેવી છે. અસ્તુ, આ બધુ ગમે તે હો, તે છતાં ઉપાધ્યાય શ્રી યશોવિજયજી મ૦ નો, તેમના ગુરુવર શ્રી નયવિજયજી મ૦ સાથે સૌ પહેલાં સમાગમ કનોડામાં થયો હતો એ હકીકત અનાબાધ હોવાથી તેમ જ ઉપાધ્યાયજી મહારાજની બાલલીલાના નિશ્ચિત-પુણ્યધામ તરીકે કનોડાની પાવન ભૂમિનું આપણે દર્શન કરીએ તો અતિ સુસંગત જ વસ્તુ બને છે. એમાં લેશ પણ શંકાને અવકાશ નથી.

'સુજસવેલીભાસ' દ્વારા ઉપાધ્યાયજી મહારાજ અને કનોડાનો સંબંધ ત્યારથી જાણવામાં આવ્યો ત્યારથી એ પવિત્ર-પાવન પુણ્યભૂમિનાં દર્શન માટે અંતરમાં તાલાવેલી

જાગી હતી. પરંતુ આવા પુણ્યધામનું દર્શન સુકૃતોદયના અભાવમાં એકાએક થવું શકય નથી હોતું; તેમાં પણ સાધુજીવીઓ માટે વિહારક્રમમાં નહિ આવતા અમુક પ્રદેશનું દર્શન અશકયપ્રાયઃ હોય છે. આમ છતાં આ વર્ષે પાટણથી અમદાવાદ પાછા ફરતાં પ્રથમથી નિર્ણય કર્યા મુજબ અમે પૂજ્યપાદ શ્રી ઉપાધ્યાયજી મ૦ની બાળલીલાના પુણ્યધામ કનોડાનું દર્શન કરી આવ્યા છીએ.

કનોડા

પાટણથી મેસાણા તરફ જતી રેલ્વેલાઈનમાં અને લગભગ બન્નેયના અધવચમાં ધેણુજ સ્ટેશન આવેલું છે. ત્યાંથી ધેણુજ ગામ પોણા માઈલના અંતરે આવેલું છે. ત્યાંથી દક્ષિણ–પશ્ચિમ દિશામાં પક્કા બે ગાઉના અંતરે પુણ્યતીર્થ કનોડા આવેલું છે. એ ભૂમિનો જે ઈતિહાસ સાંભળવામાં આવ્યો છે અને ત્યાં આજે જે શિવમંદિર, સ્મરણાદેવીનું મંદિર વગેરે વિદ્યમાન છે. એ જોતાં આપણને લાગે છે કે પ્રાચીન યુગમાં એ સ્થાન જરૂર સમૃદ્ધિશાળી હશે અને ઠીક ઠીક આબાદી ભોગવતું હશે.

અત્યારે તો કનોડામાં લગભગ બસો ૨૦૦ એક ઘરોની આબાદી અને ઉપર જણાવેલ મંદિરો વિદ્યમાન છે. કનોડામાં કનોડીઆ બ્રાહ્મણો અને કનોડીઆ પટેલોની વસતિ ધ્યાન ખેંચે તેવી છે. એક મંદિરમાં પાળીઓ છે. તેના ઉપર લેખ છે, પણ પાળીઆ ઉપરના લેખોની લિપિ વાંચવાની કળા એ એક જુદી વિદ્યા હોઈ હું એ લેખને ઉકેલી શકયો નથી. પરંતુ લિપિનું સ્વરુપ જોતાં એ લેખ મને ઘણો પ્રાચીન નથી લાગ્યો.

ધેણુંજના એક ભાગ્યવાન શ્રાવક ભાઈ શ્રી તિલકચંદને લઈ અમે ત્રણ સાધુઓ–હું, મુનિ શ્રી રમણિકવિજયજી અને મુનિશ્રી જયભદ્રવિજયજી ધેણુજથી દશેક વાગે નીકળ્યા અને સાડા અગિયાર લગભગ કનોડા પહોંચ્યા અને ત્યાંના એક મંદિરમાં બેઠક જમાવી. અમને જોઈને ગામના લોકો એકઠા થઈ ગયાં. તેમને અમે ગામમાં પ્રાચીન સ્થળો, જૈન-મંદિર તેમ જ કોઈ પ્રાચીન પાદુકા આદિ અંગે પૂછ–પરછ કરી. ગામલોકોએ ત્યાંના પ્રાચીન મંદિરો આદિને લગતી વાતો કરી અને તેમની સાથે અમે ત્યાંનાં સ્થળો જોવા ગયા. ઉપર જણાવેલ શિવાલય, સ્મરણાદેવીનું મંદિર અને કેટલીક વાવો સિવાય બીજુ કાંઈ ત્યાં દેખાયું નથી. રેવાશંકરભાઈ નામના કનોડીઆ બ્રાહ્મણના ઘરની પાસેના રસ્તા ઉપર જૂના જમાનામાં એક મંદિર હતું. અને અત્યારે ત્યાં બહાર દેખાતા બે પથ્થરો ઘણા ઊંડા છે વગેરે જણાવ્યું. પરંતુ આપણને ચમત્કાર થાય તેવો કોઈ જૈન અવશેષ કે શ્રીયશોવિજયજી મહારાજને લગતી કોઈ હકીકત કે બીજું કશુંએ જણાયું નથી.

ભાઈ રેવાશંકરભાઈ પાસે પ્રાચીન પત્રો તથા કેટલીક પ્રાચીન સામગ્રી છે એમ ગામલોકોએ જણાવ્યું. પરંતુ એ ભાઈ બહારગામ ગયેલ હોવાથી અમે તેમના પાસેની કોઈ વસ્તુ જોઈ શકયા નથી. જો કે આ સામગ્રીમાં યશોવિજયજી મહારાજને લગતી સામગ્રી મળવાનો કોઈ જ સંભવ નથી. તેમ છતાં આ ભાઈ પાસેની સામગ્રી તપાસવી તો જોઈએ જ.

એક વૃદ્ધ બ્રાહ્મણ ભાઈ મળ્યા તેમણે જણાવ્યું કે વિ. સં. ૧૨૦૨માં અમારા બ્રાહ્મણોનાં ત્રેત્રીસ પદો ઉત્તરમાંથી સિદ્ધપુરમાં આવ્યાં હતાં. જેમાં અમે કનોડીઆ બ્રાહ્મણો ત્રીજે પદે છીએ. એક જમાનામાં કનોડામાં અમારાં બે હજાર ઘરો હતાં અને એ પ્રમાણમાં બીજી પણ વસ્તી અહીં હતી. અરે અહીંસો તો અહીં કંસારાનાં ઘર હતાં. આ રીતે અહીંની ભૂતકાલીન જાહોજલાલી ઘણી હતી. અમારા અહીંના કનોડીઆ બ્રાહ્મણો કાઠીયા-વાડમાં ગયા, ત્યાં પણ અમારા નામથી ગામનું નામ કનોડા જ પડ્યું.

આ રીતે કનોડામાં પ્રકીર્ણક હકીકતો અને પ્રાચીન અર્વાચીન સ્થળો જોવા મળ્યાં છે. પરંતુ પૂજ્ય શ્રી ઉપાધ્યાયજી મ૦ અંગેનો કોઈ ઇતિહાસ કે સામગ્રી મળ્યાં નથી. આમ છતાં એ ધ્યાનમાં રાખવા જેવી હકીકત છે કે કનોડામાં જે શિવાલય અને 'સમરણી દેવીનું' મંદિર છે એ ચૌલુક્યયુગીન શિલ્પકળાથી વિભૂષિત છે.

આ પછી અમે વિચાર કર્યો કે ભાટ તેમજ વહીવંચાઓના જૂના ચોપડાઓમાંથી ઉપાધ્યાયજીમ૦ ને લગતી કોઈ હકીકત મળી આવે—એમ ધારી અમે ત્યાંના લોકોને પૂછ્યું કે તમારે ત્યાંના ભાટ તેમજ વહીવંચાઓ કોણ છે? એના જવાબમાં મળ્યું કે—એક તો મેસાણામાં વીરચંદભાઈ નામના ભાટ રહે છે તે છે અને બીજા એક વિસનગરથી આવે છે. બીજા ભાઈનું નામ અમને મળ્યું નથી. મેસાણે આવીને અમે વીરચંદભાઈની તપાસ કરી પરંતુ તે ભાઈ બહારગામ ગયા હોવાથી એ તપાસ કરવાનું કામ તથા વીસનગરમાં રહેનાર ભાઈ પાસે તપાસ કરવાનું કામ પાટણના ભોજક ભાઈઓને ભળાવીને હું આવ્યો છું.

ચેહુજથી અમે મોઢેરા ગયા હતા. ત્યાં સાંતલપુરના એક જૈન મહાત્મા, જેમની પાસે પ્રાચીન જ્ઞાનભંડાર છે. અને જૂનાં પોથીઆંઓ વગેરેનો સંગ્રહ પણ છે. તે ઉપરાંત તેઓ જૂની વંશાવલીઓ સંભાળવાનું કામ કરે છે. તેમને પણ આ વિષે સૂચના કરી છે. તેઓ તો કહે છે કે—અમારા પાસે તો બધો ઇતિહાસ છે અને અમારે ત્યાં આ હકીકત મળશે, પરંતુ ઘણીવાર આપણી ભારતીય પ્રજાના સાધુ, સંન્યાસી, બાવાઓ, યતિઓ, વૃદ્ધ બ્રાહ્મણો, વૃદ્ધ પુરુષો વગેરે મોટે ભાગે વાતમાં માલ ન હોય તેમ છતાં વાતો બનાવવામાં ટેવાએલા જ જોવામાં આવે છે. આમછતાં આવા સ્થળોમાં ચોકસાઈભરી રીતે તપાસ કરવાથી સંભવ છે કે કોઈ હકીકત ક્યાંકથી મળી પણ આવે.

અંતમાં અમારા નિરીક્ષણમાં કનોડામાંથી ઉપાધ્યાયજી મહારાજના અંગે કોઈ એવી હકીકત નથી મળી, જે આપણને ચમત્કાર પેદા કરે તેમ છતાં અમારા સાક્ષાત્ ત્યાં જવાથી એક વસ્તુ જરૂર બની છે કે કેટલોક ભ્રમ ભાંગી ગયો છે અને અમુક બાતની માહીતી મળી છે.

ઉપાધ્યાયજી મહારાજ અંગેની જે જે વાતો કરવામાં આવી તે ત્યાંના લોકોએ રસ-પૂર્વક સાંભળ્યું છે અને બોલવા પણ લાગ્યા કે આવા મહાત્માનું સ્મારક અહીં કરવામાં આવે તો અમારો પણ ઉલટ થાય.

—❀❀❀—

અનંતલબ્ધિનિધાન-ગણધરેન્દ્ર શ્રીગૌતમસ્વામિને નમઃ

જૈન શાસનના સમર્થ પ્રભાવક, મહાન જ્યોતિર્ધર ન્યાયવિશારદ ન્યાયાચાર્ય.

ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ

અને

તેઓશ્રીનું અદ્ભુત વ્યક્તિત્વ.

[લેખકઃ-પૂ. પં. મહારાજ શ્રીમાન્ કનકવિજયજી ગણિવર.]

જૈન શાસનનાં વિશાલ આકાશપટપર અનેકાનેક શાસન પ્રભાવક મહાત્મા પુરુષો, સહસ્રરશ્મિ સૂર્યની જેમ પ્રકાશમાન બની, અમર નામના મૂકી ગયેલા છે. કે જેમના અગણ્ય ઉપકારોને યાદ કરીને આજે પણ આ હૈયું શ્રદ્ધાપૂર્વક નમી પડે છે. આ બધાયમાં યાકિનીધર્મસૂનું સમર્થ વિદ્વાન્ આચાર્ય શ્રીહરિભદ્રસૂરીશ્વર, કલિકાલસર્વજ્ઞ આ૦ શ્રી૦ હેમચંદ્રસૂરીશ્વર તથા ન્યાયાચાર્ય તાર્કિક શિરોમણિ ઉપાધ્યાયજી યશોવિજયજી. આ ત્રણેય પ્રભાવક મહાપુરૂષોનો આપણા પર, જૈન સાહિત્યપર, તેમજ પરંપરાએ સમસ્ત સંસારપર અસંખ્ય ઉપકાર છે. એ કદિ ભૂલી શકાય તેમ નથી જ.

શ્રી હરિભદ્રસૂરિ તથા શ્રીહેમચંદ્રસૂરિ-આ બન્ને મહાપુરુષોએ, સ્વયં સંયમી જીવનમાં રહી, જૈન સિદ્ધાંતો પ્રત્યેની અનન્ય નિષ્ઠાપૂર્વક જે બહુવિધ સાહિત્યની સેવા કરી છે, એ ખરેખર ખૂબ જ મહત્ત્વની તેમ જ યશસ્વી છે. છતાં આ બન્ને સૂરિદેવોના સમયની પરિસ્થિતિ એક રીતે સુવિધાભરી તથા અનુકૂલ હતી. એક હતા જન્મે બ્રાહ્મણ, રાજપુરોહિતના ઉચ્ચ સ્થાનપર વર્ષો સુધી રહેલા, અનેક દર્શનશાસ્ત્રોના પારંગત બનીને સર્વધર્મના સિદ્ધાંતોમાં નિષ્ણાત થયેલા, એમાં નિમિત્ત મળતાં હૃદયની સરલતાના યોગે યાકિની નામના જૈન સાધ્વીજીના મુખથી 'दो चक्की'વાળી ગાથા સાંભળે છે. નવું જાણવાની જિજ્ઞાસાના કારણે તેઓ જૈનાચાર્યના પુણ્યસમાગમને પ્રાપ્ત કરે છે. અને પરિણામે હરિભદ્ર પુરોહિત જૈન સાધુ બને છે. હરિભદ્ર પુરોહિતમાં રહેલી પ્રકાંડવિદ્વત્તા, સમર્થ તાર્કિક શક્તિ અને સ્વ-પર દર્શન શાસ્ત્રોની નિપુણતા, આ બધાયને સાચો માર્ગ મળતાં તેઓ સાહિત્ય-સંસારમાં પોતાની અગણિત રચનાઓદ્વારા યશસ્વી બની, અમર થઈ ગયા.

કલિકાલ સર્વજ્ઞ શ્રી હેમચંદ્રસૂરીશ્વરનો સમય, શાસન પ્રભાવના માટે અનેકવિધ અનુકૂલતાયુક્ત હતો. ગુર્જરભૂમિના પાટનગર અણહીલ્લપુર પાટણમાં ધર્મશ્રદ્ધાવાસિત ધનસંપન્ન શ્રેષ્ઠિવર્યો તે કાલે અનેક હતા. રાજ્ય સત્તાપર તેઓનો પ્રભાવ પડતો. સત્તાનાં સૂત્રો કેટલીક વેળા તેઓનાં હાથપર રહેતાં. જો કે જૈન શ્રેષ્ઠિવર્યોએ એનો દુરુપયોગ કદિ

કર્યો જાણ્યો નથી. ધર્મના ખોટા ઝનૂનથી, સત્તાને તેમણે કદિ કલંકિત કરી નથી. આવા સમયમાં આ૦ શ્રી દેવચંદ્રસૂરિના શુભ હસ્તે ધંધુકાના મોઢ જ્ઞાતિય ચાચીંગની ધર્મપત્ની શ્રીરત્ન શ્રી પાહિનીદેવીનાં પ્રભાવશાળી પુત્ર ચંગદેવની દીક્ષા થાય છે.

એ ચાંગદેવ તે વેળા સોમદેવ મુનિ બને છે. પણ મુનિ સોમદેવની તેજસ્વિતા, અસાધારણ મેધા, અલૌકિક પ્રતિભા, તથા સુનિર્મલ સચ્ચારિત્ર્ય–તત્કાલીન સર્વ કોઈનાં માનસપર લોકોત્તર પ્રભાવ પાડે છે. સાધુ સોમદેવ આ૦ હેમચંદ્રસૂરિ બને છે. ગૂર્જરેશ્વર સિદ્ધરાજની રાજસભામાં તેઓ પોતાની અમોઘ પ્રતિભાથી આદરપૂર્વક સ્થાન પ્રાપ્ત કરે છે. ત્યાર બાદ પરમાર્હત્ ગૂર્જરેશ્વર મહારાજા કુમારપાળનાં રાજ્યશાસનમાં આચાર્યશ્રીનો પ્રભાવ પરમોત્કૃષ્ટ સ્થિતિનો બને છે. સાહિત્યના એકેએક અંગને તેઓ પોતાની સર્જન-શક્તિદ્વારા નવપલ્લવિત કરે છે. વ્યાકરણ, સાહિત્ય, છંદ, ન્યાય, કોશ, નાટક ઇત્યાદિ વિષયોમાં મૌલિક સાહિત્ય કૃતિઓને તેઓશ્રી સાહિત્ય જગતને ભેટ ધરે છે.

જૈન સાહિત્યમાં પણ ત્રિષષ્ટિ શલાકા પુરુષ ચરિત્ર–પર્વ ૧૦. વીતરાગસ્તોત્ર, યોગશાસ્ત્ર ઈત્યાદિ સાહિત્યસર્જનો તેઓશ્રીની બહુમુખી વિદ્વત્તાનો આપણને સુપરિચય આપી જાય છે.

(૨)

વિક્રમના ૧૭ મા શૈકાના ઉત્તરાર્ધના કાલની આ વાત છે. જૈન શાસનના પરમ પ્રભાવક જગદ્‌ગુરુ આચાર્ય શ્રી હીરસૂરીશ્વરજીના સ્વર્ગારોહણ બાદ, જૈન સંઘમાં અનેક-વિધ વિકટપરિસ્થિતિ જન્મવા પામી હતી, ભલભલા સમર્થ સાધુપુરુષો આ સ્થિતિમાં કિંકર્તવ્યમૂઢ જેવી દશામાં મૂકાઈ ગયા હતા. આંતરિક બાહ્ય–બન્ને પ્રકારના આ અનિ-ચ્છનીય વાતાવરણની અસર જૈન ધર્મના પ્રત્યેક અંગોપર ઓછી–વત્તી જરૂર પડી રહી હતી. વિદ્વાન સાધુપુરુષો, શક્તિસંપન્ન શ્રાવકવર્ગ, આ બધાયમાં સુખદ, શુભ પરિણામ આણી શકવાને માટે અસમર્થ બન્યા હતા. સંયમી, ત્યાગી નિર્ગ્રન્થ સાધુ મહાત્માઓના સમૂહમાં શિથિલતાએ પ્રવેશ મેળવી લીધો હતો.

વિદ્વતા અને સંયમ બન્નેનો સુમેળ ઘટતો ગયો હતો જગદ્‌ગુરુ શ્રી હીરસૂરીશ્વરનો પુણ્ય પ્રભાવ, તેજ તેમજ તેમણે સ્થાપેલું ઐક્ય તુટતા ગયા હતાં

આવા સંઘર્ષણ કાલમાં જૈનશાસનને, જૈનસાહીત્યની સેવાદ્વારા સમસ્ત સંસારને અજવાળનાર એક દિવ્યવિભૂતિનો સુયોગ પ્રાપ્ત થાય છે.

ગુર્જરભૂમિ રત્નોની ખાણ છે. ગૂજરાત–મહાગૂજરાતની ભૂમિ પૂર્વકાલથી અદ્યાવધિ ધર્મ, કલા, વિજ્ઞાન, સાહિત્ય. અને સંસ્કાર, પરોપકાર સેવા, વગેરે પ્રાકૃતિક ગુણોથી સુપ્ર-સિદ્ધ છે, ગૂજરાતની ભૂમિપર અનેક મહાન વિભૂતિઓએ જન્મ ધારણ, પરોપકારમય આધ્યાત્મિકતા તથા સાંસ્કારિક સાહિત્ય સર્જન દ્વારા ઉન્નત જીવન જીવી, સંસારભરમાં અનુપમ પ્રખ્યાતિ મેળવીને યશસ્વી નામના પ્રાપ્ત કરી જીવનને ધન્ય બનાવ્યું છે.

પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહરાજ ગૂર્જરધરિત્રીનાં અણમોલ નરરત્ન હતાં, ગૂર્જર ભૂમિનાં મહાન સંતાન હતાં,

અમદાવાદ તથા પાટણ–ગૂજરાતના તાબે પ્રાચીન ઐતિહાસિક મહાન શહેરોની વચ્ચે હાલના કલોલ ગામની નજીક 'કનોડુ' ગામમાં વિક્રમના સત્તરમા સૈકાના ઉત્તરાર્ધમાં તેઓશ્રીનો જન્મ થયો.

જૈનશાસનના સંઘર્ષણ કાલમાં આવા પુણ્યપુરુષનો જન્મ, શાસનના ભાવિ માટે યાવત્ સંસાર સમસ્તના શાન્તિ માટે ઉજ્વળ આશારૂપ ગણાય.

બાળક યશવંતને માતાના સંસ્કારોના પ્રભાવે ન્હાની વયથી જ ધર્મપ્રત્યે રૂચિ છે. પૂર્વકાલીન ક્ષયોપશમના કારણે તેની બુદ્ધિ, પ્રતિભા તથા સંસ્કારિતા કોઈ અદ્ભુત છે, પિતા નારણ અને માતા સૌભાગ્યદેવીના બન્ને પુત્રો યશવંત તથા પદમશી, રામ–લક્ષ્મણની જોડીની જેમ પરસ્પરના સ્નેહથી સંકળાયેલા હતા. જગદ્ગુરુ શ્રી વિજય હીરસૂરીશ્વરજીના પ્રશિષ્ય પંડિત શ્રી નયવિજય મહરાજનો સુયોગ આ બન્ને બાલકોને થાય છે. સાધુઓનાં જીવંનની નિર્મળતા, ઉત્તમતા તથા આત્મકલ્યાણ પરાયણતા જોઈ–સ્હેમજી બન્ને ભાઈઓ તે પ્રત્યે આકર્ષાયા, માતા પિતાની સમ્મતિ મળતાં તેઓ પાટણ શહેરમાં આ૦ શ્રી૦ વિજયદેવસૂરીશ્વરના વરદ હસ્તે વિ. સં. ૧૬૮૮માં ભાગવતી દીક્ષા ગ્રહણ કરે છે.

બાળક જશવંતની વય આ અવસરે લગભગ ૧૩ વર્ષની હોવી સંભવિત છે. લઘુ બંધુ પદમશી–પદ્મસિંહની વય કદાચ ૧૦–૧૧ની ગણી શકાય. જો કે તેઓની દીક્ષા અવસ્થાની વયનો ચોકકસ ઉલ્લેખ હજૂ સુધી મલતો નથી પણ એટલું તો કહેવું શકય છે કે, તેઓએ બાલ્યકાલમાં દીક્ષા ગ્રહણ કરેલી છે.

જગદ્ગુરુ આ. શ્રી. વિજયહીરસૂરિજીના પટ્ટપ્રભાવક આ. શ્રી વિજયસેનસૂરિજી હતા. તેઓનાં સ્વર્ગારોહણ બાદ આ. શ્રી વિજય દેવસૂરિજી શ્રીહીરસૂરિમહારાજની પાટપર આવ્યા હતા. મુનિશ્રી યશોવિજયજીના દીક્ષા કાલે સમગ્ર તપાગચ્છમાં બે મોટા ભાગલા પડી ગયેલા હતા. તે કાલે આ. શ્રી. દેવસૂરિજીનાં નેતૃત્વમાં એક શ્રમણવર્ગ હતો. અન્યશ્રમણવર્ગ આ. શ્રી. વિજયઆનંદસૂરિજીના નેતૃત્વમાં હતો. આ. શ્રી. વિજયસેનસૂરિજીના વિદ્યમાનકાલમાં આ મતભેદ ધુંધવાતો હતો.

સાધુ યશોવિજયજી સમર્થશક્તિશાળી તથા તેજસ્વી બુદ્ધિનિધાન હતા. પોતાના ગુરુવર્ય શ્રી નયવિજયજીની સાથે કાશીદેશમાં દર્શનશાસ્ત્રોના અભ્યાસ માટે તેઓ પધારે છે. ન્યાય, વેદાંત, મીમાંસક તેમજ સાંખ્યદર્શનના સિદ્ધાંતોનો તેઓ ખૂબ જ પરિશ્રમ પૂર્વક અભ્યાસ કરે છે. પ્રાચીનન્યાય તથા નવ્યન્યાયના ગ્રંથોનું પરિશીલન, મનન, નિદિધ્યાસન કરતાં કરતાં શ્રી યશોવિજયજી, ન્યાયદર્શનનાં રહસ્યને પ્રાપ્ત કરે છે. કાશી–બનારસની સ્થિરતા દરમ્યાન તેઓ પ્રખર વિદ્વત્તા મેળવે છે.

એ અવસરે નવદ્વીપ-બંગાલ પણ નવ્ય-ન્યાયશાસ્ત્રોનાં અધ્યયન-અધ્યાપન માટે સુપ્રસિદ્ધ ક્ષેત્ર હતું. દક્ષિણમાં દેવગિરિનગર પણ વિદ્વાનોની જ્ઞાનભૂમિ ગણાતું છતાં આ બધા કરતાં કાશીમાં દેવી સરસ્વતીનો સાક્ષાત્ નિવાસ મનાતો હતો. વિદ્વાનો, પ્રકાંડપંડિતો દિગ્ગજ દર્શનશાસ્ત્રીઓની એ કર્મભૂમિ હતી. શ્રીયશોવિજયજીને આવા સંક્રાંતિકાલમાં પણ દર્શનશાસ્ત્રોનાં અધ્યયન માટે અનુકૂલતા પ્રાપ્ત થઈ, અને એમની ભૂખ ઉઘડી, તેમણે સારી ખંતથી જ્ઞાનામૃતનું ભોજન કર્યું. તેઓ પ્રાચીન તથા નવ્યન્યાય શાસ્ત્રના જ્ઞાતા સમર્થ પંડિત બન્યા. ત્યાંના વિદ્વાન બ્રાહ્મણ પંડિતોએ 'ન્યાયવિશારદ'નું માન તેઓશ્રીની અસાધારણ વિદ્વત્તાથી રંજિત થઈને હૃદયના બહુમાન પૂર્વક તેઓને સમર્પિત કર્યું.

(૩)

શ્રીયશોવિજયજીમહારાજશ્રીનાં સંયમીજીવનમાં જ્ઞાનગુણે, સુવર્ણ-સુગંધનો સુમેળ સાધ્યો. જૈનદર્શન પ્રત્યેની નિર્મલશ્રદ્ધા, સચ્ચારિત્ર્ય, અનુપમ વિદ્વત્તા આ બધાય ગુણો ઉપરાંત, હૃદયની સરલતા, વિનમ્રશાંતપ્રકૃતિ, ગુણાનુરાગ ઇત્યાદિ તેઓનાં જીવનની અદ્વિતીય વિશિષ્ટતા હતી.

તે અવસરે સર્વ કોઈ શ્રમણવર્ગનો તેઓના પ્રત્યે પરિપૂર્ણ આદરભાવ હતો. સાધુ-સાધ્વી સમુદાય ઉપરાંત, શ્રાવક-શ્રાવિકાસંઘનો પણ અત્યધિક પૂજ્યભાવ તેઓ પ્રત્યે વર્તતો રહ્યો. આ બધું તેઓના પ્રબલ પુણ્યપ્રકૃતિનાં પરિણામરૂપ કહી શકાય, નજીકના કાલમાં જગદ્‌ગુરુ શ્રીવિજય હીરસૂરીશ્વરના સાધુ સમુદાયમાં જે ગંભીર ભેદ ઉભો થયો હતો, તે આ અવસરે સંધાઈ જતાં પૂ. આચાર્ય શ્રી વિજયદેવસૂરીશ્વરના પટ્ટધર તે કાલે પૂ૦ આ૦ શ્રી વિજય પ્રભસૂરીશ્વર વિદ્યમાન હતા. તેઓશ્રીનાં વરદ હસ્તે પૂજ્ય શ્રીયશોવિજયજીને વાચકપદ-ઉપાધ્યાય પદથી શ્રીસંઘે વિભૂષિત કર્યા.

આટ આટલા મનોભેદ, સંઘર્ષણ તેમજ વિક્ષેપો હોવા છતાં શ્રી સંઘનું, શ્રમણ સમુદાયનું બંધારણ તે અવસરે અતિશય સુવ્યવસ્થિત હતું. સેંકડો સાધુઓના નાયક ગચ્છપતિ તરીકે શ્રમણ સંઘમાં આચાર્ય એકજ હતા. એકજ આચાર્યની આજ્ઞાનુસાર તેઓશ્રીની સમ્મતિ મુજબ ગચ્છની સઘળીએ વ્યવસ્થાઓ તે કાળમાં નિયમિતપણે ચાલતી હતી. ગચ્છમાં અનેક સમર્થ વિદ્વાનો, પ્રભાવકો, સંયમધન ત્યાગી, ચારિત્રશીલ સાધુ મહાત્માઓ, આ બધાય એક જ આચાર્યશ્રીની મર્યાદામાં શિસ્તપૂર્વક રહી તેઓશ્રીની આજ્ઞાને શિરસાવંદ્ય કરતા.

આ જ એક મહત્વનું કારણ, પૂ. ઉપાધ્યાયજી શ્રી યશોવિજયજી, ઠેઠ સુધી આચાર્યપદ પર પ્રતિષ્ઠિત ન થઈ શક્યા, એમાં હોય એમ અનુમાન થઈ શકે છે.

પૂ૦ શાસનપ્રભાવક આ૦ શ્રી હરિભદ્રસૂરીશ્વર, પૂ. કલિકાલ સર્વજ્ઞ આ૦ શ્રી હેમચંદ્રસૂરીશ્વર. આ બન્ને જૈન શાસન પરમપ્રભાવક મહાપુરુષોનાં પગલે પગલે ઉપા-

ધ્યાયજી યશોવિજયજી મહારાજે નિજની તેજસ્વી પ્રતિભાના અસાધારણ સામર્થ્યથી સાહિત્યના પ્રત્યેક ક્ષેત્રમાં અત્યદ્ભુત ચમત્કાર સર્જ્યો છે.

પ્રાચીન તથા નવ્યન્યાય, વ્યાકરણ, સાહિત્ય, અલંકાર, છંદ, કાવ્ય, તર્ક, આગમ, નય, પ્રમાણ, યોગ, અધ્યાત્મ, તત્ત્વજ્ઞાન, આચાર, ઉપદેશ, કથા, ભક્તિ તથા સિદ્ધાંત ઈત્યાદિ અનેકાનેક વિષયોપર સંસ્કૃત, પ્રાકૃત, તેમજ ગૂર્જરભાષામાં વિશાલ પ્રમાણમાં સાહિત્યકૃતિઓનું સર્જન કરીને તેઓશ્રીએ જૈનશાસનના છેલ્લા લગભગ ૬૦૦ વર્ષમાં ખરેખર શકવર્ત્તી ઈતિહાસ સર્જ્યો છે.

તેઓશ્રીની સાહિત્યકૃતિઓમાં અગાધ પાંડિત્ય જેમ જણાઈ આવે છે. તેજ રીતે ન્હાનું બાળક સ્હમજી શકે તેવી સરલ લોકભોગ્ય શૈલી પણ સ્પષ્ટ દેખી શકાય છે, જ્ઞાનસાર, અધ્યાત્મસાર, અધ્યાત્મોપનિષદ્ જેવા ગ્રંથરત્નો દ્વારા તેઓશ્રીએ હિંદુસમાજમાં બહુજ પ્રચલિત ગીતાનું તત્ત્વજ્ઞાન, અલૌકિક દૃષ્ટિયે સઘળાયે શાસ્ત્રગ્રંથોનાં દોહનરૂપે ગૂંથીને મૂક્યું છે. એકજ 'જ્ઞાનસાર'નું જો અધ્યયન, મનન, પરિશીલન આજે એકાગ્રચિત્તે કરવામાં આવે, આજના સભ્ય માનવસંસારને એ ગ્રંથની વસ્તુની ભેટ ધરવામાં આવે, તો વર્તમાનનાં વિષમ વાતાવરણમાં અનેકવિધ વિસંવાદિતાઓ, સમસ્યાઓ કે મૂંઝવણોનો વાસ્તવદર્શી સચોટ ઉપાય આ 'જ્ઞાનસાર'ના પ્રબોધેલા તત્ત્વજ્ઞાનમાં જગતને મલી શકે તેમ છે.

જૈનદર્શનના સ્યાદ્વાદવર્ગને, જૈનસિદ્ધાંતોની તત્ત્વવ્યવસ્થાને, તેનાં સર્વ સુસંવાદી શાસ્ત્રજ્ઞાનને તેઓશ્રીએ પોતાની નવ્યન્યાયની ભાષામાં જે રીતે સાહિત્યમાં ઉતાર્યું છે. તે ખરેખર અમૃત છે. તેઓશ્રીના એકે એક ન્યાયગ્રંથનુ જ્યારે જ્યારે મનન, પરિશીલન કરવામાં આવે છે ત્યારે તેના સતત અભ્યાસી પ્રજ્ઞાશીલબુદ્ધિમાન માનવને પણ ઘડિ-ઘડિમાં તેઓના ગ્રંથની એક એક પંક્તિમાં નવુંજ તત્ત્વ જાણવા મલે છે.

શબ્દો અલ્પ, ભાવગંભીર એ તેઓશ્રીનાં ન્યાયગ્રંથોની સ્વતંત્રશૈલી છે. આ શૈલી આ. શ્રી. હરિભદ્રસૂરીશ્વરના ગ્રંથોના સતત પરિશીલનના ફલરૂપ તેઓશ્રીને સહજ બની હોય એમ કહી શકાય. પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજશ્રી દાર્શનિક વિષયોના પ્રકાંડ વિદ્વાન હતા. તત્કાલીન જે જે જૈન-જૈનતર દર્શનોમાં પ્રખર વિદ્વાનો વિદ્યમાન હતા, તે બધાયમાં તેઓશ્રીનું સ્થાન અદ્વિતીય લેખાતું હતું.

તેઓશ્રીની પ્રત્યેક કૃતિ, તે તે વિષયની છેલ્લામાં છેલ્લી ઉત્કૃષ્ટ કહીએ તોયે ચાલે તેવી છે. શાસ્ત્રવાર્તા સમુચ્ચય-શ્રીહરિભદ્રસૂરિજીકૃતની 'સ્યાદ્વાદ કલ્પલતા' નામની, ઉપાધ્યાયજી મહારાજે રચેલી ટીકા, જૈનદર્શનના પદાર્થોને નવ્યન્યાયની શૈલીયે પ્રતિપાદન કરનારી અદ્ભુતતમ સાહિત્યકૃતિ છે. આ કૃતિમાં તેઓનું સ્વ-પર દર્શનશાસ્ત્રો વિષેનું અગાધ પાંડિત્ય પંક્તિયે-પંક્તિમાં વ્યક્ત થાય છે.

દર્શનશાસ્ત્રોના સમર્થ વિદ્વાન તેઓશ્રી, જ્યારે આચાર; ઉપદેશ, ભક્તિ કે કોઈપણ વિષયપર સર્જન કરવા બેસે છે, ત્યારે તે તે વિષયના સર્વક્ષેત્રોને-સર્વઅંગ-પ્રત્યંગોને

પરિપૂર્ણરીતે સ્પર્શીને તેનું સર્જન કરે છે. ખરેખર તેઓશ્રીની આ સર્વતોમુખી પ્રતિભા માટે આપણે તેઓશ્રીને ક્યા શબ્દોમાં અંજલિ આપી શકીએ?

તેઓશ્રીનાં જીવન તથા કવનવિષે આ ન્હાના લેખમાં અન્ય કેટ-કેટલું વિવેચન કરી શકાય!

આજે સેંકડો વર્ષો થવા છતાં, તેઓશ્રીના જેવું અદ્ભુત વ્યક્તિત્વ, અસાધારણ વિદ્વત્તા, જૈનદર્શન પ્રત્યેની અનન્ય નિષ્ઠા, તેમજ જીવન પર્યંત સાહિત્ય સેવા માટેનો ભગીરથ પુરુષાર્થ; તેઓશ્રીનાં નિર્વાણ બાદ હજુ સુધી કોઈ પણ વ્યક્તિમાં ક્વચિત્ જ આપણને જોવા-સાંભળવા મળશે.

આવા અગણિત ઉપકારોની અમીવર્ષા, આપણા પર વરસાવી, સંસાર સમસ્તના સાંસ્કારિક સાહિત્યક્ષેત્રે મહાનફાળો નોંધાવી, ૫૫ વર્ષના સંયમી-જીવનમાં આટ-આટલો અવિરત પરિશ્રમ કરી, સંસારભરમાં યશસ્વી નામના મૂકી, અમર થઈ જનાર સંયમીશ્વર મહામના સમર્થ સાહિત્ય સ્વામી ઉપાધ્યાયજી શ્રી યશોવિજયજી મહારાજને આપણાં અનંત વંદન હો!

परेषां गुणदोषेषु, दृष्टिस्ते विपदायिनी ।
स्वगुणानुभवलोकाद्-दृष्टिः पीयूषवर्षिणी ॥

—પારકાના ગુણ-દોષ જોવા તે વિષદૃષ્ટિ છે અને આત્મગુણાનુભવના પ્રકાશવાળી દૃષ્ટિ તે અમૃત વરસાવનારી છે.

[परमात्मपंच०] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી]

* * *

ज्ञानी तपस्वी क्रियावान्, सम्यक्त्वानप्युपशांतिहीनः ॥
प्राप्नोति तं नैव गुणं कदापि, समाहितात्मा लभते शर्मा यं ॥

—સમાધિવાળો, પ્રશાન્ત આત્મા જે ગુણોને પ્રાપ્ત કરે છે. તે ગુણો શાંતિ વિનાનો માણસ કદાપિ પ્રાપ્ત કરતો નથી; પછી તે માણસ ભલે જ્ઞાની, તપસ્વી, ક્રિયાવાન કે સમ્યગ્દૃષ્ટિવાળો હોય!

[वैराग्यकल्प०] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી]

વાચક યશોવિજય

'વાણી વાચક જસ તણી, કોઈ નયે ન અધૂરી રે.'

[લેખકઃ—પરમપૂજ્ય પં. મહારાજ શ્રીમાન્ ભદ્રંકરવિજયજી ગણિ]

પદ્ય શ્રીપાળનો રાસ વર્ષમાં બે વાર નિયમિત શ્રવણ કરનાર તથા વર્ષમાં બે વાર નિયમિત શ્રીસિદ્ધચક્રની ઓળીનો વિધિયુક્ત તપ કરનાર ભાગ્યવાન્ શ્રદ્ધાળુ આત્માના કર્ણકોટરમાં એવી રીતે ગુંજારવ કરી જાય છે કે, તેની ઝણઝણાટી અને સ્મૃતિ વર્ષના ૩૬૦ દિવસમાંથી એક પણ દિવસ ખસતી નથી. વાચક જસની વાણીમાં એવું શું છે ? તેનો ખુલાસો વાણી વડે કરવો અશક્ય છે. તેનો સાચો ખુલાસો તો તેની વાણીના સતત સમાગમમાં રહેનાર આત્માને અંતરાત્માવડે જ આપોઆપ થાય છે.

વાચક યશોવિજય સમર્થ તાર્કિક છે. અસાધારણ કવિ છે, પ્રખર પંડિત છે. તેથી તેમની વાણીનો સમાગમ સામાન્ય માણસ કેવી રીતે સાધી શકે ? એ પ્રશ્નના ઉત્તરમાંજ ઉપાધ્યાય યશોવિજયજી મહારાજનું અદ્વિતીય વ્યક્તિત્વ છુપાયેલું છે. શ્રી જૈનશાસન અથવા શ્રીવીરશાસનરૂપી ગગનાંગણમાં અદ્વિતીય તેજસ્વી તારલાઓ આજ સુધી અનેકાનેક થયેલા છે, અને તેમનો અદ્વિતીય જ્ઞાન પ્રકાશ આજ પર્યંત અનેકાનેક ભવ્યાત્માઓનાં અજ્ઞાનતિમિરને ભેદી રહ્યો છે, એ વાત અતિસુપ્રસિદ્ધ છે. છતાં તેમાં પણ છેલ્લા બે અદ્વિતીય તેજસ્વી તારકો 'શ્રીહરિભદ્ર' અને 'શ્રીહેમચંદ્ર' નો ઉપકાર કદી પણ ન ભૂલાય તેવો છે. તે બન્ને મહર્ષિઓનું જ્ઞાન તેજ ઝીલ્યા વિના જ કોઈ જ્ઞાની બન્યા હોવાનો દાવો તેમના સમય પછી કરી શકે, એવો એક પણ પંડિત જૈનશાસનમાં શોધી શકાય તેમ નથી. વાચક ઉમાસ્વાતિનો 'તત્ત્વાર્થાધિગમ' કે સિદ્ધસેન દિવાકરસૂરિનો 'ન્યાયાવતાર' ભણ્યા વિના પંડિત થયાના દાખલા હજુ મળી શકે પરન્તુ શ્રીહરિભદ્રસૂરિનું 'શાસ્ત્રવાર્તા' કે શ્રીહેમચંદ્રસૂરિનું 'યોગશાસ્ત્ર' ભણ્યાવિના જૈનશાસનનું પાંડિત્ય પ્રાપ્ત થયાના દાખલા તેમની પછીના સમયમાં ભાગ્યેજ મળે. વિશાળ અને વ્યાપક ગ્રન્થરચનાઓનાં કારણે ભગવાન શ્રી હરિભદ્રસૂરિ કે કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રી હેમચંદ્રસૂરિનું સ્થાન જૈનશાસનમાં અદ્વિતીય છે. હરિભદ્રસૂરિજીની ગ્રંથરચનાઓ પ્રૌઢ છતાં માતાની જેમ હૃદયદ્રાવક છે. હેમચંદ્રસૂરિજીની રચના સરળ છતાં મુમુક્ષુઓને

પિતાની જેમ માર્ગદર્શક છે. વાચક યશોવિજયજીની કૃતિઓ પ્રૌઢ છે, સરળ છે, માર્ગ-દર્શક છે અને હૃદયદ્રાવક પણ છે.

વાચક યશોવિજયમાં હરિભદ્રાચાર્ય જેવી મધ્યસ્થ બુદ્ધિ અને પરીક્ષક શક્તિ તથા હેમચંદ્રાચાર્ય જેવી સન્માર્ગદેશક અને સન્માર્ગરક્ષક વૃત્તિ તરી આવે છે. તદુપરાંત પૂર્વના મહાન્ આચાર્યોની જેમ ગુરુભક્તિ, તીર્થભક્તિ, સંઘભક્તિ, શાસનપ્રેમ, ધર્મપ્રેમ સંસારજુગુપ્સા, સંવેગરસ, નમ્રતા, લઘુતા, સરળતા, દક્ષતા, ઉદારતા, ધીરતા, ગંભીરતા, પરોપકારરસિકતા ઈત્યાદિ અગણિત ગુણો જણાઈ આવે છે. અને એ બધા અપૂર્વ ગુણોના કારણે તેમની કૃતિઓ, એક નાનું બાળક પણ સમજી શકે એટલી હદ સુધીની સરળ અને એક પ્રૌઢતમ વિદ્વાન પણ ન સમજી શકે, એટલી હદ સુધીની ગંભીર મળી શકે છે.

હરિભદ્રસૂરિ મહારાજે પ્રૌઢમાં પ્રૌઢ ભાષામાં તથા હેમચંદ્રસૂરિ મહારાજે સરળમાં સરળ ભાષામાં ઘણું યે લખ્યું છે. પરંતુ તે માત્ર બે જ ભાષામાં, એક સંસ્કૃત, અને બીજી પ્રાકૃત. જ્યારે ઉપાધ્યાય યશોવિજયજી વાચકે પોતાના પૂર્વગામી મહાપુરુષોએ કહી તેની તે વાત પણ અપૂર્વ રીતીએ, નવીન શૈલીથી, વિદ્વદ્ગ્રાહ્ય અને બાલગ્રાહ્ય બન્ને પ્રકારે એવી ચચોટ રીતીએ આલેખી છે એટલું જ નહિ પરન્તુ તે પોતાના સમયની મુમુક્ષુભોગ્ય સર્વ ભાષામાં; સંસ્કૃત, પ્રાકૃત, માગધી, અપભ્રંશ, ગૂર્જર કે મરૂધર એક પણ ભાષા તેમણે જૈનમાર્ગ આલેખવા માટે જતી કરી નથી; એ એક વાચક યશોવિજયની વિશેષતા છે.

બીજી વિશેષતા એ છે કે તેમની કૃતિમાં શ્રી હરિભદ્ર આવે છે, શ્રી હેમચંદ્ર પણ આવે છે, શ્રી સિદ્ધસેન પણ આવે છે અને શ્રી જિનભદ્ર પણ આવે છે. શ્વેતાંબર વાચક ઉમાસ્વાતિજી પણ આવે છે. અને દિગંબર આચાર્ય કુન્દ કુન્દ પણ આવે છે. આગમ પણ આવે છે અને પ્રકરણ પણ આવે છે, તર્કમાં કઠિન "સન્મતિ તર્ક" અને પ્રકરણમાં કઠિનમાંકઠિન કમ્મપયડી તો ઉપાધ્યાયજીમહારાજના પ્રિયમાં પ્રિય વિષયો છે. આ રીતે બધાને ન્યાય આપી શકે એવી અસાધારણ શક્તિ ઉપાધ્યાયજીમાં શી રીતે આવી? તેનો ઉત્તર પોતાના બનાવેલા 'ગુરુતત્ત્વવિનિશ્ચય' નામના એક ગ્રન્થરત્નમાં તેઓશ્રી ફરમાવે છે.

તેઓશ્રી કહે છે કે:-

'अम्हारिसा वि मुक्खा, पंतीए पंडिआण पविसंति
अण्णं गुरुभत्तीए किं, विलसिअमब्भुअं इत्तो ॥

[गुरुतत्त्वविनिश्चय १-२.]

'અમારા જેવા મૂર્ખ પણ આજે ગ્રન્થકારની પંક્તિમાં પ્રવેશ કરે છે, એનાથી અધિક ગુરુભક્તિનો પ્રભાવ બીજો કયો હોઈ શકે?'

સરસ્વતીનો પ્રસાદ પણ તેમને પ્રાપ્ત થયો છે. અને એ પ્રસાદ વડે તેમની કૃતિઓમાં કાવ્ય

ચાતુર્ય અને તર્કનૈપુણ્ય આવ્યું છે, એમ તેઓ પોતે પણ કબુલ રાખે છે. છતાં સરસ્વતી તેમને જ આટલી હદ સુધી પ્રસન્ન થવામાં કોઈ કારણ હોવું જ જોઈએ અને તે તેમની અદ્વિતીય ગુરુભક્તિ અને અદ્વિતીય નમ્રવૃત્તિ* સિવાય બીજું શું છે? નાનામાં નાની ત્રણ કડીની કૃતિમાં પણ પોતાના ગુરુને જેઓ ભૂલતા નથી, અને ઉત્કટમાં ઉત્કટ ચારિત્ર પાળવા છતાં જેઓ પોતાને 'સંવિજ્ઞપાક્ષિક'થી અધિક માનતા નથી, તેવા સર્વોત્કૃષ્ટ પાત્રને જ દેવી સરસ્વતી વર આપવા તૈયાર થાય તેમાં કશીજ નવાઈ નથી.

अस्मादृशां प्रमादग्रस्तानां-चरण-करण हीनानाम् ।
अब्धौ पोत इव - प्रवचनरागः तरणोपायः ॥

પ્રમાદગ્રસ્ત અને ચરણ-કરણથી શૂન્ય, એવા અમારા જેવા માટે શ્રીજિનપ્રવચનનો અનુરાગ એ જ સમુદ્રમાં નાવની જેમ તરવાનો ઉપાય છે,

न्यायालोक] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

* * *

किं बहुणा इह जह राग-द्दोसा लहुं विलिज्जंति ।
तह तह पयट्टिअव्वं एसा आणा जिणिंदाणं ॥

વધારે અમે શું કહીએ, આ જન્મમાં રાગ-દ્વેષ જેમ જેમ પતળા પડે તેવી તેવી પ્રવૃત્તિ કરવી એવી આજ્ઞા જિનેશ્વરોની છે.

उपदेश रहस्य] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

---

*પોતાની લઘુતા બતાવતાં એક જગ્યાએ તેઓશ્રી ફરમાવે છે કે—

अस्मादृशां प्रमादग्रस्तानां चरणकरणहीनानाम्,
अब्धौ पोत इव प्रवचनराग एव तरणोपायः ॥ १ ॥

પ્રમાદગ્રસ્ત અને ચરણ-કરણ શૂન્ય, એવા અમારા જેવા માટે આ કલિકાલમાં શ્રીજિનપ્રવચનનો અનુરાગ એજ સમુદ્રમાં નાવની જેમ તરવાનો ઉપાય છે.

પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીમહારાજ-

શ્રીયશોવિજયજી મહારાજના ગ્રન્થોનું અધ્યયન

[લે. પરમપૂજ્ય પં. શ્રી ધુરંધરવિજયજી મહારાજ]

(એક દૃષ્ટિબિન્દુ)

વિચ્છિન્ન પ્રભાવશાલિ-ત્રિકાલાબાધિત શ્રી જૈન શાસનમાં શાસ્ત્રોનો ખજાનો એટલો વિપુલ અને બહુમૂલ્ય છે કે વર્તમાનમાં ઉપલબ્ધ સર્વ ગ્રન્થોનું સાંગોપાંગ અધ્યયન તો દૂર રહો પણ તેનું વર્ણિકાદર્શન-અર્થાત્ દરેક ગ્રન્થની વાનગીમાત્ર ચાખવા માટે એક જિંદગી-સંપૂર્ણ આયુષ્યવાળી ઓછી પડે.

જૈન દર્શનનાં સર્વ સાહિત્યનું અનેક પ્રકારે વર્ગીકરણ કરી શકાય છે. તેમાં નીચે પ્રમાણે તેનું વર્ગીકરણ કરીને વિચારીએ તો અધ્યયનની અપેક્ષાએ તે સમુચિત જણાશે.

૧. આગમ સાહિત્ય.
૨. આગમાનુસારિ સાહિત્ય.
૩. તર્ક સાહિત્ય.
૪. કથા સાહિત્ય.
૫. પ્રકીર્ણ સાહિત્ય.

ઉપર પાંચ વિભાગમાં વહેંચાએલ જૈન સાહિત્યનો દરેક વિભાગ એટલો વિશાળ છે છે કે તેનો પાર પામી શકાય નહિ.

ઉપાધ્યાયજીના ગ્રન્થમાંથી મળતો નવો જ જ્ઞાનપ્રકાશ

એ જૈન સાહિત્યમાં પૂ. ઉપા. શ્રી યશોવિજયજી મહારાજ વિરચિત ગ્રન્થો અગત્યનું સ્થાન ધરાવે છે. તેમના કેટલાક ગ્રન્થોમાં એવું સામર્થ્ય છે કે જે વાંચવાથી ઘણી જડતા દૂર થવા સાથે કોઈ નવો જ્ઞાનપ્રકાશ મળતો હોય એવું પ્રતિપદ ભાન થાય છે.

પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજનું સાહિત્ય અનેક મુખ પ્રસર્યું છે. જે જે વિષયમાં તેઓશ્રીએ કલમ ચલાવી છે તે દરેક વિષય એવો તો તલસ્પર્શી રીતે ચર્ચ્યો છે કે વાચકને તેથી પૂર્ણ સંતોષ પ્રાપ્ત થાય.

વર્તમાનમાં સો ઉપરાંત તેમની કૃતિઓ ઉપલબ્ધ છે,-તેમાંથી કેટલીક કૃતિઓ

અજોડ અને અભૂતપૂર્વસમાન છે. ન્યાયશાસ્ત્ર અને તે શાસ્ત્રે અપનાવેલી શૈલીમાં આલેખેલ તેમનું લખાણુ ખૂબ જ મહત્ત્વનું છે.

ન્યાય દર્શનમાં ગંગેશ ઉપાધ્યાય પછી નવ્યન્યાયની પ્રણાલિકાનો આરંભ થયો અને તેનો વિકાસ પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજના સમયમાં પૂર્ણ ટોચે પહોંચ્યો હતો એમ કહી શકાય, રઘુનાથ શિરોમણિ, ગદાધર, જગદીશ વગેરેના નવ્યન્યાયના ગ્રન્થો સૂક્ષ્મ તર્કસરણિમાં આગળ પડતા હતા. જૈન દર્શનમાં એ શૈલીથી વિષયોનું પ્રતિપાદન પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજે કર્યું–કર્યું એટલું જ નહિ પણ એવું કર્યું કે જરીપણ ઓછાશ કે કચાશ રાખી નહિં. 'અષ્ટસહસ્રી' 'શાસ્ત્રવાર્તાસમુચ્ચયની કલ્પલતા ટીકા' 'અનેકાન્ત વ્યવસ્થા' 'નયોપદેશ–નયામૃત–તરંગિણી' 'વાદમાલા' ન્યાયખંડખાદ્ય' 'જ્ઞાનાર્ણવ' 'જ્ઞાનબિન્દુ' 'તત્ત્વાર્થ ટીકા–પ્રથમઅધ્યાય' વગેરે ગ્રન્થો જોતાં નવ્યન્યાયશૈલી ઉપરનું તેમનું પ્રભુત્વ તેમના પ્રત્યે ખુદ ગંગેશ ઉપાધ્યાયને પણ બહુમાન ઉપજાવે એવું છે. ઉપાધ્યાયજીની કલમમાં ખંડનશક્તિ સાથે સમન્વય કરવાની શક્તિ હતી.

અધ્યાત્મમત પરીક્ષા, આધ્યાત્મિક–મતદલન, પ્રતિમાશતક, ધર્મપરીક્ષા, ગુરુ-તત્ત્વ વિનિશ્ચય, ૧૨૫ ગાથા આદિ સ્તવનો, તેમની પરમત ખંડન કરવાની શક્તિનો પૂર્ણ પરિચય કરાવે છે. તે સાથે જ્ઞાનબિન્દુ, વગેરેમાં તેમની સમન્વયશક્તિનો પરિચય મળે છે.

સમન્વય શક્તિ

સ્યાદ્વાદ કલ્પલતામાં એ સમન્વય શક્તિ કમનીય રીતે ખીલી છે. અષ્ટસહસ્રી એ દિગમ્બર ગ્રન્થ ઉપર આઠ હજાર શ્લોક પ્રમાણુ અષ્ટસહસ્રી રચીને સમસિદ્ધાન્તમાં અવિરોધ કેળવવાની તેમની વૃત્તિ ગૌરવ જન્માવે છે. અને તે પણ સમન્વય શક્તિનો એક પ્રકારનો આદર્શ પૂરો પાડે છે. તર્કમાં કર્કશ મતિ ચલાવવા છતાં તેમાં સાહિત્યની સુકુમારતા રમણીય હતી. વૈરાગ્ય સાથે સાહિત્યનો સમ્બન્ધ જોડવાની તેમની શક્તિ વૈરાગ્ય કલ્પલતા, અધ્યાત્મસાર વગેરેમાં સુન્દર જોવાય છે. જ્ઞાનસાર આદિ ગ્રન્થોમાં અધ્યાત્મ રસ એક સરખો નીતરે છે.

મૂર્તિપૂજાની સિદ્ધિ માટે તો તેમનાં લખાણોએ ચમત્કાર કર્યો છે. એમનાં એ લખાણો વાંચવા માત્ર પણ વાંચી જનારના હૃદયમાં જો મૂર્તિપૂજાની સત્યતા ન જન્મે તો જાણવું કે તે ચેતન નથી. સ્તવનો, સ્તુતિઓ, સ્તોત્રો વગેરે એકએકથી ચડીઆતા રચીને તેમણે ભક્તિયોગનું સાહિત્ય પણ ભરપૂર પૂરું પાડયું છે.

તેઓ જેવું ગદ્ય લખી શકતા હતા તેવું જ કે તેથી પણ વિશેષ સુન્દર રીતે પદ્ય લખી શકતા હતા. ગુજરાતી, પ્રાકૃત, સંસ્કૃત એ ત્રણ ભાષા ઉપરનો તેમનો કાબૂ પૂરો હતો. બનારસીદાસને ઉત્તર આપતાં તેમણે વ્રજભાષામાં પણ કલમ ચલાવી છે. પદ્યમાં

સ્થળે સ્થળે રાજસ્થાની ભાષાની ઝલક આવે છે તે તેમના સમયને અને તે પ્રદેશના વિહારને આભારી છે, તેમનાં વચનો ટંકશાળી છે.

તેઓશ્રીના ગ્રન્થોનું અધ્યયન થવું ઘટે

તેમના ગ્રન્થોનું વ્યવસ્થિત અધ્યયન થવું આવશ્યક છે. તેમના પ્રત્યેની ભક્તિ અને તેમને આપેલા આ જ્ઞાન ખજાનાનું ઋણ તેમના ગુણાનુવાદ કરવા માત્રથી ઈતિશ્રી થતું નથી. ગુણાનુવાદ તો થતો આવ્યો છે અને થશે. પણ તેમના પછી બસો અઢીસો વર્ષનો ગાળો એવો ગયો કે જેમાં તેમના અનેક ગ્રન્થો કાળના 'કવળ' બની ગયા. રહ્યા છે તે ગ્રન્થો પણ તેનું અધ્યયન વધશે તો જળવાશે; નહિ તો જતે કાળે તે પણ અસુલભ થઈ પડશે. જેને જે વિષયમાં રસ હોય તે પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીના તે તે વિષયના ગ્રન્થને વાંચે-વિચારે, કંઠસ્થ કરે અને તે રીતે તેમના પ્રત્યેની ભક્તિ વ્યક્ત કરે.

卐

इलिका भ्रमरी ध्यानात्, भ्रमरीत्वं यथाश्नुते ।
तथा ध्यायन् परमात्मानं, परमात्मत्वमाप्नुयात् ॥

અર્થ—ઈયળ ભ્રમરીનું ધ્યાન કરતાં કરતાં ભ્રમરી સ્વરૂપ બની જાય છે તે પ્રમાણે પરમાત્માનું સતત ધ્યાન કરતો આત્મા પરમાત્મ સ્વરૂપ બની જાય છે.

परमात्मपञ्च०] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

ઉપાધ્યાયજી શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજ અને તેમની શાસનસેવા

[લેખકઃ—પરમપૂજ્ય મુનિવર શ્રી જમ્બૂવિજયજી મહારાજ]

ઉપાધ્યાયજી એટલે કુત્રિકાપણ
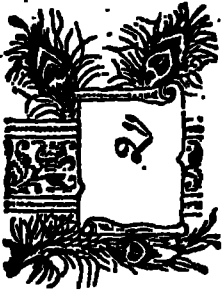
નશાસનરૂપી મહાસાગરમાં જે અત્યંત તેજસ્વી નરરત્નો પ્રગટ થયાં છે તેમાં પૂજ્યપાદ વાચકવર્ય ભગવાન શ્રી યશોવિજયજી મહારાજનું સ્થાન ઘણા ઉંચા દરજ્જામાં આવે છે. જો કે જગતે આજ સુધી ઘણા સમર્થ વિદ્વાનો જોયા છે, પરંતુ ઉપાધ્યાયજી જેવા મહાપુરુષો તો તેમાંથી વિરલ જ મળી આવશે. કોઈ વિદ્વાનોનું સાહિત્ય વિદ્વાનોને જ અધિકાંશે ઉપયોગી હોય છે, જ્યારે કોઈનું સાહિત્ય સામાન્ય જનતાને જ અધિકાંશે ઉપયોગી હોય છે. પરંતુ આ મહાપુરુષની વિશિષ્ટતા એ છે કે તેમનું સાહિત્ય સર્વવિષયવ્યાપક અને સર્વજનોપયોગી છે. તેમનું જ્ઞાન સર્વવિષયોમાં અગાધ હતું અને તેમણે એટલા બધા વિષયો ઉપર સાહિત્યસર્જન કર્યું છે કે તેમના સમકાલીન વિદ્વાનો પણ તેમને "શ્રુતકેવલી"ની ઉપમા આપતા હતા. તેમ જ તેમને <u>કૂર્ચાલશારદા</u> એટલે દાઢી–મૂછવાળી સરસ્વતીદેવીરૂપે વર્ણવતા હતા. તેમણે કયા કયાં વિષયો ઉપર લખ્યું છે એ કહેવા કરતાં કયા કયા વિષયો ઉપર નથી લખ્યું એ કહેવું વધારે ઉચિત ગણાય તેમને ભૂતકાળના કુત્રિકાપણની ઉપમા આપી શકાય. જેમ દેવાધિષ્ઠિત કુત્રિકાપણમાં જે વસ્તુ માગવામાં આવે તે બધી વસ્તુ મળી શકે તેમ આ મહાપુરુષના સર્જનમાંથી પણ આપણને દરેક પ્રકારનું સાહિત્ય મળી શકે છે. જેમકે સંસ્કૃત–પ્રાકૃત ભાષાના પ્રાચીન ગ્રંથો ઉપર ટીકાઓ, અષ્ટક વગેરે સ્વતંત્ર પ્રકરણ ગ્રંથો, અનેકાંત અને નય વિષયના અનેક ન્યાયગ્રંથો, ગુજરાતી તથા હિંદી ભાષામાં સ્તવનો, સજ્ઝાયો, રાસાઓ વગેરે વગેરે ઘણું સાહિત્ય તેમણે રચ્યું છે, કે જે ખાસ વિશિષ્ટ પ્રકાશ પાડનારૂં અર્થગંભીર અને વિદ્વત્તાપૂર્ણ છે, અને જેને વાંચતાં જ્ઞાનપ્રેમી કોઈ પણ વિદ્વાનનું મસ્તક નમ્યા સિવાય રહે નહિ.

દાર્શનિક વિષયોના પારદૃષ્ટા

દાર્શનિક વિષયના તો તેઓ પારદ્રષ્ટા જ હતા. તેથી તે વિષય ઉપર જ્યારે તેઓ

લખવા બેસે છે ત્યારે તેમની તે વિષયમાં પારંગતતા અને સર્વતન્ત્ર-સ્વતન્ત્રતા અપૂર્વ રીતે ઝળકી ઉઠે છે. તેમણે કરેલાં સૂક્ષ્મતમ દાર્શનિક નિરૂપણોમાં ન્યાયના પ્રકાંડ વિદ્વાનોનો પણ ઘણીવાર ચંચુપ્રવેશ પણ થવા પામતો નથી. આશ્ચર્યની વાત તો એ છે કે કાશી જેવી સરસ્વતીની નગરીમાં પણ તેમણે માત્ર ત્રણ જ વર્ષ સુધી અભ્યાસ કરીને પણ પરવાદિઓની પર્ષદામાં વિજય મેળવ્યો. અને તેથી જ કાશીના જ બ્રાહ્મણ વિદ્વાનોના મંડળે તેમના જ્ઞાનથી અત્યંત મુગ્ધ થઈને તેમને न्यायविशारदનું બિરુદ આપ્યું એ કંઈ ઓછું આશ્ચર્ય ગણાય નહીં. નવ્યન્યાયને જૈનન્યાયમાં ઉત્તારવાનું લગભગ અશક્ય કાર્ય તો તેમણે જ શક્ય બનાવ્યું અને એ કાર્ય એકલે હાથે પાર પાડીને જૈનદર્શનશાસ્ત્રના ઇતિહાસમાં તેમણે અમર સ્થાન પ્રાપ્ત કરી લીધું છે.

નવીન પદ્ધતિથી પ્રકાશન-અધ્યયનની જરૂર

નવ્યન્યાયના અને ઉપાધ્યાયજી મહારાજે રચેલા ન્યાયના ગ્રંથોના અભ્યાસીઓને આ સ્થળે મારી એક સૂચના છે કે હમણાં નવ્યન્યાયનાં વ્યાપ્તિપંચક, સિંહવ્યાઘ્રલક્ષણ, સિદ્ધાન્તલક્ષણ વગેરે વગેરે જે પ્રકરણોનું અધ્યયન કરવામાં આવે છે તે ખાસ કરીને ગંગેશ-ઉપાધ્યાયવિરચિત તત્ત્વચિંતામણિ ગ્રંથના અનુમાન ખંડના જ ભાગો છે. કાશી અને કલકત્તા આદિની વિદ્યાપીઠોએ આ જ ભાગોને પરીક્ષામાં નિર્ધારિત કરેલા હોવાથી બ્રાહ્મણ વિદ્યાર્થીઓ એનું જ અધ્યયન કરે છે અને પછી અધ્યાપન પણ એનું જ કરાવે છે. આ ભાગોમાં ભરેલી अवच्छेदकावच्छिन्नमય જટિલ ચર્ચાઓ ભલે બુદ્ધિને સૂક્ષ્મ બનાવતી હોય પણ તેમાં પદાર્થનિરૂપણ નહીંવત્ છે એટલે તેનો ઉપાધ્યાયજી મહારાજના ગ્રંથોમાં સીધો ઉપયોગ ભાગ્યે જ થાય છે. ઉપાધ્યાયજી મહારાજના ન્યાયવિષયક ગ્રંથોનું વિશદ જ્ઞાન સરલતાથી પ્રાપ્ત કરવું હોય તો તેમણે જે જે સાહિત્યને નજરમાં રાખીને પોતાનું ન્યાયવિષયક સાહિત્ય સર્જ્યું છે તે સાહિત્યને આપણે શોધી કાઢીને સન્મુખ રાખવું જોઈએ. તત્ત્વચિંતામણિના અનુમાનખંડ સિવાય બીજા ખંડોમાં પદાર્થનિરૂપણ અધિક છે. રોયલ એશિઆટીક સોસાયટી, બંગાળ (કલકત્તા) તરફથી એ ખંડો ઘણા સમય પૂર્વે પ્રકાશિત થયેલા છે. પરિશ્રમ કરીને પણ એ ખંડો મેળવવા જોઈએ. વળી અત્યારે જે માથુરી, જાગદીશી, ગાદાધરી આદિ ટીકાગ્રન્થો પ્રચલિત છે તેનો ઉપાધ્યાયજી મહારાજે ખાસ ઉપયોગ કર્યો હોય તેમ જણાતું નથી. પરંતુ દીધિતિકાર રઘુનાથશિરોમણિ તથા પક્ષનાભમિશ્ર વગેરેના ગ્રંથોનો ઉપયોગ કરેલો જોવામાં આવે છે. એ બધા મુદ્રિત-અમુદ્રિત ગ્રંથો મિથિલા અને બનારસ બાજુના પ્રદેશમાં મળવાનો ખાસ જ સંભવ છે. એ બધી સામગ્રી મેળવીને ઉપાધ્યાયજી મહારાજના ગ્રંથોનું નવીન પદ્ધતિથી પ્રકાશન અને અધ્યયન કરવામાં આવશે તો તે વિશદ અને દિવ્ય બનશે. તેમ જ એ મહાપુરુષ નવ્યન્યાયની શૈલીને જૈનન્યાયમાં ઉતારવા કેવી રીતે સમર્થ થયા તેની પણ સારી રીતે કલ્પના આવશે. અને આપણે પણ એ પ્રવૃત્તિને મૌલિક સ્વરૂપમાં કેવી રીતે વિકસાવી શકીએ એની પણ સ્પષ્ટ દિશા હાથમાં આવશે.

જટિલ પ્રશ્નોના કરેલા ઉકેલો

તર્કશાસ્ત્રના અધ્યયનથી સૂક્ષ્મતમ થયેલી બુદ્ધિનો ઉપયોગ તેમણે માત્ર દાર્શનિક વિષયમાં નહિ પણ લગભગ દરેક વિષયમાં કરેલો છે. તેથી જ્યારે તેઓ આગમિક વિષય ઉપર લખવા બેસે છે ત્યારે પણ તેમની પ્રતિભા અલૌકિક સ્વરૂપમાં ઝળકી ઉઠે છે. જેને પરિણામે સેંકડો વર્ષોથી નહીં ઉકેલાયેલા અનેક જટિલ પ્રશ્નોના ઉકેલ અને સમાધાન તેમણે કર્યાં છે. બધું આગમિક સાહિત્ય તેમને જિહ્વાગ્રે જ રમતું હતું. તેમણે કરેલી ચર્ચાઓ એટલી બધી તલસ્પર્શી અને યુક્તિ તથા ઉપપત્તિથી પરિપૂર્ણ છે કે વાંચનારનાં વર્ષો જૂના ભ્રમો અને સંશયો ક્ષણવારમાં દૂર થઈ જાય છે. कम्मपयडी ઉપર સૌથી મોટી ટીકા રચીને તે વિષયમાં પણ પોતાની પારગામિતા તેમણે સિદ્ધ કરી આપી છે.

જેવા જ્ઞાની તેવા જ ક્રિયાવાદી

આ મહાપુરુષની બીજી પણ એક વિશિષ્ટતા એ છે કે જગતમાં વિદ્વાન ગણાતા કેટલાક, શુષ્કપાંડિત્યના ઉપાસક શ્રદ્ધા તથા આચરણથી શૂન્ય હોય છે. પરંતુ આ મહાપુરુષ સમર્થ વિદ્વાન હોવા છતાં પણ મહાન આત્મજ્ઞાની હતા. દર્શન, જ્ઞાન તથા ચારિત્ર બધાંને તેઓ ઘણું મહત્વ આપતા હતા. સમ્યગ્દર્શન મુક્તિનો પાયો હોવાથી તેના ઉપર તેઓ ઘણો જ ભાર મૂકતા હતા. આથી જ તેમના ગુજરાતી આદિ ભાષામાં રચેલાં સ્તવનો–સ્તુતિ–સજ્ઝાય–રાસાઓ વગેરેમાં ભક્તિરસ તથા વૈરાગ્યરસ છલોછલ ભરેલા દેખાય છે.

યોગમાર્ગના આદ્ય વિવેચક

અધ્યાત્મદશામાં તેઓ કેટલા બધા નિમગ્ન હતા, એ તેમણે તે વિષયના અનેક ગ્રંથો રચ્યા છે, તે ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાઈ આવે છે. પૂ. હરિભદ્રસૂરિ મહારાજે વર્ણવેલા યોગ માર્ગના તેઓ આદ્ય વિવેચક છે.

મૂર્તિપૂજા ઉપરનો રંગ

ઉપરાંત, પ્રતિમાશતક તથા સીમંધરસ્વામીને વિનતિરૂપ સ્તવનોથી મૂર્તિપૂજા ઉપર તેમનો કેવો દૃઢ રંગ હતો, એ પણ જણાઈ આવે છે.

નયચક્ર જેવા મહાગ્રન્થનો કરેલ ઉદ્ધાર

ઉપાધ્યાયજી મહારાજની જ્ઞાનભક્તિ કેટલી અપૂર્વ હતી તેના ઉદાહરણરૂપે नयचक्रની તેમણે કેવી રીતે રક્ષા કરી એ હકીકત જાણવા જેવી છે. તે પહેલાં નયચક્રનો થોડો પરિચય કરી લઈએ. કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રી હેમચંદ્રસૂરિ મહારાજે 'अनुमल्लवादिनं तार्किकाः' કહી જેમને શ્રેષ્ઠ તાર્કિક તરીકે વર્ણવ્યા છે અને જે સંભવતઃ વિક્રમની પાંચમી શતાબ્દીમાં થયેલા છે તે આચાર્યભગવાન શ્રી મલ્લવાદિ ક્ષમાશ્રમણે नयचक्र નામના મહાન તર્ક ગ્રંથની રચના કરી હતી. રથના ચક્રમાં જેમ બાર આરા હોય છે અને તે આરાઓ ચક્રની નાભિમાં રહેલા હોય છે તે પ્રમાણે આ ગ્રંથમાં પણ અર સંજ્ઞાવાળાં ૧૨ પ્રકરણો છે. આ બાર

અરોમાં લગભગ બધાં જ તત્કાલીન પ્રસિદ્ધ દર્શનોની સમીક્ષા કરવામાં આવી છે અને એકાંતવાદી બધાં જ દર્શનો ખોટાં છે એમ સિદ્ધ કરીને તેરમા સ્યાદ્વાદતુમ્બ નામના પ્રકરણમાં સ્યાદ્વાદરૂપી નાભિનો આશ્રય લેવામાં આવે તો બધાં દર્શનો અપેક્ષાએ અંશતઃ સાચાં બની શકે એમ બતાવ્યું છે. આ આખા ગ્રંથનું મૂળ, પ્રાચીન એક ગાથા જ છે કે જે નીચે મુજબ છે.

विधिनियमभङ्गवृत्तिव्यतिरिक्तत्वादनर्थकवचोवत् ।
जैनादन्यच्छासनमनृतं भवतीति वैधर्म्यम् ॥ [નયચક્ર પૃ. ૯ આ. મુ.]

આ એક જ ગાથા ઉપર મલ્લવાદીજીએ વિસ્તૃત ભાષ્ય રચેલું છે અને તે નયચક્રના નામથી ઓળખાય છે. આ નયચક્રના પ્રારંભમાં તેમણે રચેલો મંગલશ્લોક નીચે મુજબ છે:

व्याप्येकमप्यनन्तमन्तवदपि न्यस्तं धियां पाटवे ।
व्यामोहं न, जगत्प्रतानविसृतिव्यन्याससर्वाऽऽस्पदम् ॥
वाचां प्रागपनीय वाक्त्रिनियतं गम्यं न गम्यं क्वचि-
ज्जैनं शासनमूर्जितं जयति तद् द्रव्यार्थपर्यायतः ॥

આ નયચક્ર ગ્રંથ ઉપર (લગભગ વિક્રમના સાતમા શતકમાં થયેલા) આચાર્યશ્રી સિંહસૂરિગણિવાદિક્ષમાશ્રમણજી મહારાજે ન્યાયાગમાનુસારિણી નામની અતિવિસ્તૃત વ્યાખ્યા લખેલી છે કે જેનું ગ્રંથાગ્ર લગભગ ૧૮૦૦૦ શ્લોકપ્રમાણ થાય છે. નયચક્રવાલ [illegible] પણ સંભવતઃ આ વૃત્તિનો જ ઉલ્લેખ થતો હતો.

દુર્ભાગ્યે ભગવાન મલ્લવાદી ક્ષમાશ્રમણે રચેલા નયચક્રમૂલનો આજે ક્યાંય પત્તો નથી. ઐતિહાસિક ઉલ્લેખો જોતાં એમ લાગે છે કે છેલ્લાં સાતસો વર્ષમાં આ મૂલગ્રંથ કોઈએ જોયો હોય એવો ઉલ્લેખ મળતો નથી. અત્યારે જે મળે છે તે સિંહસૂરિગણિવાદિ ક્ષમાશ્રમણજીએ રચેલી નયચક્રવૃત્તિ જ માત્ર મળે છે. અને તે પણ લેખકોને હાથે ઉત્તરોત્તર થયેલી અશુદ્ધિઓથી ભરપુર થઈ ગયેલી છે. કેટલાકનું એમ માનવું છે કે ઉપાધ્યાયજી મહારાજે નયચક્ર ઉપર ટીકા-ટિપ્પણ આદિ કંઈક લખ્યું છે. પણ તે માન્યતા બરાબર નથી. ટીકા-ટિપ્પણ લખવા કરતાં પણ અતિવિશેષ મહત્ત્વનું તે ગ્રંથની રક્ષા કરવાનું કાર્ય તેમણે કરેલું છે. હકીકત એમ છે કે નયચક્રવૃત્તિની પ્રતિ તેમના સમયમાં ભાગ્યે જ જોવામાં આવતી હતી. કોઈક સ્થળે (પ્રાયઃ પાટણમાં) તેમના જોવામાં એ પ્રતિ આવી તેથી અત્યંત આનંદિત થઈને તેમણે એ પ્રતિ પહેલાં વાંચી લીધી અને પછી વિદ્વાન સાધુઓનું વૃંદ સાથે રાખીને એક જ પખવાડીઆમાં આ મહાકાય ગ્રંથની અક્ષરશઃ નવી કોપી તૈયાર કરી લીધી. આ હકીકતની સ્મૃતિમાં, તેમણે જે નવો આદર્શ (કોપી) તૈયાર કર્યો હતો તેના આદિ ભાગમાં નીચે પ્રમાણે ઉલ્લેખ કર્યો હતો—

ઉપાધ્યાયજીએ ગ્રન્થાન્તે મૂકેલી પુષ્પિકા

भट्टारकश्रीहीरविजयसूरीश्वरशिष्यमहोपाध्यायश्रीकल्याणविजयगणिशिष्यपण्डितश्री-लाभविजयगणिशिष्यपण्डितश्रीजीतविजयगणिसतीर्थ्यपण्डितश्रीनयविजयगणिगुरुभ्यो नमः ।

प्रणिधाय परं रूपं राज्ये श्री विजयदेवसूरीणाम् ।
नयचक्रस्यादर्शं प्रायो विरलस्य वितनोमि ॥ ऐँ नमः ।[1]

અને અંત્ય ભાગમાં નીચે પ્રમાણે ઉલ્લેખ કર્યો હતો —

पूर्वं पं. यशोविजयगणिना श्रीपत्तने वाचितम् ।
आदर्शोऽयं रचितो राज्ये श्रीविजयदेवसूरीणाम् ।
सम्भूय यैरमीषामभिधानानि प्रकटयामि ॥ १ ॥
विबुधाः श्रीनयविजया गुरवो जयसोमपण्डिता गुणिनः ।
विबुधाश्च लाभविजया गणयोऽपि च कीर्तिरत्नाख्याः ॥ २ ॥
तत्त्वविजयमुनयोऽपि च प्रयासमत्र स्म कुर्वते लिखने ।
सह रविविजयैर्विबुधैरलिखच्च यशोविजयविबुधः ॥ ३ ॥
ग्रन्थप्रयासमेनं दृष्ट्वा तुष्यन्ति सज्जना बाढम् ।
गुणमत्सरव्यवहिता दुर्जनदृग् वीक्षते नैनम् ॥ ४ ॥
तेभ्यो नमस्तदीयान् स्तुवे गुणांस्तेषु मे दृढा भक्तिः ।
अनवरतं चेष्टन्ते जिनवचनोद्भासनार्थं ये ॥ ५ ॥

॥ श्रेयोऽस्तु ॥

सुमहानप्ययमुच्चैः पक्षेणैकेन पूरितो ग्रन्थः ।
कर्णामृतं पटुधियां जयति चरित्रं पवित्रमिदम् ॥ ६ ॥

ઉપરના ઉલ્લેખથી પૂ. વિજયદેવસૂરિજીના સમયમાં તેમણે આ ગ્રંથનો આદર્શ (નવી કોપી) તૈયાર કરી હતી એ સ્પષ્ટ સમજી શકાય છે. જો કે અત્યારે તો ઉ. યશોવિજયજી મહારાજે તૈયાર કરેલો એ આદર્શ તથા જેના ઉપરથી તેમણે એ આદર્શ તૈયાર કર્યો હતો તે પ્રતિ એમાંથી કંઈ પણ મળતું નથી. પરંતુ તેમણે તૈયાર કરેલા આદર્શ ઉપરથી જ સાક્ષાત્ યા પરંપરાએ લખાયેલી અનેક પ્રતિઓ જૈન ગ્રંથ ભંડારોમાં આજે ઠામ ઠામ

---

૧ આના પછી जयति नयचक्रनिर्जितनिःशेषविपक्षचक्रविक्रान्तः । श्रीमल्लवादिसूरिर्जिनवचननभस्तल-विवस्वान् ॥ १ ॥ तत्प्रणीतमहार्थयथार्थनयचक्राख्यशास्त्रविवरणमिदमनुव्याख्यास्यामः આ પ્રકારનો જે ઉલ્લેખ આવે છે તે ટીકાકાર ભગવાન શ્રી સિંહસૂરિગણિવાદિ ક્ષમાશ્રમણે જ કરેલો છે. जयति नयचक्रनिर्जित ......આ કારિકાનો ઉલ્લેખ વિક્રમ સંવત્ ૧૪૨૨માંથી સંઘતિલકસૂરિએ રચેલી सम्यक्त्वसप्ततिवृत्तिમાં મલ્લવાદિકથામાં પણ આવે છે.

જોવામાં આવે છે. તેમાં ઉપર જણાવેલા ઉપાધ્યાયજી મહારાજે કરેલા ઉલ્લેખો સચવાઈ રહેલા છે. પ્રારંભનો ઉલ્લેખ તો ઘણી પ્રતિઓમાં મળે છે. અંતિમ ઉલ્લેખ સં. ૧૭૨૯માં લખાયેલી વિજાપુરની શ્રીરંગવિમલજી જ્ઞાનભંડારની પ્રતિમાં તથા તેના ઉપરથી જ સંભવતઃ લખાયેલી કાશીના યતિ શ્રીહીરાચંદજીની પ્રતિમાં મળે છે. માત્ર એક જ પ્રતિ અમારા જોવામાં આવી છે કે જે ઉપાધ્યાયજી મહારાજના આદર્શ પૂર્વે સં. ૧૬૫૦ આસપાસ લખાયેલી છે. બાકીની બધી નયચક્રની પ્રતિઓ ઉપાધ્યાયજી મહારાજે તૈયાર કરેલા આદર્શની કોપીઓ જ અમારા જોવામાં આવી છે.

સન્મતિતર્ક ગ્રન્થનો કરેલો વિશાળ ઉપયોગ

ઉપરના ઉલ્લેખથી શ્રી વિજયદેવસૂરિ મહારાજના સમયમાં તેમણે આદર્શ તૈયાર કર્યો હતો અને શ્રી દેવસૂરિજી મહારાજનો સ્વર્ગવાસ સં. ૧૭૧૩માં થયો હતો. તેથી ઉપાધ્યાયજી મહારાજે સં. ૧૭૧૩ પહેલાં જ એ આદર્શ તૈયાર કર્યો હતો એ સ્પષ્ટ છે. ઉપાધ્યાયજી મહારાજનો સ્વર્ગવાસ વિક્રમ સંવત ૧૭૪૩માં થયો છે, એટલે આદર્શ તૈયાર કર્યા પછી ઓછામાં ઓછાં ત્રીસ વર્ષ તો તેઓ જીવ્યા જ હતા. આ કાળમાં તેમણે ઘણું સાહિત્ય સર્જ્યું છે. સન્મતિતર્કનો તો તેમના ગ્રંથોમાં ઘણા જ મોટા પ્રમાણમાં ઉપયોગ કરેલો છે. તેમણે જુદા જુદા ગ્રંથોમાં સન્મતિની ગાથાઓનાં કરેલાં વિવેચનોને એકઠાં કરવામાં આવે તો સન્મતિતર્ક ઉપર એક સ્વતંત્ર ટીકા તૈયાર થઈ જાય. સન્મતિની અભયદેવસૂરિકૃત ટીકાનો પણ ઘણો જ ઉપયોગ તેઓશ્રીએ કરેલો છે કે જેની મદદથી મેં ઘણે સ્થળે સન્મતિની ટીકામાં શુદ્ધિ પણ કરી છે, આમ છતાં નયચક્રનો તેમણે ક્યાંય ખાસ ઉપયોગ કર્યો હોય તેમ દેખાતું નથી. તેનું કારણ નયચક્રવૃત્તિની અત્યંત અશુદ્ધતા તથા મૂલનો અભાવ વગેરે લાગે છે. ગુજરાતી ભાષામાં રચેલા સીમંધરસ્વામિને વિનતિ રૂપ ૩૫૦ કડીના સ્તવનની ૧૬ મી ઢાળની બીજી કડીમાં જ તેમણે નયચક્રનો ઉપયોગ કરેલો માત્ર મારા જોવામાં આવ્યો છે.[1] એ કડી નીચે પ્રમાણે છે.

"ચાર છે ચેતનાની દશા અવિતથા, બહુ શયન શયન જાગરણ ચોથી તથા;
મિચ્છ અવિરત સુયત તેરમે તેહની, આદિ ગુણઠાણે નયચક્રમાંહે સુણી." ૨

આ કડી સાથે સંબંધ ધરાવતો ભાગ નયચક્રવૃત્તિમાં બીજા અરમાં પુરુષવાદમાં આવે છે. અહીં નીચે નયચક્રવૃત્તિનો તે ભાગ તથા તેના ઉપરથી મેં તૈયાર કરેલું મૂળ આપવામાં આવે છે—

નયચક્રમૂળ—

तस्य च चतस्रोऽवस्था जाग्रत्-सुप्त-सुषुप्त-तुर्यान्वर्थाख्याः । ताश्च बहुधा व्यवति-

---

૧ આ સિવાય બીજે કોઈ સ્થળે ઉપાધ્યાયજી મહારાજે નયચક્રનો ઉપયોગ કર્યો હોય તો તે જણાવવા વિદ્વાનોને વિનંતિ છે.

छन्ते–सुख–दुःख–मोह–शुद्धयः सत्त्व–रजस्–तमो–विमुक्त्याख्या ऊर्ध्वतिर्यगधोलोकाऽविभागाः संज्ञ्यसंज्ञ्यचेतनभावा वा । नियता एवैता विमुक्तिक्रमात् । सर्वज्ञता वा तुरीयं निरावरणमोहविघ्नं निद्राविपयोग आत्यन्तिकः ॥

નયચક્રવૃત્તિ—

तस्यैवेदानीं स्वरूपदर्शनार्थमुच्यते – तस्य च चतस्रोऽवस्थाः । तस्य अनन्तरप्रतिपादित चैतन्यतत्त्वस्येमाश्चतस्रोऽवस्था जाग्रत्सुप्तसुषुप्ततुरीयान्वर्थाख्याः, जाग्रदवस्था सुप्तावस्था सुषुप्तावस्था तुरीयावस्था, एताश्चान्वर्थाः । ताश्च बहुधा व्यवतिष्ठन्ते, चतुर्थीमवस्थां मुक्त्वा तिसृणामेकैकस्याः प्रतिप्रक्रियं संज्ञादिभेदाल्लोकव्यवहारभेदाच्चानेकभेदत्वात् । चतुर्थी पुनरेकस्वरूपैव विशुद्धत्वात् । अथवा सापि स्वरूपसामर्थ्यात् सर्वात्मनैवानेकधा विपरिवर्तते, तद्यथा–

जं जं जे जे भावे परिणमति पयोगवीससादव्वं ।

तं तह जाणाति जिणो अपज्जवे जाणणा णत्थि ॥ [आवश्यकनिर्युक्ति ७९४]

कास्ताः? उच्यन्ते, सुख–दुःख–मोह–शुद्धयः सत्त्व–रजस्–तमो–विमुक्त्याख्याः । कार्याणि चासां यथासङ्ख्यं तिसृणां तद्यथा–प्रसादलाघवप्रसवाभिष्वङ्गोद्धर्षप्रीतयो दुःखशोषतापभेदापस्तम्भोद्वेगापद्वेषा वरणसदनापध्वंसनबीभत्सदैन्यगौरवाणि । चतुर्थ्यास्तु शुद्धं चैतन्यं सकलस्वपरिवर्तप्रपञ्चसर्वभावावभासनम् । अथवा ऊर्ध्वतिर्यगधोलोकाविभागा वा यथासङ्ख्यमेव, ऊर्ध्वलोको जाग्रदवस्था, तिर्यग्लोकः सुप्तावस्था, सुषुप्तावस्था अधोलोकः, अविभागावस्था तुरीयावस्था । संज्ञ्यसंज्ञ्यचेतनभावा वा, संज्ञिनः समनस्का देवमनुष्यनारकपञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो जाग्रति, सुप्ता असंज्ञिनः पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतिद्वित्रिचतुरिन्द्रियामनस्कपञ्चेन्द्रियाः, काष्ठकुड्यादयः सुषुप्ताः, भवनमात्रं भावः सर्वत्राविभागा तुरीयावस्थेति । अत्राह–अविभागात्मनस्तस्यैवात्मनश्चतुरवस्थत्वात् कालभेदाभावाच्च चतस्रोऽपि प्रथमद्वितीयतृतीयतुरीयाख्याः स्युरिति, एतदयुक्तम्, यस्मान्नियता एवैता विमुक्तिक्रमात्, सर्वज्ञता वा तुरीयमिति, सुषुप्तावस्थायाः स्थिरीभूतचैतन्यायाः सुप्तावस्था विमुक्तमलत्वाद् द्वितीया मिथ्यादृष्ट्यादिका, तृतीया सम्यग्दर्शन[ज्ञान]चारित्रात्मिका मुक्तिप्रत्यासत्तेः, सर्वज्ञता चतुर्थी । तत् पुनस्तुरीयं निरावरणमोहविघ्नम्, निर्गता ज्ञानदर्शनावरणमोहविघ्ना अस्मिन्निति निरावरणमोहविघ्नम्, मोहस्यैव महास्वापत्वात् ।

—નયચક્ર (આત્માનંદ સભાનું સંસ્કરણ) પૃ. ૧૮૧

અમર યશસ્વી ઉપાધ્યાયજી

વસ્તુતઃ વિચાર કરીએ તો જૈનદર્શન એ કોઇ સંપ્રદાય નથી. પણ એક દિવ્ય તત્ત્વજ્ઞાન છે કે જે તત્ત્વજ્ઞાનમાં સર્વજીવોના એકાંતે કલ્યાણની અને શ્રેયની જ ભાવના ભરેલી છે.

છે. આજના વૈજ્ઞાનિક યુગમાં પણ હિંસાના દાવાનળથી સંતપ્ત થયેલું જગત દીન અને અશરણ બની જે "ત્રાહિ ત્રાહિ"ને પોકારી રહ્યું છે તેને જોઈને કયો સહૃદય મનુષ્ય સર્વજીવવ્યાપક અહિંસા, મૈત્રી અને કરુણાની ઉદ્‌ઘોષણા કરતા જૈનદર્શનના તત્ત્વજ્ઞાન ઉપર મુગ્ધ ન થઈ જાય ? આવા જૈનશાસનમાં જન્મેલા પૂ ઉપાધ્યાયજી મહારાજ માત્ર જૈન-શાસનના જ અલંકાર રૂપ છે એમ નહીં, પણ સમગ્ર ભારત અને વિશ્વના અલંકારરૂપ છે. આં મહાવિભૂતિનો જન્મ અને સ્વર્ગવાસ બંને ગુર્જરભૂમિમાં થયેલાં છે. તેથી ગુર્જરભૂમિ તો ગૌરવની વિશેષે અધિકારી છે. તેમની સ્વર્ગભૂમિ દર્ભાવતી (ડભોઈ) નગરીમાં તેઓશ્રીના અગ્નિસંસ્કારને સ્થાને તેઓશ્રીના ઉપકારની પુણ્યસ્મૃતિનિમિત્તે ગુરુમંદિર કરીને તેમાં તેઓશ્રીની મૂર્તિની પ્રતિષ્ઠાપના અંગે મહોત્સવ તથા તેમના ગુણાનુવાદ માટે 'શ્રી યશો-વિજયજી સારસ્વત સત્ર' યોજવાનો કાર્યક્રમ અતિપ્રશંસનીય, અને અનુમોદનીય છે. પ્રતિષ્ઠા સાથે સત્રની યોજના સુવર્ણમાં સુગંધની યોજના સમાન છે.

જે મહાપુરુષે મુમુક્ષુ જીવો ઉપર અસીમ ઉપકાર કરેલો છે તે
અમરયશસ્વી ઉપાધ્યાયજી ભગવાન શ્રીયશોવિજયજી
મહારાજનાં પવિત્ર ચરણકમલોમાં કોટિકોટિવાર

વં દ ન હો !

❀

राग-द्वेषौ हतौ येन, जगत्त्रय भयंकरौ ।
स त्राणं परमात्मा मे, स्वप्ने वा जागरेऽपि वा ॥१॥

અર્થ—જેણે ત્રણ જગતને ભય કરનારા રાગ-દ્વેષ હણી નાંખ્યા છે, તે પરમાત્મા સ્વપ્નમાં તેમ જ જાગૃતિમાં પણ મારું શરણ હો.

परमज्योतिः पञ्चविंशतिका] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

પૂ. ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજનાં–
વચનનાં રહસ્યો અને વિશેષતાઓ

[લેખક: પરમપૂજ્ય આચાર્ય શ્રીવિજયપ્રેમસૂરીશ્વરજી મહારાજના શિષ્ય પરમપૂજ્ય
મુનિશ્રીભાનુવિજયજી મહારાજ.]

अज्ञानतिमिरान्धानां, ज्ञानाञ्जनशलाकया। नेत्रमुन्मीलितं येन, तस्मै श्री गुरवे नमः॥

નંત ઉપકારી ત્રિલોકનાથ તીર્થંકર શ્રીમહાવીરદેવના વિરહકાળમાં વિદ્યમાન એમના સુંદર શાસનની બલિહારી છે કે જેમાં અનેકાનેક મહાપુરુષોએ એવા એવા ઉત્તમ શાસ્ત્રરત્નોની આપણને ભેટ કરી છે, કે જેના વડે આ કળિકાળમાં પણ આપણને જાણે શ્રી સર્વજ્ઞપ્રભુની સાક્ષાત્ વાણીથી ઉપકૃત થયા છીએ.

પંચપરમેષ્ઠીના ચતુર્થપદે બિરાજમાન પૂ. મહામહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ આવા મહાપુરૂષો પૈકીના એક હતા. તે પણ અસાધારણ સર્વતોમુખી વિદ્વતાને ધરનારા!' તેથી જ એમના સમકાલીન પૂ. ઉપાધ્યાય શ્રીમાનવિજયજી મહારાજે એમને શ્રુતકેવલી–ચૌદપૂર્વીનું સ્મરણ કરાવનારા કહ્યા છે. પૂ ઉ. શ્રીમાનવિજયજી મહારાજની પણ મહાન વિદ્વત્તા એમના 'ધર્મસંગ્રહ' ગ્રન્થમાંથી જાણી શકાય છે. એવા વિદ્વાનોને પણ એમ થતું કે આજના એક પૂર્વના પણ જ્ઞાનરહિત કાળમાં કોઈને વિચાર આવે કે ચૌદપૂર્વના જ્ઞાતા મહર્ષિ કેવા વિદ્વાન અને કેવા વ્યાખ્યાતા હોતા હશે, તો તેનો ખ્યાલ અસાધારણ સ્વ પર સમયવેત્તા–વ્યાખ્યાતા એવા આ પૂ. ઉ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજથી આવી શકે.

ગુણાનુવાદનું કાર્ય કેટલું કઠિન છે તે—

પૂ. મહામહોપાધ્યાય શ્રી યશોવિજયજી મહારાજની ગુણસ્તુતિ ગાવાનું કાર્ય ઘણું મુશ્કેલ છે, એમનામાં રહેલી વિસ્તૃત અને ગંભીર વિદ્વત્તા, સૂક્ષ્મબોધશક્તિ વગેરે જૈન દર્શન અને દર્શનાન્તરોના પ્રમાણ–પ્રમેયના વિશાલ બોધપૂર્વક ઠીકઠીક સમજાય નહિ ત્યાં સુધી એમના ગુણ ગાવા જતાં એમને અન્યાય થઈ જવાનો પુરો સંભવ છે. કેમકે પછી તો જે કંઇ અધૂરી ગુણસ્તુતિ ગવાય તેનાથી તો એમના માટે એમ જ લાગે કે આ પણ શું જેમ બીજા કેઈક આગળ પડતા માણસો થઈ ગયા, માત્ર તેવા જ એક આગળ પડતા મહાપુરુષ હશે? દા. ત. એમ કહેવા જઈએ કે પૂ. ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ 'ન્યાયવિશારદ' હતા, કેમકે એમણે વાદી સામે વિજય મેળવ્યો હતો; તેથી એમને

કાશીના પંડિતો તરફથી એ બિરુદ આપવામાં આવ્યું હતું. આ ઉપરથી એમ જાણ થાય કે જેમ બીજા પણ કોઈ વિદ્વાન કોઈ વાદ કરી જિત મેળવે તેમ પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજ પણ જીત્યા હતા. અને આજે પણ કેટલાક પંડિતોને દક્ષિણા વગેરે આપી ખુશ કર્યા હોય તો તે ય પદવી આપે; તેમ શું એમને તેવી પદવી મળી હતી ?

લાખો શ્લોકોના રચયિતા ઉપાધ્યાયજી અને તેમની મહાનતા—

વળી એમ પણ લાગે કે એઓશ્રી માત્ર વિદ્વાન હશે, અથવા સાધુ હશે તો સારા સાધુ કહેવાથી બીજા અનેક સાધુની જેમ એ પણ સાધુતાવાળા હશે. આવા ખ્યાલ આવવા સહજ છે, પરંતુ તેથી અન્યાય એ થયો, કે ક્યાં પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજની અસાધારણ વિદ્વત્તા, અપ્રતીમ સાધુતા, અનુપમ વિશ્વજનહૃદયવાત્સિના વગેરે અલૌકિક ગુણો ? અને ક્યાં સૂર્ય આગળ તારા જેવી ફીકી લાગે તેવી અન્યોની વિદ્વત્તા ? આ કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજની વિદ્વત્તા, ચારિત્ર, જ્ઞાનશક્તિ, જૈનશાસનપ્રીતિ વગેરે ગુણો અવર્ણનીય હતા. તે ગુણોને યથાર્થ શબ્દ દેહ નહિ આપી શકવાનું કારણ શબ્દોની અલ્પતા, અને અનનુરૂપતા, તેમ જ એમના ગ્રંથોના યથાસ્થિત અનુભવની ખામી છે. આ સાથે એ પણ એક હકીકત છે કે એમના 'વાદાંકિત' અને 'રહસ્યાંકિત' ગ્રંથો, તેમજ 'સિદ્ધાંતમતપરિષ્કાર', વગેરે ખાસ ગ્રંથરત્નો આજે ઉપલબ્ધ નથી. દોઢલાખ (?) ન્યાય લખવાનો ઉલ્લેખ મળે છે તે મુજબ પણ એટલા ગ્રંથ ઉપલબ્ધ નથી એક યોગવિંશિકાની જેમ બીજું આગમવીથી ઉપરનું એમનું વિવેચન મળતું નથી. આ બધી વસ્તુઓ એમની વિદ્વત્તાને આપણા માટે અકલ-અમેય રાખી જાય છે. એક સિદ્ધાન્ત-મતપરિષ્કાર ગ્રંથનું નામ જ એવું છે કે જેમાં લાગે છે કે જૈન આગમ શાસ્ત્રોમાં આવતા વિવિધમતાન્તરો મળે છે, તેના પરસ્પરના અવિસંવાદી સમન્વય ને પણ જૈન-શાસનના ખાસ વિશિષ્ટ નયવાદના ગજ ઉપર કેવા સુંદર કરેલા હશે. જો આજે તે મળત તો અહો ! આપણે એક એવું અદ્ભુત આલંબન ધરાવત; જે સમ્યગ્દર્શનની અપૂર્વ નિર્મળતા, તત્ત્વોનું સૂક્ષ્મ અન્વેષણ. સિદ્ધાન્તના અપૂર્વ અર્થ-રહસ્યોનો પ્રકાશ કરત !

શ્રીમદ્‌નો મહાન ઉપકાર—

આમ છતાં આજે ગુણગાન ગાવા માટે તૈયાર થયા છીએ તે પ્રસંગે એ મહાપુરુષનું અધ્યાત્મી સાધુજીવન, વિકસિત શ્રુતજ્ઞાનાદિ ગુણો અને અપૂર્વ ગ્રંથસમૂહનું નિર્માણ કરવાનો મહાન ઉપકાર ઇત્યાદિ આપણા હૃદયને એવો આકર્ષી રહે છે કે, અંતઃકરણ મહાન ભક્તિભાવનો ઝરો વહેતો કરી દે છે. એ ભક્તિભાવનો આંતરઝરો શ્રીમદ્‌ના ગુણ ગાવા માટે આવા સમારંભરૂપે કે સ્તુતિરૂપે બહાર વહી આવ્યા વિના રહી શકતો નથી.

'ઉપાધ્યાયજી' એવા મધુર અને ગૌરવભર્યા નામથી એમની જ પ્રસિદ્ધિ—

ન્યાયવિશારદ ન્યાયાચાર્ય પૂ. મહામહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ શ્રીજૈન-સંઘમાં ઉપાધ્યાયજી મહારાજના નામથી પ્રસિદ્ધ છે. યદ્યપિ જૈનશાસનમાં ઉપાધ્યાયજી

પદથી અલંકૃત અનેકાનેક મહાપુરુષો થઈ ગયા, પરંતુ કાં તો તેઓ પાછળથી પરમેષ્ઠીના ત્રીજા સૂરિપદથી અલંકૃત થયા તેથી, અથવા કેટલાક વિશિષ્ટ શાસ્ત્રરચયિતા ન બન્યા તેથી ઉપાધ્યાયજીના નામથી પ્રસિદ્ધિ નથી પામ્યા. દા. ત. જેમણે સુંદર ગ્રન્થો નિર્માણ કર્યા છે તે ઉપાધ્યાયજી શ્રી. મેઘવિજયજી મહારાજ કે ઉપાધ્યાયજી શ્રી. વિનયવિજયજી મ. કે ઉપાધ્યાય શ્રી. માનવિજયજી મહારાજ સ્વનામથી પ્રસિદ્ધ છે પરંતુ આચાર્યો કે મુનિઓ કરતાં ઉપાધ્યાયો અતિ નાની સંખ્યામાં પ્રસિદ્ધ છે. તદન્તર્ગત ચૌદ પૂર્વોના પણ અસાધારણ વિદ્વાન શ્રી. ઉપાધ્યાયજી મહારાજ પણ એવી અસાધારણ વ્યાપક વિદ્વત્તા ધરાવતા કે લગભગ કોઈ પણ વિષયમાં એમને પ્રશ્ન પૂછો તો એમ થઈ આવે કે ઉપાધ્યાયજી મહારાજ શું નથી જાણતા એ શોધવાનું કામ અશકય બની જાય.

બાલ્યકાળ ને ગ્રન્થરચના—

અલૌકિક વિદ્વત્તાના મૂળ બીજ તરીકે પૂર્વભવમાં એમણે અદ્દભુત ધર્મઆરાધના કરીને સુસંસ્કારો અને પુણ્યબળ કમાઈ આવ્યાનું અનુમાન થાય છે. આ જીવનમાં ગુરુસેવા, વિનય, સંયમ વગેરે અતિઆવશ્યક ગુણો પૈકી એમનો એક મહાન ગુણ એકાગ્રતાનો હતો, વિક્ષેપના અભાવનો હતો. તે આપણને એમની બાલ્યવયમાં જોવા મળે છે. માત્ર માતાજીની સાથે ઉપાશ્રયે જતા ત્યાં સંભળાવાતાં નવ સ્મરણ (સ્તોત્રો)નું એમણે એવું અવિક્ષેપ અવધારણ કરી લીધેલું કે, એકવાર વર્ષાના કારણે એમનાં માતાજી નવ સ્મરણ સાંભળવા ન જઈ શકવાથી ભોજન-પાણી લેતાં નહોતાં તેથી તે જ વખતે આ અલ્પવયસ્ક બાળકે પોતે નવે સ્મરણ મોંએ સંભળાવી દીધાં હતાં. એવી ખ્યાતિથી પ્રસિદ્ધ શ્રીમાન્ ઉપાધ્યાયજી મહારાજ સ્વશાસ્ત્રોના સમર્થ શાસ્ત્રકાર હતા. પૂર્વાચાર્યોના શાસ્ત્રો પર ટીકાગ્રંથો લખવા ઉપરાંત અધ્યાત્મ, યોગ, નયવાદ, પ્રમાણરૂપ પંચ જ્ઞાન, કુમતોનું ખંડન વગેરે પર ખૂબ જ લખ્યું છે. એ એકેક ગ્રંથની વિશેષતા ગાવા બેસીએ તો લાગે કે અહીં કેવા આ અપૂર્વ યુગપુરુષ, અપ્રતિમ વિદ્વાન અને અદ્દભુત શાસનપ્રભાવક આપણા નિકટના કાળમાં થઈ ગયા એ પણ આપણું કેવું મહાસૌભાગ્ય! સંસ્કૃત-પ્રાકૃત તો ખરું જ પણ ગુજરાતી ભાષામાંય અનેક ૧૨૫-૧૫૦-૩૫૦ ગાથાનાં સ્તવનો, સજ્ઝાયો, દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ, ષટ્સ્થાન ચોપાઈ, ટબાં, જૈનાગમના પદાર્થો કાવ્યરૂપે સુંદર રીતે ઉતાર્યા છે કે જેમાંનું રહસ્ય ગુરુગમથી કે સ્વાનુભવથી જાણતાં એમ ખ્યાલ આવે કે ગુજરાતી સર્જન પણ શું આટલી ઉચ્ચ કોટિનું? આજના પ્રસંગે એમાંના એકાદ બે નમૂના જોઈ લઈએ.

તેઓશ્રીનાં સ્તવનોની ખૂબીઓ—

એ યુગભાસ્કર મહર્ષિએ સ્વરચિત વર્તમાન ચોવીસ તીર્થંકરદેવોની સ્તવનાવલીમાં પ્રથમ તીર્થંકર શ્રી. ઋષભદેવ પ્રભુજીના સ્તવનના પ્રારંભમાં લખ્યું છે કે—

"જગજીવન જગ વાલહો, મરૂદેવાનો નંદ લાલ રે,
મુખ દીઠે સુખ ઉપજે, દર્શન અતિહિ આનંદ લાલ રે...

આનો અર્થ આમ તો સામાન્ય લાગશે કે, હે જગતના જીવન, જગતને વહાલા, મરુદેવાના નંદન, તમારું મુખ જોતાં સુખ ઉપજે છે, અને દર્શન કરતાં અતિઆનંદ થાય છે; પરંતુ અહીં પ્રશ્ન એ થાય છે કે પ્રભુનું મુખ જોતાં અને દર્શન કરતાં—એ સાથોસાથે એક જ ક્રિયાની બે ઉક્તિ અર્થાત્ પુનરુક્તિ તે માત્ર એક જ ગાથામાં, ગૌરવ-લાઘવના મહાન વિચારક ન્યાયવિશારદ કવિએ કેમ કરી? બસ, એ જિજ્ઞાસા પર વિચારતાં જણાઈ આવે છે કે આનો કોઈ ગૂઢ અર્થ છે. તે એ કે, અહીં 'દર્શન અતિહિ આનંદ'માં 'દર્શન' શબ્દથી સામાન્યપણે જોવાની ક્રિયા નથી લેવાની, પણ સમ્યગ્દર્શન નામનો પ્રથમ મોક્ષોપાય સમજવાનો છે. ભાવ એ છે કે, "હે પ્રભુ! તારા ઉપદેશેલા સમ્યગ્દર્શનની જે આત્મા હૃદયસ્પર્શના કરે છે, તેને એ દર્શનમાં અતિશય આનંદ થાય છે." તેમ "મુખ દીઠે"માં 'દીઠે' શબ્દથી માત્ર 'દેખવું' એમ નહિ, કિન્તુ સ્વરૂપદર્શન અર્થ લેવાનો છે. ત્યાં 'મુખ' એ પ્રધાન અંગ છે, એના ગ્રહણથી સમસ્ત અંગોનું ગ્રહણ થઈ શકે છે, તેથી એમ કહી શકીએ કે પરમાત્માના મુખનું અર્થાત્ પરમાત્માનું અથવા પરમાત્માના મુખ્ય સ્વરૂપનું દર્શન કરતાં સુખ ઉપજે છે. આ દર્શન પણ પહેલાં તો શ્રુતજ્ઞાનરૂપ, પછી ચિન્તા અર્થાત્ મનનરૂપ, પછી ભાવના—સંવેદનરૂપ સમજવાનું છે. બીજા શબ્દોમાં કહીએ તો પરમાત્મસ્વરૂપનો બોધ, મીમાંસા, પ્રતિપત્તિ અને આત્મીકૃત પ્રવૃત્તિરૂપ મુખદર્શન લેવાનું છે. હવે સમ્યગ્દર્શન અને પરમાત્મસ્વરૂપ-જ્ઞાનનો મહિમા બતાવ્યો તેથી અનુમાન થાય છે કે, ચારિત્રનો મહિમા એમાં ગાયો જ હશે. તે વસ્તુ 'જગજીવન' એ બે પદમાંથી મળી રહે છે. જગતને જીવનરૂપ કોણ બની શકે? જે આત્મા મહાઅહિંસક હોય અને ચારિત્રધારી હોય તે. આરંભ-સમારંભની હિંસામાં પડેલો તો જગતના ત્રસસ્થાવર જીવોનાં જીવન લૂંટી રહ્યો છે. ત્યારે પ્રભુ પોતે જગતના સર્વ જીવો પ્રત્યે સ્વયં સર્વથા અહિંસક બની, જગતનેય અજર-અમર થવાનો અહિંસામાર્ગ બતાવી રહ્યા છે. તે માટે સાચું ભાવજીવન આપી રહ્યા છે. અર્થાત્ જગતને જિવાડી રહ્યા છે, માટે 'જગજીવન' પદથી કહેવાય છે, પ્રભુ સ્વયં ચારિત્રજીવનથી જગતના જીવનભૂત છે. તેમ 'જગવાલહો' પદ સૂચવે છે કે જગતને વહાલા તે જ બની શકે જે સંયમી હોય, ત્યાગી હોય, અને નિઃસ્વાર્થપણે પારમાર્થિક ઉપકાર કરનારા હોય. એક કુટુંબનો વડેરો વધુ લોભી, સ્વાર્થી, અસંયમી અને કુટુંબ પ્રત્યે બેપરવાહી રાખતો હોય તો કુટુંબને તે કેટલો વહાલો નહિ લાગે. જે સ્વયં માનપાનનો લાલચુ છે અને જેને વાણી-વર્તાવ પર સંયમ નથી તે બીજાઓને ગમશે નહિ. પ્રભુ તો મહાનિઃસ્પૃહી, મહાસંયમી, તપસ્વી અને વિશ્વોપકારી છે, માટે જગતને વહાલા છે. આમ 'જગજીવન' અને 'જગવાલહો' એ બે પદથી એમણે ચારિત્ર-સંયમ અને તપનો મહિમા પણ ગાયો છે.

પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજની રહસ્યભરી લેખિનીનો એક બીજો સુંદર દાખલો જુઓ. એમના રચેલા શ્રી. નેમનાથપ્રભુના સ્તવનમાં રાજિમતીની પ્રભુ સામે ફરિયાદ વર્ણવી છે, એમાં રાજિમતીએ ત્રીજી કડીમાં એમ કહ્યું છે કે—

" ઉતારી હું ચિત્તથી રે હાં, મુક્તિ ધુતારી હેતુ, મેરે વાલમા !
સિદ્ધ અનંતે ભોગવી રે હાં, તે શું કવણ સંકેત, મેરે વાલમા...તોરણથી૦ "

આહીં કહેવું એ છે કે, " હે સ્વામી ! તમે નવ ભવના સ્નેહ વીસારી એક કલંકરૂપ કુરંગના નિમિત્તને પામી મને છોડી જાઓ છો, તેનું કારણ હું સમજું છું કે, તમે ધુતારી એવી મુક્તિ–સ્ત્રીના પ્રેમથી મને ચિત્તમાંથી અળગી કરી છે, પરંતુ પ્રભુ ! તમને શું ખબર નથી કે એ તો ગણિકા છે ? એના ભોક્તા અનંત સિદ્ધો છે. આવી ગણિકા જેવી તમને ફસાવી રહી છે ! એની સાથે તમે શા સંકેત કર્યા છે ? ચોથી કડીમાં આની પછી રાજુલ જે એમ કહે છે કે—

" પ્રીત કરંતાં સોહલી રે હાં, નિરવહતાં જંજાળ, મેરે વાલમા "

તેનો અર્થ એમ થાય કે, " અમારા નવ નવ ભવના સ્નેહ ગણ્યા નહિ કે ટકાવ્યા નહિ, એ કેટલું અજુગતું છે ? જગતમાં પ્રીતિ માંડવી સહેલી છે, પણ ટકાવવી કઠિન છે. તમે મારા પર પ્રીત કરતા આવ્યા તો ખરા, પણ પાછી પેલી મુક્તિ મળી તેથી તેના પર આકર્ષાઈ મારા પરની પ્રીત ટકાવી શકયા નહીં. એટલે વાત ખરી છે કે, પ્રીત કરવી સહેલી છે, પણ ટકાવવી મુશ્કેલ છે. ઉપર ઉપરથી આ અર્થ ભાસે છે, પણ તેનો રહસ્યમય અર્થ જુદો છે.

તે એ રીતે કે, ' રાજિમતીને સખીઓએ જ્યારે બીજો વર શોધવાનું કહ્યું ત્યારે તેમને ધુત્કારી કાઢી; એ વસ્તુ રાજિમતીનો નેમનાથસ્વામી ઉપર વફાદારીભર્યો પ્રેમ સૂચવે છે. આવો પ્રેમ ધરનારી આર્ય દેશની સન્નારીએ એક પતિ નક્કી કર્યા પછી બીજા પતિની વાત સાંખી શકતી નથી. ગર્ભિણી અવસ્થામાં સીતાજીને રામે જંગલમાં મૂકાવેલાં– ત્યજાવેલાં, ત્યાં સીતાએ પણ રામને કહેવરાવ્યું હતું કે, " મને છોડી તો ભલે છોડી, તમને મારા કરતાંય બીજી સારી પત્ની મળશે અને તેથી મારા વિના તમારો મોક્ષ નહિ અટકે પરંતુ લોકવચનથી જેમ મને છોડી, તેમ જૈનધર્મને ન છોડતા. કેમ કે એને છોડયા પછી બીજો એથી વધુ સારો તો શું પણ એવોય સારો ધર્મ નહિ મળે, તેથી જૈનધર્મ વિના મોક્ષ જરૂર અટકી જશે. " શ્રી. મલધારી હેમચન્દ્રસૂરિજી મહારાજ વિરચિત ' પુષ્પમાલા ' નામના ગ્રંથમાં આ અધિકાર છે. તેમ અહીં રાજિમતી જ્યારે જુએ છે કે, શ્રી. નેમનાથ- સ્વામી મારા પરના નવ નવ ભવના સ્નેહને પણ છોડીને મુક્તિ પર નિશ્ચિતપણે રાગવાળા બન્યા છે, તો મારે એમને ચેતાવી દેવા કે, મુક્તિનો રાગ અર્થાત્ મોક્ષરુચિ એ સામાન્ય વસ્તુ નથી. પ્રશ્ન થશે કે, તે શું નેમનાથ નહિ સમજતા હોય ? પરંતુ વફાદાર અને પ્રેમાળ સ્નેહીઓનું દિલ જ એવું હોય છે કે સામાને ભલે જાણમાં હોય છતાં વધુ સાવધાન કરવા અવસરે એનું ધ્યાન ખેંચે એ હિસાબે રાજુલ કહે છે કે, " હે સ્વામી ! તમે જુઓ કે અનંતા સિદ્ધ એવા પતિવાળી મુક્તિ પ્રત્યે પ્રેમ કર્યો તો ભલે કર્યો, પણ ધ્યાન રાખજો કે મુક્તિ પ્રત્યે પ્રીતિ કરવી સહેલી છે, પણ ઠેઠ સુધી ટકાવવી પણ મહામુશ્કેલ છે. હજી અમારા પરની પ્રીતિ ટકાવવી સહેલી; અમારા જેવી કુળબાલિકા સાથે પ્રીતિ માંડયા પછી કદાચ તમારી

ભૂલથાપ થાય, તમે આકળા-ઉતાવળા થાઓ, વિશ્વાસભંગ કરો તોય અમે તમને તરછોડીએ નહિ, તમે રીસાઓ છતાં અમે રીસાઈએ નહિ, પણ આ મુક્તિ તો એવી છે કે, જો તમે જરાક ભવના અભિનંદમાં-આનંદમાં તણાયા તો તરત તમને તરછોડી દે. જરાક જો તમે રીસાયા તો એ મુક્તિ પણ રીસાઈ જાય. મુક્તિની પ્રીતિ અખંડ ટકાવવા ભવ-નિર્વેદ, વિષય-વિરાગ અને ધર્મ-સંવેગ જાગતા અને ધીખતા રાખવા પડે છે, માટે મહર્ષિઓ પણ પ્રાર્થનાસૂત્રમાં પહેલું 'भवनिव्वेओ' માગે છે. રાજિમતી કહે છે કે, જેમ ઝેરી સર્પને ખેલાવવો કે અગ્નિની ઝાળ સાથે રમત કરવી મુશ્કેલ છે, તેમ મુક્તિનો રાગ ટકાવવો મુશ્કેલ છે. એ માટે તો જીવનભર સમસ્ત સંસારને અળખામણો રાખવો પડે છે. આટલું કહ્યા પછી પણ રાજિમતીએ જ્યારે જોયું કે નેમનાથ પાછા નથી ફરતા, ત્યારે એમના મુક્તિ પ્રત્યેના દૃઢ પ્રેમને અને મુક્તિ તરફના પ્રયાણને જાણી પોતાનો નિર્ધાર જાહેર કરે છે કે, ભલે વિવાહના અવસરે હાથ પર હાથ ન આપ્યો પણ હું દીક્ષા લેતાં માથા શિર પર, હે જગનાથ! તમારો હાથ મુકાવીશ.

અપૂર્વ રહસ્યોથી ભરેલા ગ્રન્થો—

પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજના શું ગુજરાતી, શું સંસ્કૃત કે શું પ્રાકૃત દરેક પ્રકારના ગ્રંથો રહસ્ય ભરેલા છે. એ રહસ્યો સમજ્યા પછી અપૂર્વ સ્ફુરણા જાગે છે અને પદાર્થવિવેચનો પ્રભાવના કરે છે. દા. ત. એમના રચેલા 'અનેકાન્તવ્યવસ્થા' નામના ગ્રંથમાં એક સ્થળે પ્રશ્ન ઊભો કર્યો છે કે, 'તત્ત્વાર્થ, મહાશાસ્ત્ર'માં તત્ત્વો સાત કહ્યાં પણ આઠ કેમ ન કહ્યાં? કારણ કે, અસલ તો જીવ અને અજીવ એ જ તત્ત્વ છે પરંતુ મોક્ષો-પયોગી હેયોપાદેય તત્ત્વ પૃથક્ બતાવવાં જોઈએ. તેથી હેય તરીકે આશ્રવ અને બંધ, તથા ઉપાદેય તરીકે સંવર અને નિર્જરા કહ્યાં. વળી, એ હેયનું હાન અને ઉપાદેયનું ઉપાદાન શા માટે કહ્યું એ જિજ્ઞાસા શમાવવા પ્રયોજન તત્ત્વ તરીકે મોક્ષ બતાવ્યું. આમ તત્ત્વ સાત કહ્યાં; પરંતુ એ પણ જિજ્ઞાસા રહે છે કે જેમ ઉપાદેયનું ફળ મોક્ષ છે, તેમ હેયનું ફળ સંસાર છે; તેથી મોક્ષની જેમ સંસારને એક પૃથક્ તત્ત્વ કહેવું જોઈએ. વળી, મોક્ષના પ્રતિયોગી તરીકે પણ સંસાર તત્ત્વ લેવું જોઈએ, તે કેમ ન લીધું? પૂ૦ ન્યાયવિશારદ મહર્ષિએ આ પ્રશ્નનું સુંદર સમાધાન એ આપ્યું છે, સંસારનું સ્વરૂપ તો બંધ તત્ત્વમાં વર્ણવાઈ જાય છે, પછી તેને જુદું પાડવું નિરર્થક છે. ત્યારે મોક્ષ એ નિર્જરા તત્ત્વમાં વર્ણવાઈ જતો નથી, કેમ કે એમાં તો આત્માની સર્વ વિશુદ્ધ અવસ્થા અને અનંત ગુણોનું પ્રગટીકરણ છે. તેથી મોક્ષ તત્ત્વ સ્વતંત્રપણે વર્ણવવું આવશ્યક છે.

બીજો એક દાખલો-'શાસ્ત્રવાર્તાસમુચ્ચય' પર એમણે રચેલ 'સ્યાદ્વાદ-કલ્પલતા' ટીકામાંથી જુઓ. આપણે ત્યાં પુણ્યાનુબંધી પુણ્ય કે પાપ, અને પાપાનુબંધી પુણ્ય કે પાપની એ સમજણ ચાલે છે કે જે પુણ્ય કે પાપના ભોગવવામાં ભવિષ્ય માટે નવા પુણ્યની સ્થિતિ ઊભી થાય તે પુણ્યાનુબંધી, અને પાપની સ્થિતિ ઊભી થાય તે પાપાનુ-

બંધી; પરંતુ ઉક્ત ગ્રંથમાં પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજે એ સૂચવ્યું છે કે, જે પુણ્ય–પાપ
ઉદયમાં લાવવા માટે પણ હૃદયને મહામલિન કરનારાં પાપકાર્યો કરવાં પડતાં હોય તે
પણ પાપનુબંધી કર્મ બને છે. તેથી ઊલટું જો હૃદયની પવિત્રતા અને કોમળતા જાળવી
રખાતી હોય તો ઉદયમાં આવતાં પુણ્ય–પાપના યોગે પાપાનુબંધી કર્મથી બચી જવાય છે.

'શાસ્ત્રવાર્તા'ની ટીકામાં તથા 'નયોપદેશ,' 'જ્ઞાનબિંદુ' વગેરે ગ્રન્થોમાં નવ્ય
ન્યાય શૈલીના તર્કથી જૈન સિદ્ધાંત અને તત્ત્વોની વિશેષતા દર્શાવનારાં અદ્‌ભુત રહસ્યો
અને પદાર્થ–નિરૂપણ વિપુલ પ્રમાણમાં આ દર્શન–દિવાકર મહાત્માએ આપેલું છે. જે સૂક્ષ્મ,
બુદ્ધિગમ્ય અને નવ્યન્યાય સહિત દર્શનોની પરિભાષાના વિશાળ બોધથી ગ્રાહ્ય છે.
'જ્ઞાનબિંદુ' ગ્રંથમાં શ્રી. સિદ્ધસેન દિવાકર, શ્રી. જિનભદ્રગણિ ક્ષમાશ્રમણ અને શ્રી. મલ્લ-
વાદીના કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શન–ઉપયોગ અંગેના ત્રણ મતોનો સુંદર સમન્વય સાધ્યો
છે. એ જ ગ્રંથમાં મધુસૂદન સરસ્વતીકૃત 'સિદ્ધાંતબિંદુ' ગ્રંથમાંના પરિષ્કૃત અવિદ્યા–
માયાના સિદ્ધાંતનું સુંદર નિરાકરણ શ્રી. ઉપાધ્યાયજી મહારાજે કર્યું છે. ત્યારે 'કર્મપ્રકૃતિ'ની
વિસ્તૃત ટીકામાં પ્રારંભે નવ્યન્યાયની શૈલીમાં આઠે કર્મની જુદી જુદી પ્રકૃતિઓની
રહસ્યમય વ્યાખ્યા કરી છે. ગ્રંથની વચમાં વચમાં પણ એમની અજોડ બુદ્ધિના ચમકારા
અપૂર્વ એવા શંકા–સમાધાનોમાં ઊપસી આવે છે. તેમજ ગ્રંથના અંતે સ્વોપજ્ઞ ઉદય
પ્રકરણમાં કર્મ સંબંધી અન્ય ગ્રંથોના પદાર્થોનું સંકલનાબદ્ધ ભવ્ય સંકલન કર્યું છે પણ
આ બધાં રહસ્યો અને ભવ્ય પદાર્થસ્ફોટ અહીં શે રજૂ કરી શકાય ?

શ્રુતકેવલીની ઉપમાને પામનાર મહર્ષિ—

પૂ૦ ઉપાધ્યાયજી મહારાજ સ્વ–પર શાસ્ત્રોના એટલા બધા વિષયોમાં પારંગત હતા
કે એમને આપણે બહુશ્રુત તરીકે એના વિકસિત અર્થમાં આપણા હૃદય સામે જોઈ શકીએ
છીએ. એ ઉપરાંત એમની સર્વતોમુખી વિદ્વત્તા જ્ઞાનભંડારનાં પુસ્તકોમાં નહિ, પણ એવી
તો એમને અંતઃસ્થ હતી કે, પૂર્વે કહ્યું તેમ એમના સમકાલીન સમર્થ વિદ્વાન ઉપા૦ શ્રી.
માનવિજયજી મહારાજે એમના માટે 'સ્મારિત શ્રુતકેવલી'નું વિશેષણ લગાડ્યું. શ્રુતકેવલી
એટલે દ્વાદશાંગીમય જૈન પ્રવચનના જ્ઞાતા.

ત્યારે એ એમના 'દ્વાત્રિંશત્ દ્વાત્રિંશિકા' નામના ગ્રન્થમાં એમણે પૂ૦ આચાર્યવર્ય
શ્રી. હરિભદ્રસૂરીશ્વરજીકૃત 'યોગદષ્ટિ,' 'યોગબિન્દુ,' 'ષોડશક' વગેરમાંનાં અસ્ફુટ
રહસ્યો ખોલ્યાં છે. દા. ત. યોગની ચોથી દૃષ્ટિમાં આવવા માટે પ્રાણાયામ નામના યોગના
અંગની સિદ્ધિ કરવાની વાત 'યોગદૃષ્ટિ સમુચ્ચય' શાસ્ત્રમાં કરી છે. પૂ. ઉપાધ્યાયજી
મહારાજે એનું રહસ્ય વર્ણવતાં કહ્યું કે, આ પ્રાણાયામ તે ભાવ–પ્રાણાયામ સમજવો અને
તેથી જ તેમાં શ્વાસોચ્છ્‌વાસ રૂપી દ્રવ્યપ્રાણનું રેચક, પૂરક, કુંભક નહિ પણ બાહ્ય ભાવરૂપી
પ્રાણનું રેચન અને અંતર ભાવરૂપી ભાવપ્રાણનું પૂરક લેવાનું છે. આવાં આવાં તો કેટલાંયે
રહસ્યો ખોલીને પૂ૦ ઉપાધ્યાયજી મહારાજે જૈન શાસનની વિશિષ્ટતા તો શું પણ સર્વો–

પરિત્રા આંકિત કરી આપી છે. 'દ્વાત્રિંશત્-દ્વાત્રિંશિકા' નામનો ગ્રન્થ એ 'યોગદૃષ્ટિ' વગેરે અનેક ગ્રન્થોના દોહનનો સંગ્રહગ્રન્થ છે.

તેઓશ્રીની પાતંજલ યોગ ઉપરની ટીકા—

પૂ૦ ઉપાધ્યાયજી મહારાજે 'પાતંજલ યોગદર્શન' પર જે સમીક્ષા કરી છે તે પણ જૈન દર્શનની વિશિષ્ટતા પુરવાર કરે છે. યોગદર્શનકારે યોગની વ્યાખ્યા 'ચિત્તવૃત્તિનિરોધઃ' એવી કરી છે. પૂ૦ ઉપાધ્યાયજી મહારાજે એમાં સુધારો કરી કહ્યું કે, 'યોગઃ 'ક્લિષ્ટ'–'ચિત્તવૃત્તિનિરોધઃ ।' વાત પણ સાચી છે. સામાન્યથી કહેતાં તો ચિત્તવૃત્તિ માત્રનો નિરોધ હોવાનું થાય અને એ તો અંતિમ યોગની કક્ષામાં ઘટે; પણ પૂર્વની કક્ષાના યોગોમાં એ નહિ ઘટે; કેમ કે ત્યાં શુભ ચિત્તવૃત્તિ ચાલુ હોય છે. એ વસ્તુ યોગદર્શનકારને પણ માન્ય છે. નિયમ વગેરે યોગનાં અંગો તેટલી કક્ષાના યોગને સાધી આપે છે, ત્યાં કાંઈ ચિત્તવૃત્તિ તદ્દન સ્થગિત કે નિરુદ્ધ નથી; પરન્તુ એટલું છે કે, જે ચિત્તવૃત્તિ ચાલુ છે તે શુભ છે, પણ સંક્લિષ્ટ નથી. જેથી 'યોગબિન્દુ' ગ્રન્થમાં પણ જે અધ્યાત્મ, ભાવના, ધ્યાન, સમતા અને ચિત્તવૃત્તિસંક્ષય-એમ પાંચ યોગની કક્ષા રાખી છે, તેમાં અંત્ય સિવાયના ચારેમાં શુભ ચિત્તવૃત્તિ તો ચાલુ જ હોય છે.

આમ ઉપાધ્યાયજી મહારાજે 'દ્રવ્યગુણપર્યાયના રાસ'માં દિગંબર માન્યતાની સમીક્ષા કરતાં નવ નય અને ત્રણ ઉપનય તથા દરેક ઉપનયના અવાંતર પ્રકારો બતાવી વધારાના બે નય-દ્રવ્યનય અને પર્યાયનય તથા ત્રણેય ઉપનયની કલ્પના કેવી ગૌરવગ્રસ્ત અને દોષયુક્ત છે તેનું સુંદર આલોચન કર્યું છે. એમાં એમણે કહ્યું કે, સાત નયમાં પ્રથમ ત્રણ નયો શુદ્ધ દ્રવ્યનય છે અને પછીના ચાર શુદ્ધ પર્યાયનય છે. તો હવે આઠમા અને નવમા એ બે જુદા દ્રવ્ય-પર્યાયનય કયા હોવા? એવું જ, નયો કરતાં જુદા સ્વતંત્ર ઉપ-નયોની કલ્પના પણ વાગાડંબર છે. કેમ કે સાત નયના એ અવાંતર પ્રકારો જ છે અથવા કહો કે સાત નય પૈકીના નયોના વિવિધ દૃષ્ટાન્તો છે

ગૂઢ રહસ્યોનું દર્શન—

પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજના ગ્રન્થોની વિશિષ્ટતાનું વર્ણન કરતાં કરતાં તો ગ્રન્થોના ગ્રન્થો ભરાય એમ છે. 'ખંડનખંડખાદ્ય' યાને 'મહાવીરસ્તવ' નામના ગ્રન્થમાં બૌદ્ધની મૌલિક માન્યતાઓને તર્કમાં અનુત્તીર્ણ (નપાસ) ઠેરવીને અદ્ભુત રીતિએ તર્ક પ્રમાણના બળ ઉપર એનું સચોટ રીતે ખંડન કર્યું છે. ત્યારે એના પરની સ્વોપજ્ઞ ટીકામાં એમણે ઉદયનકૃત 'આત્મતત્ત્વવિવેક' નામના બૌદ્ધમતના ખંડન ગ્રન્થ ઉપર દીધિતિકારે રચેલી ટીકાની પંક્તિઓ ઉપર અદ્ભુત વિવેચન કર્યું છે. 'ખંડનખંડખાદ્ય' મૂળ તો માત્ર સોએક શ્લોકનો ગ્રંથ છે. ટીકા પણ તેવી કાંઈ અતિવિસ્તૃત નથી પરંતુ પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજ અન્યત્ર ઉલ્લેખ કરે છે કે, બૌદ્ધ ન્યાયના ખંડન માટે પોતે દોઢ લાખ શ્લોક-(?) પ્રમાણ ગ્રન્થ લખ્યો છે, ત્યારે અચંબો થાય છે કે, કેવી અસાધારણ વિદ્વત્તા! કેવું ધન્ય

ઉપકારી સાદું જીવન ! કેવી શાસનસેવા ! એમની કૃતિઓનો યથાસ્થિત પાર પામી શકવા કોણ સમર્થ છે? એ તો કેટલેક સ્થળે એમણે પોતે જ ટીકા–ટબારૂપે પોતાના ગ્રન્થોનાં રહસ્યો ખોલી બતાવ્યાં છે તે પરથી જ લાગે છે કે, બીજા તો અણખોલ્યાં કેટલાંય રહસ્યો હશે, જે રહસ્યો એમનાં કરેલાં અથવા એમના જેવા અદ્વિતીય વિદ્વાને કરેલાં વિવેચનના અભાવે અણખોલ્યાં પડ્યાં છે. 'જ્ઞાનસાર' અષ્ટકના પહેલાં અષ્ટકમાં કહ્યું કે, '**सच्चिदानन्दपूर्णेन पूर्णं जगद् अवेक्ष्यते**' એથી એમ સૂચવ્યું કે શુદ્ધ સત્–ચિત્–આનંદ-પૂર્ણ જે સિદ્ધાત્મા, તે જગતને પૂર્ણ રીતે દેખે છે. આના પર સહેજે પ્રશ્ન થાય કે, 'જગત તો અજ્ઞાન છે, દુઃખી છે, એવી સ્થિતિમાં એ ચિત્ પૂર્ણ કે આનંદપૂર્ણ ક્યાં રહ્યું ? અને સિદ્ધ ભગવાન તો સર્વજ્ઞ છે, તો શું એમણે જગતનું દર્શન અયથાર્થ કર્યું ?' આ પ્રશ્નનું સમાધાન પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજે સ્વોપજ્ઞ ટબામાં એક જ લીટીમાં આપ્યું છે કે, 'નિશ્ચય નયની દૃષ્ટિએ આ ભ્રાન્તિ નથી.' આ એક જ લીટીમાં કેવું સુંદર રહસ્ય ખોલી દીધું છે! જગતના જીવો પણ નિશ્ચય નયથી સ્વરૂપે પૂર્ણ ચિત્ અને પૂર્ણ આનંદવાળા છે. આ વસ્તુ એ પણ સૂચવે છે કે, જગતના જીવો, સર્વજ્ઞે જોયેલું આત્મા માત્રનું સ્વરૂપ જો નજર સામે રાખે, તો ઔપાધિક કર્મજન્ય ઉપદ્રવોમાં મૂંઝવણ કે અનુકૂલતામાં ગર્વ ન થાય.

શ્રીમદ્ ઉપાધ્યાયજી મહારાજના ગ્રન્થોમાં ભરેલાં રહસ્ય કે જેના પર શ્રીમદે પોતે વિશદીકરણ નથી કર્યું, તેને સમજવા માટે જિનાગમ અને ન્યાયાદિ શાસ્ત્રોથી ખૂબ જ પરિચિત રહેવું જોઈએ અને સૂક્ષ્મ બુદ્ધિથી વિચાર કરવો જોઈએ. નહિતર તો એમની પંક્તિઓના અગડંબગડં અર્થ કરવાનું થાય. દા. ત. 'અધ્યાત્મસાર' માં એક એક પંક્તિ છે—

> " नो चेद् भावापरिज्ञानात्, सिद्ध्यसिद्धिपराहतः ॥
> दीक्षाऽदानेन भव्यानां, तीर्थोच्छेदः प्रसज्यते ॥ "

અહીં એ પ્રકરણ ચાલે છે કે દીક્ષા આપવા માટે—

> " यो बुध्वा भवनैर्गुण्यं धीरः स्याद् व्रतपालने ।
> स योग्यो भावभेदस्तु नोपलक्ष्यते ॥ "

અર્થાત્–જેને સંસાર નિર્ગુણ લાગ્યો હોય અને મહાવ્રત પાળવામાં જે અડગ હોય, તે દીક્ષા માટે યોગ્ય ગણાય પરંતુ એના આત્મામાં છઠ્ઠા ગુણસ્થાનકનો ભાવ આવ્યો છે કે નહિ, તે જોવાનું નથી. કેમ નહિ ? એના ઉત્તરમાં–'नो चेद् भावापरिज्ञानात्... ' એ શ્લોક કહ્યો છે. આમાં 'सिद्ध्यसिद्धिपराहतः' એ સામાસિક પદનો અર્થ બહોળા શાસ્ત્રજ્ઞાનના અનુભવ વિના સ્વતઃ સમજવો મુશ્કેલ છે અને એવું પણ વાંચવા મળેલ છે કે, જેમાં કોઈએ એનો ભળતો જ અર્થ કર્યો હોય. કહેવું એ છે કે, 'નહિતર તો અંતરના પરિણામની ખબર નહિ પડવાથી સિદ્ધિ અને અસિદ્ધિથી પરાહત હોવાથી દીક્ષા નહિ અપાવાને લઈને તીર્થના ઉચ્છેદનો પ્રસંગ આવે.' આમાં 'સિદ્ધિ અને અસિદ્ધિથી પરાહત

હોવાથી ' એટલો ભાગ ' દીક્ષા નહિ અપાવામાં ' હેતુ છે. તાત્પર્ય એ છે કે, ' અંતરમાં ગુણ-ઠાણાના ભાવ હોય તો જ દીક્ષા આપવી એવો આમાનો મત હોય તો પછી દીક્ષા અપાશે જ નહિ. કેમ કે દીક્ષાનું દાન સિદ્ધિ અસિદ્ધિથી પરાહત છે. અર્થાત્ જો છઠ્ઠા ગુણઠાણાના ભાવની એ આત્મામાં સિદ્ધિ છે જ (પ્રાપ્તિ છે જ), તો હવે દીક્ષા આપવાથી કાંઈ વિશેષ નથી. તેમ જો ભાવની અસિદ્ધિ છે, અર્થાત્ ભાવ પ્રાપ્ત નથી થયા તો તમારા મત મુજબ દીક્ષા આપી શકાય નહિ, તેથી દીક્ષા આપવી વ્યર્થ થાય. એમ અંતરમાં છઠ્ઠા ગુણઠાણાના પરિણામરૂપ ભાવની સિદ્ધિ હો કે અસિદ્ધિ–ઉભય દશામાં દીક્ષા આપવી નિરર્થક છે. તેથી તો જગતમાં દીક્ષિતની પરંપરા જ નહિ રહે, એટલે જગતમાં શાસન કે તીર્થ જેવું કાંઈ નહિ રહે અને એમ થતાં તીર્થનો ઉચ્છેદ આવીને ઊભો રહેશે.' આવાં અનેક સ્થળો રહસ્યભર્યાં છે.

ત્યારે ' નયોપદેશ' અને ' નયરહસ્ય ' માં સપ્તભંગીનું સ્વરૂપ વર્ણવતાં ત્રીજા અવક્તવ્ય ભંગ પર સુંદર જિજ્ઞાસા ઊભી કરીને એનું વિશેષતાભર્યું સમાધાન આપ્યું છે. જિજ્ઞાસા એ કરી છે કે, વસ્તુ પરસ્પર વિરુદ્ધ એવા ઉભય ધર્મરૂપે એકીસાથે કહી શકાય કે નહિ ? દા. ત. ઘટને એકવાર ' સ્યાત્ સત્ ' કહ્યો અને બીજી વાર ' સ્યાત્ અસત્ ' કહ્યો ત્યારે એકીસાથે કહો, ઘટ કેવો છે ? એના ઉત્તરમાં ' ઘટ અવક્તવ્ય છે;' ત્યારે પ્રશ્ન એ ઊભો કરવામાં આવ્યો કે શા માટે અવક્તવ્ય ? જેમ ' પુષ્પદન્ત ' શબ્દથી સૂર્ય ચંદ્ર બન્નેનું એક જ શબ્દથી નિર્વચન થાય છે, તેમ અહીં પણ ' સત્ અસત્ ' બન્નેનો એકીસાથે નિર્વાચક અને સાંકેતિક શબ્દ કહીએ તો તેથી ઘટ વક્તવ્ય બનશે ને ? અર્થાત્ એ સંકેતથી ઘટ સત્–અસત્ ઉભયરૂપે એકીસાથે વક્તવ્ય બનશે ને ? આના ઉત્તરમાં તેમણે કહ્યું છે કે, એ સંકેત શબ્દને કેવો કહેશો ? સંકેત જો સત્–અસત્નો ક્રમસર વાચક શબ્દ છે, તો તો પ્રસ્તુત ભંગને તે ઉપયોગી નથી. જો એ એકીસાથે સત્–અસત્નો વાચક છે, અર્થાત્ યુગપદ્વાચક છે, તો તે વસ્તુ તો પ્રશ્નાન્તર્ગત છે કે, ઘટનું સત્–અસત્નું ઉભયરૂપે એકીસાથે નિર્વચન થઈ શકે ? ત્યારે તમે કહેશો કે, હા, સંકેતથી થઈ શકે, ત્યારે સાંકેતિક શબ્દ માટે શક્તિજ્ઞાન કેવું કરશો ?

અર્થાત્ એકીસાથે સત્–અસત્ ઉભયમાં સાંકેતિક શબ્દની શક્તિ રાખવી પડશે. તેનો શક્યતાવચ્છેદક કોણ ? સત્ત્વ, અસત્ત્વ જો કહો તો પાછો ત્યાં પ્રશ્ન રહેવાનો કે એ સાંકેતિક પદથી સત્ત્વ અને અસત્ત્વનું નિર્વચન એકીસાથે થવાનું કે ક્રમિક ? એકીસાથે થવાનું એમ તો નહિ કહી શકાય. કેમ કે જે વખતે સત્ત્વ ઉચ્ચારાય છે ત્યારે અસત્ત્વનું નિર્વચન નથી અને અસત્ત્વ ઉચ્ચારાય છે ત્યારે સત્ત્વનું નિર્વચન નથી. ત્યારે વળી, ત્યાં સત્ત્વ–અસત્ત્વ બન્નેનું એકીસાથે નિર્વચન કરનાર કોઈ જુદો સાંકેતિક શબ્દ ઊભો કરશો તો પાછો એ જ પ્રમાણે એના શક્યતાવચ્છેદક અંગે પ્રશ્ન થશે. આમ અનવસ્થાનો દોષ આવી પડશે.

પૂ૦ ઉપાધ્યાયજી મહારાજનાં શાસ્ત્રરત્નોમાં ઝળકતાં રહસ્યો અને વિશિષ્ટ પદાર્થોનું શું વર્ણન કરી શકાય? આ તો સામાન્ય જીવો સમજે એવા છૂટક નમૂના છે. બાકી તો દર્શનનાં અને સૂક્ષ્મ તત્ત્વના અભ્યાસવાળાને સમજાય તેવાં તો કેટલાંયે રહસ્યો છે પણ એટલું ખરું કે એ રહસ્યો અને વિશેષતાઓ સાથેની એમની શાસ્ત્રકૃતિઓમાં કહેલાં તત્ત્વો અને પદાર્થોનું શ્રવણ, બોધ, મીમાંસા અને અનુભવન એ માનવજીવનને અજવાળી દે એવાં છે. આ માટે શ્રવણાદિ દરેકનો ખૂબ જ અભ્યાસ જોઈએ. વારંવાર શ્રવણ, વાચન, અને ગ્રહણ તેમ જ વારંવાર પરિશીલન અને અનુભવન–આત્મભાવન જોઈએ, અર્થાત્ એનાથી આત્માની સહજ મતિને ભાવિત કરી દેવી જરૂરી છે. જીવન ટૂંકું છે, અને એકલા ઉપાધ્યાયજી મહારાજના જ ગ્રન્થોનો અભ્યાસ દીર્ઘકાળ ચાલે એવો છે. તેમ જ વ્યાપક બોધ અને પ્રેરણા આપી જીવનને સફલ કરે એમ છે. એ વખતે જો એ રહસ્યો અને વિશેષતાઓ સાથેના એ પદાર્થોનું આત્મભાવન મૂકી કેવળ સાહિત્યિક દૃષ્ટિ, ઐતિહાસિક દૃષ્ટિ, સમન્વય દૃષ્ટિ, તુલનાત્મક દૃષ્ટિ ઇત્યાદિના વિષય પ્રતિભાસરૂપ જ્ઞાનમાં જ પડી જવાય તો માનવ–જીવનનું અણમોલ કર્તવ્ય જે વિષયપરિણતિ અને સંવેદન જ્ઞાન, તે એમ જ અણસાધ્યું રહી જાય.

શ્રદ્ધાવાદને વિકસિત કરવાની જરૂર—

તત્ત્વનું પ્રતિભાસજ્ઞાન ગમે તેવું થાય, પણ જો પરિણતિજ્ઞાન અને તત્ત્વસંવેદન જ્ઞાન ન થાય તો તેની કશી જ કિંમત નથી. પરિણતિજ્ઞાન લાવવા માટે હૃદયનું વલણ તે તે તત્ત્વના સ્વરૂપને અનુરૂપ બનાવવું આવશ્યક રહે છે. દા. ત. આસ્રવ તત્ત્વનું જ્ઞાન થયું. આસ્રવનું સ્વરૂપ હેય છે; તો હૃદયનું વલણ હેયતાને અનુરૂપ જોઈએ. અર્થાત્ આસ્રવ પ્રત્યે અનાસ્થા–અરુચિ અને તિરસ્કારભર્યું વલણ જોઈએ. આસ્રવથી આત્માને ભય લાગવો જોઈએ. જ્યાં આસ્રવની વાત આવે ત્યાં અકર્તવ્યતા ભાસે, તિરસ્કાર આવે. આવા વલણવાળું આસ્રવનું જ્ઞાન એ પરિણતિજ્ઞાન છે. પછી તત્ત્વસંવેદનના જ્ઞાનની પ્રવૃત્તિમાં ઊતરવાની વાત આવે. અર્થાત્ આસ્રવ પ્રત્યે ભય, તિરસ્કારનું વલણ થયું ખરું, પરંતુ આસ્રવનો ત્યાગ નહોતો થઈ શક્યો, આત્મા એનાથી તદ્દન અનાસક્ત અને અલિપ્ત નહોતો બની શક્યો. જ્યારે તત્ત્વસંવેદનમાં તો આસ્રવ પ્રત્યે સહજ અનાસક્ત બન્યો, એનાથી અલિપ્ત થયો, અર્થાત્ હવે અંતરથી પણ આસ્રવમાં પ્રવૃત્તિ નહિ, પરંતુ સર્વથા વિરતિભાવ થાય. આ વસ્તુ જીવનમાં ખૂબ જ જરૂરી છે. તે માનવજીવનમાં જ શક્ય છે. તેના વિના કોરા પ્રતિભાસ જ્ઞાનથી તો કાંઈ આત્મહિત સીઝતું નથી. એમ તો અભવ્ય પણ નવ પૂર્વ સુધીના પ્રતિભાસ-જ્ઞાન સુધી પહોંચી જાય છે. લ્યો, એણે સાહિત્ય કેટલું બધું ખેડ્યું! પણ તેવા પ્રતિભાસ-જ્ઞાનમાત્રથી શું? પરિણતિ અને સંવેદનના લક્ષ વિનાની ઐતિહાસિક દૃષ્ટિની ભાંજગડ તે તે કાળના રીતરિવાજ અને ભાષાના સંશોધન, ઇતરો સાથે કેટલીક વસ્તુના સમન્વય–એ બધી દૃષ્ટિઓ હૃદયમાં નક્કર સંવેગજનક બોધ નથી આપતી. પછી સંસારથી અલગ

અને અલિપ્ત થવાની વાત જ ક્યાં? આજના બુદ્ધિવાદના જોર પર પ્રસરતા સંશયવાદને ચાલતો કરવો હોય તો ઋષિ-મહર્ષિઓના તર્ક-યુક્તિપૂર્ણ ગંભીર વચનો પર શ્રદ્ધાવાદને વધુ વિકસિત કરવો પડશે. એના બદલે નર્યું બુદ્ધિવાદનું તાંડવ તો છતી વસ્તુએ જૈન કે આર્ય પ્રજાને સંસ્કૃતિના વિનાશ તરફ ઘસડી જશે.

પ્રાંતે—એ શુભ અભિલાષા છે કે, પૂ૦ ઉપાધ્યાયજી મહારાજ જેવા મહર્ષિઓનાં શાસ્ત્ર-રત્નોમાંથી આપણે જીવનમાં નક્કર તત્ત્વદૃષ્ટિ, કેવળ પરિણતિ-સંવેદન જ્ઞાન તથા સંવેગ વિરાગાદિથી પરિપુષ્ટ આધ્યાત્મિકતાની ઉચ્ચ કક્ષાએ પહોંચી, અંતરાત્મદશાના ઉલ્લસિત અભ્યાસ પર પરમાત્મદશાને વરીએ. અજ્ઞાન કે પ્રમાદના દોષે કાંઈ પણ અયુક્ત લખાયું હોય તે બદલ મિચ્છામિ દુક્કડં.

કષ્ટેન लब्धं विशदागमार्थं,
ददाति योऽसद्ग्रहदूषिताय।
स खिद्यते यत्नशतोपनीतं,
बीजं वपन्नूषरभूमिदेशे ॥१५३॥

—જેણે ખૂબ દુઃખ વેઠીને સ્પષ્ટ એવો આગમનો અર્થ પ્રાપ્ત કર્યો છે તે જો અસદ્ગ્રહથી દૂષિત-કદાગ્રહીને આપે તો તે સેંકડો પ્રયત્નથી મેળવેલા બીજને ઉષર ભૂમિમાં વાવતો ખેદ પામે છે.

અધ્યાત્મસાર] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

પ્રખર સ્યાદ્વાદી ઉપાધ્યાયજી શ્રી. યશોવિજયજી મહારાજ

[લેખક :—પૂ૦ મુનિવર શ્રીમાન્ વિક્રમવિજયજી]

ન્યાયવિશારદ ન્યાયાચાર્ય શ્રી. યશોવિજયજી ઉપાધ્યાયજી મહારાજા જૈન શાસનની એક અમૂલ્ય વિભૂતિ હતા. તેઓશ્રીએ વિક્રમ સંવત્ ૧૬૮૮ માં બાલ્યાવસ્થામાં જ દીક્ષા ધારણ કરી હતી અને પોતાની અપ્રતિમ ધારણાશક્તિનો[1] પૂર્વપરિચય પોતાની માતાને બાલ્યાવસ્થામાં જ આપી દીધો હતો. તેઓશ્રીનું ચારિત્ર-પ્રભુકથિત શુદ્ધ અનુષ્ઠાન-ઘણું જ ઉચ્ચ કોટિનું હતું. તેઓશ્રી બ્રહ્મનિષ્ઠ, અડગ મહાયોગી હતા; એટલે કે તેઓશ્રી પંચમહાવ્રતના પાલનમાં ખૂબ તત્પર રહેતા હતા. તેઓ કેવળ એકદષ્ટિવાળા ન હતા. તેઓશ્રીમાં જેવો જ્ઞાનનો પક્ષપાત હતો, તેવો જ ક્રિયાનો પણ હતો. તેઓશ્રી કેટલાક ઇતર વિદ્વાનોની જેમ માત્ર કોરા જ્ઞાનના જ ઉપાસક નહોતા પણ ઉભયને સમાનપણે ન્યાય આપનારા હતા. તેઓશ્રી પ્રભુની આજ્ઞાને જ આવકારનારા હતા અને પ્રભુની આજ્ઞાનો સંદેશ પાઠવતાં ગમે તેવાં વિઘ્નો આવે છતાં ગભરાતા નહિ. આ જ વાત તેઓશ્રીએ શ્રી શંખેશ્વરજી પાર્શ્વનાથ ભગવાનની સ્તુતિ કરતાં ઉચ્ચારી હતી :

" મિથ્યા મત હૈ બહુ જન જગમેં, પદ ન ધરત ધરણી;
ઉનકા હમ તુજ ભક્તિ પ્રભાવે, ભય નહીં એક કણી. "

આમ કહીને એમણે પોતાના હૈયામાં પ્રભુ પ્રત્યે રહેલો ભક્તિ વ્યક્ત કરી; એટલું જ નહિ પણ સાથે સાથે પ્રભુની આજ્ઞા પોતાની નસેનસમાં વ્યાપ્ત હતી તેનો પણ પ્રભુ પાંસે

---

૧. પ્રસગ એવો બન્યો હતો કે, તેમનાં માતુશ્રીને હંમેશાં નવસ્મરણ સાંભળવાનો નિયમ હતો, તેથી શ્રવણ કર્યાં પછી જ પચ્ચક્ખાણ પાળતાં હતાં. એક દિવસ બનાવ એવો બન્યો કે, પોતાના ગામથી પૂ. ગુરુદેવના ઉપાશ્રયે જતા વચમાં નદી આવતી હતી. તે નદીમાં ચાતુર્માસના કારણે પાણી પુષ્કળ ભરાઈ ગયું હતું. જેથી તેમનાં માતુશ્રી ત્યાં જઇ શક્યાં નહિ અને નવસ્મરણનું શ્રવણ કરી શક્યાં નહિ. આથી માતૃભક્ત બાલવયસ્ક આપણા પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજે જનનીને પુછ્યુઃ " તું આજે પચ્ચક્ખાણ કેમ પાળતી નથી ? " માતાએ કહ્યુંઃ " મારે નિયમ છે કે, નવસ્મરણ સાંભળ્યા પછી જ પચ્ચક્ખાણ પાળવું." જશવંતકુમારે કહ્યુંઃ " હે માતુશ્રી ! ચાલો, હું આપને નવસ્મરણ સંભળાવું. " એમ કહી નવસ્મરણ સંભળાવી દીધાં. આશ્ચર્યચકિત થઇ માતાએ પુછ્યુંઃ " તને ક્યાંથી આવડે ? " ત્યારે જશવંતકુમારે કહ્યુંઃ " હે માતુશ્રી ! આપની સાથે હંમેશાં હું ઉપાશ્રયે આવતો હતો તે વખતે સાંભળતાં સાંભળતાં મને યાદ રહી ગયાં. " આવું સાંભળી ગમે તેવો માનવી એમ કહેવાને તત્પર થઈ જાય કે ધન્ય છે એમની ધારણાશક્તિને !

એકરાર કર્યો. એમના હૈયામાં પ્રભુઆજ્ઞા પ્રત્યે જે અનહદ પ્રેમ અને રસ હતો તે તેઓશ્રીની એક એક રચના ઉપરથી માલૂમ પડે છે. તેઓશ્રીને પોતાની પૂજાની પડી નહોતી પણ પ્રભુના સિદ્ધાંતો સાચા છે તેને સાબિત કરવાની અને તેનો નિષ્કર્ષ જનતા સમક્ષ મૂકવાની હૈયામાં હોંશ હતી. તેઓશ્રીએ અમદાવાદમાં જ્યારે આઠ અવધાન કર્યાં ત્યારે તેમનાં અવધાનો જોઈને પ્રસન્ન થયેલા 'શા૦ ધનજી સૂરા' એ ગુરુદેવને વિનંતી કરી કે 'આ યશોવિજયજી તો બીજા હેમચંદ્રાચાર્ય થાય તેવા છે માટે તેમને કાશી વિદ્યાભ્યાસ માટે મોકલો.' તે વખતે ન્યાયવિદ્યાનો ધોધ તો કાશીમાં જ વહેતો હતો અને તે પહેલાં બંગાળમાં એનો પ્રવાહ વહેતો હતો. નવ્યન્યાયનો વિકાસ કરનારા જગદીશ, ગદાધર આદિ દિગ્ગજ વિદ્વાનો બંગાળમાં જ થઈ ગયા હતા; અને એ બધા નૈયાયિકોએ નવ્યન્યાયને ખૂબ ખૂબ વિકસિત કર્યો હતો. ત્યાર બાદ એ નવ્યન્યાયનો પ્રવાહ બંગાળમાંથી કાશીમાં વહેવા લાગ્યો હતો તેથી તે વખતમાં કાશી નવ્યન્યાયનું ધામ બન્યું હતું. તેઓશ્રી કાશીમાં નવ્યન્યાયનું અધ્યયન કરતા હતા પણ અંતરમાં તો પ્રભુના સિદ્ધાંતોને કોઈ પણ વાદી અપસિદ્ધાંત કહી શકે નહિ એ માટેનું મનોમંથન પણ ચાલુ જ હતું. એ નવ્ય-ન્યાયને કાશીમાં જ રહી અભ્યાસ કરવા છતાં પ્રભુઆજ્ઞાને સિદ્ધ કરવાના મનોરથો ખૂબ ખૂબ બળવત્તર બનતા જતા હતા. અને તેથી જ એ શાસ્ત્રોના કોયડાઓ અને ગૂંચો એમના પ્રભુઆજ્ઞાંકિત હૈયાને હમમચાવી શક્યાં નહિ. એ જ કાશીમાં ઘણા અલ્પ સમયમાં તેમણે નવ્યન્યાયનો લગભગ પૂર્ણ અભ્યાસ કરી લીધો. સાથે સાથે ત્યાં આવેલા એક મહાવાદી કે જેની સાથે વાદવિવાદમાં ઊતરવાને કાશીનો કોઈ પણ પંડિત તૈયાર નહોતો, તે વખતે સ્યાદ્વાદના આ અનન્ય ઉપાસકે વાદવિવાદ કરવાની હિંમત કરી અને તેને પરાજિત કર્યો. તેઓશ્રીના આ મહાન વિજયથી અંજાઈ જઈને ત્યાંના પંડિતોએ તેમને 'ન્યાયવિશારદ'નું બિરુદ આપ્યું.

સર્વશાસ્ત્ર પારંગત ઉપાધ્યાયજી—

નવ્યન્યાયની શૈલીમાં સ્યાદ્વાદના સિદ્ધાંતોને તેઓ કાશીમાં કરેલા અધ્યયનને લીધે જ ગૂંથી શક્યા. આમ તો તેઓશ્રીમાં ગ્રંથ રચવાની શક્તિ હતી જ, અને તેથી જ તેઓ સ્યાદ્વાદ સિદ્ધાંતને નવ્યન્યાયની રીતે ઢાળી શક્યા. આજે એ સ્યાદ્વાદ રસથી નીતરતા, ચરણકરણની ભાવનાથી ભરપૂર અને અકાટ્ય યુક્તિરૂપી તરંગોથી વ્યાપ્ત ગ્રન્થો ભલભલા પંડિતોનાં શિર ડોલાવે છે અને અખંડ ચારિત્રવાનોને નતમસ્તક બનાવે છે. એમનો કોઈ પણ ગ્રન્થ જુઓ તો તેમાં ન્યાયની છાયા તો પડેલી જ હોય. તેઓ કેવળ ન્યાયશાસ્ત્રમાં જ નિપુણ હતા એટલું જ નહીં, પણ સર્વ શાસ્ત્રોમાં પારંગત હતા. એમની ગ્રન્થરચનાનો અભ્યાસ કરીએ છીએ ત્યારે તેઓશ્રી એક સમર્થ ગ્રન્થકાર હતા એવી પ્રતીતિ આપણને થાય છે. એમની સંસ્કૃત કાવ્યરચનાઓ જોઈએ છીએ ત્યારે એમની એક કવિસમ્રાટ તરીકેની છાપ આપણા હૃદય પર અંકિત થાય છે. જ્યારે એમનાં સ્યાદ્-વાદનાં નિરૂપણો જોઈએ છીએ ત્યારે તેઓ એક સ્યાદ્વાદના પુરસ્કર્તા તરીકે તરી આવે છે, એ જ્યારે સિદ્ધાંતની વાતો લખતા હોય ત્યારે એક આગમિક આચાર્યની કક્ષાએ પહોંચેલા

માલૂમ પડે છે, જ્યારે એમનાં કર્મવિષયક વિવેચનો વાંચીએ છીએ ત્યારે કર્મ–સાહિત્યના પ્રખર જ્ઞાતા તરીકેનો ભાસ થાય છે, જ્યારે વ્યાકરણવિષયક 'તિઙન્વયોક્તિ' જેવા ગ્રંથો જોઈએ છીએ ત્યારે પ્રખર વૈયાકરણની દૃષ્ટિ તેમને લાધી હોય એમ દેખાય છે. અતીત કાળમાં થઈ ગયેલા મહાન આચાર્યોના ગુણો તેમણે પોતાનામાં સમાવી લીધા હોય એમ આપણને એમના ગ્રન્થાવલોકનથી જણાઈ આવ્યા વગર રહેતું નથી; અને તેથી જ સિદ્ધસેન દિવાકરજી મહારાજ, મલ્લવાદિસૂરીશ્વરજી મહારાજ, હરિભદ્રસૂરીશ્વરજી મહારાજ, વાદિદેવસૂરીશ્વરજી મહારાજ તથા હેમચંદ્રાચાર્ય મહારાજનો એક એક ગુણ લઈને યાને બધાના ગુણોનો સમન્વય સાધીને યશોવિજયજી મહારાજનો બુદ્ધિદેહ બન્યો હશે એમ કહ્યા વગર રહેવાતું નથી.

ષડ્દર્શનની સાક્ષાત્ મૂર્તિ—

જ્યારે તેઓશ્રી બૌદ્ધોનું ખંડન કરે છે અને એનો પૂર્વપક્ષ એવી રીતે પ્રતિપાદિત કરે છે ત્યારે સ્વયં વસુબંધુ, દિઙ્નાગ અને ધર્મકીર્તિની યાદ આપે છે; મીમાંસકોની જ્યારે મીમાંસા કરે છે ત્યારે ભટ્ટ અને પ્રભાકરની યાદ દેવડાવે છે, વેદાન્તને જ્યારે એ હાથમાં લે છે ત્યારે એક મહાન વૈદાન્તિકાચાર્ય લાગે છે, અને યોગનું રહસ્ય સમજાવે છે ત્યારે યોગાચાર્ય લાગે છે. સાચે જ, એઓશ્રી સાક્ષાત્ ષડ્દર્શનની મૂર્તિ સમા હતા. **ધન્ય છે સર્વવાદ પરમેશ્વરના એ અસાધારણ પૂજારીને !**

તેઓશ્રીએ 'નયચક્રશાસ્ત્રમ્' કે જેની રચના તાર્કિકચૂડામણિ મલ્લવાદિસૂરીશ્વરજી મહારાજાએ કરી હતી અને જેનો ઉપયોગ આપણા જૈનાચાર્યોએ ખૂબ ઓછો કર્યો છે અને જેનો માત્ર નામોલ્લેખ મલધારી હેમચંદ્રાચાર્ય મહારાજાએ કર્યો છે તથા વાદિવેતાલ શાંતિસૂરીશ્વરજી મહારાજાએ એ મહાન નયચક્રશાસ્ત્રના ઉલ્લેખ ઉપરાંત તેમાં આવતી એક દલીલ પણ પોતાની 'પાઈય' ટીકામાં લીધી છે; તે ગ્રંથ પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજે એક પખવાડિયામાં જ વાંચી લીધો હતો અને તેની એક પ્રતિલિપિ કરાવી હતી. આથી તે 'નયચક્ર'ની પ્રશસ્તિમાં પૂ. ઉપા. યશોવિજયજી મહારાજની સ્તુતિ જોવામાં આવે છે. તથા હાલમાં મળતી ઘણી ખરી પ્રતિઓની શરૂઆતમાં "ઐँ-નમઃ" જોવામાં આવે છે. તેઓશ્રીએ એ ગ્રંથનો 'સંમતિતર્ક'ની જેમ ખૂબ છૂટથી શા માટે ઉપયોગ નહીં કર્યો હોય તેનું સંશોધન કરવું જરૂરી છે, આજે તે ગ્રંથનું સંપાદન અમારા પરમપૂજ્ય પરમ· ગુરુદેવ આચાર્યશ્રી. વિજયલબ્ધિસૂરીશ્વરજી મહારાજા કરી રહ્યા છે અને તેના બે ભાગ પ્રગટ થઈ ચૂકયા છે તથા ત્રીજા ભાગનું સંપાદનકાર્ય ચાલુ છે.

પૂજ્ય યશોવિજય ઉપાધ્યાયજી મહારાજાનો શાસ્ત્રાવબોધ ઘણો જ ઊંડો હતો. સૂત્રના કેવળ શબ્દાર્થો પર એમનો બોધ નિર્ભર ન હતો પણ એમનો બોધ ઐદંપર્યાર્થ હતો અને તેથી જ તેઓશ્રીએ ઠેકાણે ઠેકાણે જ્યાં જ્યાં સૂત્રાવબોધની વાત કરી છે ત્યાં ત્યાં ચાર પ્રકારના અર્થની વાત કરી છે. એમણે એ ચાર પ્રકારના અર્થની વાત જેટલી વિશદ રીતે કરી છે તેટલી કોઈ પણ ગ્રંથકારે કરી હોય એવું જાણવામાં નથી.

તેઓશ્રી ચાર પ્રકારના અર્થની પદાર્થ, વાક્યાર્થ, મહાવાક્યાર્થ અને ઐદંપર્યાર્થની વાત કરે છે ત્યારે તેમાં પણ સ્વમતિકલ્પનાનો દોષ ન આવે તે માટે વાદિમુખ્ય મલ્લવાદિસૂરિ મહારાજાએ 'દ્વાદશારનયચક્ર'ના પ્રત્યેક ' અર 'ના અંતે જેમ 'આર્ષ' કહી પ્રમાણ ટાંક્યાં છે તેમ તેઓશ્રીએ પણ શાસ્ત્રોનાં પ્રમાણ ટાંક્યાં છે.

એ ભવ્ય પ્રતિભાની પ્રતિમા સમા એ મહાપુરુષે ક્યાંય પણ કોઈ સ્વતંત્ર કલ્પના કરી નથી પણ સિદ્ધસેન દિવાકર તથા મલ્લવાદિસૂરીશ્વરજી મહારાજ તથા જિનભદ્ર ગણિ ક્ષમાશ્રમણનાં ભિન્ન ભિન્ન વક્તવ્યોનો સમન્વય સાધી પોતાના પૂર્વજો પ્રત્યેનો આદર વ્યક્ત કર્યો છે. એમની એ સમન્વયશક્તિનો આજે આપણો શ્રમણસંઘ જો યોગ્ય ઉપયોગ કરતાં શીખી જાય તો આજે પરસ્પરની વિચારધારાઓની અથડામણ તથા સમાજમાં વ્યાપેલો કુસંપ સહેજે ટાળી શકાય.

એ પુણ્ય પુરુષ પોતાના ગચ્છમાં ચાલતા મતભેદોમાં જરા પણ પડ્યા નથી એમ તેમનાં 'ધર્મસંગ્રહ'ના સંશોધન તથા તેમાં કરેલાં ટિપ્પણો દ્વારા જાણવા મળે છે તેઓશ્રીનો સિદ્ધાંત હતો કે દેશનાની એકતાથી શાસનની પ્રભાવના થાય છે. એઓશ્રીના 'ગુરુતત્ત્વવિનિશ્ચય'માં બતાવેલો એ સુંદર માર્ગ સહુ અપનાવે તો શાસનની સુંદરતામાં જરા પણ ક્ષતિ રહે નહીં. આટલી મારી શ્રમણસંઘ પાસે મૂકેલી માગણી અવશ્ય સફળ થશે એવી આશા છે.

એ મહાપુરુષ નર્યા જ્ઞાનના જ ઉપાસક હતા એવું કથન કરનારા એમની જ્ઞાન અને ક્રિયાની બે પાંખોમાંથી માત્ર એક જ પાંખને આગળ કરનારા છે અને ક્રિયાની પાંખ પ્રત્યે દુર્લક્ષ કરનારા છે. તેઓશ્રી 'જ્ઞાન-ક્રિયાભ્યાં મોક્ષઃ' એ સૂત્રના ચુસ્ત ઉપાસક હતા.

એ પ્રભાવક પુણ્ય પુરુષનું આંગોપાંગ ચરિત આપણને મળી શકતું નથી પણ તેઓશ્રી જેમ જ્ઞાનના પ્રભાવક હતા તેમ ક્રિયાના પણ પ્રભાવક હતા. તેથી જ તેઓશ્રીએ જેમ શાસનપ્રભાવક આઠ કહ્યા છે અને સ્વાધ્યાયમાં ગાયા છે તેમ યાત્રા, પૂજા આદિ કાર્ય કરનારાઓને પણ—

'જગ નહિ હોવે પ્રભાવક એહવા, તવ વિધિ પૂર્વ અનેક;
જાત્રા પૂજાદિક કરણી કરે, તેહ પ્રભાવક છેક.'

કહીને એ અનુષ્ઠાનોને પણ શાસનની પ્રભાવના તરીકે સ્વીકાર્યાં છે.

તેઓશ્રીએ ૧૦૦ ગ્રન્થો કેવળ ન્યાયના રચ્યા હતા કે જેનું પ્રમાણ બે લાખ શ્લોક થાય છે આથી ભટ્ટાચાર્યે એમના ઉપર પ્રસન્ન થઈ તેમને 'ન્યાયાચાર્ય'નું બિરુદ આપ્યું છે.

હું જ્યારે જ્યારે એ મહાપુરુષના ગ્રન્થો વાંચું છું ત્યારે ત્યારે મને એમ જ થાય છે કે એ પાવન સાધુપુરુષની સમાધિની સમીપમાં જઈને અભ્યાસ કરું જેથી એમના ગ્રન્થોનું રહસ્ય સરળ રીતે પામી શકું.

આવા સમન્વય સાધક, વિભજ્યવાદના મહાન્ ઉદ્‌ઘોષક, જ્ઞાનક્રિયાના અડંગ પૂજારી, મહામતિમાન્ પરમપુરુષાર્થી, એકલા હાથે નવ્યન્યાયની શૈલીએ શત ગ્રન્થોની રચના કરનાર, વીરધર્મના એ અવિહડ રાગીને કોટિ કોટિ વંદન હો !!!

ન્યાયદર્શનનું સ્વરૂપ

[લેખિકા :— પૂ. આર્યાશ્રી મૃગાવતીશ્રીજી]

ભારતીય દર્શનોમાં છ દર્શનો વેદમૂલક છે. જેમ કે વેદાન્ત, સાંખ્ય, યોગ, ન્યાય, વૈશેષિક અને મીમાંસા. આ છ દર્શનોમાંથી ત્રણ દર્શનોની મૂલ ભિત્તિ પરમાણુવાદ છે. ન્યાય, વૈશેષિક અને મીમાંસા દર્શનમાં પરમાણુઓથી જગતની સૃષ્ટિ બતાવી છે. પૃથ્વી, જલ, તેજ અને વાયુના પરમાણુ હોય છે એટલા માટે પૃથ્વી, જલ, તેજ અને વાયુ નિત્ય અને અનિત્ય એમ બે વિભાગોમાં વિભક્ત છે. નિત્ય પૃથ્વી, નિત્ય જલ, નિત્ય તેજ અને નિત્ય વાયુ પરમાણુરૂપ છે, કાર્યપૃથ્વી, કાર્યજલ, કાર્યતેજ, કાર્યવાયુ અનિત્ય કહેવાય છે. પરમાણુ નિત્ય અને સક્રિયપદાર્થ છે. તેનું સ્વરૂપ અત્યંત સૂક્ષ્મ છે આથી પરમાણુના પરિમાણને, પારિમાંડલ્ય કહે છે. પરમાણુઓમાં ઈશ્વરની ઈચ્છા, પ્રયત્ન અને જ્ઞાનથી ક્રિયા ઉત્પન્ન થાય છે, એમાં જીવોનું કોઈ કર્તૃત્વ નથી. પ્રલયકાલમાં પરમાણુ વિખરાઇ જતાં સંપૂર્ણ સંસારમાં વ્યાપ્ત બને છે, તેઓમાં ક્રિયા હોવાથી એક પાર્થિવ પરમાણુ બીજા પાર્થિવ પરમાણુની સાથે મળે છે જેને દ્વયણુક કહે છે. ત્રણ દ્વયણુક મળવાથી ત્રસરણુ થાય છે. ચાર ત્રસરેણુ મળવાથી એક ચતુરણુક બને છે, તે ચતુરણુકથી સૂક્ષ્મમૃત્તિકા બને છે, તેથી મૃતપિંડ થાય છે, તેથી કપાલ બને છે, તેથી ઘટ બને છે. એ જ ક્રમથી જલીય પરમાણુના પરસ્પર સંયોગથી જળની સૃષ્ટિ થાય છે. આ રીતે તેજ અને વાયુની સૃષ્ટિ થાય છે. આકાશ, કાલ, દિશા, આત્મા અને મન; આ પાંચ પદાર્થ નિત્ય છે. આમાં આકાશ, કાલ, દિશા અને આત્મા વ્યાપક છે પરંતુ મન અત્યંત પરમાણુસ્વરૂપ લઘુ છે. સૃષ્ટિની આ પ્રક્રિયા ન્યાયદર્શન, વૈશેષિકદર્શન અને મીમાંસાદર્શનમાં સમાન છે. આથી આ ત્રણે દર્શનોમાં પરમાણુવાદ મુખ્ય છે. કેવળ એટલું જ અંતર છે કે મીમાંસાદર્શનમાં કર્મને પ્રધાનતા આપી છે. કર્મ અર્થાત્ યજ્ઞાદિક ક્રિયા માનવોને સ્વર્ગ અપાવે છે. આ ત્રણ દર્શનો સિવાય સાંખ્ય અને પાંતજલ યોગદર્શનમાં પ્રકૃતિવાદ પ્રધાન વસ્તુવિષય છે પ્રકૃતિથી જ સંસારની રચના થાય છે. પ્રકૃતિથી મહત્તત્ત્વ, મહત્તત્ત્વથી અહંકાર અને અહંકારથી પંચતન્માત્રા, પંચતન્માત્રાથી પંચમહાભૂત પંચમહાભૂતથી સ્થૂલ જગતમાં ઉત્પન્ન થયેલા પદાર્થોની સૃષ્ટિ થાય છે. આથી આ દર્શનોમાં પ્રકૃતિવાદનું વિવેચન કરેલું છે. વેદાન્ત-દર્શનમાં માયાવાદ પ્રધાન વસ્તુ છે. માયાથી જગતની સૃષ્ટિ થાય છે. સત્ત્વગુણ, રજોગુણ, તમોગુણ જેવી રીતે સાંખ્ય-યોગદર્શનમાં કહેલાં છે એવી જ રીતે વેદાન્તદર્શનમાં પણ એને સૃષ્ટિનાં સહાયક કહ્યાં છે પરંતુ માયાને જ પ્રધાન સ્થાન આપ્યું છે. માયાનું સ્વરૂપ

વચનથી બતાવી શકાતું નથી. તે સત્ છે યા અસત્ છે તે કહેવું કઠિન છે પરંતુ શુદ્ધ સત્ત્વપ્રધાન માયાની ઉપર ચૈતન્ય બ્રહ્મનું પ્રતિબિંબ પડે છે. પ્રતિબિમ્બિત ચૈતન્ય ઈશ્વર યા હિરણ્યગર્ભ રૂપથી કહેવાય છે. તે જ ઈશ્વર જગતનો સ્રષ્ટા ને નિયન્તા કહેવાય છે. જ્યારે માયા પોતાના કાર્યસહિત શુદ્ધ તત્ત્વજ્ઞાનદ્વારા લીન થઈ જાય છે ત્યારે મનુષ્ય મુક્ત થઈ જાય છે.

ન્યાય અને વૈશેષિક દર્શનમાં ઈશ્વર આ રીતે મનાય છે. આત્માના બે ભેદ છે. જીવાત્મા અનંત છે તે સુખી, દુઃખી થઈ શકે છે પરંતુ ઈશ્વર પરમાત્મા એક છે તેમાં નિત્ય જ્ઞાન, નિત્ય યત્ન, નિત્ય ઈચ્છા રહે છે. તેનું અસ્તિત્વ ત્રણ કાલમાં અને ચૌદ ભુવનમાં સર્વત્ર સમાન છે. તે ધર્મ ને અધર્મના અભાવથી સુખી અથવા દુઃખી નથી થઈ શકતા. સુખ ને દુઃખમાં, ધર્મ અને અધર્મને નિમિત્ત કારણ કહે છે. જીવ જે સુખી અથવા દુઃખી થઈ શકે છે તેમાં ધર્મ ને અધર્મ રહે છે. યોગદર્શનમાં ઈશ્વરની સત્તા માન્ય છે, क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः । અર્થાત્ ક્લેશ, કર્મ, વિપાક ને આશય આ ચાર પદાર્થોથી રહિત હોય એવા પુરુષવિશેષને ઈશ્વર કહેવાય છે. સાંખ્યદર્શન નિરીશ્વરવાદી છે, કારણ કે તેમાં સર્વ પુરુષ નિર્ગુણ ને નિર્લિપ્ત છે. જલમાં કમલપત્રના સરખા તે પુરુષો સંસારમાં રહેવા છતાં નિર્લિપ્ત કહેવાય છે એટલા માટે સાંખ્યદર્શનનો બહુપુરુષવાદ પ્રશસ્ત છે. ન્યાયદર્શનના કર્તા ગૌતમ ઋષિ છે, જેને અક્ષપાદ ઋષિ એવા બીજા નામે પણ આપણે ઓળખીએ છીએ. ન્યાયભાષ્યના કર્તા વાત્સ્યાયન છે. વાત્સ્યાયન ભાષ્યના ઉપર વાર્તિક રચનાર ભારદ્વાજ ઉદ્યોતકર આચાર્ય છે. ઉદ્યોતકરે રચેલા વાર્તિક ઉપર તેની ટીકા 'ન્યાયવાર્તિક તાત્પર્ય' છે. તેની ટીકા ઉદયનાચાર્યવિરચિત 'પરિશુદ્ધિ' નામે છે. પરિશુદ્ધિની ટીકા વર્ધમાનોપાધ્યાય રચિત 'પ્રકાશ' નામક છે. આવી રીતે સૂત્ર, વાર્તિક, ભાષ્યને અનુસરણ કરીને અનેક પ્રકીર્ણ ગ્રંથો બનેલા છે, જેનાથી ન્યાયની શાખા, પ્રશાખા વધતી ગઈ છે. આવી રીતે પાંચસો વર્ષ પહેલાં કેવલ પ્રાચીન ન્યાયનો પ્રચાર હતો. પછીથી ગંગેશોપાધ્યાય નામે મોટા નૈયાયિક વિદ્વાને 'તત્ત્વચિન્તામણિ' નામક નવ્યન્યાયનો ગ્રંથ બનાવ્યો; જે પાંચસો વર્ષથી સંપૂર્ણ ભારતમાં પ્રચલિત થઈ ગયેલ છે. ગંગેશોપાધ્યાય મિથિલાનિવાસી હતા. તેઓના પુત્ર વર્ધમાનોપાધ્યાયે 'તત્ત્વચિંતામણ્યાલોક' નામની ટીકા બનાવી. પક્ષધરમિશ્ર પોતાના સમકાલીન વિદ્વાનોમાં અપ્રતિદ્વંદ્વી નૈયાયિક હતા. તેઓ એ સમયમાં કુલપતિ કહેવાતા હતા બંગદેશથી રઘુનાથ શિરોમણિ નામના વિદ્વાન મિથિલાદેશમાં તેમની પાસે નવ્યન્યાય ભણવા માટે ગયા. નવ્યન્યાયનું અધ્યયન કરીને બંગદેશમાં આવી 'તત્ત્વચિંતામણિ-દીધિતિ' નામક ટીકા તેમણે બનાવી. તે અવલંબીને જગદીશ ભટ્ટાચાર્યે 'જાગદીશી ટીકા'નું નિર્માણ કર્યું. પછીથી મથુરાનાથ-તર્કવાગીશે 'તત્ત્વચિંતામણિરહસ્ય' નામક ટીકા બનાવી. પછી મોટા મોટા વિદ્વાનોએ આના ઉપર ગવેષણાત્મક અનેક પ્રકારનાં ટિપ્પણો રચ્યાં. આ રીતે બંગદેશ, મિથિલા, દક્ષિણ, કાશી, મહારાષ્ટ્ર અને ગુજરાતમાં નવ્યન્યાય પ્રચલિત થયો.

ન્યાય અને વૈશેષિકદર્શનમાં ભેદ—

વૈશેષિક દર્શનમાં ત્રણ પ્રમાણ માન્યાં છે. પ્રત્યક્ષ, અનુમાન અને શબ્દ. ઉપમાન-પ્રમાણ એમાં ન માન્યું, કારણ કે તેનો સમાવેશ અનુમાનની અંતર્ગત થાય છે. ન્યાય દર્શનમાં ચાર પ્રમાણ કહ્યાં છે. પ્રત્યક્ષ, અનુમાન, ઉપમાન અને શબ્દ. ચક્ષુરાદિ ઇંદ્રિયોથી જે જ્ઞાન થાય છે તે જ્ઞાનના સાધનપ્રમાણને 'પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ' કહે છે. વ્યાપ્તિ જ્ઞાનને અનુમાન પ્રમાણ કહે છે, यत्र यत्र धूमः तत्र तत्र अग्निः। આ સાહચર્ય નિયમને 'વ્યાપ્તિ' કહે છે; જેમાં પરામર્શજ્ઞાન વ્યાપાર સ્થાનીય છે. સાદૃશ્ય જ્ઞાનને ઉપમાન પ્રમાણ કહે છે. गोसदृशो गवयः। આ ઉપમાન પ્રમાણનું ઉદાહરણ છે. आप्तोपदेशः शब्दः। આપ્તપુરુષોથી ઉપદિશ્યમાન શબ્દ પ્રમાણ કહેવાય છે. આપ્તપુરુષ તેને કહેવાય છે જે સર્વદા યથાર્થ વક્તા હોય. પ્રાચીન ન્યાયમાં પદાર્થોનું વિવરણ કર્યું છે. આમાં સૂત્ર, વાર્તિક, અને ભાષ્યનું મહત્ત્વ અધિક છે. પ્રાચીનકાલમાં જે દેહાત્મવાદી દાર્શનિકો હતા તેના મતનું ખંડન કરવું એ ભાષ્ય ને વાર્તિકનું પ્રધાન લક્ષ્ય હતું, પરંતુ પ્રમેય પદાર્થોનું નિરૂપણ મુખ્ય હતું. નવ્યન્યાયમાં પ્રમાણનો વિચાર જ પ્રધાન રહ્યો છે. આથી 'તત્ત્વચિંતામણિ' ગ્રંથમાં ચાર ખંડ છે. પ્રત્યક્ષખંડ, અનુમાનખંડ, ઉપમાનખંડ અને શબ્દખંડ. પ્રત્યક્ષખંડમાં ચક્ષુરાદિ ઇંદ્રિયોદ્વારા જ્ઞાન થાય છે તેનું દિગ્દર્શન કરાવ્યું છે. પ્રમાણથી પ્રમેયનો શું સંબંધ છે એ બતાવ્યું છે, ઇંદ્રિયોના વિષયની સાથે સંબંધ હોવાથી જ્ઞાન થાય છે. તે સંબંધને ન્યાયમાં સન્નિકર્ષ કહે છે. તે સંનિકર્ષના બે ભેદ છે. લૌકિક સન્નિકર્ષ અને અલૌકિક સન્નિકર્ષ. અલૌકિક સન્નિકર્ષ બે પ્રકારનો છે. સામાન્ય લક્ષણ અને જ્ઞાનલક્ષણ. લૌકિક સન્નિકર્ષ છ પ્રકારે છે. સંયોગ, સંયુક્તસમવાય, સંયુક્તસમવેતસમવાય, સમવાય, સમવેતસમવાય, વિશેષણવિશેષ્યભાવ. એક જોગથી ઉત્પન્ન થયેલ સન્નિકર્ષ કહેવાય છે; જેને જોગજ કહે છે. જોગજ સન્નિકર્ષ દ્વારા જોગીલોક દેશવ્યવધાન અને કાલવ્યવધાન રહેવા છતાં વસ્તુને પ્રત્યક્ષ દેખે છે. આથી યોગીઓની સામે દૂર દેશની વસ્તુ પણ હસ્તામલકવત્ દેખાય છે. યોગી બે પ્રકારના છે. યુક્ત અને યુંજાન. યુંજાન સાધક યોગી હોય છે. તે ચિંતા કરવાથી જોગજ સન્નિકર્ષથી વસ્તુઓને દેખે છે, પરંતુ યુક્તયોગી સિદ્ધયોગી કહેવાય છે. તે સર્વદા વસ્તુઓને હસ્તામલકવત્ દેખે છે. આ જ પ્રત્યક્ષખંડમાં આત્મદર્શન પણ દેખાડ્યું છે. બીજાના આત્માનો બોધ અનુમાનથી થાય છે. બીજાઓની પ્રવૃત્તિ જોઈને આત્મા છે તેમ બોધ થાય છે. જેવી રીતે ગતિથી સારથિનું અનુમાન થાય છે. સ્વાત્માનો પ્રત્યક્ષ અનુભવ થાય છે. રૂપ, રસ, ગંધ, સ્પર્શ, શબ્દ ઇત્યાદિ નહીં રહેવાથી બહિરિન્દ્રિયથી સ્વાત્માનો બોધ થતો નથી પરંતુ મનથીજ તેનો બોધ થાય છે; આથી મનને ઇંદ્રિય માને છે, કારણ કે તે જ્ઞાનનું સાધન છે. આટલું સમજવું ખાસ જરૂરી છે કે શુદ્ધ સ્વાત્માનો બોધ થઈ શકતો નથી, જ્યારે તે આત્મા જણાય છે ત્યારે કોઈ ને કોઈ ગુણના સાથી આત્માનો બોધ થાય છે. જેવી રીતે હું સુખી છું, હું દુઃખી છું, હું ઇચ્છાવાળો છું, હું યત્નવાળો છું ઇત્યાદિ બોધમાં આત્મા જેવો

વિશેષ્ય છે તેવી જ રીતે સુખ, દુઃખ, ઇચ્છા, પ્રયત્ન વિશેષણરૂપથી ભાસિત થાય છે. બીજા આત્માને જાણવા માટે અનુમાન પ્રમાણની આવશ્યકતા છે. આ અનુમાન પ્રમાણ અનુમાનખંડમાં કહેલું છે. વ્યાપ્તિજ્ઞાન જ અનુમાન છે. પરમર્શ જ વ્યાપાર છે, વ્યાપારથી યુક્ત હોવાથી જ વ્યાપ્તિજ્ઞાન કરણ કહેવાશે. પ્રમિતિકરણને પ્રમાણ કહે છે. વ્યાપાર યુક્ત અસાધારણ કારણને કરણ કહે છે. અનુમિતિ જ્ઞાનના માટે હેતુ આવશ્યક છે. હેતુ બે પ્રકારના છે. સદ્હેતુ અને હેત્વાભાસ. સદ્હેતુ જાણવા માટે હેત્વાભાસનું જ્ઞાન આવશ્યક છે. આવી રીતે ઉપમાનખંડમાં ઉપમાન પ્રમાણનું વર્ણન કર્યું છે. સાદૃશ્ય જ્ઞાનને ઉપમાન કહે છે. गोसदृशो गवयः। આ આનું ઉદાહરણ છે. શબ્દખંડમાં શબ્દપ્રમાણનું વર્ણન કર્યું છે, તેથી શાબ્દબોધ થાય છે. શાબ્દબોધ માટે પદજ્ઞાન તે કરણ છે અને પદાર્થજ્ઞાન વ્યાપાર બને છે. અર્થબોધક શબ્દમાં રહેવાવાળી શક્તિ સહકારી કારણ છે. આ સામગ્રીથી શાબ્દ બોધ ફલ થાય છે. શાબ્દ બોધના માટે સંપૂર્ણ શાસ્ત્ર, પુરાણ અને ઇતિહાસ રચાયાં છે. વૈશેષિકદર્શનમાં સાત પદાર્થો માન્યા છે. દ્રવ્ય, ગુણ, કર્મ, સામાન્ય, વિશેષ, સમવાય, અભાવ. ન્યાયદર્શનમાં સોળ પદાર્થો માન્યા છે. પ્રમાણ, પ્રમેય, સંશય, પ્રયોજન, દ્રષ્ટાંત, સિદ્ધાંત, અવયવ, તર્ક, નિર્ણય, વાદ, જલ્પ, વિતંડા, હેતુ, છલ, જાતિ, નિગ્રહસ્થાન. વૈશેષિકદર્શનના નિર્માણકર્તા કણાદ ઋષિ છે. તેઓશ્રીનું બીજું નામ કેણભક્ષી છે. વૈશેષિકદર્શનની ઉપર 'પ્રશસ્તપાદ' મુનિરચિત ભાષ્ય છે, જે 'પ્રશસ્તપાદભાષ્ય' નામે પ્રસિદ્ધ છે. તે ભાષ્યના ઉપર મથિલી પંડિત ઉદયનાચાર્યે જે 'કિરણાવલી' ટીકા બનાવી છે, તેના ઉપર ભગીરથ ઠાકુરની 'ટીકા' છે. વ્યોમશિવાચાર્યની પણ 'ટીકા' છે. પ્રસિદ્ધ પંડિત શંકરમિશ્રે 'ઉપસ્કારક' નામક સૂત્રની ઉપર વ્યાખ્યાન બનાવ્યું છે. તેઓનો જ 'કણાદરહસ્ય' નામક પ્રકરણગ્રંથ છે. વૈશેષિક દર્શન નામ થવાનું કારણ એ છે કે આમાં એક વિશેષ પદાર્થ માનેલ છે, વિશેષ પદાર્થનું લક્ષણ આ છે–नित्यद्रव्यवृत्तित्वे सति स्वतो व्यावृत्तत्वं विशेषत्वम्। અર્થાત્ જે વસ્તુ નિત્યદ્રવ્યમાં રહેવાવાળી છે અને स्वतो व्यावृत्त હોય જેના વ્યાવર્તક યા પરિચ્છેદક નથી. આનો આશય આ છે કે જવ અને ગોધૂમમાં શું ભેદ છે? આનો ઉત્તર આ પ્રકારે છે કેઃ—

આ બન્નેનું મૂળ કારણ પરમાણુભિન્ન છે. પુનઃ આ પ્રશ્ન ઊઠે છે પરમાણુ જ પરસ્પર ભિન્ન કેમ છે? તેનો ઉત્તર એ છે કે જવના પરમાણુમાં એક વિશેષ નામક પદાર્થ છે અને ગોધૂમના પરમાણુમાં વિશેષ નામક પદાર્થ છે, જે પરમાણુનો પરસ્પર ભેદ કરી દે છે પરંતુ સ્વયં સ્વતોવ્યાવૃત્ત છે, તેનો કોઈ અન્ય ભેદક નથી. આ વિશેષ પદાર્થને માનવાથી એ દર્શનનું નામ વૈશેષિક દર્શન થયું. ન્યાયદર્શન એવું નામ એટલા માટે થયું કે અનુમિત્યાત્મક જ્ઞાનના માટે અનુમાનનો ઉપયોગ કરવો પડે છે. પોતાને અનુમિતિ જ્ઞાન કરવા માટે પંચાવયવ વાક્યનો પ્રયોગ નથી થતો કિંતુ બીજાને અનુમિતિ જ્ઞાન કરાવવા માટે પંચાવયવ વાક્યનો પ્રયોગ કરવો પડે છે. આ પંચાવયવ વાક્યને 'ન્યાય' કહે છે. આના આધાર પર ન્યાયદર્શન થયું છે. પંચાવયવ વાક્ય આ પ્રમાણે છે–पर्वतो

वह्निमान् આ વાક્યને પ્રતિજ્ઞા કહે છે. धूमात् આ હેતુ થયો. यत्र यत्र धूमः तत्र तत्र वह्निः, यथा महानसम् આ વાક્ય ઉદાહરણ કહેવાયું. यस्मात् अयम् धूमवान् આ ઉપનય કહેવાયો. तस्मात् वह्निमान् આ નિગમન કહેવાયું. આ પંચાવયવ જ્ઞાનને ન્યાય કહે છે. ન્યાયદર્શનને તર્કશાસ્ત્ર પણ કહે છે. તર્ક શબ્દનો એ અર્થ થાય છે કે व्याप्यारोप्येन व्यापकारोपः तर्कः અર્થાત્ વ્યાપ્યનો આરોપ કરવાથી વ્યાપકનો જે આરોપ તે તર્ક કહેવાય છે જેવી રીતે धूमो यदि वह्निव्याप्यो न स्यात् तदा वह्निजन्यो न स्याद् ધૂમ જો વહ્નિ-વ્યાપ્ય ન હોત તો તે ઉત્પન્ન જ ન થઈ શકે. જે માટે વહ્નિથી ઉત્પન્ન થાય છે એટલા માટે વહ્નિનો એ વ્યાપ્ય છે. આ તર્કપ્રમાણ દ્વારા ધૂમની સાથે વહ્નિની વ્યાપ્તિનો નિશ્ચય થાય છે. આ પ્રમાણે વ્યાપ્તિજ્ઞાન હોવાથી ધૂમથી પહાડમાં અદૃશ્ય અગ્નિનું અનુમાન કરી શકાય છે. એટલા માટે તર્કની આવશ્યકતા છે ન્યાયદર્શનમાં કહ્યું છે व्यभिचारिशङ्कानिवर्तक अनुकूलस्तर्कः અર્થાત્ વ્યાપ્તિજ્ઞાનમાં જ વ્યભિચારીની જે શંકા થાય છે, તેનો નિવર્તક તર્ક છે. આથી વ્યાપ્તિજ્ઞાન સ્થિર થઈ જાય છે. વ્યાપ્તિજ્ઞાનને અનુમાન પ્રમાણ કહે છે, તેથી અનુમિતિજ્ઞાન થાય છે. આ પ્રમાણે અનુમિતિ જ્ઞાનનું મૂલ કારણ તર્ક હોવાથી આ શાસ્ત્રને તર્કશાસ્ત્ર કહે છે. નવ્યન્યાયને વિશેષરૂપથી તર્કશાસ્ત્ર એટલા માટે કહે છે કે તેમાં પ્રમાણનું જ વિવરણ કરેલ છે. પ્રમેય પદાર્થોનું વિવરણ પ્રાચીન ન્યાય-શાસ્ત્રમાં અને વૈશેષિકદર્શન શાસ્ત્રમાં જે કર્યું છે તે જ માન્ય છે।

> यथास्थानं गुणोत्पत्तेः, सुवैद्येनेव भेषजम् ।
> बालाद्यपेक्षया देया, देशना क्लेशनाशिनी ॥१॥
>
> ગુણોની ઉત્પત્તિ વર્તા યોગ્ય પાત્ર મુજબ જેમ સારો વૈદ્ય તદનુકૂળ દવા આપે છે તેમ બાળક આદિ પાત્રોની અપેક્ષાએ દુઃખનો નાશ કરનારી દેશના આપવી જોઈએ.
>
> द्वात्रिंशिका] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી
>
> 卐

મહોપાધ્યાયજીએ કરેલો ઉપકાર

[લેખકઃ પૂ૦ સાધ્વી શ્રી. મંજુલાશ્રીજી]

શ્રી. યશોવિજયજી મહારાજ જૈન આલમમાં શ્રી ઉપાધ્યાયજીની સંજ્ઞાથી અતિપ્રસિદ્ધ છે. આ મહાપુરુષની બાલપણથી જ કોઈ અજબ બુદ્ધિ હતી કે, તે જાણતાં સ્તબ્ધ બની જવાય. પોતાના જીવનકાળમાં સંસ્કૃત, પ્રાકૃત, હિંદી અને ગુજરાતી આદિ ભાષામાં હજારો શ્લોકપ્રમાણ ગ્રંથોની રચના કરી, અનેક આત્માઓને પ્રતિબોધ પમાડી, સેંકડો પરવાદીઓને જીતી, આ મહાપુરુષે શ્રી જૈન શાસનનો ગૌરવશાળી વિજયધ્વજ ફરકાવ્યો છે, જે આજ સુધી સાહિત્યજગતમાં અણનમ રહેવા પામ્યો છે.

તાર્કિક શિરોમણિ :—

શ્રી જૈન શાસનના પરમ પ્રભાવક મહાપુરુષોમાં (વર્તમાનમાં) છેલ્લામાં છેલ્લા ૨૫૦ વર્ષ ઉપર આ એકજ મહાન પરમ પ્રભાવક પુરુષ થયા છે. આ મહાપુરુષ એવા થયા છે કે, જેણે પોતાના જીવનની બિલકુલ પરવા રાખ્યા વિના સાચા દિલથી જેટલો ઉપકાર કર્યો છે, તેટલો અત્યારે આપણને ઘણો જ લાભદાયક નીવડ્યો છે. આજે પણ તેઓશ્રીનાં અનેક પુસ્તકો ઉપલબ્ધ છે. જો આપણે તેને મેળવવા તન, મન, અને ધનથી ઉદ્યમ કરીએ, ને તેમના ગ્રંથો વાંચી, લખી, આપણા જીવનની અંદર તેઓશ્રીનાં વચનો ઇક્ષુરસની પેઠે ઉતારીએ, ને તેમનાં વચન પર વિશ્વાસ રાખી અનુસરીએ, તો જ આપણે ખરેખર તેઓશ્રીના શિષ્યો છીએ. બાકી તો ખાલી દુનિયા પર જેમ ઘણાય માણસો આવ્યા ને પરલોક ગયા તેવી જ રીતે આપણે પણ રત્નચિંતામણિ પામ્યા છતાં ગુમાવ્યા જેવું ગણાશે. આથી આપણે એ મહાપુરુષનું જીવન વાંચી, આપણું જીવન તેવું બને તેમ કરવા પ્રયત્નશીલ બનવું જોઈએ.

આ મહાપુરુષની પૂર્વાવસ્થાનું નામ જશવંતકુમાર હતું. જશવંતકુમારનો જન્મ કન્હોડા નામના ગામમાં થયો હતો. એ કન્હોડા ગામ ગૂર્જર દેશના અલંકાર તુલ્ય અણહિલપુર પાટણની નજીક કુણગેર ગામ પાસે આવેલું છે. જશવંતકુમારના પિતાનું નામ નારાયણભાઈ હતું, અને માતાનું નામ સોભાગદે હતું. જાતે તેઓ જૈન વણિક હતા. શ્રી જૈન શાસનથી સુસંસ્કારિત માતાપિતાના સુયોગે શ્રી. જશવંતકુમારને બાલ્ય વયમાં જ વૈરાગ્યની પ્રાપ્તિ થઈ હતી. આ બાળકની માતાને પણ જૈનધર્મ પર એવી અડગ શ્રદ્ધા હતી કે, તેની કલ્પના પણ ન કરી શકાય. તેની માતાને એવો નિયમ હતો કે, 'ભક્તામર સ્તોત્ર' સાંભળ્યા વિના અન્નપાણી પણ ગ્રહણ ન કરવું.

એક વખત શ્રાવણ માસનો દિવસ હતો. આકાશમાં કાળાં ભમ્મર વાદળાં સપાટાબંધ દોડી રહ્યાં હતાં. ઉકળાટ પણ ઘણો જ હતો. વરસાદ જરૂર આવવો જ જોઈએ, એવી આગાહી થઈ રહી હતી. એવામાં જ ભયંકર ગર્જનાઓ થવા લાગી. કાન ફાડી નાખે તેવા ગડડ ગડડ અવાજો થવા લાગ્યા. જાણે હમણાં જ આકાશ તૂટી પડશે. ઠંડા પવનના સુસવાટા થવા લાગ્યા અને વીજળી ચમક ચમક ચમકવા લાગી. આકાશમાં ઘનઘોર વાદળાં છવાઈ જતાં બધે ઠેકાણે ધોળે દિવસે અંધકાર વ્યાપી ગયો અને ઘડી બે ઘડીમાં તો એક કારમાં કડાકાની સાથે ધોધમાર વરસાદ તૂટી પડ્યો. ચારે બાજુએ જળ બંબાકાર થઈ રહ્યું. જ્યાં જુઓ ત્યાં પાણી જ પાણી. ત્રણ દિવસ થયા, પણ વરસાદ બંધ રહ્યો નહિ, બંધ રહે તેવાં ચિહ્નો પણ જણાયાં નહિ, તે વખતે જશવંતકુમાર અમદાવાદમાં રહેતા હતા. તેમની ઉંમર ફક્ત સાત વર્ષની હતી. વરસાદ ત્રણ દિવસ સુધી લાગલાગટ એકધારો ચાલુ રહેવાથી તેમની માતા પરમ પવિત્ર સ્તોત્ર સાંભળ્યા વિના ભૂખ્યા, તરસ્યાં ઘરની અંદર બેસી રહ્યાં. ચોથા દિવસે જશવંતકુમારે વિનયપૂર્વક પોતાનાં માતુશ્રીને નમસ્કાર કરીને પૂછ્યું કે, 'હે માતા! ત્રણ દિવસ થયા શા માટે ભોજન લેતાં નથી? શા માટે ભૂખ્યાં સૂઇ રહો છો? તમને શું દુઃખ છે તે તો કહો.' પુત્રનાં આવાં વહાલભર્યાં વચનો સાંભળી માતાને એકદમ ઉમળકો આવ્યો. તેમણે એ લાડકવાયા પુત્રને હર્ષભેર છાતીસરસો ચાંપ્યો, ને કહેવા લાગ્યાં કે, 'હે પુત્ર! મારે એક એવો ગંભીર અભિગ્રહ છે કે 'ભક્તામર સ્તોત્ર'નું શ્રવણ ન કરું ત્યાં સુધી ભોજન કરવું નહીં. ત્રણ દિવસથી વરસાદ બંધ રહ્યો નહિ અને મારી તબિયત પણ નરમ હોવાથી હું ગુરુજી પાસે જઇ શકી નથી, અને એ જ કારણે ભોજન લેતી નથી.'

પુત્રે કહ્યું: 'ઓહો, એમાં શું! તમે મને ત્રણ દિવસથી કેમ કહેતાં નથી? જો તમારે સ્તોત્ર જ સાંભળવાની ઇચ્છા હોય તો હું સંભળાવી દઉં.'

પુત્રનાં આવાં કાલાં વચન સાંભળી, માતા આશ્ચર્ય પામી બોલ્યાં કે, 'હે બેટા, ગપાટા હાંકતાં તો ઠીક આવડે છે. હજી તો ભાઇને એકડો ઘૂંટતાં આવડતો નથી ને કહે છે કે, હું 'ભક્તામર સ્તોત્ર' સંભળાવું. વાહ જશાભાઈ! વાહ. દીકરો મારો બહુ જ હોંશિયાર લાગે છે.' એમ તેની માતાએ જસવંતકુમારની હાંસી કરી. પુત્ર વિનયપૂર્વક નમ્રતાથી બોલ્યો કે, 'હે માતાજી! હું તદ્દન સાચું કહું છું. મને સ્તોત્ર જરૂર આવડે છે. તમે આજ્ઞા આપો તો હું બોલું, સાંભળો!' એમ કહી પુત્ર મધુર કંઠે સ્તોત્ર બોલવા લાગ્યો: "ભક્તામરપ્રણતમૌલિમણિપ્રભાણાં૦" આ પ્રમાણે પોતાના બેટાને બોલતો જોઇ માતાને એકાએક આ અદ્ભુત બનાવ માટે આશ્ચર્ય થવા લાગ્યું અને મનમાં તરંગો આવવા લાગ્યા કે, હજી "જશો" નિશાળમાં ભણવા જતો નથી ત્યારે આટલું બધું શીખ્યો ક્યાંથી? આટલો નાનો સુકોમળ બાળક 'ભક્તામર' જેવું મહાન્ સ્તોત્ર કડકડાટ મુખેથી બોલી જાય, એ ખરેખર મહાન્ વિસ્મય પામવા જેવું છે. મનમાં આનંદ પામતી માતા પોતાના પુત્રને કહેવા લાગી કે, 'વહાલા બેટા! તને આ સ્તોત્ર આવડ્યું ક્યાંથી?'

આ વચન સાંભળી, જશો બોલી ઊઠયો કે, 'માતાજી એક દિવસે તમે મને તમારી સાથે ઉપાશ્રયે ગુરુ પાસે દર્શન કરવા લઈ ગયાં હતાં, તે જ વખતે મેં આ સ્તોત્ર સાંભળ્યું હતું, ત્યારનું મને યાદ રહી ગયું હતું.'

પોતાના બાળકનાં આવાં અદ્ભુત વચનો ને સ્મરણશક્તિ જોઈ માતાને ખૂબ આનંદ થયો. 'ભક્તામર' જેવું સંસ્કૃત કાવ્ય એક વખત સાંભળીને યાદ રાખનાર, પોતાનો પુત્ર ભવિષ્યમાં મહાન થશે, એવો વિચાર થવા લાગ્યો. વિચારો આવતાંની સાથે તેની છાતી ગજ ગજ ફૂલવા લાગી, ને મનમાં અત્યંત આનંદ થવા લાગ્યો; માતાએ પોતાના બાળકના મુખેથી આ સ્તોત્ર સાંભળી અઠ્ઠમ તપનું રૂડી રીતે પારણું કર્યું. એ પછી પણ પાછળથી ચાર દિવસ સુધી વરસાદ ચાલુ રહ્યો; પરંતુ "જશો" તેની માતાને આ સ્તોત્ર હંમેશાં સંભળાવતો અને તેમનો અભિગ્રહ પૂર્ણ કરતો. સાતમે દિવસે વરસાદ બંધ રહેતાં "જશો" અને તેની માતા ઉપાશ્રયે ગુરુદર્શને ગયાં. એટલે ગુરુમહારાજ તરત જ કહેવા લાગ્યા કે, 'હે સુશ્રાવિકા તમને તો સ્તોત્ર સાંભળ્યા વિના સાત દિવસના ઉપવાસ થયા હશે, નહિ વારુ!' તે સાંભળી, જશાની માતા બે હાથ જોડી વિનયપૂર્વક બોલ્યાં કે, 'હે ગુરુદેવ! આપની કૃપાથી હું 'ભક્તામર સ્તોત્ર' મારા આ નાનકડા સાત વર્ષના બાળકના મુખેથી શ્રવણ કરતી ને મારો અભિગ્રહ પૂર્ણ કરતી.'

આ સાંભળતાંની સાથે જ ગુરુદેવની અમીભરી દૃષ્ટિ "જશા" ઉપર પડી. ગુરુજી તેને જોઇ વિસ્મય પામી બોલ્યા કે, "શું આટલા કુમળા બાળકે તમને એ સ્તોત્ર સંભળાવ્યું?" સુશ્રાવિકાએ કહ્યું, 'હા, ગુરુરાજ. આપના પસાયથી તેણે એક દિવસ આપની પાસેથી તે સાંભળ્યું હતું, ત્યારથી જ આ સ્તોત્ર તેને કંઠસ્થ થઈ ગયું હતું.' ગુરુમહારાજ તો "જશા"ની આવી અદ્ભુત શક્તિ જોઈ તાજુબ થઈ ગયા. પોતાના મનના સમાધાન ખાતર તેમણે "જશા"ને સ્તોત્ર બોલવાની તરત જ આજ્ઞા કરી. આજ્ઞા થતાંની સાથે જ ગુરુનું વચન "તહત્તિ" કહી "જશો" આખુંય સ્તોત્ર કડકડાટ બોલી ગયો. ત્યાર પછી ગુરુમહારાજે બીજા ઘણા પ્રશ્નો પૂછયા, તેના પણ તેણે સુંદર જવાબ આપ્યા. આ નાનકડા બાળકની આવી બુદ્ધિ જોઈ, ગુરુમહારાજ અત્યંત ખુશી થયા અને તેના માથે હાથ ફેરવીને શુભ આશીર્વાદ આપ્યા. આશીર્વાદ મેળવી જશવંતકુમાર અને તેનાં માતુશ્રી ઘેર આવ્યાં. અહીં ગુરુમહારાજ વિચાર કરવા લાગ્યા કે, બાળક બહુ જ તેજસ્વી લાગે છે. તેના મુખની કાંતિ ઉપરથી જ જણાય છે કે, તે બાળક ભવિષ્યમાં મોટી કીર્તિ મેળવી નામના કાઢશે.

ગણિ નયવિજયજીએ અમદાવાદના કેટલાક આગેવાનો આગળ કહ્યું કે, 'જો "જશો" બાલપણામાં ચારિત્ર ગ્રહણ કરે તો, તે ખરેખર શાસનનો નેતા બને.' શ્રાવકોએ બીજે દિવસે તેની માતુશ્રીને બોલાવીને ખૂબ ઉપદેશ આપી, "જશા"ના ઉદ્ધાર માટે સારા પ્રમાણમાં તેની માતાને નીચે પ્રમાણે કહ્યું:—

'હે શુદ્ધ શ્રાવિકા, જો તારા પુત્રને બાલ્યાવસ્થાથી જ ધર્મશાસ્ત્રોનું જ્ઞાન આપવામાં આવે તો, તે ભવિષ્યમાં એક મહાન્ ધર્મોદ્ધારક પ્રભાવક પુરુષ થશે, કારણ કે તે બહુ બુદ્ધિશાળી છે અને તે પુત્ર તમારી કુળોને દીપાવશે. માટે સંઘની વિનતિ સ્વીકારી તમારા પુત્ર જશાને ગુરુમહારાજને અર્પણ કરો." જશાની માતા મૂળથી જ ધર્મિષ્ઠ એટલે મનની અંદર તરત જ વિચાર આવ્યો કે, જેને તીર્થંકરો પણ નમસ્કાર કરે છે; તે જ સંઘ આજે જૈન શાસનને ઉજ્જવળ બનાવવા માટે મારા પુત્રરત્નની માગણી કરે છે; તો ખરેખર મારા પુત્રને મારે ગુરુમહારાજને અર્પણ કરવો જોઈએ; એમ વિચારી માતાએ ધર્મબુદ્ધિથી પુત્રને અર્પણ કર્યો એટલે, સંઘે તેને ખૂબ ધન્યવાદ આપ્યો. પછી તો પંડિત શ્રી. નયવિજયજી મહારાજશ્રીએ તે જશાને સં. ૧૬૮૮ માં અણહિલપુર પાટણમાં જઈને દીક્ષા આપી. ગુરુમહારાજે તેનું નામ જશવિજયજી-યશોવિજયજી રાખ્યું. જશવંતકુમારને પદમસિંહ નામે બીજા લઘુભાઈ હતા, તેમણે પણ પોતાના વડીલ બંધુ સાથે દીક્ષા ગ્રહણ કરી, અને તેમનું નામ પદ્મવિજયજી રાખવામાં આવ્યું.

શ્રી. ઉપાધ્યાયજી મહારાજાએ ધર્મોપદેશ અને વ્યાખ્યાનોદ્વારા સમાજમાં જાગૃતિ લાવવાનો પ્રયત્ન કર્યો. તેઓશ્રીની વ્યાખ્યાન આપવાની શૈલી એટલી ઉત્તમ હતી કે, તે સાંભળતાં જ કોઇ પણ માણસ તલ્લીન થઈ જાય. ભાષાની સમજાવટ, પ્રસંગોચિત દાખલા-દલીલો, તત્ત્વજ્ઞાનનો ઉપદેશ, અને શાન્ત રસના અદ્ભુત કાબૂથી શ્રોતાઓ ડોલવા લાગતા હતા. તેઓશ્રીનું વ્યાખ્યાન સાંભળવા માટે લોકો ઘણે દૂરથી આવતા હતા અને વાહ વાહ બોલતા.

એક દિવસ તેઓ જ્યાં સ્થંભન પાર્શ્વનાથ ભગવાનનું તીર્થસ્વરૂપ ભવ્ય દેરાસર છે, એ ખંભાત નામે સુંદર નગરમાં આવ્યા. એક દિવસ વ્યાખ્યાનના સમયે એક વૃદ્ધ જેવો ડોસો સભામાં આવ્યો. તે ડોસાને દૂરથી જોતાં જ શ્રી યશોવિજયજી મહારાજાએ તેમને નમસ્કાર કર્યો, એ જોતાં જ સભાની અંદર બેઠેલા સર્વ જનોને અવનવા તરંગો આવવા લાગ્યા, અને અરસપરસ એકબીજાને ધીમે ધીમે કહેવા લાગ્યા કે આ ભૂખડી બારસ જેવા ડોસાને, આ મહાપુરુષે શા માટે નમસ્કાર કર્યો હશે? પણ શ્રી. ઉપાધ્યાયજીએ તો તે ડોસાને સન્માનપૂર્વક બેસવા માટે આસન આપ્યું, પછી તેઓશ્રીએ શ્રોતાઓને જણાવ્યું કે, 'આ ઘરડા ડોસા મારા વિદ્યાગુરુ છે. કાશીમાં રહી મેં તેમની પાસે ન્યાય-વ્યાકરણનો અભ્યાસ કર્યો હતો, તેમનો હું મહાઋણી છું માટે તેમનો યોગ્ય સત્કાર કરશો.'

ગુરુની આટલી સૂચના થતાં, ખંભાતના શ્રાવકોએ તરત જ ફાળો કર્યો અને તે ફાળો સિત્તેર હજાર રૂપિયાનો થયો. તે રૂપિયા એ બ્રાહ્મણ પંડિતને દક્ષિણા તરીકે અર્પણ કર્યા. વિદ્યાગુરુ પોતાના શિષ્યનું આ સામર્થ્ય જોઈ ઘણા જ ખુશી થઈ ગયા અને શિષ્યને શુભ આશીર્વાદ આપી વિદાય થયા.

ખરેખર, આવા મહાત્મા અત્યારે કોઈ સ્થળે આપણા કમનસીબે મળતા નથી પરંતુ જો આપણે આવા મહાત્માનાં જીવનચરિત્ર વાંચી, લખી, તેઓશ્રીનો એક સામાન્ય

ગુણ પણ ગ્રહણ કરીએ, તો ખરેખર આપણે સદ્‌ભાગી બની જઈએ; બાકી આપણે તેઓ-શ્રીના નામે અત્યારે કીર્તિ મેળવીએ છીએ, અને તે ઘણી જ સારી વાત છે પરંતુ જો આપણે આપણી સાચી દાનત રાખી તેમના ગુણોમાંથી એકાદ ગુણનું પાલન કરીએ તો જ આપણે આવા મહાન પુરુષોની નામના રાખી કહેવાય. ખરેખર, જો આપણે તેમના સાચા જ શિષ્યો હોઈએ, અને આપણને આપણા દેવ, ગુરુ અને ધર્મ ઉપર સંપૂર્ણ શ્રદ્ધા હોય તો આપણે તેઓશ્રીનાં વચનોને અનુસરી માયા, જૂઠ, પ્રપંચ, લુચ્ચાઈ તેમજ દરેક ખરાબ વ્યસનોનો ત્યાગ કરવો જ જોઇએ.

શાસ્ત્રાધાર સિવાયનો બીજો એક પણ અક્ષર ઉચ્ચાર્યાં સિવાય તેઓશ્રીએ પોતાનું ભવભીરુપણું સાબિત કરી આપ્યું છે. તેમનાં રચેલાં સ્તવનો આદિ એટલાં બધાં સરળ, રસિક અને બોધપ્રદ છે કે, આજે પણ આવશ્યક ચૈત્યવંદનાદિમાં તે હર્ષપૂર્વક ગાઈએ છીએ. તેઓશ્રીની નાનામાં નાની કૃતિમાં પણ તર્ક અને કાવ્યનો પ્રસાદ તરી આવે છે. આવા એક પ્રાસાદિક કવિ, મુક્તિમાર્ગના અનન્ય ઉપાસક, અખંડ સંવેગી, ગુણરત્નરત્નાકર, નિબિડ મિથ્યાત્વ ધ્વાંતદિનમણિ, પ્રખર જિનાજ્ઞાપ્રતિપાલક અને પ્રચારક મહાપુરુષનું સ્મરણ જૈનોમાં કાયમ રહે તે માટે આપણે જેટલા પ્રયત્નો થાય તેટલા પ્રયત્નો કરવા આવશ્યક છે. આ મહાપુરુષની સાચી ભક્તિ તેમની કૃતિઓનો પ્રચાર કરવામાં રહેલી છે. આ પ્રસંગે એક વાત ધ્યાનમાં રાખવા જેવી છે કે, આ મહાપુરુષની કૃતિઓ ઘણી ગંભીર છે. શ્રી જિનાગમરૂપી સમુદ્રમાંથી ઉદ્ધરિત થયેલી છે; તેથી તેના રહસ્યનો પૂરેપૂરો પાર પામવા માટે આગમ શાસ્ત્રોના પારગામી ગીતાર્થ પુરુષોના ચરણોની સેવાનો આશ્રય એ જ એક પરમ ઉપાય છે. આ મહાપુરુષની કૃતિઓનો ગુરુગમપૂર્વક તલસ્પર્શી બોધ થાય અને એ બોધ વર્તનમાં ઊતરે તો સમ્યગ્‌જ્ઞાન, સમ્યગ્‌દર્શન અને સમ્યગ્‌ ચારિત્રરૂપી મોક્ષમાર્ગની આરાધનામાં ઉત્તરોત્તર પ્રગતિ થાય અને આત્માના અનંત સુખસાગરમાં નિરાબાધ આનંદ પ્રાપ્ત થાય.

ખરેખર, આ મહાન્ પુરુષનું જીવનચરિત્ર જેટલું લખીએ તેટલું ઓછું છે; પરંતુ અત્યારે મારી જડબુદ્ધિથી વધારે લખી શકાય તેમ નથી. માટે, એ માટે વારંવાર આવા મહાન્ પુરુષના તથા જૈનધર્મને લગતા નિબંધો કાઢી, ઈનામી યોજનાઓ કરી તન, મન અને ધનથી શાસનની જેટલી ઉન્નતિ થાય તેટલી કરવા પ્રયત્નશીલ રહેવું જોઈએ.

❀

અમર યશોવિજયજી

[લેખક : પં. શ્રી. દલસુખ માલવણિયા]

ભારતીય દર્શનોની વિભિન્ન પરંપરાઓના નિર્માણમાં ખાસ એક વ્યક્તિના નહિ પણ સરખા વિચારો ધરાવનાર એક વર્ગની બુદ્ધિ કાર્ય કરે છે. તે તે વર્ગમાંની કોઇ એક વિશેષ વ્યક્તિ જ્યારે તે વર્ગના વિચારોને વ્યવસ્થિતરૂપ આપે છે ત્યારે તે તે પરંપરા તે તે વ્યક્તિ વિશેષને નામે પ્રસિદ્ધિને પામે છે. પણ તેનો અર્થ એ નથી કે તે વ્યક્તિએ તે તે પરંપરાને વ્યવસ્થિત કરી એટલે પછી બીજાઓએ કશું જ કરવાનું રહેતું નથી.

ભારતીય ન્યાયદર્શનને ગૌતમે વ્યવસ્થિત કર્યું એટલે તેનું દર્શન ત્યાં જ સમાપ્ત થાય એમ નથી. બીજું ગૌતમમાં જે મૂળ વિચારો વ્યવસ્થિત થયા છે તેનું સમર્થન કરનારા આજ પણ વિદ્યમાન છે અને એ જ હકીકત ભારતીય બધાં દર્શનો વિષે કહી શકાય.

ભગવાન મહાવીરે જૈન ધર્મ કે દર્શનને જે વ્યવસ્થિતરૂપ આપ્યું તેના વિષે પણ ઉક્ત ન્યાયે કહી શકાય કે તેમાંનું બધું તેમનું પોતાનું હતું જ નહિ પણ સરખી વિચારધારા અનુસાર એક વર્ગના વિચારોનું પ્રતિબિંબ તેમની વ્યવસ્થામાં હતું. જે વસ્તુ એક વ્યક્તિની હોય છે, તે તેના મૃત્યુ પછી ભુલાઈ જાય તેવો સંભવ છે પણ જે વસ્તુ એક વર્ગની હોય છે તેનો અંત શીઘ્ર આવતો નથી. એ જ કારણ છે કે ભારતીય દર્શનોની પરંપરા લંબાય છે અને તેને અનુસરનાર એક વર્ગ હોય છે. પશ્ચિમમાં એથી ઊલટું બને છે. ત્યાં જે દાર્શનિકો થયા છે તે મોટે ભાગે વૈયક્તિક દર્શનને મહત્ત્વ આપે છે. પરિણામે તે તે દર્શનિકોની પરંપરા બહુ લંબાતી નથી. જેને કંઈ કહેવું હોય છે તે પૂર્વ દાર્શનિકના સમર્થનમાં નહીં પણ તેના ખંડનમાં જ મોટે ભાગે કહે છે. પરિણામે પ્લેટો કે કાન્ટની પરંપરા ઘડાતી કે લંબાતી નથી પણ તેઓ એકલા અટૂલા જેવા રહી જાય છે.

આવી પરિસ્થિતિમાં ભારતીય દર્શનોમાં કોઈ પણ દાર્શનિકને સ્વતંત્ર દાર્શનિકનું પદ મળવું સંભવિત નથી. પણ એનો અર્થ એ પણ નથી કે ભારતના દાર્શનિકોને પોતાનું કશું જ દેવાનું પણ હોતું નથી.

દિઙ્નાગ, ધર્મકીર્તિ, વાત્સ્યાયન, ઉદ્યોતકર, શંકરાચાર્ય, રામાનુજ, વાચસ્પતિ, કુમારિલ, પ્રશસ્તપાદ જેવા મહાન ભારતીય દાર્શનિકોએ કોઈ નવું દર્શન ભલે ન સ્થાપ્યું હોય, પરંતુ પોતાનાં દર્શનો માટે જે કંઈ તેમણે કર્યું છે, તે એક સ્વતંત્ર દાર્શનિકના કાર્ય કરતાં જરા પણ ઊતરતું નથી. તે જ પ્રમાણે જૈન દર્શન વિષે પણ કહી શકાય કે

સિદ્ધસેન, સમન્તભદ્ર, જિનભદ્ર, અકલંક, હરિભદ્ર, વિદ્યાનંદ કે યશોવિજયજી જેવાઓએ જૈન દર્શનના નિરૂપણમાં જે ફાળો આપ્યો છે તે તેમને સ્વતંત્ર દાર્શનિકો તરીકે ભલે યશ ન અપાવે પરંતુ તેમનાં કાર્યોનું મહત્ત્વ તેથી કંઈ ઓછું થતું નથી. તેનાં કારણોનો વિચાર પણ અહીં થોડો કરી લેવો જોઇએ.

ન્યાયદર્શન કે વૈશેષિકદર્શન ભેદમૂલક દર્શન છે અને તેને મતે આત્મા જેવા પદાર્થો નિત્ય છે. તેથી વિપરીત વેદાંતમાં અભેદને પ્રાધાન્ય છે. જ્યારે બૌદ્ધ દર્શનમાં બધી જ વસ્તુઓ ક્ષણિક—અનિત્ય છે. ગૌતમ કે કણાદે ભેદની સ્થાપનામાં જે દલીલો આપી હોય તેનું નિવારણ વેદાન્તે કરવું જ જોઈએ અને નિત્યની સ્થાપનાનું ઉત્થાપન બૌદ્ધોએ કરવું જ જોઇએ. આ પરિસ્થિતિમાં ભારતીય દર્શનોમાં પારસ્પરિક ખંડનની પરંપરા ચાલે એ સ્વાભાવિક છે. એથી જ આપણે જોઇએ છીએ કે ન્યાયસૂત્રમાં પોતાના સમય સુધીમાં ન્યાય પરંપરા સામે અન્ય પરંપરામાં જે આક્ષેપો થયા હતા તે બધાનો ઉત્તર આપવાનો પ્રયત્ન થયો છે અને પોતાની માન્યતાને નવી દલીલોથી દૃઢ કરવામાં આવી છે. ન્યાયસૂત્રકાર પછી જે બૌદ્ધ વિદ્વાનો થયા તેમણે ન્યાયસૂત્રની સ્થાપનાને ઉત્થાપી હતી. તેનો ઉત્તર વાત્સ્યાયને આપીને ન્યાયદર્શનને દૃઢ કરવાનો પ્રયત્ન કર્યો. પણ તેનું ખંડન દિઙ્નાગે કર્યું અને બૌદ્ધપક્ષને સ્થિર કર્યો. આ રીતે ન્યાય અને બૌદ્ધોનું જેમ વાગ્યુદ્ધ થયું છે તેમ બીજા દર્શનોનું પણ પરસ્પર યુદ્ધ થયું છે. પ્રત્યેક દર્શનના પ્રમુખ વિદ્વાનનું એ કર્તવ્ય મનાયું છે કે તેણે પોતાના સમય સુધીમાં તે તે દર્શન વિષે જે આક્ષેપો થયા હોય તેનું નિવારણ કરીને નવી દલીલો આપી પોતાના પક્ષને દૃઢ કરવો જોઈએ. આથી પોતાના પક્ષને દૃઢ કરવાનું કાર્ય કોઈ પણ નવી સ્થાપનાથી જરા પણ ઓછા મહત્ત્વનું નથી. એ આપણને સહજમાં સમજાઈ જાય છે. આ વસ્તુસ્થિતિના પ્રકાશમાં વાચક યશોવિજયજીનો જૈન દર્શન અને તે દ્વારા ભારતીય દર્શનોમાં જે ફાળો છે તેનો જ્યારે વિચાર કરીએ છીએ ત્યારે તેમનું મહત્ત્વ આપણી આગળ ઉપસી આવે છે.

આચાર્ય ગંગેશે ભારતીય દર્શનમાં નવ્ય ન્યાયની સ્થાપના કરી અને વિચારને વ્યક્ત કરવાની એક ચોકસાઈ ભરેલી પ્રણાલીનો આવિર્ભાવ કર્યો. ત્યાર પછી બધાં દર્શનોને એ નવી શૈલીનો આશ્રય લેવો પડયો છે. એનું કારણ એક જ છે કે કોઈ પણ વિચારને સ્પષ્ટ અને ચોક્કસરૂપમાં મૂકવામાં એ શૈલી જે પ્રકારે સહાયક બને છે તેવી સહાયતા પ્રાચીન પ્રણાલીમાં મળતી ન હતી. આથી શાસ્ત્રકારોને પોતાના વિચારો એ શૈલીના આશ્રયે વ્યક્ત કર્યા સિવાય ચાલે તેમ ન હતું. આજ કારણ છે કે વ્યાકરણ અને અલંકાર જેવા વિષયોમાં પણ તેનો આશ્રય લેવામાં આવ્યો છે. એ પછી તો બધાંય દર્શનો તેનો આશ્રય લે તેમાં કશી જ નવાઈ ન લેખાય. પરંતુ એ શૈલીના ચારસો વર્ષના પ્રચલન છતાં જૈન દર્શનમાં એ શૈલીનો પ્રવેશ થયો ન હતો. ચારસો સાડાચારસો વર્ષના એ વિકાસથી જૈન દર્શન અને જૈન ધર્મ સંબંધી સમસ્ત સાહિત્ય સાવ વંચિત હતું. ભારતીય સાહિત્યના બધા ક્ષેત્રે એ શૈલીનો પ્રવેશ થયો છતાં પણ જૈન સાહિત્યમાં એ ન પ્રવેશી તેમાં જૈના-

ચાર્યોની શિથિલતાને જ કારણ માનવું જોઈએ. કારણ, જો પોતાના શાસ્ત્રને નિત્યનૂતન રાખવું હોય તો જે જે અનુકૂલ કે પ્રતિકૂલ વિચારો પોતાના સમય સુધી વિસ્તર્યા હોય તેનો યથાયોગ્ય રીતે પોતાના શાસ્ત્રમાં સમાવેશ કરવો આવશ્યક છે. અન્યથા તે શાસ્ત્ર બીજા શાસ્ત્રોની હરોળમાં ઊભું રહી શકે જ નહીં. એ ચારસો સાડાચારસો વર્ષના વિકાસનો સમાવેશ એકલે હાથે વાચક યશોવિજયજીએ જૈનશાસ્ત્રમાં કર્યો છે. તેમના આ મહાન કાર્યનો જ્યારે વિચાર કરીએ છીએ ત્યારે તેમની પ્રતિભાને નમન કર્યા વિના છૂટકો નથી થતો. તેમણે અનેક વિષયોના ગ્રંથો લખ્યા છે પણ તે ન જ લખ્યા હોત તો પણ તેમણે જે જૈન દર્શનને નવ્ય ન્યાયની શૈલીમાં મૂકીને અપૂર્વ કાર્ય કર્યું છે તેને લઈને તેઓ અમર થઈ ગયા છે.

અઢારમી સદીમાં ઉપાધ્યાયજી મ. શ્રી. યશોવિજયજીએ જે કાર્ય કર્યું તે પાછું ત્યાં જ અટકી ગયું. ત્યાર પછી ભારતીય દર્શનોમાં પણ કશો વિશેષ વિકાસ થયો નથી જે હાલમાં વીસમી સદીના પૂર્વાર્દ્ધમાં થયો છે. ડૉ. રાધાકૃષ્ણ જેવાએ પશ્ચિમનાં દર્શનોનો અભ્યાસ કરીને પૂર્વ અને પશ્ચિમનો સમન્વય કરતું નૂતન વેદાંત દર્શન આપ્યું છે અને એ રીતે ભારતીય દર્શનોમાંના વેદાંત પક્ષને અદ્યતન બનાવવાનો પ્રત્યન કર્યો છે. પરંતુ આધુનિક દર્શન શાસ્ત્રમાંથી ગ્રાહ્ય કે ત્યાજ્યનો વિચાર કરનાર હજુ કોઈ જૈન દાર્શનિક પાક્યો નથી. એ જ્યાં સુધી નહિ પાકે ત્યાં સુધી વાચક યશોવિજયજી જૈન દર્શન વિષે અંતિમ પ્રમાણ રહેશે, પરંતુ વાચક યશોવિજયજીના આત્માને એથી સંતોષ ભાગ્યે જ થાય. તેમણે અષ્ટસહસ્રી જેવા ગ્રંથને દશમી સદીમાંથી બહાર કાઢીને અઢારમી શતાબ્દીનો બનાવી દીધો તે તેમના એ અષ્ટસહસ્રીના વિવરણને જ્યાં સુધી કોઈ વીસમી સદીમાં લાવીને ન મૂકે ત્યાં સુધી એમનો આત્મા અસંતુષ્ટ જ શા માટે ન રહે? જૈન સમાજ તેમના સારસ્વત સત્ર નિમિત્તે એ સુકાઈ ગયેલા વિદ્યાસ્રોતને ફરી સજીવન કરશે તો તેની ભક્તિ સાચી અને મૂલ્યવાન ગણાશે.

नूनं मुमुक्षवः सर्वे, परमेश्वरसेवकाः ।
दूरासन्नादिभेदस्तु, तद्भृत्यत्वं निहन्ति न ॥

સઘળા મુમુક્ષુ આત્માઓ નિશ્ચયે કરીને પરમેશ્વરના સેવકો છે. દૂર, નિકટ આદિનો ભેદ તેમના સેવકપણાને જરા માત્ર હરકત કરતો નથી.

परमात्मपञ्चविंशतिका] [શ્રી. યશોવિજયજી

卐

ન્યાયાચાર્યને વંદન

[લે. પ્રો. હીરાલાલ ર. કાપડિયા એમ. એ.]

કન્હોડુ (કમ્હોડુ) ગામને જન્મદ્વારા ગૌરવાંકિત કરનારા, વેપારી નારાયણની પત્ની સૌભાગ્યદેવીની કુક્ષિને દિપાવનારા, પદ્મસિંહને સહોદરપદે સ્થાપનારા, પ્રાજ્ઞ નયવિજયને હાથે પ્રતિબોધ પામી પાટણમાં વિ. સં. ૧૬૮૮ માં યુવાનીના પ્રવેશ પહેલાં જ પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ કરીને જશવંત મટીને 'યશોવિજય' બનનારા, વિજયદેવસૂરિ પાસે વડી દીક્ષા લેનારા, વિ. સં. ૧૬૯૯ માં 'અષ્ટાવધાની' તરીકેની નામના મેળવનારા, કેટલેક વર્ષ પછી ઔરંગઝેબના સૂબા મહોબતખાનની સમક્ષ અઢાર અવધાન કરી એને આનંદિત કરી અને આશ્ચર્યચકિત કરનારા, પોતાના ગુરુ નયવિજયની સાથે કાશી જનારા, ત્યાં ત્રણ વર્ષ રહી શાહ ધનજી સૂરાના સદ્‌દ્રવ્યની સહાયતાથી એક ભટ્ટારક પાસે ન્યાયાદિ વિવિધ અજૈન દર્શનોનો સતત અને સબળ અભ્યાસ કરનારા અને એ જ્ઞાનનો જૈનાગમો સાથે સુભગ સમન્વય સાધનારા, એક સંન્યાસીને વાદમાં પરાસ્ત કરી "ન્યાયવિશારદ" પદવી પ્રાપ્ત કરનારા, આગ્રામાં ચાર વર્ષ વસી તર્કશાસ્ત્રનો વિશિષ્ટબોધ મેળવનારા, 'વીસસ્થાનક' તપ કરી સંયમને શોભાવનારા, વિજયપ્રભસૂરિના વરદ હસ્તે વિ. સં. ૧૭૧૮માં વાચક (ઉપાધ્યાય) પદવીથી અલંકૃત બનનારા, જૈન જગતમાં નવ્ય ન્યાયના શ્રીગણેશ માંડનારા, સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત ભાષામાં તેમજ ગૂર્જરાદિ લોકગિરામાં મહામૂલ્યશાળી અનેકવિધ આશરે સહીસો કૃતિઓ રચનારા, ન્યાયાચાર્યનું પદ પ્રાપ્ત કરનારા, "લઘુ હરિભદ્ર"નું માનવંતુ બિરુદ ધરાવનાર, "દ્વિતીય હેમચન્દ્ર" તરીકે સમ્માનિત થનારા, ત્રિવિધ સ્થવિરતાને વરનારા, ઉપાધ્યાય વિનયવિજયગણિના વિશ્વાસ-પાત્ર બનનારા, તત્ત્વવિજય આદિ શિષ્યોથી શોભનારા, વિ. સં. ૧૭૪૩ માં ડભોઈમાં પંચાવન વર્ષે સ્વર્ગે સંચરનારા, અને એ જ નગરીમાં વિ. સં. ૧૭૪૫ ની પાદુકા સ્થાપનાદ્વારા ચિરંજીવ બનનારા ગૂર્જરદીપક, શાસનદીપક, સત્યગવેષક, નિર્ભય અને સમર્થ સમાલોચક, સમયવિચારક, "ઐં" પદના પ્રસ્થાપક, યોગવિશારદ, પ્રતિભાશાલી, ગુણાનુરાગી, સ્યાદ્‌વાદી, સાહિત્યસ્વામી અને તાર્કિક-શિરોમણિ યશોવિજયગણિને આદર અને સાનન્દ કોટિશઃ વંદન.

> अमः ध्यानाश्रयः सर्वो, यत्कालेन फलेग्रहिः ।
> ध्यातव्योऽयमुपास्योऽयं, परमात्मा निरञ्जनः ॥
>
> આત્મ સંબંધી સઘળો પરિશ્રમ જેનું જ્ઞાન થયા બાદ જ ફળવાળો બને છે તે એક નિરંજન પરમાત્મા જ ધ્યાન કરવા લાયક તથા ઉપાસના કરવા લાયક છે.
>
> [illegible]] [શ્રી યશોવિજયજી
>
> 卐

તાર્કિક–હરિયાળી

[સ્વોપજ્ઞ વિવરણ સહિત]

[લે. પ્રો. હીરાલાલ ર. કાપડિયા એમ. એ.]

કીર્તિ મધ્યસ્થ! તારી અનેરી
કરે કલંકિત શાને રે?
રક્ષ રક્ષ મુજ અનુજ બંધુને
વિનવું છું હું કંઠી રે.–૧
વિનતિ સ્વીકારી અંતઃસ્થે આ
ધાયો એને શીર્ષે રે;
અગ્રિમ વર્ણે કર્યું સમર્થન
પ્રસરે શ્લાઘા વિશ્વે રે.–૨
વર્ગી એનો રાચ્યો પૂરો
માથે મૂકી ટોપી રે,
દંડો ઝાલી ભૂલથી ઊંધો
સત્વર આવી મળતો રે.–૩
વિજયપતાકા ફરફર ફરકે
તાર્કિકકેરા નામે રે;
એની વીણા ગુર્જરી રણકે
સંસ્કૃત સ્વાંગ સજીને રે.–૪
નવ્ય ન્યાયની કીધી પ્રતિષ્ઠા
જૈન જગતમાં જેણે રે;
એ વાચકની આ હરિયાળી
રચી રસિકના નંદે રે.–૫

વિવરણ

હે મધ્યસ્થ! તારી અદ્ભુત કીર્તિને તું શા માટે કલંકિત કરે છે? મારા પછી જન્મેલા મારા બાંધવને તું બચાવ, બચાવ. આ પ્રમાણેની વિજ્ઞપ્તિ કંઈ જોડે કંઠસ્થાની વ્યંજન-પ્રસ્તુતમાં 'ક' કરે છે.

આ હરિયાળીના ઉકેલનું સૂચન ‘ કીર્તિ ’ શબ્દથી કરાયું છે. ‘ ક્ ’ના અનુજ તરીકે ખ્ થી ઙ્ સુધીના વ્યંજનો વર્ણવી શકાય. આ પૈકી એકને મધ્યસ્થ અર્થાત્ અંતઃસ્થ ગળી જવા માગે છે. એ જોઈ ‘ કંઠી ’ કહે છે કે તને મધ્યસ્થને આ શોભે નહિ. ૧

પ્રથમ પદ્યગત ‘ મધ્યસ્થ ’ ‘ અંતઃસ્થ ’ સમજવાનો છે એ વાત બીજા પદ્યનો પ્રારંભ વિચારનારને ઝટ સ્ફુરે તેમ છે. અંતઃસ્થ તરીકે ય્, ર્, લ્ અને વ્ એ ચાર અક્ષરો સુપ્રસિદ્ધ છે. આ પૈકી એકને ‘ . ’ તરફથી વિજ્ઞપ્તિ કરાઇ છે કે મારા એક બંધુને તું ગળી ન જતો–તારા પેટમાં સમાવી ન દેતો. આ સાંભળી એ અંતઃસ્થ એ વ્યંજનને પોતાને માથે સ્થાપે છે. આ ઉપરથી એ અંતઃસ્થ તે ‘ ય્ ’ છે અને એણે ગળી જવા ધારેલો, પરંતુ આખરે મસ્તકે સ્થાપેલો અક્ષર તે ‘ ગ્ ’નો અંશ છે એ વાત ફલિત થાય છે અને એટલા પૂરતો હરિયાળીનો ઉકેલ થાય છે.

સર્વ વર્ણોમાં અ અગ્રિમ ગણાય છે. એ આ ‘ ય્ ’ના સત્કૃત્યનું સમર્થન કરે છે અર્થાત્ ‘ ય્ ’ સાથે ભળી જાય છે. આમ ‘ ય ’ એવું રૂપ બને છે. વિશ્વમાં કીર્તિ પ્રસરે છે એ દ્વારા હરિયાળીમાં ગુંથાયેલા નામની શરૂઆત ‘ ય ’થી થાય છે એની પ્રતીતિ કરાવાઈ છે, કેમકે ‘ યશ ’ એ શ્લાઘાનો પર્યાય છે. ૨

‘ ય્ ’ તાલવ્ય છે. આવો એક તાલવ્ય તે ‘ શ્ ’ છે એ રાજી થવાથી ‘ ય ’ની પાસે દોડતો દોડતો આવે છે. આવતી વેળા એ, આજે જેમ કેટલાક જુવાનિયાઓ અને કોઈ કોઈ વાર વૃદ્ધો પણ માથું ઉઘાડું રાખી ફરે છે તેમ ન કરતાં માથે ટોપી ધારણ કરે છે. અહીં મેં ‘ માત્રા ’ને ‘ ટોપી ’ કહી છે. એવી રીતે કાનાને ‘ ઊંધો રાખેલો દંડો ’ કહ્યો છે. આ બે બાબતનો ‘ શ્ ’ સાથે મેળ સાધતાં ‘ શો ’ રૂપ નિષ્પન્ન થાય છે. ૩

ચોથા પદ્યનો પ્રારંભ ‘ વિજય ’થી થાય છે. એની પતાકા ચારે બાજુ તાર્કિકના નામે ફરકે છે. આથી ‘ યશો ’ સાથે વિજયનું જોડાણ અભિપ્રેત છે એમ સૂચવાયું છે અને એ નામ તાર્કિકનું હોવું જોઈએ એમ કહી એ સાચું છે કે કેમ તેનો નિર્ણય કરવાનું સાધન પૂરું પડાયું છે.

તાર્કિક યશોવિજયગણિએ દ્રવ્યગુણપર્યાયનો રાસ રચી એને સ્વોપજ્ઞ બાલાવબોધથી વિભૂષિત કર્યો છે; આનો ઉપયોગ દ્રવ્યાનુયોગતર્કણાની રચનામાં કરાયો છે એ બાબત મેં ચોથા પદ્યની બે અંતિમ પંક્તિમાં આલંકારિક રીતે રજૂ કરી છે. યશોવિજયજીની કૃતિને ‘ વીણા ’ કહી છે, અને એને આધારે ભોજસાગર દ્વારા યોજાયેલી કૃતિ સંસ્કૃતમાં હોવાથી એને–એ વીણાને સંસ્કૃત સ્વાંગ સજેલી વર્ણવી છે. ૪

સુજ્ઞ પાઠક તો આટલેથી જ હરિયાળીનો પૂરેપૂરો ઉકેલ કરવા સમર્થ બને છે તેમ છતાં એ નામ જૈન જગત્‌માં નવ્ય ન્યાયના શ્રી ગણેશ માંડનારા એક ઉત્તમ વાચકનું છે એ વાત પાંચમા પદ્યમાં સ્પષ્ટપણે કહી રહીસહી શંકાનું ઉન્મૂલન કરાયું છે. અંતિમ પંક્તિ આ હરિયાળીના યોજકનો–મારો સ્વલ્પ પરિચય પૂરો પાડે છે, મારા સ્વર્ગત પિતાના નામનું દ્યોતન કરે છે. ૫

વાચક જશનું વંશવૃક્ષ

[લે. પ્રો. હીરાલાલ ર. કાપડિયા એમ. એ]

જૈન શાસનની વિજયપતાકા ફરકાવનારાઓમાંના એક અગ્રગણ્ય પ્રાતઃસ્મરણીય મુનિવર્ય તરીકે 'ન્યાયવિશારદ' 'ન્યાયાચાર્ય' ઉપાધ્યાય યશોવિજયગણિનું નામ ખૂબ જાણીતું છે. એમણે પોતાની કેટલીક [1]ગુજરાતી કૃતિઓમાં પોતાનો 'જશ' એવા નામે ઉલ્લેખ કર્યો છે. ઉપાધ્યાય વિનવિજયગણિએ વિ. સં. ૧૭૩૮ માં 'શ્રીપાલ રાજાનો રાસ' રચવા માંડ્યો હતો, એનો છેવટનો ભાગ આ ન્યાયાચાર્યે એ ગણિ કાળધર્મ પામતાં પૂર્ણ કર્યો છે. એમાં એમણે પોતાને અંગે નીચે મુજબનો ઉલ્લેખ ચોથા ખંડની બારમી ઢાળના અંતમાં કર્યો છેઃ—

"વાણી વાચક જશતણી, કોઈ નયે ન અધૂરી રે."

આ "વાચક જશ" તે 'ન્યાયાચાર્ય' જ છે. એ વાત આ રાસની અંતિમ ઢાલમાં એમણે પોતાનો જે પરિચય આપ્યો છે તે ઉપરથી ફલિત થાય છે. અહીં એમણે કહ્યું છે કે—

"શ્રી નયવિજયવિબુધપયસેવક, સુજસવિજય ઉવજ્ઝાયાજી."

આમ એઓ પોતાને 'જસવિજય' પણ કહે છે. '[2]જસવિજય' નામની એક બીજી પણ વ્યક્તિ થઈ છે અને એમણે ધર્મઘોષસૂરિએ ૩૨ ગાથામાં રચેલી લોગાનલિયાનો બાલાવબોધ વિ. સં. ૧૬૬૫ માં રચ્યો છે. આ બાલાવબોધના કર્તાનો જ 'ન્યાયાચાર્ય' તરીકે 'પ્રતિમાશતક'ની પ્રસ્તાવનામાં જૈનાચાર્ય શ્રી. વિજયપ્રતાપસૂરિએ વીર સંવત ૨૪૪૬માં ઉલ્લેખ કર્યો હતો અને ત્યારબાદ એવો ઉલ્લેખ 'જૈન સ્તોત્ર સંદોહ' (ભા. ૧)ની પ્રસ્તાવના (પૃ. ૯૦)માં પણ કરાયો છે, પરંતુ એ વાત વિચારણીય જણાય છે.

તત્ત્વાર્થસૂત્ર ઉપર ટબ્બો રચનારનું નામ પણ યશોવિજય છે, પણ પં. સુખલાલ વગેરેએ એમને ન્યાયાચાર્યથી ભિન્ન ગણ્યા છે, તેમ છતાં એ ટબ્બાની હાથપોથીઓ તપાસવી જોઈએ જેથી આ પ્રકારના નિર્ણયને અંતિમ ગણવામાં કશી હરકત છે કે કેમ તે વિષે ફરીથી વિચાર કરવાનો રહે નહિ.

---

૧. એમની કેટલીક પાઇય કૃતિઓની રૂપરેખા 'પાઇય (પ્રાકૃત) ભાષાઓ અને સાહિત્ય'માં આલેખી છે, જ્યારે સંસ્કૃત કૃતિઓ વિષે મેં 'જૈન સાહિત્યનો સંસ્કૃત ઇતિહાસ' એ નામના પુસ્તકમાં વિચાર કર્યો છે.

૨. હીરપ્રશ્નની એક હાથપોથી વિ. સં. ૧૬૫૨ માં લખાયેલી મળે છે. આ હીરપ્રશ્નમાં એક પ્રશ્નકારનું નામ 'યશોવિજયગણિ' એમ અપાયેલું છે.

ન્યાયાચાર્યે પોતાની વિવિધ કૃતિઓમાં પોતાને નયવિજયના શિષ્ય અને પદ્મવિજયના સહોદર તરીકે ઓળખાવ્યા છે.[1] 'સુજસવેલી' પ્રમાણે ન્યાયાચાર્યના પિતાનું નામ નારાયણ અને તેમની માતાનું નામ સૌભાગ્યદેવી છે. એ હિસાબે સાંસારિક પક્ષે એમનું વંશવૃક્ષ નીચે મુજબ દર્શાવી શકાય:—
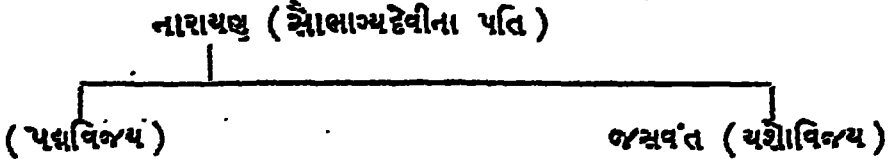
ન્યાયાચાર્યે 'પ્રતિમાશતક' ઉપર સ્વોપજ્ઞ વૃત્તિ રચી છે અને એના અંતમાં પોતાના ગુરુ, પ્રગુરુ વગેરેનો પરિચય આપ્યો છે. અહીં એમણે હીરવિજયસૂરિથી શરૂઆત કરી છે. એમના પછી એમણે કલ્યાણવિજયનો ઉલ્લેખ કરી, એ કલ્યાણવિજયના શિષ્ય તરીકે લાભવિજયના નામનો નિર્દેશ કર્યો છે. એમના બે શિષ્ય તરીકે જીતવિજય અને નયવિજયનાં નામ આપ્યાં છે અને એમના ચરણકમળનો આશ્રય લેનાર તરીકે પોતાનો નિર્દેશ કર્યો છે. આ પરંપરાની સાથે સાથે "શ્રીપાલ રાજાના રાસ" નામની કૃતિમાં એમણે વિનયવિજયગણિનો જે પરિચય આપ્યો છે તેનો વિચાર કરતાં એમનું વંશવૃક્ષ નીચે મુજબ રજૂ કરી શકાય:—
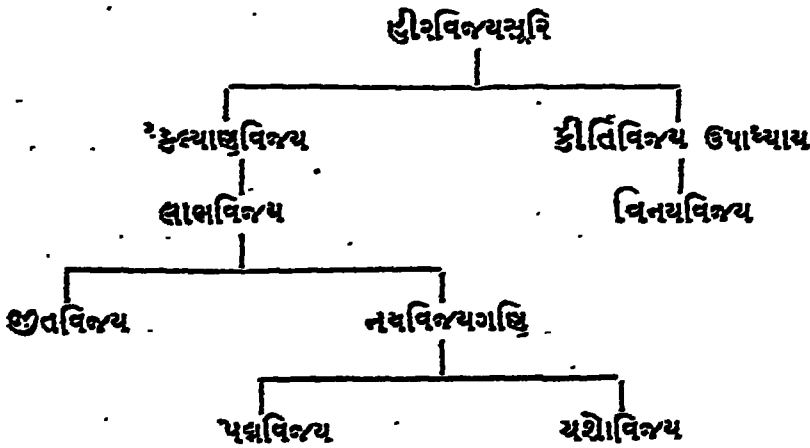
૧. આની નોંધ મેં "ન્યાયાચાર્યને વંદન" એ શીર્ષક મારા લેખમાં લીધી છે. એમાં મેં એમની સૂત્રાત્મક જીવનરેખા આલેખી છે. જુઓ : આ ગ્રંથનું પૃષ્ઠ : ૬૮

૨. એમના પરિચય માટે જુઓ જૈ. ગુ. ક. (ભા. ૨. પૃ. ૨૦–૨૧).

૩. એમણે 'વૈરાટ' નગરમાં 'ઇન્દ્રવિહાર' નામે રચાયેલા પ્રાસાદ પૈકી પાર્શ્વનાથ-મંદિરની પ્રશસ્તિ રચી છે.

આ તો એમની ગુરુપરંપરાની હકીકત ગણાય. એમના શિષ્ય પ્રશિષ્ય વગેરેનાં નામ માટે તો 'પ્રતિમાશતક'ની ઉપર્યુક્ત પ્રસ્તાવનામાં 'આઠ દૃષ્ટિની સજ્ઝાય' અને એના ટબ્બાને લિપિબદ્ધ કરનાર દેવવિજયે પુષ્પિકામાં કરેલા ઉલ્લેખની જે નોંધ લેવાઈ છે તેનો ઉપયોગ કરવો ઘટે. એ ઉલ્લેખ ઉપરથી જાણી શકાય છે કે યશોવિજયગણિના એક શિષ્યનું નામ ગુણવિજયગણિ છે. એમના શિષ્ય કેસરવિજયગણિ છે. એમના શિષ્ય વિનીતવિજયગણિ છે અને એમના શિષ્ય દેવવિજયગણિ છે. આ દેવવિજયગણિએ વિ. સં. ૧૭૯૬ માં ઉપર્યુક્ત સજ્ઝાય લખી છે.

'જૈન ગુર્જર કવિઓ' (ભા. ૨. પૃ. ૨૨૪–૨૨૭) માં તત્ત્વવિજયનો ઉલ્લેખ છે. અહીં એમણે વિ. સં. ૧૭૨૪ માં રચેલ "અમરદત્ત મિત્રાનંદનો રાસ" અને "ચોવીશી (ચતુર્વિંશતિ જિનભાસ)" એ બે કૃતિની નોંધ લીધી છે. આ તત્ત્વવિજયે અહીં પોતાને નયવિજયના શિષ્ય વાચક જસવિજયના શિષ્ય તરીકે ઓળખાવ્યા છે. આ ઉપરથી ન્યાયાચાર્યના એક અન્ય શિષ્યનું નામ તત્ત્વવિજય હતું એ જાણી શકાય છે. વળી, અહીં (પૃ. ૨૨૭ માં) તત્ત્વવિજયના ભાઈ તરીકે લક્ષ્મીવિજયગણિનો ઉલ્લેખ છે.

ન્યાયાચાર્યે 'સીમંધરસ્વામીનું સ્તવન' (૧૨૫ ગાથાનું) જે રચ્યું છે તેની એક નકલ એમના સંતાનીય પ્રતાપવિજયે કરી છે. આ પ્રતાપવિજયે એના અંતમાં પોતાનો પરિચય આપ્યો છે.[1] એ ઉપરથી જોઈ શકાય છે કે એઓ સુમતિવિજયના શિષ્ય અને ગુણવિજયગણિના પ્રશિષ્ય થાય છે. આ ગુણવિજય તે ન્યાયાચાર્યના શિષ્ય છે.

આ ઉપરથી ન્યાયાચાર્યના શિષ્ય[2]–પ્રશિષ્યાદિનો નિર્દેશ નીચે મુજબ થઇ શકેઃ—

●

---
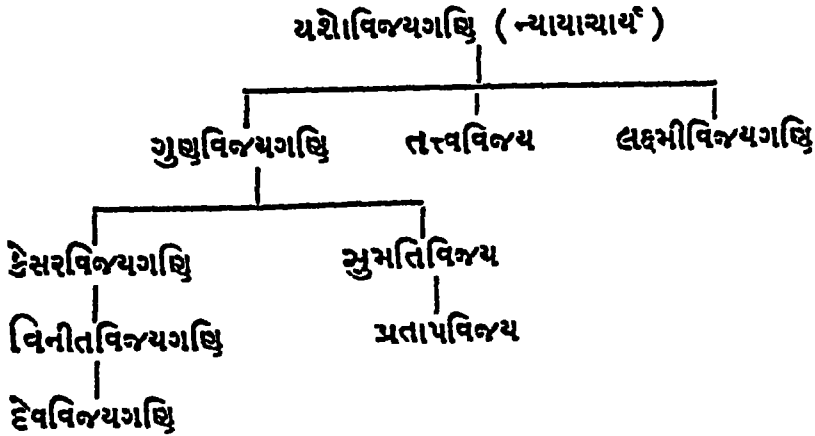
૧. જુઓ જૈ. ગૂ. ક. (ભા. ૨. પૃ. ૩૯).

૨. શ્રી કાપડિયાએ ઉપાધ્યાયજીના જે શિષ્યોનાં નામો જણાવ્યાં છે તે બાબતમાં વધુ વિચારણા કરવી જરૂરી છે, જે યથાપ્રસંગે કરાશે. સંપા.

શ્રી. યશોવિજયજી મહારાજની જન્મભૂમિ કનોડા

[લેખક : શ્રીયુત કનૈયાલાલ ભાઈશંકર દવે]

ઉત્તર ગુજરાતનો સારોયે પ્રદેશ ઐતિહાસિક દૃષ્ટિએ કેટલીયે વિશિષ્ટતાઓ ધરાવતો હોઈ, તેનાં શહેરો, ગામડાંઓ, તીર્થો અને મંદિરોના ઇતિહાસથી ગુજરાતના સાંસ્કૃતિક ઇતિહાસમાં અપૂર્વ ફાળો નોંધાવ્યો હોવાનું માલૂમ પડ્યું છે. વીર વનરાજે પાટણની સ્થાપના કર્યા પછી રાજધાની નિકટના આ સમગ્ર પ્રદેશમાં, રાજકીય અને સાંસ્કારિક દૃષ્ટિએ ચેતનાનાં પૂર આવતાં, ત્યાંનો સમાજ મહાનગરની છત્રછાયામાં નિવાસ કર્યા બદ્દલનો ગર્વ અનુભવવા લાગ્યો. મૂળરાજથી આરંભી સિદ્ધરાજ અને કુમારપાળના રાજ્યકાળ દરમ્યાન, આ પ્રદેશનો પ્રજાવર્ગ ગુજરાતની બીજી પ્રજાઓમાં પટ્ટણી કે પાટણવાડિયા તરીકે ભાગ્યશાળી મનાવવા લાગ્યો. ટૂંકમાં અણહિલપુરની સ્થાપના થવાથી, ઉત્તર ગુજરાતની સમગ્ર પ્રજાએ સાંસ્કૃતિક દૃષ્ટિએ ખૂબ વિકાસ સાધ્યો હોવાના કેટલાયે પુરાવાઓ આજે આપણને મળી આવે છે. તેના કારણે જ આ વિભાગમાં ચારે બાજુ ઇતિહાસ, કલા, અને પ્રાચીન સંસ્કૃતિનાં કેટલાંયે અવશેષો વેરવિખેર થયેલાં જ્યાં ત્યાં પડેલાં જોવામાં આવે છે. આવા પ્રાચીન ઐતિહાસિક સ્મારકોમાં "કનોડા" ગામ જે ષડ્દર્શનવેત્તા, ન્યાયાચાર્ય, ન્યાયવિશારદ, મહોપાધ્યાય પૂ. યશોવિજયજી મહારાજનું જન્મસ્થાન છે, તેની ઐતિહાસિક તેમજ સામાજિક દૃષ્ટિએ સામાન્ય પિછાન અત્રે રજૂ કરવાનો પ્રયત્ન કરવામાં આવ્યો છે.

કનોડા ગામ ક્યારે વસ્યું અને કોણે વસાવ્યું, તેની ઐતિહાસિક તવારીખ કોઈ સ્થળેથી મળી નથી પરંતુ તે દશમા—અગિયારમા સૈકાથી પણ પ્રાચીન હોવાના પુરાવાઓ ઉપલબ્ધ થાય છે. ચૌલુક્યોના રાજ્યકાળમાં પ્રાંતો, જિલ્લાઓ અને તાલુકાઓને મંડલ, વિષય અને પથક તરીકે ઓળખવામાં આવતાં. અર્થાત્ તે કાળે તેનાં આવાં નામો રાખવામાં આવેલાં હતાં એમ પ્રાચીન તામ્રપત્રો અને શિલાલેખોના આધારે જાણી શકાય છે. [1]પરમ પૂ. યશોવિજયજી મહારાજનું જન્મસ્થાન કનોડા ગામ ગંભૂતા પથકમાં આવેલું હતું, એમ ચૌલુક્ય કર્ણદેવના વિ. સં. ૧૧૪૦ ના એક તામ્રપત્ર ઉપરથી માલૂમ પડે છે.[2]

ગંભૂતા એ હાલના ગાંભૂ ગામનું સંસ્કૃત રૂપ છે. તે ઘણું જ પ્રાચીન હોઈ પૂર્વ

---

૧. "ગુજરાતના ઐતિહાસિક શિલાલેખો" ભા. ૨, પા. ૧૧૮, ૧૪૬, ૧૫૮, ૧૬૧ વગેરે

૨. "બુદ્ધિ પ્રકાશ" પુ. ૯૮, ફેબ્રુઆરી ૧૯૫૧ 'સોલંકી યુગનાં બે અપ્રકટ તામ્રપત્રો'.

કાળમાં નાનું સરખું શહેર હશે એમ જણાય છે. કારણ કે તેને તાલુકાના મુખ્ય સ્થળ તરીકે પસંદ કરવામાં આવ્યું હતું. આ પથકમાં કુલ ૧૪૪ ગામ આવેલાં હતાં.[૩] આ જ ગામમાં રહી શીલાંકાચાર્યે (જૈન) 'આચારાંગ સૂત્ર' ઉપર ટીકા લખી હતી. શીલાંકાચાર્ય ઇસ્વીસનના આઠમા સૈકામાં થયા હોવાનું માનવામાં આવે છે, એટલે ગાંભૂ ગામ આઠમા સૈકા પૂર્વેનું હતું એમ તો ચોક્કસ જણાય છે. ગુજરાતની રાજધાની અણહિલપુરની સ્થાપના સમયે તે વિદ્યમાન હતું. વનરાજના મહામાત્ય નિન્નય શેઠને ગાંભૂથી ત્યાં બોલાવવામાં આવ્યા હતા એમ 'ચંદ્રપ્રભચરિત્ર'ની અંત્ય પ્રશસ્તિ ઉપરથી જાણી શકાય છે. ટૂંકમાં ગાંભૂ–સં૦ गंभूता એ ઐતિહાસિક ગામ છે અને આઠમા–નવમા સૈકામાં તે સારી વસ્તી ધરાવતું સમૃદ્ધ ગામ હતું. એટલું જ નહિ, પણ ત્યાં અને તેની આજુબાજુના પ્રદેશમાં જૈનોની મોટી વસ્તી હોવાના કારણે જૈન ધર્મનો પ્રચાર ત્યાં સારી રીતે ફેલાયો હોવાનું જાણી શકાય છે. સં. ૧૧૪૦ નું કર્ણદેવનું દાનપત્ર આ હકીકતને પુરવાર કરતું હોઈ ગાંભૂ નજદીક આવેલ ટંકાવવી હાલના ટાકોડી ગામના શ્રીસુમતિનાથ ભગવાનને (મંદિરને) જમીનનો અમુક ભાગ અર્પણ કરવામાં આવ્યો હોવાનું તેમાં જણાવ્યું છે.

આ તામ્રપત્રમાં જણાવેલી દાનભૂમિ કનોડા ગામની પૂર્વ સીમામાં આવેલી હોવાની તેમાં નોંધ છે. તેમાં કનોડાનું કાણોદા નામ આપેલું હોવાથી, કનોડાનું પ્રાચીન નામ કાણોદા હતું એમ જાણી શકાય છે. ગંભૂતા અર્થાત્ ગાંભૂ અને કનોડા બંને નજીકમાં જ આવેલાં હોઈ ગાંભૂથી પૂર્વમાં કનોડા આશરે ચાર માઈલ દૂર આવેલું છે. મહેસાણાથી પાટણ જતી રેલ્વે લાઈનમાં બીજું સ્ટેશન ધીણોજ આવે છે. ત્યાંથી પશ્ચિમમાં આશરે ચાર માઈલ દૂર કનોડા ગામ રૂપેણ નદીના કિનારા ઉપર વસેલું છે. 'શ્રીસ્થળપ્રકાશ'માં તેનું કનકાવતી નામ આપેલ હોઇ, યાજ્ઞિક (જાની) સંજ્ઞાવાળા ઔદિચ્ય બ્રાહ્મણોને મૂળરાજે દાનમાં આપ્યાનો તેમાં ઉલ્લેખ છે. 'શ્રીસ્થળપ્રકાશ'નું કનકાવતી નામ કનોડાનું સંસ્કૃત નામ વિદ્વાનોએ બતાવ્યું હોવાનું જણાય છે. પરંતુ લોકજીભે, અને પ્રજાવર્ગમાં તો તેનું કનોડા કે કાણોદા નામ જ વધુ પ્રચારમાં આવ્યું હતું, એમ તામ્રપત્ર ઉપરથી જાણી શકાય છે. આ દાન લેનારા યાજ્ઞિકો (જાનીઓ) આજે પણ કનોરિયા જાની તરીકે ઓળખાય છે. તેઓનાં કેટલાંયે કુટુંબો પાટણ, અમદાવાદ, સિદ્ધપુર, હળવદ વગેરે ગુજરાત–કાઠિયાવાડનાં કેટલાંક ગામોમાં અહીંથી જઈ સેંકડો વર્ષોથી નિવાસ કરી રહ્યાં છે. આજે આ ગામમાં પણ તેઓનાં કેટલાંક ઘરો વિદ્યમાન છે.

આ ગામ મૂળરાજે બ્રાહ્મણોને દાનમાં આપ્યું હતું એમ 'શ્રીસ્થળપ્રકાશ' કહે છે. પરંતુ દાનપત્રના આધારે ત્યાં વાણિયાઓની પણ સારી વસ્તી હતી એમ જાણવા મળે છે. આગળ ઉલ્લેખ આપ્યો છે તે સોલંકી કર્ણદેવના દાનપત્રમાં, જે કનોડા ગામની ભૂમિ-જમીનનું દાન આપેલું છે, તેની ચતુઃસીમા જણાવતાં આજુબાજુનાં ખેતરો ધરાવતા તેના માલિકોનાં નામો આપ્યાં હોઈ, વણિક હરસુખા, વણિક હરીયા, વણિક આમ્રિયથ, વણિક

૩. " स्वभुज्यमानगंभूताप्रतिबद्धचतुश्चत्वारिंशदधिकग्रामशतान्तःपतितः "......[illegible]

પાલ, વિશ્વરૂપ વગેરે વૈશ્યોનાં નામો તેમાં લખેલાં છે. આથી ત્યાં વાણિયાઓની સારી વસ્તી હતી એમ તો જરૂર લાગે છે.

આજ કનોડાની ભૂમિમાં પરમ પૂજ્ય યશોવિજયજી મહારાજ નારાયણ નામના શ્રેષ્ઠીને ત્યાં સૌભાગ્યદેવી માતાથી પ્રાદુર્ભાવ પામ્યા હતા. પૂર્વના સંસ્કારબળે અને નય-વિજયજી જેવા ગુરુના સદુપદેશથી વૈરાગ્ય પ્રાપ્ત થતાં, પોતાનાં બંને બાળકો–જશવંત, અને પદ્મસિંહને નારાયણ શ્રેષ્ઠીએ ગુરુને સોંપ્યાં. આ બંને બાળકોને પાટણ લાવી, સંસ્કારી બનાવતાં દીક્ષા આપવામાં આવી, અને બંનેનાં અનુક્રમે યશોવિજય તથા પદ્મવિજય નામો રાખ્યાં. યશોવિજયજીએ કાશી જઈ ન્યાય, વ્યાકરણ, સાહિત્ય, અલંકાર અને દર્શનોનો ઊંડો અભ્યાસ સાધી ન્યાયવિશારદ તેમજ ન્યાયાચાર્યની મોટી ઉપાધિઓ (બિરૂદો) પ્રાપ્ત કરી. તેમને પોતાની વિદ્યાનો પ્રચાર કરવા સેંકડો ગ્રંથો અનેક વિષયો ઉપર લખ્યા છે, જે તેમની અગાધ વિદ્વત્તા અને પ્રકાંડ પાંડિત્યનો ખ્યાલ આપતાં, તેમની ઉદ્યમ શક્તિનો સંપૂર્ણ પરિચય કરાવે છે. આચાર્ય હેમચંદ્ર અને હરિભદ્રસૂરિની હરોળના આ મહાન્ આચાર્યે જૈન, જૈનેતરોના દર્શનશાસ્ત્ર ઉપર અનેક ગ્રંથો લખી મહાન ઉપકાર કર્યો છે. એટલું જ નહિ, પણ તેમની જન્મભૂમિ કનોડા જે એક નાનકડું ગામડું ઉત્તર ગુજરાતના ખૂણામાં આવેલું છે તેને ખ્યાતકીર્તિ બનાવ્યું છે.

કનોડા અને તેની આજુબાજુનો પ્રદેશ આજે તો શુષ્ક દેખાય છે, પરંતુ ત્યાંનાં પ્રાચીન અવશેષો જોતાં, પૂર્વકાળમાં તે ખૂબ સંસ્કારી હશે એમ તો જરૂર લાગે છે. આ ગામમાં શિલ્પ સ્થાપત્યના નિયમ પ્રમાણે તૈયાર થયેલ અગિયારમા–બારમા સૈકાનું એક પ્રાચીન મંદિર આજે પણ તળાવના કિનારા ઉપર વિદ્યમાન છે. તેના સ્તંભો, તોરણો, જંઘાઓ, ઘૂમટો, અને કક્ષાસનો વગેરેમાં કલાકારોએ અપૂર્વ કલાસૌષ્ઠવ રજૂ કર્યું હોઈ, કલારસિક વિદ્વાનોને મુગ્ધ બનાવે તેવું તેનું સ્થાપત્ય તેમજ રચનાવિધાન બનાવેલું છે. ઉત્તર ગુજરાતમાં આવાં કેટલાંયે પ્રાચીન મંદિરો છે પણ આ મંદિરનું સ્થાપત્ય અનોખું અને કલાવિધાનની દૃષ્ટિએ અનન્ય છે. આ મંદિર ક્યારે બંધાયું અને કોણે બંધાવ્યું તેની માહિતી આપનાર એક પણ શિલાલેખ કે પ્રશસ્તિ મળી નથી. પરંતુ તેનું ભાસ્કર્ય, સ્થાપત્ય, અને કલાવિધાન જોતાં તે બારમા–તેરમા સૈકાથી અર્વાચીન તો નથી જ. અર્થાત્ તે બારમા–તેરમા સૈકામાં બંધાયું હશે એમ ચોક્કસ લાગે છે. આ પ્રાચીન કલાપ્રાસાદના ગર્ભગૃહની દ્વારશાખાઓ, અને મંડોવરમાં કોતરેલાં શિલ્પો ઉપરથી તે દેવીનો પ્રાસાદ હોવાનું જણાય છે. આ પ્રાસાદના ગર્ભદ્વારની શાખાઓમાં બંને બાજુએ દેવીઓનાં રૂપો કોતરેલાં છે. શિલ્પમાં એવો નિયમ છે કે, જે દેવનો ગર્ભદ્વાર બનાવવો હોય તેનાં રૂપો તેની શાખામાં કોતરવાં. આથી આ દેવીનો પ્રાસાદ છે તેમાં શંકા નથી. 'સ્કંદ'ના 'ધર્મારણ્ય પુરાણ' માં બહુચરણા દેવીનો ઉલ્લેખ મોઢેરાની આસપાસનાં દેવીપીઠોમાં

૪. 'શિલ્પરત્નાકર' રત્ન ૨, શ્લો૰ ૧૮૩

આવેલ હોઇ, મોઢેરાથી સાત કોસ દૂર ઉત્તરમાં તેનું સ્થાન જણાવ્યું છે.[૫] તેમાં જણાવેલ બહુસુપણી તે જ આ બહુસ્મરણા દેવીનું સ્થાન છે. કનોડિયા જાની કુટુંબની બહુસ્મરણા દેવી કુલાંબા ગણાતી હોઈ, તેનો જ આ પ્રાચીન પ્રાસાદ શિલ્પસ્થાપત્યનો એક અપ્રતિમ દેવીપ્રાસાદ છે.

આ મંદિર પથ્થરબંધ બાંધેલ હોઈ શિલ્પસ્થાપત્યના નિયમે તેનું કલાવિધાન, યોગ્ય માન અને પદ્ધતિપુરઃસર બનાવેલું છે. મંદિરની શરૂઆતમાં ફરતી જગતી (ઓટલો) બનાવેલ હોઈ, તેના ઉપર બે, ત્રણ પગથિયાં ચડી મંડપમાં દાખલ થઈ શકાય છે. શિલ્પના નિયમે તેની પીઠમાં ભીટ, જાડંબ, કણિકા, છાજિકા, ગ્રાસપટ્ટી, ગજથર, નરથર વગેરે યોગ્ય માન પ્રમાણે બનાવતાં મંડપને ફરતી વેદિકા, આસનપટ્ટ અને કક્ષાયનો બનાવેલાં છે. વેદિકા અને કક્ષાયનોમાં કેટલેક ઠેકાણે રૂપો કોતર્યાં છે, જ્યારે મોટે ભાગે તેમાં ઊભા પટ્ટા કોતરવામાં આવેલ છે.

આ મંદિરના મંડપમાં કુલ ૧૮ સ્તંભો મૂકયા હોઈ, ત્રણ બાજુએ ભદ્રો બનાવ્યાં છે. આવા ત્રણ ભદ્ર અને બાર પદવાળા મંડપને 'પ્રાસાદ શિલ્પ'માં "મૃગનંદન" નામ આપવામાં આવ્યું છે. બધાયે સ્તંભો ભદ્રકની સંજ્ઞાવાળા હોઈ, ઉપરથી અષ્ટાંશ, અને નીચેથી ચતુરસ્ર આકારના બનાવેલ છે. આ બધામાં પલ્લવનાં શિલ્પો ઉત્તમરીતે કોતર્યાં હોઇ, તેની નીચે જુદાં જુદાં પક્ષીઓનાં રેખાંકનો દોરેલાં છે. આ દરેક સ્તંભમાં બ્રેકેટ મૂકવા નાનાં નાનાં સાલ કોચેલાં હોવાથી, તે દરેક ઉપર ફાંસડાઓ મૂકવામાં આવ્યા હશે એમ જરૂર લાગે છે, પરંતુ આ મંદિર જીર્ણ થવાથી તે પડી ગયાં હશે એમ જણાય છે. ડૉ. બર્જેસે કરેલી ઉત્તર ગુજરાતના પ્રાચીન મંદિરોની (સર્વે) તપાસમાં દરેક સ્તંભો ઉપર મદનિકાઓ મૂકેલી હોવાની નોંધ તેના રિપોર્ટમાં છે.[૬] આથી દરેક સ્તંભો ઉપર બ્રેકેટ મૂકેલા હતા, જેમાં જુદા જુદા વાદ્યો વગાડતી મદનિકાઓનાં શિલ્પો કોતરેલાં હતાં, એ હકીકત સ્પષ્ટરીતે જાણી શકાય છે.

મંડપ અને મંદિર વચ્ચે નાનું બલાનક (બલાણ) બનાવેલું છે, જે બંનેને સંલગ્ન કરે છે. ગર્ભદ્વાર ત્રિશાખાયુકત બનાવેલ હોઈ તેમાં વચ્ચે રૂપસ્તંભ અને બંને બાજુ પત્રશાખા તથા પલ્લવશાખા બનાવેલી છે. રૂપસ્તંભમાં બંને બાજુએ દેવીઓનાં રૂપો કોતરેલાં છે. મંદિરની જંઘામાં મોઢેરા તથા સુણકનાં પ્રાચીન મંદિરોથી માફક રૂપકામ ખીચોખીચ રીતે કોતરેલું છે. તેમાં દરેક દિશાના દિક્પાલો ઉપરાંત બ્રહ્માદિ દેવોનાં અને દેવીઓનાં સ્વરૂપો મૂકેલાં છે.

પ્રાચીન શિલ્પસ્થાપત્યની દૃષ્ટિએ આ મંદિર ગુજરાતનાં કલાસ્થાપત્યોમાં સારું એવું સ્થાન ધરાવે છે. ગુજરાતના બીજા પ્રાસાદોની પેઠે કનોડાનું આ મંદિર પણ સુપ્ર-

૫. 'સ્કંદ પુરાણ'—'ધર્મારણ્ય ખંડ' શ્લો. ૫૨

૬. 'આર્કિયોલોજિકલ સર્વે ઑફ નોર્ધન ગુજરાત' પા. ૧૧૨

લમાનોના પ્રહારથી બચી શક્યું નથી અને તેથી આ મંદિરનાં કેટલાંક શિલ્પો, પ્રતિમાઓ વગેરે થોડેવત્તે અંશે ખંડિત થયેલાં હોવાનું જણાય છે. ઈ. સ. ૧૩૯૨–સં. ૧૪૪૮માં કનોડા અને જાંબૂ વચ્ચે, ગુજરાતને પચાવી પડેલ સૂબા રાસ્તીખાન અને દિલ્હીથી નવા નિમાયેલા સૂબા ઝફરખાન વચ્ચે ભારે યુદ્ધ થયું; જેમાં ઝફરખાને રાસ્તીખાનને અહીં હરાવી નસાડ્યો હતો. ત્યારબાદ ગુજરાતનો વહીવટ ઝફરખાને હાથમાં લીધો, અને અહીં જીત થઈ એટલા માટે થોડે દૂર જીતપુર નામનું ગામ તેના સ્મારકમાં વસાવ્યું, જે આજે પણ વિદ્યમાન છે.[7] આ વખતે મુસલમાનોએ આ મંદિરનાં શિલ્પોને ખંડિત કર્યાં હોય એમ માનવાને કારણ છે.

આ ગામમાં બીજું પણ આવું એક કલાધામ ચોમેશ્વર મહાદેવનું મંદિર હતું. જેમ બહુસ્મરણા કનોડિયા જ્ઞાતિની કુલાંબા છે, તેમ તેમના ઇષ્ટદેવ ચોમેશ્વર મહાદેવ જણાય છે. આ ચોમેશ્વર મહાદેવનું એક પ્રાચીન મંદિર હતું. બર્જેસ જ્યારે સં. ૧૯૩૧માં કનોડા આવેલા ત્યારે તેનો મંડપ વિદ્યમાન હતો, જેનું સુંદર ચિત્ર તેમના રિપોર્ટમાં આપેલું છે. આજે તો તેનું નામનિશાન બચવા પામ્યું નથી.

આ સિવાય અહીં મોટપ, વીરતા, ઓચક, જાંબૂ વગેરે નજીકનાં ગામોમાં આવાં સુંદર પ્રાચીન મંદિરોનાં અવશેષો, કલાના રસિક વિદ્વાનોને આમંત્રી રહ્યાં છે. કનોડા ગામ પ. પૂ. યુગપુરુષ યશોવિજયજી મહારાજનું જન્મસ્થાન છે; જેના પુનિત પદસ્પર્શથી તે પવિત્ર અને ખ્યાતકીર્તિ બન્યું છે. તેથી જ તેને તે ઐતિહાસિક અને શિલ્પકલાની દૃષ્ટિએ પણ વધુ મહત્ત્વ ધરાવતું હોઈ, ત્યાં અને ત્યાંની આજુબાજુનાં ગામોમાં કેટલાંયે શિલ્પ-સ્થાપત્યો પ્રાચીન કલાશિલ્પનું પ્રદર્શન રજૂ કરે છે. આવા યુગપુરુષ, અને પવિત્ર સંતની જન્મભૂમિનાં દર્શન કરી, તેમાંથી ઇતિહાસ અને પ્રાચીન શિલ્પકલાની પ્રેરણા પ્રાપ્ત કરવા, ઇતિહાસ-કલાના રસિક વિદ્વાનો જરૂર તેની મુલાકાત લેશે એમ ઇચ્છું છું.

---

૭. 'ગુજરાતનો સાંસ્કૃતિક ઇતિહાસ' ખંડ ૧, પા. ૧૬૨

न रागं नापि च द्वेषं, विषयेषु यदा व्रजेत्।
औदासीन्यनिमग्नात्मा, तदाप्नोति परं महः॥

ઉદાસીન ભાવમાં નિમગ્ન આત્મા જ્યારે વિષયોમાં રાગ કે દ્વેષને પામતો નથી ત્યારે પરમ જ્યોતિને તે પ્રાપ્ત કરે છે.

परमज्योतिःपञ्चविंशतिका] [શ્રી યશોવિજયજી

卐

શ્રીમાન્ યશોવિજયજી

[લેખક : ડૉ. શ્રીયુત ભગવાનદાસ મનઃસુખભાઈ મહેતા,
એમ. બી. બી. એસ. મુંબઈ]

જે વિરલ વિભૂતિરૂપ મહાજ્યોતિર્ધરો જિનશાસનના ગગનાંગણમાં ચમકી ગયા છે, તેમાં શ્રી યશોવિજયજીનું સ્થાન સદાને માટે અમર રહેશે. કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રી હેમચન્દ્રાચાર્યજી પછી અત્યાર સુધીમાં શ્રી આનંદઘનજી આદિના અપવાદ સિવાય તેવી પ્રખર શ્રુત-શક્તિવાળો બીજો તત્ત્વજ્ઞાની મહાત્મા થયો હોય એવું જણાતું નથી. એમની પ્રતિભા કેટલી અસાધારણ હતી અને એમની બુદ્ધિમત્તા કેવી કુશાગ્ર હતી, એ તો એમની સૂક્ષ્મ વિવેકમય તીક્ષ્ણ પર્યાલોચના પરથી સ્વયં જણાઈ આવે છે, અને આપણને તાર્કિકશિરોમણિ કવિકુલગુરુ સિદ્ધસેન દિવાકરસૂરિનું સ્મરણ કરાવે છે. એમની દૃષ્ટિવિશાલતા ને હૃદયની સરલતા કેટલી બધી અદ્‌ભુત હતી અને સર્વ દર્શનો પ્રત્યેની એમની નિરાગ્રહી માધ્યસ્થ્ય વૃત્તિ કેવી અપૂર્વ હતી, તે તો એમની સર્વ દર્શનોની તલસ્પર્શી નિષ્પક્ષપાત મીમાંસા પરથી પ્રતીત થાય છે, અને આપણને ષડ્‌દર્શનવેત્તા મહર્ષિ હરિભદ્રસૂરિની યાદ તાજી કરે છે. વાઙ્‌મયના સમસ્ત ક્ષેત્રને વ્યાપ્ત કરતું એમનું મૌલિક સાહિત્યસર્જન કેટલું બધું વિશાળ છે અને કેવી ઉત્તમ પંક્તિનું છે, તે તો એમના ચલણી સિક્કા જેવા ટંકોત્કીર્ણ પ્રમાણભૂત વચનામૃત પરથી સહેજે ભાસ્યમાન થાય છે, અને આપણને કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રી હેમચંદ્રાચાર્યજીનું પ્રત્યક્ષ દર્શન કરાવે છે. અધ્યાત્મ-યોગ વિષયનો એમનો અભ્યાસ કેટલો બધો ઊંડો છે અને આત્મજ્ઞાન-ધ્યાન પ્રત્યેની એમની અભિરુચિ કેવી અદ્‌ભુત છે, તે તો એમના અધ્યાત્મ-યોગ વિષયક ગ્રંથ-રત્નો પરથી સ્વયંસિદ્ધ થાય છે, અને આપણને યોગિરાજ આનંદઘનજીનું સ્મરણ કરાવે છે. આમ આ મહાત્મા પ્રતિભામાં જાણે સિદ્ધસેન દિવાકરના પુનરવતાર હોય, દાર્શનિક અભ્યાસમાં જાણે લઘુ હરિભદ્ર હોય, શ્રુતજ્ઞાનમાં જાણે બીજા હેમાચાર્ય હોય, અધ્યાત્મવિદ્યામાં જાણે આનંદઘનજીના અનુગામી હોય એમ આપણને સહેજે પ્રતિભાસે છે.

આ પોતાના મૂછાળા અવતારને-'કૂર્ચાલી શારદ'ને દેખી સરસ્વતીને લજ્જાના માર્યો સંતાઈ જવું પડયું! આ સાચેસાચા વ્યાખ્યાનવાચસ્પતિ (જગદ્‌ગુરુ) વાચકવરની વાચા સાંભળી વાચાલ વાચસ્પતિ (ત્રિદશગુરુ) અવાચક થઈ ગયો! વાઙ્‌મયની રંગભૂમિમાં કવિતાસુંદરીને યથેચ્છ નચાવનારા આ સત્કવિની યશકીર્તિથી પ્રતિપક્ષીઓનાં મસ્તક ધોળાં ને મુખ કાળાં થયાં! જ્ઞાનીઓના હૃદયાકાશમાં વહતી અધ્યાત્મ જ્ઞાનગંગાને

આ ભગીરથે અવનિને પાવન કરવા પૃથ્વી પર અવતારતાં પ્રાણીઓનો વિભાવરૂપ પાપમલ ક્યાંય ધોવાઈ ગયો!

આમાં લેશમાત્ર અતિશયોક્તિ નથી. હા, ન્યૂનોક્તિનો સંભવ છે ખરો! એમના સમકાલીન શ્રી કાંતિવિજય મુનિએ 'સુજસવેલી' માં એમને ભવ્ય ભાવાંજલિ અર્પી છે કે—

"કૂર્ચાલી શારદ તણોજી, બિરુદ ધરે સુવિદિત;
બાલપણે અલવે જિણેજી, લીધો ત્રિદશ ગુરુ જીત.
લઘુ બાંધવો હરિભદ્રનો રે, કલિયુગમાં એ થયો બીજો રે;
જ્ઞાતા યથારથ ગુણ સુણી, કવિયણ બુધ કો મત ખીજો રે.
સંવેગી સિરસેહરો, ગુરુ જ્ઞાનરયણનો દરિયો રે;
કુમત તિમિર ઉચ્છેદવા, એ તો બાલારુણ હિતકરિયો રે."

અર્વાચીનોની જેમ તેમના નામ પાછળ ઉપાધિઓની લાંબી લંગાર નહિ લાગેલી છતાં, આ સીધા સાદા 'ઉપાધ્યાયજી' પણ આચાર્યોના આચાર્ય ને ગુરુઓના ગુરુ થવાને પરમ યોગ્ય છે. યશઃશ્રીના પડછાયા પાછળ દોડનારા આધુનિકોની પેઠે તેઓ તેની પરવાહ નહિ કરતા છતાં 'યશઃશ્રી' હજુ તેમનો પીછો છોડતી નથી! અધ્યાત્મરસ પરિણતિ વિના શાસ્ત્રનો ભાર માત્ર વહનારાને નિર્માલ્ય તત્ત્વવિહીન ચર્ચાઓમાં શાસ્ત્રનો શસ્ત્ર તરીકે ઉપયોગ કરનારા આગમધરો તો ઘણાય છે, પણ અધ્યાત્મ પરિણતિપૂર્વક શાસ્ત્રનો રસાસ્વાદ લેનારા ને શાસ્ત્રનો તાત્ત્વિક પ્રતિપાદનમાં કેવળ આત્માર્થે સદુપયોગ કરનારા તેમના જેવા નિરાગ્રહી ને પરિણત સાચા આગમરહસ્યવેદી શ્રુતધરો તો વિરલા જ છે. પ્રસ્તુત શ્રી કાંતિવિજયજીએ કહ્યું છે તેમ 'બીજા શતલક્ષ–ક્રોડ સદ્ગુણીઓ પણ આને ન પહોંચે.'

"જય શિર્ષપિક શાસનેજી, સ્વસમય પરમત દક્ષ;
પોંહુચે નહિં કોઈ એહુનેજી, સુગુણ અનેરા શતલક્ષ.
પ્રભવાદિક શ્રુતકેવલીજી, આગે હુઆ પર જેમ;
કલિમાંહે જોતાં થકાજી, એ પણ શ્રુતધર તેમ.
વાદ વચન-કંસણિ યદાજી, તુજ શ્રુત-સુરમણિ ખાસ;
બોધિ વૃદ્ધિ હેતે કરેજી, બુધજન તસ અભ્યાસ." —સુજસવેલી.

આ પુરુષરત્નને પામી ન્યાય ન્યાયપણું પામ્યો, કાવ્ય કાવ્ય બન્યું, અલંકારને અલંકાર સાંપડ્યો, રસમાં સરસતા આવી, કરમાયેલી શ્રુતવલ્લરી નવપલ્લવિત થઈ, યોગ કલ્પતરુ ફલભારથી નમ્ર બન્યો, યુક્તિ આગ્રહબંધનથી મુક્ત થઈ, મુક્તિ જીવન્મુક્તપણે પ્રત્યક્ષ થઈ, ભક્તિમાં શક્તિ આવી, શક્તિમાં વ્યક્તિ આવી, ધર્મમાં પ્રાણ આવ્યો, સંવેગમાં વેગ આવ્યો, વૈરાગ્યમાં રંગ લાગ્યો, સાધુતાને સિદ્ધિ સાંપડી, શાસનનું શાસન ચાલવા લાગ્યું, કલિકાલનું આસન ડોલવા લાગ્યું, દર્શનને સ્વરૂપદર્શન થયું, સ્પર્શજ્ઞાનને

અનુકૂળ સ્થાન મળ્યું, ચારિત્ર ચરિતાર્થ બન્યું, વચનને કસોટી માટે શ્રુતચિંતામણિ મળ્યો, અનુભવને મુખ જોવા દર્પણ મળ્યું. તત્ત્વમીમાંસા માંસલ બની, દર્શનવિવાદો દુર્બલ થયા, વાડાનાં બંધન તૂટયાં, અખંડ મોક્ષમાર્ગ વિશ્વમાં વ્યાપી રહ્યો, અંધશ્રદ્ધાની આંધી દૂર થઈ, દંભના પડદા ચિરાયા, કુગુરુઓના ડેરા તંબૂ ઊપડયા, વેષવિડંબકોને વિડંબના થઈ, શુષ્ક જ્ઞાનીઓની શુષ્કતા સુકાઇ, ક્રિયાજડોની જડતાની જડ ઊખડી અને ધર્મ તેના શુદ્ધ વસ્તુધર્મ સ્વરૂપે પ્રસિદ્ધ થયો. આવા ગુણસમુદ્રનું ગુણગાન કેમ થાય? ગુણદ્વેષી મત્સરવંત દુર્જનોની પરવાહ કર્યા વિના શ્રી કાંતિવિજયજી પણ કહે છે કે—

"શ્રી યશોવિજય વાચક તણા, હું તો ન લહું ગુણ વિસ્તારો રે;
ગંગાજલ કણિકા થકી એહના, અધિક અછે ઉપગારો રે.
વચન રચન સ્યાદ્વાદનાં, નય નિગમ આગમ ગંભીરો રે;
ઉપનિષદા જિમ વેદનાં, જેમ કવિ ન લહે કોઇ ધીરો રે.
શીતલ પરમાનંદિની, શુચિ વિમલ સ્વરૂપ સાચી રે;
જેહની રચના-ચંદ્રિકા, રસિયા જણ સેવે રાચી રે."

ઇત્યાદિ પ્રકારે કવિજનોએ જેમના ગુણાનુવાદ મુક્તકંઠે ગાયા છે, એવા આ સુકૃતી યશોવિજયજી પોતાની અમર સુકૃતિઓથી સદા જયવંત ને જીવંત જ છે. 'સુકૃતિ એવા તે રસસિદ્ધ કવીશ્વરો જયવંત છે, કે જેની યશઃકાયમાં જરા–મરણજન્ય ભય નથી'— આ શ્રી ભર્તૃહરિની ઉક્તિ શ્રી યશોવિજયજીના સંબંધમાં અક્ષરશઃ ચરિતાર્થ થતી દેખાય છે, કારણ કે પોતાની એક એકથી સરસ ઉત્તમ કાવ્યમય સુકૃતિથી જયવંત એવા આ કવીશ્વર પોતાની યશઃકાયથી સદા જીવંત છે; યશઃશ્રીના વિજયી થઈ ખરેખરા 'યશો-વિજય' થયા છે. શબ્દનયે યથાર્થ 'યશોવિજય' એવંભૂત નયે 'યશોવિજય' બન્યા છે!

આવો મહાપ્રતિભાસંપન્ન સંસ્કારસ્વામી સેંકડો વર્ષોમાં કોઈ વિરલો જ પાકે છે. પ્રખર દર્શનઅભ્યાસી પં. સુખલાલજી કહે છે તેમ 'જૈન સંપ્રદાયમાં ઉપાધ્યાયજીનું સ્થાન વૈદિક સંપ્રદાયમાં શંકરાચાર્ય જેવું છે.' પણ આવા સમર્થ તત્ત્વદ્રષ્ટા કાંઈ એકલા જૈન સંપ્રદાયના જ નહિ, પણ સમસ્ત ભારતના ભૂષણરૂપ છે. આ ભારતભૂમિ ધન્ય છે કે જેમાં આવા તત્ત્વદ્રષ્ટા પુરુષરત્નો પાકે છે. અને આવા સંપ્રદાયથી પર, વિશ્વગ્રાહી વિશાલ દષ્ટિવાળા મહાત્મા કાંઈ એકલા જૈનોના જ નથી, એકલા ભારતના જ નથી, પણ સમસ્ત વિશ્વના છે.

એમનું ખરું જીવન તો આધ્યાત્મિક–આત્મપરિણતિમય આદર્શ 'મુનિજીવન' છે. પોતાનો જીવનસમય તેમણે અપ્રમાદપણે યથોક્ત મુનિધર્મના પાલનમાં, શાસનની પ્રભા-વનામાં, સત્ક્રિયોદ્ધારમાં, અને પ્રમાણભૂત એવા વિપુલ સાહિત્યસર્જનમાં વ્યતીત કર્યો છે. ગુજરાતી, સંસ્કૃત, પ્રાકૃત અને મારવાડી–એ ચારે ભાષામાં તેમણે આબાલવૃદ્ધ સર્વને ઉપયોગી એવું વિવિધવિષયી ટંકશાળી સાહિત્ય સર્જ્યું છે. તેમના મુખ્ય વિષયો ન્યાય,

સમાજસુધારણા, અધ્યાત્મ, યોગ, ભક્તિ આદિ છે. એકલા ન્યાય વિષયના જ તેમણે એકસો ગ્રંથ રચ્યાથી 'ન્યાયાચાર્ય' પદ મળ્યાનો તેમણે પોતે જ ઉલ્લેખ કરેલો છે. તેમજ 'રહસ્ય' પદાંકિત એકસો ગ્રંથ રચવાની પ્રતિજ્ઞાનો ઉલ્લેખ પણ તેમણે પોતે જ કર્યો છે. આમ હાલના ક્રિકેટના ઉત્તમ ખેલાડીઓ (Century Batsman) જેમ આ સાહિત્યના ખેલાડીએ વાઙ્મય-ક્રીડાંગણમાં સદીઓ નોંધાવવાની જ વાત કરી છે! અને સર્વત્ર પ્રમાણભૂત હોઈ ચિરસ્થાયી કીર્તિને લીધે નૉટ આઉટ જ (Not out) રહ્યા છે! જેમ ઉત્તમ ખેલાડીના ઑવે ઑવે રસિક પ્રેક્ષક લોકો હર્ષાવેશમાં આફ્રીન પોકારે છે, તેમ આ સાહિત્ય મહારથીના બોલે બોલે તત્ત્વરસિક વિદ્વજ્જનો 'ધન્ય ધન્ય'ના હર્ષનાદો કરે છે! પરમ તત્ત્વચિંતક શ્રીમદ્ રાજચંદ્રજીએ અંજલિ આપી છે કે-"યશોવિજયજીએ ગ્રંથો રચતાં એટલો ઉપયોગ રાખ્યો હતો કે તે પ્રાયે કોઈ ઠેકાણે ચૂક્યા નહોતા."

આમ અક્ષરદેહમાં જેનો અક્ષર આત્મા પ્રતિબિંબિત થાય છે, પ્રત્યક્ષ ચૈતન્ય ચમત્કાર જણાય છે, એવા આ મહાત્માનું અધ્યાત્મ જીવન તેમની કૃતિઓના આભ્યંતર દર્શન પરથી વિચક્ષણ વિવેકીઓ અનુમાની શકે છે. તેમની એક એક કૃતિ એવી અમૂલ્ય અને અપૂર્વ તત્ત્વસંભારથી ભરેલી છે કે, તે પ્રત્યેકનું વિહંગાવલોકન કરવા માટે પણ અનેક લેખમાળા જોઈએ; પણ અત્રે તેટલો અવકાશ નથી, એટલે અહીં તો યત્રતત્ર ઊડતો દૃષ્ટિપાત કરીને જ સંતોષ માનશું.

તેમના સમકાલીનોમાં ઉપાધ્યાયજી વિનયવિજયજી, આનંદઘનજી, સત્યવિજય ગણી, માનવિજય ઉપાધ્યાય આદિ વિશિષ્ટ વિદ્વદ્મંડલી હતી. તેમાંય ખાસ કરીને શાંત સુધારસનું અનુપમ સંગીત કરનારા શાંતમૂર્તિ મહા મુમુક્ષુ શ્રી વિનયવિજયજી તો એમના સહાધ્યાયી પરમાર્થ સુહૃદ હતા. આ વિનયવિજય અને યશોવિજયની જોડી સુપ્રસિદ્ધ છે. બન્ને ગાઢ પરમાર્થ મિત્ર અને ઉત્તમ કોટિના શાંત મુમુક્ષુ હતા. ઘેર ઘેર રસપૂર્વક વંચાતો સુપ્રસિદ્ધ 'શ્રીપાલ રાસ' તો આ બન્ને મહાત્માઓની સંયુક્ત કૃતિ છે. શ્રી વિનયવિજયજીએ એનો પૂર્વ ભાગ રચ્યો, ત્યાં તેમનો રાંદેરમાં દેહોત્સર્ગ થયો; એટલે તેમના પરમાર્થ મિત્ર શ્રી યશોવિજયજીએ તેનો ઉત્તર ભાગ રચી ઉત્તમ મિત્રકાર્ય કર્યું. છેવટે ત્યાં શ્રી યશોવિજયજી પરમ આત્મઉલ્લાસથી ગર્જ્યા છે કે—

"માહરે તો ગુરુચરણ પસાયે, અનુભવ દિલમાંહિ પેઠો;
ઋદ્ધિ વૃદ્ધિ પ્રગટી ઘટમાંહે, આતમરતિ હુઈ બેઠો રે...
...મુજ સાહિબ જગનો તૂઠો."

શ્રીમાન્ આનંદઘનજીનો દર્શન-સમાગમ એ શ્રી યશોવિજયજીના જીવનની એક ક્રાંતિકારી વિશિષ્ટ ઘટના છે. તે વખતના રૂઢિચુસ્તપણાને વળગી રહેનાર સમાજ એવી પરમ અવધૂત જ્ઞાનદશાવાળા, આત્માનંદમાં મગ્ન રહેનારા, આત્મારામી સત્પુરુષને ઓળખી

ન શક્યો, ને આ 'લાભાનંદજી'નો (આનંદઘનજીનો) યથેચ્છ લાભ ન ઉઠાવી શક્યા; ઘર આંગણે ઊગેલા કલ્પવૃક્ષને ન આરાધી વાંછિત ફલથી વંચિત રહ્યો. એ સમાજનું મહાદુર્ભાગ્ય અથવા કરાલ કલિકાલનો-દુઃષમ કાલનો મહાપ્રભાવ! પણ તેવું તેવાને ખેંચે, Like attracts like, લોહચુંબક લોહને ખેંચે એ ન્યાયે શ્રી યશોવિજયજી શ્રી આનંદઘનજીને તેમના યથાર્થ સ્વરૂપમાં ઓળખી શક્યા,-જેમ શ્રી દેવચંદ્રજી કહે છે તેમ-

'તેહ જ એહનો જાણંગ, ભોકતા જે તુમ સમ ગુણરાયજી.'

તેવો જ તેવાને ઓળખે. સાચો ઝવેરી જ ઝવેરાત પારખી શકે. તેમ તે સમયે પણ શ્રી યશોવિજયજી જેવા વિરલા રત્નપરીક્ષક જ શ્રી આનંદઘનજી જેવા મહાપુરુષ રત્નને તેમના યથાર્થ સ્વરૂપે ઓળખી શક્યા. આ પરમ અવધૂત-ભાવનિર્ગ્રંથ આનંદઘનજીના દર્શન-સમાગમથી શ્રી યશોવિજયજીને ઘણો ઘણો આત્મલાભ થયો, અત્યંત આત્માનંદ થયો. આ પરમ ઉપકારની સ્મૃતિમાં શ્રી યશોવિજયજીએ મહાગીતાર્થ આનંદઘનજીની સ્તુતિરૂપે 'અષ્ટપદી' રચી છે. તેમાં તેમણે પરમ આત્મોલ્લાસથી આનંદઘનજીની મુક્તકંઠે ભારોભાર પ્રશંસા કરી છે. ત્યાં તેઓશ્રી કહે છે કે, માર્ગમાં ચાલતાં ચાલતાં આનંદઘનજી ગાતા હતા અને આનંદપૂર્ણ રહેતા હતા. એવી મસ્ત દશામાં તેઓ વિહરતા હતા, આત્માનુભવજન્ય પરમ આનંદમય અદ્વૈત દશામાં વિલસતા હતા. આવા પરમ આત્માનંદમય યોગીશ્વરના દર્શન-સમાગમથી પોતાને આનંદ આનંદ થયો, પારસમણિના સ્પર્શથી લોહું જેમ સોનું થાય, તેમ આનંદઘન સાથે જ્યારે 'સુજશ' મળ્યો, ત્યારે હું 'સુજશ' આનંદ સમો થયો. અર્થાત્ પારસમણિસમા આનંદઘનજીના સમાગમથી લોહ જેવો હું યશોવિજય સુવર્ણ બન્યો. કેવી ભવ્ય ભાવાંજલિ!

"મારગ ચલત ચલત ગાત આનંદઘન પ્યારે, રહત આનંદ ભરપૂર."
"કોઈ આનંદઘન છિદ્ર હી પેખત, જસ રાય સંગ ચઢી આયા;
આનંદઘન આનંદરસ ઝીલત, દેખત હી જસ ગુણ ગાયા."
"આનંદઘનકે સંગ સુજસ હી મિલે જબ, તબ આનંદ સમ ભયો સુજસ;
પારસ સંગ લોહા જો ફરસત, કંચન હોત હી તાકે કસ."
"એરી આજ આનંદ ભયો મેરે!
તેરો મુખ નિરખ નિરખ, રોમ રોમ શીતલ ભયો અંગોઅંગ;
"શુદ્ધ સમતારસ ઝીલત, આનંદઘન ભયો અનંત રંગ. એરી."

આ ઉપરથી અહીં એક વિચારણીય રસપ્રદ પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે કે, આવો ન્યાયનો એક ધુરંધર આચાર્ય, ષડ્દર્શનનો સમર્થ વેત્તા, સકલ આગમરહસ્યનો જ્ઞ, વિદ્વચ્છિરોમણિ યશોવિજય જેવો પુરુષ, આ અનુભવયોગી આનંદઘનજીના પ્રથમ દર્શન-સમાગમે જાણે મંત્રમુગ્ધ થયો હોય એમ આનંદતરંગિણીમાં ઝીલે છે. અને તે યોગીશ્વરની અદ્ભુત આત્માનંદમય વીતરાગ દશા દેખીને આનંદાશ્ચર્ય અનુભવે છે! અને

પોતાની સમસ્ત વિદ્વત્તાનું અભિમાન એકીઅપાટે ફગાવી દઈ, બાળક જેવી નિર્દોષ પરમ સરળતાથી કહે છે કે, 'લોહા જેવો હું આ પારસમણિના સ્પર્શથી સોનું બન્યો!' અહો! કેવી નિર્માનિતા! કેવી સરળતા! કેવી નિર્દંભતા! કેવી ગુણગ્રાહિતા! આને બદલે બીજો કોઈ હોત તો? તેને અભિમાન આડું આવી ઊભું રહેત કે, 'હું' આવડો મોટો ધુરંધર આચાર્ય, આટલા બધા શિષ્ય-પરિવારનો અગ્રણી ગચ્છાધિપતિ, સમસ્ત વિદ્વત્સમાજમાં સુપ્રતિષ્ઠિત-આવો જે 'હું' તે શું આવાને નમું?' પણ યશોવિજયજી ઓર પુરુષ હતા, એટલે આનંદઘનજીનો દિવ્ય ધ્વનિ તેમના આત્માએ સાંભળ્યો ને તે સંતના ચરણે ઢળી પડયા. શ્રી યશોવિજયજીને અહીં પ્રત્યક્ષ અનુભૂતિ થઈ હોય એમ જણાય છે કે આ અનુભવજ્ઞાની પરમ યોગી પુરુષની પાસે મારું શાસ્ત્રજ્ઞાન (Theoretical knowledge) શૂન્યરૂપ છે, મોટું મીંડું છે; કારણ કે અધ્યાત્મ વિનાનું-આત્માનુભવ વિનાનું શાસ્ત્ર એકડા વિનાના મીંડા જેવું છે હું આટલા વર્ષ ન્યાય, દર્શન આદિ સર્વ આગમ-શાસ્ત્ર ભણ્યો, પણ લોઢું જ રહ્યો. પણ આ આત્મજ્ઞાનના નિધાનરૂપ, પારસમણિ આનંદઘનના જાદુઈ સ્પર્શથી લોહા જેવો હું સોનામાં ફેરવાઈ ગયો! એવા સંવેદનથી એમનો આત્મા પરમ ભાવાવેશમાં આવી જઇ શ્રી આનંદઘનજીને સર્વ પ્રદેશથી નમી પડ્યો એમ પ્રતીત થાય છે. આમ યશોવિજયજીના પરમાર્થ ગુરુ આ આનંદઘનજીના પ્રસંગ ઉપરથી વર્તમાનમાં પણ જે કોઇ અલ્પશ્રુત અજ્ઞાની જન યત્રતત્રથી કંઈક શીખી લઈ પોતાને જ્ઞાની માની બેસવાનો ફાંકો રાખતા હોય તેને ઘણો ધડો લેવા જેવું છે, અને આ મુદ્દો ખાસ લક્ષમાં લેવા યોગ્ય છે.

આવા આનંદઘનજી જેવા પરમાર્થ ગુરુના ચરણે જેણે અધ્યાત્મ, યોગ, ભક્તિની પ્રેરણાનું પીયૂષપાન કર્યું હતું, એવા શ્રીમાન્ યશોવિજયજી એક આદર્શ સમાજસુધારક અને પ્રખર ધર્મોદ્ધારક તરીકે સુપ્રસિદ્ધ છે. એ ખાસ નોંધવા જેવું છે કે તેમનો સુધારો આધુનિકોની જેમ યદ્વાતદ્વા સ્વચ્છંદાનુયાયી નથી, પણ નિર્મલ શાસ્ત્રમાર્ગાનુયાયી ને શુદ્ધ આદર્શવાદી છે. ભગવાન પ્રણીત મૂળ આદર્શ માર્ગથી સમાજને ભ્રષ્ટ થયેલો દેખી, ગૃહસ્થોને તેમજ સાધુઓને વિપરીતપણે-વિમુખપણે વર્તતા નિહાળી, ક્ષુદ્ર નિર્માલ્ય મતમતાંતરોથી અખંડ જૈન સમાજને ખંડખંડ-છિન્નભિન્ન થયેલો ભાળી, તેમનું ભાવનાશીલ સાચી અંતર્દાઝવાળું હૃદય અત્યંત દ્રવીભૂત થયું હતું-કકળી ઊઠયું હતું. એટલે જ તે સમાજનો સડો દૂર કરવાના એકાંત નિર્મલ ઉદ્દેશથી તેઓશ્રીએ ભગવાન્ સીમંધર પાસે 'સાડી ત્રણસો' ને 'સવાસો ગાથા'ના સ્તવનાદિના વ્યાજથી કરુણ પોકાર પાડ્યો છે કે, 'હે ભગવન્! આ જિનશાસનની શી દશા!' અને તેના બહાને કેવળ નિષ્કારણ કરુણાથી પ્રેરિત થઈ સુષુપ્ત સમાજને કેટલીક વાર સખત શબ્દપ્રહારના 'ચાબખા' મારી ઢંઢોળ્યો છે-જાગ્રત કર્યો છે; તથા ગૃહસ્થનો ને સાધુનો ઉચિત આદર્શ ધર્મ સ્પષ્ટપણે સર્વત્ર શાસ્ત્રાધારપૂર્વક નીડરતાથી રજૂ કરી, સમાજને ઘેરી વળેલા કુસાધુઓ ને કુગુરુઓની નીડરપણે સખત ઝાટકણી કાઢી છે.

તેઓશ્રી શ્રી સીમંધરસ્વામીજીને સ્તવતાં વિનંતિ કરે છે કે, 'હે ભગવન્! કૃપા કરીને મને શુદ્ધ માર્ગ બતાવો! આ ભરતક્ષેત્રના લોકોએ ભગવાન જિનના અનુપમ શાસનના જે હાલહવાલ કર્યા છે, તે જોઈને મારું હૃદય ચિરાઈ જાય છે, એટલે આપની પાસે પોકાર પાડું છું. આ વર્ત્તમાન દુઃષમ કાલના અંધશ્રદ્ધાળુ, ગાડરિયા પ્રવાહ જેવા, મતાગ્રહી, વક્ર-જડ લોકો કોઈ સાચી વાત કહે તો તે સાંભળવાને પણ તૈયાર નથી! તેને કંઈ કહેવું તે અરણ્યમાં પોક મૂકવા જેવું છે! એટલે મારી શાસનદાઝની વરાળ હું આપની પાસે ઠાલવું છું.

'જુઓ! કોઈ લોકો સૂત્રવિરુદ્ધ આચારે ચાલી રહ્યા છે, ને સૂત્રવિરુદ્ધ બોલી રહ્યા છે. આવા કોઈ જનો એમ કહે છે કે, 'અમે ભગવાનનો માર્ગ રાખીએ છીએ-અમે છીએ તો માર્ગ ચાલે છે!' આ તે હું કેમ શુદ્ધ માનું? આ લોકો ખોટા કૂડ-કપટવાળા આલંબન દેખાડી મુગ્ધ-ભોળા લોકને પતિત કરે છે, ને આજ્ઞાભંગરૂપ કાળું તિલક પોતાના કપાળે ચોડે છે!'

"ચાલે સૂત્ર વિરુદ્ધાચારે, ભાખે સૂત્ર વિરુદ્ધા;
એક કહે અમે મારગ રાખું, તે કેમ માનું શુદ્ધા રે.
જિનજી! વિનતડી અવધારો.
આલંબન કૂડાં દેખાડી, મુગધ લોકને પાડે;
આણાભંગ તિલક તે કાળું, થાપે આપ નિલાડે રે...જિન૦"

વળી, બીજો કોઈ એમ કહે છે કે, "જેમ ઘણા લોક કરતા હોય તેમ કર્યે જવું, એમાં શી ચર્ચા કરવી? 'મહાજન ચાલે તે માર્ગ' કહ્યો છે ને તેમાં જ આપણને અર્ચા-પૂજા પ્રાપ્ત થાય છે." ત્યારે શ્રી યશોવિજયજી તેનો સણસણતો જવાબ આપે છે કે, આ જગત્માં અનાર્યોની વસ્તી કરતાં આર્ય લોકોની વસ્તી ઘણી ઓછી છે. આર્યમાં પણ જૈન થોડા છે; તે જૈનમાં પણ પરિણત જન-આત્મપરિણામી, સાચા જૈનત્વથી ભાવિતાત્મા એવા જનો થોડા છે; અને તેમાં પણ શ્રમણ અર્થાત્ સાચા સાધુગુણથી સંપન્ન એવા સંત-જનો થોડા છે, બાકી માથું મુંડાવ્યું છે એવા વેષધારી દ્રવ્યલિંગી સાધુઓ તો ઘણા છે, અને તમે જે મહાજન-મહાજન કહો છો, તે તો જિનાજ્ઞા-જિનશાસન પાળતા હોય તે 'મહાજન' છે, બાકી માત્ર મુખે શાસન-શાસનની બાંગ મારતા હોય તે મહાજન નથી. જેની પૂંઠે ટોળું ચાલતું હોય એવો અજ્ઞાની ભલે ગચ્છને ચલાવનારો-આચાર્ય કહેવાતો હોય, તો પણ તે મહાજન નથી, એવું ધર્મદાસ ગણીનું વચન વિચારી, મનને ભોળું મ કરો!

"આર્ય થોડા અનારજ જનથી, જૈન આર્યમાં થોડા;
તેમાં પણ પરિણત જન થોડા, શ્રમણ અલ્પ-બહુ મોડા. રે જિનજી!
અજ્ઞાની નવિ હોવે મહાજન, જો પણ ચલવે ટોળું;
ધર્મદાસ ગણી વચન વિચારી, મન નવિ કીજે ભોળું. રે જિનજી!"

ભગવાન આજ્ઞાએ યથાનુરૂપપણે ચાલતો એવો એક જ સાધુ હોય, એક જ સાધ્વી હોય, એક જ શ્રાવક હોય, એક જ શ્રાવિકા હોય, તોપણ તે આજ્ઞાયુક્તને 'સંઘ' નામ ઘટે છે, બાકી તો અસ્થિસંઘાત છે, એમ શ્રી ભદ્રબાહુસ્વામીજીએ 'આવશ્યક સૂત્ર' માં કહ્યું છે, માટે નિજ છંદે–સ્વચ્છંદે ચાલતો હોય તે અજ્ઞાની છે, ને તેની નિશ્રાએ ચાલનાર પણ અજ્ઞાની છે. આવો અજ્ઞાની જો ગચ્છનો ધણીધોરી થઈ પડી ગચ્છને ચલાવે તો તે અનંત સંસારી છે. જે ખંડખંડ પંડિત હોય–'કયાંક કયાંક કંઈ જાણવાવાળો હોય' તે કાંઈ જ્ઞાની નથી. જ્ઞાની તો જે નિશ્ચિત સમય જાણે તે છે, એમ 'સંમતિસૂત્ર' માં સ્પષ્ટ કહ્યું છે. બાકી જો સમયનો–સિદ્ધાંતરૂપ અખંડ વસ્તુનો વિનિશ્ચય ન હોય, તો જેમ જેમ બહુશ્રુતને, બહુજનને સંમત–માનીતો હોય, અને જેમ જેમ ઝાઝા શિષ્યપરિવારથી પરિવરેલો હોય, તેમ તેમ તો જિનશાસનનો વૈરી છે–દુશ્મન છે.

"અજ્ઞાની નિજ છંદે ચાલે, તસ નિશ્રાયે વિહારી;
અજ્ઞાની જો ગચ્છને ચલવે, તે તો અનંત સંસારી. હે જિનજી!
ખંડ ખંડ પંડિત જે હોવે, તે નવિ કહિયે નાણી;
નિશ્ચિત સમય લહે તે નાણી, સંમતિની સહિનાણી. હે જિનજી!
જિમ જિમ બહુશ્રુત બહુજનસંમત, બહુ શિષ્યે પરવરિયો;
તિમ તિમ જિનશાસનનો વયરી, જો નવિ નિશ્ચય દરિયો. હે જિનજી!"

ઇત્યાદિ વચનોથી તેઓશ્રીએ લોકોની અંધશ્રદ્ધા પર સખત કુઠાર–પ્રહાર કર્યો છે, અને પોતાની પાછળ મોટું ટોળું ચલાવનારા અજ્ઞાની ગચ્છાધિપતિઓને મહાજન માનનારાઓની ભ્રાંતિ ભાંગી નાખી છે, તેમજ નિશ્ચય જ્ઞાનથી રહિત–અખંડ વસ્તુ તત્ત્વના જ્ઞાનથી રહિત એવા બહુશ્રુત–ઘણા વિદ્વાન, તથા ઘણા લોકપ્રિય તથા સેંકડો શિષ્યોના પરિવારથી પરિવરેલા કહેવાતા ગુરુઓના બાહ્ય ઠાઠમાઠથી ને વાગાડંબરથી અંજાઈ જનારા મુગ્ધ જનોને તેવા અજ્ઞાનીઓથી ભોળવાઈ ન જવાની સ્પષ્ટ ચેતવણી આપી છે.

કોઈ લોકો એમ કહે છે કે, 'લોચાદિક કષ્ટે કરી અમે ભિક્ષાવૃત્તિ કરીએ છીએ તે મુનિમાર્ગ છે,' તેનો શ્રી યશોવિજયજી જવાબ આપે છે કે, તે માનવું મિથ્યા છે, કારણ કે સાચા મુમુક્ષુપણા વિના–આત્માર્થીપણા વિના જનમનની અનુવૃત્તિએ ચાલવું, જનમનરંજન કરવું, લોકને રૂડું દેખાડવા પ્રવર્તવું, તે માર્ગ હોય નહિ. વળી જો માત્ર કષ્ટે કરીને જ મુનિમાર્ગ પ્રાપ્ત થઈ જતો હોય, તો બળદ પણ સારો ગણાવો જોઈએ, કારણ કે તે બાપડો ભાર વહે છે, તડકામાં ભમે છે ને ગાઢ પ્રહાર ખમે છે! માટે માત્ર બાહ્ય કાયકષ્ટાદિકથી કાંઈ મુનિપણું આવતું નથી, અને તેવા પુરુષની જે ભિક્ષા છે તે બલહરણી પૌરુષઘ્ની ભિક્ષા છે.

"જો કષ્ટે મુનિ મારગ પાવે, બળદ થાયે તો સારો;
ભાર વહે જે તાવડ ભમતો, ખમતો ગાઢ પ્રહારો. હે જિનજી!
લહે પાપ અનુબંધી પાપે, બલહરણી જિન ભિક્ષા;
પૂરવ ભવ વ્રત ખંડન ફલ એ, પંચ વસ્તુની શિક્ષા. હે જિનજી!"

વળી કોઈ એમ કહે છે કે, 'અમે લિંગથી તરીશું, મુનિનો-સાધુનો વેષ, દ્રવ્યલિંગ અમે ધારણ કર્યું છે તેથી તરીશું; અને જૈન લિંગ એ સુંદર છે.' તો તે વાત મિથ્યા છે-ખોટી છે, કારણ કે ગુણ વિના તરાય નહિ, તથારૂપ મુનિપણાના-સાધુપણાના-નિર્ગ્રંથ-પણાના-શ્રમણપણાના ગુણ વિના તરાય નહિ,-જેમ ભુજા વિના તારો ન તરી શકે તેમ. તેમ જ કોઈ નાટકિયો-વેષવિડંબક ખોટો સાધુનો વેષ પહેરીને આવે, તો તેને નમતાં જેમ દોષ છે, તેમ સાધુગુણ રહિત એવા વેષવિડંબકને-સાધુવેષની વિડંબના કરનાર જાણીને નમીએ તો દોષનો પોષ જ છે.

"કોઈ કહે અમે લિંગે તરશું, જૈન લિંગ છે વારુ;
તે મિથ્યા-નવિ ગુણ વિણ તરિયે, ભુજ વિણ ન તારે તારુ. રે જિનજી!
કૂટ લિંગ જિમ પ્રગટ વિડંબક, જાણી નમતાં દોષ;
નિધંધસ (?) જાણીને નમતાં, તિમ જ કહ્યો તસ પોષ. રે જિનજી!"

ઇત્યાદિ અનેક પ્રકારે તેઓશ્રીએ સમાજનો સડો સાફ કર્યો છે, લોકોની અંધશ્રદ્ધા ઉડાડી છે અને તેઓને સત્ય શ્રદ્ધા પ્રત્યે દોર્યા છે. સાથે સાથે તેઓએ સુસાધુઓના-નિર્ગ્રંથ વીતરાગી મુનીશ્વરોનાં લક્ષણો સ્પષ્ટપણે બતાવી આદર્શ મુનિપણાની-નિર્ગ્રંથપણાની ભારો-ભાર પ્રશંસા કરી છે. જેમ કે—

"ધન્ય તે મુનિવરા રે, જે ચાલે સમભાવે;
ભવસાયર લીલાએ ઊતરે, સંયમ કિરિયા નાવે. ધન્ય૦
ભોગ પંક તજી ઉપર બેઠા, પંકજ પરે જે ન્યારા;
સિંહ પરે નિજ વિક્રમ શૂરા, ત્રિભુવન જન આધારા. ધન્ય૦
જ્ઞાનવંત જ્ઞાની શું મળતા, તન મન વચને સાચા;
દ્રવ્ય ભાવ સુધા જે ભાખે, સાચી જિનની વાચા. ધન્ય૦"

તે મુનિવરો ધન્ય છે કે, જે સમભાવે-રાગદ્વેષ રહિતપણે ચાલી રહ્યા છે! જે આત્મ-પરિણતિમય શુદ્ધ ક્રિયારૂપ નૌકાવડે આ ભવસમુદ્રને લીલામાં-રમત માત્રમાં પાર ઊતરી જાય છે! ભોગ-પંક છોડી દઈ, જે તે ઉપર ઉદાસીન થઈને પંકજ-કમલની જેમ ન્યારા થઈને બેઠા છે, સિંહની જેમ જે આત્મપરાક્રમી શૂરવીર છે-પોતાના આંતર શત્રુઓને હણવામાં વીર છે, ને જે ત્રિભુવન જનના આધારરૂપ છે, જે પોતે જ્ઞાનવંત-આત્મજ્ઞાની છે ને જ્ઞાની પુરુષો સાથે હળીમળીને રહે છે, જે તન, મન, વચને સાચા છે, અને જે દ્રવ્ય-ભાવથી શુદ્ધ એવી સાચી જિનની વાચા વદે છે, સાચા વીતરાગપ્રણીત માર્ગનો ઉપદેશ આપે છે, એવા તે નિર્ગ્રંથ મુનિવરોને-શ્રમણોને ધન્ય છે!

તથારૂપ મુનિગુણ ધારવા જે અસમર્થ હોય, પણ જે શુદ્ધ પ્રરૂપક હોય, તે સંવિજ્ઞપાક્ષિક પણ જિનશાસનને શોભાવે છે; કારણ કે સરળ પરિણામી, નિર્દંભી કોઈ પોતાના સાધુપણાનો દાવો કે ડોળ કરતો નથી, પણ સંવિજ્ઞ પાક્ષિક છીએ, એમ સરળતાથી કહે છે. ઇત્યાદિ વાત પણ ત્યાં વિસ્તારીને ચર્ચી છે.

પણ જેનામાં સાચું આદર્શ મુનિપણું પણ નથી, ને જે નિર્દંભ સંવિગ્નપાક્ષિક પણ નથી, ને પોતે સાધુ છે, મુનિ છે, આચાર્ય છે, એમ મોટાઈમાં રાચે છે; અને બાહ્ય ક્રિયાનો ડોળદમાક ને આડંબર કરે છે, તેની ભવ-અરઘટ્ટમાલા ઘટે નહિ. એવા કહેવાતા દ્રવ્ય સાધુઓ કે દ્રવ્ય આચાર્યો પોતાનો શિષ્યસમુદાય સંચે છે, પણ મનને ખંચતા નથી! અને ગ્રંથ ભણી લોકને વંચે છે-છેતરે છે! તેઓ કેશ લુંચે છે, પણ માયાકપટ છોડતા નથી! આવા જે હોય તેના પાંચ વ્રતમાંથી એકે વ્રતનું ઠેકાણું રહેતું નથી!

"માચે મોટાઈમાં જે મુનિ, ચલવે ડાકડમાલા;
શુદ્ધ પ્રરૂપણ ગુણ વિણ ન ઘટે, તસ ભવ અરહટ્ટમાલા...ધન્ય૦
નિજ ગણ સંચે, મન નવિ ખંચે, ગ્રંથ ભણી જન વંચે;
લુંચે કેશ ન મુંચે માયા, તે ન રહે વ્રત પંચે...ધન્ય૦"

જે યોગ-ગ્રંથના ભાવ જાણતા નથી અને જાણે તો પ્રકાશતા નથી, અને ફોગટ મોટાઈ મનમાં રાખે છે, તેનાથી ગુણ દૂર નાસે છે! જે પરપરિણતિને પોતાની માને છે ને આર્ત્તધ્યાનમાં વર્તે છે, અને જે બંધ-મોક્ષનાં કારણ જાણતા નથી, તે 'પાપ શ્રમણ' તો પહેલે ગુણઠાણે છે; તે અજ્ઞાની દંભી સાધુઓ પોતાને ભલે છટ્ઠે ગુણઠાણે માનતા હોય, પણ તે તો પહેલા ગુણઠાણે જ વર્તે છે.

"યોગ ગ્રંથના ભાવ ન જાણે, જાણે તો ન પ્રકાશે;
ફોકટ મોટાઈ મન રાખે, તસ ગુણ દૂરે નાસે...ધન્ય૦
પર પરિણતિ પોતાની માને, વરતે આરત ધ્યાને;
બંધ મોક્ષ કારણ ન પિછાને, તે પહિલે ગુણઠાણે...ધન્ય૦"

ઇત્યાદિ પ્રકારે કુસાધુઓની-કુગુરુઓની સખત ઝાટકણી કાઢી નિર્મલ મુનિપણાના આદર્શની ત્યાં સુપ્રતિષ્ઠા કરી છે.

આમ અનેક પ્રકારે આ મહાપ્રભાવક ધર્મધુરંધર મહાત્મા યશોવિજયજીએ શુદ્ધ માર્ગપ્રભાવના કરી, ભારતનું ભૂષણ વધાર્યું, જગતને ઉત્તમ તત્ત્વજ્ઞાનની ભેટ ધરી, અને સમાજની વિવિધ પ્રકારે સેવા કરી અનન્ય જનકલ્યાણ કર્યું. આવા પરમ ઉપકારી પુરુષનું જગત કેટલું બધું ઋણી છે!

卐

ગૂર્જરભૂષણ ન્યાયવિશારદ ન્યાયાચાર્ય ઉપાધ્યાયજી
શ્રીમદ્ યશોવિજયજીનું જીવન અને પ્રાણપ્રતિષ્ઠા યાને આપણું કર્તવ્ય

[લેખક : શ્રીયુત નિર્મલ]

ઉપાધ્યાયજી, લઘુહરિભદ્ર કે દ્વિતીય હેમચંદ્ર તરીકેની ખ્યાતિ પ્રાપ્ત કરનાર ગૂર્જર દેશની મહાન વિભૂતિરૂપ શ્રીજિનશાસન પ્રભાવક યશોવિજયજી મહારાજશ્રીના જીવન ઉપર અનેકાનેક લેખો આજે આવવાનો સંભવ છે. કારણ કે ઉપાધ્યાયજી પ્રત્યેની હાર્દિક ભક્તિ સહુ કોઈ વિદ્વદ્વર્ગ કે આમજનતાના દિલમાં એક યા બીજી રીતે પણ છલોછલ ભરેલી છે.

જો કે તે મહાપુરુષે પ્રાચીન કાળની પદ્ધતિએ આત્મપ્રશંસા નહિ કરવાના કારણે યા બીજા કોઈ પણ કારણે, પોતે તો કોઈ પણ સ્થળે પોતાના જીવનનો ઉલ્લેખ સરખો પણ કર્યો નથી. પણ તેઓશ્રીના સમકાલીન પૂ. કાન્તિવિજયજી કૃત "સુજસવેલીભાસ" નામના ગ્રંથ ઉપરથી જે કાંઈ સ્પષ્ટાસ્પષ્ટ બીના મળે છે તે પ્રસિદ્ધ થયેલ છે. છતાં જન્મ દિવસની નોંધ કોઇ પણ જગ્યાએ જોવામાં આવતી નથી.

ઉપાધ્યાયજી મહારાજને વિદ્યાના અવતાર કહીએ તો પણ તે અતિશયોક્તિ ભરેલું નથી. કારણ કે તેમના કાળમાં તેમણે એટલો બધો વિદ્યાનો ફેલાવો કર્યો હતો કે સામાન્ય જનતા પણ શ્લોકબદ્ધ કે ન્યાયભાષામાં વાતચીત કરી શકતી હતી.

ન્યાય, વ્યાકરણ, કાવ્ય, કોશ, ધર્મશાસ્ત્ર, યોગ વગેરે કોઈ પણ વિષય એવો ન હતો કે જેમાં ઉપાધ્યાયજી મહારાજે કંઈ ને કંઈ લખ્યું ન હોય. બીજા ગ્રંથકારોના સંસ્કૃત–પ્રાકૃતનાં ભાષાંતરો ગુજરાતી કે હિંદીમાં થાય ત્યારે ઉપાધ્યાયજી મહારાજના ગુજરાતી ભાષાત્મક 'દ્રવ્ય–ગુણ–પર્યાય'ના રાસનું સંસ્કૃતમાં ભાષાંતર થયું હતું, એ તેમની અપૂર્વ ગ્રન્થકાર તરીકે સામર્થ્ય જણાવતી વિશિષ્ટતા છે.

ઉપાધ્યાયજી મહારાજે સાહિત્ય દ્વારા જૈન શાસનનો બહોળો ફેલાવો અને કુમત વાદીઓના હઠાગ્રહનું સુંદર શૈલીમાં નિરસન કર્યું છે. આજથી લગભગ અઢીસો વર્ષ પૂર્વેનો એટલે તે મહાપુરુષનો કાળ એવો હતો કે જો તેમના જેવા વિદ્વત્તાપૂર્ણ પુરુષ ન પાક્યા હોત તો જૈન સમાજની શી પરિસ્થિતિ હોત તેની કલ્પના સરખી પણ ન આવી શકે. તેઓશ્રીએ જૈન સમાજને સભર અને ઉન્નત રાખવામાં મહાન ભોગ આપ્યો છે. તેમજ ગ્રંથરત્નો રૂપી મોટો વારસો આપ્યો છે.

ઉપાધ્યાયજી મહારાજે તર્ક, આગમ, અધ્યાત્મ અને યોગના વિષયમાં સેંકડો વિદ્વદ્ ભોગ્ય ગ્રંથોની રચના કરી છે, એટલું જ નહિ પણ પદો, સજ્ઝાયો, સ્તવનો, રાસાઓ વગેરે બાલોપભોગ્ય ગુજરાતી સાહિત્યની અદ્વિતીય રચના કરવી પણ તેઓ ચૂક્યા ન હતા.

શ્વેતામ્બર, દિગંબર કે સ્થાનકવાસી ત્રણેય ફિરકારૂપ જૈન દર્શનમાં નવીન ન્યાયની શૈલીમાં ગ્રંથ સર્જન કરનાર તરીકે આદિ કે અંતરૂપ અદ્યાપિ પર્યંત તેઓ જ છે.

કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રી હેમચંદ્રસૂરિ પછી મહાસામર્થ્યશાલી વિદ્વાનોની ગણનામાં ઉપાધ્યાયજીની તુલના કરી શકે તેવા મહાવિદ્વાન્ જાણવામાં કે સાંભળવામાં આવ્યા નથી જેથી દ્વિતીય હેમચંદ્ર કહેવામાં અતિશયોક્તિને જરાય સ્થાન નથી.

યોગવિષયના પ્રથમ વિવેચનકાર વિરહાંકિત ૧૪૪૪ ગ્રંથના પ્રણેતા હરિભદ્રસૂરિ થયા છે. તેમના વચનોના ભાવને ઊંડાણપૂર્વક સમજી તેમના ગ્રંથોની ટીકા તેમજ સ્વતંત્ર પ્રકરણો રચનાર આપણા નાયક ઉપાધ્યાયજી મહારાજ જ છે, જેથી તેમનું લઘુ હરિભદ્ર નામ સંપૂર્ણ સ્વરૂપે અન્વર્થક છે.

વિદ્યાધામ કાશીમાં રહી વિદ્યાભ્યાસ કરતી વખતે એક અજેય પંડિતશિરોમણિ વાદ માટે આવી ચઢયા. જેને જીતવામાં કાશીના સમર્થ વિદ્વાનોનું સામર્થ્ય સરી પડ્યું ત્યારે ગુર્વાજ્ઞા મેળવી પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજે જીત મેળવી. તેથી કાશીના વિદ્વાનોએ ભેગા મળી "ન્યાય વિશારદ" બિરુદ આપ્યું. ત્યારબાદ ત્યાં જ ન્યાયના વિષયને લગતા સો ગ્રંથોની રચના કરવાથી તેઓશ્રીને "ન્યાયાચાર્ય" બિરુદ મળ્યું તેવો પણ ઉલ્લેખ મળી આવે છે. તેઓશ્રીએ બૌદ્ધાદિ દર્શનોની એકાન્તવાદી યુક્તિઓનું ખંડન કરતા બે લાખ શ્લોક પ્રમાણ ન્યાયગ્રંથ-'રહસ્ય' પદાંકિત ૧૦૮ ગ્રંથ અને "બિન્દુ" પદાંકિત સો ગ્રંથ એમ કેટલાય ગ્રંથોની રચના કરી છે. પણ દુઃખની વાત એ છે કે આ બધા ગ્રંથો હાલમાં ઉપલબ્ધ નથી. જે કાંઇ સાહિત્ય ઉપલબ્ધ છે તે તો માત્ર તેમની રચનાની દૃષ્ટિએ ૧૦ ટકા જ હોય તેમ લાગે છે. તેમના પછી તેમના શિષ્યોમાં કે પરંપરામાં પણ તેવા કોઈ વિદ્વાન્ થયા હોય તેમ લાગતું નથી. નહિ તો અઢીસો વર્ષ જેટલા ટૂંકા ગાળામાં બધું સાહિત્ય નષ્ટપ્રાય કેમ બની જાય ?

ઉપાધ્યાયજી મહારાજશ્રીએ 'તત્ત્વાર્થ-ભાષ્ય' ઉપર ટીકા રચી છે. તેમાંનો માત્ર પ્રથમ અધ્યાય જેટલો જ ભાગ મળે છે. જેના ઉપર વર્તમાનાચાર્ય શ્રીમદ્વિજયદર્શનસૂરિજી મહારાજશ્રીએ ટીકા રચેલ છે. તેની પ્રેસકોપી કરતો હતો ત્યારે મને પદે પદે વિચાર કરતાં તેઓશ્રીનું એક એક ટંકોત્કીર્ણ વચન અગાધ પાંડિત્યપૂર્ણ લાગવા સાથે નવીનતા અર્પતું હતું, તો દશેય અધ્યાયની ટીકા મળી હોત તો આજે મળતી બીજી તત્ત્વાર્થની ટીકાઓમાં કોઈ અનેરી ભાત પાડત, અને ઘણું જાણવા વિચારવાનું મળત. છતાં આજે જે ગ્રંથો મળે છે, તે પણ આપણે માટે તો એટલા બધા છે કે તેને સારી રીતે વાંચવા વિચારવા માટે આખુંય જીવન પૂરતું નથી.

આપણે હવે ઉપાધ્યાયજીની પ્રતિમાની પ્રતિષ્ઠામાં મગ્ન કોઈએ પણ તેમની વાસ્તવિક પ્રાણપ્રતિષ્ઠા તો ત્યારે જ ગણી શકાય કે મન, વચન અને કાયાને નીચોવી ભાવિની પ્રજાને ઉપકૃત થવા માટે અથાગ પ્રયાસ લઈ તેમના બનાવેલા ગ્રંથોનું વાચન, મનન અને

પરિશીલન કરીએ, અનુપલબ્ધ ગ્રંથોની શોધખોળ કરીએ, તેમજ તેમનાં વચનો પ્રમાણે યથાશક્ય માર્ગના પાલનરૂપ ઓછામાં ઓછી જરૂરિયાતોથી આપણા જીવનને નિભાવવા જેટલો સ્વાર્થત્યાગ કેળવીએ, કે જેમાં અંશતઃ પણ ભૂતમાત્રની સેવાનો ફાળો આવે. તે રીતે તેમના પગલે અનુસરીએ તો જ આપણે તેમના સાચા ઉપાસક અને સેવક છીએ અને તેમણે આપેલા વારસાને જાળવી રાખ્યો ગણાય. નહિતર વારસામાં મળેલી વસ્તુનો દુરુપયોગ કરનાર અકુલીન પુત્રની જેમ આપણે પણ એવા મહાપુરુષોને અન્યાય આપી રહ્યા હોઈએ એમ શું નથી લાગતું ? તો બને તેટલા તન, મન, ધન ખરચી તેમના અપ્રકાશિત ગ્રંથોને પ્રકાશમાં લાવવા અને પઠન-પાઠનના મોટા વર્ગો ઈનામી અને ઉપાધિઓની યોજનાપૂર્વક પણ ઊભાં કરવાં હાલના તબક્કે અતિઆવશ્યક છે.

ઉપાધ્યાયજી સમર્થ તાર્કિક વિદ્વાન્ હતા, એટલું જ નહીં પણ તેઓ ભારોભાર આધ્યાત્મિક જ્ઞાની પણ હતા, એ તેઓશ્રીના બનાવેલા 'અધ્યાત્મસાર, અધ્યાત્મોપનિષદ્, જ્ઞાનસાર' વગેરે ગ્રંથોથી સ્પષ્ટ માલમ પડે છે.

પૂર્વ મહાપુરુષો જિનભદ્રગણિ ક્ષમાશ્રમણ તથા સિદ્ધસેન દિવાકરનાં પરસ્પર વિરુદ્ધ દેખાતાં છતાં નયાપેક્ષ વચનોને આગ્રહ રાખ્યા સિવાય બરાબર સંગત કરી આપવામાં ઉપાધ્યાયજી મહારાજશ્રીની તુલનાત્મક દૃષ્ટિએ અજબ કામ કર્યું છે તે આજના આચાર્યપુંગવોએ ધડો લેવા જેવું છે.

તેમના જીવનને લગતી કેટલીક કિંવદંતીઓ ચાલી આવે છે, અને તેમાં તથ્ય હોવાની સંભાવના ઘણી જણાય છે. તેમાંની કેટલીક ટૂંકાણમાં અહીં આપવામાં આવે છેઃ-

(૧) બાલવયમાં માતાની સાથે ઉપાશ્રયે પ્રતિક્રમણ કરવા જતાં એક વખત ઉપાશ્રયમાં પ્રતિક્રમણ કરાવનાર કોઈ ન હતું, ત્યારે માતાને બહુ ખેદ થયો. બાલકે ખેદનું કારણ પૂછતાં માતાએ જણાવ્યું કે, પુત્ર ! આજે મારું પ્રતિક્રમણ રહી જશે. કારણ કે આજે ઉપાશ્રયમાં કોઈ પ્રતિક્રમણ કરાવનાર નથી. ત્યારે પુત્રે માતાને કહ્યું: 'તમે જરાય દુઃખ ન લાવો, હું પ્રતિક્રમણ કરાવું', અને માતાને આશ્ચર્ય પમાડતા બાલકે આખુંય પ્રતિક્રમણ બરાબર કરાવ્યું. ઉપાશ્રયે માતાની સાથે જતાં સાંભળવા માત્રથી યાદ રહી ગયું હતું. આ હકીકત ગુરુમહારાજે જાણતાં ભાવિ મહાપુરુષની ગણતરીએ માતા પાસે પુત્રની માગણી કરી, અને માતાએ પણ તે માગણી ખૂબ હર્ષપૂર્વક આવકારી હતી.*

(૨) ઉપાધ્યાયજી મહારાજ કાશીથી અભ્યાસ કરી તાજા જ આવેલા અને સાંજે ગુરુમહારાજ સાથે પ્રતિક્રમણ કરતાં સજ્ઝાય બોલવાનો સમય થતાં ગુરુમહારાજે બોલવી શરૂ કરી ત્યારે શ્રાવકોએ ગુરુમહારાજને સૂચન કર્યું કે, 'સાહેબ ! આપના વિદ્વાન શિષ્ય કાશીમાં અભ્યાસ કરી આવ્યા છે તો તેમને સજ્ઝાય બોલવા કહો, તો કંઈક નવું સાંભળવા અને જાણવા મળે.' ગુરુજીએ કહ્યું કે, 'બોલ ત્યારે.' ઉપાધ્યાયજી મહારાજે કહ્યું કે,

* આ પણ એક દંતકથા છે. સંપા.

'સાહેબ ! સજ્ઝાય તો આવડતી નથી.' ત્યારે શ્રાવકોમાંથી કોઈક બોલી ઊઠ્યું કે, "બાર વર્ષ કાશીમાં રહી શું ઘાસ વાઢ્યું ?" ઉપાધ્યાયજી મહારાજ તો ચૂપ રહ્યા. પણ બીજે દિવસે સજ્ઝાયનો અવસર પામી આદેશ માગી સજ્ઝાય કહેવા માંડી. વખત ઘણો વીતવા માંડ્યો, બધા અકળાયા પણ ઉપાધ્યાયજી મહારાજે તો સજ્ઝાય બોલવી ચાલુ જ રાખી. ટકોર કરનાર ટકોર કરવામાં પણ ઉતાવળા હોય છે, તેમ અકળાઈ જવામાં પણ સહુથી આગળ હોય છે. એટલે ટકોર કરનાર શ્રાવકે જ કહ્યું: 'હવે ક્યાં સુધી ચાલશે ?' જવાબમાં ઉપાધ્યાયજી મહારાજશ્રીએ કહ્યું કે, "કાશીમાં બાર વર્ષ વાઢેલા ઘાસના આ તો પૂળા બંધાય છે." આથી ટકોર કરનાર શ્રાવક ઝંખવાણા પડી ગયા અને ક્ષમા યાચી સ્તુતિ કરવા લાગ્યા.

(૩) કલિકાલસર્વજ્ઞ હેમચંદ્રસૂરિ, ઉદયન મંત્રી, પરમાર્હત કુમારપાળ, વસ્તુપાળ, તેજપાળ આદિના સુવર્ણમય જીવનથી જવલંત અને નવાંગી ટીકાકાર શ્રી અભયદેવસૂરિ મહારાજથી આરાધ્ય સ્થંભન પાર્શ્વનાથના નામે સ્થંભનપુર તરીકે પ્રસિદ્ધ થયેલ ખંભાત શહેરમાં ઉપાધ્યાયજી મહારાજ એક વખત વ્યાખ્યાન આપી રહ્યા હતા. સભા તેમની અમૃત વાણીના શ્રવણમાં એકતાન હતી. ઉપાધ્યાયજી મ. શ્રીના વિદ્યાગુરુ એક વખત દરિદ્રાવસ્થામાં આવી ગયેલ અને પોતાના શિષ્ય ઉચ્ચકોટિના વિદ્વાન અને પ્રખર વ્યાખ્યાતા બનેલ છે એમ જાણી તેમની શોધ કરતા કરતા ખંભાતમાં બરાબર ચાલુ વ્યાખ્યાનમાં જ આવી પહોંચ્યા. ઉપાધ્યાયજીએ પણ આવનાર વ્યક્તિને એકદમ ઓળખી લીધી. અને જોતાંવેંત જ પરિસ્થિતિનું માપ કાઢી લઈ વાણીનો પ્રવાહ એકદમ વિદ્યાની મહત્તામાં ફેરવ્યો અને અંતે જણાવ્યું કે, મારામાં આજે જે કંઈક અંશે પણ વિદ્વત્તા કે વક્તૃતા જોઈ શકો છો તે આ આગન્તુક વ્યક્તિનો જ પ્રભાવ છે. એમ જણાવી વિદ્યાગુરુનું ઓળખાણ આપવા સાથે જ્ઞાન, જ્ઞાની તથા જ્ઞાનનાં સાધનોનું બહુમાન સૂચવતું એવું અસરકારક વ્યાખ્યાન આપ્યું કે જેથી પોરિસિ ભણાવવા સમયે બેઠેલા સમગ્ર શ્રાવક-શ્રાવિકાગણે પોતે પહેરેલાં સર્વ આભૂષણો ગુરુનાય વિદ્યાગુરુના ચરણે ધરી દીધાં જે તે જમાનાની ગણતરીએ ૩૦ થી ૪૦ હજારની કીમતનાં હતાં. ધન્ય છે તેમની વાણીને અને ભાવુક શ્રાવકોની ઉદારતાને !

આપણે પણ તેમના જ શિષ્યો અને શ્રાવકો છીએ. તેઓશ્રીના સાહિત્ય માટે જેટલું કરીએ તેટલું ઓછું જ છે. એટલે તેમના સાહિત્યનો પ્રચાર, પઠનપાઠન, અપ્રગટ ગ્રંથોનું પ્રકાશન, અને અલભ્ય ગ્રંથોની પૂર્તિ કરીએ એ જ તેમની સાચી અને મહામૂલી પ્રતિષ્ઠા છે અને પ્રતિષ્ઠાદિનની સાત્ત્વિક ઉજવણી છે; એટલું જ જણાવી તે બાબતમાં આપણે સહુને સામર્થ્ય અને પ્રેરણા આપવા શાસનદેવ પ્રત્યે પ્રાર્થના કરી ઉપાધ્યાયજીના સંબંધમાં અધૂરા, અવ્યવસ્થિત કે ક્ષતિ રહેવા પામેલ લેખન બદલ ક્ષમા યાચી અટકી જાઉં છું.

❦

યશઃપ્રકાશ

[લેખક : શ્રીયુત છબીલદાસ કેશરીચંદ સંઘવી]

(રાગ–સુનો સુનો એકરાર હમલોગ)

તુમે શાસનકા શિરતાજ, દુનિયા કિયા તેં ઉદ્ધાર;
આવો આવો મેરે દ્વાર, થાઉં મેં હૃદિ ઉજિયાલકે--તુમે૦

ન્યાયવિદ્ ન્યાયકા આચાર્ય હૈ, હેમ હરિભદ્રસમ પ્રાતિભ હૈ;
કિયા શાસનકા ઉદ્ધાર, કરું તુમસે પુકાર,
સત્ર સારસ્વત આજ, થાઉં મેં હૃદિ ઉજિયાલકે--તુમે૦

મેરે શાસનમેં ઋદ્ધિ અપાર હૈ, મેરે શાસનમેં વૈભવ અપાર હૈ,
મેરે શાસનકી કીર્તિ અખંડ હૈ, મેરે શાસનમેં દાનકા પ્રવાહ હૈ,
દુઃખ ઇતના હી યાર, જ્ઞાન દીપક પ્રગટાય,
કરું તુમસે પુકાર, થાઉં મેં હૃદિ ઉજિયાલકે--તુમે૦

જ્ઞાનગંગાકું બહેલાઇ હૈ, જ્ઞાન ઝરણાંકા કૈલાસ હૈ,
કરું વિનતિ આ વાર, સુનો નિર્મલ દિલદાર,
આવો આવો મેરે દ્વાર, થાઉં મેં હૃદિ ઉજિયાલકે--તુમે૦

अज्ञातवाग्विवेकानां, पण्डितत्वाभिमानिनाम् ।
विषं यद् वर्तते वाचि, मुखे नाशीविषस्य तत् ॥५॥

વાણીના વિવેકને નહિ જાણનારા અને પાંડિત્યનું અભિમાન કરનારાની વાણી અને મુખમાં જેવું ઝેર હોય છે એવું તો સર્પનું ઝેર પણ હોતું નથી.

द्वात्रिंशिका] [શ્રી. યશોવિજયજી

卐

બે જ્યોતિર્ધરોની મિલનજ્યોત

ઉપાધ્યાયજી શ્રી યશોવિજયજી અને અવધૂત આનંદઘનજી

[આલેખક—શ્રીયુત મણિલાલ મો. પાદરાકર]

"વાણી વાચક જસતણી—કોઈ નયે ન અધૂરી રે."[1]

"कान्ताधरसुधास्वादाद्यूनां यज्जायते सुखम् ॥
बिन्दुः पार्श्वे तदध्यात्मशास्त्रस्वादसुखोदधेः ॥"

કાન્તાના અધરામૃતના આસ્વાદથી યુવકોને જે સુખ થાય છે, તે સુખ તો અધ્યાત્મ શાસ્ત્રના આસ્વાદથી થનાર સુખરૂપ સમુદ્રની પાસે એક બિન્દુ સમાન છે.—અધ્યાત્મસાર.

[રાગ-દુમો]

જય સરસ્વત સરસ ગવૈયા !
નય[2] અજય સુયશ રસવૈયા,[3]
અજય તું ન્યાયવિશારદ તાર્કિક, શ્રુતધર ઘન વરસૈયા,
અદ્ભુત જ્ઞાની સુરમણિ સહુરે, લઘુહરિભદ્ર લહરિયાં.
હેમચંદ્ર સમશાવત દુરપળ, ગ્રંથ બહુલ રચૈયા.
શુદ્ધ લક્ષણ સદ્ગુણ નિજગુણ, સ્વાનુભવ નિત્ય રમૈયા.
દ્રવ્યગુણ પર્યાય સુનય, નિક્ષેપ ભંગ સમરૈયા.
ગર્જત યોગાધ્યાત્મ સ્વગુણ, રસ રાસ રમણ રસવૈયા.[4]
ડોલત દિલ આનન્દઘન પેખત. આનંદ પંથ ચઢૈયા.
શાસન સુભટ સુપાઠક વાચક, ઉપાધ્યાય બિરદૈયા—પાદરાકર

"सर्वदर्शनविख्यातो, विश्ववन्द्यो मुनीश्वरः ।
ज्ञानी ध्यानी यशोभक्तो, विरागाणां शिरोमणिः ॥ १ ॥

---

૧. શ્રીપાળ રાસ, ખંડ ૪, ઢાળ ૧૨.

૨. નય-શ્રીમદ્ના ગુરુશ્રી નયવિજયજી, સુનય, ન્યાય.

૩. રસવૈયા-જ્ઞાનામૃતરસ પીનાર-રસમૂર્તિ.

૪ "સુરત આનંદઘન મિલને, મહાજ્યોત જગાવી જે,
વિબુધ જન અન્તરે પ્રગટી, સદા એ જલતી રહે;
કોઈ સારસ્વત સ્નેહે, નિમધાસર એ વહે,
અને વિદ્વજ્જનો હૈયે, નિજાનંદ સદા ભરે."—લેખક

शुद्धधर्मोपदेष्टा च, जैनशासनद्योतकः ॥
ध्यानिनामग्रणीर्मान्यो, भावचारित्रसाधकः ॥ २ ॥
अध्यात्मोद्धारकः पूज्यः, समतानन्दभाक् च यः ॥
आनन्दघनयोगीशः, जीयाद् भारतमण्डले ॥ ३ ॥ [श्रीबुद्धिसागरजी]

મહામૈયા ભગવતી શારદાના ઉત્સંગે અતિ લાડથી ખેલી ખેલી મસ્ત બનેલા, કુર્ચાલી શારદનું[૫] વિરલ બિરુદ પામેલા, વારાણસીના ગંગા કિનારે દેવી શારદાને આરાધી પ્રકટ દર્શન અને વરદાન પામેલા, ગિર્વાણ ગિરામાં ન્યાયતર્ક આદિ ગૂઢ વિષયો પર ૧૦૮ મહાગ્રંથો આલેખી કાશીના પ્રકાંડ વિદ્વત્તાવાળા પંડિતો દ્વારા જેમને ન્યાયાચાર્ય, ન્યાયવિશારદ પદ અર્પણ કરાયું છે એવા, ગુર્જર ભાષામાં અનેક ગહન વિષયો પર સંખ્યાબંધ મહાગ્રંથોના રચયિતા, જન્મથી સંસ્કારસંપન્ન, પ્રથમ થઈ ગયેલા પ્રભવાદિ છ શ્રુતકેવળી જેવા શ્રુતયોગસંપન્ન શ્રુતધર, શતલક્ષ સદ્‌ગુણી, શ્રુતજ્ઞાનસુરમણિ, સૂક્ષ્મદ્રષ્ટા, બુદ્ધિનિધાન, જ્ઞાનવારિધિ, સકલ શાસ્ત્રપારંગત, અન્વીક્ષિકી વિદ્યાધારી, મહાન્ સમન્વયકાર, પ્રખર નૈયાયિક, ભગવાન શ્રી હરિભદ્રસૂરિ પછી જેમ શ્રી હેમચંદ્રસૂરિજી તેમ તેમની પાછળ શાસનસંરક્ષક ધર્મ સેનાપતિ, દ્રવ્ય અને ભાવથી શુદ્ધાચાર ક્રિયાપાલક, વાદિમદભંજક, સકલ મુનિશેખર, દ્રવ્યાનુયોગનો દરિયો ઉલ્લંઘી જનાર, શાસન માટે ઝઝનાર, મહાન્ અધ્યાત્મજ્ઞાની, પરમગુણાનુરાગી, બાલબ્રહ્મચારી, સ્વનામધન્ય ઉપાધ્યાયજી શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજ અને મહાન અવધૂત, અધ્યાત્મ જ્ઞાનમસ્તીમાં સદોદિત મસ્ત, ગિરિ-ગુફા કોતરોમાં અંતરાત્મદશામાં ખેલનાર, યોગ, અધ્યાત્મ જ્ઞાન, ત્યાગ, તપ, તિતિક્ષાદિ વિષયો ઠસોઠસ ભરી આત્મ-પ્રભુને ગાનાર, અલખ, અનાહતનો ગાન ગવૈયો એવા શ્રીમદ્ આનન્દઘનજી-એવા બે ભારતવર્ષના યોગાધ્યાત્મ-જ્ઞાન-જ્યોતિર્ધરો પરસ્પર અપરિચિત એવા, જ્યારે પરમ જિજ્ઞાસુ દૃષ્ટિએ મળ્યા હશે, ત્યારે ઉભયે કેવો નિજાત્માનંદ લૂંટ્યો હશે? જ્ઞાનસરોવરની પાસે કેવી આત્માનંદ સુરસ લહાણ લીધી-દીધી હશે? જાણ્યા તેવા જ પ્રમાણ્યા હશે ત્યારે કેવી અને કેટલી હર્ષોન્મત્ત દશામાં પરસ્પર ભેટી પડ્યા હશે? કેટલો આદર, આનંદ, ઉલ્લાસ પ્રકટ્યો હશે, વૃદ્ધિ પામ્યો હશે? પરસ્પરનાં મુખદર્શન બાદ, અંતરાત્મદશાના દર્શને કેવો પ્રમોદ ઊછળ્યો હશે? કેવા સ્થળ, સમય, સંજોગે એ અદ્‌ભુત પ્રસંગ જામ્યો હશે? એ હકીકત પ્રત્યેક ગુણાનુરાગી, આત્મહિતાર્થી, જ્ઞાનપિપાસુ, આધારક, વિચારક અને તત્ત્વ-ચિન્તકને જરૂર પ્રમુદિત કરનાર બનશે એમ માની આ જ્યોત પ્રકટાવવા પ્રયત્ન કરું છું.

આ બન્ને મહામાનવોની સાદ્યંત જીવનગાથા ઉપલબ્ધ છે તેટલી શોધવાના અમારા પ્રયત્નો વર્ષોથી ચાલુ છે. અત્યાર સુધીમાં આ દિશામાં શોધખોળના ઘણા પ્રયાસો સેવાયા છે:—

---

૫. કુર્ચાલી શારદ-મૂછાળી શારદા.

૧. ‘ શ્રી. આનન્દઘન પદસંગ્રહ ’ ભાવાર્થ, સં. ૧૯૬૯માં છપાયો, જેમાં શ્રીમદ્‌નાં ૧૦૮ પદો પર વિસ્તૃત વિવેચન માટે આલબ્રહ્મચારી, પંચમહાવ્રતધારી સ્વ૦ બુદ્ધિસાગર-સૂરીશ્વરે આ બે મહાપુરુષોને આલેખ્યા છે.

(આ ગ્રંથનાં ડેમી સાઈઝનાં ૬૦૦ પૃષ્ઠ નક્કર હકીકત રજૂ કરે છે. શ્રી આનન્દઘન જીવનચરિતની રૂપરેખા ૧૦૧ પૃષ્ઠ રોકે છે—જુઓ શ્રી અધ્યાત્મજ્ઞાન પ્રસારક મંડળે પ્રકટ કરેલ શ્રી બુ. ગ્રં. ગ્રંથમાળા ગ્રન્થાંક ૨૫. આ ગ્રંથ પ્રકટ થયા બાદ તેની ત્રીજી આવૃત્તિ પ્રકટ કરવાની તૈયારી છે.)

૨. શ્રીમદ્ બુદ્ધિસાગરસૂરિજીએ શ્રી યશોવિજયજી જીવન વિશે, વડોદરાના શ્રી સંપતરાવ ગાયકવાડની વિનંતીથી પાદરા હતા ત્યારે વડોદરા ગુજરાતી સાહિત્ય પરિષદ માટે લખેલો, પરિષદમાં વંચાયેલો વિસ્તૃત નિબંધ સં. ૧૯૬૮ માં છપાયલો છે.

૩. આ સિવાય આ વિષય પરત્વે, જૈન સાહિત્ય પ્રકાશના વિકાસ માટે પરમ પુરુષાર્થ સેવનાર સ્વ૦ મોહનલાલ દલીચંદ દેસાઈએ ખૂબ પ્રકાશ પાડ્યો છે. ‘ જૈન સાહિત્યનો સંક્ષિપ્ત ઈતિહાસ.’ સં. ૧૯૮૯ તથા અન્ય અનેક લેખો દ્વારા આ બાબત તેમણે ખૂબ ચર્ચી-પ્રકાશી છે.

૪. સ્વ૦ મોતીચંદભાઈ કાપડિયાનો શ્રી. આનન્દઘનજી બાબતનો સંશોધનાત્મક પ્રયત્ન પ્રશંસનીય હતો. આ ઉપરાંત મોરબીવાળા ડૉ૦ વલ્લભદાસ નેણસી, મુંબઈવાળા ડૉ૦ ભગવાનદાસ મ૦ મહેતા વગેરેના પ્રયાસો ચાલુ જ છે.

૫. સ્વ. આચાર્યશ્રી. બુદ્ધિસાગરસૂરિજીએ આ બે જ્યોતિર્ધરોનું મિલનચિત્ર સુંદર રીતે રજુ કર્યું છે.

અમારો આશય આ બે જ્યોતિર્ધરોની મિલનજ્યોત કેવી ને કેટલી ઝળહળમાન હશે? કેટલો ગુણાનુરાગ ઊછળ્યો હશે ? તેમાંથી જગતને નવીન શું મળ્યું અગર મળે તેમ છે ? વાણીનો અમૃતસ્રોત કેવો વહ્યો હશે એનું દર્શન કરાવવાનો છે.

જૈન શાસનધોરી, આગમોના અદ્ભુત જ્ઞાતા ઉપાધ્યાયજી શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજ ફરતા ફરતા ગિરિરાજ આબુ તરફ જાય છે, તે સમયે તેઓ સાધુઓમાં બહુ-શ્રુત ગણાતા. તેમણે સાંભળ્યું કે, એક અવધૂત જેવા જૈન સાધુ શ્રી આનન્દઘનજી અધ્યાત્મજ્ઞાનમાં ઊંડા ઊતરી ગયા છે, તેમની ઉપદેશશૈલી—દ્રવ્યાનુયોગ આદિમાં અદ્ભુત છે, યોગાનુભવ ચમત્કારી છે, એકાકી વિચરે છે, ગુફાઓમાં યોગ સાધે છે. ક્વચિત્ જ જનસંપર્ક સાધે છે અને આબુજીની આસપાસ ડુંગરાઓમાં અલખની ધૂન મચાવી રહ્યા છે. આથી તેમનો પત્તો મળે તો તેમને મળવાની ભાવના સેવતા હતા, અને પોતે પણ અધ્યાત્મજ્ઞાનનો ઉપદેશ આપવા લાગ્યા હતા. આ બાજુ અવધૂત આનન્દઘનજીએ પણ ઉપાધ્યાયજીની અપૂર્વ વિદ્વત્તાની પ્રશંસા સાંભળી હતી. સિદ્ધાંત-પારગામી, કુશળ એવા ઉપાધ્યાયજી પોતાની નજીકના પ્રદેશમાં વિચરતા હતા તે સાંભળી

શ્રી. આનન્દઘનજી * ઉપાધ્યાયજીને મળવા એકાકી ચાલી નીકળ્યા. એક ગામમાં ઉપાશ્રયમાં શ્રી. યશોવિજયજી વ્યાખ્યાન વાંચે છે. સાધુઓ, યતિઓ, શ્રાવક, શ્રાવિકાઓ એકચિત્તે શ્રવણ કરે છે. શ્રી. આનન્દઘનજી જીર્ણ-વસ્ત્રધારી સાધુ, યતિઓ ભેગા એક બાજુ બેસી ગયા ને વ્યાખ્યાન શ્રવણ કરવા લાગ્યા. ઉપાધ્યાયજી અધ્યાત્મજ્ઞાન પર અસરકારક શૈલીમાં વ્યાખ્યાન કરવા લાગ્યા અને અનેક તર્કોથી અધ્યાત્મજ્ઞાન પરત્વે વિવેચન કરવા લાગ્યા. વ્યાખ્યાનની ઝડી વરસવા લાગી, શ્રોતાવર્ગ એકચિત્તે વ્યાખ્યાનરસમાં તલ્લીન બની માથાં ધુણાવવા લાગ્યો. સૌના મુખ પર આનંદ છવાઈ ગયો ને એકીઅવાજે બોલવા લાગ્યા—"વાહ! આપના જેવો અધ્યાત્મનો ઉપદેશ દેનાર આ કાળને વિષે કોઈ નથી. ઉપાધ્યાયજીએ આખી સભામાં પોતાના વ્યાખ્યાનની અસર શ્રોતાઓ ઉપર કેવી અને કેટલી પડી છે તે જોઈ લીધું. સૌ રસતરબોળ બન્યા હતા—માત્ર એક જીર્ણ વસ્ત્રધારી વૃદ્ધ સામાન્ય સાધુ તરફ તેમની દૃષ્ટિ જતાં તેને આ વ્યાખ્યાનથી વિશેષ પ્રમોદ થયો જણાયો નહિ, તેથી તેમણે પૂછ્યું: 'હે વૃદ્ધ સાધુ! તેં વ્યાખ્યાન બરાબર સાંભળ્યું? અધ્યાત્મજ્ઞાનના વ્યાખ્યાનમાં તને સમજણ પડી કે?' શ્રી. આનન્દઘનજી બોલ્યા કે, "આપશ્રી અધ્યાત્મજ્ઞાનના વ્યાખ્યાનમાં શાસ્ત્રોથી ઉત્તમ દક્ષતા દાખવો છો." આ સાંભળીને ઉપાધ્યાયજી તેમના સામે જોઈ રહ્યા. ખૂબ વિચારને અંતે તેમનું નામ પૂછતાં તેઓશ્રી પોતે જ શ્રી. આનન્દઘનજી છે એમ જણાતાં તેમણે વિનયથી જણાવ્યું કે, "મેં વિવેચન કરેલા શ્લોક પર આપ વિવેચન કરો." આથી શ્રી. આનન્દઘનજીએ ઉપાધ્યાયજીના અતિઆગ્રહવશ પાટ પર બેસી તે જ શ્લોક પર વિવેચન કરવા માંડ્યું. ત્રણ કલાક વીતી ગયા તે જણાયા નહિ. શ્રોતાવર્ગમાં આનન્દની લહરીઓ લહેરાવા લાગી. આનન્દઘનજીની નાભિમાંથી તન્મયપણે પરિણામ પામીને જે શબ્દો નીકળતા હતા, જે રસ રેલાતો હતો, જે સ્પષ્ટીકરણ થતું હતું તેનું ઉપાધ્યાયજી બરાબર ધ્યાન રાખતા હતા. અધ્યાત્મ જ્ઞાનરસમાં જેમનું ચિત્ત પરિણમી ગયું છે, રોમેરોમ રંગાઈ ગયાં છે એવા શ્રી. આનન્દઘનજીના શબ્દોમાં જ્ઞાન અને વિરાગની એવી ઉત્તમ છાયા છવાતી હતી કે જે અકૃત્રિમપણે—સ્વાભાવિક જણાતી હતી. તેની ઉપાધ્યાયજી પર ખૂબ અસર થઈ. તેઓ પોતે પણ એ આનંદઘેનમાં ઘેરાઈ ગયા અને તે સમયે શ્રી. આનન્દઘનજીના સાચા આત્મદર્શનની ઝાંખી તેમને થઈ. અંતરમાં તેમના પ્રતિ પૂજ્યભાવ પ્રકટ્યો, નયનોમાં હર્ષાતિરેક ઉભરાયો અને પ્રેમપૂર્વક સ્તુતિ કરી બંનેએ પરસ્પર ગુણાનુરાગભરી જ્ઞાનગોષ્ઠી કરી. અધ્યાત્મજ્ઞાનની અસલિયત, તેનું પરિણમન અને પરિપાક અને પાત્રતા શ્રી. ઉપાધ્યાયજીને સમજાયાં અને પોતાને આ પ્રસંગ ધન્ય ઘડી જેવો લાગ્યો. અધ્યાત્મજ્ઞાનનું સાચું રહસ્ય તો તેનો સ્વાનુભવ અને પચન છે, ને તો જ તે જીવન પલટાવનાર અને પ્રાંતે આત્મપલટણ સ્વભાવ પામીને રસમાં ઝીલી શકે અને કામ કાઢી જાય. બંને મિત્રો જેવા ખૂબ આત્મજ્ઞાનાનંદ લૂંટી છૂટા પડ્યા, પણ ઉપાધ્યાયજીની નસેનસમાં,

* ઉપાધ્યાયજીના જીવન આસપાસ સારી નરસી અનેક દંતકથાઓ જોડાઈ ગઈ છે તે રીતે આ પણ એક દંતકથા છે. આની વાસ્તવિકતા માટે ચકાસણી કરવી રહી. સંપા૦

રોમરોમમાં અધ્યાત્મ રસરંગ છવાઈ ગયો. મિલન પછીના તેમના તમામ ગ્રંથોમાં એ સ્પષ્ટ થાય છે. છૂટા પડ્યા પછી પણ પુનઃ ક્યારે મળાશે? એ ભાવના જાગૃત રહી ગઈ, અને શ્રી. આનન્દઘનજીનું સ્મરણ હૃદયમાં અંકાઈ ગયું. થોડા વખત બાદ તેમને શ્રી. આનન્દઘનજીના મિલનની તીવ્ર ઝંખના જાગી. પૂર્વે અનુભવેલ અધ્યાત્મરસાસ્વાદ પુનઃ માણવા તત્પર બન્યા અને આબુ પહાડ તરફ ચાલી નીકળ્યા. ત્યાં પહોંચી પ્રથમ તીર્થાધિરાજને દર્શન, સ્પર્શને જઈ પછી ત્યાં ફરતા બાવાઓ વગેરેને પૂછપરછ કરવા માંડી કે, શ્રી. આનન્દઘનજી ક્યાં મળશે? અન્તે શોધ કરવા માંડી. આ અવધૂત તો નિરુપાધિક, સુંદર પરમાણુવાળું, ચિત્ત હરે તેવું સ્થળ મળતાં જ આસન જમાવે; પછી ગુફા હોય કે કોતર કે શિલા. તપાસ કરતાં સમાચાર મળ્યા કે એક મસ્ત સાધુ અમુક ગુફામાં છે. ઉપાધ્યાયજી તરત જ ત્યાં પહોંચી ગયા અને મિત્ર આનન્દઘનજી ગુફામાંથી બહાર નીકળે તેની રાહ જોતા ઊભા.

શ્રીમદ્ આનન્દઘનજી ધ્યાન સમાધિમાંથી મુક્ત થઈ હમણાં જ ગુફામાંથી બહાર નીકળતા હતા. આનન્દપૂર્વક આત્મગાન ગાતા હતા. મુખ પર દિવ્ય આનંદની ચેનલરી છાયા છવાઈ હતી. નયનોમાં અપૂર્વ શમરસ ઉભરાતો હતો. રોમરોમ વિકસ્વર થયાં હતાં. ધીર ગંભીર પગલે બહાર આવ્યા ને ઉપાધ્યાયજીએ તેમને આ અદ્ભુત દશામાં જોયા. શ્રીમદે ઉપાધ્યાયજીને મિલનની તીવ્ર જિજ્ઞાસાભરી તાલાવેલીવાળાં જોયા. બન્નેનાં નયનો મળ્યાં. શ્રી. આનન્દઘનજી ઝડપથી ઉપાધ્યાયજી તરફ ધસ્યા, બન્ને ભેટી પડ્યા. આનંદ ગાનઘોષ થયો. બન્નેનાં નેત્રો મારફત આંતર ગુણાનુરાગ પ્રેમભાવ ઝળહળવા લાગ્યો. ઉપાધ્યાયજીનો આનંદ ઉલ્લાસ પણ અપૂર્વ હતો, બન્ને પ્રખર વિદ્વાન હતા, ભાવભર્યા કવિ હતા, પરસ્પર અનુચિત અનુરાગવાળા હતા. બન્નેએ એકબીજાનાં હૃદયોની નિર્મળતા, ભાવના, ગુણાનુરાગિતા, પ્રેમ જોયાં, જાણ્યાં, અનુભવ્યાં હતાં અને બન્ને સર્વશ્રેષ્ઠ કવિ હતા, એટલે સાચો ઉલ્લસિત ચિત્તવાળો સુકવિ જ્યારે રંગમાં આવી જઈ હૃદયની ભાવનાને પ્રકટ કરવા મથે છે ત્યારે તે કાવ્યસ્વરૂપે ઝરવા લાગે છે. તે વસ્તુને સાક્ષાત્ કરે છે. આ તો સાક્ષાત્ સરસ્વતી પુત્ર! અધ્યાત્મ ધર્મના બન્ને મહાન સ્તંભો. બન્નેની જીહ્વાઓ ભાવનાસાગર વહાવવા તત્પર બની ઊઠી અને ઉપાધ્યાયજીએ પ્રથમ અષ્ટપદી ઉપાડી ગાવા માંડી:—

અષ્ટપદી

૧

(રાગ–કાનડો)

મારગ ચલત ચલત ગાત, આનંદઘન પ્યારે,
રહત આનંદ ભરપૂર. મારગ૦
તાકો સરૂપ ભૂપ ત્રિહું લોક થેં ન્યારો,
બરસત મુખ પર નૂર. મારગ૦ ૧

સુમતિ સખીકે સંગ, નિત નિત દોરત,
કબહુ ન હોત હી દૂર. મારગ૦
જશવિજય કહે સુનો આનંદઘન,
હમ તુમ મિલે હજૂર. મારગ૦ ૨

૨

આનંદઘનકો આનંદ સુજશ હી ગાવત,
રહત આનન્દ સુમતા સંગ. આનંદ૦
સુમતિ સખી ઓર ન બલ આનંદઘન,
મિલ રહે ગંગતરંગ. આનંદ૦ ૧
મનમંજન કરકે નિર્મળ કિયો હે ચિત્ત,
તા પર લગાયો હે અવિહડ રંગ;
જસવિજય કહે સુનત હી દેખો,
સુખ પાયો બોત અભંગ. આનંદ૦ ૨

૩

(રાગ—નાયકી, તાલ—ચંપક)

આનંદ કોઉ નહિ પાવે, જોઈ પાવે સોઈ આનંદઘન ધ્યાવે. આ૦
આનંદ કોનરૂપ, કોન આનંદઘન, આનંદગુણ કોણ લખાવે. આ૦
સહજ સંતોષ આનંદગુણ પ્રકટત, સબ દુવિધા મીટ જાવે. આ૦
જસ કહે સો હી આનંદઘન પાવત, અંતરજ્યોત જગાવે. આ૦

૪

(રાગ—તાલ—ચંપક)

આનંદ ઠોર ઠોર નહિ પાયા, આનન્દ આનન્દમેં સમાયા. આ૦
રતિ અરતિ દોઉ સંગ લીય વરજિત, અરથને હાથ તપાયા. આ૦
કોઉ આનંદઘન છિદ્ર હી પેખત, જસરાય સંગ ચઢી આયા. આ૦
આનંદઘન આનંદરસ ઝીલત દેખત હી જસ ગુણ ગાયા. આ૦

૫

(રાગ—નાયકી)

આનંદ કોઉ હમ દિખલાવો, આ૦
કહાં ઢૂંઢત તું મૂરખ પંછી, આનન્દ હાટ ન એકાવો. આ૦ ૧
એસી દશા આનન્દ સમ પ્રકટત, તા સુખ અલખ લખાવો,
જોઈ પાવે સોઈ કછુ ન કહાવત, સુજસ ગાવત તાકો બધાવો. આ૦ ૨

૬

(રાગ—કાનડો, તાલ—રૂપક)

આનન્દકી ગત આનન્દઘન જાણે, આ૦
વાઈ સુખ સહજ અચલ અલખ પદ, વા સુખ સુજસ બખાને. આ૦ ૧

સુજસ વિલાસ જબ પ્રગટે આનન્દરસ, આનંદ અક્ષય ખજાને. આ૦
એસી દશા જબ પ્રગટે ચિત્ત અંતર, સો હી આનન્દઘન પિછાને. આ૦ ૨

૭

એરી આજ આનન્દ ભયો મેરે, તેરો મુખ નીરખ નીરખ,
રોમરોમ શીતલ ભયો અંગ અંગ. એરી૦
શુદ્ધ સમજણ સમતારસ ઝીલત,
આનંદઘન ભયો અંગ અંગ. એરી૦ ૧
એસી આનંદ દશા પ્રગટી ચિત્ત અંતર,
તાકો પ્રભાવ(પ્રવાહ)ચલત નિર્મલ ગંગ;
વાહી ગંગ સમતા દોઉ મિલ રહે,
જસવિજય ઝીલનકે સંગ. એરી૦ ૨

૮

આનન્દઘનકે સંગ સુજસ હી મિલે જબ, તબ આનન્દસમ ભયો સુજસ.
પારસ સંગ લોહા જો ફરસત, કંચન હોત હી તાકે કસ. આ૦ ૧
ખીર નીર નીમિલ રહે આનન્દ જસ, સુમતિ સખીકે સંગ ભયો હૈ એકરસ.
ભવ ખપાઈ સુજસ વિલાસ ભયે, સિદ્ધ સ્વરૂપ લીયે ધસમસ. આ૦ ૨

શ્રી. ઉપાધ્યાયજીનું અતિ આતુર મિલન, વ્યાકુલ-હૃદયે ગુફા પાસે આવવું અને શ્રી. આનન્દઘનજીનું આત્મગાન ગાતાં ગાતાં મસ્ત આત્મદર્શનમાં ગુફા બહાર નીકળવું. બન્નેનાં પરસ્પર દર્શન-ભક્તિ પ્રેમપૂર્વક બન્નેના હર્ષોદ્ગાર અને ભેટી પડવું. નયનોમાંથી અદ્ભુત આનંદનું ટપકવું, રોમરાજીનું વિકસ્વર થવું આમ આ બે મહાન જ્યોતિર્ધરોની મિલનજ્યોત કેટલી જ્વલંત-એકરૂપ-અદ્ભુત હશે ? એને જોનાર પહાડનાં ઝાડ-પાષાણ અને કુદરત સિવાય કોણ હોય? પછી તો ઉપાધ્યાયજી હર્ષાવેશમાં, ગુણાનુરાગ દૃષ્ટિએ શ્રી. આનન્દઘનજીને જેવા આત્મરસ મગ્ન જુએ છે તેવા જ અંતરોદ્ગારરૂપે ચીતરવા પ્રશંસાની કાવ્યલહરી ઉછાળે છે. એમ એક પછી એક આઠ પદ નવાં બનતાં જાય છે-ગવાતાં જાય છે અને બંને એ કાવ્ય રસતરંગોમાં ડૂબે છે.

આ અષ્ટપદીના જવાબરૂપે શ્રી. આનન્દઘનજી પણ તરત જ એક અષ્ટપદી ઉપાધ્યાયજીના ગુણાનુવાદની બનાવે છે જે હાલ ઉપલબ્ધ નથી છતાં 'શ્રી. આનન્દઘનજી પદસંગ્રહ ભાવાર્થ'માં શ્રીમદ્ બુદ્ધિસાગરસૂરિજી લખે છે કે, "શ્રીમદ્ આનન્દઘનજીએ શ્રીમદ્ ઉપાધ્યાયજીના ગુણોના રાગ વડે તેમની અષ્ટપદી હૃદયોદ્ગારરૂપે રચી છે. ઘણા જૈનો તરફથી એ પ્રમાણે શ્રવણ કર્યું છે. વિજાપુરવાળા અધ્યાત્મપ્રેમી શા સુરચંદ સ્વરૂપચંદે (જેમણે પોતે અધ્યાત્મજ્ઞાનના ગ્રંથો લખ્યા-શોધ્યા-પ્રકટ કર્યા છે, એમણે) કહ્યું હતું કે, "મેં સુરતમાં સં૦ ૧૯૫૨ની સાલ લગભગમાં આનન્દઘનજીએ ઉપાધ્યાયજી પરની રચેલી અષ્ટપદી વાંચી છે." અમોએ સુરતમાં તપાસ કરી હતી, પણ અમોને તે હાથ લાગી નથી. એ અષ્ટપદીમાં ઉપાધ્યાયજીના ગુણોનું વર્ણન છે. ઉપાધ્યાયજી ગીતાર્થ અને આગમોના આધારે સત્ય-

ઉપદેશક છે, તેમનામાં ઘણી લઘુતા છે, ગુણાનુરાગમાં રંગાયેલા હૃદયવાળા છે, જૈનશાસનના રક્ષક-પ્રવર્તક અને પૂર્ણપ્રેમી છે. જૈનશાસનનો ઉદય કરવા માટે પરિપૂર્ણ આત્મભોગ આપનાર છે. વ્યવહાર અને નિશ્ચય નયથી જૈનધર્મ પ્રવર્તક છે. જૈનશાસનની હૃદયમાં ઊંડી દાઝ ધારણ કરનાર અને વિશાળ દૃષ્ટિવાળા છે. વૈરાગ્ય અને ત્યાગમાં તત્પર આત્માના ગુણો પ્રકટ કરવાની પરિપૂર્ણ ઈચ્છાવાળા છે. એ પ્રકારે ઉપાધ્યાયજીના ગુણોની એમાં સ્તુતિ કરી છે.

શ્રીમદ્ આનન્દઘનજીને તથા શ્રીમદ્ ઉપાધ્યાયજીને અત્યંત ગાઢ પ્રેમ હોવાનું નીચલું પદ * સાક્ષી પૂરે છે. કારણ કે પોતાના હૃદયનો ઊભરો સત્યમિત્રની આગળ પ્રકટ કરી શકાય છે. આ ગ્રંથમાં પ્રકટ થયેલાં પદો ઉપરાંત આ પદ છે.

" નિરંજન યાર મોયે કૈસે મિલેંગે, નિરંજન૦
દૂર દેખું મેં દરિયા ડુંગર, ઉંચે બાદલ નીચે જમીયું તલે. નિ૦
ધરતીમેં ઘહુતા ન પિછાનું, અગ્નિ સહુ તો મેરી દેહી જલે. નિ૦
આનન્દઘન કહે 'જસા' સુનો બાતાં, યેહી મિલે તો મેરો ફેરો ટળે. નિ૦ "

હવે આપણે ઉપાધ્યાયજીએ કરેલી અષ્ટપદીનો સંક્ષેપમાં ભાવાર્થ જોઈએ :—

ગુણાનુરાગની મૂર્તિરૂપ ઉપાધ્યાયજીએ આનન્દઘનજીની જે સ્તુતિ કરી છે અને તેમાં આનન્દઘનનો આત્મા, કે જે આનન્દઘન અર્થાત્ આનંદસમૂહમાં રમતો હતો, તેની સાથે સુમતિનો સંબંધ સરસ રીતે વર્ણવ્યો છે. પ્રિય આનન્દઘનજી ચાલ્યા આવતા હતા, મુખ પર હાસ્ય વિલસતું નહોતું, આત્મધ્યાનનું ઘેન આંખમાં રમતું હતું, રોમરાજી વિકસ્વર બની રહી હતી, યોગાનુભવનો રસ પ્રકટપણે રેલાતો હતો તે વખતે પ્રબળ મિલનોત્સુક ગુણાનુરાગી ઉપાધ્યાયજી મહારાજ આતુરતાથી તેમના સામે જોઈ રહ્યા છે તે વખતે—

'જશવિજય કહે સુનો આનન્દઘન, હમ તુમ મિલે હજૂર.'

શ્રી. આનન્દઘનજી કહે છેઃ—

'સુયશરસ મેઘનકે હમ મોર.'

પ્રશસ્ય ધર્મ-જ્ઞાન-રાગથી બંને-પરસ્પરને જાણે અંતરમાં ઉતારી-સમાવી રહ્યા છે. આ પ્રસંગે બંનેની કેવી દશા થઈ હશે? યશોવિજયજી કહે છે કે આનન્દમાં મસ્ત આનન્દઘનજી છે એમ મેં સાંભળ્યું હતું અને રૂબરૂ મેં તે જ પ્રમાણે જોયું અને તેથી હું અભંગ સુખ પામ્યો છું. આવા ઉદ્‌ગારો કાઢીને તેઓશ્રી સાધુદશાની આનન્દખુમારીનો-પવિત્રતાનો જગતને ખ્યાલ આપે છે. આનન્દનું હાટ નથી, આનન્દ કોઈ હાટ-વાટ કે ઘાટમાં નથી. જે આનન્દના ઘનીભૂત આત્માને ધ્યાવે છે તે જ આનન્દ પામે છે—

" જસ કહે સોહી આનન્દઘન પાવત, અન્તર જ્યોત જગાવે. "

* સારાભાઈ નવાબે પોતાના તરફથી સં૦ ૨૦૧૦માં બહાર પાડેલ 'આનન્દઘન પદ રત્નાવલી'ની પ્રસ્તાવનામાં કંઈ પણ આધાર આપ્યા વિના યશોવિજયજી એ જ પાછલી અવસ્થામાં 'આનન્દઘન પદ' નામધારી બન્યા હતા આવું જે સાહસિક વિધાન કર્યું છે તે અંગેનો ચર્ચા-જવાબ ઉપાધ્યાયજી ભગવાનના તૈયાર થનારા જીવનચરિત્રમાં અપાશે. સંપા૦

ઉપાધ્યાયજી કહે છે કે આત્માનો આનન્દ તો આત્માનું ધ્યાન ધરીને આનન્દઘનજી પામે છે અને આત્માની અનુભવ જ્યોતિ પ્રકટાવે છે. કેટલાક આનન્દઘનજીનાં છિદ્રો દેખતા હતા અને નિન્દા કરતા હતા, તે વાતને પ્રકટ કરતા છતાં અને આનન્દઘનજીની સ્તુતિ કરતા છતાં ઉપાધ્યાયજીએ—

"કોઉ આનન્દઘન છિદ્ર હી પેખત, જસરાય સંગ ચઢી આયા;
આનન્દઘન આનન્દરસ ઝીલત, દેખત હી જસગુણ ગાયા."

આ ઉદ્‌ગારો ઘણા ગંભીર અને ઉચ્ચ ભાવપૂર્ણ છે. આથી ઉપાધ્યાયજીના હૃદયમાંથી ઊઠતા શબ્દતરંગોની લહેરીઓ વડે, તેમના આત્માની ગુણાનુરાગશીલતા કેટલી બધી વધી હશે તેનો ખ્યાલ આવે છે. આનન્દઘન સમાન પોતાની દશાને, ઉપાધ્યાયજીએ—

"ઐસી દશા આનન્દઘન પ્રકટન, ના મુખ અલખ લખાયો."

ઇત્યાદિ સ્તુતિશબ્દો વડે કથી છે. આનન્દદશાને આનન્દઘનજી જાણી શકે અન્ય મનુષ્યો તો તેમનું હૃદય ક્યાંથી અવબોધી શકે? એમ વદતા છતાં ઉપાધ્યાયજી—

"આનન્દકી ગત આનન્દઘન જાણે."
"ઐસી દશા જબ પ્રકટે ચિત્ત અન્તર, સોહી આનન્દઘન પિછાને."

આ પ્રમાણે હૃદયોદ્‌ગાર પ્રકટ કરે છે. અધ્યાત્મજ્ઞાનના ઊંચ પ્રદેશમાં વિચરીને જેણે આત્માનું ધ્યાન ધર્યું છે અને આનંદની ખુમારી લીધી છે એવો પુરુષ ખરેખર આનન્દઘનજીને વસ્તુતઃ ઓળખી શકે છે. ઉપાધ્યાયજીએ આનન્દઘનની દશાને જાણી હતી, કારણ કે આનન્દઘનના આનન્દ ઊભરાઓવાળા હૃદયની ઠેઠ પાસે તેઓ ગયા હતા. આનન્દઘનજીનું શાન્ત પ્રસન્ન આનંદી મુખ દેખતાં શ્રીમદ્ ઉપાધ્યાયજીના હૃદયમાં આનન્દ પ્રકટ્યો અને પોતાના આત્મામાં શીતલતા પ્રકટી એ જ ભાવને તેઓ—

"એરી આજ આનન્દ ભયો મેરે, તેરો મુખ નીરખનીરખ રોમરોમ શીતલ ભયો અંગોઅંગ."

એ પ્રમાણે હૃદયોદ્‌ગારોના શબ્દો દ્વારા બહાર કાઢે છે. શ્રીમદ્ આનન્દઘનજીની અધ્યાત્મદશાનો રંગ શ્રીમદ્ ઉપાધ્યાયજીના હૃદયમાં રંગાઈ ગયો હતો અને તેઓ પણ આનન્દઘનજી સમાન બની ગયા હતા. અર્થાત્ તેઓ પણ અધ્યાત્મજ્ઞાનના અત્યંત રસિક બની ગયા હતા,—તે જ ભાવને આનન્દઘનજીને મળતાં આ પ્રમાણે કહે છે—

"આનન્દઘન કે સંગ સુજસ હી મિલે જબ, તબ આનન્દસમ ભયો સુજસ;
પારસ સંગ લોહા જો ફરસત, કંચન હોત હી તાકે કસ."

હૃદયોદ્‌ગાર કાઢીને આનન્દઘનની સંગતિથી પોતાના વિચારો પણ અધ્યાત્મરૂપે થઈ ગયા એમ દર્શાવે છે. આનન્દઘનજીની સંગતિથી શ્રીમદ્ યશોવિજયજી ઉપાધ્યાયનું અધ્યાત્મજ્ઞાન તરફ વલણ થયું અને અધ્યાત્મ રંગ લાગ્યો એ પ્રસિદ્ધ થાય છે. આ પછી ઉપાધ્યાયજીએ અધ્યાત્મજ્ઞાનના ગ્રંથો રચવાનું કાર્ય આરંભ્યું—'અધ્યાત્મસાર, અધ્યાત્મોપનિષદ્, જ્ઞાનસાર અને પદો' વગેરેમાં શ્રી. ઉપાધ્યાયજીએ અધ્યાત્મજ્ઞાનનો અદ્‌ભુત રસ

ભર્યો છે કે જે ગ્રંથો વાંચતાં ભવ્ય જીવો આત્માનન્દમાં લીન બની જાય છે. વિસ્તારભયે અષ્ટપદીનો અતિસંક્ષિપ્ત ભાવાર્થ આપ્યો છે.

શ્રી. આનન્દઘનજીએ ઉપાધ્યાયજી મહારાજની સ્તુતિ કરી છે તે અષ્ટપદી તો અનુપલબ્ધ છે, પણ તે ક્યાંય અસ્તિત્વમાં તો હશે જ. વિદ્વાનો, તત્ત્વચિન્તકોને તેની શોધ પ્રતિ લક્ષ આપવા વિનંતી કરું છું.

આધ્યાત્મિક જ્ઞાનરસ એ જ સાચો અમૃતરસ છે. તેનું પાન કરવું તે વિબુધોના જ ભાગ્યમાં લખાયું છે. જ્ઞાનીઓ જ અધ્યાત્મજ્ઞાનરૂપ અમૃતરસ પાન કરે છે. જ્ઞાની પુરુષોના હૃદયમાં સર્વ સમાઈ જાય છે તેમનું જ્ઞાન કોઈ રીતે માપી શકાતું નથી.

ઉપાધ્યાયજી યશોવિજયજીના ગુણનો વિસ્તાર પમાય તેમ નથી. તેમના ઉપકારો અનહદ છે. વેદની ગંભીર રચના જેમ ઉપનિષદો છે તેમ જ સ્યાદ્વાદના નયનિગમ આગમથી ગંભીર તેમની કૃતિઓ છે કે જેનું રહસ્ય ધીર જનો પણ પામી ન શકે. એમની રચનાઓ ચંદ્રિકા જેવી શીતલ પરમાનંદદાયક, શુચિ, વિમલસ્વરૂપા અને સત્યપૂર્ણ છે. હરિભદ્રસૂરિનો લઘુબાંધવ એટલે કલિયુગમાં એ એક બીજા હરિભદ્ર થયા છે.

ઉપાધ્યાયજી મહારાજ વિચરતા વિચરતા ડભોઈ પધારેલા ત્યાં ૧૭૪૩માં અનશનપૂર્વક સમાધિસહિત દેહવિલય પામ્યા. ત્યાં સમાધિસ્તૂપ કરવામાં આવ્યો છે જે ચમત્કારી ગણાય છે. આમ સંવેગીશિરોમણિ જ્ઞાનરત્નસમુદ્ર અને કુમતિતિમિર ઉચ્છેદવા માટે બાલારુણ દિનકર ગુરુ અદૃશ્ય થયો.

મિલનજ્યોત–પર ઘણું લખી શકાય તેમ છે, પણ વિસ્તારભય પણ ઊભો જ છે. જિજ્ઞાસુઓએ તે તે વિષયના ગ્રંથો અવલોકવાનું સૂચન અહીં બસ ગણાશે.

" સુયશ—આનન્દના મિલને, મહાજ્યોતિ જગાવી જે;
વિબુધ જન અંતર પ્રકટો, અભિલાષા હમારી છે. "

निममस्यैव वैराग्यं, स्थिरत्वमवगाहते ।
परित्यजेत् तां प्राज्ञो, ममतामत्यनर्थदाम् ॥१॥

(ચિત્તની) સ્થિરતા લાવવામાં નિર્મલ માનવીના વૈરાગ્યની જેમ જ વિદ્વાન પુરુષે અત્યંત અનર્થ કરનારી એવી મમતાનો ત્યાગ કરવો જોઈએ.

अध्यात्मसार सटीक
तृतीय प्रबन्ध]

[શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

પૂજ્ય શ્રી. યશોવિજયજી ઉપાધ્યાય

[છૂટુંછવાયું]

[લેખક: શ્રીયુત ત્રિભુવનદાસ લહેરચંદ શાહ]

શ્રી. યશોવિજયજીનાં જ્ઞાન અને કૃતિઓ વિશે જેટલું જાણવામાં આવ્યું છે તેનાંથી ઘણા અંશે ન્યૂન તેમના જીવનપટ વિશે જણાયું છે; બલ્કે જે જણાયું છે તે પણ અનિશ્ચિત હોવાથી નહિવત્ કહીએ તો પણ ચાલે. જેમ કે—

તેમની જન્મભૂમિ કોઈ ઉત્તર ગુજરાતના કલોલ પાસેના કન્હોડ ગામે જણાવે છે તો કોઈ આબુની તળેટીમાં કહે છે; તો વળી કોઈ કાઠિયાવાડમાં ('જૈનધર્મ પ્રકાશ' સં. ૧૯૮૩નો ચૈત્ર અંક) કહેનારા પણ છે. જન્મસાલનું પણ તેમ જ છે. કોઈ તેમનું આયુષ્ય ૬૫–૬૭ વર્ષનું કહે છે તો કોઈ ૯૦–૯૫ પણ કહે છે. પરંતુ આ બધા તેમનો દેહાંત સં. ૧૭૪૩–૪૫ના મહા સુદ ૫ = વસંતપંચમીનો કહે છે જ. (સં. ૧૭૪૩ વાળા કહે છે કે આને લગતી જે તખતી અમદાવાદમાં કોતરાઈ હતી તેની સાલ સં. ૧૭૪૫ છે ને પછી ડભોઈ મુકામે તે લગાવાઈ છે. બાકી દેહોત્સર્ગ તો સં. ૧૭૪૩ માં થયો છે. સં. ૧૭૪૫ તે તો માત્ર ભ્રમણા છે.) જો મૃત્યુતિથિ સાથે વાર કે નક્ષત્ર લખાયું હોત તો પાકો નિર્ણય જરૂર થઈ શકત. ૬૫–૬૭ વર્ષનું આયુષ્ય કહેનારાઓનો મત એમ છે કે, સં. ૧૬૮૦ માં ૧૮ વર્ષની ઉંમરે દીક્ષા અપાઈ હતી. જ્યારે ૯૫ વર્ષવાળા (જ્ઞાનવિજયજી કૃત જૈનાચાર્ય પૃ. ૧૦૮ થી ૧૧૬) કહે છે કે, તેમણે સં. ૧૬૫૫ માં ગ્રંથ લખ્યો છે. (તો તો લગભગ ૧૦૦ ઉપરનું આયુષ્ય ગણવું રહે.) જેમ જન્મસ્થાન અને સાલ અનિશ્ચિત છે તેમ જ્ઞાતિ વિશે પણ ગેરસમજ છે. કોઈ તેમને બ્રાહ્મણકુળમાં જન્મ થયાનું માને છે (જેમ ગૌતમસ્વામી ઈ૦ બ્રાહ્મણ ખોળીએ જન્મી, જૈનધર્મમાં દીક્ષા લીધી છે તેમ) તો કોઈ વૈશ્યકોમના પિતા નારાયણ અને માતા સૌભાગ્યદેવીના પેટે જન્મ માને છે. તેમનું નામ જશવંત અને બાળનું નામ પદ્મસિંહ જણાવે છે. આ પાછળની હકીકત વિશ્વસનીય એ ઉપરથી જણાય છે કે પોતે સાત વર્ષના હતા ત્યારે 'ભક્તામર સ્તોત્ર' એક વખત સાંભળવાથી કંઠસ્થ કરી શક્યા હતા, તેમ જ તેમની માતાની સાથે ઉપાશ્રયમાં પ્રતિક્રમણ વખતે જતા હતા અને ત્યાં જે સૂત્રો ભણાવાતાં તે સાંભળી યાદ કરી લીધાં હતાં. જેથી એકદા ખૂબ વરસાદને લીધે માતાને ઉપાશ્રય જવાનું ન બનતાં, ઉદાસી થઈ ગયાં હતાં ત્યારે આ પુત્ર જશવંતલાલે ઘેર પ્રતિક્રમણ કરાવ્યું હતું અને માતાજીએ પ્રશ્ન પૂછેલ ત્યારે આ બધી હકીકતનો સ્વમુખે ઘટસ્ફોટ કર્યો હતો.

મુનિશ્રી પોતાની વિદ્વત્તાથી પ્રજામાં બહુ માનનીય થઈ પડયા. જ્યાં જાય ત્યાં લોક ભેગા થઈ પાછળ પાછળ જાય. આ દૃશ્ય દેખી તે વખતના અધ્યાત્મયોગી શ્રી. આનન્દઘનજીએ વ્યંગમાં જણાવેલ કે, "જશા! દુકાન અચ્છી જમાઈ હય."

કહે છે કે, તેમણે ૧૦૮ ગ્રંથો રચ્યા છે, જેમાંના કેટલાક સુલભ છે, તેમાંના ૫૮ ગુજરાતી ભાષામાં હતા જ્યારે એક હિંદી જૈન સાહિત્યકારના કથન પ્રમાણે તેમનું જીવનચરિત્ર જે અંગ્રેજીમાં પ્રસિદ્ધ થયું છે ને સુલભ છે, તેમાં નાનામોટા થઈને ૫૦૦ સંસ્કૃત ગ્રંથો રચ્યાનું જણાવેલ છે. તેમને સંસ્કૃત, માગધી, હિંદી ને ગુજરાતી એમ ચાર ભાષા ઉપર કાબૂ હતો. વળી, જેમ હરિભદ્રસૂરિએ विरह અંક પોતાની કૃતિના અંતે વાપર્યો છે તેમ આમણે रहस्य અંક વાપર્યાનું જણાયું છે. આવા કેટલા ગ્રંથો હશે તે જણાયું નથી; પરંતુ ગુજરાતીમાં અનેક રાસો રચ્યા છે જે ઉપરથી કેટલાક પંડિતોએ મશ્કરીમાં કહેલું કે, "રાસડા તે ફ્રાસડા" છતાં કોઈ જાતનો રોષ ન કરતાં द्रव्यगुणपर्यायनो ન્યાયગ્રંથ ગુજરાતીમાં જ રચીને, અનેક વિદ્વાનોને સમાલોચનાર્થે મોકલ્યો હતો. કોની તાકાત હતી કે યથાર્થ રીતે તે સમજે? અંતે સ્વહસ્તે તેના ઉપર વિવેચન કરી–ટીકારૂપે બહાર પાડયું ત્યારે જ આ વિદ્વાનો શાંત બની મુગ્ધ થયા.

આવી તેમની ખ્યાતિ, અમદાવાદમાં જ્યારે નાગોરી સરાઈમાં ઊતર્યા ત્યારે ગુજરાતના સૂબા મહોબતખાનના કાને પહોંચી ત્યારે તેમને બોલાવી સન્માન કર્યું. ત્યાં સભા સમક્ષ ૧૮ અવધાનો કરી સભાને રંજિત કરી. વાજતેગાજતે તેમને સ્થાને પહોંચાડયા. (જેમ અકબર બાદશાહે હીરવિજયસૂરિના જ્ઞાનથી ચકિત થઈ આદર કર્યો હતો તેમ) આ હકીકત 'સુજસવેલી ભાસ'માં છે. આ પ્રમાણે પ્રજામાન્ય અને રાજમાન્ય હોવાથી શ્રીવીરભગવાનની સીધી પાટપરંપરાએ ન હોવા છતાં, જૈનોમાં પ્રવેશેલી ક્રિયાશિથિલતાનો, સત્યવિજય પંન્યાસનો સહકાર લઈ ઉદ્ધાર કર્યો હતો અને શાસનપત્ર પણ સ્વહસ્તે કાઢયું હતું, જેમાંનું એક, મિતિ ૧૭૩૮, વૈશાખ સુદ ૭ ગુરુવારનું, મુનિ જિનવિજયજીએ પ્રસિદ્ધ કર્યું છે (જુઓ: 'આત્માનંદ પ્રકાશ' ૧૯૭૨ પોષ માસનો અંક) આ પ્રમાણે સાધુસમુદાય ઉપર તેમનો ખૂબ પ્રભાવ હતો.

તેમની માતૃભક્તિ, ગુરુભક્તિ, વિનયશીલતા, નિરભિમાનપણું વગેરે સદ્‌ગુણોનો ઉપરમાં યથોચિત ખ્યાલ અપાઈ ગયો છે જેથી વિશેષ નુકતેચીની કરવાની જરૂર નથી. લોકો તેમને "ज्ञाननिधि"ના ઉપનામથી સંબોધતા. હરિભદ્રસૂરિ ને કલિકાલસર્વજ્ઞ હેમચંદ્રસૂરિ જેમ પાકયા છે, તેમ યશોવિજયજી ઉપાધ્યાયે પણ નામ રાખ્યું છે. તેમના સમકાલીન તરીકે અમદાવાદના નગરશેઠ શાંતિદાસ શેઠ, વિજયતિલકસૂરિ, ધર્મસાગર ઉપા૦, સત્યવિજય પંન્યાસ, શ્રી આનન્દઘનજી વગેરે કહી શકાય. તેમણે રચેલ ગ્રંથોની ટીપ તો બહુ મોટી છે અને તે આ સત્ર ઊજવતી સમિતિએ બહાર પાડી છે તે મેળવી જોવા જેટલો અવકાશ રહ્યો ન હોવાથી મૌન સેવું છું. ઉપાધ્યાયજીનો કેટલોક અધિકાર શ્રી "જૈન" પત્રના ૧૪–૧–'૪૫ના પૃ. ૧૫ ઉપર પ્રગટ થયો છે એટલું જણાવી અત્રે વિરમું છું.

અઢારમી સદીના પ્રખર જ્યોતિર્ધર

[લેખક :—શ્રીયુત મોહનલાલ દીપચંદ ચોકસી]

૧. સંસારી જીવનની ઝાંખી :—

ગુજરાત પ્રાંતના કલોલ તાલુકા નજીકના 'કનોડું' નામના ગામમાં આપણા આ મહાન જ્યોતિર્ધર જન્મ્યા ત્યારે કેવા ગ્રહો હતા અને કયું ચોઘડિયું કે કયું નક્ષત્ર હતું એ જાણવાનું સાધન હજી ઉપલબ્ધ થયું નથી; છતાં ભાવિ કારકિર્દીના માપે માપતાં એટલું તો વિના શંકાએ કહી શકાય કે આ કુળદીપકના જન્મકાળે શુભ મુહૂર્ત અને શુભ યોગ વર્તતા હતા. પિતાશ્રી 'નારાયણ' અને માતુશ્રી 'સોભાગદે' એ પુત્રનું 'જસવંત' નામ રાખી આનંદિત બન્યા હતા. થોડાં જ વર્ષોમાં બંધવબેલડીરૂપે જસવંતને 'પદ્મસિંહ' મળ્યો. વ્યવહારી જીવન જીવતાં આ નાનકડા કુટુંબમાં ઉછરનાર બાળુડાંઓને દેવદર્શન અને ગુરુવંદનના સંસ્કાર ગળથૂથીમાંથી મળ્યા હતા. એમાં પણ માતા-પિતાના સંસ્કાર ઉપરાંત પૂર્વભવના પુણ્યથી જસવંતની સ્મરણશક્તિ બાલ્યકાળથી જ વધતી ચાલી હતી. 'સુજસવેલી ભાસ'માં જેની નોંધ નથી છતાં જે લોકવાયકા પૂજ્યશ્રી બુદ્ધિસાગરસૂરિજી અને સાક્ષરવર્ય શ્રીયુત મોહનલાલ દલીચંદ દેસાઈ પોતાના નિબંધોમાં આલેખે છે— 'વરસાદના કારણે માતા ઉપાશ્રયે ન જઈ શક્યાં અને 'ભક્તામર સ્તોત્ર' ન સાંભળી શક્યાં, પણ બાળક એવા જસવંતે એ સંભળાવ્યું.' એમાં તથ્ય હો કિંવા ન પણ હો, છતાં વર્ષોના વહેવા સાથે યશોવિજય મુનિ બન્યા પછી જે સાધના જસવંતના આત્માએ કરી છે અને એમાં પ્રજ્ઞાના જે ચમકારા દૃષ્ટિગોચર થાય છે, એ જોતાં કહેવું જ પડે કે, 'પુત્રનાં લક્ષણ પારણામાંથી જણાય' એ ગુજરાતી કહેવત અક્ષરશઃ સત્ય લાગે છે. જસવંત જેવા સંસ્કારી બાળક માટે ભક્તામરનું રટણ અસંભવિત ન ગણાય. વિહાર કરતાં શ્રી નયવિજયજી મહારાજ કુણગેર (પાટણ સમીપના) ગામથી 'કનોડું' પધાર્યા. તેઓની વૈરાગ્યભીની વાણી શ્રવણ કરવાનો યોગ ઉપરોક્ત બંધવજોડીને સાંપડ્યો. ઉભયના હૃદયમાં સંસાર છોડી દઈ સંયમના માર્ગે સંચરવાનાં ઝરણ ફૂટવા માંડ્યાં. એની જડ દૃઢપણે ઊંડી ઊતરવા માંડી. સંતાકુકડીનો આશ્રય લીધા વિના ખુલ્લા અંતરે મનની વાત વડીલો સમક્ષ વડીલ ભ્રાતા જસવંતે મૂકી. પદ્મસિંહે એમાં સાથ પૂર્યો. ગુરુઉપદેશથી ધર્મરહસ્યની પ્રાપ્તિ જેમને થયેલી છે એવા માતપિતાએ કહ્યું કે, 'તમારું કલ્યાણ થાઓ, ગુરુ મહારાજ સાથે વિહારમાં થોડો સમય ફરો, તલવારની ધાર સમા ચારિત્રપાલનનો અભ્યાસ પાડો અને અંતરનો અવાજ પારખો. સાચા સાધુ બનો.'

૨. ગુરુ અને શિષ્યો રાજનગરમાં :—

શ્રી નયવિજયજી મહારાજ વિચરતાં વિચરતાં પાટણમાં પધાર્યા. તેઓ સમ્રાટ અકબર બાદશાહ પ્રતિબોધક જગદ્ગુરુ શ્રી વિજયહીરસૂરીશ્વરજીની ચોથી પાટે આવેલા, અને પં. લાભવિજય ગણિના બીજા નંબરના શિષ્ય હતા. શ્રી લાભવિજય ગણિ ઉપાધ્યાય શ્રી કલ્યાણવિજયજીના શિષ્ય થાય. શ્રી કલ્યાણવિજયજી હતા તો શ્રી હીરસૂરીશ્વરજીના પ્રથમ શિષ્ય છતાં પટ્ટધરપણું એ કાળે વંશઉતાર આવતું ન હોવાથી, ગુરુમહારાજની પાટે તેમના ગુરુભાઈ વિજયસેનસૂરિ આવેલા. તેમની પછી વિજયદેવસૂરિ આવ્યા. તેઓશ્રીના વરદ હસ્તે સં. ૧૬૮૮માં દીક્ષિત થયેલા ઉક્ત બન્ને ભાઈઓ, અનુક્રમે મુનિ યશોવિજય અને મુનિ પદ્મવિજયજીના સોહામણા નામો વડીદીક્ષા વેળા પામ્યા. આ પવિત્ર વિધિ પાટણમાં બની. એ કાળે દીક્ષિતોની વય અનુક્રમે બાર અને દસ વર્ષની હોવાનું સંભવે છે.

મુનિશ્રી યશોવિજયજી સમયના વહેણમાં ઝડપથી આગળ વધતાં વારસામાં પ્રાપ્ત કરેલ અગાધ બુદ્ધિબળનો પરચો બતાવતાં થોડા સમયમાં સ્વ–પર શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા બન્યા. રાજનગરમાં ગુરુ સાથે પધાર્યા. સં. ૧૬૯૯માં સભાજનો સમક્ષ આઠ અવધાન (દરેક વિભાગની આઠ આઠ વસ્તુઓ, યાદદાસ્તીના બળે કહી બતાવી. અર્થાત્ ચોસઠ ચીજોના ક્રમવાર જવાબ આપી) કર્યાં. ઊગતા મુનિશ્રીની આવી અનુપમ શક્તિ નિહાળી શ્રાવક શ્રેષ્ઠી ધનજી સૂરા એટલી હદે આહ્લાદ પામ્યા કે, જેથી તેઓએ ગુરુજીને આ શિષ્યને કાશી જેવા વિદ્યાધામમાં મોકલી વ્યાકરણ, ન્યાય આદિ કઠિન શાસ્ત્રોમાં નિપુણ બનાવવા વિનંતિ કરી. અને એ અંગે ખરચ કરવાની હાર્દિક ઈચ્છા પ્રગટ કરી. શ્રી નયવિજયજી મહારાજને શેઠની વાત પાછળનું રહસ્ય ગળે ઊતરી ગયું. એટલું જ નહિ પણ આ નાની ઉંમરના શિષ્યમાં રહેલી પ્રતિભા નીરખી; જૈનશાસનની પ્રભાવના એના દ્વારા થવાની આગાહી થઈ અને શિષ્ય સહિત કાશી તરફ વિહાર કરવાનો નિર્ધાર કર્યો.

૩. સૂર છૂપે નહિ બાદલ છાયો :—

મુનિશ્રી યશોવિજયજીએ બ્રાહ્મણ વિદ્યાગુરુ પાસે પૂર્ણ વિનય સાચવી ન્યાયશાસ્ત્રમાં પૂરેપૂરું અવગાહન કર્યું. ષટ્દર્શનનો અભ્યાસ પણ બરાબર કર્યો. પ્રાચીન ન્યાય તેમજ નવ્ય ન્યાય અને એ ઉપરાંત કઠિન એવા 'તત્ત્વચિંતામણિ' નામના ગ્રંથનો પણ તાગ કાઢી લીધો. આ સંબંધમાં 'સુજસવેલી ભાસ' હસ્તગત થયો ન હતો ત્યારે એમના વિશે કંઈ કંઈ વિલક્ષણ વાતો પ્રચલિત હતી અને એની નોંધો અગાઉ જે નિબંધોની વાતો કરી છે એમાં નોંધાયેલી પણ છે. એ ઉપર આજના યુગમાં વધુ ભરોસો ન મૂકીએ તો પણ એટલું તો વિના સંકોચે કહી શકાય કે, શ્રી નયવિજયજીએ પોતાના આ શિષ્યને શાસનનો જ્યોતિર્ધર બનાવવા પરિશ્રમ વેઠવામાં કચાશ રાખી નથી. અને એ જ રીતે તરુણ શિષ્યે પણ ગુરુમહારાજની આંતર વૃત્તિ અવધારી લઈને બીજી કોઈ પણ બાબતમાં મન ન પરોવતાં શકય ઉતાવળથી કાશી આગમનનો હેતુ પાર પાડવામાં પીછેહઠ નથી દાખવી. 'વિનય વિના વિદ્યા

નહીં' એ જ્ઞાની વચન આંખ સામે સદૈવ રમતું રાખી, બ્રાહ્મણ વિદ્યાગુરુનો પૂરેપૂરો વિનય સાચવી, તેમની પાસે હતું તે તો મેળવી લીધું પણ એ સાથે તેમના આશીર્વાદ પણ પ્રાપ્ત કર્યાં. કાશીમાં ભરાયેલી વિદ્વાનોની સભામાં વિજય પ્રાપ્ત કરી 'ન્યાયાચાર્ય' અને 'ન્યાય-વિશારદ' જેવી બહુમાનસૂચક પદવીઓ મેળવી, પોતાના જ્ઞાનનો પરચો દર્શાવી, વિદ્યાગુરુ માટે પ્રશંસાનાં પુષ્પો પથરાવ્યાં. અને સાથોસાથ ભગવંતદેવ શ્રી વર્ધમાનસ્વામીના શાસનનો એક સામાન્ય નિર્ગ્રંથ પોતાના સાધુજીવનને જરા પણ ક્ષતિ પહોંચાડયા વિના, એના પર ગુરુમહારાજની કૃપા વર્તતી હોય તો, કેવું અદ્ભુત કામ કરી શકે છે, એ પોતાના દૃષ્ટાન્તથી પુરવાર કર્યું. આ વિદ્યાગુરુ પોતાની દશા પલટાવાથી, શિષ્યને શોધતા શોધતા ખંભાત પધાર્યા હોય, અને ચરિત્રનાયકના એકાદ ઇશારાથી એ કાળના સ્થંભન તીર્થના શ્રીસંઘે બ્રાહ્મણ મહાશયને ધનથી નવાજી દીધા હોય તો એમાં કંઈ જ આશ્ચર્ય નથી.

૪. 'ઉપાધ્યાય' પદની પ્રાપ્તિ :—

મુનિરાજ યશોવિજયજીનો સિતારો ચળકતો હતો. વિહાર કરતાં તેઓ આગ્રા પધાર્યા. ત્યાં સ્થિરતા કરી પોતાના જ્ઞાનમાં ઉમેરો કર્યો. અમદાવાદમાં જ્યારે પગલાં માંડયાં ત્યારે તો તેમની વિદ્વત્તાની—કાશી જેવા પંડિતોથી ભરપૂર શહેરમાં વિજયધ્વજ ફરકાવ્યાની—કીર્તિ-ગાથા પ્રસરી ચૂકેલી હોવાથી સમ્રાટ ઔરંગઝેબના સૂબા મહોબતખાંએ બહુમાનપૂર્વક પોતાના દરબારમાં તેડાવ્યા અને મુનિશ્રીની અવધાનશક્તિ નજરે નિહાળી, એ વેળા શ્રી ચતુર્વિધ સંઘના હૃદયમાં મુનિરાજને 'ઉપાધ્યાય' પદવી આપવાની ભાવનાલહરીઓ સ્વતઃ ઉભરાઈ રહી. એનો પડઘો એ વેળાના પટ્ટધર શ્રી વિજયદેવસૂરિના શિષ્ય શ્રી વિજયપ્રભસૂરિના અંતરમાં પડ્યો. સંવત ૧૭૧૮માં શ્રી યશોવિજયજી વાચક–ઉપાધ્યાયપદથી અલંકૃત થયા.

ત્યાગી શ્રમણના જીવનમાં ચોમાસા સિવાયના કાળમાં જુદા જુદા સ્થાનના પાદવિહાર ધર્મોપદેશ અને દેશકાળને અનુલક્ષી સાહિત્યનું સર્જન સામાન્યતઃ અશક્યને સંભવે. એ કાળે ધર્મપ્રભાવના, ઈતર દર્શનો સાથે તત્ત્વચર્ચા અને પોતાના સમગ્ર ગચ્છની સારસંભાળ રાખવાનું વિશિષ્ટ કાર્ય ગચ્છાધિપતિના શિરે ગણાતું. વર્તમાન કાળની માફક આચાર્યપદવી વંશપરંપરાગત ઊતરવા માંડી નહોતી. એટલે એવા મહાન વિદ્વાન, પ્રબળ પ્રતિભાશાળી ઉપાધ્યાયજી આચાર્યપદ સુધી નથી પહોંચ્યા, એથી આશ્ચર્ય પામવાનું કારણ નથી.

પં. સુખલાલજી જણાવે છે તેમ વાચક શ્રી યશોવિજયજીએ પોતાના અસરકારક ઉપદેશ પછીનો સમય લેખિનીને દેશકાળનાં એંધાણ પારખી, દ્રુતગતિએ ચલાવવામાં જાતજાતના મૌલિક ગ્રંથો રચવામાં વ્યતીત કર્યો છે. એમાં વાદ-વિવાદ અને ખંડન-મંડનના વિષયો છે, તેમ તત્ત્વનાં અને ભક્તિનાં વિવેચનો પણ છે જ. વિદ્વાનોને ચમત્કૃતિ ઉપજાવે તેવા ન્યાયપૂર્ણ આલેખનો તેમ જ પૂર્વે થઈ ગયેલા પ્રતિભાસંપન્ન આચાર્યોનાં મંતવ્યો અવધારી લઈ એ ઉપર કરેલ સમન્વય અને કઠિન ગ્રંથો પરનાં ટીકા–ટિપ્પણો પણ ઉપલબ્ધ થાય છે.

૫. આનંદઘનજી અને યશોવિજયજી

અધ્યાત્મ માર્ગના આ બંને યોગીઓ સંબંધી લોકવાયકાઓ તો જાતજાતની પ્રવર્તે છે. અહીં એના ઊંડાણમાં ઊતરવાનું પ્રયોજન નથી. એટલું તો નિશ્ચિત છે કે, પ્રખર યોગી આનન્દઘનજી મહારાજના સમાગમ પછી જ ઉપાધ્યાયજી મહારાજ શ્રી યશોવિજયજીમાં અધ્યાત્મદૃષ્ટિ ઘણા મોટા પ્રમાણમાં ખીલી ઊઠી છે અને એ પછીના ગ્રંથોમાં એનાં નિતરાં દર્શન થાય છે. શ્રીમદ્ આનન્દઘનજી માટે ઉપાધ્યાયજી 'અષ્ટપદી' રચે છે અને મંગલાચરણ વદે છે કે:—

" आनन्दघनके संग सुजस ही मिले जब, तब आनन्दसम भयो सुजस ।
पारस संग लोहा जो फरसत, कंचन होत ही ताके कस ॥आनन्द०॥ "

એમાં યોગીવરની મહત્તા અને પોતાની લઘુતા બતાવનાર ઉપાધ્યાયજી ઉપર તેમના પ્રભાવની આભા કેવી પથરાઈ હશે એનો ખ્યાલ સહજ આવે છે. એ પછીની 'परमगुरु जैन कहो क्यूं होवे' ઈત્યાદિની રચના સ્વતઃ બોલે છે અને 'कषायमुक्तः परमः स योगी' જેવાં ટંકશાળી વચનો કલમમાંથી સ્રવે છે. આ સિવાય તેઓશ્રીના સમકાલીન જૈન-જૈનેતર વિદ્વાનો પણ પ્રખર પ્રજ્ઞાસંપન્ન ગણાય છે. એ સર્વનો વિસ્તારથી ઉલ્લેખ કરવો એ આ નાનકડા નિબંધમાં શક્ય નથી. છતાં નામનિર્દેશ કરવાની અભિલાષા રોકી શકાય તેમ ન હોવાથી થોડાક અહીં જણાવ્યા છે. એ ઉપરથી ઉપાધ્યાયજી મહારાજની અદ્‌ભુત શક્તિનો, અનોખી પ્રતિભાનો અને વિશિષ્ટ સર્જનનો ખ્યાલ આવશે.

આ૦ જ્ઞાનવિમળસૂરિ—ઉપાધ્યાય યશોવિજયજીને 'વાચકરાજ' તરીકે સંબોધન કરનાર આ સૂરિજીએ, ઉપાધ્યાયજીએ બનાવેલાં ઘણાં સ્તવનો પર ટીકાઓ રચી છે. તેઓ ઉપરના બંને અધ્યાત્મયોગીઓ પ્રત્યે બહુમાન ધરાવતા હતા.

ઉપા૦ વિનયવિજયજી—પરંપરાની નજરે આ ઉપાધ્યાયજી શ્રી યશોવિજયજીના કાકાગુરુ થાય; કેમકે તેઓ વિજયહીરસૂરિ, ઉપા૦ કીર્તિવિજયજીના શિષ્ય હતા. એટલે ત્રીજી પાટે હતા જ્યારે શ્રી યશોવિજયજી પાંચમી પાટે થયેલા છે. 'લોકપ્રકાશ' 'શ્રીપાલ રાસ' અને 'પુણ્યપ્રકાશ'ના સ્તવનની રચનાથી આ વાચક મશહૂર છે.

ઉપા૦ માનવિજયજી—'ધર્મસંગ્રહ' ગ્રંથના કર્તા ઉપા૦ માનવિજયજી ઉપાધ્યાયજી માટે સુંદર શ્લોકમાં જણાવે છે, જેનો અંગ્રેજીમાં મો. દ. દેસાઈ નિમ્ન પ્રકારે ઉલ્લેખ કરે છે:—

" He has got prominent knowledge in all schools of philosophy by his intellect sharpened by true logic; and is the formost among the Tapagachha."

પં૦ સત્યવિજય ગણિ—આ પવિત્ર સંતના સંબંધમાં મો. દ. દેસાઈનાં નિમ્ન વચનો પૂર્ણ પ્રકાશ પાથરે છે અને એમાં ઉપાધ્યાયજી વિષે પણ વાત આવી જાય છે.

"A great deciple of Shri Vijaysinh Suri went to heaven in S. Y. 1756 eleven years after Shri Yashovijayji. He taking permission of his Guru made a great reformation in the decipline of the monks who had become corrupt and degraded at the time. It is said Yashovijayji helped him very much in this noble and uphill work by writing on, preaching about and severly criticizing corruption and religions degeneration."

જૈનેતર વિદ્વાનોમાં—ગોદાવરી કાંઠાના જાંબ ગામમાં જન્મેલ ઠાકર નારાયણ, પાછળથી રામદાસ તરીકે પ્રસિદ્ધિ પામ્યા અને જેઓ શિવાજી મહારાજના ગુરુ મનાય છે તે, તુકારામ કે જે અભંગ નામના મરાઠી કીર્તનોના રચયિતા છે તે, ગુજરાતના જાણીતા કવિ પ્રેમાનંદ, શીખોના ગુરુ તેગબહાદુર, ગુરુ ગોવિંદસિંહ અને હિંદીના સુપ્રસિદ્ધ ગ્રંથ રામાયણના કર્તા તુલસીદાસ સમકાલીન હતા. આ પ્રમાણે ભારતવર્ષના ચારે ખૂણામાં વિવિધ ધર્મોના ક્ષેત્રપ્રદેશ પર જે ધ્રુવતારકો જાગી ગયા એમાં ઉપાધ્યાયજી યશોવિજયજી પણ છે, જે ગૌરવસંપન્ન પદે બિરાજે છે.

આદરણીય શ્રીયુત મોહનલાલ દલીચંદ દેસાઈના શબ્દોમાં ઉપાધ્યાયજી મહારાજનાં જીવનને અંજલિ આપતાં નિમ્ન વાક્યો દરેકે સાધુ મહારાજ યા તો વિદ્વાન્ શ્રાવકે પોતાના જીવનને ઉન્નત બનાવવા માર્ગદર્શક નીવડે તેમ છે. એમાં સાચી ભક્તિનાં નિતરાં દર્શન છે, કેવળ આભાસ નથી.

"He was one of the few parent minds which India has produced. And both metaphysics and logic owed filial obligations to his unbounded genius. He by composing more than one hundred and eight (108) Sanskrit works has added a monumental share to the literature of the world.

Some of his works are valuable as revealing many of the darker symptons of our religions and social disease."

૬. દીપક બુઝાયો :—

વિક્રમ સંવત ૧૭૪૩ની સાલમાં આ પ્રખર જ્યોતિર્ધર, ઉપદેશ અને સર્જનમાં, વિવેચન અને કથનમાં, પોતાની પ્રભા વિસ્તારતો વડોદરા સંસ્થાનની પ્રાચીન એવી દર્ભાવતી નગરીમાં આજના ડભોઈ ગામમાં સદાને માટે આ ભારતવર્ષની ભૂમિ ઉપરથી વિદાય લઈ સ્વર્ગે સંચર્યો, સં. ૧૭૪૫માં અતિશયની સાથે શ્રીસંઘે તેઓશ્રીની પાદુકા સ્થાપન કરી.

એ જ ભૂમિના એક ભાગના સાધુજીને—ઉપાધ્યાયજીના નામની ગરબાઈ હોવાથી, છેલ્લી સદીના આ મહાન તાર્કિકને માત્ર જૈન સમાજમાં જ નહીં પણ જૈનેતર વિદ્વાન્ વર્ગમાં અવિરોધ અંજલિ આપવાની તમન્ના ઉદ્ભવી. એ અનુપમ સ્મૃતિઓ મોહમયીની ધરતી પર સુંદર પ્રમાણમાં ઉજવાયો અને એના પ્રત્યક્ષ ફળસ્વરૂપે ડભોઈની પવિત્ર ભૂમિ પર સમાધિ

દેવકુલિકાનાં દર્શન થાય છે. એમાં એ પ્રતિભાશાળી ઉપાધ્યાયજી જૈન સમાજને આગાહી કરી રહેલા દષ્ટિગોચર થાય છે. એ આગાહીનું હાર્દ આજનો જૈન સમાજ સમજે તો ભગવાન શ્રી મહાવીરદેવનો સંદેશ વિશ્વમાં ગૂંજતો થાય. એથી અહિંસાનું સામ્રાજ્ય સર્જાય અને ચોતરફ સાચી શાંતિના ફુવારા ઊડી રહે. "જૈનં જયતિ શાસનમ્"નો ધ્વનિ ગાજી રહે.

૭. અંતર્ધ્વનિ સંભળાય છે કે?—

ગુરુમૂર્તિની પ્રતિષ્ઠા એ તો ઉપાધ્યાયજીના અંતરને ઓળખવાની પ્રથમ ભૂમિકા છે. આ તીર્થે આવી સૌ કોઈ એમનાં દર્શનથી પવિત્ર થાય, ગુણસ્મૃતિ કરે અને સ્વશક્તિના બળે જે સાહિત્યનો વારસો તેઓશ્રી આપણને—જૈન સમાજને ચરણે ધરી ગયા છે, એનો યોગ્ય રીતે—દેશકાળને બંધ બેસે તેવા સ્વરૂપે માત્ર પોતાના સંપ્રદાય કે ઘરપૂરતો નહીં, પણ સારીયે દુનિયાની જનસંખ્યાને ઉપયોગી નીવડે એવી પદ્ધતિએ પ્રચાર કરે. અમૃત વાણી સમાં એ વચનોથી હજારો ને લાખોનાં હૃદયકમળ વિકસ્વર થાય એ કરતાં સાચી સ્મૃતિ આજના યુગમાં અન્ય કઈ સંભવે?

卐

विषयैः किं परित्यक्तै-
जांगर्ति ममता यदि ।
त्यागात् कञ्चुकमात्रस्य,
भुजगो नहि निर्विषः ॥२॥

જો મમતા જાગી રહે તો વિષયો છોડવાથી શું? જેમ સાપ કાંચળીને છોડવા માત્રથી ઝેર વિનાનો બનતો નથી.

अध्यात्मसार-सटीक] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

卐

મહાન્ જ્યોતિર્ધર પૂ૦ ઉપા૦ શ્રી યશોવિજયજી

[લેખક : શ્રીયુત ફતેચંદ ઝવેરચંદ]

"વાણી વાચક યશ તણી કોઈ નયે ન અધૂરીજી"

આ વાચક યશ તે કોણ? વાચક યશ એટલે મહાન્ જ્યોતિર્ધર ઉપાધ્યાય શ્રીમદ્ યશોવિજયજી; જેમણે સ્વરચિત 'શ્રીપાળ રાસ'ની ઢાળ બારમીમાં, અને તેને અનુસરીને રચેલી નવપદજીની પૂજામાં ઉક્ત ઉલ્લેખ કર્યો છે.

આ મહાપુરુષનો જન્મ અણહિલપુર પાટણની આસપાસ કનોડા ગામમાં સત્તરમા સૈકામાં થયો હતો, તેમ અનુમાન કરી શકાય છે. તેઓ જાતે ઓસવાળ હતા. બાલ્યાવસ્થામાં તેમના પિતાશ્રીનું મૃત્યુ થયું હતું. તેમની સ્મરણશક્તિ બાલપણથી તીવ્ર હતી. તેમનાં માતુશ્રીને હમેશાં ગુરુની પાસે જઈને ઉપાશ્રયમાં 'ભક્તામર સ્તોત્ર' સાંભળવાનો નિયમ હતો. ચોમાસામાં એક વખતે વરસાદની ઘોડી હેલી થવાથી, તેમજ પોતાનું શરીર નરમ હોવાથી, માતાજી ગુરુ પાસે જઈ 'ભક્તામર સ્તોત્ર' સાંભળી શક્યાં નહીં. એમનો નિયમ એવો હતો કે, 'ભક્તામર સ્તોત્ર' સાંભળ્યા સિવાય બિલકુલ અન્ન લેવું નહીં. ઉપરના કારણથી ત્રણ દિવસના ઉપવાસ થયા. બાળ "જશો"ની ઉંમર તે વખતે પાંચ છ વર્ષની હશે. ચોથા દિવસે જશોએ પોતાની માતાને પૂછ્યું કે, 'હે માતુશ્રી! તમો અન્ન કેમ લેતાં નથી?' ત્યારે માતાએ કહ્યું કે, 'હે પુત્ર! હું 'ભક્તામર સ્તોત્ર' સાંભળ્યા સિવાય બિલકુલ ભોજન લેતી નથી. જશાએ વિનયથી કહ્યું કે, 'તમારી ઇચ્છા હોય તો હું તમોને 'ભક્તામર સ્તોત્ર' સંભળાવું. માતા આશ્ચર્ય પામી બોલ્યાં કે તે તને ક્યાંથી આવડે? પુત્રે કહ્યું: 'હે માતુશ્રી! તમે મને તમારી સાથે ઉપાશ્રયમાં ગુરુ પાસે દર્શન કરવા તેડી જતાં હતાં, ને વખતે હું પણ 'ભક્તામર સ્તોત્ર' સાંભળતો હતો, તે મને યાદ રહી ગયું છે. માતાએ સંભળાવવાનું કહ્યાથી પુત્રે એક પણ ભૂલ સિવાય 'ભક્તામર સ્તોત્ર' સંભળાવ્યું. તે વખતે ગુરુ શ્રી નયવિજયજી ત્યાં પધારેલા હતા; આ બાલ્ય અવસ્થામાં તેમની યાદશક્તિનો નમૂનો છે; ત્યાર પછી તેમણે સં. ૧૬૮૮માં દીક્ષા લીધી. સં. ૧૭૧૮માં ઉપાધ્યાય પદવી એમને મળી, સં. ૧૭૪૩માં ડભોઈ (દર્ભાવતી) નગરીમાં તેઓશ્રી સમાધિપૂર્વક કાળધર્મ પામ્યા.

'તત્ત્વાર્થકારિકા'માં શ્રીમદ્ ઉમાસ્વાતિ વાચકે પ્રભુ શ્રી વર્ધમાનસ્વામી સંબંધમાં કહ્યું છે કે, "भावितभावो भवेष्वनेकेषु" અર્થાત્ જન્મજન્માંતરના સંસ્કારો પછી તીર્થંકરપણું

મળેલું છે; તેમજ 'ભગવદ્ગીતા'માં પણ કહેવામાં આવ્યું છે કે, "शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टो प्रजायते" અર્થાત્ પૂર્વ જન્મમાંથી યોગભ્રષ્ટ થયેલા આત્માનો જન્મ પવિત્ર કુટુંબમાં થાય છે અને એ જન્મમાં યોગમાર્ગની શરૂઆત કરે છે; તેમ ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી માટે પણ કહી શકાય.

એકવીશ દિવસ પર્યંત 'ઐં'ના બીજથી સરસ્વતી દેવીનું એમણે આરાધન કર્યું હતું. એકવીશમા દિવસની રાત્રિએ સરસ્વતી દેવી સાક્ષાત્ હાજર થયાં અને તેમને વરદાન માગવા કહ્યું. શ્રીયશોવિજયજીએ જૈન શાસનના ઉદ્ધારાર્થે શાસ્ત્રો રચવામાં સહાય માગી. સરસ્વતી દેવીએ કહ્યું: "તે પ્રમાણે થાઓ!" એમ કહી દેવી અંતર્ધાન થયાં.

એમને ઉપાધ્યાય પદવી શ્રીવિજયપ્રભસૂરિજીએ આપી હતી. તે વખતે યતિઓમાં ચાલતા શિથિલાચારને દૂર કરવા શ્રીસત્યવિજયજી પંન્યાસની સાથે મળી ક્રિયોદ્ધાર કર્યો હતો.

જેમ શ્રીમાન્ હરિભદ્રસૂરિજીએ સ્વરચિત ગ્રંથાને છેડે "विरह" શબ્દ રાખેલો હતો, તેમ શ્રીમદ્ ઉપાધ્યાયજીએ સ્વરચિત ગ્રંથની શરૂઆતમાં 'ऐंद्र' શબ્દ સંકેતરૂપે રાખેલો છે.

ઉપાધ્યાયજીનો શ્રીઆનંદઘનજી સાથે સમાગમ થયો હતો. આબુની યાત્રા કરી તેટલામાં શ્રીઆનંદઘનજીની શોધ કરતાં તેઓ મળી ગયા. આનંદઘનજી કે જેઓ અધ્યાત્મયોગી હોઈ, પાછળથી એકાંતવાસમાં રહેતા હતા; તેમના તરફના પૂજ્યભાવથી ઉપાધ્યાયજીએ 'અષ્ટપદી' રચી છે. તેના નમૂનારૂપે આ પદ્ય ધ્યાનમાં લેવા જેવું છે:

"આનંદઘનકે સંગ સુજસ હી મિલે જબ,
તબ આનંદ સમ ભયો સુજસ;
પારસસંગ લોહા જો ફરસત,
કંચન હોત હી તાકે કસ."

આ રીતે તેઓશ્રી પ્રખર વિદ્વાન હોવા છતાં કેવી ગુણગ્રાહી વિભૂતિ હતા!

એમના સમકાલીન વિદ્વાન જ્યોતિર્ધરો—ઉ૦ શ્રીમાનવિજયજી, પં૦ શ્રીસત્યવિજયજી, ઉપા૦ શ્રીવિનયવિજયજી, વિજયદેવસૂરિ, વિજયસિંહસૂરિ, અને વિજયપ્રભસૂરિ વગેરે હતા.

તેઓશ્રીએ કાશીમાં વિદ્યાભ્યાસ કરેલો અને વાદમાં વિજય મેળવતાં ન્યાયવિશારદની પદવી આપવામાં આવી હતી. તેઓશ્રીના વરદ હસ્તે નિમ્ન ગ્રંથો રચાયેલા છે. કેટલાક લભ્ય છે અને કેટલાક અલભ્ય છે. સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત ભાષામાં બનાવેલા 'અધ્યાત્મમત-પરીક્ષા, અધ્યાત્મસાર, અનેકાંતવ્યવસ્થા, તર્કપરિભાષા' વગેરે છેતાલીસ ગ્રંથો લભ્ય છે.

તેમના હાથનું શાસનપત્ર સંવત ૧૭૩૮ માં લખેલું તે ભાવનગરથી પ્રગટ થતા 'આત્માનંદ પ્રકાશ' માસિક પુ૦ ૧૩, અંક : ૬માં પ્રસિદ્ધ થયેલું છે. ઘોઘામાં આવ્યા ત્યારે તેમણે 'સમુદ્ર અને વહાણના સંવાદ'નું કાવ્ય રચ્યું; અને તેમાં મનુષ્ય જીવનની

દુર્લભતા બતાવી ભવિષ્યની પ્રજાને બોધ આપ્યો. 'અધ્યાત્મમતપરીક્ષા, દિક્‌પટ ચોરાશી બોલ' વગેરે ગ્રંથો તેમણે દિગંબર સંપ્રદાયનાં મંતવ્યો સામે રચ્યા છે.

તેમણે ગૂર્જર ભાષામાં રચેલા 'દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ' ઉપરથી દિગંબર કવિ શ્રીભોજરાજજીએ, 'દ્રવ્યાનુયોગતર્કણા' નામે વિદ્વદ્‌ભોગ્ય ગ્રંથ સંસ્કૃતમાં બનાવ્યો છે.

સવાસો, દોઢસો અને સાડા ત્રણસો ગાથાનાં સ્તવનોમાં સ્થાનકવાસી મંતવ્યો સામે તેમ જ ષડ્‌દર્શનના વાદીઓ, કે જેઓ એકાંત મતવાદીઓ ગણાય છે; તેમની સામે જૈન દર્શનનો સ્યાદ્‌વાદ મત પ્રખરપણે રજૂ કરેલો છે; તદ્‌ઉપરાંત 'બ્રહ્મગીતા, સમાધિશતક, સમતા-શતક, વીશ વિહરમાનનાં સ્તવનો, અમૃતવેલી સજ્ઝાય, ચાર આહારની સજ્ઝાય, પંચ પરમેષ્ઠિગીતા, સીમંધરસ્વામીનું નિશ્ચય-વ્યવહારગર્ભિત એંતાલીસ ગાથાનું સ્તવન, આઠ દ્રષ્ટિની સજ્ઝાય, મૌન એકાદશીનાં દોઢસો કલ્યાણકોનું સ્તવન, અગિયાર અંગની સજ્ઝાય, સમ્યક્‌ત્વ ષટ્‌સ્થાનકની ચોપાઈ, અતીત, અનાગત અને વર્તમાન ચોવીશીનાં સ્તવનો, પદો, જિન સહસ્રનામ વર્ણન, ચડતી પડતીની સજ્ઝાય' વગેરે ગ્રંથો રચી ગુર્જર સાહિત્યસૃષ્ટિ ઉપર તેમણે મહાન ઉપકાર કર્યો છે.

જેમ તેમણે લોકભોગ્ય સાદાં સ્તવનો, જેમ કે-'જગજીવન જગ વાલહો,' 'વિમલાચલ નિતુ વંદીએ'-વગેરે સાહિત્ય રચ્યું છે, તે રીતે 'જ્ઞાનસાર' અને 'અધ્યાત્મસાર' જેવાં વિદ્વદ્‌ભોગ્ય ગહન ઉચ્ચ કોટિના ગ્રંથોની રચના પણ કરી છે. ઉપાધ્યાયજીએ કયા વિષયોમાં કલમ નથી ચલાવી એ કહેવું મુશ્કેલ છે. તેમણે ન્યાયના અનેક ગ્રંથો જેવા કે-'શાસ્ત્રવાર્તાસમુચ્ચય-ટીકા, નયોપદેશ, ન્યાયખંડખાદ્ય, ન્યાયાલોક, નયરહસ્ય' વગેરે રચ્યા છે. અન્ય દર્શનની માન્યતાને જૈન દર્શનમાં ઉતારવાનું તેમનું અદ્‌ભુત સામર્થ્ય હતું. એમની કૃતિઓ પ્રતિપાદક શૈલીની અને પ્રસંગોપાત્ત ખંડનાત્મક શૈલીની, સમન્વયવાળી, વિશદ દૃષ્ટિવાળી, તર્ક અને ન્યાયથી ભરપૂર અને આગમોનાં ગંભીર રહસ્ય અને ચિંતનવાળી પુરવાર થઈ છે.

દર્શન, જ્ઞાન, ચારિત્ર સાથે તપમાં પણ તેઓ સંયમી જીવનવાળા હતા. વીશસ્થાનકનું તપ તેમણે કર્યું હતું.

જે 'નવપદજી પૂજા' ઓળીના દિવસોમાં ચાલુ હોય છે તે તેમણે બનાવી છે. શ્રીવિનયવિજયગણિએ 'શ્રીશ્રીપાળ રાસ' સં૦ ૧૭૩૮માં બનાવ્યો, તેમાં સાડા સાતસો ગાથા સુધી ગામ રાંદેરમાં રાસ રચ્યા પછી તેઓ કાળધર્મ પામ્યા; બાકીના રાસનો વિભાગ કે જેમાં નવપદજીની પૂજા આવી જાય છે, તે વિભાગ ઉપા૦ શ્રીયશોવિજયજીએ પૂર્ણ કર્યો. આ રીતે સહાધ્યાયીનું ઋણ અદા કર્યું, અને જૈન જગતના ઉપકારી બન્યા.

જેવી રીતે શ્રીહેમચંદ્રાચાર્યજીના જીવનપ્રસંગોની તિથિઓ બરાબર મળી શકે છે, તેવી રીતે ઉપાધ્યાયજીના જીવનપ્રસંગોની તિથિઓ અને સાલ ચોક્કસરીતે ઉપલબ્ધ થઈ શકતી નથી, છતાં 'સુજસવેલી ભાસ' ગ્રંથ કે જે તે સમયના મુનિ શ્રીકાન્તિવિજયજીએ

લખેલ છે, તેમાં સં. ૧૭૪૩ માં શ્રીઉપાધ્યાયજીએ ડભોઈમાં ચતુર્માસ કરેલ છે, અને ચતુર્માસ પછી કાળધર્મ (સ્વર્ગવાસ) પામેલ છે, એવી હકીકત જણાવે છે. તેઓશ્રીની પાદુકા સં. ૧૭૪૫ માં ડભોઈમાં પ્રતિષ્ઠિત થયેલી છે. વસ્તુતઃ પ્રાદુકાનો જીર્ણોદ્ધાર—પૂ૦ મહારાજ શ્રીવિજયધર્મસૂરિજીના વિદ્વાન શિષ્ય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ (જેમને માટે નજીકના ભવિષ્યમાં મંગલમય ઉપાધ્યાયજી પદપ્રાપ્તિ માટેની આગાહી મારી દૃષ્ટિએ લાગે છે) જેમણે મુંબઈ–ભાયખલામાં–સં. ૨૦૦૭ માં સ્વ૦ પૂ૦ ઉપાધ્યાયજીની દેરીનો જીર્ણોદ્ધાર અને જીવનચરિત્ર પ્રકાશિત કરવાનો સમિતિદ્વારા નિર્ણય જાહેર કર્યો હતો. તેઓશ્રીનીજ હાજરીમાં તેઓશ્રીના ગુરુવર્યો હસ્તક સં. ૨૦૦૮ માં ત્રણ દિવસના મહોત્સવપૂર્વક ડભોઈમાં આરસના ભવ્ય નૂતન ગુરુમંદિરમાં મૂર્તિની પ્રતિષ્ઠા તથા શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર મહોત્સવ ઉજવાયો હતો એ આનંદદાયક બીના હતી.

ચૌદસો ચુંમાલીસ (૧૪૪૪) ગ્રંથોના કર્તા યુગપ્રધાન શ્રીમાન હરિભદ્રસૂરિ પછી લગભગ એક હજાર વર્ષે યશોવિજયજી ઉપાધ્યાય થયા છે, અને તે "લઘુ હરિભદ્ર" નામે સંબોધાય છે. સાડા ત્રણ ક્રોડ શ્લોકોના રચયિતા, અઢાર દેશોમાં અહિંસાના પ્રચારક અને કુમારપાળ રાજાના પ્રતિબોધક શ્રીહેમચંદ્રાચાર્યજી તથા અકબર બાદશાહના પ્રતિબોધક અને ભારતવર્ષમાં અહિંસાનો ડંકો વગાડનાર શ્રીહીરવિજયસૂરિ પછી શાસનપ્રભાવક તરીકે ઉ૦ શ્રીયશોવિજયજીનો અવતાર થયો; આવા જ્યોતિર્ધર મહાત્માઓથી જૈન શાસન અવિચ્છિન્નપણે ટકી રહ્યું છે. અમુક યુગો પછી આવા મહાત્માઓ પ્રગટ થવા જોઈએ, તેમ શ્રીમહાવીર પરમાત્માએ કહેલ છે, તે મુજબ જ જૈન શાસન એકવીશ હજાર વર્ષો પર્યંત ચાલુ રહી શકશે.

શ્રીઉપાધ્યાયજીએ એકસો ગ્રંથ ઉપરાંત લગભગ બે લાખ શ્લોકોની રચના કરેલી છે. ઘણા ગ્રંથો તેમના અલભ્ય છે. 'ભાષારહસ્ય' નામના સ્વરચિત ગ્રંથમાં તેમણે જ કહેલ છે કે, "रहस्य" પદાંકિત ૧૦૮ ગ્રંથો કરવા નિર્ણય કરેલ છે, તેમાંથી માત્ર 'ભાષારહસ્ય' 'ઉપદેશરહસ્ય' અને 'નયરહસ્ય' મળે છે.

સ્વ૦ ઉપાધ્યાયજી મહારાજનું સાહિત્યજીવન એટલે સમ્યગ્ દર્શન, જ્ઞાન, ચારિત્રમય અપાર પાંડિત્ય, બાલ બ્રહ્મચર્ય, સંયમ, તપ, ગુર્જર ભાષાસમૃદ્ધિ, વ્યવહાર અને નિશ્ચયદૃષ્ટિની સમન્વિતતા, તાર્કિકપણું, ન્યાય ગ્રંથોનું ઉત્પાદન, નવીન ન્યાયનાં સર્જન, સરળમાં સરળ ગુર્જર ભાષાનાં સ્તવનો, કાવ્યો અને પદોવાળું, તેમ જ 'અધ્યાત્મસાર' અને 'અધ્યાત્મોપનિષદ' જેવા ઉચ્ચકોટિના ગ્રંથોની સર્જકતાવાળું વગેરે વિવિધતાના સંમિશ્રણરૂપ ટંકશાળી વચનમય જીવન.

પ્રસંગોપાત્ત કહેવાનું પ્રાપ્ત થાય છે કે, ગત વર્ષના દ્વિ૦ વૈશાખ માસના શ્રી કાનજી સ્વામી તરફથી સોનગઢથી બહાર પડતા 'આત્મધર્મ' માસિકમાં તેમને માટે "વ્યવહાર વિમૂઢ" શબ્દ વાપરીને તેમને હલકટ રીતે ચિતરવામાં આવ્યા છે પણ તે કેવળ લેખકનું

તેઓશ્રી વિરચિત સાહિત્યના વહન જિનઆગમનું પરિણામ છે, અથવા દોહનપૂર્વક ઉપજાવ્યું છે. તેમણે તો વ્યવહારની મુખ્યતા રાખી નિશ્ચય દૃષ્ટિની ગૌણતા, આપણા જેવા ભરતક્ષેત્રના માનવીઓ માટે પ્રથમ ગુણસ્થાનક સુધી મર્યાદારૂપે બતાવી છે. કેવળી ભગવંતને પણ તેરમા ગુણસ્થાનકમાં વ્યવહાર સાચવવો પડે છે, તેથી જ તીર્થંકર પરમાત્માઓ ચતુર્વિધ સંઘની સ્થાપના કરે છે, એ સુપ્રસિદ્ધ છે. નવકારનાં પદોમાં પ્રથમ અરિહંત પદ તે વ્યવહાર અને બીજું સિદ્ધ પદ તે નિશ્ચય છે. અરિહંત પરમાત્મા વગર અરૂપી સિદ્ધપદની ઓળખાણ કોણ આપી શકે? એ વિષે ઉપાધ્યાયજી મહારાજે સ્વયં કહ્યું છે કે—

"નિશ્ચય દૃષ્ટિ હૃદય ધરીજી, પાળે જે વ્યવહાર;
પુણ્યવંત તે પામશેજી, ભવસમુદ્રનો પાર."

આ મહાન જ્યોતિર્ધર કે જેઓ પૂર્વ જન્મનો અદ્ભુત ક્ષયોપશમ લઈને અવતર્યા હતા, તેઓ ષડ્દર્શનવેત્તા, સેંકડો ગ્રંથોના રચયિતા, ન્યાય, વ્યાકરણ, છંદ, સાહિત્ય, અલંકાર, કાવ્ય, તર્ક, સિદ્ધાંત, આગમ, નય, પ્રમાણ, સપ્તભંગી, અધ્યાત્મ, યોગ, સ્યાદ્વાદ, આચાર, તત્ત્વજ્ઞાન ઇત્યાદિ વિષયો ઉપર વિદ્વદ્ભોગ્ય, તથા સામાન્ય જનતા માટે ગુજરાતી વગેરે લોકભાષામાં વિપુલ સાહિત્યનો રસથાળ ધરી ગયા. નવ્ય ન્યાયના આદ્ય જૈન વિદ્વાન, ન્યાયાચાર્ય ન્યાયવિશારદ આદિ બિરુદોને પ્રાપ્ત કરનાર યુગ-જ્યોતિર્ધરને આપણા અનેકશઃ વંદન હો.

'ઉપમિતિભવપ્રપંચકથા' કે જે સોળ હજાર શ્લોકમય સંસ્કૃત ગ્રંથ છે, તેમાંથી સાર ખેંચી ગુર્જર ભાષામાં શ્રીવિમળનાથના સ્તવનમાં એમણે—

"તત્ત્વ પ્રીતિકર પાણી પાએ, વિમળા લોકે આંજીજી;
લોયણ ગુરુ પરમાન્ન દીએ તવ, ભ્રમ નાખે સવિ ભાંજીજી."

ધર્મબોધક પાઠશાળા (ગુરુ)થી પ્રાપ્ત કરેલું સમ્યગ્દર્શનરૂપ તત્ત્વ પ્રીતિકર પાણી, સદ્જ્ઞાન દૃષ્ટિરૂપ નિર્મળ અંજન અને સમ્યક્ચારિત્રરૂપ પરમાન્ન (ક્ષીર)નું સ્વરૂપ લોકભાષામાં ખડું કર્યું છે; તેમજ શ્રીસુવિધિનાથના સ્તવનમાં—

"મૂળ ઊર્ધ્વ તરુઅર અધ શાખા રે,
છંદ પુરાણે એવી છે ભાખા રે;
અચરિજવાળે અચરિજ કીધું રે,
ભક્તે સેવક કારજ સીધું રે."

આ દૃષ્ટાંત 'શ્રી ભગવદ્ગીતા'માં ઉક્ત શ્લોક સાથે કેટલીક મેળ ખાય છે.

"ऊर्ध्वमूलमधः शाखं, अश्वत्थं प्राहुरव्ययं ।
छन्दांसि यस्य पर्णानि, यस्तं वेद स वेदवित् ॥"

આ શ્લોકના રહસ્યને આશ્ચર્ય તરીકે વર્ણવી પ્રભુભક્તિ માટે લોકભાષામાં સમન્વય કર્યો છે.

દોઢસો અને સાડા ત્રણસો ગાથાનાં સ્તવનોમાં નિશ્ચય નય અને વ્યવહાર નયથી ભરપૂર ઉપદેશો છે. એમાં અપૂર્વ યુક્તિઓથી મૂર્તિપૂજા સિદ્ધ કરી છે. જેમકે કહ્યું છે કે—

" મુજ હોજો ચિત્ત શુભ ભાવથી, ભવ ભવ તાહરી સેવ રે;
યાચીએ કોડી યત્ને કરી, એહ તુજ આગળે દેવ રે.
તુજ વચન રાગ સુખ આગળે, નવિ ગણું સુરનર શર્મ રે;
કોડી જો કપટ કોઈ દાખવે, નવિ તજું તોએ તુજ ધર્મ રે. "

આ છે તેમનો અદ્ભુત શાસનરાગ અને અલૌકિક પ્રભુભક્તિ !

આનંદસૂરિ ગચ્છના શ્રીવિજયાનંદસૂરિજીએ સત્તરમા સૈકામાં રચેલો 'ધર્મસંગ્રહ' ગ્રંથ કે જેની ટીકા મહોપાધ્યાય શ્રીમાનવિજયગણિએ કરી છે, તે ગ્રંથનું સંશોધન ઉપાધ્યાયજી મહારાજે કરેલ છે; તેનો તાજેતરમાં જ ભાષાંતર સાથેનો પ્રથમ વિભાગ પ્રકાશિત થયો છે. સં. ૧૭૩૯ માં 'શ્રીજંબૂસ્વામી રાસ' તેમણે ખંભાતમાં રચેલ તે તેમના પોતાના હાથના અક્ષરોવાળા પાનાંઓ સાથેનો મળે છે.

આ રીતે તેઓશ્રી ભક્તિપરાયણ, જ્ઞાનપરાયણ, સંયમી અને તપપરાયણ સાહિત્ય-જીવન જીવી ગયા છે, અને આપણા માટે વિવિધ સાહિત્યની વાનગીઓથી ભરપૂર વારસો મૂકી ગયા છે, જેથી શાસનની પ્રભાવનાનું નિમિત્ત બની પોતાના આત્મા ઉપર તેમ જ ભવિષ્યની પ્રજા ઉપર મહાન ઉપકાર કરી ગયા છે. આવા મહાત્માઓ પોતાની જીવનલીલા સંકેલીને સ્વર્ગે સંચર્યા. શ્રીભર્તૃહરિજીના શબ્દોમાં કહીએ તો આવી મહાન વિભૂતિઓ "अलंकरणं भुवः–પૃથ્વીના અલંકારરૂપ" છે. તેમ જ કવિ ભવભૂતિના શબ્દોમાં "जयति तेऽधिकं जन्मना जगत्— હે મહાત્મન્ ! તમારા જન્મથી આ જગત્ જયવંત વર્તે છે." એટલું કહી ઉપસંહારમાં તેમણે જ રચેલા 'જ્ઞાનસાર' ગ્રંથનો અંતિમ–સર્વ નયોના આશ્રયવાળો સ્તુતિ–શ્લોક, તથા આત્મજાગૃતિ માટે તેમણે રચેલી 'અમૃતવેલી સજ્ઝાય'ની વાનગીરૂપ એક જ કાવ્ય સાદર રજૂ કરી વિરમું છું.

" अमूढलक्ष्याः सर्वत्र, पक्षपातविवर्जिताः ।
जयन्ति परमानन्दमयाः सर्वनयाश्रयाः ॥ "

"નિશ્ચય નય અને વ્યવહાર નયમાં જ્ઞાનપક્ષ અને ક્રિયાપક્ષમાં, એક પક્ષગત–ભ્રાંતિ તજીને સર્વ નયોનો આશ્રય કરનારા પરમઆનંદથી ભરપૂર (મહાપુરુષો) જયવંત વર્તે છે."

" ચેતન જ્ઞાન અજુવાળીએ, ટાળીએ મોહ સંતાપ રે;
ચિત્ત ડમડોલતું વાળીએ, પાળીએ સહજ ગુણ આપ રે. "

★

ઉપાધ્યાયજી મહારાજ
અને
તત્કાલીન પરિસ્થિતિ

[લેખક : શ્રીયુત રાજપાલ મગનલાલ વહોરા, ખાખરેચી]

ઉપાધ્યાયજીના સમયના અંધકારયુગ—

જૈન સંઘમાં જેમ અવારનવાર જ્યોતિર્ધરો થતા રહ્યા છે, તેમ અંધકારનો સામનો પણ સંઘને અવારનવાર કરવો પડ્યો છે. ઉપાધ્યાય શ્રીમાન યશોવિજયજી મહારાજનો સમય એવો અંધકાર યુગ હતો એમ કહેવામાં હરકત જેવું નથી. મુનિઓના ચારિત્ર્યમાં ભારે શિથિલતા પ્રવેશી ચૂકી હતી. શ્રીપૂજ્યો અને યતિઓનું પ્રબળ પૂર હતું. સત્યધર્મને આચરવા તો કોઈ તૈયાર ન હતું પણ સાંભળવાયે કોઈની તૈયારી ન હતી એવું તત્કાલીન પરિસ્થિતિ પરથી દેખાય છે. કુગુરુઓનું જોર, ધામધૂમની ધમાધમ, કુગુરુઓના ફંદમાં ગૃહસ્થોનું પડવું, પૈસા લઈને ધર્મ બતાવવો ઇત્યાદિ, ત્યારે મોટા પ્રમાણમાં પ્રવર્તતાં હશે. કારણ પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજની અનેક કૃતિઓમાં અંતરની એ વેદના તેમણે વ્યક્ત કરેલી છે. એટલું જ નહિ, પણ તેમના સમકાલીન શ્રીમાન આનંદઘનજી મહારાજ જેવા પરમયોગીને તત્કાલીન જનતા પિછાની શકી ન હતી અને એ હદે વાત પહોંચી કે તેમને લગભગ વનવાસી જેવું જીવન જીવવું પડ્યું !

ક્રિયાશૈથિલ્ય દૂર કરવાની પરમાવશ્યકતા જણાતાં પંન્યાસ શ્રીસત્યવિજયજી મહારાજે તે સમયે ક્રિયોદ્ધાર માટે કમર કસી હતી. ઉપાધ્યાયજી મહારાજનો તે વાતને સંપૂર્ણ હાર્દિક ટેકો હતો. પરંતુ પરિસ્થિતિ એવી વિષમ હતી કે તેઓ શ્રીપંન્યાસજીને કશી સક્રિય મદદ કરી શક્યા ન હતા. આ બાબત વિષે લેખકને સદ્ગત શ્રીમોતીચંદભાઈ કાપડિયા સાથે વાત થયેલી ત્યારે તેમણે કહેલું કે એમ થવામાં ઉપાધ્યાયજી મહારાજના સમયની વિષમ પરિસ્થિતિ તો કારણભૂત હતી જ પરંતુ કંઈક અંશે તેમનું હૃદયદૌર્બલ્ય પણ હશે. ગમે તેમ હો, પણ ત્યારની પરિસ્થિતિ સત્યધર્મના સાધકને અનુકૂળ ન હતી એ વાત ચોક્કસ.

શ્રીમાન આનંદઘનજી મહારાજને પણ સ્તવન ચોવીશીમાં, ગચ્છના મતભેદો ત્યારે કેવા હતા અને સુગુરુનો કેવો વિરહ પ્રવર્તતો હતો અને પગ મૂકવાનું પણ ઠેકાણું ન હતું તે વાત ઉગ્ર શબ્દોમાં વ્યક્ત કરવી પડી છે. એટલું જ નહિ, પૂ. ઉપાધ્યાયજીને, પોતે જ્ઞાની

અને શુદ્ધ સંયમી છતાં ત્યારના અતિવિષમ સંજોગોને વશવર્તીને એકથી વધુ વખત માફી-પત્રો લખી આપવાની ફરજ પડી હતી ! કેટલી હદે કાળબળ તેમનાથી વિરુદ્ધ હશે તેનો ખ્યાલ આ ઉપરથી આવી શકશે.

આચાર્યપદ મેળવી કેમ ન શક્યા ?—

આચાર્યપદની પરિપૂર્ણ યોગ્યતા તેમનામાં હતી. તેમની વાણી કોઈ પણ નયથી અધૂરી નથી એમ તેઓશ્રી પોતે ભારપૂર્વક અને અધિકારપૂર્વક કહે છે (વાણી વાચક યશતણી કોઈ નયે ન અધૂરી રે) ભાષામાં અને સંસ્કૃતમાં, જ્ઞાનનાં સર્વ ક્ષેત્રોને તેમણે ખેડ્યાં છે. આવી પરમવિભૂતિ આચાર્યપદથી કેમ અલંકૃત થઈ ન શકી ? ત્યારની જનતાએ કેમ ઔદાસિન્ય રાખ્યું હશે ? વગેરે પ્રશ્નો આશ્ચર્યભાવે ઉદ્ભવે તેવા છે. આમ થવામાં કેટલાંક કારણો વિચારી શકાય. એક તો એ કે એવી અંધકારમય પરિસ્થિતિને તેમણે ચલાવી લીધી નથી પણ તેમની કૃતિઓમાં ત્યારનાં પ્રત્યાઘાતી બળોના તેમણે ઊધડા લીધા છે. બીજું, તેઓ જીવનના પાછલા કાળમાં આનંદઘનજી જેવા યોગીવર – કે જેઓ જનતાથી દૂર ફેંકાઈ ગયા હતા–ના ભારે પ્રશંસક બન્યા હતા. આ કારણોથી તે વખતની જનતા પર જેમનું પ્રચુર પ્રભુત્વ જામી ગયું હતું તેવાં બળો અંતરાયભૂત બની ગયાં હોય તેમ સંભવે છે. શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજની જેમ શ્રીમાન વિનયવિજયજી મહારાજ પણ આચાર્યપદને યોગ્ય છતાં તે પદ મેળવી શક્યા ન હતા. વર્તમાનમાં સામાન્ય જ્ઞાનવાળા સાધુને કે ગઈ-કાલના દીક્ષિતને માટે આચાર્યપદ સુલભ બની ગયું છે, જ્યારે આવી મહાવિભૂતિઓને ત્યારના સંઘે ન સન્માની એ કાળબળની વિચિત્રતા જ સૂચવે છે.

સૌહાર્દ–સંપ, એકતા ને ઉદાર હૃદયનો પ્રેરકપ્રસંગ—

ખારા સમુદ્રમાં મીઠી વીરડી જેવો એક બનાવ પૂજા સાહિત્યમાં સ્મરણીય બની ગયો છે તેની નોંધ લેવી આવશ્યક માનું છું.

ઉપાધ્યાયજી મહારાજના નિર્વાણ પછી, આચાર્ય શ્રીજ્ઞાનવિમળસૂરિજીએ તેમજ ખર-તરગચ્છના આભૂષણરૂપ આત્મજ્ઞાની મુનિ શ્રીદેવચન્દ્રજીએ ઉપાધ્યાયજી મહારાજના નામથી નવપદ પૂજાની રચના કરી છે. એ પૂજાની આદિમાં ભુજંગપ્રયાતવૃત્તમાં પૂ. જ્ઞાનવિમલ-સૂરિજીએ દરેક પદની ટૂંકી સ્તવના કરી છે. એ પછી ઢાળમાં, દરેક પદની સ્તવના પૂ. દેવ-ચંદ્રજી મહારાજે કરી છે અને ત્યાર બાદ 'શ્રીપાલરાસ'ના ચોથા ખંડની અગિયારમી અને બારમી ઢાળો–જેના રચયિતા પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજ છે–માંથી, પ્રત્યેક પદને યોગ્ય ભાગ અલગ અલગ દરેક પૂજામાં મૂકેલ છે. અંતમાં માલિનીવૃત્તમાં પૂ. જ્ઞાનવિમલસૂરિ મહારાજે અને કલશમાં પૂ. દેવચન્દ્રજી મહારાજે પોતાનાં નામ વ્યક્ત કર્યાં છે. ભિન્ન ગચ્છના વિદ્વાનો વચ્ચેની આ હાર્દિક એકતા અને ઉપાધ્યાયજી મહારાજ પ્રત્યેનો આ બંને મહાત્માઓનો અહોભાવ, સૌહાર્દનું સુંદર દૃષ્ટાંત પૂરું પાડે છે, જે સાંભળતાં આપણા હૃદયને અસર કરે છે.

તે કાળમાં આવાં પુરુષોનું પણ ચરિત્રચિત્રણ બિલકુલ નહિ થતું હોય એમ જણાય છે. નહિતર, પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજ કે આનંદઘનજી મહારાજના વ્યવસ્થિત જીવનચરિત્ર માટેની આપણી ઉત્કંઠા–ક્યારનીયે તૃપ્ત થઈ હોત. પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજ માટે "સુજસ-વેલીભાસ" નામક નાની કૃતિ મળે છે પણ તે પુસ્તિકા, તેમની વિશાળ વિદ્વત્તાના બહુ-વિધ પાસાવાળા જીવનને પૂર્ણતયા ન્યાય નથી જ આપી શકતી.

ઉપાધ્યાયજી મહારાજ અને તેમના કાળની અન્ય વ્યક્તિઓ તેમજ ત્યારના સંજોગો, સહાયક બળો, અવરોધક બળો વગેરે વિશે ગવેષણાપૂર્ણ માહિતી અન્ય વિદ્વાનોના કથનમાંથી મળી રહેશે એ અપેક્ષા રાખીને આ નમ્ર આલેખન પૂર્ણ કરું છું.

कष्टेन हि गुणग्रामं, प्रगुणीकुरुते मुनिः ।
ममताराक्षसी सर्वं, भक्षयत्येकहेलया ॥ ६ ॥

મુનિ કષ્ટ વેઠીને ગુણનો સમૂહ તૈયાર કરે છે અને મમતા-રૂપી રાક્ષસી તો એકસપાટે બધું ભક્ષણ કરી જાય છે.

અધ્યાત્મસાર : શ્લોક]　　　[શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

卐

ન્યાયાચાર્ય જૈન જ્યોતિર્ધર
મહોપાધ્યાય શ્રી. યશોવિજયજી

[લેખક : શ્રીયુત મગનલાલ મોતીચંદ શાહ, સુરેન્દ્રનગર]

“ नमोऽस्तु तस्मै देवाय, सद्गुणाय तपस्विने।
ज्ञानध्यानवरिष्ठाय, नमोऽस्तु मे नमोऽस्तु मे ॥ ”

સંસારમાં વિદ્યમાન મહાત્માઓની પૂજાભક્તિ અનેકરીતે થઈ શકે છે પરંતુ અવિદ્યમાન મહાત્માઓની પૂજાભક્તિ તો બહુમાનથી, શ્રદ્ધાથી અને હૃદયથી તેમના ગુણાનુવાદ ગાવાથી જ થઈ શકે છે. જયન્તીઓ ઊજવવી, સમારંભો કરવા કે બીજી ઘણી રીતે તેમના ગુણાનુવાદો ગાઈ શકાય છે. આજનો પ્રસંગ પણ એવો જ છે કે જૈન દર્શનના સુવિખ્યાત સંત, પ્રખર તત્ત્વજ્ઞ, ઉત્તમ સાહિત્યપ્રેમી અને સર્વધર્મના ભાવને સમજાવનાર અઠંગ મહોપાધ્યાય શ્રી યશોવિજયજી મહારાજને અંજલિ આપવાનો છે તેમજ તેમનું સ્મરણ કાયમ રહે, ભક્તિભાવ વૃદ્ધિ પામે અને સમાજ તેમના જ્ઞાનનો ચિરકાળ સુધી લાભ લે એવાં વિધિવિધાન કરવાનો છે.

જેણે સંસારમાં જન્મ ધરીને યશકીર્તિનો સંપૂર્ણ વિજય કરી પોતાના જીવનમાર્ગને રાજમાર્ગ કે જ્ઞાનમાર્ગ બનાવ્યો છે કે જે માર્ગ આપણા માટે પરમ હિતાવહ છે, એવા પરમ પ્રતિભાવંત, જ્ઞાનવંત, ગુણવંત ઉપાધ્યાયજી મહારાજનું નામ લેતાં જ કોઈ અનેરો આનંદ અનુભવાય છે. જેમનો ક્ષયોપશમ ઉત્તમ હતો, જેમની દર્શનશુદ્ધિની ગણના થઈ રહી છે, જેમનાં સંયમશીલનાં માપ કાઢવાં કઠણ છે એવા એક જૈન સાક્ષરશિરોમણિ, વ્યાખ્યાનવાચસ્પતિ સાધુ મહાત્મા વિશે કાંઈ લખવું એ સાધારણ બુદ્ધિનું કામ નથી, વિદ્વાનો જ તેમાં ચંચુપાત કરી શકે.

તેમનાં બનાવેલાં સંસ્કૃત-પ્રાકૃત પુસ્તકો તો એટલાં બધાં છે કે તેનું પૂરું અવલોકન થઈ શકે નહીં. કદાચ કોઈ આગ્રહથી એનું નિરીક્ષણ કરવા ચાહે તો કરી શકે, પરંતુ તેમણે પાથરેલો ગૂઢ તત્ત્વાર્થ એટલો વિશાળ હોય છે કે તે સમજવાને વિશિષ્ટ જ્ઞાનની જરૂર પડે.

તેમનાં ઘણાં પુસ્તકો સંસ્કૃતમાં છે. કાશીમાં રહીને તેમણે કેટલાંક વર્ષ સંસ્કૃતનો અભ્યાસ કર્યો હતો. સંસ્કૃતભાષા તો તેમને વરેલી હતી એમ કહીએ તો ચાલે. આ જ્ઞાનને માટે તેમને અજબ માન પણ હતું, હૃદયનો વિશ્વાસ હતો અને અચલ દઢતા હતી. આજે આવી દઢતા ધારણ કરનારા સંતો ઓછા જ હશે. તેમનું દઢ મંતવ્ય ‘ન્યાયખંડ ખાદ્ય’ કે ‘મહાવીરસ્તવ’ના પહેલા શ્લોકમાં જ પ્રત્યક્ષ થાય છે.

" ઐંકાર" જાપ જપી ગંગતટે વસીને,
ઇચ્છા કરી કુશળ કાવ્ય અભંગ રીતે;
માળા રચી સુરભિ પુષ્પ સમાન જેની,
પૂજા કરું પ્રભુપદે વિધિથી જ તેની. [–વસંતતિલકા વૃત્ત]

" ઐંકાર" છે ચિંતામણિ પદ આદિમાં તેને જપું.
ગંગાતટે વસી માન્ય વિષયે કાવ્યની ઇચ્છા કરું;
વિકસિત સુગંધી પુષ્પ સરખા શબ્દને ત્યાં ગોઠવું,
હે વીર ! તારા પદકમળની એ વડે પૂજા કરું. [–હરિગીત છંદ]

'ન્યાયખંડખાદ્ય'ની રચનાના પ્રારંભમાં જ ઉપાધ્યાયજી મહારાજ મંગલાચરણ તરીકે કલ્પવૃક્ષ "ઐંકાર" જે સરસ્વતીનું મંત્રબીજ છે તેનું સ્મરણ કરીને પોતે ગંગાને કાંઠે સંસ્કૃત વિદ્યાના ધામરૂપ બનારસમાં રહી 'ન્યાયાચાર્ય' અને 'ન્યાયવિશારદ'ની માનવંતી પદવી મેળવી, સંસ્કૃત કાવ્યની નિપુણતા પ્રાપ્ત કરી છે તે બતાવવા વિદ્વાનોને રંજન કરવાનો ઉલ્લાસ પ્રગટાવી પ્રભુ મહાવીરના સુગંધી પુષ્પ સરખા તત્ત્વજ્ઞાનરૂપી શબ્દોની માળારૂપી ગુંથણી કરી તે વડે પ્રભુના ચરણકમળની પૂજા કરવાનો ભાવ બતાવ્યો છે; એટલે કે આ કાવ્ય પ્રભુના તત્ત્વજ્ઞાનની સ્તવનારૂપ છે એમ કહે છે.[1]

'ન્યાયખંડખાદ્ય' ગ્રન્થની મહત્તા—

ઉપાધ્યાયજી મહારાજનાં બધાં પુસ્તકો જ્ઞાનની પરિપક્વતાથી લખાયાં છે. તેમાં 'ન્યાયખંડખાદ્ય' અગ્ર ભાગ ભજવે છે. મારે 'ન્યાયખંડખાદ્ય'નો ગદ્યપદ્યાત્મક અનુવાદ કરવાનો હતો તેથી મારે તેનો કેટલોક અભ્યાસ કરવો પડ્યો. આ પુસ્તકની મૂળ કૃતિ અને તેના ઉપર થયેલી અત્યંત વિદ્વત્તાભરી સંસ્કૃત ટીકા વાંચતાં જ માણસ થંભી જાય તેવું છે. જો કે તેમના મૂળ શ્લોકો અત્યંત અઘરા નથી. કંઠસ્થ કરવા જેવા છે.

ઉપાધ્યાયજી મહારાજે 'ન્યાયખંડખાદ્ય'માં પ્રભુની સ્તુતિના ઉદ્દેશથી સ્યાદ્વાદનું જે નિરૂપણ કર્યું છે તે ચિન્તનીય છે. તેમણે પ્રથમ પ્રભુના અતિશયોનું વર્ણન કરી, વાણી અતિશયનું પ્રાધાન્ય બતાવી બૌદ્ધોના ક્ષણિકવાદનો નિરાસ કર્યો છે. બૌદ્ધો દ્રવ્યનું લક્ષણ જે 'अर्थक्रियाकारित्व' કરે છે તેમાં થતો દોષ તેઓ બતાવે છે, તેમજ બૌદ્ધોની અન્વય અને વ્યતિરેક વ્યાપ્તિનો દોષ સમજાવે છે. બૌદ્ધો બીજમાં રહેલા બીજત્વને અંકુર ઉત્પન્ન થવાનું કારણ ગણે છે, પરંતુ તે વ્યાપ્તિ ખોટી છે. બીજ ઉત્પન્ન થવાનું કારણ બીજત્વ સાથે સહકારી કારણો—જમીન પાણી વગેરે જોઈએ જ, એ નિયમ સમજાવી સૌત્રાન્તિક, વૈભાષિક, શૂન્યવાદ, વિજ્ઞાનવાદ, અનાત્મવાદ—આ બધાનો સૂર જે 'यत् सत् तत् क्षणिकम्' ને એકાંત ગણાવી દોષયુક્ત ઠરાવે છે અને પ્રભુના વ્યવહારવિશુદ્ધ નયને આધિપત્ય આપે છે, ત્યાર પછી

1. 'ન્યાયખંડખાદ્ય'ના મારા ગદ્યપદ્યાત્મક અનુવાદમાંથી.

કાળ અને દેશનું સ્વરૂપ સમજાવે છે. 'ન્યાયખંડખાદ્ય'નો પહેલો ભાગ તો બૌદ્ધના ક્ષણિક-વાદનો પરિહાર કરવામાં જ પૂરો થાય છે. ન્યાય દર્શનની કૂટસ્થ નીતિ પણ બતાવવામાં આવી છે. દ્રવ્યને એકાંત નિત્ય કે અનિત્ય માનવામાં થતા દોષો બતાવી તેને નિત્યાનિત્ય કે કથંચિત્ નિત્ય માનવાની વ્યવહારવિશુદ્ધ નયની શ્રેષ્ઠતા સમજાવી છે. ત્યાર પછી દ્રવ્યની ઉત્પત્તિ અને નાશનો હેતુ સમજાવી, વસ્તુમાં રહેલા ભેદાભેદ બતાવી પ્રત્યક્ષ અને પ્રત્યભિજ્ઞાનનું સ્વરૂપ બતાવે છે.

આવી રીતે 'ન્યાયખંડખાદ્ય' બહુ જ બુદ્ધિપૂર્વક લખાયું છે. મારે મારા અર્થે અનુવાદ કરવાને કારણે તેનો થોડો અભ્યાસ કરવો પડ્યો છે તે ઉપરથી હું આટલું લખી શક્યો છું.

સંસ્કૃત કાવ્યોના અનુવાદ કરવાનું કામ તો હું મારી શક્તિ મુજબ કરું છું. 'ભક્તામર સ્તોત્ર, કલ્યાણમંદિર સ્તોત્ર, પ્રાર્થના બત્રીશી, સંવેગદ્રુમકંદલી, પરમાનંદ પચીશી, રત્નાકર પચીશી, સ્યાદ્‌વાદમંજરી, અયોગવ્યવચ્છેદિકા' વગેરે કાવ્યોના અનુવાદો થઈ ગયા છે અને તે પુસ્તકારૂઢ પણ થયા છે. આ અનુવાદો પછી 'ન્યાયખંડખાદ્ય'નો અભ્યાસ કરવાનું સદ્‌ભાગ્ય સાંપડ્યું, જેની પ્રેરણા તો મને 'જૈન ધર્મ પ્રકાશ'માંથી મળી. ટૂંકમાં એ જ કે ઉપાધ્યાયજી મહારાજના જીવનનો પરિચય વધ્યો અને હું મારા કાર્યમાં સફળ થયો. તેમજ આજના મંગળ પ્રસંગે અંજલિ આપવા ભાગ્યશાળી થયો એ અનહદ આનંદનો વિષય છે. જો કે હું ત્યાં હાજર રહી શક્યો નથી તેનો મને ખેદ થાય છે.

ઉપાધ્યાયજી મહારાજ વિશે તો લખવાનું ઘણું રહી જાય છે. તેઓ સાચા ભાવશ્રમણ હતા, ધર્મવીર હતા, પરમ વિચારક અને પરમશ્રુતજ્ઞ હતા. તે સર્વ ભાવો તેમનાં ગુજરાતી કાવ્યોમાંથી પણ નીકળી શકે છે. ગુજરાતી કાવ્યો જૂની ગુજરાતીમાં લખાયાં છે, તે વખતે જેવી ગુજરાતી ભાષા બોલાતી હતી તેવી જ લખાણી છે. એટલે આજની સુધરેલ ગુજરાતી આગળ નવાઈ લાગે તેવી છે. એમ છતાં આધ્યાત્મિક ભાવથી જરૂર ભરપૂર છે.

"ભવસાયર લીલાએ ઊતરે, સંયમ કિરિયા નાવે. ધન્ય તે૦"

સાયર, કિરિયા અને એવા બીજા શબ્દો જૂની ગુજરાતીમાં વપરાતા હતા આ હૃદયભાવથી ભરપૂર હોવાથી ગુર્જર કાવ્યમાં પણ ઊંડો આધ્યાત્મિક ભાવ દર્શાવે છે. 'સુજસવેલી'માં તેમને આચાર્ય શ્રીહરિભદ્રસૂરિજીના નાના બંધુ ગણ્યા છે. તેમજ કળિ-યુગના શ્રુતધર ગણી અંજલિ આપવામાં આવી છે. આવા મહાપુરુષો ધર્મના ઉદ્ધાર માટે જ અવનીપર અવતરે છે, તેઓ ધર્મધુરંધર કહેવાય છે. જે હીણ થતી આર્યસંસ્કૃતિને સજી-વન રાખે છે તેમના જન્મને ધન્ય છે. આજે આપણે તેમના ગુણાનુવાદ ગાવા તૈયાર થયા એ એક અહોભાગ્યનો વિષય છે. પ્રાંતે ઇચ્છીએ કે જૈનધર્મ સદા વિજયને પામો.

★

શ્રીમદ્ મહોપાધ્યાય શ્રી યશોવિજયજી

[લેખક : શેઠ શ્રીયુત વલ્લભદાસ નેણસીભાઈ]

" महात्मनां कीर्तनं हि श्रेयो निःश्रेयसास्पदम्। "

અહંકારના આવેશથી આવૃત્ત થયેલું જીવન પરમ કૃપાસાગર સદ્ગુરુદેવની કૃપારૂપી તલવારની તીક્ષ્ણ ધારાથી જ્યારે છેદાઈને ઉજ્જવલ બને છે ત્યારે તે જીવનની દશા કોઈ અનેરી જણાય છે. આ કથન ઉપાધ્યાયજી મહારાજના જીવન અંગે અક્ષરે અક્ષર મળતું આવે છે.

સાધુજીવન સ્વીકાર્યાં પછી પણ અંતરજ્ઞાન–અનુભવજ્ઞાન પ્રાપ્ત થયા વિના શબ્દવિદ્યાની વિશાલતા, બુદ્ધિની પ્રગલ્ભતા, તર્કશક્તિની પ્રખરતા, બાહ્યવેષ, બાહ્યક્રિયા અને બાહ્યાચારનો આડંબર, વિદ્વત્તાની વિશાલતા અને વક્તૃત્વકલાની વાચાલતા વગેરે અનેક બાહ્યશક્તિઓના પ્રભાવથી ગર્વિષ્ટ બનીને અહંકારની ઊંડી ખીણમાં ગબડી ગયેલા એક વખતના જે યશોવિજયજી હતા તેને સમુદ્રના અગાધ જલમાંથી વા પૃથ્વીતલના પાતાલ પ્રદેશમાંથી કે અધોગતિની ઊંડી ગર્તામાંથી ઉદ્ધરીને અનંત કૃપાળુ, કરુણાસાગર, પરમયોગી મહાત્મા આનંદઘનજીએ પરમતત્ત્વનું રહસ્ય સ્વરૂપ સમજાવી અહંકારના તિમિર પટલોનો પ્રલય કરીને, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સ્વાનુભવ રૂપનો અમૃતરસ ચખાડીને પરમાર્થ માર્ગના સાચા પ્રેમી બનાવીને પોતાના આત્માના, સમાજના, ધર્મના અને શાસનના સાચા ઉદ્ધારક બનાવ્યા.

અંધકારમાંથી અકળાયેલા માનવીને જેમ તેજસ્વી સૂર્યનાં દેદીપ્યમાન કિરણો આકુળતાથી મુક્ત કરે છે, તેમ અહંકારરૂપી અંધકારના અનંત કષ્ટોથી દુઃખી થતા આત્માને સત્પુરુષરૂપી સૂર્ય સમ્યગ્જ્ઞાનરૂપી જ્વલંત કિરણોનું દિવ્ય તેજ આપી અનંત દુઃખથી, અનંત આવરણોથી, અનંત બંધનોથી અને અનંત ભવભ્રમણના અસહ્ય સંકટોથી મુક્ત કરે છે.

યશોવિજયજી મહારાજશ્રીનો જન્મ સં. ૧૬૬૫માં ગુજરાતના ધીણોજ પાસેના કન્હોડુ ગામે થયો હતો. માતા સંસ્કારી, સદાચારી, ઉદાર, ધર્મપ્રેમી તથા શ્રદ્ધાવાન હતાં. પિતાશ્રી તેમની નાની વયમાં જ ગુજરી ગયા હતા. બાલ્યાવસ્થાનું તેમનું નામ જશવંત હતું. માતાનું નામ સૌભાગ્યદેવી હતું. ચાતુર્માસ રહેલા મુનિ શ્રીનયવિજયજી પાસે માતાએ 'ભક્તામર' સ્તોત્ર સાંભળ્યા વિના અન્નપાણી ન લેવાની પ્રતિજ્ઞા કરેલી ત્યારે સાત વર્ષના યશોવિજયજી માતાની સાથે ઉપાશ્રયે જતા અને ગુરુ 'ભક્તામર સ્તોત્ર' સંભળાવતા તે તેમને યાદ રહી ગયેલું અને વરસાદની હેલીમાં માતાને ત્રણ દિવસના ઉપવાસ થતાં ખરી હકીકત જાણવામાં આવતાં ચોથે દિવસે 'ભક્તામર' સંભળાવી માતાને પારણું કરાવેલું. આવી તો અદ્ભુત તેમની સ્મરણશક્તિ નાની વયમાંજ હતી.

ગુરુજીએ પુત્રની માગણી કરતાં સૌભાગ્યદેવીએ સહર્ષ પોતાનો બાળક ગુરુજીને સમર્પણ કર્યો અને તે દશ વર્ષની બાલ્યાવસ્થામાં દીક્ષિત થયા. પછીનાં દશ વર્ષમાં વ્યાકરણ, સાહિત્ય અને ન્યાયમાં નિષ્ણાત બન્યા.

આ મહાતત્ત્વજ્ઞાનીની ને એમના વિશાળ સાહિત્યની પુણ્યસ્મૃતિ જાળવી રાખવી હોય તો આપણે તેમનાં વચનામૃતોની સ્વાધ્યાય રૂપે ઉપાસના કરવી ઘટે છે. તેમજ તે સાહિત્યનું પ્રકાશન કરી તેનો બહોળો પ્રચાર કરી સસ્તે મૂલ્યે એવી જ્ઞાનગંગા વહેવરાવવી જોઈએ, જેથી આબાલ વૃદ્ધ ગરીબ યા તવંગર તેનો સરખો લાભ લઈ શકે.

શ્રીમદ્ ઉપાધ્યાયજી યશોવિજયજી મહારાજશ્રીની વિદ્વત્તા અથવા પંડિતાઈ માટે જેટલું કહીએ તેટલું ઓછું છે. તેમનું પાંડિત્ય, તેમની કવિત્વશક્તિ, વાક્પટુત્વ, પદલાલિત્ય, અર્થગૌરવ અને રસ તથા અલંકાર તેમ જ પરપક્ષખંડન અને નિજપક્ષમંડન તેમના બનાવેલા ગ્રંથોમાં અનાયાસે દૃષ્ટિગોચર થાય છે. તેમના રચેલા અનેક ગ્રંથો તેમના જ્ઞાનની બહુ જ સારી રીતે સાક્ષી આપે છે. શાસ્ત્રોના વચનની અપેક્ષા શુદ્ધરીતે તેઓ સમજતા હતા અને તેથી કરીને તેમનું વચન સપ્રમાણ ગણાય છે.

સંવત ૧૭૪૩ના મહા સુદિ પના રોજ ડભોઈ મુકામે ૮૦ વર્ષનું આયુષ્ય ભોગવી તેઓ સ્વર્ગવાસી થયા.

ટૂંકમાં, જેઓ ઉત્તમ તર્ક સંબંધી તીવ્ર બુદ્ધિએ કરીને સર્વ દર્શનોને વિશે શિરોમણિ-પણાને પામેલા છે, જેઓ તપગચ્છને વિશે અગ્રેસર છે, જેઓએ કાશીપુરીમાં પરદર્શનીઓની મુખ્ય સભાઓને જીતીને જૈનધર્મનો ઉત્તમ પ્રભાવ વિસ્તાર્યો છે, જેઓએ તર્કશાસ્ત્ર, પ્રમાણશાસ્ત્ર અને નયશાસ્ત્ર વગેરેનું વિવેચન કરી ઉત્તમ દર્શનશાસ્ત્રી તરીકે, ઉત્તમ પ્રકારના ભક્તકવિ તરીકે, ન્યાયના નિષ્ણાત તરીકે, પ્રકૃષ્ટ વ્યાખ્યાતા તરીકે અને સાધુસમાજના સુધારક તરીકે અને આદર્શ ધર્મઉદ્ધારક તરીકે જે નામના મેળવી છે તે સુવર્ણાક્ષરે અંકિત થઈ ચિરંજીવ રહેશે.

આવા મહાન મુનિની પુણ્યસ્મૃતિ અખંડપણે સાચવી રાખવા માટે શ્રીસારસ્વત સત્ર દ્વારા જે સમારંભ યોજ્યો છે તે પૂર્ણ યશસ્વી નીવડે એવી હાર્દિક પ્રાર્થના સાથે યોજકોને અભિનંદન અર્પી આ લેખ પૂર્ણ કરું છું.

★

ઉપા૦ શ્રી. યશોવિજયજીનું ભવ્ય જીવન

[લેખક : શ્રીયુત નરોત્તમદાસ ભગવાનદાસ]

[મુંબઈમાં સં. ૨૦૦૬ના માગશર સુદ ૧૧ એટલે કે મૌન અગિયારશે આચાર્ય શ્રીવિજયપ્રતાપસૂરિજી મહારાજના પ્રમુખપદે શ્રીયશોવિજયજી મહારાજની જયંતી ઉજવાઈ હતી: તે ગોડીજીના ઉપાશ્રયમાં ચિકાર મેદની વચ્ચે સારી રીતે ફતેહ પામી હતી.

સં: ૨૦૦૭ના માગશર સુદ ૧૧ આચાર્ય શ્રીવિજયપ્રતાપસૂરિજી તથા આચાર્ય શ્રીવિજયધર્મસૂરિજીની સંયુક્ત હાજરીમાં ભાયખલા મુકામે મંદિરના વિશાળ હોલમાં બહુ જ સારી હાજરી વચ્ચે તે જ જયંતી ઉજવાઈ હતી. પરંતુ આગલા વર્ષ કરતાં તે વર્ષે ઘણા મોટા પ્રમાણમાં ઉત્સાહ દેખાયો હતો અને કાર્ય પણ ઘણું થયું હતું. તે વખતે ડભોઈમાંના યશોવિજયજી મહારાજના સમાધિમંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવવાના અને ઉપાધ્યાયજી મહારાજનું જીવનચરિત્ર લખાવવું—આ બન્ને કાર્યો પાર પાડવા માટે એક ફંડ શરૂ કરવામાં આવ્યું અને એ દિવસના સમારંભમાં પૂ. બન્ને આચાર્યો તથા મુનિ શ્રીયશોવિજયજીના ઉપદેશ ને પ્રયાસથી બહુ સારું ફંડ એકત્રિત થયું હતું ને સમારંભ સફળ રીતે પાર પડ્યો હતો. ત્યારે મુંબઈને ઉપાધ્યાયજીના જીવન અંગે ઘણું નવું જાણવાને મળ્યું હતું.

આ બધાનું સારું પરિણામ એ આવ્યું કે ડભોઈમાં શ્રીમદ્‌ના સમાધિમંદિરનું કામ શરૂ થયું અને ત્યાંના સ્થાનિક ગૃહસ્થોની સંભાળ તથા મહેનતથી સમાધિમંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર થઈ ગયો. ખૂબી તો એ બની છે કે ઉપરના બન્ને આચાર્યોના ગુરુ શ્રી વિજયમોહનસૂરિજીનો દેહાંત પણ ડભોઈમાં થયેલો હોવાથી તેમની સમાધિ પણ તેની પાસે જ છે.]

* * *

શ્રીમદ્‌ ઉપાધ્યાય શ્રી યશોવિજયજીનું જીવન પ્રગટ થયેલી યાદીની પીસ્તાલીસ બાબતો ઉપરથી તારવી શકાય તેમ છે. સાથે તેમના ગ્રંથોની આપેલી યાદી ઉપરથી પણ જણાય છે કે તેઓ ૧૭૭ ગ્રંથના પ્રણેતા હતા. તેમણે અગિયાર ગ્રંથ ઉપર ટીકાઓ લખી છે, તેત્રીસ ગ્રંથો ગૂર્જર ભાષામાં લખેલા છે, બાર સ્વાધ્યાયગ્રંથો પણ લખ્યા છે. એમના ટૂંકા જીવનમાં એમણે એટલું બધું કામ કર્યું છે કે, તેમણે એક પળ પણ ગુમાવ્યા વિના સમયનો સારામાં સારો ઉપયોગ કરી અવિચ્છિન્નપણે સાહિત્યની સેવામાં જિંદગી અર્પણ કરી છે.

ઉપાધ્યાયજીના ગ્રંથો સંબંધી સૂચીમાં 'સમકિતના સડસઠ બોલની સજ્ઝાય, અઢાર પાપસ્થાનકની સજ્ઝાય, દ્રવ્ય—ગુણ—પર્યાયનો રાસ, દિક્પટચોરાશીબોલ, શ્રીપાલરાસ (ઉત્તર ભાગ),

સમાધિશતક, સમતાશતક, સમુદ્રવહાણસંવાદ, નવપદ પૂજા, કુમતિખંડન સ્તવન, નય રહસ્યગર્ભિત શ્રીસીમંધર સ્તવન, નવનિધાનસ્તવન, નિશ્ચય–વ્યવહારગર્ભિત શ્રીસીમંધર સ્તવન, મૌન એકાદશી સ્તવન, સિદ્ધાંતવિચારગર્ભિત શ્રીસીમંધર સ્તવન, અગિયાર અંગ સજ્ઝાય, આઠ દ્રષ્ટિની સજ્ઝાય; પ્રતિક્રમણગર્ભહેતુ' આ અઢાર કૃતિઓ ગુજરાતી સહેલી ભાષા જાણનાર અને સમજનાર ભાઈઓને બહુ જ ઉપયોગી છે. 'સમકિતના ૬૭ બોલની સજ્ઝાય' માટે કહેવાય છે કે ઉપાધ્યાયજીને કોઈએ મહેણું માર્યું કે તમે સંસ્કૃત પ્રાકૃત ટીકાઓ અને રાસાઓ લખી જાણો છો પરંતુ ગુજરાતી ભાષાને ઉપકારક થાય એવું સમકિત ઉપર કંઈ લખી શકશો ? બીજે જ દિવસે પ્રતિક્રમણ વખતે ચોવીશ કલાકમાં પોતે તૈયાર કરેલી આ "૬૭ બોલની સજ્ઝાય" તેમણે બોલી બતાવી ત્યારે મહેણું મારનાર તો ઠરી જ ગયો અને તેણે વિનીતભાવે કહ્યું કે મારું ગઈકાલનું કહેલું આપે તદ્દન ખોટું કરી બતાવ્યું એ માટે આપનો ઉપકાર માનું છું. સાચે જ, આપ ખરેખરા સમર્થ ગુજરાતી વિદ્વાન છો.

'શ્રીપાલ રાજાના રાસ'નો પૂર્વાર્ધ ભાગ વિનયવિજયજી ઉપાધ્યાયે બનાવ્યો છે અને ઉત્તરાર્ધ ભાગ યશોવિજયજી ઉપાધ્યાયે બનાવ્યો છે પરંતુ તે બન્નેની દિશા જુદી જ છે. યશોવિજયજી કેવું સરસ કામ કરી શકે છે તેનો આ રાસ અચૂક પુરાવો છે.

'અઢાર પાપસ્થાનકની સજ્ઝાય' તો હું જ્યારે નાનો નવ વર્ષનો હતો ત્યારે અમારે ભાવનગરમાં શેઠ કુંવરજી આણંદજી, ગિરધર આણંદજી તથા ઝવેર ભાઈચંદ પ્રતિક્રમણમાં બોલતા, તેનો ગુંજારવ હજુ સુધી હું ભૂલ્યો નથી એવી એ સુંદર કૃતિ છે.

'બાર ભાવના' પણ યશોવિજયજી મહારાજે બનાવેલી ઉત્તમ કૃતિઓમાંની એક છે, જે જીવનને અજવાળનારી એક ઉત્તમ કૃતિ છે.

'જ્ઞાનસાર અષ્ટક' ૨૫૬ શ્લોકનો ગ્રંથ છે. સં૦ ૧૯૫૦માં ભાવનગરમાં શા. દીપચંદ છગનલાલે ટીકા સહિત છપાવ્યો હતો, તેની પંન્યાસજી ગંભીરવિજયજી મહારાજે મુક્તકંઠે પ્રશંસા કરી હતી અને કપૂરવિજયજી મહારાજે તેની પર વિવરણ લખ્યું હતું. અધ્યાત્મનો એ ઉત્તમ ગ્રંથ છે.

'સમુદ્ર-વહાણનો સંવાદ' એ ઉપાધ્યાયજીએ ઘોઘા બંદરમાં રચ્યો હતો અને તે સમુદ્ર કાંઠે વહાણોનો મોટો કાફલો જોઈને તાદૃશ ચિતાર ઉપરથી બનાવ્યો હતો, તે બતાવે છે કે ઘોઘાબંદરની જાહોજલાલી તે વખતે કેવી હતી !

'સીમંધર સ્વામીનું ૧૨૫ ગાથાનું સ્તવન' તથા '૩૫૦ ગાથાનું નયગર્ભિત સ્તવન' એ બંને સ્તવનોમાં તે સમયે આપણો જૈનધર્મ કેવી પરિસ્થિતિમાંથી પસાર થતો હતો તેનું આબેહૂબ ચિત્ર ખડું કરે છે.

'કુમતિખંડન' એ આત્મારામજી મહારાજે બનાવેલા "સમકિત શલ્યોદ્ધાર" જેવું જ તે સમયના આપણા બંને પક્ષોનું કેવું ભયંકર માનસ પ્રવર્તતું હતું તેનું ચિત્ર ખડું કરે છે.

"આઠ દૃષ્ટિની સજ્ઝાય" એ ઉપાધ્યાયજીની અધ્યાત્મ વિષે સરળ અને સુગમ ભાષામાં અસાધારણ શક્તિ બતાવનારી અને ઉપકારક કૃતિ છે, જે જીવ, એ સમજવાને યત્ન કરે તે તેના જીવનમાં પલટો લાવી દે એવી છે.

યોગી આનંદઘનજી તથા ઉપાધ્યાય વિનયવિજયજી તથા ક્રિયાઉદ્ધાર કરનાર શ્રીસત્યવિજયજી પંન્યાસ એ ત્રણે યશોવિજયજીના સમકાલીન હતા. યોગી આનંદઘનજી તે સમયના એક અદ્વિતીય પુરુષ હતા. પૈસાદાર કે કોઈની પરવા કરતા નહિ અને જંગલમાં જઈને અવધૂત જીવન ગાળતા હતા.

ઉપાધ્યાય શ્રીવિનયવિજયજી તથા શ્રીયશોવિજયજી બન્ને વચ્ચે બહુ જ પ્રીતિ અને સમભાવ હતો. તેઓ બન્નેએ વિચાર કર્યો કે જૈનધર્મમાં ન્યાય સંબંધી ગ્રંથો જે છે તેમાં કાશી જઈને અભ્યાસ કરીને ઉમેરો કરવાની બહુ જ જરૂર છે પરંતુ તે વખતનું કાશી બહુ જ રૂઢીચુસ્ત હતું. કોઈ પણ જૈન સાધુને તે વખતના પંડિત બ્રાહ્મણો ન્યાય ભણાવે એ શક્ય ન હતું. તે વખતે વ્યવહારનો માર્ગ પણ બહુ જ મુશ્કેલ હતો.

એ બન્ને મુનિરાજોને સાધુવેશ છોડીને ગૃહસ્થના વેશમાં પંડિતો પાસે ન્યાય ભણવાની જરૂર પડી, તે પણ સમય પરત્વે તેમણે સ્વીકારી હતી. ત્યાંથી પાછા આવ્યા પછી તેમણે ગુજરાતમાં અને કાઠિયાવાડમાં ઘણો પ્રવાસ કર્યો હતો. તેમનું જન્મસ્થળ પાટણ પાસે કનોડું કરીને ગામડું હોવાનું જણાય છે.

એ વખતના ગુજરાતમાં મંદિરવાસી યતિઓનું બહુ જ જોર હતું, તે એટલે સુધી કે સંવેગી સાધુઓને ઉપાશ્રયમાં ઊતરવા પણ દેતા નહીં. તે વખતે ઉપા. શ્રીવિનયવિજયજી, શ્રીયશોવિજયજી તથા શ્રીસત્યવિજયજી પંન્યાસે હિંમત કરીને ક્રિયાઉદ્ધાર કર્યો.

વળી, ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજે અવધાનો પણ કર્યાં હતાં.

પાલીતાણામાં યશોવિજયજી જૈન ગુરુકુલ, ભાવનગરમાં યશોવિજયજી જૈન ગ્રંથમાળા, પાલીતાણામાં યશોવિજયજી જૈન પાઠશાળા તથા એક વખત કાશીમાં શ્રી વિજયધર્મસૂરિજી તરફથી ચલાવાયેલી યશોવિજયજી જૈન સંસ્કૃત પાઠશાળા એ એમના નામ સાથે સંકળાયેલી સંસ્થાઓ છે. રસોઈમાં ઉપા. શ્રીયશોવિજયજીના નામથી ચાલતી કેટલીક સંસ્થાઓ પણ આમાં ઉમેરવી જોઈએ.

ઉપાધ્યાયજીના ગુરુનું નામ નયવિજયજી હતું અને ઉપાધ્યાયજી કેટલા બધા વિનયી હતા તે 'સમકિતના સડસઠ બોલ'ની સજ્ઝાયના અંતમાં તેમણે જણાવ્યું છે કે—

"શ્રીનયવિજય વિબુધ પયસેવક, વાચક યશ એમ બોલે રે."

એ ઉક્તિથી ઉપરથી જણાશે. અસલના વખતમાં ગુરુ–શિષ્યનો જેવો પ્રેમભાવ અને ભક્તિભાવ હતો તેવો હાલ બહુ થોડા દૃષ્ટાંતોમાં જોવા મળે છે.

"૩૫૦ ગાથાના સ્તવન'માં એમણે જે કહ્યું છે તે બહુ વિચારવા જેવું કહ્યું છે અને તેમાંથી જેટલો સાર તારવી શકીએ તેટલો સાર તારવી શકાય તો ઘણું સારું.

યોગીશ્વર શ્રીમદ્ યશોવિજયજીની

જ્ઞાનદીપિકા—જ્ઞાનસાર અષ્ટક

[લેખક : શ્રીયુત અમરચંદ માવજી]

શ્રીમદ્ યશોવિજયજી ઉપાધ્યાય આપણા સમાજમાં મહાન તાર્કિક વિદ્વાન અને શાસ્ત્રોના રચયિતા તરીકે ગરવી ગુજરાતને આંગણે પ્રકાશિત થઈ ગયા. તેમની પ્રતિભાનો દીર્ઘ પ્રકાશ અદ્યાપિ સૌને પ્રકાશિત કરી રહ્યો છે. તેઓશ્રીના ન્યાયના અનેક ગ્રંથો તેમજ અધ્યાત્મયોગના ગ્રંથો પૈકી તેમણે 'જ્ઞાનસાર અષ્ટક' ગ્રંથની, સાધક આત્માઓ માટે ખરેખર એક દીવાદાંડીરૂપ રચના કરેલી છે. આ ગ્રંથ તેઓ શ્રીમદ્‌ની ઉત્તરાવસ્થામાં પરિપક્વ યોગબળ વડે સર્વ શાસ્ત્રોનો પરિચય કરી, પચાવી તેને તેનો અમૃત સરખો રસ કરી; આત્માર્થીઓને પીરસી ગયા છે, જેનું પાન કરી આત્માર્થી સાધકો સહજ આનંદ અને સ્વયં શાંતિ પ્રાપ્ત કરી શકવા ભાગ્યશાળી થઈ શકે તેવો એ ગ્રંથ છે.

આ ગ્રંથમાં કમળપુષ્પની ૩૨ પાંખડીની જેમ ૩૨ અષ્ટકો છે, અને એકએક અષ્ટકમાં આઠઆઠ અનુષ્ટુપબધી શ્લોકો છે. તે ગ્રંથ સંસ્કૃતમાં છે છતાં તેની ભાષા એટલી બધી સરળ અને હૃદયંગમ અને ભાવવાહી છે કે તે વાંચતાં આનંદ આનંદ થાય છે. આ અષ્ટકનું આપણી માતૃભાષામાં ગુજરાતી અવતરણ પોતે જ કરેલું છે અને 'જ્ઞાનસાર'ના ભાવને ખૂબ જ સ્પષ્ટ કર્યો છે. આપણે જૈનો પણ 'ગીતા'ના જેવા પુસ્તકની માગણી કાયમથી કરી રહ્યા છીએ પણ આપણી પાસે આ રત્નદીપિકા 'ગીતા' જેવી જ છે તેનો ઉપયોગ પણ કરતા નથી.

આ 'જ્ઞાનસાર' ગ્રંથ નિશ્ચય અને વ્યવહારની સંધિરૂપ છે. તેમાં જ્ઞાન–ક્રિયાનો પરમાર્થભાવે જે ઉપદેશ કરવામાં આવ્યો છે તે મુજબ સાધકો પોતાની સાધના અંતર્મુખ-દૃષ્ટિએ શરૂ કરે તો જરૂર તે જ્ઞાન સારરૂપ જ્ઞાનના તત્ત્વને પ્રાપ્ત કરી શકે. આપણે ત્યાં જેમ 'સમયસાર' આદિ ગ્રંથોને માટે એક તરફ પ્રવાહબદ્ધ વ્યવસ્થિત પ્રચાર થઈ રહ્યો છે, તેમ જ્ઞાનસારનો આપણા પૂજ્ય વિદ્વાન સાધુમુનિરાજો દ્વારા સમાજમાં પ્રચાર થાય તો આપણી જે આધ્યાત્મિક ભૂખ છે તે ઘણે અંશે સંતોષી શકીએ. શ્રીમદ્દે પ્રાપ્ત કરેલી મહાન વિશાળદૃષ્ટિથી દરેકમાંથી તત્ત્વનો સાર શોધી શોધી, તેનું રસાયણ બનાવી આપણને આપ્યું છે. તેમાં 'સમયસાર'નોયે સાર લીધો છે અને 'પ્રવચનસાર'નો પણ સાર લીધો છે, 'ગીતા'યે લીધી છે અને અન્ય આગમ, વેદાંત આદિ ગ્રંથોનો પણ સારનિચોડ લીધો છે. તેઓશ્રીની એ પ્રાભાવિક વિશાળતા 'જ્ઞાનસાર'માં ખરેખર દેદીપ્યમાન થયેલી જોવાય છે.

'જ્ઞાનસાર'માં નિશ્ચયદૃષ્ટિ મુખ્ય રાખીને તે પ્રાપ્ત કરવા જુદાં જુદાં મહત્ત્વનાં અષ્ટકો ક્રમબદ્ધ લખી, પૂર્ણાષ્ટક એટલે પૂર્ણ ભગવાન આત્માને સાધ્ય તરીકે મૂકી, બાકીનાં અષ્ટકો સાધનરૂપે વર્ણવ્યાં છે. છેવટે સર્વનયાષ્ટકમાં આત્માને સમભાવમાં સ્થિર કર્યો છે. આત્માને પોતાનું સ્વરૂપ પ્રાપ્ત કરવા માટે જે જે સાધનો પારમાર્થિક દૃષ્ટિએ જરૂરનાં છે તે તે સાધનો સંપૂર્ણપણે આ અષ્ટકોમાં સમાવેશ પામે છે.

આ 'જ્ઞાનસાર' ગ્રંથ ઉપર મહાન તત્ત્વરંગી આધ્યાત્મિક કવિ શ્રીદેવચંદ્રજી મહારાજે 'જ્ઞાનમંજરી' નામક સુંદર ટીકા લખી 'જ્ઞાનસાર'ના ભાવને બહુ સ્પષ્ટ કર્યો છે અને સાધકને અંતર્મુખ થવા માટે, રાગદ્વેષનાં દ્વન્દ્વમાંથી છૂટવા માટે વિસ્તારથી તેમાં દર્શાવ્યું છે. આ ગ્રંથની બે ત્રણ જાતની આવૃત્તિઓ મારા જોવામાં આવી છે. તેમાં છેલ્લી સ્વ. પંડિતવર્ય શ્રીભગવાનદાસ હરખચંદ દોશીવાળી આવૃત્તિ બહુ જ સુંદર શુદ્ધ અને વ્યવસ્થિત છે. આ ગ્રંથની આપણા સમાજમાં પ્રતિષ્ઠા થાય અને તેનો ખૂબ ફેલાવો થાય એ જરૂરી છે. કારણ કે અત્યારના યુગમાં આધ્યાત્મિક વિકાસ જરૂરનો છે. જડવાદના મહાન તાંડવ સામે આપણી આધ્યાત્મિક સમૃદ્ધિ જો જાળવી નહિ રાખીએ તો એ જડવાદના પૂરમાં આપણે તણાઈ જવાનું જ છે.

આ 'જ્ઞાનસાર'ના ઉપર વિશદ અર્થ, જેમ ગીતાના અર્થો જુદા જુદા જ્ઞાનીઓએ જુદી જુદી રીતે કરી, જીવન માટે તેની ઉપયોગિતા દર્શાવી છે તેમ આધ્યાત્મિક શાંતિ પ્રાપ્ત કરવા માટે 'જ્ઞાનસાર' જેવા ગ્રંથોની બહુ જ આવશ્યકતા છે. તેના ઉપર વિવેચનો—વ્યાખ્યાનો થાય અને આધુનિક યુગના નવયુવકોને પણ એમાં રસ પ્રાપ્ત થાય તે રીતે આધ્યાત્મિકતાનું સાચું સ્વરૂપ દર્શાવવા અને એ મહાપુરુષની દીપાવલીને દિવસે પૂર્ણ કરેલી દીપિકાતુલ્ય જ્ઞાનસારની જ્યોત સમાજમાં પ્રગટાવવા તેમાં દીવેલ પૂરી, તેનો પ્રકાશ સમાજને આપવાની આવશ્યકતા છે. શ્રીમદ્‌નું ઋણ ચૂકવવા માટે તેમની જ્ઞાનજ્યોત પ્રગટ રાખવામાં આવે એ શ્રીમદ્‌નું સાચું સ્મારક છે.

સ્વ૦ સન્મિત્ર શ્રીકર્પૂરવિજયજી મહારાજશ્રીએ 'જ્ઞાનસાર'ને અપનાવ્યો હતો અને તેના ઉપર સુંદર વિવેચન લખ્યું હતું જે તેમના લેખસંગ્રહ ભાગ–૬ તરીકે પ્રસિદ્ધ થયેલ છે. શ્રીગંભીરવિજયજી મહારાજશ્રીએ પણ 'જ્ઞાનસાર'નો ભાવાર્થ લખેલ છે. અત્યારે આ ગ્રંથ વિષે વધુ પ્રકાશ પાડતાં વિવેચનો જાણવામાં નથી. સ્વ૦ શ્રીકુંવરજીભાઈને જ્યારે હું પ્રથમ ભાવનગરમાં મળ્યો અને આધ્યાત્મિક ગ્રંથ માટે માગણી કરી ત્યારે તેમણે મને 'જ્ઞાનસાર' આપ્યો અને જણાવ્યું કે, 'આ અમૃત છે.' મને એ મહાપુરુષનાં વચન સત્ય લાગ્યાં છે. એ 'જ્ઞાનસાર'થી પ્રમુદિત થઈ તેની ભાવવાહી 'જ્ઞાનગીતા' નામક એક શતકની મનહરછંદમાં સં. ૨૦૦૧માં રચના મેં પ્રગટ કરી હતી. અત્યારે પણ મને 'જ્ઞાનસાર' શાંતિ આપે છે. સાધ્યની સિદ્ધિ માટે સાધકને સાધનરૂપ 'જ્ઞાનસાર' એક 'ગીતા' જ છે એને હું પૂર્ણ પ્રેમથી વળગી રહ્યો છું. અનેક મુનિ મહારાજાઓને પણ તે વિષે વ્યાખ્યાનો

આપવા, પ્રચાર કરવા, તેના નાના નાના ગુટકાઓ, મોટા વિવેચનગ્રંથો છપાવી સમાજમાં છૂટથી વહેંચવા અને વાંચવા માટે જણાવું છું.

જ્યારે શ્રીમદ્‌નો ડભોઈખાતે 'સારસ્વત સત્ર' ઉજવાય છે ત્યારે મારી આ ઘણાં વર્ષોથી દિલમાં વહેતી 'જ્ઞાનસાર'ની સરિતાને સર્વ સમાજની આધ્યાત્મિક તૃષા તૃપ્ત કરવા સમાજને આંગણે વહેતી થાય, સર્વ પરબોરૂપી પાઠશાળાઓમાં તે પાઠ્યક્રમ બને તેવી ભાવના સાથે વિરમું છું.

" આત્મસિદ્ધિને પામવા, ગ્રહવા જ્ઞાનનો સાર,
સ્વાધ્યાય કરજો સદા, 'અમર' ગ્રંથ જ્ઞાનસાર. "

अर्हमित्यक्षरं यस्य, चित्ते स्फुरति सर्वदा ।
परं ब्रह्म ततः शब्दब्रह्मणः सोऽधिगच्छति ॥२७॥

'અર્હમ્' એવો અક્ષર જેના ચિત્તમાં હમેશાં સ્ફુરાયમાન થતો રહે છે તે આ શબ્દબ્રહ્મથી પરમબ્રહ્મની પ્રાપ્તિ કરી શકે છે.

દ્વાત્રિંશિકા] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

★

મહો૦ શ્રી યશોવિજયજીનો જૈન સંઘ પર કરેલો ઉપકાર

[લેખિકા : કુ૦ શ્રી. ચંદ્રિકા સોમચંદ ગાંધી]

શ્રીમહાવીર પ્રભુ પછી શ્રીસુધર્મસ્વામીની ૬૦ મી પાટે શ્રીવિજયહીરસૂરિ મ૦ ના શિષ્ય ઉપાધ્યાય શ્રીકલ્યાણવિજયજી, તેમના શિષ્ય શ્રીલાભવિજયજી ગણિ, તેમના શિષ્ય ઉપાધ્યાય શ્રીનયવિજયજી મહારાજ હતા, તેઓશ્રીના શિષ્ય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ હતા. તેઓ મહાન્ શ્રુતધર, ષડ્દર્શનશાસ્ત્રવેત્તા, ન્યાયવિશારદ બિરુદધારક, ન્યાયાચાર્ય, તાર્કિકશિરોમણિ, કુમતના પ્રખર ઉત્થાપક, અનેક ગ્રંથરત્નોના રચયિતા તરીકે સર્વત્ર પ્રસિદ્ધિ પામ્યા છે.

તેઓશ્રીનો જન્મ કન્હોડુ ગામમાં થયો હતો. તેમનું પૂર્વાવસ્થાનું નામ જસવંતકુમાર હતું. બાલ્યવયમાં જ વૈરાગ્યરસથી રંગાઈ પંડિત શ્રીનયવિજયજી મહારાજ પાસે પાટણમાં દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી, અને ત્યારથી તેઓશ્રી યશોવિજયજીના શુભ નામથી ખ્યાત થયા.

સ્વદર્શનનું સારી રીતે જ્ઞાન મેળવ્યા પછી સંસ્કૃત ભાષા, ન્યાયશાસ્ત્ર અને અન્ય દર્શનોનો અભ્યાસ કરવા માટે તેઓશ્રી સરસ્વતી દેવીના નિવાસસ્થાન સરખા કાશીનગરમાં પધાર્યા. ત્યાં તાર્કિકકુલમાર્તંડ, ષડ્દર્શનના અખંડ જ્ઞાતા, સાતસો શિષ્યોને મીમાંસા આદિ શાસ્ત્રોનો અભ્યાસ કરાવતા એક ભટ્ટાચાર્ય પાસે શ્રીયશોવિજયજી મહારાજે અભ્યાસ કરવા માંડ્યો. કુશાગ્રબુદ્ધિથી ન્યાય, મીમાંસા, બૌદ્ધ, વૈશેષિક આદિના સિદ્ધાંતો તથા 'ચિંતામણિ' આદિ ન્યાયગ્રંથોના પારગામી બન્યા. તેમજ સાંખ્ય, પ્રભાકરભટ્ટનાં મહાદુર્ઘટ સૂત્રો અને દાર્શનિક પરંપરાના મતાંતરો જાણી લીધા.

દરમ્યાન એક સંન્યાસી આડંબરપૂર્વક કાશીમાં આવ્યો. કોઈ તેને જીતી ન શક્યું ત્યારે આ મહાનુભાવે ગુરુની આજ્ઞા મેળવીને સર્વજન સમક્ષ વાદ કરી જીત મેળવી. આથી ત્યાંના પંડિતોએ ભવિષ્યના સમર્થ શાસનપ્રભાવક શ્રીયશોવિજયજીનો ભારે સત્કાર કરી ન્યાયવિશારદની માનભરી મોટી પદવી અર્પણ કરી.

ત્યાંથી વધુ અભ્યાસ માટે તેઓ આગ્રા આવ્યા અને ત્યાં એક પંડિત પાસે તર્ક-કર્કશ સિદ્ધાંત અને પ્રમાણશાસ્ત્રોનો અભ્યાસ કર્યો તથા દુર્દમ્ય વાદી બની તાર્કિકશિરોમણિ શ્રીયશોવિજયજીએ સ્થળે સ્થળે જીત મેળવી જયપતાકા પ્રાપ્ત કરી, શ્રી જૈનશાસનની

અદ્ભુત પ્રભાવના કરી. ન્યાયના સો ગ્રંથ રચવાથી અન્યમતના પંડિતો તરફથી ન્યાયાચાર્યનું બિરુદ પણ તેઓશ્રીને મળ્યું હતું.

સૂત્ર, નિર્યુક્તિ, ભાષ્ય, ટીકા, ચૂર્ણિ એ પંચાંગીયુક્ત શ્રીજિનવચનના એક પણ અક્ષર ઉત્થાપનાર કુમતવાદીઓની, મુનિઓમાં શેખર અને કુમતોત્થાપક શ્રીયશોવિજયજીએ બરાબર ખબર લઈ નાખી હતી.

ઢૂંઢકોના ખંડન માટે તથા યતિઓમાં પ્રવેશેલી શિથિલતા દૂર કરવા માટે તેઓશ્રીએ અનહદ પ્રયાસ કર્યો હતો. કુમતોનું સખત શબ્દોમાં ખંડન કરવાથી અનેક દુશ્મનો ઊભા થયા હતા પરંતુ વાચકશેખર મુનિવરે શત્રુઓની લેશમાત્ર પણ પરવા કરી ન હતી. ઢૂંઢકો, યતિસમુદાય અને શિથિલાચારી સામે નિડરપણે ઊભા રહી તેઓશ્રીએ શાસનની અદ્વિતીય સેવા બજાવી છે.

તેઓશ્રીના વખતમાં લુંપકમતનું પ્રાબલ્ય વધતું જતું હતું. આથી મહાધુરંધર વિદ્વાન શ્રીયશોવિજયજીએ સટીક 'પ્રતિમાશતક' ગ્રંથ બનાવી, સ્થાપનાનિક્ષેપનું સ્વરૂપ સમજાવી, ઘણા ભવ્યજીવોમાં પ્રતિમાસ્થાપના, પ્રભુપૂજન વગેરેની દૃઢ શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન કરી હતી.

પોતાના જીવનકાળમાં સંસ્કૃત, પ્રાકૃત, ગુજરાતી, હિન્દી વગેરે ભાષામાં લાખો શ્લોક-પ્રમાણ ગ્રંથોની રચના કરી અનેક આત્માઓને શ્રીજિનશાસનના રાગી બનાવ્યા હતા.

તેઓશ્રી સિદ્ધાંતના રહસ્યને બહુ સારી રીતે સમજ્યા હતા અને તેથી જ જ્ઞાન કે ક્રિયા અથવા નિશ્ચય કે વ્યવહારમાંથી કોઈ એકની પુષ્ટિ કરવા જતાં બીજા માર્ગની ન્યૂનતા, લઘુતા કે અવગણના તેમનાથી કદી થઈ નથી; માટે જ તેઓશ્રીનું વચન સપ્રમાણ ગણાય છે એ તદ્દન વાસ્તવિક છે.

અનુપમ ગ્રંથરચના, આગમનું વિશેષ જ્ઞાન, શાસનની અત્યંત સેવા, અતિ નિપુણતા, અરે ! એવા તો સેંકડો અને લાખો ગુણોને લીધે પૂ૦ શ્રીહરિભદ્રસૂરિ મ૦ના લઘુબાંધવ, બીજા શ્રીહેમચંદ્રાચાર્ય અને કળિયુગમાં પણ શ્રુતકેવળીનું સ્મરણ કરાવનાર તરીકેની અનેકવિધ ઉત્તમ ઉપમાઓ તે પુણ્યપુરુષે પ્રાપ્ત કરી હતી.

સત્યમાર્ગના પરમ પ્રકાશક, મહાન્ શાસનપ્રભાવક શ્રીયશોવિજયજીની શાસ્ત્રરચના સાગર જેવી ગંભીર, ગંગાના તરંગો જેવી ઉજ્જવળ અને ચન્દ્રિકા જેવી શીતળ, નિર્મળ અને પવિત્ર હોવાથી ભવ્યાત્માઓને પરમ આનંદ આપનારી છે, તેમજ તેઓશ્રીની કૃતિઓએ અનેક આત્માઓને બોધિબીજની પ્રાપ્તિ કરાવી છે. સંખ્યાબંધ આત્માઓના સમ્યગ્દર્શન નિર્મળ કરાવ્યાં છે, તથા અનેકાનેક અંતઃકરણોને શ્રીજિનશાસનના અવિહડ રંગથી રંગી દીધાં છે. તેમજ શ્રીમદ્ આત્મારામજી મહારાજના ગુરુદેવ, શ્રીમદ્ બુટેરાયજી મહારાજા વગેરે અનેક મહાત્માઓને મિથ્યામાર્ગમાંથી ખસેડી સમ્યગ્માર્ગની શ્રદ્ધા અને અનુસરણ કરાવ્યું છે.

તેઓશ્રીનાં રચેલાં સ્તવનો આદિ એટલાં સરળ, રસિક અને બોધપ્રદ છે કે, આજે પણ આવશ્યક–ચૈત્યવંદનાદિમાં માનભેર ગવાય છે.

તેઓશ્રીની નાનામાં નાની કૃતિમાં પણ તર્ક અને કાવ્યનો પ્રવાહ તરી આવે છે. આવા એક પ્રાસાદિક કવિ, મુક્તિમાર્ગના અનન્ય ઉપાસક, ગુણરત્નરત્નાકર, પ્રખર જિનાજ્ઞા-પાલક, અને પ્રચારક મહાપુરુષનું સ્મરણ કાયમ રહે માટે તેને લગતઃ જેટલા પ્રયત્નો થાય, તેટલા પ્રયત્નો કરવા જરૂરી છે.

આ મહાપુરુષની કૃતિઓ મન, વચન અને કાયાની એકાગ્રતાથી અભ્યાસ કરનારને સમ્યગ્ દર્શન, સમ્યગ્ જ્ઞાન અને સમ્યગ્ ચારિત્રરૂપી મોક્ષમાર્ગની ઉત્તમ આરાધનામાં ઉત્તરોત્તર પ્રગતિ કરાવી આત્મિક અનંત સુખસાગરમાં નિશ્ચિતપણે સ્નાન કરાવવાની શક્તિ ધરાવે છે.

દશે દિશાઓની અંદર વાદીઓમાં વિજય મેળવવારૂપ, શરદ્ ઋતુના ચંદ્ર જેવા ધવળ સુયશને પૃથ્વી પર ફેલાવી નામ પ્રમાણે જ ગુણવાન મહામહોપાધ્યાય શ્રીયશો-વિજયજીના દિવ્ય આત્માને ત્રિવિધે ત્રિવિધે વંદન હો.

परः सहस्राः शरदां, परे योगमुपासताम् ।
हन्तार्हन्तमनासेव्य, गन्तारो न परं पदम् ॥२८॥

હજારો વર્ષથી યોગની ઉપાસના કરનારા બીજા જૈનેતરો, ખરેખર ! અર્હંતની સેવા કર્યા વિના પરમપદની પ્રાપ્તિ કરી શકતા નથી.

દ્વાત્રિંશિકા] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

卐

વાચકશ્રી યશોવિજયજી

એમની મૂર્તિનો અનાવરણ વિધિ

[લેખક : શ્રીયુત શા. ગોરધનદાસ વીરચંદ, મુંબઈ]

[શ્રી. મૂલચંદજી મહારાજની પરંપરાના વિદ્યમાન મુનિ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજના પ્રયત્નથી મુંબઈમાં હમણાં બે વર્ષથી મહોપાધ્યાય ન્યાયાચાર્ય શ્રીયશોવિજયજીના ગુણાનુવાદનો સમારંભ થાય છે. ગઈ સાલે (સં. ૨૦૦૭ માં) એમના સમુદાય તરફથી ભાયખલાખાતે ઉપધાનક્રિયાની પ્રવૃત્તિ શરૂ હતી; એટલે સમારંભ પણ ત્યાં જ ગોઠવાયો હતો. એક તૈલચિત્ર ડભોઈ ગામે ઘણા વખતથી કરાવેલું હતું તે ત્યાંથી મંગાવી તે તથા એમના કેટલાક ગ્રંથો ઉચ્ચ આસન ઉપર આકર્ષક રીતે સ્થાપવામાં આવ્યા હતા. સિવાય એમની કૃતિઓ લભ્ય, અલભ્ય જેટલી જાણવામાં આવેલી તેની યાદી બે લાકડાના પાટિયા ઉપર આલેખી હતી. જરીના ઉત્તમોત્તમ ચંદ્રવા અને બીજી અનેક સુશોભિત વસ્તુઓથી પ્રસંગનું ગૌરવ વધાર્યું હતું.

વાચક શ્રી. યશોવિજયજીની પાદુકા ડભોઈમાં–શ્રીમાલી વાગાવાળા દરવાજા બહાર–જ્યાં સ્મશાનભૂમિ છે એને લાગીને જૈન મુનિઓના મૃતદેહને અગ્નિસંસ્કાર કરવામાં આવેલો, તેમના સ્તૂપો છે તે ભેગી એક દેરીમાં પધરાવેલી છે. ઉપર સં. ૧૭૪૫ના માગશર સુદ ૧૧નો સમય આપેલો છે. આ ઉપરથી એ નક્કી કરવામાં આવે છે કે, "મહારાજનો દેહોત્સર્ગ અહીં થયેલો છે અને તે સાલ દિન આ નહિ તો તે પહેલાંના એકાદ બે વર્ષનું હશે.[1]

શ્રીવિજયધર્મસૂરિજી મ.ના શિષ્ય મુનિ શ્રીયશોવિજયજી મૂળે ડભોઈના છે. શાહ નાથાભાઈ વીરચંદના આગળ પડતા કુટુંબના. તે પુત્ર છે; તેમના કુટુંબના ત્રણેક યુવકો મુનિઅવસ્થામાં તેમની ભેગા છે.

કેટલાક શિષ્યો પોતાના ગુરુની મહત્તા જ વધારવામાં મશગૂલ હોય છે; તે દૃષ્ટિ તજીને શ્રીયશોવિજયજીએ જે ગુણાનુરાગની ભાવનાને મૂર્તિમંત કરી છે તે અભિનંદનીય છે. વાચક શ્રીયશોવિજયજી તરફ એમને કેટલો ઊંડો ભક્તિભાવ છે તે એમણે અત્યારે ઉપાડેલી પ્રવૃત્તિનું પ્રતીક છે.[2]

---

૧. 'ગુર્જરલેખો ભા.૨' પ્રસિદ્ધ થયા પછી આ સાલ સં. ૧૭૪૩ની નિશ્ચિત છે, તે પહેલાં ના અનેક નોંધ કરવામાં આવતા.

૨. તેમણે ઉપાધ્યાયજીની મૂળ દર્શન સ્થાને આરસનું [illegible] મંદિર [illegible] કરવાનું આરંભી દીધું છે (ને પરિપૂર્ણ થઈ ગયું છે.) અને તેનો ઉદ્ઘાટન વિધિ મોટા સમારંભપૂર્વક થનાર છે.

આ સાથે પણ એમના પ્રયત્નથી એમના અધ્યક્ષપણામાં મૌન એકાદશીની સવારમાં ગોડીજીના ઉપાશ્રયના વ્યાખ્યાન ખંડમાં સમારંભ યોજાયો હતો. ડભોઈના ઊગતા જૈન તરુણ ચિત્રકાર પાસે તૈયાર કરાવેલું ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજશ્રીનું તૈલચિત્ર જે એ યુવાન લઈને આવ્યા હતા તેની અનાવરણ વિધિ થઈ હતી.]

*

શ્રુતધર શ્રી. યશોવિજયજી ઉપાધ્યાયના જીવનની ચોક્કસ શૃંખલાબદ્ધ નોંધ તત્કાલીન કોઈ વિદ્વાને કરી નથી એ દુઃખની વાત છે અને કરી હશે તો 'સુજસવેલી ભાસ' સિવાય કોઈ હજુ હાથ આવી નથી. જગદ્ગુરુ શ્રી. હીરવિજયસૂરિના 'હીરસૌભાગ્યકાવ્યં' અને એવાં બીજાં કાવ્યોની વાત બાજુએ મૂકીએ તો પણ ઉપાધ્યાયશ્રીથી ઓછી મહત્તા ધરાવનારા અને તેમના કાળને લાગીને થનારાઓ પૈકીમાં ઉપાધ્યાય શ્રીદેવચંદ્રજીનો 'દેવવિલાસ' મળે છે. શ્રી. સત્યવિજય પંન્યાસની પરંપરાના શ્રી. જિનવિજય[1] અને ઉત્તમવિજયજીનું તેમના વિદ્વાન શિષ્ય શ્રી: પદ્મવિજયજીએ લખેલું પદ્યમય જીવન પ્રગટ થયું છે; જે પદ્મ-વિજયજીએ ઉપાધ્યાયજીના 'સાડી ત્રણસો ગાથાના સ્તવન' ઉપર બાલાવબોધ લખ્યો છે: શ્રી. વિજયલક્ષ્મીસૂરિની જીવનરેખા. તેમના ગચ્છના શિષ્ય પરિવારમાંના કવિબહાદુર શ્રી. દીપવિજયજીએ 'સોહમકુલપટ્ટાવલી'ના ગુજરાતી પદ્યમય પટ ઉપર આલેખી છે તથા અન્ય શિષ્યોએ પણ પૃથક્ પૃથક્ રેખાંકન કરેલું મળે છે.[2]

આપણને અહીં આગળ એ જ પ્રશ્ન થાય છે કે યોગવિભૂતિ શ્રીઆનંદઘનજી અને મહાપ્રાજ્ઞ (શ્રુતસાગર) યશોવિજયજી એવી કોઈ ચરિતાવલીમાં ઉપેક્ષણીય કેમ રહ્યા? શ્રી. માનવિજયજી ઉપાધ્યાયે પોતાનો 'ધર્મસંગ્રહ' ગ્રંથ યશોવિજયજી પાસે સુધરાવ્યાનું લખ્યું છે અને તેમને શ્રુતકેવલી તરીકે ઓળખાવ્યા છે. એમ મેં શ્રી. ન્યા. વિ. ન્યા. તી. મુનિ શ્રીન્યાયવિજયજી પાસેથી વાતવાતમાં સાંભળ્યું છે. શ્રી. દેવચંદ્રજી ઉપાધ્યાયે 'જ્ઞાનસાર' અષ્ટક ઉપર જ્ઞાનમંજરી ટીકા લખતાં એમને માટે ઘણાં જ માનભર્યાં વિશેષણ વાપર્યાં છે.

શ્રી. જ્ઞાનવિમલસૂરિએ ઉપા. યશોવિજયજીની 'યોગદૃષ્ટિની સજ્ઝાય' ઉપર બાળાવબોધ લખ્યો છે. તેમણે અને દેવચંદ્રજીએ 'શ્રીપાલ રાસ'માંથી સિદ્ધચક્ર અંગેની બે ઢાળોને યથાયોગ્ય રીતે ગોઠવી 'નવપદ પૂજા'નું નિર્માણ કર્યું છે; પણ કોઈએ એમના જીવનનો અથથી ઇતિ સુધીના બનાવોનો યથાવત્ સંગ્રહ કરવાનો પ્રયાસ કર્યો નથી. આનું પરિણામ એ આવ્યું કે, અનુમાનજન્ય વાતોની પરંપરા લોકોમાં ચાલતી થઈ. આજના જેવો સાધન-સંપન્ન એ જમાનો નહોતો. સુખકથા એ તે જમાનાનું મુખ્ય લક્ષણ હતું. કથાનકોએ પોતાની રીતિએ દરેક વસ્તુને બંધબેસતી કરી દીધી. સમાજ પ્રાકૃત હતો, જ્ઞાનસંપત્તિ સ્વલ્પ હતી, અત્યારે આપણે ત્યાં પશ્ચિમની વિદ્યા મધ્યાકાશે આવીને સર્વત્ર પોતાનો

---

1. શ્રી. જિનવિજયજીએ પાદરામાં કાળ કર્યો ત્યાં તેમના સ્તૂપ છે. ત્યાં આગળ પહેલાં તેમની અવસાન તિથિએ તેમનું જીવન વંચાતું.

2. આ બધા રાસ.ઓ શ્રી. મોહનલાલ દેસાઈએ 'જૈન ઐતિહાસિક રાસમાળા'માં સંશોધન કરી ટીકા સાથે આપ્યા છે 'જૈન યુગ'માં મેં તેને આધારે તેમનું જીવનવૃત્તાંત ટૂંકમાં લખ્યું છે.

પ્રકાશ પાથરી દીધો છે. છતાંયે આપણી સ્થિતિ તો હજુ પૂર્વવત્ છે. તો તે કાળ માટે તો શું કહેવું? અસ્તુ.

પહેલું એ કહેવામાં આવે છે કે, શ્રી. યશોવિજય અને શ્રી. વિનયવિજય એ બંને ગુરુભાઈઓ અથવા કેટલાકના કહેવા પ્રમાણે વિનયવિજય કાકાગુરુ હતા. બંનેએ જશલાલ અને વિનયલાલ નામ ધારણ કરી બ્રાહ્મણ વિદ્યાર્થી તરીકે પોતાને ઓળખાવી કાશીમાં ત્યાંના બ્રાહ્મણ પંડિત પાસે અભ્યાસ શરૂ કર્યો. તેમનો ન્યાયનો સંપૂર્ણ અભ્યાસ બાર વર્ષે પૂરો થવા આવતં તેમને ખબર પડી કે, ગુરુ પાસે હજી એક મોટો ન્યાયગ્રંથ છે, જે એ ઘણી કાળજીપૂર્વક ગુપ્ત રાખે છે અને કોઈને ભણાવતા કે જોવા સરખો આપતા નથી. આ બે મેધાવી શિષ્યોને એ ગ્રંથ ધારી લેવાની મહેચ્છા થઈ. આથી તે ગ્રંથ મેળવવાની તકની રાહ જોતા હતા. કોઈ કામસર ગુરુ પરગામ જતાં એ તકનો લાભ ઉઠાવવાનો એમણે નિર્ણય કર્યો. ગુરુપત્ની પાસેથી એ અલભ્ય ગ્રંથ યુક્તિથી માગી લઈ અડધો ભાગ જશે અને બાકીનો વિનયે રાતોરાત કંઠાગ્ર કરી લીધો અને સવારમાં તે ગુરુપત્નીને પાછો આપ્યો.

આ હકીકતમાંથી આપણને કેટલાક વિચારમુદ્દા ઊભા થાય છે.

(૧) વિનયવિજય અને જશવિજય એ ગુરુ ભાઈ હતા? કદી નહિ. એ ઉપાધ્યાય શ્રીજશવિજયજીના એકલા ગુજરાતી ગ્રંથોથી જ સ્પષ્ટ થાય છે.

" તાસ પાટે વિજયસેન સૂરીસર, તાસ પાટે વિજયદેવસૂરીસર:
તાસ પાટે વિજયસિંહસૂરીસર, તે ગુરૂના ઉત્તમ ઉદ્યમથી ગીતારથ ગુણ વાધ્યો:
તસ હિતસીખતણઇં અનુસારઇં, જ્ઞાનયોગ એ સાધ્યો રે. (૨૭૧-૪)
શ્રીકલ્યાણવિજય વડવાચક, હીરવિજયગુરૂ સીસો:
ઉદયો જસ ગુણસંતતિ ગાયઇં, સુર કિન્નર નિસદીસો રે. (૨૭૮ ૬)
ગુરૂ શ્રીલાભવિજય વડપંડિત, તાસ સીસ સોભાગી:
શ્રુત વ્યાકરણાદિક બહુગ્રંથિ, નિત્ય જસ મતિ લાગી રે. (૨૮૯-૬)
શ્રી ગુરૂ જીતવિજય તસ સીસો. મહિમાવંત મહંતો:
શ્રીનયવિનયવિબુધ ગુરૂભ્રાતા, તાસ મહાગુણવંતો રે.
જે ગુરૂ સ્વપરસમય અભ્યાસઈ, બહુ ઉપાય કરી કાસી:
સમ્યગ્દર્શન સુરૂચિ સુરભિના, મુજ મતિ શુભ ગુણવાસી રે. (૨૮૧-૯)
જસ સેવા સુપસાયઇં લહિજિ, ચિંતામણિ મેં લહિઉં. "

[ટબો: જસ સેવા–તેહની સેવારૂપ જે પ્રસાદ તેણે કરીને સદ્ગમાંહે ચિંતામણિ શિરોમણિ નામે મહાન્યાયશાસ્ત્ર તે લહ્યા–પામ્યો.]—દ્રવ્યગુણપર્યાય–રાસ–ઢાળ ૧૭ સ્વોપજ્ઞ ટબો

આ રાસની–સં. ૧૭૨૯ ભાદ્રવા વદિ ૨ દિને લિખી સાહા કપુરસુત સાહા સુરચંદે લિખાવિતમ્ ॥ ૭ ॥ –અંતે જણાવ્યું છે.

" સારદ સાર દયા કરો, આપો વચન સુરંગ;
તું તૂઠી મુજ ઉપરે, જાપ કરત ઉપગંગ.
તર્ક કાવ્યનો તેં તદા, દીધો વર અભિરામ;
ભાષા પણ કરી કલ્પતરૂ-શાખા સમ પરિણામ. "

[પૂર્ણ કરતાં—પૂર્વવત્ પટ્ટાવલી તથા ગુરુપરંપરા આપી છે.]

" નંદ[૯] તત્ત્વ[૩] મુનિ[૭] ઈંદુપતિ[૧] સંખ્યા (૧૭૩૯), વરસ તણી એ ધારોજી;
ખંભનયરમાંહી રહીય ચોમાસું, રાસ રચ્યો છે સારોજી. "

(—શ્રી 'જંબૂસ્વામી રાસ'-મંગલાચરણ)

★

(પૂર્વવત્-આચાર્ય તથા ગુરુપરંપરા આપ્યા પછી—)

" શીશ તસ જીતવિજયો વિબુધવર, નયવિજય વિબુધ તસ ગુરૂ ભાયા;
રહીય કાશીમઠે જેહથી મેં ભલે, ન્યાયદર્શન વિપુલ ભાવ પાયા.
જેહથી શુદ્ધ લહિયે સકલ નય, નિપુણ સિદ્ધસેનાદિ કૃત શાસ્ત્રભાવા;
તેહ એ સુગુરૂ કરૂણા પ્રભો તુઝ, સુગુણ વયણ રયણાયરી મુઝ નાવા. "

(—૩૫૦ ગાથાનું સ્તવન, ઢાળઃ ૧૭ માંથી)

" સૂરિહીર ગુરૂની બહુ કીરતિ, કીર્તિવિજય ઉવઝાયાજી;
શિષ્ય તાસ શ્રીવિનયવિજય વર, વાચક સુગુણ સોહાયાજી. ૭
વિદ્યા વિનય વિવેક વિચક્ષણ, લક્ષણ લક્ષિત દેહાજી;
સોભાગી ગીતારથ સારથ, સંગત સખર[૧] સનેહાજી. ૮
સંવત સતર અડત્રીસા વરષે, રહીય રાંદેર ચોમાસેજી;
સંઘતણા આગ્રહથી માંડ્યો, રાસ અધિક ઉલ્લાસેજી. ૯
સાર્ધ સપ્ત શત ગાથા વિરચી, પહોતા તે સુરલોકેજી;
તેના ગુણ ગાવે છે ગોરી, મિલિ મિલિ થોકે થોકેજી. ૧૦
તાસ વિશ્વાસ ભાજન તસ પૂરણ, પ્રેમ પવિત્ર કહાયાજી;
શ્રીનયવિજય વિબુધ પયસેવક, સુજસવિજય ઉવઝાયાજી. ૧૧
ભાગ થાકતો પૂરણ કીધો, તાસ વચન સંકેતેજી.

— શ્રીપાલ રાસ—(કળશમાંથી)

આ ઉપરથી આપણે જોઈ શકીએ છીએ કે ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી પોતાના સહાધ્યાયી તરીકે ઉપાધ્યાય શ્રીવિનયવિજયજીને જણાવતા નથી. જો હોત તો કાંઈ નહિ તો આ 'શ્રીપાલ રાસ'માં અવશ્ય તે વિશે તેમણે કહ્યું હોત.

---

૧. સજ્જનોની સંગત બનાવી છે. જો પોતાની સાથે હોત તેમ લખત. શ્રીવિનયવિજયજીને વિશ્વાસ હતો કે શ્રીયશોવિજય આ અપૂર્ણ રાસ પૂરો કરશે. એટલે ભલામણ કરેલી જે ઉપરથી આ રાસ શ્રીયશોવિજયજીએ પૂરો કર્યો. વિશેષ કોઈ સંબંધ નથી; એ સ્પષ્ટ છે.

'સુજસવેલી ભાસ' કેટલાંક વર્ષો પૂર્વે હાથ લાગવાથી પ્રગટ થઈ છે. એ મુજબઃ શ્રીયશોવિજયજીએ અમદાવાદમાં સંઘ સમક્ષ અવધાન કર્યાં. તેમની આ બુદ્ધિથી ચમત્કાર પામી ત્યાંના એક આગેવાન શ્રાવકે તેમને વધુ અભ્યાસ માટે કાશી જવાની સગવડ કરી આપવા ઉત્કંઠા બતાવી અને તે મુજબ પોતાના ગુરુ સાથે તેઓ કાશીમાં ગયા.[1] 'સુજસવેલી ભાસ'ના કહેવા પ્રમાણે તેઓ ચારેક વર્ષ કાશીમાં અને ત્રણેક વર્ષ આગ્રામાં રહ્યા. આગ્રામાં એમને પ્રસિદ્ધ વિદ્વાન (દિગંબર) કવિ બનારસીદાસનો પરિચય થયો હોવો જોઇએ. નીચેની માહિતીથી આપણને તેનો ખ્યાલ આવે છે.

"ચેતન મોહકો સંગ નિવારો, જ્ઞાન સુધારસ ધારો." એ પંક્તિથી શરૂ થતું અને "તેસેં જસ સત્તા સધી રે, એક ભાવકો હોય." એ બોલથી પૂરું થતું પદ, ગાથા ૧૫નું આશાવરી રાગમાં હોઈ, ઉપરોક્ત બે પંક્તિ સિવાય બાકીની બધી પંક્તિઓ 'સમયસાર'માં યથાવત્ છે.[2] 'અધ્યાત્મમતપરીક્ષા', 'દિગ્પટ ચોરાસી બોલ' વગેરે દિગંબર મતને લગતાં પુસ્તકો ક્યાં અને ક્યારે બનાવ્યાં તે વિદ્વાનોએ સૂક્ષ્માવલોકન પૂર્વક વિચારવા જેવું છે. પંડિત શ્રી. સુખલાલજીએ 'તત્ત્વાર્થસૂત્ર' ઉપર વિવેચન લખ્યું છે, તેમાં એમણે અનેક ચિંતનીય વિષયોનો પરિસ્ફોટ કરતો 'પરિચય' નામનો નિબંધ જોડ્યો છે. 'તત્ત્વાર્થ'ની ટીકાસમૃદ્ધિનું અન્વેષણ કરતાં—તેના ગુજરાતી બાલાવબોધ વિશે તેઓ કહે છેઃ

"(झ) गणी यशोविजय, उपरके वाचक यशोविजयसे भिन्न हैं— ये कब हुए? यह मालूम नहीं.... टिप्पणकी भाषा और शैलीको देखते हुए ये सत्रहवीं—अठारवीं शताब्दीमें हुए जान पड़ते हैं। इनकी उल्लेख करने योग्य दो विशेषताएं हैं।[3]

(१) दिगंबरीय 'सर्वार्थसिद्धि' मान्य सूत्रपाठको लेकर उस पर मात्र सूत्रोंका अर्थपूरक टिप्पण लिखा है ओर टिप्पण लिखते हुए उन्होंने जहां जहां श्वेतांम्बर और दिगम्बरोंका मतभेद या मतविरोध आता है वहाँ सर्वत्र श्वेताम्बरपरम्पराका अनुसरण करके ही अर्थ किया है।

(२) गणी यशोविजयजी श्वेताम्बर हैं टिप्पणके अंतमें ऐसा उल्लेख है (स्फुटनोट—" इति श्वेताम्बराचार्य श्रीउमास्वामिगण(णि)कृततत्त्वार्थसूत्रं तस्य बालावबोधः श्रीयशोविजयगणिकृतः समाप्तः।") सूत्र, पाठभेद और सूत्रोंकी संख्या दिगम्बरीय स्वीकार करने पर भी उसका अर्थ किसी जगह उन्होंने दिगम्बर परम्पराके अनुकूल नहीं किया।"

---

૧. 'સુજસવેલી ભાસ' પ્રસિદ્ધ થઈ ત્યારે શ્રી. મો. દ. દેસાઈએ મોકલેલી. તેમાંથી સ્મરણને આધારે લખું છું. આ તેમ જ બીજાં પુસ્તકો મારી પાસે–મારા લખવાના સ્થળે–નથી; જેથી તેમાં જોઈ ખાતરી કરવાનું બન્યું નથી.

૨. શ્રી. મો. દ. દેસાઈએ 'જૈનયુગ'માં આખું પદ ઉતારી આ હકીકત લખી હતી. મેં 'સમયસાર' નાની વયે વાંચેલો. ફરી જોઈ જવાનું બન્યું નથી. 'સમયસાર' ઉપલક જોવા મળતાં તેમાં આ હકીકત છે.

૩. 'તત્ત્વાર્થ વિવેચન' હિંદી ૫૪ : ૫૬.

આનાં કેટલાંક કારણો પંડિતજીએ આપ્યાં છે. સિવાય કેટલુંક કહેવું અહીં પ્રાપ્ત થાય છે, તે આ પ્રમાણે છે :

વાચક શ્રીયશોવિજયજીના સમયની લગોલગ શ્રીસત્યવિજય પંન્યાસના, શ્રીકર્પૂરવિજયના શિષ્ય ક્ષમાવિજય, તેમના શિષ્ય જશવિજય થયા છે. એમણે કેટલીક સજ્ઝાયો તથા પરચુરણ સાહિત્ય લખ્યું છે. એમની એક કૃતિની સાલવારીના આધારે યા તે સમયના બીજા યશોવિજયના લખાણ ઉપરથી માસ્તર શિવલાલે નામસામ્ય જોઈ લખેલું કે, 'ઉપાધ્યાય શ્રીજશવિજયનો સ્વર્ગવાસ સં. ૧૭૪૫ માનવામાં આવે છે, પણ તે પછીની સાલવાળી આ કૃતિ તેમની મળે છે.' પણ એ 'ગણી' હોવાનું એમની શિષ્યપરંપરાના શુભ–વીર-વિજય કે એમના ગુરુભાઈ શ્રીજિનવિજયની પરંપરાના કોઈ લખતું નથી એટલે એ ગણી હશે નહિ; પણ 'ઇતિ શ્રીઉપાધ્યાય શ્રીજશવિજય ગણિકૃત દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ સંપૂર્ણ;' 'ઉપાધ્યાયં શ્રીયશોવિજય ગણિકૃત સ્વોપજ્ઞ ટબાર્થ સંપૂર્ણ:' 'જંબૂસ્વામી રાસ'માં પણ તેઓ પોતાને ગણી લખે છે. વળી, એના હસ્તાક્ષરના કાગળમાં 'श्रीजसलमेर दुर्गेष श्रीजशविजयगणिकृत्तोत्तरप्रश्नः' એમ લખે છે. આ પત્રમાંથી આપણને 'સર્વાર્થસિદ્ધિટીકા' માન્ય સૂત્રપાઠ ઉપર બાલાવબોધ લખવાનું કારણ જડી આવે છે. આ કાગળ અનેક વિષયો સાથે દિગમ્બર–શ્વેતાંબર વચ્ચેના મતભેદ પૈકી સ્ત્રીમુક્તિ કે કેવલિ–કવલાહાર, કાળદ્રવ્ય વગેરે સંબંધમાં પૂછેલા પ્રશ્નોના ઉત્તરરૂપે છે.

"थें लिख्यों छे, जे केवली कवलाहार करइ पणि—तिणरी युगति लिखं नथी लिखी (१) ते लिखतां ग्रंथांतर थाइं....हवे ते युगति जाण्यारी इच्छा छइ सो गणधर महाराज हस्ते 'अध्यात्ममतपरीक्षा' रो बालावबोध लिखावी आवस्यां तेथी सर्व प्रीछयो ।

"पणि "एकादश जिने" (९—११) इस्युं सूत्र छइ पणि- एकादशाः जिनेन इस्युं सूत्र न छइ....दिगम्बर कृत 'सर्वार्थसिद्धि-टीका' नांहि न संति इस्युं बाहरथी लेवुं कहीउं छइ....बीजुं थे इनरो विचारी देखो ! बादर संपराये २२ सूक्ष्मसम्पराये १४ इत्यादि अनुक्रमे "एकादश जिने" ए सूत्र चाल्युं तो विधि अधिकारइं निषेध व्याख्यान पंडित होइ ते किम करे ! वली मत वासनाइं दिगम्बर 'प्रमेयकमलमार्तण्ड' मध्ये इस्युं व्याख्यान करिउं छइ जे 'एकेनाधिका न दश एकादश एतावता' एक नहीं—दश नहीं ते ११ इं परीसह नहीं ते इस्यो समास व्याकरणविरुद्ध छइं ते 'श्रीस्याद्वादरत्नाकर' मध्ये कहिउ छे । केवलीने कवलाहार मान्या विना ए सूत्र दिगम्बरने मलतुं न छइं ।"

આ ઉપરથી આપણને સહેજે સમજાય છે કે, 'સર્વાર્થસિદ્ધિ'ના પાઠનો ખરો અર્થ શું નીકળે છે, તે બતાવવા તેનો બાળાવબોધ લખ્યો છે. 'તત્ત્વાર્થ'ના અધ્યાય ચોથાના ૧૯ મા સૂત્રને સંખ્યાભેદના કારણે અપવાદે શ્વેતાંબરીય સૂત્ર રાખ્યું હોય તો તે બનવાજોગ છે. (પૃષ્ઠ : ૫૬–૫૮)

આ પત્રમાં શ્વેતાંબર વિરુદ્ધ દિગમ્બરીય માન્યતા, સાધુધર્મોપકરણ, સ્ત્રીમુક્તિ,

કાલદ્રવ્ય, કેવલિ–કવલાહાર–પૈકી કેવલિ–કવલાહરની ઘણી ઊંડી તત્ત્વાનુગામી ચર્ચા કરી છે; જેમાં એમણે ઘણા ગ્રંથોના આધારો ટાંકી શ્વેતાંબર–દિગમ્બર વિષયને સ્ફુટ કર્યો છે. પ્રશ્નકાર વર્ગ તત્ત્વની જિજ્ઞાસાવાળો હોઈ, તજ્જન્ય જ્ઞાનથી પરિચિત હોવો જોઈએ, પણ સંસ્કૃત ભાષાના અનભિજ્ઞપણાના કારણે તેમને તે ભાષામાં લખેલા ગ્રંથો ન સમજાય તે તેમની સમજમાં ઉતારવા માટે તેના બાલવબોધ અને મૂલ ગ્રંથો કરવાની તેમને જરૂર પડી હતી.

" अध्यात्ममत परीक्षा–बालावबोध ' ए, योगदृष्टि ग्रंथ श्रोतानें अगोचर न रहइं ते ग्रंथगे भाव सज्झायरूपे बांध्यो छइं, ते पण–मोकलस्युं: इहां–शिष्यजनना हितने अर्थइं अस्मत्कृत ' जैनतर्कभाषा ' अनुसार निक्षेप–नय योजनिका कहीइं छइ–" अह्मे ' जैनतर्कभाषा' मांहि लिख्युं छइ ते प्राकृतभाषाइ लेख मध्ये तुम्हने लिखीं जणाव्युं छइ ए लेखनइ महाशास्त्र करी जाणवुं युक्त ज छइं. " ए अतिसूक्ष्म अर्थ छइं ' द्रव्यगुणपर्याय रास ' मध्ये अह्मे वखाण्यो छइं'।

" आ एनां दृष्टांतो छे–एटले अठे धर्मकार्य सुखे प्रवर्ते छे अपरम्, थारा कागल समाचार पाया. वांची बहु सुख थया। अत्र ज्ञानगोष्ठि गरिष्ठ एसी सभा छे, जे देखा था सरखां ज्ञानप्रिय लोकने घणुं सुख उपजे ते प्रीछजो: तथा न्याय मार्गे कर्या छे ते मांहेथी प्रतो पांच सात अठेथी लइ जाइं, इम्यु सा गदाधर महाराजने लखजो। बीजी भलामण जे लिखणी होवे ते लिखजो! परिणति शुद्ध राखजो। शा. वच्छा, शां. तेजसी प्रमुखने पण कागल लिखजो....आ पक्षमां समजदार धर्मप्रिय केटलाएक छे ते लखजो।

એમની સભાના સભ્યોનો આપણને આ રીતે પરિચય મળે છે. હવે આપણે એમના કાગળની બીજી વિગતોમાં ઊતરીએ:

" अनन्यथासिद्धनियतपूर्ववर्तिकारणम्। अनन्यथासिद्धिनियतपश्चाद्भावि कार्यम् ' ए लक्षण लोक-व्यवहार अवश्य मानवा तो स्वभाववाद युक्ति शून्य छइं ए चिन्तामणितर्करो मार्ग।

" कागल २जो–"ऐं" स्वस्ति श्रीपार्श्वजिनं प्रणम्य–श्रीस्तम्भतीर्थनगरतो न्यायाचार्योपाध्याय–श्रीजस-विजयगणयः सपरिकराः सुश्रावकपुण्यप्रभावक–श्रीदेवगुरुभक्तिकारक....संघमुख्य शाह हरराज, साह देवराज योग्यं धर्मलाभपूर्वकमिति लिखन्ति। अपरम्....तथा खंभात मध्ये श्रावक सूत्र वाचइ छइ ते–ढुंढिया आज्ञा विरोधी अभिन्न ग्रंथ छइ।

" वडो लेख लिखावी मोकल्यो छइ। सा गदाधर थानई ठाउको मोकल्यो छइ। तिणमां–नयः निक्षेपः प्रमाणरी मणा न रही छइ....

" तथा–न्यायाचार्य विरुद तो भट्टाचार्यइ न्यायग्रंथ रचना करी देखी प्रसन्न हुइ दिऊं छइ। ग्रंथ संमाप्ति लिख्या छई–

---

१. એમના કાગળમાંથી આ બધા બાલવબોધનાં નામ એઓ આપે છે. 'ગુર્જર સાહિત્ય સંગ્રહ' ભાગ ૨ માંથી 'દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ', 'જંબુસ્વામી રાસ' કાગળો વગેરે ઉતારા લીધા છે.

" पूर्व न्याय-विशारदत्वबिरुदं, काश्यां प्रदत्तं बुधै-
न्यायाचार्यपदं ततः कृतशत-ग्रन्थस्य यस्यार्पितम् ।
शिष्यप्रार्थनया नयादिविजय-प्राज्ञोत्तमानां शिशुः,
तत्त्वं किञ्चिदिदं यशोविजय इत्याख्या तदाख्यातवान् ॥ "

"न्यायग्रंथ २ लक्ष कीधो जइ नो बौद्धादि कर्या एकांत युक्ति खंडी स्याद्वाद पद्धति मांडी नइ प्र युक्ति जैन न्यायाचार्य बिरुद पंडित शिष्य लोक कहइ तेई प्रमाण छई ने प्रीछ्यो ।"

આટલા ઉતારા ઉપરથી આપણે સ્પષ્ટ જોઈ શકીએ છીએ કે, ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજય ગણિ ગુરુ શ્રીનયવિજયજી સાથે કાશીમાં વિશિષ્ટ ન્યાયના અભ્યાસાર્થે જાય છે.[1] ત્યાં (દર્શનાદિ શાસ્ત્રો સાથે) તેમણે 'चिंतामणि-शिरोमणि' મહાન્યાયશાસ્ત્રનું ઊંડું અધ્યયન કર્યું. આ બધી હકીકતોમાં કોઈ જગ્યાએ તેઓ પોતાના સહાધ્યાયી તરીકે શ્રીવિનયવિજય વિશે લખતા નથી. તેમ શ્રીવિનયવિજય ઉપાધ્યાયે પોતે કાશી ગયાનું, ત્યાં રહી અભ્યાસ કર્યાનું કે કોઈ પદવી લીધાનું કે શ્રીયશોવિજય ગણિ પોતાના સહાધ્યાયી હોવાનું લખ્યું હોય એવું જાણવામાં નથી. તેઓ બન્ને ગુરુભાઈ કે શ્રીવિનયવિજય કાકાગુરુ પણ હતા નહિ.[2] શ્રીવિનયવિજય શ્રીકીર્તિવિજય વાચકના શિષ્ય હતા. તેમની ગુરુપરંપરા શ્રીહીરવિજયસૂરિથી જુદી પડે છે. શ્રીવિજયસેનસૂરિ પછીથી શ્રીધર્મસાગર ઉપાધ્યાયના કારણે તપગચ્છના શ્રીવિજયદેવસૂરિથી 'દેવસૂર ગચ્છ' અને વિજયઆણંદસૂરિથી 'આણસૂર ગચ્છ' એમ બે ફાંટા પડ્યા. તેમાં શ્રીયશોવિજયજી દેવસૂરિપરંપરાના આમ્નાયમાં હતા; જ્યારે શરૂમાં શ્રીવિનયવિજયજી શ્રીઆણંદવિજયસૂરિના પક્ષમાં હતા, તે તેમણે 'મેઘદૂત'ની પદ્ધતિ ઉપર શ્રીવિજયઆણંદસૂરિને પર્યુષણનો ક્ષમાપના–'વિજ્ઞપ્તિ' પત્ર લખ્યો છે;[3] તથા તેમની કેટલીક ગુજરાતી પદ્યકૃતિઓમાં એમણે બતાવેલી પરંપરાથી પણ નક્કી થાય છે. આમ છતાં ભારે આશ્ચર્યની વાત છે કે, લોકો તેમને શ્રીયશોવિજયના ગુરુભાઈ, કોઈ કાકાગુરુ તથા સહાધ્યાયી બતાવે છે. એટલું જ નહિ પણ એક અગમ્ય અને અલભ્ય ગ્રંથ,

---

૧. આ વિશે એમ કહેવાય છે કે, જૈન નામ છુપાવી–બ્રાહ્મણ નામ વિનયવિજયજીએ વિનયલાલ અને જશવિજયજીએ જશલાલ–નામથી બ્રાહ્મણ પંડિત પાસે અભ્યાસ કર્યો. પ્રતિષ્ઠિત વિદ્વાન શ્રી. સુખલાલજી સાથે આ વિશે વાત થતાં તેમનું કહેવું થયું કે, આ વસ્તુ ખોટી છે. તે વખતે કાશીમાં જૈન ઓસવાળોનાં ઘણાં ઘરો હતાં. એટલે તેમણે જૈન સાધુપણાનું નામ અને સાધુપણું કાયમ રાખી અભ્યાસ કર્યો છે. તે વખતે મુશ્કેલી ઘણી હતી. અમારા વખતમાં પણ ઘણી હતી તો તે વખતે હોય જ. હાલ એટલી નથી.

૨. કાકાગુરુ શ્રી જીતવિજય: શ્રીનયવિજય પંડિત તેહના ગુરુભ્રાત–ગુરુભાઈ સંબંધે યથા. एकगुरु-शिष्यत्वात्–ગાથા: ૨૮૦ જેહે–ગુરુએં, સ્વ–સમય: તે–જૈનશાસ્ત્ર, પર–સમય તે વેદાન્ત–तर्क પ્રમુખ તેહના અભ્યાસાર્થે (દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ–ટબો.) ગાથા: ૨૮૧

૩. આ પત્ર પત્રાકારે–ટિપ્પણા રૂપે નહિ–ગ્રંથાકારે લખ્યો છે, જે સંસ્કૃત કાવ્યરૂપે એક દૂતકાવ્ય છે. તેની નકલ દક્ષિણવિહારી શ્રીઅમરવિજયજી પાસે, તેમના વિદ્વાન શિષ્ય ચતુરવિજયજી પાસે જોઈ હતી. તેમનો પુસ્તકભંડાર (સંગ્રહ) હાલ ડભોઈ શ્રીયશોવિજય (ઉપાધ્યાય) પુસ્તકાલયના મકાનમાં છે; જે મકાનનો ઉદ્ભવ તથા નામાભિધાન તેમની મહેનતનું ફળ છે.

જે વિદ્યા ગુરુએ ગોપવી રાખ્યો હતો–તે ગુરુની ગેરહાજરીનો લાભ લઈ–ગુરુપત્નીને ઠગી–મેળવી તેનું છાનુમાનું અધ્યયન કરી લીધાનું સુદ્ધાં તેમને માટે કહે છે.[1] આપણી ભારે જિજ્ઞાસા વચ્ચે આનું આપણને સમાધાન મળે છે; જેનો ઉલ્લેખ 'દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ' અને પોતે લખેલા કાગળમાં 'चिंतामणि-शिरोमणि' મહાન્યાયશાસ્ત્ર નામે કરેલો આપણે જોઈએ છીએ. આટલી ખુલ્લી રીતે લખેલી હકીકત તે કેટલી સંગત કરવી? ઉપાધ્યાય શ્રીવિનયવિજયજીએ પોતાનો 'શ્રીપાલ રાસ' આરંભેલો તે પોતાના પછી વાચક શ્રીયશોવિજયજીએ, પૂરો કરવાનો સંકેત કરેલો તે મુજબ પૂરો કર્યો; આટલા સંબંધ માત્રથી અનુમાનપરંપરાએ કેટલું વિલક્ષણ રૂપ ધારણ કર્યું, એ આપણા લોકમાનસનો નાદર નમૂનો છે આથી પણ આગળ વધી તેઓ કહે છે:

ગુરુઆજ્ઞા સ્વીકારતાં તેમની પાસેથી વિદાય લેતાં કહે છે: 'ગુરુદેવ! અત્યાર સુધી અમે વિદ્યા માટે નામ–જાત ગોપવી છે; ખરી રીતે અમે બ્રાહ્મણપુત્ર ન હોઈ–જૈન સાધુ છીએ. એટલે અમારી પાસે તમને દક્ષિણામાં આપવાનું દ્રવ્ય નથી પણ આપને જ્યારે જરૂર પડે ત્યારે અમે તમને જે નામ, ગચ્છ વગેરે જણાવીએ છીએ તે પ્રમાણે પત્તો મેળવીને આવશો તો તમને બનતી સહાય કરીશું.' એમ કહી ગુરુનો આશીર્વાદ લઈ તેઓ બન્નેએ ગુજરાત તરફ પ્રયાણ કર્યું. કેટલાક સમય પછી જ્યારે તેઓ ખંભાતમાં હતા ત્યારે તેમના એ ગુરુજીને પૈસાની જરૂર પડતાં ત્યાં આવ્યા; તેમને દેખીને વ્યાખ્યાનપીઠ ઉપરથી ઊતરી તેમણે તેમનો સત્કાર કર્યો. શ્રોતાઓને તેમની ઓળખાણ કરાવીઃ 'પોતે અત્યારે જે સ્થિતિમાં છે તે તેમનો પ્રતાપ છે, જેથી તેમને ઉચિત પુરસ્કાર આપવો આવશ્યક છે.' શ્રીસંઘને એવો નિર્દેશ કર્યો, આથી સંઘે તેમને ૮૦ હજાર રૂપિયા તે વખતે જ કરી આપ્યા! ખંભાતથી જેસલમેર લખેલા કાગળની હકીકત આગળ કહેલી છે, તેમાં આપણે શાસ્ત્રી ગદાધર મહારાજનું નામ વાંચીએ છીએ, જેઓની યોગ્યતા શું હતી અને તેઓને કેવા કામ માટે રોકેલા હતા–તેની માહિતી આપણને તેમાંથી મળી રહે છે. વિનયવિજયજી સંબંધે કોઈ ઉલ્લેખ તેમાં નથી. સાથે વિહાર કરતા હોય અને સાથે જ ખંભાતમાં ચોમાસું હોય તો અનેક ઘટનાઓથી ભરેલા એ કાગળમાં તેમનું નામ ન હોય એ સંભવિત છે? એમનો સાથે વિહાર કોઈ રીતે સિદ્ધ થતો નથી. તેમ પંડિતના નામે જે એક વાત ઊભી કરવામાં આવી છે, તેનો કોઈ અંશ શોધ્યો જડતો નથી. એક માત્ર શાસ્ત્રી ગદાધર હતા એટલો જ પત્તો મળે છે.

ગામ–પરગામ, દેશ–વિદેશના સમાચાર મેળવવાનું સાધન માત્ર, આવતા જતા માણસોના મોંઢેથી સાંભળેલી વાતો સિવાય બીજું અત્યારના જેવું કોઈ સાધન કે પ્રદેશ પ્રદેશ વચ્ચેનો પરિશુંત સંબંધ હતો નહિ. એક ગામથી બીજે ગામ જવાનું પણ વિકટ હતું. એવા

---

૧. આવી વાતો મહિમા વધારવા–બુદ્ધિની તાજુબી બતાવવા–કહેવામાં આવે છે; પણ તે કેવી અનર્થ–પરંપરા ઉપજાવે છે તે વિશે મારે એક જાણીતા તેરાપંથી સાધુ સાથેની વાતચીતમાંથી જાણવા મળી તે કહેઃ 'તમારા યશોવિજયમાં સાધુપણું ક્યાં આગળ રહ્યું?' મેં તો એ બીનાને કાયમ રાખી ઘટતો જવાબ દીધો પણ આપણો સમાજ આવી દંતકથાઓ માટે વિવેકપૂર્વક વિચાર કરતો થાય તો સારું.

શુદ્ધાનુભાવને લક્ષીને શબ્દની પસંદગી કરી હોત તો તે ચિદાનન્દઘનનો ઉપયોગ કરત. 'અષ્ટપદી'માં વારંવાર આનંદઘન શબ્દનો કરેલો ઉપયોગ વ્યક્તિગત છે. એ અષ્ટપદીની ઉત્પત્તિ જ કહી આપે છે. જેની પુષ્ટિ શ્રીઆનંદઘનજીએ યશોવિજયજીના કરેલા પદથી સહેજ રીતે થાય છે. આ બે મહાત્માનું મિલન જે અર્થનું હતું તેમાં લોકોને જુદો જ અર્થ સમજાયો. તે વિશે આમ કહેવાય છેઃ

(૧) તેઓ (યશોવિજય) વિદ્યાના મદમાં આવી જઈ ખંડનમંડનમાં પડી ગયા હતા. એમનામાં આંતર વૃત્તિ નહોતી! તે આનંદઘનજીએ તેમને કરાવી! અર્થાત્ આધ્યાત્મિકતા યશોવિજયમાં આવી હોય તો તે શ્રીઆનંદઘનના સમાગમથી.

(૨) શ્રીઆનંદઘનજીને પોતાનો અંતકાળ નજીક જણાતાં પોતાની પાસેની લબ્ધિ—સિદ્ધિ અન્યને આપવાની ઇચ્છા થઈ આવી. આ માટે તેમની યશોવિજય ઉપર પસંદગી ઊતરતાં, કાગળ લખી તેમને બોલાવ્યા. તે પ્રમાણે યશોવિજય તેમની પાસે આવ્યા. એક વક્તાના કથન મુજબ તો : તેમને છ માસ સુધી શું પ્રયોજને બોલાવ્યા છે તેની જાણ આનંદઘનજીએ કરી નહિ એટલે ત્યાં સુધી તેઓ એમ ને એમ ધૈર્ય રાખી બેસી રહ્યા! તે પછી ધૈર્ય ખૂટતાં પોતાને બોલાવવાનું પ્રયોજન પૂછ્યું. આનંદઘનજીએ કહ્યું : 'હવે કાંઈ નહિ. તમે પરીક્ષામાં નિષ્ફળ નીવડ્યા! મારો વિચાર તમારામાં ધૈર્ય–ગાંભીર્ય કેટલું છે, નિર્મમત્વ–અનિચ્છિતભાવ કેટલો છે તે તપાસી મારી પાસેની લબ્ધિ–સિદ્ધિ તમને આપવાનો હતો પણ તમે અધીરા બન્યા. હવે તમે એને યોગ્ય નથી.' આથી ઉપાધ્યાય વિલખા પડી એમ ને એમ પાછા ફર્યાં. શ્રીઆનંદઘનજીએ પોતાની બધી લબ્ધિ–સિદ્ધિ ભૂમિમાં ભંડારી. (તે પહેલાં) બીજા વક્તાએ શાસનકામના ઉપયોગ માટે તેમણે સુવર્ણસિદ્ધિ માગી : એ રીતનું કહ્યું હતું. (મુંબઈના એક. ભાષણમાં).

હવે આપણે પ્રથમ માન્યતાનો વિચાર કરીએ. શ્રીયશોવિજયજીએ કાશીમાં રહી સર્વ શાસ્ત્રપારંગતતા મેળવી; આથી એમની પ્રજ્ઞા જ્ઞાનના દરેક પ્રદેશ ઉપર ફરી વળી, જેણે તેના અંશે અંશનું સમ્યગ્ સ્વરૂપ પ્રાપ્ત કર્યું હતું. આ પ્રાપ્ત ભાવના દર્શનપક્ષો, મતાગ્રહવાદો, ધર્મભ્રમો અને તેથી પ્રચલિત થયેલા ધર્માભાસરૂપ અનુષ્ઠાનો વગેરેના આંતર સ્વરૂપને સ્પર્શતી હોય એમ આપણે જોઈએ છીએ. એમને જે વસ્તુ નયાપેક્ષ લાગતી ત્યાં તેનો સમન્વય કર્યો છે. મિથ્યાવાદરૂપે લાગી તેનું ખંડન કર્યું છે, જે ભ્રમિત હતું તેનું સ્પષ્ટ ભાન કરાવ્યું છે, અને જ્યાં મૂઢતા તથા દુષ્ટતા હતાં ત્યાં સબળ હાથે કામ લીધું છે. એમાં આપણે એમની શાસ્ત્રવિશારદતા, તટસ્થતા, નિગ્રંથતા અને નિર્મળતાનાં દર્શન કરીએ છીએ. તે સાથે આપણને એમનો કલ્યાણકર પ્રબળ પુરુષાર્થ પણ યાદ આવે છે.

તેમના સમયની સ્થિતિ ખ્યાલમાં લેતાં જોવાય છે કે, સાધુઓમાં ગ્લાનિકર શિથિલાચારે વાસ કર્યો હતો. તેઓ પરિગ્રહના ગ્રહથી ગ્રસિત થયેલા હતા. દ્રવ્યપ્રાપ્તિ એ જ ક્રિયાકાંડ તથા ધર્માનુષ્ઠાનોનું પ્રયોજન હોય એમ સમજાતું હતું! એટલે એમાંથી ધર્મનો પ્રાણ ઊડી ગયો હતો.

સ્વાર્થવશ સત્યોપદેશ થતો નહિ.[1] બીજી લોંકાશાહથી પ્રગટેલી અજ્ઞાનમૂલક દેશનાએ બાહ્યાચારનું મહત્ત્વ વધારી, મૂઢ લોકોને પોતાના તરફ આકર્ષ્યાં હતા.[2] આ સ્થિતિના નિવારણાર્થે એમને કડક કલમ ચલાવવી પડી છે. બગાડો કેટલો, કેવો અને ક્યાં છે? એની વિચારણાપૂર્વક એમની તેજસ્વી કલમમાં વીરોચિત કર્મયોગનો બોધપાઠ સર્વત્ર દૃષ્ટિગોચર થાય છે. તેમ અજ્ઞાને પ્રવર્તાવેલી મૂઢાવસ્થા અને તદનુસારી આચરણાનું સ્વરૂપ એમણે જ્વલંત રીતે નિડરતાથી બતાવ્યું છે. તે માટે મોટે ભાગે લોકવાણીનો ઉપયોગ કર્યો છે; સાડાત્રણસો ગાથા, દોઢસો ગાથા, સવાસો ગાથાનાં સ્તવનો રચ્યાં જે અત્યારે પણ તેટલાં જ ઉપયોગી છે. ધર્મની ખરી દૃષ્ટિ એમાંથી આપણને સાંપડે છે. ધર્માચરણ સુધારવા જતાં જે કષ્ટપરંપરા અન્ય સુધારકોને વેઠવી પડી છે તેનો અનુભવ એમને પણ થયો હતો. એ એમણે 'શ્રીશંખેશ્વર પાર્શ્વનાથના સ્તવન'માં પોતાની મનોવ્યથા વ્યક્ત કરતાં વર્ણવ્યું છે :

" ક્રોપાનલ ઉપજાવત દુર્જન, મથન વચન અરણી;
નામ જપું જલધાર તિહાં તુજ, ધારું દુઃખહરણી.
અબ મોહે ઐસી આય બની, શ્રી શંખેશ્વર પાસ જિનેસર મેરે તું એક ધણી."

તેવી જ રીતે એમણે ઠેકાણે ઠેકાણે પ્રસંગ પામી પોતાની કથની કહી છે. તેમાંથી આપણે એમની ઊંડી વેદનાના નિઃશ્વાસ સાંભળી શકીએ છીએ.

---

૧. એક વક્તાએ કહ્યું હતું કે, યતિઓની અર્થદેશના સાથે ઉપાધ્યાયજીએ ઘણા કડક પ્રહાર કર્યા, જેથી બધા યતિઓ તેમની પાસે આવી વિનવવા લાગ્યા કે, 'મહારાજ! આપ આ પ્રમાણે ઉપદેશ કરશો તો અમારી દુર્દશા થશે.' આથી ઉપાધ્યાયજીને દયા આવવાથી તેમની દાક્ષિણ્યતાથી-તેઓએ તે પછી પૂર્વવત્ લખવું છોડી દીધું આ હકીકતમાં કેટલું તથ્ય હશે? કેમકે, ઉપાધ્યાયજી જ્યાં અનિષ્ટ જોતા ત્યાં નિર્ભીકપણે બોલ્યા વિના રહેતા નહિ. એમનાં લખાણોમાં એમના નિડર સ્વભાવની છાયા સ્પષ્ટ જોવાય છે એ માટે જુઓ—

' જે નિર્ગ્રંથ મારગ બોલે, તે દશો દીપને તોલે. " —(૩૫૦ ગાથા સ્તવન, ઢાળ : ૪માંથી)

जो सम्मं जिणमग्गं, पयासए निव्भए णिरावेक्खे । सो भव्वाण जणाणं, दीवसमो भवसमुद्दम्मि ॥

—(મહાનિશીથ)

૨. ગીતારથ જયણાવંત ભવ ભીરુ જેહ મહંત, તસ વયણે લોક તરિયે, જેમ પ્રવહણ ભરદરિયે (૫)
નવિ નિંદા મારગ કહેતાં, સમપરિણામે જેહ ગહગહતા. (૯).
જહાં દૂષણ એક કરાય જે ખલને પીડા થાય, તોપણ એ નવિ છોડિજે, જે સજ્જનને સુખ દીજે.

—(૩૫૦ ગાથા સ્તવન.)

गीयं भण्णइ सुत्तं, अत्थो तस्सेव होइ वक्खाणं । उभएण य संजुत्तो, सो गीयत्थो मुणेयव्वो ॥

—(મહાનિશીથ)

अन्नाणी वक्खाणं, करेइ जो तस्स होइ पावफलं । नाणी वि जो न भासइ, सो लहए नाणविग्घं खु ॥

—(હિતોપદેશ)

इक्को य होइ दोसो, ज जायइ खलजणस्स पीड त्ति । तह वि पयट्टो इत्थं, दट्ठुं सुयणाण अह तोसं ॥
तत्तो च्चिय जं कुसलं, तत्तो तेसिं पि होइ न हु पीडा । सुद्धासया पवित्ती, सत्थं निग्घोसिया भणिया ॥

—(૩૫૦ ગાથા સ્તવન, ઢાળ : ૪)

એમનો શાસ્ત્ર લખવાનો ઉદ્દેશ શો હતો? કટુતા આવી જવાનું કારણ શું હતું? એમનો આત્મા કેટલો નિર્લેપ હતો? દૃષ્ટિ કેટલી સારગ્રાહી હતી? તે આપણે એમના શબ્દોમાં જ જોઈએ :

" हमणां–सकल श्वेतांवर तर्क ग्रंथ, दिगम्बरमत निर्दलक ज छे ए मोटो अंतर छे। ए दिगंवर मुक्ति छइं, पछि–जिन जांणें तो परीक्षक लोकने वडी खामी छइं। रागद्वेषी नाम धरावणो टलें छइं पणि मिथ्यात्व आवइं छई। 'छागमपनयतः क्रमेलक–प्रवेशः' न्यायः। उक्तं च हेमाचार्यैः 'अयोगव्यवच्छेद-द्वात्रिंशिकायाम्'—

" सुनिश्चितं मत्सरिणो जनस्य, न नाथ! मुद्रामतिशेरते ते।
माध्यस्थ्यमास्थाय परीक्षका ये, मणौ च काचे च समानुबन्धाः ॥ २–२७ ॥"

अर्थ—हे नाथ! हे वीतरागदेव! एमइं सुनिश्चित छे, जे ते लोक मत्सरीरी मुद्रा अतिक्रमता न छइं, एता ता–मत्सरी ज छे। जे परीक्षक हुंता, मणिमां अने काचमां समानुबंध क० सरखें परणामे छइं, काच- रतनरो अंतर न देखावइं मध्यस्थ रहइं, परीक्षक लोक अविषय अर्थइं जिननें भलावइं। बीजो–जिनरो निर्णय थाइं ईनरो निर्णय करो परीक्षक गीतार्थंगी आज्ञा प्रमाण कहइं। अनिश्चित अर्थ–साचोइं कहइं ता–परीक्षक अपवादमां पडइ,–उक्तं च 'सम्मतिमहातर्के'—

" एयंता सब्भूयं, सब्भूयमणिच्छियं च वयमाणो।
लोइ अपरिच्छयाणं, वयणिज्जपहे पडइ वाई ॥ ३–५९ ॥"

अर्थ—एकांतइं असद्भूत अर्थ दूर रहो, सद्भूत अर्थ पणि जो अनिश्चित क० संदेहाक्रान्त कहइं तो–वादी लौकिक अने परीक्षक जे लोक तेहनो–वचनीयपथ क० निंदामार्ग तेहमां पडे, ते माटे संदेह न करवो।[1]

આ જ એમની ગ્રંથરચનાનું જીવનભરનું ધ્યેય રહ્યું હતું. એમની ગુણજ્ઞ સારગ્રાહી દૃષ્ટિ કેટલી વ્યાપક અને આત્માભિમુખ હતી? તે તેમણે 'પાતંજલ યોગદર્શન' ઉપર વૃત્તિ લખીને તથા 'અધ્યાત્મસાર'માં 'ગીતા'ના શ્લોકોનો સમન્વય કરીને બતાવી છે.[2] દિગમ્બર માન્યતાનું ઊંડે ઊતરીને બુદ્ધિગ્રાહ્ય રીતે ખંડન કર્યું છે. તથાપિ ધુરંધર નૈયાયિક શ્રીવિદ્યાનંદિની 'અષ્ટસહસ્રી' ઉપર ટીકા રચી પોતાની ન્યાયાચાર્યતાને દિપાવી છે. એ વિશે આપણે વિદ્વાન પંડિત શ્રીસુખલાલજીના શબ્દોમાં જોઈએ:

" (ग) वाचक यशोविजय....श्वेताम्बर संप्रदायमें ही नहिं किंतु सम्पूर्ण जैन संप्रदायमें सबसे अंतमें होनेवाले सर्वोत्तम प्रामाणिक विद्वानके तोर पर प्रसिद्ध है। इनकी संख्याबद्ध कृतियां उपलब्ध हैं, सत्रहवीं–अठारवीं शताब्दी तक होनेवाले न्यायशास्त्रके विकासको अपना कर इन्होंने जैनश्रुतको तर्कबद्ध

૧. કાગળ : પૃષ્ઠ ૮૬–૮૭.
૨. તત્ત્વાર્થસૂત્ર હિંદીવિવેચન–પરિચય : ('જૈનતર્કભાષાની પ્રસ્તાવના'માંથી ઉતારા જૈનપત્રે આપ્યા છે).

किया है और भिन्न भिन्न विषयों पर अनेक प्रकरण लिखकर जैन तत्त्वज्ञानके सूक्ष्म अभ्यासका मार्ग तैयार किया है (पृ. २६)

(घ) खण्डित वृत्ति—भाष्य पर तीसरी वृत्ति उपाध्याय यशोविजयकी है। यदि पूर्ण मिल जाती तो सत्रहवीं अठारवीं शताब्दी तक प्राप्त होनेवाले भारतीय दर्शनशास्त्रके विकासका एक नमूना पूर्ण करती। ऐसी वर्तमानमें उपलब्ध इस वृत्तिका एक छोटेसे खंडसे कहनेका मन हो जाता है। यह खण्ड प्रथम अध्यायके ऊपर भी पूरा नहीं और इसमें उन्होंने दो वृत्तियोंके समान ही शब्दशः भाष्यका अनुसरण कर विवरण किया है। ऐसा होने पर भी इसमें जो गहरी तर्कानुगामी चर्चा, जो बहुश्रुतता और जो भावस्फोटन दिखाई देता है वह यशोविजयकी न्यायविशारदताका निश्चय कराता है।

પણ તમે કહેશો કે આવું લખવાનું તેમને પ્રયોજન શું હશે?—

" किं नामस्मरणेन न प्रतिपदा किं वा पिता कानयोः,
संबन्धः प्रतियोगिना न सदृशो भावेन किं वा द्वयोः।
तद्रूपं द्रव्यमेव वा जडमते त्वाद्यं द्वयं वा त्वया,
स्यात् तर्कादन एव कुम्भकमुखे दत्तो मषीकूर्चकः॥ " —(પ્રતિમાશતક)

અમે કહીએ છીએ કે તમે એના આંતર મર્મમાં પ્રવેશો, અને પૂછો કે આ શબ્દો સપ્રયોજન છે કે નહિ? નિક્ષેપ, તેમાં મુખ્યત્વે સ્થાપનાનિક્ષેપનું સ્વરૂપ નય પક્ષને આગળ કરી તેમણે અત્યંત સૂક્ષ્મ રીતે સમજાવ્યું છે.

જેને આ સમજવાની બુદ્ધિ નથી છતાં ધૃષ્ટતા કરે તેને બીજો શો જવાબ ઘટે? અને એવા હઠાગ્રહીઓની, ખોટા ક્રિયાડંબર કરનારાઓની, દાંભિકોની, અજ્ઞાનપ્રવર્તકોની એમણે સખત હાથે ખબર લીધી છે. એ એમના જ્ઞાનપ્રકાશનો તાપ છે, જે તાપ મિથ્યાત્વના શિશિરનું વિસર્જન કરી સમ્યક્ત્વની વસંતને વિકસિત કરે છે. વાણી અંગે તેઓ કહે છે:—

" નહિ વિષમ પણ કવિનું, વચણ સાહિત્યે સુકુમાર;
અહિગજગંજન પણ કવિન, નારી મૃદુ ઉપચાર. " —(જંબૂસ્વામી રાસ)

હવે બીજો મુદ્દો જોઈએ. આ વિષે અમને પારાવાર આશ્ચર્ય થાય છે કે, કદી આ એ પુરુષોના અંતરમાં ઊતરી. તેમને પિછાનવાની, આવી વાતો પ્રચલિત કરનારાઓએ તસ્દી લીધી છે? યા એટલી પરીક્ષક શક્તિ કેળવી છે? જે જનરંજન અણુવાંછુ—આનંદઘને અન્ય વસ્તુઓમાંથી આનંદને ઉપાડી લઈ આત્મામાં જ સ્થાપિત કર્યો છે. આત્મદર્શન, તેની તાલાવેલી, તેમાં જ મગ્નતા પ્રાપ્ત નિજ આનંદઘન સ્વરૂપનો આસ્વાદ—એ સિવાય અન્ય કોઈ વસ્તુ એમની નજર સમક્ષ નથી. 'એ જ નિરંજન એ જ પરમધન' એટલી નિશ્ચયાત્મક દૃઢતા ધારણ કરનાર આત્માનંદીને લબ્ધિસિદ્ધિના સંરક્ષણની ચિંતાવાળો ચીતરવો એમાં આપણી પામરતાનું દર્શન નથી થતું?

અને એવી રીતે શ્રુતસમુદ્રના પાનથી જેઓ પ્રજ્ઞાવાન છે,[1] જેણે મહામોહ હરિને મેદાનમાં જીતી લીધો છે,[2] અને જેની દુવિધા અચિરાસુત શાંતિ (વિશુદ્ધ આત્મસ્વરૂપ પરમાત્મા) પ્રભુના ગુણગાનમાં ભુલાઈ ગઈ છે, જેમાંથી નિષ્પન્ન થતો સમતારસ-તેના પાનથી ચિદાનંદની મોજ માણી રહ્યો છે, જેની આગળ હરિહર, બ્રહ્મા, કે પુરંદરની ઋદ્ધિ કાંઈ વિસાતમાં નથી,[3] જેને શાંતિ સ્વરૂપ પરમાત્મપ્રભુથી સમકિત દાન પામી-દીનતા ગઈ છે,[4] તેને લબ્ધિસિદ્ધિનો ઇચ્છુક દીન અને તે માટે ઉત્સુક બતાવવો[5] તેમાં આપણી બાલિશતા સિવાય બીજું શું છે?

પ્રથમ વાત તો-દેહ સિવાય કોઈ પણ વસ્તુ વગરના એકાકી અરણ્યમાં વિચરતા, નિજાનંદમાં મસ્ત આનંદઘન પાસે કાગળ, મસી, કાઠું આવ્યાં ક્યાંથી? ગ્રામ-ગામાંતરના

---

૧. अदृष्टार्थेऽनुधावन्तः, शास्त्रदीपं विना जडाः । प्राप्नुवन्ति परं खेदं, प्रस्खलन्तः पदे पदे ॥५॥
अज्ञानाहिमहामन्त्रं, स्वाच्छन्द्यज्वरलङ्घनम् । धर्मारामसुधाकुल्यां, शास्त्रमाहुर्महर्षयः ॥७॥
शास्त्रोक्ताचारकर्ता च, शास्त्रज्ञः शास्त्रदेशकः । शास्त्रैकदृग् महायोगी, प्राप्नोति परमं पदम् ॥८॥
—જ્ઞાનસાર-શાસ્ત્રાષ્ટક.

૨. विकल्पचषकैरात्मा, पीतमोहासवो ह्ययम् । भवोच्चतालमुत्तालप्रपञ्चमधितिष्ठति ॥५॥
निर्मलस्फटिकस्येव, सहजं रूपमात्मनः । अध्यस्तोपाधिसंबन्धो, जडस्तत्र विमुह्यति ॥६॥
—જ્ઞાનસાર-મોહાષ્ટક.

"હરાવ્યો અનુભવ જોર હતો જે, મોહમલ્લ જગ લૂંટો; પરિપરિ તેહના મર્મ દેખાડી,
ભારે કીધો ભૂંટો રે. મુજ સાહિબ જગનો તૂઠો.
ઉદક પયોમૃત કલ્પ જ્ઞાન તિહાં, ત્રીજો અનુભવ મીઠો; તે વિણ સકલ તૃષા કિમ ભાંજે,
અનુભવ પ્રેમ ગરીઠો રે."
—શ્રીપાલ રાસ, ખંડ : ૪, ઢાળ : ૧૩.

व्यवहार कुदृष्ट्योच्चैरिष्टानिष्टेषु वस्तुषु । कल्पितेषु विवेकेन, तत्त्वधीः समतोच्यते ॥२२॥
—યોગભેદ-દ્વાત્રિંશિકા.

ज्ञानध्यानतपःशीलसम्यक्त्वसहितोऽप्यहो । । तं नाप्नोति गुणं साधुर्यमाप्नोति शमान्वितः ॥५॥
—જ્ઞાનસાર-શમાષ્ટક.

૩. "હરિ સુરઘટ-સુરતરૂકી સોભા, તે તો માટી કાઠો રે"
—(શ્રીપાલરાસ : ખંડ ૪, ઢાળ : ૧૩-૧૨).

૪. 'હમ મગન ભયે પ્રભુ ધ્યાનમેં' —એ આખું શાંતિનાથ સ્તવન.

૫. 'ઋદ્ધિ-વૃદ્ધિ પ્રગટી ઘટમાંહી, આતમ રતિ રોઈ બેઠો.' —(શ્રી. રા. ખંડ ૪, ૧૩-૧૧).
'ક્લેશે વાસિત મન સંસાર, ક્લેશ રહિત મન તે ભવપાર;
જો વિશુદ્ધમન ઘર તુમે આવ્યા, પ્રભુ તો અમે નવે નિધિ રિધિ પાયા.'
—(વાસુપૂજ્ય સ્તવન)

बाह्यदृष्टिप्रचारेषु मुद्रितेषु महात्मनः । अंतरे वावभासन्ते, स्फुटाः सर्वाः समृद्धयः ॥१॥
—જ્ઞાનસાર-સર્વસમૃદ્ધિઅષ્ટક.

જાણકાર યશોવિજયજીનો પત્તો મેળવી તેમને કાગળ પહોંચાડનાર માણસ તેમની પાસે ક્યાંથી? આ વિચારનો વિષય છે.

યોગીજનમાં યોગથી અનેક લબ્ધિસિદ્ધિઓ ઉત્પન્ન થાય છે. 'પાતંજલ યોગદર્શન' (ત્રીજા વિભૂતિપાદ)માં જ્ઞાન, મનોબળ, વચનબળ, શરીરબળ આદિ વિભૂતિઓ યોગથી પ્રાપ્ત થવાનું તથા વૈક્રિય, આહારકલબ્ધિ, અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન આદિ સિદ્ધિઓ યોગનું ફળ હોવાનું વર્ણન છે.[1] આ ઉપરથી આપણે જોઈ શકીએ છીએ કે યોગવિભૂતિઓ આત્માની વિશુદ્ધ સ્થિતિની સહચારી છે તેને છૂટી પાડી વિનિમયનો પદાર્થ બનાવી શકાય એવી એ નથી હોતી. એ જો આપણી સમજમાં ઊતરે તો ઉપરની વાતોની સ્પષ્ટતા થઈ જાય.

આનંદઘનજી મહાયોગી હતા અને તેમને યોગવિભૂતિઓ હોવા વિષે કશો શક નથી. પણ યોગીપુરુષો યોગલબ્ધિનો ઉપયોગ કરતા નથી, એમ મહર્ષિ શ્રીહરિભદ્રાચાર્ય 'યોગ-દૃષ્ટિસમુચ્ચય'માં કહે છે. પણ વિશેષદર્શી લોકો, 'વિક્રમોર્વશીય'માંની[2] ઉર્વશીએ હવામાંથી પોતાની દિવ્યશક્તિ વડે ભોજપત્ર ઉત્પન્ન કર્યું અને તે ઉપર લેખ લખી પુરુરવા રાજાને મોકલ્યો હતો; તેમ શ્રીઆનંદઘનજીએ પોતાની પાસેની દિવ્ય લબ્ધિસિદ્ધિથી આ બધું કર્યું! એમ મનાવવા પ્રયત્ન કરે તો આપણે એ માટે આશ્ચર્ય પામીશું નહિ; પણ એમણે એટલું વિચારવા જરા થોભવું જોઈએ કે, આપણે આ રીતે આ મહામાન્ય પુરુષોની ક્રૂર મશ્કરી તો કરતા નથી ને?

અમને પ્રશ્ન તો એ થાય છે કે, આવી બાતમી મેળવી કોણે? શું આનંદઘનજી એવા ઓછાપેટના-છીછરા મનના હતા કે તેમણે પોતાની આ મનોગત વાત બીજા આગળ પ્રગટ કરી! અને યશોવિજયજીની બિનલાયકાત ઉઘાડી પાડી! યશોવિજયથી વધારે પાત્ર કોણ હતું કે જેના આગળ આ પેટની વાત તેમણે કરી કે, જેણે લોકોને તેની જાણ કરી!

અથવા એમ તો કાંઈ હતું નહિ કે, કોઈ મનઃપર્યવ જ્ઞાની આ બન્ને પુરુષના જીવન ઉપર અથથી ઇતિ સુધી પોતાના જ્ઞાનનો સતત ઉપયોગ રાખી રહ્યા હોય અને તે લોકોને કહેતા ફરતા હોય? આનો કોઈ સંતોષકારક જવાબ છે? વસ્તુતઃ આ વિશે બેમાંથી એકેયે કાંઈ કહ્યું નથી. શ્રીયશોવિજયજીનું આંતર મન કેવું હતું તે આ તેમની રચના જ તેમના ખુલ્લા પેટનો એકરાર કરી બતાવે છેઃ

> जागर्ति ज्ञानदृष्टिश्चेत्, तृष्णाकृष्णाहिजाङ्गुली ।
> पूर्णानन्दस्य तत् किं स्यात्, दैन्यवृश्चिकवेदना ।।४।। —જ્ઞાનસાર-પૂર્ણાષ્ટક
>
> छिन्दन्ति ज्ञानदात्रेण, स्पृहाविषलतां बुधाः ।
> मुखशोषं च मूर्च्छां च, दैन्यं यच्छति यत् फलम् ।।२।। —જ્ઞાનસાર-નિઃસ્પૃહાષ્ટક

---

૧. પંડિત સુખલાલજી કૃત 'ચોથા કર્મગ્રંથનો હિંદી અનુવાદ' પ્રસ્તાવના : પૃષ્ઠ : ૫૩.

૨. કર્તા મહાકવિ કાલિદાસ.

रूपे रूपवती दृष्टिर्दृष्ट्वा रूपं विमुह्यति ।
मज्जत्यात्मनि नीरूपे, तत्त्वदृष्टिस्त्वरूपिणी ॥१॥
भ्रमवाटी बहिर्दृष्टिर्भ्रमच्छाया तदीक्षणम् ।
अभ्रान्तस्तत्त्वदृष्टिस्तु, नास्यां शेते सुखाशयाः ॥२॥ —જ્ઞાનસાર—તત્ત્વદૃષ્ટિઅષ્ટક.

चित्तेऽन्तर्ग्रन्थिगहने, बहिर्निर्ग्रन्थता वृथा ।
त्यागात् कञ्चुकमात्रस्य, भुजगो नहि निर्विषः ॥४॥ —જ્ઞાનસાર-પરિગ્રહાષ્ટક.

संसारे निवसन् स्वार्थसज्जः कज्जलवेश्मनि ।
लिप्यते निखिलो लोको, ज्ञानसिद्धो न लिप्यते ॥१॥

नाहं पुद्गलभावानां, कर्ता कारयितापि च ।
नानुमन्तापि चेत्यात्मज्ञानवान् लिप्यते कथम् ? ॥२॥ —જ્ઞાનસાર—નિર્લેપાષ્ટક.

शरीररूपलावण्यग्रामारामधनादिभिः ।
उत्कर्षः परपर्यायैश्चिदानन्दघनस्य कः ॥७।

निरपेक्षानवच्छिन्ना, न ते चिन्मात्रमूर्तयः ।
योगिनो गलितोत्कर्षापकर्षानल्पकल्पना ॥८॥ —જ્ઞાનસાર—અનાત્મશંસાષ્ટક.

આ ઉપર દૃષ્ટિ નાખ્યા પછી શું સમજાય છે? તમે કહેશો કે અને સહુ કોઈ કહે છે—આ આનંદઘનજી સાથેના—પાછલી અવસ્થામાં—થયેલા સમાગમનું આ ફળ છે; પણ તેમ નથી. આ એમની યોગાભ્યાસસાધિત—આંતર મુખતા—સ્વસ્વરૂપ સ્થિરતા છે, તેજ 'દ્રવ્યગુણ-પર્યાય રાસ'માં[1] સહજરૂપમાં જોઈએ છીએ. એમાં એમણે 'પાતંજલ—યોગદર્શન'માંના[2] સમાપત્તિ સ્વરૂપનો ખ્યાલ આ પ્રકારે આપ્યો છે:—

' अस्मिन् हृदयस्थे सति, हृदयसत्त्वतो मुनीद्रः ।
इति हृदयस्थिते च तस्मिन्, नियमात् सर्वार्थसिद्धिः ॥१॥
चिन्तामणिः परोऽसौ. तेनेयं भवति समरसापत्तिः ।
सैवेह योगिमाता, निर्वाणफला [बुधैः] प्रोक्ता ॥२॥

---

१. આ રાસ તથા 'સાડી ત્રણસો ગાથાનું સ્તવન,' દિગમ્બરીય પ્રભાચંદ્રસૂરિના 'સમાધિશતક'નો ગુજરાતી અનુવાદ અને 'સમતાશતક' સં. ૧૭૦૯ પહેલાં રચાયાનું અમારા બીજા લેખ 'ગુજરાતી કૃતિઓની સાલવારી'માં સાબિત કર્યું છે.

२. क्षीणवृत्तेरभिजातस्येव मणेर्ग्रहीतृग्रहणग्राह्येषु तत्स्थतदञ्जनता समापत्तिः ॥१—४१॥
तत्र शब्दार्थज्ञानविकल्पैः संकीर्णा सवितर्का समापत्तिः ॥१—४२॥
'દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ' ગાથા ૨૭૦ બાલાવબોધમાં —समापत्तिलक्षणं चेदम्—
मणेरिवाभिजातस्य, क्षीणवृत्तेरसंशयम् । तात्स्थ्यात् तदञ्जनत्वाच्च, समापत्तिः प्रकीर्तिता ॥

" મુજ મન અણુ માંહે ભક્તિ છે, ઝાઝા રી રે તેહ દરીનો તું છે માછી રે;
યોગી પણ જે વાત ન જાણે રે, તેહ અચરિજ કુણથી હુઓ તાણે રે.
લઘુ પણ હું તુમ મન નવિ માવું રે, જગગુરુ તુમને દિલમાં લાવું રે;
અચરિજવાલે અચરિજ કીધું રે, ભક્તે સેવક કારજ સીધું રે. "

—(સુવિધિજિન સ્તવનમાંથી)

વાચક શ્રીયશોવિજયજીની[1] છબી ઉપરથી વસ્ત્રાવરણ દૂર થતાં એમની ચિત્રમૂર્તિનું દર્શન તો થયું પણ[2] એમના અંતર દર્શન માટે હજુ એક પટ ખસેડવાની જરૂર હતી. એ કાર્ય મેં આ રીતે યથાશક્તિ, યથામતિ કર્યું છે અને એ રીતે જે એ શ્રુતદેવતાની મૂર્તિ પ્રત્યક્ષ થઈ,[3] તેનો ખ્યાલ આપુ છું.

" इयमुचितपदार्थोल्लापने श्रव्यशोभा, बुधजनहितहेतुर्भावनापुष्पवाटी ।
अनुदिनमित एव ध्यानपुष्पैरुदारैर्भवतु चरणपूजा जैन–वाग्देवतायाः ॥१॥ "

મમ રંક જન પાસે પોતાનાં ફૂલ નહિ હોવાથી–આ એમની શ્રુતવાટિકામાંથી ચૂંટેલાં પુષ્પવડે પૂજા કરું છું અને ભક્તિથી ઉભરાતા હૃદયે નતમસ્તકે વંદન કરી કૃતાર્થ થાઉં છું.

---

१. पं. सुखलालजी—उमास्वाति अपनेको वाचक कहते हैं इसका अर्थ पूर्ववित् करके पहेलेसे ही श्वेतांबराचार्य उमास्वातिको पूर्ववित् रूपसे पहचानते आए हैं (तत्त्वार्थविवेचन–परिचय पृष्ठः १८)

યશોવિજયજી પણ એ જ અર્થમાં વાચક હતા જેથી અમે બીજાં બધાં વિશેષણો છોડી એ વાપર્યું છે.

२. समाधिर्नन्दनं धैर्यंदम्भोली समताशची । ज्ञानं महाविमानं च वासवश्रीरियं मुनेः ॥
इत्यादि–श्रीपुण्डरीकाध्ययनस्यार्थोऽप्येवं भाति ॥ द्र. गु. रास ढाळ, ५, ८ गाथा २१ નો बाळावबोध.

३. तपःश्रुतादिनामतः क्रियावानपि लिप्यते । भावनाज्ञानसंपन्नो निष्क्रियोऽपि न लिप्यते ॥५॥
—જ્ઞાનસાર–નિર્લેપાષ્ટક.

ક્યાં આ એ પોતે અને ક્યાં લોક ?—

જેહ અહંકાર મમકાર બંધનં, શુદ્ધનયને દહે દહન જેમ ઈંધનં.–(૩૫૦ ગાથાનું સ્ત. ઢાળ ૧૬–૯)

૨. દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસમાં–આશીર્વચન પછી આપેલું કાવ્યઃ ગતપાર–તે પ્રાપ્તપાર–એહવા ગુરુ તે કહેવા છે? સંસારરૂપ સાગર તેહનો–તરણતારણ વિષે...તરી સમાન છઈ–તરી એહવો નામ જિહાજનો છઈ–તેહ મેં ભાખી...સુજનને ભલા લોક, સત્સંગતિ૬૦ આત્મદ્રવ્યે ૫ટ્–દ્રવ્યના ઉપલક્ષણ ઓલખણહાર તેહને–રમણિક સુરતરુ–જે કલ્પવૃક્ષ તેહની મંજરી સમાન છે. जसविजय બુધને જયકરી–જયકારણી–જયની કરણહારી અવશ્ય જસ–સૌભાગ્યની દાતા છે. એહની भगवद्वाणी चिरं जीयात्–इत्याशीर्वादवचनम् ॥

★

ही है; पर इसमें शक नहीं कि कोइ बौद्ध या कोइ वैदिक विद्वान आज तक ऐसा नहीं हुआ है जिसके ग्रन्थके अवलोकनसे यह ज्ञान पडे कि वह वैदिक या बौद्धशास्त्रके उपरांत जैन शास्त्रका भी वास्तविक गहरा और सर्वव्यापी ज्ञान रखता हो। इसके विपरीत उपाध्यायजी जैन थे इसलिए जैनशास्त्रका गहरा ज्ञान तो उनके लिये सहज था पर उपनिषद्, दर्शन आदि वैदिक ग्रन्थोंका तथा बौद्ध ग्रन्थोंका इतना वास्तविक परिपूर्ण और स्पष्ट ज्ञान उनकी अपूर्व प्रतिभा और काशी सेवनका ही परिणाम है।

ઉપાધ્યાયજીકૃત पातञ्जल-योगदर्शन-वृत्ति, तथा हारिभद्री योगविंशिका-टीकानुं હિન્દી સારસહિત – વિક્રમ સંવત્ ૧૯૭૮, ઈ. સ. ૧૯૨૨ માં સંપાદિત ગ્રંથમાં તેનો પરિચય આપતાં પંડિત સુખલાલે જે લખ્યું છે એ એમના ગુજરાતી ઉપરાંત સંસ્કૃત, પ્રાકૃત સાહિત્યના અવગાહનની ભારે અગત્યતા સમજાવે છે. પણ એ કઠણ કાર્ય પંડિતજીના અધિકારનું જ હોઈ એમના માટે રહેવા દઈશું.[1]

એમનું જીવન 'સુજસવેલી ભાસ' નામની ગુજરાતી પદ્યકૃતિમાં સામાન્ય રીતે સંગ્રહાયેલું મળે છે,[2] જેના કર્તા મુનિ શ્રીકાંતિવિજય કે જે તપગચ્છના શ્રીકીર્તિવિજય ઉપાધ્યાયના શિષ્ય શ્રીવિનયવિજય ઉપાધ્યાયના ગુરુભ્રાતા હોય એમ મનાય છે. કાંતિવિજયે[3] આ ગુરુભ્રાતાનો સંબંધ પોતાની 'સંવેગરસાયન બાવની' નામની પદ્યકૃતિમાં બતાવ્યો છે.[4] તેમ શ્રીવિનયવિજયોપાધ્યાયે 'હૈમલઘુપ્રક્રિયા' વ્યાકરણ કવિ કાંતિવિજય માટે બનાવ્યું

---

૧. પ્રસંગ પ્રાપ્ત થતાં પંડિતજીએ ઉ૦ યશોવિજયજી માટે બે શબ્દો કહેવાની ઇચ્છાને રોકી નથી. એમાંના કેટલાકનું અવતરણ યથાસ્થાન પર અમે આપ્યું છે.

૨. શ્રી. મોહનલાલ દ. દેસાઈએ સં. ૧૯૮૭માં 'જૈન ગૂર્જર કવિઓ' ભા. ૨ પ્રસિદ્ધ કર્યો, ત્યારે તેમને છૂટક-તૂટક 'સુજશવેલી ભાસ'ની પ્રતિ મળેલી તે આધારે તેમણે થોડુંક લખેલું. પછી આખી 'સુજશવેલી ભાસ'ની પ્રતિ મળતાં તે સં. ૧૯૯૦માં પ્રસિદ્ધ કરી; ત્યારે તેમણે નિશ્ચયપૂર્વક પોતાનો મત પ્રદર્શિત કર્યો.

૩. બીજા કાંતિવિજય તપગચ્છના શ્રીવિજયપ્રભસૂરિના શિષ્ય પ્રેમવિજયના શિષ્ય હતા. તેમણે સં. ૧૭૬૯માં માગશર સુદિ ૧૧ ના દિવસે 'એકાદશી સ્તવન' ડભોઈના ચોમાસા વખતે, 'મહાબલ-મલયસુંદરી રાસ' સં. ૧૭૭૫માં વૈશાખ સુદિ ૩ના દિવસે પાટણમાં, ત્યાં જ સં. ૧૭૭૮ના માગશર સુદિ ૧ના રોજ 'ચોવીશી, અષ્ટમી' વગેરે સ્તવનો સાથે છેલ્લી સાલમાં 'સૌભાગ્યપંચમી મા. ગ.' 'શ્રી નેમિજિન સ્તવન' સં. ૧૭૯૯ શ્રાવણ સુદિ ૫ને રવિવારે પાલનપુરમાં રચેલ છે. એમની શિષ્યપરંપરા પણ લખે છે. (જૈ૦ ગૂ૦ ક૦ ભા. ૨. પૃષ્ઠઃ ૫૨૬-૩૧)—એમણે 'સુજશવેલી ભાસ' રચ્યાનો ઉલ્લેખ મળતો નથી. એટલે આપણે ઉપરનો દેસાઈનો મત સ્વીકારીશું.

૪. શ્રીગુરુ હીરસૂરીંદના, શ્રીકીર્તિવિજય ઉવજ્ઝાય;
તેહના ચરણ સુપસાયથી, મેં કીધી એહ સજ્ઝાય.
ગુરુભ્રાતા ગુરુસારિખા, શ્રીવિનયવિજય ઉવજ્ઝાય;
ગ્રંથ બે લાખ જેહણે કર્યો, વાદી મદ ભંજનહાર.

તે સાથે પોતાના સંબંધની હકીકત પણ કહી છે.[1]

આ ઉપરથી આપણે શ્રીકાંતિવિજયજીની યોગ્યતા નક્કી કરીશું. એક તો તેઓ ગુણ-પરીક્ષક હોઈ ગુણના સાચા રાગી છે. ઉપાધ્યાય શ્રીવિનયવિજય અને યશોવિજયના તેઓ સમસામયિક હોવા છતાં બીજાઓની માફક તેજોદ્વેષથી ન દોરાતાં ઉપાધ્યાય વિનયવિજય પોતાના ગુરુભ્રાતા અને ઉપાધ્યાય યશોવિજય અન્ય સંઘાડાના હોવા છતાં તેમના ગુણોનું પ્રામાણિકપણે વર્ણન કર્યું છે. શ્રીયશોવિજયજીએ પાસત્થા, કુશીલિયા, વેશવિડંબક એવા કુચારિત્રિયા, પરિગ્રહી, મતાગ્રહી એવા વિપરીત પ્રરૂપકો સામે પ્રચંડ હાથે કલમ ઉપાડેલી એટલે એમના શત્રુઓ ઘણા હતા! તેમણે ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયને ઘણો ત્રાસ આપવા સાથે વિદ્યાના મદમાં ભરપુર અભિમાની, લોકૈષણાના લોલુપી, અને એ માટે ગ્રંથો બનાવનાર બાહ્યભાવમાં રહીને ખંડનમંડનમાં પડી જનાર આંતર જ્ઞાનરહિત એવી એવી અનેક નિંદાઓ કરી છે.[2] જ્યારે કાંતિવિજય એમને માટે કહે છે:—

" શ્રી યશોવિજય વાચકતણા હું તો ન લહું ગુણ વિસ્તારો રે;
ગંગાજળ કણિકા થકી, એહના અધિક ઉપગારો રે.

વચન સરસ સ્યાદ્વાદના, જસ નિગમ આગમ ગંભીરો રે;
ઉપનિષદ્ જિમ વેદના, જસ કવિ ન લહે કોઈ ધીરો રે.

શીતલ પરમાનંદિની, શુચિ વિમલ સ્વરૂપા સાચી રે;
જેહની રચના ચંદ્રિકા, રસિયા જણ સેવે રાચી રે.

લઘુ બાંધવો હરિભદ્રનો, કલિયુગમાં એ થયો બીજો રે;
છતા યથારથ ગુણ સુણી, કવિયણ બુધ મત ખીજો રે.

સંવેગી શિર સેહરો, ગુરુ જ્ઞાનરયણનો દરિયો રે;
કુમત તિમિર ઉચ્છેદવા, એ તો બાલારુણ દિનકરિયો રે. "

આ કૃતિમાં જણાવ્યા પ્રમાણે ઉપાધ્યાયજીનું સં. ૧૭૪૩ના ડભોઈના ચોમાસામાં સ્વર્ગગમન થયા પછી, પાટણના સંઘના અતિઆગ્રહથી આ કૃતિ બની છે, જેની સાલ સદ્દગત શ્રીમોહનલાલ દ. દેસાઈ સં. ૧૭૪૫ આસપાસ માને છે.[3] એટલે તેની વિશ્વસનીયતા વિશે કશી શંકા રહેતી નથી.

---

૧. कान्तिविजयाख्यगणिनः, पठनकृते कृतधियः सतीर्थ्यस्य ।
विहितोऽयं यत्नः सफलः स्यात् सर्वप्रकारेण ॥

આ ગ્રંથ સ્વોપજ્ઞ ટીકા સહિત સં. ૧૭૧૦માં રાધનપુરમાં બનાવ્યો છે. સં. ૧૭૧૨ની હાથપોથીમાં આ શ્લોક પ્રશસ્તિ સાથે આપેલો છે. જૈનધર્મ પ્રસારક સભાએ આ વ્યાકરણ છપાવ્યું છે તેમાં આ શ્લોક નથી.

૨. આ દોષારોપણ લેપ એટલો તીવ્રરૂપે લેપિત છે કે તે હજુ સુધી ભૂંસાયો નથી કે ધવાયો નથી.

૩. "જૈન ગુર્જર કવિઓ" ભા. ૨, પૃ. ૧૮૧.

જયસોમ પંડિત[1] કે જે તપગચ્છની ૫૬ મી પાટે થયેલા આનંદવિમળ, તેમના સોમવિમલ ઉપાધ્યાય, તેમના પાઠક હર્ષસોમ, તેમના યશઃસોમના શિષ્ય હોઈ જેમને 'બાર ભાવનાની ૧૨ સજ્ઝાય' 'ભાવનાવેલી' સં. ૧૭૦૩ જેસલમેરમાં; 'ચૌદ ગુણ-સ્થાનક સ્વાધ્યાય' આ પદ્યકૃતિઓ સાથે છ કર્મગ્રંથનો ૧૭૦૦૦ શ્લોકસંખ્યા જેટલો (ગદ્ય) બાલાવબોધ' સં. ૧૭૧૬ માં લખ્યો છે. તેઓ તેમજ બીજા અનેક ગુણજ્ઞ પંડિત મુનિઓ જેમના અદોષ ચરણ સેવે તે યશોવિજયજી કેવી મહાન વિભૂતિ હશે તેની કલ્પના કરો. શ્રીવિનયવિજય ઉપાધ્યાય જેમની ગીતાર્થતાનાં બહુમાન વાચક શ્રીયશોવિજયજીએ 'શ્રીપાલ રાસ'માં કર્યાં છે, જે રાસ ઉ૦ વિનયવિજયે રચતાં રચતાં અધૂરો રહી જતો હતો તે પૂરો કરવા ઉ૦ યશોવિજયજીને ભલામણ કરેલી તે ઉપરથી તેમણે પૂર્ણ કર્યો; જેમાં તેમણે પોતાની ગુણાનુરાગિતા પ્રગટ કરી છે.

ઉપાધ્યાય માનવિજય,[2] જેઓ તપગચ્છની અણસૂર શાખા, જેમના નામથી ઓળખાઈ તે ૬૧ મી પાટવાળા વિજયાનંદસૂરિના શિષ્ય શાંતિવિજય ગણિના શિષ્ય જેમણે ૬૨ મી પાટવાળા વિજયરાજસૂરિના રાજ્યમાં 'નયવિચાર, ચોવીસી, સુમતિ-કુમતિ (જિનપ્રતિમા) સ્તવન' તથા કેટલીક સજ્ઝાયો વગેરે લખેલી.[3] તેમણે પોતાનો 'ધર્મસંગ્રહ' ગ્રંથ યશોવિજય પાસે તેમને શ્રુતકેવલી માની શોધાવેલો.[4]

---

૧. પંડિત સુખલાલજીએ એમના 'કર્મગ્રંથ' ઉપરના વિવેચનમાં સ્તુતિ કહ્યા છે. તેમનું કર્મગ્રંથ વિશે જ્ઞાન કેટલું ઊંડુ અને વ્યાપક હતું તે તેમણે કાર્મગ્રંથિક અને સૈદ્ધાંતિક મતભેદના વિષયમાં જે સૂક્ષ્મ આલોચના કરી છે તે ઉપરથી જણાઈ આવે છે. આ નોંધો પંડિત સુખલાલજીએ તારવી છે. બાલાવબોધની પ્રથમ પ્રતિ તેમના જ શિષ્ય કલ્યાણસોમે લખી હતી.

૨. શ્રીમાનવિજય તપગચ્છના વિજયસિંહસૂરિના શિષ્ય જયવિજયના શિષ્ય હોઈ, 'શ્રીપાલ રાસ, સં. ૧૭૦૨ (૪) આસો સુદ ૧૦ સોમવારે પીલવણમાં લખ્યો છે, જેની શ્રીમાલવદેસે શાહપુરે સં. ૧૭૧૫ વૈશાખ સુદિ ૭ બુધે-સચિત્ર પ્રતિ પત્ર ૩૧,૧૬ સે. લા. વડો. નં. ૧૧૭૧ છે, પણ આ ઉપાધ્યાય નથી.

૩. 'સુમતિ-કુમતિ સ્ત૦ ના અંતે તપાગચ્છના-ભટ્ટારક શ્રીવિજયાણંદસૂરિશિષ્ય પંડિત શ્રીશાંતિ-વિજયગણિ શિષ્ય મહોપાધ્યાય-પંડિતશિરોમણિ શ્રીમાનવિજય ગણિઈં સજ્ઝાય કીધો-તેહનો ટબાર્થ પણિ ધર્માર્થી જનની પ્રાર્થનાઇં, ઉ. શ્રીમાનવિજયગણિએ લખ્યો, સં. ૧૭૨૮ ચૈત્ર સુદિ ૫ રવૌ ભ. શ્રીવિજય-રાજસૂરિ-રાજ્યે સજ્ઝાય સં. પોથી લિ. ૧૭૪૩ માગસર માસે શુક્લપક્ષે પ્રતિપદાતિથૌ ભૃગુવારે; સ્તંભતીર્થ ...લખાપિત. (અમારાથી ધર્મસંગ્રહની પટ્ટાવલી જોવાનું બન્યું નથી.)

૪. सत्तर्ककर्कशधियाऽखिलदर્शनेषु, मूर्धन्यतामधिगतास्तपगच्छधुर्याः ।
काश्यां विजित्य परयूथिकपर्षदोऽग्र्या, विस्तारितप्रवरजैनमतप्रभावाः ॥
तर्कप्रमाणनयमुख्यविवेचनेन, प्रोद्बोधितादिममुनिश्रुतकेवलित्वाः ।
चक्रुर्यशोविजयवाचकराजिमुख्याः, ग्रन्थेऽत्र मय्युपकृतिं परिशोधनाद्यैः ॥

તર્ક, પ્રમાણ, નયનું મુખ્યપણું જેમાં છે એવા વિવેચન વડે જેમણે અગાઉના મુનિઓનું શ્રુતકેવલિપણું પ્રબોધ્યું છે એટલે પોતાના જ્ઞાનથી બતાવી આપ્યું છે કે અગાઉના શ્રુતકેવલી આવા હોય એવા અને વાચકગણમાં મુખ્ય યશોવિજયે આ ગ્રંથમાં પરિશોધન આદિથી મારા ઉપર ઉપકાર કર્યો છે. -(ધર્મસંગ્રહ રચનાસાલ સંવત ૧૭૩૮-ની પ્રશસ્તિ.)

શ્રીનયવિમળ, જેઓ તપગચ્છાચાર્ય શ્રીવિજયપ્રભસૂરિની આજ્ઞાથી સં. ૧૭૪૮થી ૪૯ માં મહિમાસાગરસૂરિ પાસે આચાર્યપદવી મેળવી જ્ઞાનવિમલસૂરિ બનેલા, તેમણે ઉ૦ યશોવિજયકૃત 'યોગદૃષ્ટિ સજ્ઝાય' તથા 'સાડી ત્રણસો ગાથાના સ્તવન' ઉપર બાલાવબોધ લખેલો, અને પાછળથી ખરતરગચ્છીય શ્રીદેવચંદ્ર ઉપાધ્યાય સાથે 'શ્રીપાલ રાસ'ની યશોવિજય વાચકકૃત પાછલી બે ઢાળોની 'નવપદ પૂજા'માં સંયોજના કરી હતી. આ જ્ઞાનવિમળસૂરિનો સં. ૧૬૯૪ માં જન્મ, સં. ૧૭૦૨ માં દીક્ષા, સં. ૧૭૨૭ માં પંડિતપદ, સં. ૧૭૪૮ (એક બીજા મત પ્રમાણે ૪૯)માં આચાર્યપદ અને સં. ૧૭૮૨ માં ખંભાતના ચોમાસા દરમિયાન-આસો વદ ગુરુવારે ૮૯ વર્ષે સ્વર્ગવાસ થયો. એમણે સ્તવન, સજ્ઝાયો, રાસો વગેરે ઘણું લખ્યું છે.

'જયસોમ' આદિથી આપણે આટલી વ્યક્તિઓનો પત્તો મેળવીએ છીએ. પ્રયત્ન કરતાં કદાચ બીજાયે ઘણા જડી આવે. જો કે એમના સમયને આવરીને ઘણા પ્રસિદ્ધ-અપ્રસિદ્ધ-પંડિત મુનિઓ છે. તેમનો ઉ૦ યશોવિજય સાથે કેવી રીતનો સંબંધ હતો, એ કહી શકવાનું કોઈ પણ પ્રમાણભૂત સાધન છે કે કેમ એ એક શોધનો વિષય છે. પણ એ રીતે આ લેખને લંબાવવા ઇચ્છા નથી. છતાં એક વાત કહી દેવી જોઈએ કે-છદ્માંણી ઘણા હતા-જેને માટે કાંતિવિજય કુંચાની વરાળ કાઢતાં લખે છે:—

"છતા અછાસ્થ ગુણ સુણિ, હરિયાલુ મુંધ મત ખીજે રે."

ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજીની ગુરુપરંપરા-જગતગુરુ શ્રીહીરવિજયજીના શિષ્ય વાચક કલ્યાણવિજયથી શરૂ થાય છે. તેઓ ગુજરાતના પાલણપુરના પ્રાગ્વંશી સંઘવી આજડના પૌત્ર રાજશી, તેના પુત્ર થિરપાળ ગુજરાતના સુલતાન મહમુદશાહે (૧ લો બેગડો) લાલપુર ગામ ભેટ આપ્યું. તે થિરપાલે એ ગામમાં સં. ૧૫૬૩ માં જિનમંદિર બંધાવ્યું. થિરપાલના પૌત્ર હરખશાને ત્યાં ભાર્યા પુંજીથી ઠાકરશી નામે પુત્ર સં. ૧૬૦૧ આસો વદ ૫ સોમવારે જન્મ્યો. તે ઠાકરશીને શ્રીહીરવિજયસૂરિએ સં. ૧૬૧૬ ના વૈશાખ વદ ૨ દિને અદેઆણામાં દીક્ષા આપી કલ્યાણવિજય નામ રાખ્યું. તે પછી સં. ૧૬૨૪ ના વૈશાખ વદ ૭ ના દિવસે પાટણમાં વાચક (ઉપાધ્યાય) પદ આપ્યું. વ્યાખ્યાનકળા ઘણી સરસ હતી અને ઉત્તમ ચારિત્ર પાળતા તેથી લોકો ઉપર સારી છાપ પાડી શકતા. તેમણે રાજપીપળામાં રાજા વચ્છ ત્રિવાડીની સભામાં બ્રાહ્મણ પંડિતોને જીત્યા હતા. હાલના જયપુર-રાજ્યના વૈરાટનગરમાં અકબરના અધિકારી ઇંદ્રરાજે કરાવેલા વિહાર 'ઇંદ્રવિહાર' નામના ભવ્ય પ્રાસાદોમાં પાર્શ્વનાથ બિંબની પ્રતિષ્ઠા સં. ૧૬૪૪ માં કરી હતી. આ પ્રાસાદોમાંનું હાલ પાર્શ્વનાથ મંદિર કહેવાય છે તે દિગંબરોના તાબામાં છે. આ પ્રાસાદની પ્રશસ્તિ લાભવિજયે રચી છે.[1] આ કલ્યાણવિજયે ધર્મસાગરના ઝઘડામાં પાટણખાતે સારો ભાગ

---

1. 'પ્રાચીન લેખ સંગ્રહ, ભાગ. ૨, નં. ૩૭૯, સંપા૦ શ્રીજિનવિજય.

લીધો હતો.[1] તેમના શિષ્ય લાભવિજય વ્યાકરણચૂડામણિ હતા.[2] અકબર બાદશાહને મળવા શ્રીહીરવિજયસૂરિ પોતાના ૧૩ સાધુઓ સાથે ગયેલા તે પૈકી એક હતા.[3]

આ પંડિત શ્રીલાભવિજયજીના—શ્રીજીતવિજય અને શ્રીનયવિજય, જે વાચક શ્રીયશોવિજયના અનુક્રમે કાકાગુરુ અને ગુરુ હોઈ તેમના ઉપર એકસરખો શિષ્યભાવ રાખી કાશીના અભ્યાસ માટે પ્રબંધ કરેલો, જેનો સ્વીકાર તેઓ 'દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ' 'સાડી ત્રણસો ગાથાના સ્તવન' વગેરેમાં ઉપકાર સાથે કરે છે. આથી શ્રીવિનયવિજય, જેઓ શ્રીહીરવિજયસૂરિના શિષ્ય કીર્તિવિજયના શિષ્ય—તે યશોવિજયજીના કાકાગુરુ હોવાની અને સાથે કાશીમાં અભ્યાસ કરવા જવાની ઘર કરી બેઠેલી માન્યતા ટકી શકતી નથી.[4]

આની વિશેષ ચર્ચા આગળ અમે વાચક શ્રીયશોવિજયજીના કાશી અભ્યાસકાળની આલોચનામાં કરીશું. જો કે આ વિશેની કેટલીક વિચારણા અમે અમારા અગાઉના લેખમાં તો કરી જ છે.

આટલી પૂર્વ ભૂમિકા પછી હવે આપણે એમની મુખ્યત્વે ગુજરાતી કૃતિઓની સાલવારી તપાસીએ. એમના ગુજરાતી સાથે—સંસ્કૃત, પ્રાકૃત ગ્રંથો લઈએ તો કાલક્રમે ચાર ભાગ પડે છેઃ

(૧) કાશીમાં અભ્યાસ કરવા જતા પહેલાંના ગ્રંથો.

(૨) કાશીમાં અભ્યાસના પરિણામે ન્યાયના બે લાખ શ્લોકો યા ૧૦૦ ગ્રંથ ન્યાયના રચ્યા, જેના કારણે તેમને ભટ્ટાચાર્ય તરફથી ન્યાયાચાર્ય પદવી અપાઈ[5] તે તથા ત્યાં રહી અન્ય રચેલી કૃતિઓ તથા આગ્રામાં રહી કરેલી કૃતિઓ.

---

૧. 'ઐતિહાસિક રાસસંગ્રહ' ભાગ ૪.

૨. ગુરુ શ્રીલાભવિજય વડપંડિત, શ્રુતવ્યાકરણાદિક બહુગ્રંથિ, નિતઈ જસ મતિ લાગીઃ

—(દ્રવ્ય. ગુ પ. રા. ગાથા. ૨૭૯)

હેમગુરુ સમ વડે શબ્દ અનુશાસને, શીસ તસ વિબુધવર લાભવિજયો —(૩૫૦ ગાથા સ્ત૦ ઢાળ ૧૭ ગા. ૧૨)

૩. 'સૂરીશ્વર અને સમ્રાટ' પૃ. ૧૦૯.

૪. આ ચર્ચા અમે અમારા બીજા લેખમાં કરી છે. અહીં અમે બીજાં પ્રમાણો રજૂ કરીએ છીએ. ઉપાધ્યાય વિનયવિજયના પિતાનું નામ તેજપાલ અને માતાનું નામ રાજશ્રી. તેમણે સં. ૧૭૧૦ ના જ્યેષ્ઠ સુદ ૬ ને ગુરુવારે શત્રુંજય ઉપર ઉગ્રસેન (આગ્રા) નગરવાસી ઓસવાલજ્ઞાતીય વૃદ્ધશાખીય અને કુહાડગોત્રીય સા૦ વર્ધમાન (સ્ત્રી વાલ્હાદે) ના પુત્ર સા. માનસિંહ અને જીવણદાસ પ્રમુખ પુત્રાદિ પરિવારસહિત પોતાના પિતા (વર્દ્ધમાન)ના વચનથી તેના પુણ્ય માટે આ 'સહસ્રકૂટ તીર્થ' કરાવ્યું અને પોતાની જ પ્રતિષ્ઠામાં પ્રતિષ્ઠિત કર્યું. તપગચ્છાચાર્ય શ્રીહીરવિજયસૂરિના પટ્ટધર આચાર્ય વિજયસેનસૂરિના શિષ્ય વિજયદેવસૂરિ અને વિજયપ્રભસૂરિની આજ્ઞાથી હીરવિજયસૂરિ શિષ્ય મહોપાધ્યાય શ્રીકીર્તિવિજયગણિના શિષ્ય ઉપાધ્યાય વિનયવિજયે એની પ્રતિષ્ઠા કરી—આ લેખ ખરતરવસહી ટૂંકમાં શેઠ નરસી કેશવજીના મંદિરના ગર્ભાગારની બહારના મંડપ—૪૩ પંક્તિમાં કોતરેલો છે (જુઓઃ લેખાંકઃ ૩૨, 'પ્રાચીન લેખ સંગ્રહ' ભા. ૨, શ્રી જિનવિજયજી સંપાદિત.).

૫. "ન્યાયાચાર્ય પદ અપાવનાર આ સો ગ્રંથો કયા તેનો હજુ સુધી કાંઈ પણ પત્તો મળતો નથી...

(૩) કાશી છોડ્યા પછી વિ. સં. ૧૭૧૮માં વાચકપદ મળ્યું તે પહેલાંની કૃતિઓ.

(૪) તે પછીની કૃતિઓ.

(૧) પ્રથમ વિભાગની કૃતિઓ નક્કી કરવાનું કામ ઘણું કઠણ છે. એમનું ગૂર્જર તથા અન્ય ભાષાનું સાહિત્ય ઘણું પ્રગટ થઈ ચૂક્યું છે, કેટલુંક અપ્રગટ છે—જેનાં નામ જણાયાં છતાં હાથ નહિ ચઢેલું અને અન્ય રીતે અજ્ઞાત રહેલું પણ એમાં સામેલ છે. વિલુપ્ત થયેલા ભાગ પણ ઓછો ક્યાંથી હોય? છતાં જે કૃતિઓ ઉપલબ્ધ છે તેના અભ્યાસથી કંઈ ફલ-પ્રાપ્તિ થાય તો સારી જ.

(૨) બીજા ભાગનો પત્તો નથી. તે ક્યાં રહ્યો અને તેનું શું થયું? એ એક મોટો કોયડો છે. કદાચ વિહારમાં સાથે ફેરવવાનું અનુકૂળ ન હોવાના કારણે કાશીના જૈન ઉપાશ્રયમાં કે આગ્રાના શાસ્ત્રસંગ્રહમાં સામેલ કર્યો હોય.

"ચેતન ચાહુકો સંગ નિવારો, જ્ઞાનસુધારસ ધારો!"

આ પંક્તિ નીચે દિગંબરીય પંડિત બનારસીદાસના 'સમયસાર' નાટકમાંની પંક્તિઓને આ પ્રમાણે મૂકી છે—

"તે શેં જગ સતા મરમિ, એક બાવકો હોય. ૧૫."

આ છેલ્લી પંક્તિપૂર્વક સંયોજિત કરેલું પદ—આગ્રામાં સંભવતઃ બન્યું હોય. 'અધ્યાત્મમતપરીક્ષા' એ સંસ્કૃત ગ્રંથ ક્યાં, ક્યારે અને કેવા સંજોગો વચ્ચે બન્યો, તેનો પરામર્શ આ લેખના વિષયની બહારનો છે.

(૩) ત્રીજા ભાગ માટે આપણી પાસે સાધનો છે.

ક દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ—આ રાસની પ્રથમ પ્રતિ સં. ૧૭૧૧ ની એમના ગુરુ શ્રીનયવિજય પંડિતે સિદ્ધપુરમાં લખેલી મળે છે.[1] આ રાસ એમણે શ્રીવિજયસિંહસૂરિના ગણાધિપત્ય કાળે 'તેહની જે હિતશિક્ષા, તેહને અનુસારે' રચ્યાનું, તથા કાશીમાં અભ્યાસ કરવાનું, ન્યાયવિશારદ બિરુદ પામ્યાનું, 'ચિંતામણિ' ન્યાયશાસ્ત્ર ભણ્યાનું, વગેરે હકીકત આપણને એમાંથી પ્રાપ્ત થાય છે.

હાથમાં મળે છે તે પ્રાયઃ કરીને બધા કાશીથી આ દેશમાં આવ્યા પછીના રચેલા છે. કાશીમાં રચેલું પુસ્તક એક પણ હજુ સુધી દેખવામાં આવ્યું નથી" (જૈ. ગૂ. ક. ભા. ૨—યશોવિજય) મો. દ. દેસાઈ. સંન્યાસીને પરાજિત કરવાથી જે વિજયપ્રાપ્તિ કાળે 'બનારસી પાર્શ્વનાથની સ્તુતિ' કરી—આના અક્ષર દેહ માટે શું જણાવાયું છે?

૧. સં. ૧૭૧૧ वर्षे पंडित जसविजयगणिना विरचितः संपूर्णः रासः कृतः—आषाढमासे श्रीसिद्धपुरनगरे लिखितः श्रीमत्तपगच्छाधिराजपूज्य पं. नयविजयेन श्रीसिद्धपुरनगरे—प्रथमादर्शः (११-१० पाटणभंडार, जै० गू० क० भा. २, पृष्ठ २०)

તપગચ્છની ૬૦ મી પાટવાળા શ્રીવિજયદેવસૂરિએ વિજયસિંહસૂરિને વાચકપદ સં. ૧૬૭૩ પાટણમાં, સૂરિપદ ૧૬૮૧ અથવા ૮૨ ના વૈશાખ સુદ ૬ ઇડરમાં અને ગણાધીશપણું, સં. ૧૬૮૪ પોષ સુદિ ૨ બુધવારના જાલોરમાં–મંત્રી જયમલે કરેલા ગણાનુજ્ઞાના નંદિમહોત્સવપૂર્વક આપ્યાં. અવસાન–શ્રીવિજયદેવસૂરિની હયાતીમાં જ અષાડ સુદિ ૨ ના (સં. ૧૭૦૯) અમદાવાદમાં થયું.[1]

આટલી કાળમર્યાદા ઉપરથી આપણને એટલું ચોક્કસ ભાન થાય છે કે, શ્રીયશોવિજય ગણિ કાશીનો અભ્યાસ વગેરે પતાવીને સં. ૧૭૦૭–૮ લગભગ ગુજરાતમાં પાછા ફર્યાં હશે. તે એટલા ઉપરથી કે, ગુજરાતી કૃતિ 'દ્રવ્યગુણપર્યાય–રાસ' જે સં. ૧૭૧૮ પહેલાંની રચના ઠરે છે, તેમાં એમના સંસ્કૃત તર્કગ્રંથો–'અનેકાંતવ્યવસ્થા' અને 'ભાષારહસ્ય' નામક ગ્રંથનાં અવતરણો મળે છે. તેમાં 'ભાષારહસ્ય'નો આરંભ કરતાં રહસ્યપદ વડે અંકિત એવા ૧૦૮ ગ્રંથ રચવા ઇચ્છા વ્યક્ત કરે છે.[2] જે કાશીના અભ્યાસ કાળ પછીની કૃતિઓ છે.

ख 'સાડી ત્રણસો ગાથાનું સ્તવન' પણ શ્રીવિજયસિંહસૂરિના ગચ્છાધિકારમાં રચાયું છે. તેમાં પણ 'રહીય કાશીમઠે જેહથી મેં ભલે, ન્યાયદર્શન વિપુલભાવ પાયા.'નો ઉલ્લેખ કર્યો છે. એટલે તે કૃતિ તે કાળમર્યાદાની છે.

ग 'એકસો ને પચીસ ગાથાનું સ્તવન' પણ તેમાંનો વિષય જોતાં ભેગાભેગું બનેલું લાગે છે. કાંઈ નહિ તો તે સં. ૧૭૧૮ ની પહેલાંની કૃતિ તો છે જ, કારણ કે તેમાં કર્તાએ જશવિજય બુધ–એ રીતે પોતાના નામ અને પદવીનું સૂચન કર્યું છે, એટલે તે વખતે વાચક થયેલા નહિ. તેમ એમાં કાશીના અભ્યાસ સંબંધી કોઈ સૂચક હકીકત નથી. એટલે એ જૂની થયેલી સંભવે છે, તે એટલી કે આ પહેલાં–આ હકીકત તરત બનેલા આગળ દર્શાવેલા ગુજરાતી ગ્રંથોમાં કહી દેવામાં આવી છે.

घ હવે 'સમુદ્ર વહાણ સંવાદ' ઘોઘામાં મુનિ–વિબુધ સંવત એ ઉપરથી 'જૈન ગુર્જર કવિઓ' ભાગ ૨ માં સં. ૧૭૦૦ ની કૃતિ લખી છે પણ 'તપગચ્છ ભૂષણ શોભતા, વિજયપ્રભસૂરિરાજ.' એ ઉપરથી સંવત ૧૭૧૧ કે તે પછીની કૃતિ છે.[3]

---

૧. વિજયસિંહસૂરિ સં. ૧૭૦૯ માં સ્વર્ગવાસી થવાથી મૂળ વિજયદેવસૂરિને ફરીથી ગચ્છ સંભાળવાનું પ્રાપ્ત થયું. ગો. વી.

૨. આમાંથી કેટલા ગ્રંથો રચાયા તે સંબંધે કાંઈ પણ હકીકત મળી નથી. માત્ર આમાંના 'ભાષારહસ્ય, ઉપદેશરહસ્ય અને નયરહસ્ય' નામના ત્રણ જ ગ્રંથો મળ્યા છે. અલભ્ય ગ્રંથોની યાદીમાં 'પ્રમારહસ્ય' તથા સ્યાદ્વાદરહસ્ય'નાં નામો માત્ર જોવા મળે છે.

૩. ૬૧ મી પાટે વિજયપ્રભસૂરિ–જન્મ ૧૬૭૭ કચ્છ મનોહરપુરમાં (વરાહી ગામે), દીક્ષા સં. ૧૬૮૬, પંન્યાસપદ સં. ૧૭૦૧, સૂરિપદ સં. ૧૭૧૦ (૯?) ગંધાર બંદરમાં વૈશાખ શુદિ ૧૦ તેનો ઉત્સવ અમદાવાદવાસી અભેચંદ દેવચંદની પત્ની–સાહિબદેએ કર્યો. સં. ૧૭૧૧ અમદાવાદમાં સુરાના પુત્ર

ढ 'આઠદૃષ્ટિ સજ્ઝાય'–(જ્ઞાનવિમલસૂરિનો ટબો).

ण 'બ્રહ્મગીતા'–કડી ૩૦, ખંભાત, સં. ૧૭૩૮.

त 'જંબૂરાસ' સં. ૧૭૩૯, ખંભાતમાં ચોમાસું. સંખ્યા ૧૪૦૦ ગ્રંથાગ્રંથ, ઢાળ-દુહા સર્વ મળી, તથા આંક સંખ્યાયે. (કવિની હસ્તલિખિત પ્રતિ સ્વ૦ પ્ર૦ શાંતિવિજયજી પાસે હતી. એ ઉલ્લેખ શ્રીકલ્યાણવિજયજીએ અમદાવાદ 'ગુજરાત સાહિત્ય પરિષદ'ના રિપોર્ટમાં પ્રગટ થયેલા તેમના લેખમાં કર્યો છે.)

द આ જ અરસામાં શ્રીવિનયવિજય ઉપાધ્યાયે શરૂ કરેલો 'શ્રીપાલ રાસ' રાંદેરના સં. ૧૭૩૮ ના ચોમાસામાં ૩૫૦ ગાથા રચાયા પછી તેમના અવસાન થવાના કારણે અધૂરો રહેલો તે ઉપાધ્યાય વિનયવિજયની ઇચ્છાને અનુસરી ઉપાધ્યાય યશોવિજયજીએ પૂરો કર્યો.

ध 'દિક્પટ ૮૪ બોલ' ગાથા–૧૬૧.

न-प-फ-ब 'ચોવીસી' ત્રણ, 'વીશી' એક.

भ 'સમકિતના ૬૭ બોલની સજ્ઝાય'–ઢાળ ૧૨, ગાથા ૬૮.

म 'અઢાર પાપસ્થાનક સજ્ઝાય'–ઢાળ ૧૮.

य 'અમૃતવેલી સજ્ઝાય.'–સં. ૧૭૧૮ પહેલાંની કૃતિ હશે.

र 'ચૌદ ગુણસ્થાનની સજ્ઝાય'–ઢાળ ૨.

ल 'સમકિત સુખલડી સજ્ઝાય.'

व 'ચાર આહારની સજ્ઝાય.'

स 'કુગુરૂ પર સ્વાધ્યાય'–(કવિના સમયમાં સાધુ માટેની સ્થિતિ જણાવી છે)

श 'સુગુરૂ પર સ્વાધ્યાય'–ઢાળ ૪. सिरिणयविजयगुरूणं । पसायमासज्ज सयल-कम्मकरं । भणिया गुणा गुरूणं साहुण जसविणए पत्तं ।–(૪૧) આ ઉપરથી આ કૃતિ "સં. ૧૭૧૮ પહેલાંની માની શકાય."

ष 'જશવિલાસ'–પદ ૭૫–જુદી જુદી વખતે બનેલાં.

ह 'અષ્ટપદી'–આનંદઘનજીની સ્તુતિરૂપ.

ळ 'પંચપરમેષ્ઠિ ગીતા.'

क्ष 'સીમંધરસ્વામીનું ૪૨ ગાથાનું સ્તવન'–ઢાળ ૪–નિશ્ચય–વ્યવહાર નયગર્ભિત.

ज्ञ 'કુગુરૂની સજ્ઝાય'–ઢાળ ૬ માં આ બીજી છે. एसो कुगुरुसज्झाए जिनवयणाओ फुडं भणिओ; सिरिणयविजयमुणीणं सीसेण जणाण बोहत्थं । આ પણ વાચકપદ મળ્યા પહેલાંની જણાય છે.

જે ન્યાયાચાર્ય શ્રીયશોવિજયજીના જીવનના બાહ્ય અને અંતર અંગો જોવામાં દીપ તરીકે કામ લાગે એવી છે, એના મંદ અને મર્યાદિત પ્રકાશમાંથી જે અને જેટલું જોઈ શકાય તેટલું જોઈ લઈશું.

જન્મ અને દીક્ષા :

જન્મ ક્યારે થયો ? એ 'સુજશવેલી ભાસ'કાર જણાવતા નથી. પણ સં. ૧૬૮૮ તેમના ગામ–ઉત્તર ગુજરાતનાં કલોલ પાસેના બીજી રીતે પાટણથી થોડા ગાઉના અંતરે હજુ પણ છે–કનોડુમાં મુનિ શ્રીનયવિજયકુણગેર, જેનું ઐતિહાસિક સંસ્કૃત, પ્રબંધોમાં 'કુમારગિરિ' નામ મળે છે. એ પાટણ પાસેના ગામમાં ચોમાસુ રહી આવે છે, ત્યારે માતા સોભાગદે પોતાના 'જશવંત' પુત્રને લઈ વંદન કરવા જાય છે. જ્યાં ધર્મોપદેશ મળતાં હૃદયમાં વૈરાગ્યનો ઉદ્ભવ થાય છે. આ હકીકત તેમાં તેમણે કહી છે. આ ઉપરથી કહી શકીએ કે, આ બનાવ વખતે તેઓની ઉંમર આઠ કે બહુ તો તેર વર્ષની હશે. એટલે જન્મનું વર્ષ વિ. સં. ૧૬૭૫ થી ૮૦ લગભગ ધારી શકાય.

પાટણ જઈ તે દીક્ષા લે છે. તે સં. ૧૬૮૮ માં જ શ્રી. મો. દ. દેશાઈના કહેવા પ્રમાણે માતાએ પણ સાથે જ દીક્ષા લીધી લાગે છે. અને આ પ્રસંગથી પ્રેરાઈ–બીજા પુત્ર પદ્મસિંહે પણ તે વખતે દીક્ષા લીધી, જેનાથી જશવંત ઉંમરે નાના છે જે 'લઘુતા પણ બુધે આગલોજી' એ ભાસકારના કથનથી સ્પષ્ટ થાય છે. આ જશવંત–જશવિજય થયા પછી સહોદર પદ્મસિંહ જે પદ્મવિજય બને છે–તેમના માટે લખે છે.

'यः श्रीमद्गुरुभिर्नयादिविजयैरान्वीक्षिकीं ग्राहितः,
प्रेम्णां यस्य च सद्म पद्मविजयो जातः सुधीः सोदरः ।
यस्य न्यायविशारदत्वविरुदं काश्यां प्रदत्तं बुधै-
स्तस्यैषा कृतिरानोतु कृतिनामानन्दमग्नं मनः ॥'

આ પ્રમાણે સ્વરચિત ન્યાયખંડખાદ્યની પ્રશસ્તિમાં ઉલ્લેખ કરે છે. આ બન્ને ભાઈઓની વડી દીક્ષા પણ તે જ સાલમાં શ્રીવિજયદેવસૂરિના હાથે થાય છે. (પદ્મવિજય સહોદર હોવાનો બીજો ઉલ્લેખ શ્રીહરિભદ્રસૂરિની 'વિંશિકા'ઓ ઉપરની ટીકા ઉપાધ્યાયજીએ કરી છે તેમાં કર્યો છે. (જુઓઃ ફૂટનોટ પાન–૧૭૫)

પિતા નારણ(નારાયણ) વ્યવહારિયા; એટલે તેઓની વણિકજાતિ સિદ્ધ છે. પણ તેઓ ધર્મે જૈન હશે કે કેમ એ વિશે શંકા રહે છે. કેમકે તેઓ કોઈ ધાર્મિક પ્રસંગે દેખા દેતા નથી ? આપણે ધારી શકીએ કે તેઓ આ બન્ને બાળકોની બાલ્યાવસ્થા કાળે જ સ્વર્ગસ્થ થયા હશે. આને સિદ્ધ કરતું પ્રમાણ એ છે કે પદ્મસિંહ જે પ્રસંગથી પ્રેરાઈ દીક્ષિત થયા છે તે એમ સમજીને કે મા અને ભાઈ દીક્ષા લે ત્યારે તેને એકલા રહેવાથી શું ? અથવા તેને આધાર કોનો ?

સં. ૧૬૯૯માં તેઓ અમદાવાદ આવે છે. આ અગિયાર વર્ષના ગાળામાં જશવિજયનો

સંસ્કૃત-પ્રાકૃત સાહિત્ય સાથે જૈનશ્રુતના આગમગ્રંથો સાથે અનેક વિવિધવિષયી પ્રકરણ ગ્રંથોનો પણ અભ્યાસ થઈ ગયેલો લાગે છે. તે કાશીમાં જેટલા સમયમાં જે જે વિષયનો અભ્યાસ કર્યો તથા આગ્રામાં તર્કશાસ્ત્રની પરિપૂર્ણતા પ્રાપ્ત કરી તે ઉપરથી અને તે પછી વરત રચાયેલા જૈન શ્રુતપ્રધાન સંસ્કૃત તથા ગુજરાતી ગ્રંથોમાં જે જે જૈન શ્રુતનો પરિચય થાય છે તે ઉપરથી નિશ્ચિત છે. 'સમ્મતિતર્ક', તત્ત્વાર્થસૂત્ર-વ્યાખ્યા અને તર્કપ્રધાન ગ્રંથોનું વિશદ જ્ઞાન કાશીમાંથી તર્કજ્ઞાન મેળવ્યાના પરિપાકરૂપે છે, જે વાત એમણે 'દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ-સ્વોપજ્ઞ બાલાવબોધ' અને 'સાડી ત્રણસો ગાથાના સ્તવન'માં કહી જ છે.

અમદાવાદના આ પ્રથમ આગમન વખતે તેઓ સંઘ સમક્ષ અષ્ટ અવધાન કરે છે. આ વખતે તેઓ ગણિ-પંડિતપદ પામ્યા હશે. આવો મેધાવી શિષ્ય જો કાશી ભણી આવે તો બીજો હેમચંદ્ર થાય. શાસનને ખપ પડે કામમાં આવે. આવી વાત મહત્ત્વાકાંક્ષી શેઠ ધનજી સૂરાને સ્ફુરી.

શેઠ ધનજી વિશે જણાય છે કે, અમદાવાદના ઓસવાલ સંઘવી સૂરા અને રતન એ બે ભાઈઓ સં. ૧૬૭૮ પહેલાં વિદ્યમાન હતા. તેમણે સત્તાસિયો (સં. ૧૬૮૭) જે નામથી અત્યારે પણ જાણીતો છે, તે દુકાળમાં દાનશાળા ખોલી હતી અને શત્રુંજયના અષ્ટ સંઘ કાઢ્યા હતા. એ સૂરાના પુત્રનું નામ ધનજી અને રતનના પુત્રનું નામ પનજી. આ બન્નેએ સમેતશિખરનો સંઘ કાઢી એક લાખ એંશી હજાર ખર્ચ્યા અને સંઘવીપદવી પ્રાપ્ત કરી. વિજયપ્રભસૂરિનો પરિચય પાદનોંધમાં આગળ આપ્યો છે તેમાં ગણાનુજ્ઞાનો મહોત્સવ, જે એમણે કર્યો તેની સવિસ્તર હકીકત આપી છે. આ શાસનપ્રભાવક લક્ષ્મી-નંદને પોતાને આવેલો વિચાર શ્રીનયવિજય આગળ રજૂ કર્યો. નયવિજયજીએ કહ્યું: 'બ્રાહ્મણ પંડિતોને દ્રવ્ય આપ્યા સિવાય તેમની પાસેથી વિદ્યા મેળવવાનો બીજો રસ્તો જૈનો માટે નથી.' ધનજી સૂરાએ કહ્યું: 'એ જ જો કારણ હોય તો તેની જોગવાઈ મારા તરફથી થઈ રહેશે.' એમ કહી એમણે તરત જ બે હજાર રૂપિયાની હુંડી લખી. આ રત્નપરીક્ષક, રત્નને પારખી, તેને ઓપ આપી, અનેક ઘણું તેનું મૂલ તેજ પ્રગટ કરનાર કસબીને હાથે સોંપવા ઉત્સુક ન થયા હોત તો?

કાશીપ્રયાણ :

ધનજી સૂરા તરફથી સહાય અને પ્રોત્સાહન મળતાં ગુરુ નયવિજયે, શિષ્ય યશોવિજયને લઈ કાશી તરફ પ્રયાણ આરંભ્યું, જે સં. ૧૬૯૯માં થયું હશે. આ વખતે ગચ્છા-ધિકાર શ્રીવિજયસિંહસૂરિ સંભાળતા હતા. તેમના આશીર્વાદ સાથે અનુમોદનાપૂર્વકની અનુમતિ મળેલી અને હિતશિક્ષા પણ આપેલી. વડીલ કાકાગુરુ જિતવિજય તો યશોવિજયને શિષ્યવત્ ગણતા. એટલે એમના વત્સલહૃદયમાં આ વત્સ માટે શું શું અનુગ્રહ થયો ન હોય! પોતાના ગુરુ સાથે આ બધાનું-પોતાના વિદ્યાપ્રાપ્તિના નિમિત્ત કારણરૂપ ઉપકાર-ઋણનો, આ કાર્ય પતાવ્યા પછી રચેલા ગુજરાતી ગ્રંથોમાં-સદ્ભાવ અને આદર સાથે ઉલ્લેખ કર્યો

છે. તે ઉલ્લેખ સહિત અમે અમારા જુદા લેખમાં નોંધ્યો છે.[1]

આ વિહારમાં સાથે કોણ કોણ હશે, તેની કોઈ સૂચક હકીકત નોંધાયેલી મળતી નથી. પણ પદ્મવિજયને સાથે લીધા હશે, તે એમ સમજી ને કે નવા નવા દેશોનો તેને અનુભવ થશે, વિદ્યાપીઠ જોશે, આથી મન થતાં તેમાંથી કોઇ વિદ્યા શીખશે. અને અન્ય કોઈ કામ પ્રસંગે પણ કામ લાગશે. 'વિનયવિજય અને જશવિજય બે જ કાશી ભણવા માટે જાય છે, અને વિનયલાલ તથા જશલાલ નામથી પોતાને બ્રાહ્મણ જાતિના ગણાવી, વિદ્યાર્થીગણમાં પ્રવેશ મેળવે છે!' આવી દઢમૂળ થયેલી માન્યતા ખોટી છે; તેનું નિરસન અમે અમારા 'બીજા લેખમાં અને આ લેખમાં–પણ પહેલાં કર્યું છે. આગળ પણ આ ભ્રાંતિનું નિવારણ થશે.

જે કાળે દેશ, અનેક રાજકીય સત્તામાં વિભક્ત હતો, રાજાઓ દેશ પચાવવા, સત્તા જમાવવા, ધન ભેગું કરવા, અંદર અંદર ઝઘડી રહ્યા હતા; ચોર, લૂંટારુ અને ઠગોના ત્રાસનો પાર નહોતો. આવી અંધાધૂંધી વચ્ચે જૈન સાધુના તીવ્ર આચારોનું પાલન કરતા, ઉપસર્ગો અને પરીષહોને સહન કરતા, પાદ–પગે ચાલી, ઘણો લાંબો પંથ વટાવી સં. ૧૬૯૯ના વર્ષા–ચોમાસાના અષાઢ માસ પહેલાં કાશીમાં ગુરુ અને શિષ્ય આવી જવા જોઈએ.

જૈન મુનિઓના અન્યત્ર જઈ વિદ્યાધ્યયન કર્યાના દાખલા ઇતિહાસમાં શોધીએ તો પ્રથમ આપણને (શ્રુતકેવળી) ચૌદપૂર્વધર શ્રીભદ્રબાહુ પાસે નેપાળમાં પાંચસો જિજ્ઞાસુ સાધુ સાથે સ્થૂલિભદ્ર મુનિ ગયાનો મળે છે. તેમાં માત્ર સ્થૂલિભદ્ર જ ધૈર્યપૂર્વક ટકી, ગુરુએ આપી તેટલી વિદ્યા લે છે. બાકીનાનું અધ્યયનમાં પૂરેપૂરું મન ન લાગતાં કંટાળી પાછા ફરે છે. તે પછી આર્ય રક્ષિત આર્ય વજ્ર પાસેથી તેમના દશ પૂર્વજ્ઞાનને મેળવવા જાય છે પણ તે જ્ઞાન-ગિરિના ઉત્તુંગ શિખરે લગભગ પહોંચતાં જ મનની અવ્યવસ્થિત–વ્યાકુળવૃત્તિથી ઉત્સાહ ઓસરી જતાં અટકી જાય છે. તે પછી યાકિનીસૂનુ–શ્રીહરિભદ્રસૂરિના બે ભાણેજ શિષ્યો ગુરુની ના છતાં પણ બૌદ્ધ સાધુઓના વિદ્યામઠમાં પોતાના જૈનત્વને ગોપવી દાર્શનિક અભ્યાસ માટે પ્રવેશી જાય છે. પણ આ વાતની ગંધ આવતાં તેની ચોકસાઇના પ્રયોગો થતાં આ મુનિજોડી ચેતી જાય છે અને ભાગવા માંડે છે; છતાં પણ તેઓ તેમના કોપાગ્નિથી બચી શકતા નથી.

---

૧. આ ઉલ્લેખ 'દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ–બાલવબોધ–સહિત'માંનો છે. અને કેટલીક હકીકત એમના કાગળમાંથી લીધી છે. 'સાડી ત્રણસો ગાથાના સ્તવન'ની છેલ્લી ગુરુપરંપરાવાળી ઢાળઃ ૧૭માં–

"સીસ તસ જિતવિજયો જયો વિબુધવર, નયવિજય વિબુધ તસ ગુરૂભાયા;
રહિય કાશીમઠે જેહથી મેં ભલે, ન્યાયદર્શન વિપુલ ભાવ પાયા. (૧૨)
જેહથી શુદ્ધ લહિએ સકલ નય નિપુણ, સિદ્ધસેનાદિ કૃત શાસ્ત્રભાવા;
તેહ એ સુગુરૂ કરૂણાપ્રભો તુજ સુગુણ...

આપણને અહીં આગળ એક પ્રશ્ન થાય છે કે, ધનજી સૂરાને કેમ સંભાળવામાં આવ્યા નથી? જ્યારે એમની બીજી ગુજરાતી પદ્ય–ગદ્ય કૃતિઓમાં–એકમાં કોના માટે–રચી તથા એનો વિષય કોના કોના આગળ સંભળાવ્યો વગેરે લખે છે. (જુઓ–૧૫૦ ગાથાનું હુંડી સ્તવન તથા ૧૧ અંગની સજ્ઝાય વગેરે.)

સિદ્ધર્ષિનું બૌદ્ધ વિદ્યાપીઠમાંનું આગમન સૂચિત કર્યું છે !

બ્રાહ્મણો અને અન્યાન્ય પંડિતોની પાસે જઈ જૈનો તરફ જોવા દૃષ્ટિ છે અને ભૂતકાળમાં તે કેટલી આદરણ હતી, તે સૌ કોઈને વિદિત છે. પંદરસોથી સંસ્કૃતનો અભ્યાસ એક યુરોપિયન વિદ્વાને કરવામાં કેવી દીનતા કરી એ કથા જેટલી રોમાંચક છે, તેટલી જ બ્રાહ્મણોના ધર્મ: અને લુચ્ચાઈપણાની પ્રતીક પણ છે. અરે ! આપણી પોતાની વખત ઉપરની જ આપણા પ્રાંતની જ વાત કરીએ: વળતર આપી વેતન લઈ જૈન મુનિઓને 'સિદ્ધહેમ' ભણાવતા, તે માટે બ્રાહ્મણો તેમને શું કહેતા એ તેમના ગ્રંથોમાંથી જ જાણવા મળે છે.[1]

કાશીમાં અભ્યાસ અને સિદ્ધિ :

એમણે આદરણ ભરેલા બ્રાહ્મણ વાતાવરણ વચ્ચે જૈન મુનિવેશ અને આચાર કાયમ રાખી અભ્યાસ શરૂ કર્યો. તેઓના અધ્યાપકો કોણ કોણ હતા, તેનાં નામો કે નામ કોઈ સ્થળે નોંધાયેલાં જણાયાં નથી પણ 'સુજસવેલી ભાસ'માં—'ભટ્ટાચાર્ય પાસે ૭૦૦ શિષ્યો મીમાંસાદિ અભ્યાસ નિરાંતે કરી રહ્યા હતા' એમ જણાવેલું છે. તે પંડિત પાસે જશવિજય વર્ણાં પ્રકરણો, ન્યાય, મીમાંસા (ઉત્તર), સુગત (બૌદ્ધ દર્શન), જૈમિનિ (પૂર્વમીમાંસા), વૈશેષિક સિદ્ધાંત અને 'ચિંતામણિ' ભણ્યા તથા સાંખ્ય, પ્રભાકર ભટ્ટના અને બીજા મતાંતરો મહાદુર્ઘટ શાસ્ત્રોને ધારીને જિનાગમ સિદ્ધાંત સાથે સમન્વય કર્યો છે.[2] આ પ્રમાણે અભ્યાસના મહારસ સાથે 'ભામતી' ને પણ ભણી લીધી. કાશીમાં જેટલી વિદ્યા મળી શકે એટલી તેમણે ત્રણ વર્ષમાં પ્રાપ્ત કરી. આ વિદ્યા અર્પનાર—ષડ્દર્શનવેત્તા, તાર્કિકકુલમાર્તંડ ભટ્ટાચાર્યે જે સમય સુધી કર્યું તે બદલ તેમને રોજનો રૂપિયો આપવામાં આવતો. આ પ્રમાણેનું વર્ણન તેના કર્તાએ કર્યું છે.

ભટ્ટાચાર્યે એક મહાગ્રંથ ગુપ્ત રાખેલો, જે એમને જોવા કે જાણવા મળે એવો નહોતો. તે ગુરુના બહાર જવાનો લાભ લે છે. ગુરુપત્ની પાસેથી માગી લઈ રાતોરાત વિનયવિજયે અને જશવિજયે અર્ધો ભાગ વહેંચી કંઠસ્થ કરી લીધો ! એ વાતનો આમાં કંઈ પણ ઈશારોયે નથી. વિનયવિજય ઉપાધ્યાય સહાધ્યાયી હોય તો ગુરુભાઈ કાંતિવિજય એમનું નામ આપ્યા સિવાય રહે ? આ વાત ખોટી હોવાનું અમે અમારા પ્રથમના લેખમાં તથા આ લેખમાં સિદ્ધ કર્યું છે. આ એક ભ્રાંતિ છે. તે વિનયવિજયની વિદ્વત્તા, લોકપ્રિય સાહિત્યના સર્જનથી થયેલી પ્રસિદ્ધિ, 'શ્રીપાળરાસ'ના અધૂરા ભાગને જશવિજયે પૂર્ણ કર્યો—એવી આખ્યાનોમાંથી જન્મી છે. વસ્તુતઃ નયવિજયના સ્થાને વિનયવિજયનું પ્રસિદ્ધ નામ પ્રચલિત થઈ ગયું લાગે છે. સં. ૧૬૯૮માં વિજયાણંદસૂરિ ઉપર 'વિજ્ઞપ્તિ પત્ર'[3] લખનાર, સં. ૧૬૯૬ જેઠ સુદ ૨ ગુરુવાર દિને 'કલ્પસૂત્ર' ઉપર સંસ્કૃતમાં 'સુબોધિકા ટીકા'

---

૧. ગુજરાતી ભાષાના ઈતિહાસ ઉપરનાં (ગુ. વ. સોસાયટી-પ્રકાશિત) આ. શાસ્ત્રી રેવાશંકર નર્મદાશંકર ભાષાના શાસ્ત્રી હતા. એમણે જૈનના સિદ્ધ હેમચંદ્ર વ્યાકરણ એવાં લખ્યાં છે.

૨. આનો ઉલ્લેખ અને અનુવાદ જૈન ઐતિહાસિક ઉલ્લેખમાં—વિવેચન સાથે કર્યો છે.

૩. બૌદ્ધ સિદ્ધિ : 'દિગ્દર્શન' નામે કાવ્યમાં જોધપુરથી સૂરત વિજયપ્રભસૂરિ ઉપર મોકલેલો પત્ર.

કરનાર, 'લોકપ્રકાશ' આગમદોહનરૂપ મહાગ્રંથ સં. ૧૭૦૮ જેઠ સુદ ૫ ના જુનાગઢમાં પૂર્ણ કરનાર, રાધનપુરમાં સં. ૧૭૧૦માં 'હૈમલઘુપ્રક્રિયા' નામે વ્યાકરણગ્રંથ સ્વોપજ્ઞ ટીકા સહિત બનાવનાર,[1] 'નયકર્ણિકા' દીવમાં, 'શાંતસુધારસભાવના' વગેરે સંસ્કૃત ગ્રંથો અને ગુજરાતી રચનાઓ પૈકી 'નેમિનાથ ભ્રમરગીતા સ્તવન' સં. ૧૭૦૬ તથા 'પટ્ટાવલી સજ્ઝાય' સં. ૧૭૧૦ માં રચનાર[2] વિનયવિજયોપાધ્યાય–જશવિજય સાથે કાશીમાં અભ્યાસ કરવા સામેલ ક્યાંથી હોય? એક જ્યારે પૂર્વમાં અભ્યાસમાં મશગૂલ છે ત્યારે બીજા તે કાળે ઉપાધ્યાય બની પશ્ચિમમાં ગુજરાત, સૌરાષ્ટ્રનાં ગામોમાં વિહાર કરતા કરતા ગ્રંથો રચવાના કાર્યોમાં લાગી ગયા છે.

કાશીમાં રહી યશોવિજયે જે અધ્યયન કર્યું, પદવીઓ મેળવી, વાદ કર્યા તથા ગ્રંથો લખ્યા તે હકીકત પોતાના રચિત–ગ્રંથોમાં નોંધી છે. ગુજરાતી ગ્રંથોમાંના આ ઉલ્લેખો વિશે અમે અમારા બીજા લેખમાં કહી ગયા છીએ અને આ લેખમાં પણ પ્રસંગોપાત્ત જરૂર જેટલું આગળ લખી ચૂક્યા છીએ. સંસ્કૃત ગ્રંથોમાંથી 'જૈન તર્કભાષા'નો એક શ્લોક અમારા બીજા લેખમાં ટાંક્યો છે અને આ લેખમાં આગળ 'ન્યાયખંડખાદ્ય'માંથી એક શ્લોક ઉતાર્યો છે. સિવાય જે મળે છે તેમાંથી આ ઉલ્લેખો પ્રાપ્ત થાય છે.

" विप्रानात्मवशांश्चिरं परिचितां काशीं च वालानिव,
क्ष्मापालानपि विद्विपो गतनयान् मित्राणि चाजीगणद् ।
मन्न्यायाध्ययनार्थमात्रफलकं वात्सल्यमुल्लास्य ये,
सेव्यन्ते हि मया नयादिविजयप्राज्ञाः प्रमोदेन ते ॥ "

—(સામાચારીપ્રકરણ–પ્રશસ્તિ)

" मामध्यापयितुं सदाऽऽसनसमध्यासीनकाशीमहा–
सन्नाशीरितयोगदुर्जयपरत्रासो यदीयश्रमः ।
आसीच्चित्रकृदिन्दुशुभ्रयशसो दासीकृतक्ष्माभुजो,
नोल्लासी भुवि तान् नयादिविजयप्राज्ञानुपासीन्न कः ? ॥११॥ "

—(ઐંદ્રસ્તુતિ ચતુર્વિંશતિકા–વિવરણ–પ્રશસ્તિ)

" सत्तर्ककर्कशधियाऽखिलदर्शनेषु, मूर्धन्यतामधिगतास्तपगच्छधुर्याः ।
काश्यां विजित्य परयूथिकपर्षदोऽग्र्यां, विस्तारितप्रवरजैनमतप्रभावाः ॥ "

—(શ્રીમાનવિજયોપાધ્યાયકૃત–'ધર્મસંગ્રહ')

---

૧. આ સાલમાં પાલીતાણા ઉપર કરેલી પ્રતિષ્ઠાનો લેખ મળી આવેલો છે, જે વિશેનો ઉલ્લેખ આગળ આ લેખમાં કર્યો છે.

૨. આ કૃતિ ઉનામાં ભાદવા સુદિ ૧૧ ના દિવસે બનાવી છે.

ન્યાયાચાર્ય પાસે કર્યો. આગ્રાના સંઘે સાતસો રૂપિયા જશવિજય આગળ મૂક્યા, તેના પાઠાં-પુસ્તક કરાવી છાત્રોને વહેંચી આપ્યાં.” આ વાત શ્રીકાંતિવિજય સુજશવેલી ભાસમાં નોંધે છે તેથી જાણવા મળે છે. યશોવિજયના પોતાના હાથનો કે અન્યે નોંધેલો આવો ઉલ્લેખ જોવા મળતો નથી કે એવી કોઈ લોકશ્રુતિ પણ સંભળાતી નથી. આગ્રા ગયેલા પ્રસિદ્ધ દિગંબર પંડિત બનારસીદાસ[1] સાથે સંબંધમાં તેઓ આવેલા હશે. કદાચ તેઓ વચ્ચે શ્વેતાંબર-દિગંબર સિદ્ધાંતો અંગે તીવ્ર ચર્ચા પણ થઈ હશે! છતાં એમના આગ્રા જવાના આયોજનમાં ત્યાંના ન્યાયાચાર્ય પાસેથી વિશેષ જ્ઞાન મેળવવાનું કારણ મુખ્ય ગણ્યું છે, એ એક વિચારણીય વિશેષદર્શી ઘટના છે જે નવી છતાં નિઃશંક સત્ય હોવાનું શ્રી. મો. દ. દેસાઈએ કબૂલ્યું છે. એ સાથે જણાવ્યું છે કે, બનારસીદાસના શિષ્યો કુંવરપાલ વગેરેના આધ્યાત્મિક મતનું ખંડન કરેલું છે.

આગ્રા છોડી અમદાવાદ આવતાં વચ્ચે વચ્ચે હુંદમવાદીઓ સામા થયા હશે. તેને પેરે પેરે પછાડેલા, એટલે વિદ્યાદીપ્તિથી તંપી ઊઠેલા. એક રીતે આને લેખકોની લેખનશૈલી ગણીએ તો પણ માનવાને કારણ છે કે એમણે જે યશસ્વિતાપૂર્વક વિદ્યાની મહાન પદવી મેળવી તેથી અદેખાઓ માત્સર્યથી તેમની સાથે વાદ કરવા ગયા હશે. આપણામાંના પણ અલ્પજ્ઞો જ્ઞાન અને સંજમનું મોટું ઘમંડ રાખી જે મૂર્ખપ્રલાપ કરતા હશે તેમને શાસ્ત્રોના આધારો બતાવી ભોંઠા પાડેલા; જેનો આપણને “સાડી ત્રણસો ગાથાના સ્તવન” ઉપરથી પૂરેપૂરો ખ્યાલ આવે છે. એમની ઊંચી વધતી જતી તેજોમય દીપશિખાને નાની અને નિસ્તેજ કરવા જલી રહેલા લોકો તરફથી જેમ જેમ પ્રયત્નો થતા રહ્યા તેમ તેમ એ શિખા તેજ સાથે વધતી રહી અને એથી ઉજ્જવળ યશઃપ્રભા આઠ દિશામાં વ્યાપ્ત થઈ રહી:

દિગંતમાં જેના વિજયઘોષ પહોંચી ગયા છે, તેનો જાણે પડઘો સંભળાતો હોય એમ યશોવિજયને જોવા અને સત્કારવા જાતજાતના અને ભાતભાતના લોકો ઉત્સુક હોય તેમાં કાંઈ નવાઈ નથી. એ રીતે ઊમટેલી માનવમેદની વચ્ચે વિબુધોથી વીંટાયેલા તારામાં ચંદ્ર જેવા તેઓ અમદાવાદ-નાગપુરીય-નાગોરીસરાયમાં પધારે છે. સં. ૧૭૦૬-૧૬૦૭ વખતે વયમાં તેઓ બહુ તો ૩૦ વર્ષની આસપાસ હશે.

ગુજરાતના સૂબાનું આમંત્રણ—

ગુજરાતના સૂબા મહોબતખાનને[2] આ પંડિતની સાંભળેલી અસાધારણ કીર્તિથી જોવાની

---

૧. બનારસીને લઈ તેમના પિતા સં. ૧૬૪૩માં બનારસી પાર્શ્વનાથની જાત્રાએ ગયેલા ત્યારે તે છ વર્ષના બાળક હતા. પ્રથમ તે શ્વેતાંબર હતા, પાછળથી દિગંબર થયેલા જુઓ: “જૈનયુગ”માં આલેખેલું એમનું ચરિત્ર.

૨. ‘મુંબઈ ગેઝેટીઅર’ વૉ. ૧, ભાગ ૧માં ગુજરાતના આપેલા ઇતિહાસ પ્રમાણે ઔરંગઝેબે સને ૧૬૫૮ (સં. ૧૭૧૪)માં દિલ્હીની ગાદી લઈ ગુજરાતના સૂબા તરીકે જશવંતસિંહની (સને. ૧૬૫૯થી ૬૨

તાની પ્રતીતિ એ ગુજરાત માટે શરૂઆતની ખ્યાતિનો સમય લાગે છે, પણ ખાન આગળ ૧૮ અવધાન અને ઉપાધ્યાયપદ આપવા શ્રીવિજયદેવસૂરિને કહેવું, એ આ કાળ સાથે અસંગત થાય છે, જે આગળ પુરવાર કર્યું છે. એટલે એમ માનવા હરકત નથી કે કાન્તિવિજયનો આમાં સ્મરણદોષ થયો લાગે છે અને શ્રી. દેસાઇએ સૂચવેલું 'વિજયપ્રભસૂરિનું નામ ખરું લાગે છે, જે મહોબતખાનની અમદાવાદની સૂબાગીરી સાથેના સમયને સંગત થાય છે. કારણકે તેઓ પોતે જ કહે છે કે, 'ઉપાધ્યાયપદ' તો સં. ૧૭૧૮ માં વિજયપ્રભસૂરિએ આપ્યું હતું.

ગુરુભાઈ ઓ—

પદ્મવિજય માટે આગળ કહી ગયા. બીજા વિદ્યાવિજય 'ઇરિયાવહીની સજ્ઝાય'ના કર્તા તરીકે 'શિષ્ય શ્રીનયવિજય વાચકનો કહે, વિદ્યા અરથ વિચાર, (૧૫).' એ રીતે પોતાની ઓળખાણ આપવાથી જાણી શકીએ છીએ. બીજા હશે પણ તે જાણવાનું સાધન હાથ લાગ્યું નથી.

શિષ્યો—

હેમવિજય–વિજયસિંહસૂરિના સમયમાં શ્રીયશોવિજયજીએ 'સામ્યશતક'નો ઉદ્ધાર કરી 'સમતાશતક' હેમવિજય માટે બનાવ્યું. એટલે તે શિષ્ય તરીકે સંખ્યાક્રમે પહેલા[1] લાગે છે. આ હેમવિજયશિષ્ય ગુરુ માટે અત્યંત ધ્યાન દઈ પથ્યગોચરી વહોરી લાવતા અને તેનો ઉપયોગ કરવા ગુરુ સામે આજીજીભાવે વિનંવણી કરતાં હાથ જોડી ઊભા રહેતા ત્યારે જવાબ મળતો કે, 'જરા થોભ, આટલી પંક્તિ સુધારી લઉં, આ જરા પૂરું કરી લઉં.' આમ ને આમ ઘણો સમય જતાં હેમવિજય શ્રુતસમાધિસ્થના હાથમાંનાં પાનાં ખેંચી લઈ, હાથ ઝાલી ઉઠાડી, આહાર પાણી પાસે લઈ જઈ, ત્યાં બેસાડી, પોતે સામે બેસી યુક્તિ–પ્રયુક્તિથી આહાર કરાવતા.[2]

તત્ત્વવિજય—જેમણે 'અમરદત્ત–મિત્રાનંદ રાસ' સં. ૧૭૨૪ વસંતપંચમી, ગુરુ, સ્યાણી શહેરમાં; 'ચોવીસી' (ચતુર્વિંશતિ જિનસ્તવ), તથા 'જ્ઞાનપંચમી સ્તુતિ' રચ્યાં છે, જેમના ભ્રાતા સકલગણિગણમુખ્ય લક્ષ્મીવિજય ગણિ હતા.[3]

---

૧. બહુત ગ્રંથ નય દેખિકે, મહા પુરુષ કૃતસાર; વિજયસિંહસૂરિ કીઓ સમતા શતકોદ્ધાર. (૧૦૩)
ભાવત જાકું તત્ત્વમન, હો સમતા રસલીન; જ્યું પ્રગટે તુઝ સહજ સુખ, અનુભવ ગમ્ય અહીન (૧૦૪)
કવિ યશવિજય શું શીખ એ, આપ આપકું દેત, સામ્યશતક ઉદ્ધાર કરી હેમવિજય મુનિહેત (૧૦૫)

૨. હેમવિજયે 'ઉપશમ અને શ્રમણત્વ' એ શીર્ષક પોતાના પદમાં આ પ્રકારે દર્શાવી તેઓ કોના શિષ્ય છે તે બતાવ્યું છે—

"શ્રીનયવિજય વિબુધ વરરાજે, ગાજે જગ કીરતી;
શ્રીજશવિજય ઉવજ્ઝાય પસાએ, હેમપ્રભુ સુખ સંતતિ."

૩. કાશીવાળા શ્રીવિજયધર્મસૂરિના–સ્થાનકવાસી મુનિમાંથી આવેલા (સ્વ.) મુનિ શ્રી રત્નવિજયજી નામે શિષ્યે વાચક યશોવિજય માટે બીજી ઘણી વાત મને કહેલી એમાં તથ્યાંશ જેવું તો છે. પણ તેને અત્રે નોંધવા આવશ્યકતા જોઈ નથી.

ગુણવિજય—જેમની શિષ્યપરંપરાનો ખ્યાલ નીચે આપેલા ઉતારાઓથી આવી શકે છે:

"(अ) इति श्रीसकलवाचकशिरोमणिमहोपाध्याय श्री १०५ श्रीयशोविजयगणिविरचितायां श्रीसीमंधरस्वामी विज्ञप्तिः संपूर्णा लिखिता च महोपाध्यं श्रीयशोविजयगणिशिष्यपंडितशिरोमणि पंडित श्री १९ श्रीगुणविजयतच्छिष्यपंडितशिरोवतंसपंडित १७ उपाध्यायश्रीसुमतिविजय गणि तच्चरणपङ्करुहेषु भृंगायमान पं प्रतापविजयेन श्रीसीधानगरे शा. हरखचंद पठनार्थं श्री।[1]

(आ) सं. १७९७ वर्षे अषाढ वदि ३० दिने रात्रौ प्रथमपहरे लिखितं सकलतार्किकचक्रचूडामणिमहोपाध्यायश्री १९ यशोविजयगणि—तत्शिष्य पं. श्रीपू० केसरविजयगणि तत्शिष्यश्री ५ विनीतविजयगणिशिष्यदेवविजयलिपीकृतं श्रीघोघा बंदिर श्रीनवखंडापार्श्वनाथ प्रसादात्[2]।

આ મળી આવતાં નામો સિવાય બીજો એમનો પરિવાર ઘણો હશે, પણ એકંદરે જોતાં કોઈએ પોતાના તરફનું ધ્યાન કોઈનું ટકાવી રાખ્યું નથી. એટલે એમનામાં વિશેષતા સંભવતી નથી. જો હોત તો પોતાને ગૌરવ લેવા યોગ્ય સકલતાર્કિકચક્રચૂડામણિના અનેકાનેક ગ્રંથો મળતા નથી તે ન બનત. નહિ નહિ તો આ અસામાન્ય મહાગુરુના ચરિત્રની તો આશા રાખી શકત! બીજાઓના હાથે જે કાંઈ થોડુંઘણું થયું છે તે આપણે આગળ જણાવી ગયા છીએ. સિવાય પુનમિયાગચ્છના ભાવરત્નસૂરિના ભાવપ્રભસૂરિએ સં. ૧૭૮૩ માઘ શુક્લ અષ્ટમી ગુરુવારે 'પ્રતિમાશતક' ઉપર ટીકા લખી પૂર્ણ કરી છે અને એક જ્ઞાનાર્થીએ અસ્પષ્ટ રીતે જણાવ્યું છે: લિખિતં દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસની પ્રતિ—

'उपाध्यायश्रीयशोविजयगणिकृतः स्वोपज्ञटबार्थ रासः संपूर्णम् [:] लिखित (?) मारंभज्ञ सं० १८०९ वर्षे मासचैत्र वदि ३ गुरुवासरे अवरंगाबादमध्ये लिपिकृतोऽस्ति।'[3]

આવા જૂજ દાખલા આપણને પ્રાપ્ત થાય છે. કાળાંતરે એમની ગુજરાતી કૃતિઓ ઉપર બાલાવબોધ અને શ્રીશુભ-વીરવિજયે પોતાની શક્તિઅનુસાર તેમના 'અધ્યાત્મસાર' સંસ્કૃત ગ્રંથ ઉપર ટબો લખ્યો છે. પણ એમના પ્રૌઢ વિદ્વત્તાભર્યા ગ્રંથોને તેમના પછી ભણવા જેટલી બુદ્ધિ કોઈનામાં રહી નહિ એટલે તેના તરફનું લક્ષ ઓસરવા લાગ્યું.

---

૧. 'વેદ ૪ નયણ ૨ ઋષિ ૭ વિધુ ૧ સંખ્યાઈ, એ સંવત્સર સારુ,
માઘ વસંત પૂર્ણ તિથિ પંચમી, ઉત્તમ સુર ગુરુવારું— —(અમરદત્ત-મિત્રાનંદ રાસ)
ચોમાસુ રહી સીંધાણી સકરું...શ્રીનયવિજય વિબુધવર રાજે...જસવિજય ઉવઝાય શિરોમણિ...તસ પદપદ્મ મધુકર સુવિધિ સેવકમાં શિરતાજ જી...અમરદત્ત મિત્રાનંદ રાસ તત્ત્વવિજય કવિરાજ જી. સકલપંડિત સભાભામિનીભાલસ્થલતિલકાયમાન પંડિત શ્રી ૧૯ શ્રી તત્ત્વવિજય ગણિ તત્પ્રાત્ સકલગણિમુખ્ય ગણિ શ્રી શ્રી લક્ષ્મીવિજય ગણિચરણકમલેભ્યો નમઃ ૧ અને—શ્રીનયવિજય...શ્રીજસવિજય વાચક કાજે...સેવક તત્ત્વવિજય—ઇતિ શ્રી મહાવીરજિન બાર ૨૯ લિ. ગણિ પ્રેમવિજયેન લિપીચક્રે સંવત ૧૮૨૫ વર્ષે પોષ વદિ ૩ દિને શ્રી વિજાપુર જ્યાપુર ચોમાસી— (જૈ. ગૂ. ક. ભા. ૨ પૃષ્ઠ ૨૨૮)

૨. 'જૈન ગૂર્જર કવિઓ ભા.' ૨ પૃષ્ઠ ૨૯ (આ સીધાનગર તે સીધાગામ, વડોદરા જિલ્લાનું 'વેસ્ટર્ન (પહેલાં બી. બી. સી. આઈ) રેલ્વેનું વડોદરા અને ભરૂચ વચ્ચેનું-જંકશન સ્ટેશન છે. આ સ્ટેશનવાળું ગામ-કરજણ ત્યાંથી સીધાગામ ૨-૩ માઈલ દૂર છે.

૩. જૈન ગૂર્જર કવિઓ ભા. ૨. પૃષ્ઠ ૩૩૭.

દાર્શનિક વિષયોની અતિસૂક્ષ્મ તર્કગામિની ચર્ચાઓથી ભરેલા તથા શબ્દ, છંદ, કાવ્ય આદિ શાસ્ત્રોના મહાદુર્બોધ ગહન ગ્રંથોનું મૂલ્ય કોઈ આંકી ન શક્યું. પરિણામે એનો પ્રચાર થયો નહિ, પણ જે કાંઈ હતું તે બધું સચવાઈ રહેવાને બદલે તેમાંનો મોટો ભાગ કચરા તરીકે ઘરમાં કે ઉપાશ્રયમાંથી ક્ષુદ્ર ઉપયોગ કે દ્રવ્યપ્રાપ્તિ માટે વિનાશના મુખમાં પડ્યો, અને બાકીનો કોઈ કોઈ સ્થળે અસ્તવ્યસ્ત થઈ ગયો![1] આ એક ખેદનો વિષય છે પણ રોષનો વિષય તો એ છે કે, તપગચ્છના આચાર્યોએ પોતાના ગચ્છનું અનુપમ ગૌરવ વધારનાર આ મહાન પુરુષના અદ્વિતીય ગ્રંથોની લહિયાઓ પાસે નકલો કરાવવાની કે તેને ભંડારોમાં અત્યંત કાળજીથી સાચવી રાખવાની વાત તો બાજુ ઉપર રહી, પણ યશોવિજયે સાધુઓના દુઃશાસન સામે પાણીદાર છાતીવાળા ઘા કર્યા તે બદલ તેમની પાસે માફીપત્ર પણ લખાવ્યું!

ઉપાધ્યાય યશોવિજયજી ગચ્છનાયક ન હોવા છતાં પણ–શાસનપત્રો–આજ્ઞા–મર્યાદાઓ બાંધતા–કાઢતા. બનતા સુધી એમના હાથનું લખેલું એક શાસનપત્ર સં. ૧૭૩૮ ના વૈશાખ સુદ ૭ ગુરુવારનું–પુરાતત્ત્વવેત્તા શ્રીજિનવિજયજીને મળેલું તે તેમણે 'આત્માનંદ પ્રકાશ' માસિકનાં પુ. ૧૩, અં. ૬માં પ્રસિદ્ધ કરેલું છે.

ઉપાધ્યાયજીના જીવન અંગેની ઠેર ઠેર વેરાયલી વિગતોને જ્યાં જ્યાંથી હાથ લાગી ત્યાં ત્યાંથી એકઠી કરીને ગવેષણાપૂર્વક અત્રે રજૂ કરવાનો પ્રયત્ન કર્યો છે. આશા છે કે, એ એમના સમ્યગ્જીવનનો બોધ કરવામાં ઉપયોગી નિવડશે.

ગૂર્જર ગ્રંથોની સાલવારી જે આ લેખનો મુખ્ય વિષય છે, તેની ટીપ આગળ આપી છે. સિવાય ઘણા પદ્ય–ગદ્ય ગ્રંથો–લેખો રહી જવા પામ્યા હશે. સિદ્ધપુરમાં દિવાળીના દિવસે સંસ્કૃત 'જ્ઞાનસાર અષ્ટક' પૂરું કર્યું, તેના ઉપર–'બાળાવબોધ' લખ્યો છે. તે પ્રસિદ્ધ થયો છે. 'અધ્યાત્મમતપરીક્ષા–બાલાવબોધ' તથા 'જૈનતર્કભાષા'નો પ્રાકૃત લેખ–બડા લેખ લિખાવી મોકલ્યો છઇ. તિણમાં નયનિક્ષેપ પ્રમાણરી મણા ન રહી છઇ.' તે તથા બીજા પૂછાયલા પ્રશ્નો ઉત્તરરૂપ કાગળો, પરચુરણ લખાણો–એ બધું હજુ અપ્રસિદ્ધ સ્થિતિમાં છે. હાલ તો આપણે ટીપ પૂરતો જ વિચાર કરીએ.

---

१. योगविंशिकाके सम्बधमें भी वही बात है क्योंकि इसकी टीकाको भी एक ही नकल मिल सकी। उस एक नकलकी खोज निकालनेका श्रेय, प्रवर्तकजीके ही स्वर्गवासी शिष्य मुनि श्रीभक्तिविजयजीको ही है। वह नकल कालके गालमें जा ही रही थी कि सौभाग्यवश उक्त मुनिश्रीको मिल गई। प्रसंग ऐसा हुआ कि अमदावादमें किसी श्रावकके वहाँ कचरेके रूपमें पुराने पन्ने पडे थे, जिनको उक्त मुनिजीने देखा और उनमेंसे उनको उपाध्यायजीकृत 'योगविंशिका–टीका' की एक अखंड नकल मिली जो उनके स्वहस्त लिखित ही है। यद्यपि उपाध्यायजीने श्रीहरिभद्रकृत वीसों विंशिकाओंके ऊपर टीका लिखी है जैसा कि 'योगविंशिका–टीका' के उस अन्तिम उल्लखसे स्पष्ट है—इति महोपाध्याय–श्री कल्याणविमलगणिशिष्यमुख्यपंडितश्रीनयविजयगणिचरणकमलचञ्चरीक–पण्डितश्रीपद्मविजयगणिसहोदरोपाध्यायश्रीजसविजयगणिसमर्थितायां विंशिकाप्रकरणव्याख्यायां योगविंशिकाविवरणं संपूर्णम्। तथापि प्रस्तुत एक विंशिकाकी टीकाके सिवाय शेष उन्नीस विंशिकाओंकी टीकाऐं आज अनुपलब्ध हैं॥

—(યોગદર્શન–વિંશિકા વૃત્તિ, ટીકા–સંપાદક. પં. સુખલાલ–પરિચય–પૃષ્ઠ ૧૪.)

એમણે ક્યાં ક્યાં અને ક્યારે ક્યારે વિહાર કરતાં સ્થિરતા કરેલી તથા ચોમાસાં કરેલાં, ત્યાં કાળ કેવી રીતે નિર્ગમન કરેલો, તેનો પત્તો મળે છે. કાશીના અભ્યાસ પછીની ચાર કૃતિઓ સં. ૧૭૦૯ની કાળ મર્યાદામાં આવી શકે. તેમાં 'દ્રવ્યગુણપર્યાયરાસ–સ્વોપજ્ઞ સ્તબક' ગુણક્રમે પ્રથમ છે જ પણ રચનાનું સ્થાન અન્ય લાગતું નથી. એમાં કાશીના અભ્યાસના પરિપાકરૂપે મળેલી સફળતાને જણાવી છે. રચનામાં પણ બહુશ્રુતતા, પ્રચુર પાંડિત્ય, તત્ત્વચિંતન અને તેના સ્વાનુભવનું તાજગીભર્યું સ્ફુરણ દેખાય છે. એમાં એમનો નવો ઉત્સાહ તરી આવે છે. પદ્ય તો ઠીક છે પણ ગદ્ય–જે અત્યારના કાળ જેટલું ખેડાયેલું નહોતું એવા વખતે–એમણે ગૂર્જર ગિરાને પસંદ કરી દર્શનિક પરિભાષાને તેમાં ઉતારવાનો સફળ મનોરથ સિદ્ધ કર્યો, એ આપણાં અનુમાનને પુષ્ટ કરે છે.

'એકસો પચીસ ગાથાના સ્તવન'ને અમે છેલ્લું યા સં. ૧૭૧૮ પહેલાંનું માનેલું પણ વિચાર કરતાં તેને બીજું માનવાનાં કારણો પણ છે. સાધુઓના આચારો અને વિચારો વિકૃતપણાને પામેલા અને તેનાથી જે જે સ્થિતિ ઉપસ્થિત થઈ અને દુઃખમાં પરિણમી–એ દુઃખ–પરિણામને લોકોની નજર સમક્ષ લાવવાનો–અને તેના નિવારણનો–અને એ રીતે સ્વચ્છ કરેલા વાતાવરણમાં પવિત્રતા વસાવવાનો એ સ્તવનમાં પ્રયત્ન છે. આ જોડીની અસરથી પોતાનાં દૂષણોને ઢાંકવાના જે દાંભિક ગંચાવો કર્યાં તેનો શ્રીયશોવિજયએ ૩૫૦ ગાથામાં સબળ અને સવિસ્તર ઉત્તર આપી નિરર્થક ઠરાવ્યા છે.

" નવિ નિંદામારગ કહેતાં, સમ પરિણામે ઘટ ઘટના !
કોઈ કહે નથી શી જોડી, શ્રુતમાં નહીં કાંઈ ઓડી.

" જન મેલનની નહીં ઇહાં, ઇહાં દૂષણ એક કહાય, જે મલને પીડા થાય...
ખલવયણ ગણે કુણ સૂરા, જે કાઢે પયમાંથી પુરા."

આવાં પોતાના ઉદ્ગારો–ઢાળમાંથી રમતાં કાઢ્યા છે એ એમની રચનાઓ માટે–જે કાંઈ બોલાતું તેની અસરમાંથી ઉદ્ભવેલા છે. એટલે આ સ્તવન પહેલાં કેટલીક જોડી જોડાઈ હશે. ૩૫૦ ગાથાના સ્તવન પછી 'સમતા શતક' અને 'સમાધિ શતક'ને મૂકી શકાય.

આ પછી આપણને સં. ૧૭૨૧ સુધીમાં એક–સં. ૧૭૧૮ માં વિજયપ્રભસૂરિએ વાચકપદ આપવા સિવાયના–બીજા બનાવો તથા સં. ૧૭૩૯ થી સં. ૧૭૪૩ કે જે વર્ષમાં તેમનું ડભોઈમાં અવસાન થયું એ ચાર વર્ષનો ગાળો કેવી રીતે નિર્ગમન કર્યો, એ નક્કી કરવા માટેનું સાધન બહાર આવે ત્યારે ખરું.

એમના આંતર જીવનનું ઊંડાણ અમે બીજા લેખમાં જણાવ્યું છે. એની પૂર્તિમાં કહેવા જેવું એ છે કે, આ લેખમાં એમની કૃતિઓને કાલક્રમમાં ગોઠવી છે. તેનો એક હેતુ એ છે કે, એમના આંતર રહસ્યના પ્રકારને જોવા જાણવાનું આથી બની શકે. પાંડિત્ય બતાવવા તેઓ સંસ્કૃતમાં રચના કરતા હોય એવું નથી. તેમણે લોકભાષા પ્રાકૃત, ગૂજરાતીમાં લખવાની અગત્ય કેટલી છે; તે પણ એમણે પ્રમાણુંસર–'દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ'ના ટબામાં સમજાવ્યું છે તેમ દ્રવ્યાનુયોગ વિષય એ શું છે? એના અનુસેવનથી ફળપ્રાપ્તિ કઈ કઈ થાય એ વિષે તેઓ ઉલ્લેખે છે.

"દ્રવ્યાદિક ચિંતાઇ સાર, શુક્લ ધ્યાન પણિ લહિઇ પાર:
તે માટે એહિ જ આદરો, સદ્ગુરુ વિણ મત ભૂલા ફરો."

—દ્રવ્યાદિકની ચિંતાઈ શુક્લધ્યાનનો પણિ પાર પામિઈ, જે માહિં—આત્મદ્રવ્ય–ગુણ-પર્યાય ભેદ ચિંતાઈ શુક્લધ્યાનનો પ્રથમ ભેદ હોઈ, અનઇ–તેહની અભેદ ચિંતાઇ દ્વિતીય પાદ હોઈ તથા શુદ્ધ દ્રવ્ય–ગુણપર્યાયની ભાવનાઇ 'સિદ્ધ સમાપત્તિ' હોઈ તે તો શુક્લધ્યાનનું[1] ફળ છઈ.

વળી, જ્ઞાનહીન ક્રિયા અને ક્રિયાહીન જ્ઞાનવાન વચ્ચે કેટલું અસમાન અંતર છે, તે 'યોગદૃષ્ટિ સમુચ્ચય'માંથી આ જ ગ્રંથમાં બતાવ્યું છે. એ જોયા પછી—"તેઓ શરૂમાં–બાહ્યમુખ હોઈ, સમ પરિણામ રહિત, ખંડન–મંડનમાં પડી ગયા હતા." એવા ઉલ્લેખનો નિર્ણય કરવો જોઈએ. માનમદ માટે 'વહાણ સમુદ્ર સંવાદ'થી 'ચઢતી પડતીની સજ્ઝાય' સુધી શું શું કહી ગયા છે તે ધ્યાનમાં લેવું જોઈએ. અને લોકોને છક કરી નાખવા માટે, એક શ્લોક ઉપર છ છ મહિના સુધી વ્યાખ્યાન ચલાવતા, આ જૂઠાણા માટે 'અગિયાર અંગની સજ્ઝાય' વિષે બોલતાં, કહી દીધું છે. એમની શૈલી સૂત્રાત્મક–અતિસંક્ષેપમાં છે; જે ઘણા અર્થનો સમાવેશ કરે છે.

સમ્યક્ત્વ આશ્રયી ગુણાનુરાગિતા, એ તો એમનામાં મોટામાં મોટો ગુણ હતો. 'યોગદર્શન'નો એનો દાખલો તાજો જ છે. 'ગીતા'ના, 'યોગવાશિષ્ઠ'ના શ્લોકોને પોતાના ગ્રંથમાં સમન્વયાર્થે ઉતાર્યાં છે. દિગંબર ગ્રંથોનો અનુવાદ તથા તે ઉપર ટીકાઓ લખી છે. આનંદઘન જેવા મહાયોગીને મળવાની એમને ઘણી તાલાવેલી છે અને મળે છે ત્યારે—

"આનંદ કે સંગ સુજસ હિ મિલે જબ, તબ આનંદ સમ ભયો સુજશ;
પારસ સંગ લોહા જો ફરસત, કંચન હોત હી તાકે કસ."

આ ઉક્તિમાં તેમની કેટલી બધી વિનમ્રતા જોવાય છે![2]

એ જ નમ્રતાથી ઉપા૦ વિનયવિજયનો અધૂરો રહેલો રાસ પૂરો કર્યો તે સાથે એમના ગીતાર્થપણાના તથા અન્ય ગુણોનો મહિમા ગાયો છે!

હા, એમણે કટુ વચનો ઉચ્ચાર્યાં છે, તે પરિસ્થિતિએ સર્જેલી કુટિલતા સામે. એમણે કોઈની વ્યક્તિગત નિંદા કરી નથી. એટલી સામાન્યતા એમનામાં હતી નહિ. એમની શાસ્ત્ર-સિદ્ધ પ્રજ્ઞાએ જોયું કે, સર્વ વર્ગના લોકોનો સાચો માર્ગ શો છે તે જો બતાવવામાં નહિ આવે તો લોકો દિગ્મૂઢ બની ગમે તે વિમાર્ગે ચઢી જશે! કેમકે એ સમયમાં જેઓ સિદ્ધાંત ચોરી કરી, અર્થની દેશના દઈ, ધામધૂમની ધમાધમ ચલાવતા હતા! અને એ રીતે

---

૧. સમાપત્તિ ધ્યાન 'પાતંજલયોગ દર્શન'માં વર્ણવ્યું છે, જે અમે અમારા બીજા લેખમાં તેમાંના સૂત્રો આપી દર્શાવ્યું છે. ચિત્તનું ધ્યેય વિષયમાં સમાનાકાર બની જાય એ સમાપત્તિ છે. એના ચાર ભેદ છે. જે બધા સબીજ હોઈ સંપ્રજ્ઞાત (યોગ) કહેવાય છે. જૈન શાસ્ત્રમાં સમાપત્તિની મતલબ એ ભાવનાઓથી છે કે જે ભાવનાઓ ચિત્તમાં એકાગ્રતા ઉત્પન્ન કરે–જેનો અનુભવ શુક્લધ્યાનવાળા આત્માઓ કરે છે. મોહની ઉપશમ–દશા અર્થાત્ ઉપશમશ્રેણિમાં સંપ્રજ્ઞાત સમાધિની તરફ સબીજ અને મોહની ક્ષીણ અવસ્થામાં અર્થાત્ ક્ષપકશ્રેણિમાં અપ્રજ્ઞાત સમાધિની તરફ નિર્બીજ ઘટાવી લેવી.

તેમના તરફ પણ પોતાનો પ્રમોદભાવ વ્યક્ત કરી, ઉદાર દૃષ્ટિ રાખી, તેમને દુષ્કર-કાર થકી પણ અધિકા કહી સન્માનિત કર્યાં છે.[1]

પ્રસંગોપાત્ત એ વાત મેં મારા તરફથી કરી, હવે એક વાત તમો કહો—આ કવિ તાર્કિકશિરોમણિ પ્રખર વિદ્વાન અને ધુરંધર પ્રભાવક હેમચંદ્રાચાર્ય પછી સર્વ શાસ્ત્ર-પારંગત સૂક્ષ્મદ્રષ્ટા અને બુદ્ધિનિધાન જ્ઞાનપુંજ પ્રતાપી મહાપુરુષ થયા એ નિઃશંક વાત છે. શ્રીમદ્ હરિભદ્રસૂરિ જેવા વિદ્વાન જૈનશાસનમાં એક જ છે. એમની પછી એક હજાર વર્ષ પછી આ યશોવિજય જૈનશાસનના સદ્ભાગ્યે થયા,[2] એમને તપગચ્છનાં આચાર્યોએ—આચાર્ય પદવી કેમ ના આપી?

રત્નને રત્નપરીક્ષક જુએ તો તેની નજરમાં તેનું મૂલ્ય કર્યા સિવાય રહેતું નથી; અને એ રીતે એમનું મૂલ્ય 'ન્યાયાચાર્ય' તરીકે થયું છે. આથી અનન્યસૂચક એવું તેમનું શીર્ષક એમના નામ સાથે જોડયું છે

विषमधीत्य पदानि शनैः शनै-
र्हरति मन्त्रपदावधि मान्त्रिकः ।
भवति देशनिवृत्तिरपि स्फुटा,
गुणकरी प्रथमं मनसस्तथा ॥११॥

માંત્રિક મંત્રપદો સુધી જ મંત્રપદોને બોલતો ધીમે ધીમે ઝેરને દૂર કરે છે, તેમ મનને સર્વ પ્રથમ ગુણકારી દેશવિરતિ પણ ધીમે ધીમે વિશેષ સ્ફુટ થતી જાય છે.

અધ્યાત્મસાર સટીક] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

---

૧. ચરણકરણ ગુણહીણડાં જ્ઞાનપ્રધાન આદરિઇં રે, ઇમ કિરિયાં ગુણ અભ્યાસી ઇચ્છાયોગથી તરિઇં રે.
(૨૬૩) દ્ર. ગુ. પં. રા.

બાલાદિક અનુકૂલ ક્રિયાથી આપે ઇચ્છાયોગી;
અધ્યાત્મ મુખ યોગ અભ્યાસે, કેમ નહિ કહીએ યોગી. (૩૫૦ ગા. સ્ત.)
આ બધું એમણે પૂર્વસૂરિઓના આધારે કહ્યું છે. (જુઓ યોગ દૃ. સ.)
શુદ્ધ સંવેગી કિરિયા ધારી પણ કુટિલાઈ ન મૂકે. (કુ. ગુ. સ.) શુદ્ધપ્રરૂપક સાધુ નમીજે (સુ. ગુ. સ.)

૨. સ્વ. મો. દ. દેસાઈ (જૈ. ગુ. ક. ભા. ૨, ૨૯૦ યશોવિજય).

અઢારમી સદીના મહાન જ્યોતિર્ધર

મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી

[ટૂંક પરિચય]

[લેખક : પરમપૂજ્ય આચાર્ય શ્રી વિજયપદ્મસૂરિજી મહારાજ]

શ્રી. યશોવિજયજી મહારાજના જીવનચરિત્ર અંગેની આધારભૂત માહિતી બહુ ઓછા પ્રમાણમાં મળે છે. તે મેં 'શ્રી. યશોદ્વાત્રિંશિકા' શીર્ષક પ્રાકૃત ભાષામાં રચેલા કાવ્યનો પ્રાકૃત ભાષાને નહિ જાણનાર એવા સામાન્ય વાચકવર્ગને તેમ જ બીજા વિદ્વાનોને પણ ઉપયોગી થઈ પડે એ હેતુથી મૂળ એ બત્રીશીને લક્ષમાં રાખી બીજા ગ્રંથોનો ઉપયોગ કરીને અહીં એ દરેક શ્લોકનું વિશદ વિવેચન આપવામાં આવ્યું છે. વિવેચનમાં મૂળ બત્રીશીનો તે તે શ્લોક દર્શાવવા માટે દરેક સ્થળે શરૂઆતમાં કૌંસમાં તે તે અંક આપ્યો છે.

(૧) ગુજરાત દેશમાં આવેલા ખંભાત બંદર નામના પ્રસિદ્ધ નગરમાં રહેલા શ્રી. સ્તંભનપાર્શ્વનાથ પ્રભુને પ્રણામ કરીને તેમ જ જેઓ મારા આત્માના પરમ ઉદ્ધારક છે તે મારા પરમપૂજ્ય પરમોપકારી ગુરુવર્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રીમદ્ વિજયનેમિસૂરીશ્વરજી મહારાજના પરમ પવિત્ર ચરણકમળને નમસ્કાર કરીને ન્યાયવિશારદ ન્યાયાચાર્ય શ્રીમદ્ યશોવિજયજી ઉપાધ્યાયજી મહારાજ–જેઓ લગભગ ત્રણસો વર્ષ ઉપર આ પૃથ્વીતલને પાવન કરતા વિચરતા હતા, જેઓ સ્વસિદ્ધાંત પરસિદ્ધાંતના જ્ઞાતા હતા, જેઓ ન્યાયશાસ્ત્રના જ્ઞાનમાં જગતના પ્રખર પંડિતોને પણ આશ્ચર્ય પમાડે એવા જ્ઞાનવાળા હતા, જેઓ ચારિત્રની આરાધનામાં અત્યંત કુશળ હતા, જેઓ પ્રાચીન અને નવ્ય ન્યાયના તેમ જ ધર્મસિદ્ધાંતના ગ્રંથો બનાવવામાં અતિતીક્ષ્ણ બુદ્ધિવાળા હતા–તેમનું, તેમની શિષ્યપરંપરામાં થયેલા શ્રી કાંતિવિજય મહારાજકૃત 'સુજસવેલી ભાસ' વગેરે ગ્રંથોના આધારે હું ચરિત્ર રચું છું.

(૨–૩) પરમપૂજ્ય શ્રીહરિભદ્રસૂરિજી અને કલિકાલસર્વજ્ઞ હેમચંદ્રસૂરીશ્વરજી વગેરે શ્રીજૈનશાસનના સ્તંભ સરખા અને જ્ઞાનવાળા અનેક પૂર્વાચાર્યો થયા તે પછી ન્યાયશાસ્ત્ર વગેરેમાં નિપુણ અને પ્રતિભાશાળી શ્રીમદ્ યશોવિજયજી વાચક થયા, તેમને હું મન, વચન, કાયા વડે નમસ્કાર કરું છું.

(૪) ઉપાધ્યાય મહારાજે સંસ્કૃત ભાષામાં 'ન્યાયખંડખાદ્ય, જ્ઞાનબિંદુ, અધ્યાત્મસાર' વગેરે અનેક ગ્રંથો બનાવ્યા; પ્રાકૃત ભાષામાં 'શ્રીગુરુતત્ત્વવિનિશ્ચય, ઉપદેશરહસ્ય' વગેરે અનેક ગ્રંથો બનાવ્યા, ગુજરાતી ભાષામાં 'આઠીઆઓ, સવાસો, દોઢસો ગાથાનાં સ્તવનો'

ને 'દ્રવ્યગુણપર્યાયનો રાસ' તથા શ્રીજિનસ્તવનની અનેક 'ચોવીસી' વગેરે ઘણા ગ્રંથો બનાવ્યા તથા હિંદી ભાષામાં પણ પ્રભુભક્તિનાં 'પદો' વગેરે રૂપ અનેક ગ્રંથો બનાવ્યા છે. એ ગ્રંથો ઉત્તમ ભાવાર્થવાળા અને ગંભીર અર્થવાળા છે. એવા મહાન ગ્રંથોના રચનાર શ્રીયશોવિજયજી વાચકને હું વંદના કરું છું.

(૫) શ્રુતજ્ઞાનને ધારણ કરનાર એવા, ઉપાધ્યાય-વાચકરૂપી ગગનમંડલને દિપાવવામાં સૂર્ય સરખા, અને જગતમાં વર્તતા કુમતોના ધર્મને માનનારા અને રાગી દ્વેષી એવા દેવ-ગુરુને માનનારાના દુર્મતનો સ્યાદ્વાદ શૈલીથી નાશ કરનારા, ધૈર્યગુણવાળા અને 'આચારાંગ' વગેરે સ્વદર્શનનાં (જૈન દર્શનના) સિદ્ધાંતોને તેમજ શ્રુતિઓ આદિ પરદર્શનના સિદ્ધાંતને જાણનારા એવા શ્રીયશોવિજયજી વાચકવરને હું સર્વદા વંદના કરું છું.

(૬) ધર્મી જનોના સમુદાયથી પ્રશંસાપાત્ર થયેલા ગુજરાત દેશમાંના વડોદરા પ્રાંતમાં કલોલ ગામ અને પાટણની વચમાં આવેલા કનોડા નામના ગામમાં જેમનો જન્મ થયો હતો તે શ્રીયશોવિજય ઉપાધ્યાયને વંદના કરું છું. (અહીં શ્રીઉપાધ્યાયજી મહારાજની જન્મભૂમિ તરીકે-કનોડા[1] ગામ જણાવ્યું તે 'સુજસવેલી ભાસ' વગેરે ગ્રંથના આધારે કહ્યું છે.)

(૭) તેમના પિતાનું નામ નારાયણદાસ અને માતાનું નામ સૌભાગ્યદેવી હતું. આ માતાપિતાના એ મોટા પુત્ર હતા. તેમના નાના ભાઈનું નામ પદ્મસિંહ અને તેમનું પોતાનુ નામ જશવંત હતું.

(૮) તે સમયમાં પવિત્ર ચારિત્રવાળા પરમપૂજ્ય પંડિત શ્રીનયવિજયજી મહારાજ એ જિલ્લામાં વિહરતા હતા. તેઓ વિ. સં. ૧૬૮૭માં પાટણની નજીકમાં આવેલા કુણઘર નામના ગામમાં ચોમાસુ રહ્યા હતા. ત્યાં ચોમાસુ પૂર્ણ કરીને ગામેગામ વિહાર કરતા અને ભવ્ય જીવોને ધર્મદેશના દેવામાં નિરંતર ઉદ્યમવાળા તે શ્રીનયવિજયજી મહારાજ વિ. સં. ૧૬૮૮માં કનોડા ગામે પધાર્યા.

(૯) પોતાના ગામમાં ગુરુમહારાજ પધારેલા જાણી સૌભાગ્યદેવી નિત્ય પોતાના જશવંત ને પદમસી નામના બન્ને પુત્રો સહિત વ્યાખ્યાન સાંભળવા જતી હતી. ત્યાં શ્રીનયવિજયજી ગુરુમહારાજની સંસારની અસારતા દર્શાવનારી વાણી સાંભળીને ત્રણેને વૈરાગ્યભાવના જાગવાથી માતા અને બન્ને પુત્રો-એમ ત્રણે જણાએ નયવિજયજી મહારાજના વરદ હસ્તે અણહિલપુર-પાટણમાં વિ. સં. ૧૬૮૮માં દીક્ષા અંગીકાર કરી.[2]

---

૧. કન્હોડુ, કમ્હોડુ-આવાં નામ પણ અન્યત્ર જણાવ્યાં છે.

૨. પદ્મસિંહ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજના સહોદર ભાઈ હતા. નાના ભાઈ ઉપર મોટાભાઈ પૂર્ણ લાગણી ધરાવતા હતા. એમ 'શ્રીગુરુતત્ત્વવિનિશ્ચય' આદિનો અંતિમ ભાગ વગેરે જોતાં નિર્ણય થાય છે-જુઓ-પ્રેમ્ણાં यस्य च सद्म पद्मविजयो जातः सुधीः सोदरः ॥ તથા-पंडितपद्मविजयगणिसहोदरेण पंडित-यशोविजयेन આ દીક્ષા સમયે બંનેની દસ કે બાર વર્ષથી મોટી ઉમર નહિ હોય, એમ ઐતિહાસિક ગ્રંથોના અવલોકનથી જણાય છે.

(૧૦) ગુરુમહારાજે માતુશ્રી સૌભાગ્યદેવીના જશવંત નામે મોટા પુત્રનું મુનિ જશવિજય નામ સ્થાપ્યું, અને નાના પુત્ર પદમસીનું મુનિ પદ્મવિજય નામ સ્થાપ્યું. એમાં મુનિ જશવિજયજી એજ જાણવા કે જેમનું આ સ્તોત્રરૂપે જીવનચરિત્ર દર્શાવાય છે. (દીક્ષા આપ્યા પછી માતાનું શું નામ સ્થાપ્યું તે સંબંધી હકીકત જણાવી નથી.) તેજ સાલમાં (૧૬૮૮ માં) આચાર્ય શ્રીવિજયદેવસૂરિજી મહારાજે બંનેને વડી દીક્ષા આપી.

(૧૧) શ્રીગુરુમહારાજની કૃપાથી મુનિ શ્રીજશવિજયજીએ (એટલે શ્રીયશોવિજયજી ઉપાધ્યાય મહારાજે) પોતાની અગાધ બુદ્ધિના બળથી સ્વ અને પર એમ બન્ને સિદ્ધાન્તોના એટલે કે 'આચારાંગ' આદિ સ્વસિદ્ધાન્તના અને શ્રુતિઓ આદિ પરદર્શનોના સિદ્ધાંતના પણ અમુક અંશે વિશાળ જ્ઞાનવાળા થયા. આ રીતે દીક્ષા લીધા બાદ અલ્પ સમયમાં અનેક શાસ્ત્રોના ક્રમસર અભ્યાસદ્વારા તત્ત્વપરિચય મેળવવા સતત પ્રયત્નશીલ બન્યા હતા.

(૧૨) અનુક્રમે વિ. સં. ૧૬૯૯માં શ્રીજશવિજયજી આદિ શિષ્ય સહિત ગુરુ મહારાજ શ્રીનયવિજયજી ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા અને માર્ગમાં અનેક જીવોને પ્રતિબોધ પમાડતા રાજનગરમાં એટલે જૈનપુરી અમદાવાદ નગરીમાં પધાર્યા.

(૧૩) અહીં (અમદાવાદ)માં વિ. સં. ૧૬૯૯માં અનેક સભાજનોની સમક્ષ શ્રીજશવિજયજી મુનીશ્વરે આઠ અવધાન કર્યાં, કે જેમાં તેમણે આઠ સભાજનોમાંના દરેકની આઠ આઠ વસ્તુઓ—કોઈનું ગણિત, કોઈનું કાવ્ય, એમ ૬૪ વસ્તુઓને બરાબર યાદ રાખીને અનુક્રમે તે વસ્તુઓના જવાબ કહી દેખાડ્યા. આ રીતે પોતાની સ્મરણશક્તિનો પરિચય કરાવ્યો. શ્રીજશવિજયજીનું બુદ્ધિબળ જોઈને અમદાવાદનિવાસી શ્રાવક ધનજી સૂરા "બહુ જ રાજી થયા."

(૧૪) આ પરથી શ્રીધનજી શેઠે શ્રીનયવિજયજી મહારાજને વિજ્ઞપ્તિ કરી કે, 'હે ગુરુવર્ય ! આપશ્રીના શિષ્ય શ્રીજશવિજયજી મહારાજ ઘણા સુલક્ષણ છે, ઘણા વૈરાગ્યવાળા છે અને ઘણી બુદ્ધિવાળા છે. માટે આવા બુદ્ધિમાન શિષ્યને છયે દર્શનના મોટા મોટા ગ્રન્થો ભણાવવા યોગ્ય છે. કારણ કે આપના આ શિષ્ય છયે દર્શનનાં શાસ્ત્રોમાં નિપુણ થઈને શ્રીજૈનશાસનની પ્રભાવના કરી શકે એવા છે.'

(૧૫) ધનજી શેઠે જ્યારે શ્રીયશોવિજયજીને ભણાવવા માટે નયવિજયજીને આગ્રહભરી વિનંતિ કરી ત્યારે ગુરુમહારાજે પોતાનો અભિપ્રાય દર્શાવ્યો કે, 'હે ધનજી શેઠ ! શ્રીજશવિજયજી ખરેખર સુલક્ષણ અને ઘણા જ બુદ્ધિશાળી શિષ્ય છે. જો છયે દર્શનના શાસ્ત્રોમાં નિપુણ થાય તો અવશ્ય એ શાસનપ્રભાવના કરી જૈનશાસનને દિપાવે તેવા છે. મારા શિષ્યની બુદ્ધિની પરીક્ષા તમોએ કરી તે યથાર્થ કરી છે. પરન્તુ શિષ્યને ભણાવવાની બાબતમાં મોટી મુશ્કેલી એ છે કે છયે દર્શનના શાસ્ત્રોનું અતિવિશાળ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવાનું મુખ્ય સ્થાન તો કાશી—વાણારસી નગરી છે, કારણ કે ત્યાં જ સૂક્ષ્મ બુદ્ધિવાળા મહાન ન્યાયશાસ્ત્રીઓ, સાહિત્યશાસ્ત્રીઓ, વેદાન્તશાસ્ત્રીઓ ને દર્શનશાસ્ત્રીઓ વસે છે અને ગુજરાત

વગેરે દેશોમાં વિશાળ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવાનું કોઈ એવું પ્રસિદ્ધ સ્થાન નથી. વળી, તે કાશીના શાસ્ત્રીઓ ત્યાં શિષ્યાદિકને છયે દર્શનના જે મહાન્ ગ્રન્થો ભણાવે છે તે ધન વિના ભણાવી શકાય નહીં. તેમજ અહીંથી કાશી સુધી જવું તે પણ મોટી મુસીબત છે. માટે એ બાબત બહુ વિચારણીય છે.'

(૧૬). આ પ્રમાણે શિષ્યને કાશી લઈ જઈને ભણાવવા સંબંધમાં ગુરુમહારાજે અધ્યાપકના પગારની મુસીબત બતાવી ત્યારે તે સાંભળીને ધનજી શેઠે કહ્યું કે, 'હે ગુરુરાજ! આપે જે પગારની મુસીબત કહી તે સાચી છે પરંતુ આવા મહાન બુદ્ધિશાળી અને શાસનપ્રભાવી શિષ્યને માટે અભ્યાસની સગવડ કરાવી દેવી એ અમારું કર્ત્તવ્ય છે. માટે આ બાબતમાં હું રૂપાનાણાના ૨૦૦૦ (બે હજાર) દીનાર (મહોર) ખર્ચ કરવા તૈયાર છું. માટે આપ કાંઈ પણ સંકોચ રાખ્યા વગર શિષ્યને લઈ કાશી પધારો !' આ પ્રમાણે ધનજી શેઠનાં વચન સાંભળી પોતાના શિષ્યને ભણાવવા માટે સારા મુહૂર્તે કાશી તરફ વિહાર કરી, અનુક્રમે આવતાં અનેક ગામોમાં ભવ્ય જીવોને પ્રતિબોધ કરતા કરતા અને શિષ્યને ભણાવવાની ઉત્તમ સગવડથી સંતોષ પામતા શ્રીયશોવિજયજી વગેરે શિષ્ય સહિત શ્રીનયવિજયજી ગુરુમહારાજ કાશીનગરમાં પધાર્યા.

(૧૭) કાશીનગરમાં આવીને ભણાવનાર ઉપાધ્યાયની સગવડ યથાવસ્થિત કરીને ઉત્તમ બુદ્ધિવાળા શ્રીયશોવિજયજી મહારાજે બ્રાહ્મણ વિદ્યાગુરુઓની પાસે છયે દર્શનના તાત્પર્યવાળા–રહસ્યવાળા ગ્રન્થોનું અધ્યયન શરૂ કર્યું.

(૧૮) તે છયે દર્શનના ગ્રન્થોમાં ન્યાયશાસ્ત્રોમાં પ્રાચીન અને નવીન ન્યાય એમ બે પ્રકારનાં ન્યાયશાસ્ત્રો છે તે બન્નેના ગ્રન્થો ત્રણ વર્ષમાં યથાર્થ જાણી લીધા. અને એમાં નવીન ન્યાયનો 'તત્ત્વચિંતામણિ' નામનો ગ્રન્થ જે બહુ કઠિન છે તે પણ અલ્પ કાળમાં બુદ્ધિના પ્રભાવથી ભણી લીધો.

(૧૯) એ પ્રમાણે છયે દર્શનોનાં શાસ્ત્રોમાં નિપુણ થઈને અને તેમાં પણ ન્યાયશાસ્ત્રમાં વિશેષ નિપુણ થઈને શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ–કાશીનગરમાં કોઈક વાર ચર્ચા માટે મળતી વિદ્વાનોની સભામાં જઈને ચર્ચાવાદ સાંભળતા હતા. એક વાર તે વિદ્વાનોની સભામાં એક મહાન તાર્કિક–નૈયાયિક સંન્યાસી આવ્યો. તેણે પોતાના ચર્ચાવાદમાં સર્વ વિદ્વાનોને દિગ્મૂઢ જેવા બનાવી દીધા. તે વખતે સભામાં તે સંન્યાસી સામેના ચર્ચાવાદમાં શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ પોતે ઊભા રહ્યા અને તેની સાથે ઘણી વિલક્ષણ અને વિવિધ યુક્તિઓથી વાદવિવાદ કરી એ સંન્યાસીને શીઘ્ર નિરુત્તર કરી હરાવ્યો. આ વખતે કાશીની આવી મહાન પંડિતોની સભામાં સંન્યાસી સામે જીત મેળવવાથી શ્રીયશોવિજયજીએ ઘણી જ ચિરસ્થાયિની પ્રતિષ્ઠા મેળવી, અને તેઓશ્રી મહાન વિદ્વાન તરીકે પ્રસિદ્ધ થયા.

(૨૦) એ પ્રમાણે કાશીની સભામાં મહાન તર્કવાદી સંન્યાસીની સામે જીત મેળવવાથી અને પોતાની સભાનું ગૌરવ સાચવવાથી બહુ હર્ષ પામેલા ત્યાંના વિદ્વાનોએ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજને 'ન્યાયવિશારદ'ની પદવી આપી. ત્યાર બાદ ગુરુમહારાજ શ્રીનયવિજયજી

મહારાજે વિચાર કર્યો કે શિષ્યને ભણાવવા સંબંધી જે કાર્ય માટે અહીં આવ્યા હતા તે કાર્ય હવે સમાપ્ત થયું છે, અને શિષ્ય હવે પ્રખર વિદ્વાન થયેલ છે, માટે અહીંથી વિહાર કરવો આવશ્યક છે. કારણ કે મુનિના માર્ગ પ્રમાણે કોઈ એક નગરમાં એક ચોમાસાથી અધિક ચોમાસું કરવું યુક્ત નથી પરન્તુ શિષ્યને ભણાવવાના મુખ્ય લાભને વિચારી અહીં આટલી મુદત રહેવાની જરૂર હતી તે હવે પરિપૂર્ણ થવાથી વિહાર કરવો ઉચિત છે. એમ વિચારી કાશીથી વિહાર કરીને તાર્કિકશેખર શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ વગેરે શિષ્ય સહિત શ્રીનયવિજયજી મહારાજ પ્રયાણ કરતા આગ્રા નગરમાં આવ્યા.[1]

(૨૧) ત્રણ વર્ષ કાશીમાં રહી ઘણા ગ્રંથોનો અભ્યાસ કરીને જે બીજા કેટલાક ન્યાયગ્રંથોનો અભ્યાસ બાકી હતો તે અહીં આગ્રામાં ચાર વર્ષ સુધી રહીને નૈયાયિક પંડિતો પાસે પૂરો કર્યો.

(૨૨) આ વખતે આગ્રા વગેરે નગરોમાં બનારસીદાસ નામના પંડિતનો મત કે જે ઘણે ભાગે દિગંબર મતને અનુસરતો હતો અને એકાંત નિશ્ચય માર્ગને પોષતો હતો તે ઘણો પ્રચલિત થયો હતો. અનુક્રમે બનારસીદાસનો શિષ્ય કુંવરજી નામે થયો. તે પણ પોતાના ગુરુના મતનો પ્રચાર કરતો હતો. આ વખતે શ્રીઉપાધ્યાય મહારાજે આ મત જૈનશૈલીને અનુસરતો નથી એમ યુક્તિપૂર્વક સમજાવીને તે મતના શ્રાવકો વગેરેને જૈનધર્મમાં સ્થિર કર્યા હતા. આ રીતે બનારસીદાસનો દુર્મત દૂર કરીને શ્રીયશોવિજયજી

---

૧. પોતાના ગુરુમહારાજે ષટ્‌દર્શનવિદ્યાનો અનુભવ પ્રાપ્ત કરાવ્યો, પોતે કાશીમાં વિજય મેળવ્યો, અને પંડિતોએ 'ન્યાયવિશારદ' પદવી આપી એ બીના શ્રીયશોવિજયજી મહારાજે સ્વકૃત 'ન્યાયખંડનખાદ્ય' (શ્રીમહાવીર સ્તવન)ના ૧૦૦ મા શ્લોક વગેરેમાં જણાવી છે—તે આ પ્રમાણે—

"अपी जैनः काशीविबुधविजयप्राप्तविरुदो । मुदा पञ्चकपच्छः प्रथयत्मयर्मापीडनुपाम् ॥
यः श्रीमद्गुरुभिर्नयादिविजयैराचार्यकोटी प्रापितः । प्रेम्णां यस्य च सद्म पद्मविजयो जातः सुधीः सोदरः ॥
यस्य न्यायविशारदत्वबिरुदं काश्यां प्रदत्तं बुधैस्तस्यैषा कृतिरातनोतु कृतिनामानन्दमग्नं मनः ॥"

૨. અહીં જણાવેલ બનારસીદાસ આગરાની અટીમાં દશાન હતા. તે હિંદી ભાષાના જૈન કવિ તરીકે પ્રસિદ્ધ હતા. તેઓ આગ્રાના રહીશ શ્રીમાલ વૈશ્ય હતા. તેમના પિતાનું નામ ખરગસેન હતું અને વિ. સં. ૧૬૪૩ માં જોનપુરમાં તેમનો જન્મ થયો હતો. તેમણે મુનિશ્રી ભાનુચંદ્રજીની પાસે વિ. સં. ૧૬૬૦ સુધી કાવ્યાદિ ગ્રંથોનો અભ્યાસ કર્યો હતો. અને તે મુનિના જ સમાગમથી ૧૬૬૪ થી ધાર્મિક પ્રવૃત્તિ તરફ વિશેષ લક્ષ રાખીને અસદ્ વાસનાથી પાછા હઠ્યા. આગ્રામાં તેમને અર્થમલજી નામના અધ્યાત્મરસિકનો સમાગમ થયો તેથી અને 'સમયસાર'ના વાચનથી તે નિશ્ચય માર્ગ તરફ દોરાયા. આ સ્થિતિમાં તેમણે 'જ્ઞાનપચીશી' વગેરે ગ્રંથો બનાવ્યા. વિ. સં. ૧૬૯૨માં પંડિત રૂપચંદના સમાગમથી અને દિગંબર ગ્રંથોના પરિચયથી પૂર્ણ સ્થિતિ પલટાઈ ગઈ, એટલે તે દિગંબર મતાનુયાયી થયા. આ બનારસીદાસને કુંવરજી (કુમારપાલ) અમરચંદ વગેરે સત્કાર અનુયાયી શિષ્યો હતા. તેઓ આગ્રામાં નિશ્ચય માર્ગને પોષતા હતા અને આધ્યાત્મિક તરીકે જણાતા હતા. આ અવસરે શ્રીમાન્ ઉપાધ્યાયજીએ તેમને ચર્ચામાં હરાવ્યા. અને તેના મતનું ખંડન 'અધ્યાત્મમતખંડન-સટીક' પૃ. ના. ૧૮ અને 'અધ્યાત્મમતપરીક્ષા' (પૃ. ના. ૧૧૮) સટીકમાં કર્યું છે. શ્રીમેઘવિજયજીએ આ બીના 'યુક્તિપ્રબોધ'માં જણાવી છે. વિશેષ બીના ઐતિહાસિક ગ્રંથોથી જાણી લેવી.

સહિત શ્રીનયવિજયજી મહારાજ આગ્રાથી અનુક્રમે ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા કરતા તેમજ માર્ગમાં પણ (શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ) અનેક પંડિતો સાથે શાસ્ત્રાર્થ કરતા કરતા જૈનપુરી સરખા રાજનગર (અમદાવાદ)માં પધાર્યા.

(૨૩) શ્રીનયવિજયજી મહારાજે અમદાવાદ આવી હર્ષપૂર્વક નાગોરીશાળામાં એટલે નાગોરી સરાઈ નામનો લત્તો કે જે (અત્યારે પણ રતનપોળ) ઝવેરીવાડમાં મધ્યભાગે આવેલ છે ત્યાં ઉપાશ્રયમાં સ્થિરતા કરી. તે વખતે શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ અનેક શાસ્ત્રોના વાદવિવાદ કરનારા પંડિતોના સમુદાયમાં ઘણું આદરમાન પામ્યા, કારણ કે કોઈ પણ દર્શનનો વાદી જૈનદર્શન સંબંધી વાદ કરવા આવે તો તેઓ તેને શાસ્ત્રની યુક્તિ-પ્રયુક્તિઓથી તેમજ ન્યાયશાસ્ત્રોની પરિપાટી પ્રમાણે એવું સરસ સમજાવતા કે જેથી વાદી જૈનદર્શનની ખામી દર્શાવી શકતા નહિ, અને ઉપાધ્યાયજીએ દર્શાવેલી યુક્તિઓનું રહસ્ય સમજીને અત્યંત સંતોષ પામતા.

(૨૪) આ વખતે અમદાવાદમાં સદ્‌ગુણી જનોના સદ્‌ગુણને સન્માન આપનાર હોવાથી ગુણરસિક અને પ્રજાજનોનું હિત કરવાની મતિવાળો એવો મહોબતખાન નામે વડો રાજ્યાધિકારી (સૂબો) રહેતો હતો. તેની નજર નીચે જ અમદાવાદ જિલ્લાનું સર્વ રાજતંત્ર ચાલતું હતું. તે મહોબતખાનની રાજસભામાં શ્રીયશોવિજયજીના ધર્મશાસ્ત્રોના અથાગ જ્ઞાનની અને અત્યંત બુદ્ધિવૈભવની પ્રશંસા થઈ. આ સાંભળીને મહોબતખાનને પણ એવા બુદ્ધિશાળી ધર્મસંન્યાસીને મળવાનું અને તેમનો બુદ્ધિવૈભવ સાક્ષાત્ નજરે જોવાનું મન થયું. તેથી પોતાનો અભિપ્રાય રાજસભામાં બેસનારા અગ્રગણ્ય શ્રાવકો વગેરેને જણાવતાં તેઓએ સભામાં પધારવાની શ્રીયશોવિજયજી મહારાજને વિનંતિ કરી. આથી ગુરુમહારાજે પણ, સકારણ રાજસભામાં જવાથી શાસનની પ્રભાવના થશે એમ જાણી, રાજસભામાં જવાની આજ્ઞા આપી. રાજ્યાધિકારીએ પણ શ્રીજશવિજય મહારાજના પધારવાની વાત જાણી અત્યંત રાજી થયા. રાજસભામાં મુનિમહારાજને યોગ્ય સ્થાને બેસવા વગેરેની સર્વ સગવડ કરી.

(૨૫) શ્રીયશોવિજયજી મહારાજે અગ્રગણ્ય શ્રાવકના સમુદાય સહિત રાજસભામાં જઈને રાજ્યાધિકારીની વિજ્ઞપ્તિથી ત્યાં સભામાં સર્વ સભાજનો સમક્ષ પોતાની બુદ્ધિના બળથી અઢાર અવધાન કરી બતાવ્યાં, કે જેમાં ૧૮ સભાજનોની દરેકની જુદી જુદી વાત (એટલે એક જણની અનેક વાત તેવી ૧૮ જણની ઘણી વાત) યાદ રાખીને દરેકની વાત અનુક્રમે સંભળાવી દેવાની હોય છે એવા પ્રકારનાં ૧૮ અવધાનો કરી બતાવ્યાં. તેમનું આવું બુદ્ધિબળ જોઈને રાજ્યાધિકારી મહોબતખાન બહુ જ રાજી થયો.

(૨૬) ત્યાર બાદ હર્ષ પામેલ મહોબતખાન રાજ્યાધિકારીએ હર્ષ વડે શ્રીયશોવિજયજી મહારાજનું ભવ્ય ઉત્સવાદિકપૂર્વક સન્માન પણ કર્યું. આ પ્રમાણે અમદાવાદમાં શ્રીયશોવિજયજી મહારાજે શ્રીજૈનશાસનની ઘણી ઉત્તમ પ્રભાવના કરી અને જેઓ જૈનધર્મ શું ચીજ છે તે બિલકુલ સમજતા નહોતા તેવાઓને પણ જૈનધર્મ પણ એક ઉત્તમ ધર્મ છે

'પાતંજલયોગ શાસ્ત્રનીચતુર્થપાદની વૃત્તિ' વગેરેમાં યોગનો વિષય—એ પ્રમાણે અધ્યાત્મ, ન્યાય અને યોગના વિષયો જેમણે પોતાના બનાવેલા ગ્રન્થોમાં ચર્ચેલા છે, અને તે ઉપરાન્ત કર્મપ્રકૃતિની વૃત્તિ આદિમાં કર્મ વગેરેનો વિષય અને બીજા પણ બનાવેલા અનેક ગ્રંથોમાં ધર્મ વગેરે વિષયો ઘણા ચર્ચ્યાં છે. તેવા ઉત્તમોત્તમ ગ્રન્થોના રચનાર ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજનું જે પુરુષો નિત્ય સ્મરણ કરે છે તેવા ભાગ્યશાળી પુરુષોને ધન્ય છે.

(૩૨) ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ ગ્રામાનુગ્રામ વિચરતા અનુક્રમે ગુણ—યુગ-હય—ઇન્દુ વર્ષે એટલે ૧૭૪૩ના વિક્રમ સંવત્સરમાં દર્ભાવતી નગરીમાં પધાર્યા. આ દર્ભાવતી એટલે વડોદરા પ્રાન્તમાં આવેલ અત્યારનું ડભોઈ નામનું ગામ સમજવું કે જે વડોદરાથી લગભગ બારેક ગાઉ દૂર છે, જ્યાંનો મનોહર કારીગરીવાળો હીરા કડિયાનો ચણેલો કિલ્લો હજી પણ પ્રસિદ્ધ છે, અને જે પ્રથમ વીરધવલ રાજાની રાજધાનીનું નગર હતું. આ ડભોઈમાં વિ. સ. ૧૭૪૩માં ઉપાધ્યાયજી મહારાજ અનશનવિધિ સહિત ઉત્તમ મરણસમાધિપૂર્વક સ્વર્ગપદ પામ્યા એટલે કાળધર્મ પામ્યા. વર્તમાન સમયે ડભોઈ નગરની બહાર તેમનો સ્તૂપ (દેરી) વિદ્યમાન છે. અહીં વિ. સં. ૧૭૪૫ની મૌન એકાદશીએ શ્રીન્યાયાચાર્યની પાદુકા પધરાવી છે.

સમ્રાટ અકબરપ્રતિબોધક શ્રીહીરવિજયજીસૂરીશ્વરજી મહારાજથી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજની શિષ્યપરંપરાનું વંશવૃક્ષ આ પ્રમાણે સમજવું.

(૩૩) એ પ્રમાણે તાર્કિકશિરોમણિ ન્યાયાચાર્ય ન્યાયવિશારદ ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજનું આ જીવનચરિત્ર-ઉપાધ્યાયજી મહારાજના સદ્‌ગુણોના અનુરાગથી અને તેમના અપાર જ્ઞાનાદિ ગુણોનું અનુકરણ કરવાની ઇચ્છાથી અતિસંક્ષેપમાં કહ્યું છે. વર્તમાન સમયમાં ઉપાધ્યાયજીનું અથથી ઇતિ સુધીનું સવિસ્તર યથાર્થ જીવનચરિત્ર મળતું નથી, જેથી જેટલું મળી શકે છે તેટલામાંથી ઉદ્ધરીને સારભૂત આ જીવનચરિત્ર બહુ ટૂંકમાં કહ્યું છે. આ સંક્ષિપ્ત જીવનચરિત્ર વાંચીને અથવા સાંભળીને અને તેવા ગુણોની સેવના કરીને, હે ભવ્ય જીવો ! તમે પરમ ઉન્નતિ એટલે પરમ કલ્યાણને પામો !

(૩૪-૩૫) વિ. સં. ૧૯૯૩માં જે દિવસે શ્રીગૌતમસ્વામીને કેવળજ્ઞાન પ્રગટ થયું તે પવિત્ર દિવસે અતિઉત્તમ શ્રીજૈનશાસનની આરાધના કરવામાં રસિક એવો ઘણો શ્રાવક સમુદાય જેમાં વસે છે તે જૈનપુરી સરખા રાજનગર-અમદાવાદમાં પરમપૂજ્ય ગુરુવર્ય આચાર્ય શ્રીવિજયનેમિસૂરીશ્વરના શિષ્ય આચાર્ય વિજયપદ્મસૂરિએ પ્રિયંકરવિજયજી નામના સાધુને ભણવા માટે આ ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજના જીવનચરિત્રની રચના કરી.

મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજે બનાવેલા ગ્રંથોની હકીકત એક સ્વતંત્ર નિબંધમાં જ આવી શકે એમ હોવાથી અહીં ન આપતાં તેમની સાહિત્ય રચનાઓ સંબંધી હકીકત આ ગ્રંથમાં જ મારા બીજા લેખ (પૃષ્ઠ ૧૮૯) માં આપવામાં આવી છે.

आत्मायमर्हतो ध्यानात्, परमात्मत्वमश्नुते ।
रसविद्धं यथा ताम्रं, स्वर्णत्वमधिगच्छति ॥३०॥

જેમ રસથી વેધાયેલું તાંબુ સુવર્ણ બને છે તેમ અરિહંતના ધ્યાનથી આ આત્મા પરમાત્મપણાને પામે છે.

દ્વાત્રિંશિકા] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

અઢારમી સદીના મહાન જ્યોતિર્ધર

મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજીકૃત ગ્રંથો

[સંક્ષિપ્ત ગ્રંથપરિચય]

[લેખક : પરમપૂજ્ય આચાર્ય શ્રીવિજયપદ્મસૂરિજી મહારાજ]

આગળના મારા લેખમાં આપણે ૧૮મી સદીના મહાન જૈન જ્યોતિર્ધર મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજનું જીવન સંક્ષેપમાં જોયું. હવે એ જીવનચરિત્રના અંતે ઉલ્લેખ કરાયા પ્રમાણે આ સ્થળે આપણે એમના કવન–સાહિત્યરચના સંબંધી વિચાર કરીશું કે જે સાહિત્યરચનાએ એ મહાપુરુષને અઢારમી સદીના મહાન જ્યોતિર્ધર અને પ્રખર વિદ્વાન તરીકે પ્રસિદ્ધ કરીને અમર બનાવ્યા છે.

આ વિષયમાં આપણે તેમની એક પછી એક કૃતિનું–એ કૃતિમાં આવતા વિષય-નિરૂપણનું–સંક્ષિપ્ત અવલોકન કરીશું.

ઉપાધ્યાયજીકૃત મૌલિક ગ્રંથો

૧. **અધ્યાત્મમતપરીક્ષા**—આનું બીજું નામ 'અધ્યાત્મમતખંડન' છે. મૂળ ગ્રંથ પ્રાકૃત ભાષામાં ૧૮૪ ગાથાનો છે. તેના ઉપર વાચકવર્યે સ્વોપજ્ઞ ટીકા રચી છે. દિગંબરો એમ માને છે કે કેવલિભગવંતોને કવલાહાર હોય જ નહિ. આ બાબતમાં ગ્રંથકાર મહર્ષિએ કેવળજ્ઞાન અને કવલાહાર એ અવિરોધી વસ્તુ છે એટલે જ્યાં કેવળજ્ઞાન હોય ત્યાં જેમ મોહનીય વગેરે ચારે ઘાતી કર્મો વિરોધી હોવાથી સંભવતાં નથી, તેવો વિરોધ કેવળજ્ઞાનની સાથે કવલાહારને હોવામાં નથી એ સિદ્ધ કર્યું છે. 'શ્રીસમવાયાંગ'માં ચોત્રીશ અતિશયોમાં જણાવ્યું છે કે 'પ્રભુના આહાર કે નિહાર ચર્મચક્ષુવાળા જીવો જોઈ શકે નહિ.' એ વગેરે વસ્તુ સચોટ દાખલા–દલીલો દઈને 'કેવલીને કવલાહાર હોઈ શકે' એમ સાબિત કર્યું છે. દિગંબરો માને છે કે, પ્રભુને ધાતુરહિત પરમૌદારિક શરીર હોય. આ બાબતનું, પ્રભુને જન્મથી જ એક શરીર હોય છે વગેરે જણાવીને, ખંડન કર્યું છે. જો કેવલી પ્રભુને આહાર ન હોય તો 'તત્ત્વાર્થ'માં કેવલીને કહેલા અગિયાર પરીષહો (જેમાં ક્ષુધા પરીષહ ગણ્યો છે તે) કઈ રીતે ઘટશે? આવા અનેક પ્રશ્નો પૂછીને આહારની બાબતમાં પર્યાપ્ત નામોદય પણ કારણ તરીકે જણાવીને દિગંબર મતની અનેક માન્યતાને અસત્ય ઠરાવી છે. છેવટે (૧) દિગંબર મત ક્યારે પ્રગટ થયો? (૨) તેઓ ઉપકરણ નથી રાખતા, તેનું શું કારણ? આ

પ્રશ્નોના ખુલાસા કરવાના પ્રસંગે તેઓના આચાર વગેરે દર્શાવી છેવટે પ્રશસ્તિ જણાવી કર્તાએ ગ્રંથ પૂર્ણ કર્યો છે. આ ગ્રંથ ઉપરની સ્વોપજ્ઞ ટીકા નવીન ન્યાયની પદ્ધતિ પ્રમાણે બનાવી છે, તે વાંચવાથી કર્તાની અપૂર્વ વિદ્વત્તા જણાય છે.

મૂળ ગ્રંથની શરૂઆતમાં ગ્રંથકાર જણાવે છે કેઃ—હું શ્રીપાર્શ્વનાથ પ્રભુને અને ગચ્છનાયક આચાર્ય મહારાજ શ્રીવિજયદેવસૂરીશ્વરજી મહારાજને વંદન કરીને બોધને અનુસારે અધ્યાત્મમતની પરીક્ષા કરીશ. તેમ જ ટીકાની શરૂઆતમાં પણ જણાવ્યું છે કે, જે વાગ્દેવતા (સરસ્વતી) પંડિતોને અથવા દેવોને વંદન કરવાલાયક છે, અને જેનું સ્વરૂપ ઐંકાર મંત્રાક્ષર ગર્ભિત છે, તે વાગ્દેવતાનું સ્મરણ કરીને હું સ્વોપજ્ઞ(સ્વકૃત) અધ્યાત્મમતપરીક્ષાનું વિવરણ કરું છું. ટીકાના શ્લોકનું પ્રમાણ ૪૦૦૦ શ્લોક છે. આ સટીક ગ્રંથ દે. લા. જૈન પુસ્તકોદ્ધાર ફંડ તરફથી છપાયો છે અને તેનું ભાષાંતર શ્રીઆત્માનંદ સભા તરફથી પ્રગટ થયું છે.

૨. અધ્યાત્મસાર—કર્મરૂપી વાદળાંથી ઢંકાયેલા ભવ્ય જીવો અધ્યાત્મ સેવારૂપી પવનથી તે વાદળાંને દૂર કરી આત્મિક તેજનો અનુભવ કરી શકે છે. આ મુદ્દાથી ગ્રંથકારે આ ગ્રંથમાં સાત મુખ્ય વિભાગ (પ્રબંધ)ની અને દરેક વિભાગમાં એકાદિ અધિકારની સંકલના કરીને અધ્યાત્મનું સ્વરૂપ વર્ણવ્યું છે. તેમાં પ્રથમ પ્રબંધમાં અધ્યાત્મની પ્રશંસા, અધ્યાત્મસ્વરૂપ, દંભત્યાગ, ભવસ્વરૂપ—આ ચાર બાબતનું સવિસ્તર વર્ણન જણાવ્યું છે. બીજા પ્રબંધમાં વૈરાગ્યસંભવ, વૈરાગ્યના ભેદ અને વૈરાગ્ય સંબંધી જરૂરી બીના સ્પષ્ટ રીતે વર્ણવી છે. ત્રીજા પ્રબંધમાં મમતાનો ત્યાગ, સમતા, સદનુષ્ઠાન અને મનઃશુદ્ધિનું સ્વરૂપ જણાવ્યું છે. ચોથા પ્રબંધમાં સમ્યક્ત્વ, મિથ્યાત્વત્યાગ અને કદાગ્રહત્યાગની બીના જણાવી છે. પાંચમા પ્રબંધમાં યોગ, ધ્યાન અને ધ્યાનસ્તુતિ વર્ણવી છે. છઠ્ઠા પ્રબંધમાં આત્મનિશ્ચય વર્ણવ્યો છે. સાતમા પ્રબંધમાં જૈનમત સ્તુતિ, અનુભવ, સજ્જનસ્તુતિ જણાવી છે. જૈન શ્વે. કોન્ફરન્સ પ્રકાશિત 'જૈન ગ્રંથાવલી' વગેરેના આધારે આ મૂલ ગ્રંથનું પ્રમાણ ૧૩૦૦ શ્લોક છે. આનો યથાર્થભાવ જણાવવા માટે પંન્યાસજી મહારાજ [1]શ્રીગંભીરવિજયજી ગણિજીએ તેના ઉપર ટીકા બનાવી છે, તે શ્રીજૈનધર્મ પ્રસારક સભાએ છપાવી છે.

૩. અધ્યાત્મોપનિષદ્—સંસ્કૃત અનુષ્ટુપ છંદમાં ૨૩૧ શ્લોકપ્રમાણનો આ ગ્રંથ છે. પ્રકાશક શ્રીજૈનધર્મ પ્રસારક સભા, ભાવનગર. આ ગ્રંથમાં કર્તાએ—૧. શાસ્ત્રયોગશુદ્ધિ અધિકાર, ૨. જ્ઞાનયોગાધિકાર, ૩. ક્રિયાધિકાર અને ૪. સામ્યાધિકાર—આ ચાર અધિકાર પૈકી પહેલા—શાસ્ત્રયોગશુદ્ધિ નામના અધિકારમાં (૧) અધ્યાત્મનું ખરું સ્વરૂપ શું સમજવું? (૨) તેને લાયક કયા જીવો હોઈ શકે? (૩) કેવા પ્રકારના હૃદયમાં અધ્યાત્મનો પ્રાદુર્ભાવ થાય? (૪) કુગ્રાહગ્રસ્ત જીવોની કેવી ખરાબ હાલત થાય છે? (૫) શાસ્ત્રનું સામર્થ્ય કેવું હોય છે? (૬) શાસ્ત્રની પરીક્ષા કઈ રીતે કરી શકાય? (૭) કષ, છેદ, તાપનું સવિસ્તર સ્વરૂપ

૧. ટીકાકારનો ટૂંક પરિચય—જન્મ સં. ૧૯૦૦, ચૈત્ર સુદ ૩, ગ્વાલિયર રાજ્યના ચીનાગોર ગામમાં. યતિપણું સં. ૧૯૨૫, સંવેગી દીક્ષા ૧૯૩૩. પંન્યાસપદ સં. ૧૯૪૪, અને સ્વર્ગવાસ સં. ૧૯૬૯, પોષ વદ ૮ ગુરુ—પરમપૂજ્ય પં. શ્રીદાનવિજયજી(મુનિચંદ્રજી) મહારાજ.

શું? (૮) અને કષશુદ્ધિ વગેરે ત્રિવિધ શુદ્ધિ કઈ રીતે શાસ્ત્રમાં ઘટાવી શકાય? (૯) એકાંતવાદીઓ પણ આડકતરી રીતે સ્યાદ્વાદ મતને કેવા રૂપે સ્વીકારે છે? (૧૦) નયશુદ્ધિ, શ્રુતજ્ઞાન, ચિંતાજ્ઞાન અને ભાવનાજ્ઞાનનું સ્વરૂપ શું? (૧૧) ધર્મવાદને લાયક કોણ હોઈ શકે? આ અગિયારે પ્રશ્નોના સ્પષ્ટ ખુલાસા કરવાપૂર્વક વચમાં પ્રસંગે જરૂરી બીના પણ સરસ રીતે વર્ણવી છે. બીજા–જ્ઞાનયોગ નામના અધિકારમાં (૧) પ્રાતિભજ્ઞાન કોને કહેવાય? (૨) આત્મજ્ઞાની મુનિ કેવા હોય છે? (૩) ખરું વેદ્યપણું કોને કહેવાય? (૪) જ્ઞાની પુરુષો કઈ રીતે નિર્લેપ થઈ શકે છે? (૫) ચિત્તની શુદ્ધિ કરવા માટે કયાં કયાં સાધનોની સેવના કરવી જોઈએ? (૬) જ્ઞાનયોગ વ્યાવહારિક દૃષ્ટિએ અને નૈશ્ચયિક દૃષ્ટિએ કેવા સ્વરૂપવાળો હોય છે; આ છ પ્રશ્નોના સ્પષ્ટ ખુલાસા કરતી વખતે બીજી પણ જરૂરી બીના ટૂંકમાં જણાવી છે. ત્રીજા–ક્રિયાઅધિકારમાં–ક્રિયાની જરૂરિયાત જણાવવાના પ્રસંગે કઈ ક્રિયાથી નિર્મલ ભાવવૃદ્ધિ થઈ શકે? આનો ખુલાસો જણાવીને જ્ઞાની પુરુષો પણ કર્મનો નાશ કરવા માટે ક્રિયાની સાધના જરૂર કરે છે, આ બીના જણાવી છે. ચોથા–સામ્યાધિકારમાં (૧) સમતા ગુણવાળા જીવની કેવી સ્થિતિ હોય છે? (૨) સમતા વિનાનું સામાયિક પણ કેવું હોય છે? (૩) પરમાત્મસ્વરૂપને પમાડવામાં સમતા કઈ રીતે કેવા પ્રકારની મદદ કરે છે? (૪) સમતાથી કોને કોને કેવા કેવા પ્રકારના લાભ થાય? આ ચાર પ્રશ્નોના સ્પષ્ટ ખુલાસા કરતાં છેલ્લા પ્રશ્નના સમાધાનમાં ભરત, દમદંત ઋષિ, નમિરાજર્ષિ, સ્કંદસૂરિના શિષ્યો, મેતાર્ય, ગજસુકુમાલ, અર્ણિકાપુત્ર, દૃઢપ્રહારી, શ્રીમરુદેવા વગેરેના દાખલા આપ્યા છે. છેવટે પ્રશસ્તિ વગેરે જણાવીને ગ્રંથ પૂરો કર્યો છે.

૪. **અનેકાંતવ્યવસ્થા**–મૂળ ગ્રંથ ૩૩૫૭ શ્લોકપ્રમાણનો છે. આ ગ્રંથ મુદ્રિત છે. તેમાં શરૂઆતમાં કર્તા આ મંગલશ્લોકની રચના કરે છે—

" ऐन्द्रस्तोमनतं नत्वा, वीतरागं स्वयम्भुवम् ।
अनेकान्तव्यवस्थायां, श्रमः कश्चिद् वितन्यते ॥ "

૫. **દેવધર્મપરીક્ષા**–દેવો સ્વર્ગમાં પ્રભુપ્રતિમાની પૂજા કરે છે. પ્રતિમા નહિ માનનારા સ્થાનકમાર્ગી લોકો તે દેવોને અધર્મી કહે છે, આ વાત ખોટી છે એમ સાબિત કરનારો આ ગ્રંથ છે. એનું મૂળ શ્લોકપ્રમાણ ૪૨૫ છે. તેના ઉપર ટીકા નથી. પ્રકાશક શ્રી. જૈ. ધ. પ્ર. સભા, ભાવનગર. જે ૨૭ મુદ્દાઓ લક્ષમાં રાખીને ગ્રંથકાર મહર્ષિએ આ ગ્રંથની રચના કરી છે તે મુદ્દાઓ ટૂંકમાં આ પ્રમાણે જાણવા—(૧) દેવો અસંયત છે એમ કહેવું એ નિષ્ઠુર વચન છે. (૨) દેવોને શ્રુતધર્મ હોય છે એ મુદ્દાથી પણ તેમને અધર્મી ન કહી શકાય. (૩) દરેક સમ્યક્ત્વધારી જીવને સૂત્ર અને અર્થ હોવાથી શ્રુતધર્મ કહી શકાય જ. (૪) તેઓ સર્વવિરતિરૂપ સંયમને ધારણ કરી શકતા નથી, આ અપેક્ષાએ અધર્મસ્થિત કહેવાય છે. (૫) તેઓ વિશિષ્ટ બોધરહિત છે, માટે બાલ કહેવાય છે. (૬) સંયમ વિનાનું

* ૪, ૧૦, ૧૧, ૧૨ નંબરવાળા ગ્રંથો ઉપર પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી વિજયલાવણ્યસૂરીશ્વરજીએ સ્વતંત્ર ટીકાઓ રચીને એ ગ્રંથો પ્રસિદ્ધ કરાવ્યા છે. સં૦

સમ્યક્ત્વ નિરૂપ્યું છે. આ વચન વિશિષ્ટ અપેક્ષાને જાહેર કરે છે. (૭) નારક જીવોને અને દેવોને લેશ્યાઓ જુદી જુદી હોય છે. તેમાં દેવોની લેશ્યા અપેક્ષાએ પ્રશસ્ત ગણાય છે. (૮) સમ્યક્ત્વી દેવોને સાધુ વગેરેના વિનય કરવારૂપ તપ હોય છે. (૯) મુનિ વગેરે મહાપુરુષોનું વૈયાવચ્ચ કરીને પણ દેવો પોતાના દેવ ભવને સફળ કરે છે. (૧૦) ઇન્દ્રો સમ્યગ્વાદી અને નિરવદ્ય ભાષાના બોલનારા કહેવાય છે. (૧૧) ઇન્દ્રો મુનિરાજને અવગ્રહ આપે છે. (૧૨) અમરેન્દ્ર વગેરે ઇન્દ્રો તથા તેમના લોકપાળદેવો પ્રભુ–દેવના દાઢાની પણ આશાતના કરતા નથી. (૧૩) હરિણૈગમેષીનું વૈયાવચ્ચ ગ્રંથોએ કહ્યું છે. (૧૪) દેવોને સમ્યક્ત્વરૂપ સંવર હોય છે. (૧૫) ધાર્મિક વ્યવસાય કરીને સૂર્યાભે પ્રભુપ્રતિમાની પૂજા કરી છે. (૧૬) વિજયદેવે પણ તે પ્રમાણે પૂજા કરી છે. (૧૭) જન્માભિષેકનો પણ તેવો જ અધિકાર છે. દેવો પ્રભુપૂજા કરે છે તે, આગળ અને પછી, કલ્યાણ કરનારી બને છે. (૧૮) 'પચ્છા' શબ્દનો અધિકાર પ્રમાણે 'પરભવ' અર્થ લેવો જોઈએ, કારણ તપશ્ચર્યાદિથી તેનું ફળ મળી શકે છે. (૧૯) સ્થિતિ પણ ધર્મ જ કહેવાય. (૨૦) જ્ઞાનવંત મહાપુરુષોનો લોકોપચાર પણ કર્મ ખપાવવા માટે જ હોય છે (૨૧) દેવોએ કરેલ વંદનાદિ પણ પૂર્વ અને પછી હિતકારી છે. (૨૨) પૂજાધિકારનો સમાવેશ વંદનાધિકારમાં થઈ શકે છે. (૨૩) પ્રભુદેવે ઇન્દ્રાદિકે કરેલ વંદનાની અનુમોદના કરી પ્રભુની આગળ કરાતું નાટક બીજાં અશુભ કાર્યોના જેવું ન કહેવાય. (૨૪) આવા નાટકને ભક્તિના અંગ તરીકે જણાવ્યું છે. આવી ભક્તિના પ્રભાવે દુર્ગતિ ન થાય, સદ્ગતિનો બંધ થાય ને છેવટે મોક્ષ પણ મળે. (૨૫) દાનના ઉપદેશ કે નિષેધની પેઠે જિનપૂજાનો ઉપદેશ કે નિષેધ ન કરવો એમ નહિ, કારણ કે તે અનુબંધ હિંસા છે જ નહિ. (૨૬) ચૈત્ય કે પ્રતિમાને અંગે થતી દ્રવ્યહિંસા અર્થદંડ પણ ન કહેવાય અને અનર્થદંડ પણ ન કહેવાય. (૨૭) પૂજાનું સ્વરૂપ જણાવતાં અને હિંસાનું સત્ય સ્વરૂપ સૂત્રપાઠ દઈને સમજાવ્યું છે.

૬. જૈનતર્કપરિભાષા—સ્યાદ્વાદદર્શનના પાયા જેવા (૧) પ્રમાણ, (૨) નય અને (૩) નિક્ષેપ નામના ત્રણ પરિચ્છેદવાળો આ ગ્રંથ છે. તેમાં પ્રથમ પ્રમાણપરિચ્છેદમાં (૧) પ્રમાણ એટલે શું? (૨) પ્રમાણનો તેના ફળની સાથે અભેદભાવ કઈ રીતે ઘટે? (૩) (૩) પ્રમાણના ભેદો કેટલા? (૪) પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ કેટલા પ્રકારનું છે? (૫) સાંવ્યાવહારિક પ્રત્યક્ષનું અને પારમાર્થિક પ્રત્યક્ષનું તાત્ત્વિક સ્વરૂપ શું? (૬) ચક્ષુનો અને મનનો વ્યંજનાવગ્રહ ન હોવાનું કારણ? (૭) અવગ્રહાદિનું સ્વરૂપ શું? (૮) તે પ્રસંગે થતી શંકાઓના સમાધાન શું? (૯) મતિજ્ઞાનના દરેક ભેદમાં બહુ–અબહુવિધ વગેરે ભેદો કઈ રીતે સમજવા? (૧૦) શ્રુતજ્ઞાનનું યથાર્થ સ્વરૂપ શું? (૧૧) સંજ્ઞાક્ષરાદિ ત્રણ ભેદો તથા શ્રુતજ્ઞાનના ચૌદ ભેદો કયા કયા? (૧૨) પારમાર્થિક પ્રત્યક્ષના અવધિજ્ઞાન વગેરેના ભેદો કેટલા? (૧૩) યોગજ ધર્મજન્ય જ્ઞાનમાં અને કેવલજ્ઞાનમાં તફાવત શો? (૧૪) પરોક્ષપ્રમાણનું લક્ષણ-ગર્ભિત સ્વરૂપ શું? (૧૫) તેના પાંચ ભેદો કયા કયા? (૧૬) પરોક્ષના સ્મરણ–પ્રત્યભિજ્ઞા–તર્ક–અનુમાન–આગમ ભેદોનું સ્વરૂપ શું? (૧૭) સ્મરણનું પ્રમાણપણું કઈ રીતે ઘટી શકે? (૧૮) તેને માનવાની જરૂરિયાત શી? (૧૯) પ્રત્યભિજ્ઞાનું લક્ષણ શું? (૨૦) તેને અલગ

માનવાનું કારણ શું? (૨૧) પ્રત્યભિજ્ઞામાં અનુમાન વગેરેનો સમાવેશ કઈ રીતે થઈ શકે? (૨૨) તર્કનું સ્વરૂપ શું? (૨૩) વ્યાપ્તિગ્રહમાં તેની જરૂરિયાત કઈ રીતે અને કેટલે અંશે છે? (૨૪) સામાન્ય લક્ષણનો બોધ થવામાં અને શબ્દાર્થના વાચ્ય-વાચકભાવની સમજણ પાડવામાં કોની વિશેષ જરૂરિયાત પડે છે? (૨૫) તર્કનું સ્વતઃ પ્રમાણપણું કઈ રીતે સમજવું? (૨૬) અનુમાનના બે ભેદો કયા? (૨૭) સાધ્ય-પક્ષસિદ્ધિનું સ્વરૂપ શું? (૨૮) દૃષ્ટાંતની જરૂરિયાત કઈ અપેક્ષાએ સમજવી? (૨૯) હેતુનું અને તેના વિધિસાધક-પ્રતિષેધસાધક-ઉપલબ્ધિ અને અનુપલબ્ધિ નામના ભેદોનું સ્વરૂપ શું? (૩૦) અસિદ્ધ, વિરુદ્ધ અને અનૈકાંતિક હેત્વાભાસનું સ્વરૂપ શું? (૩૧) આ ત્રણથી વધારે હેત્વાભાસને નહિ માનવાનું શું કારણ? (૩૨) આગમ પ્રમાણનું સ્વરૂપ શું? (૩૩) અનુમાનથી આગમની જુદાઈ કઈ રીતે સંભવે? (૩૪) સપ્તભંગીનું સ્વરૂપ શું? (૩૫) તે પ્રસંગે સકલાદેશ, વિકલાદેશનું અને તેના કારણભૂત કાલ-આત્મસ્વરૂપ-અર્થ-સંબંધ-ઉપકાર-ગુણિદેશ-સંસર્ગ-શબ્દસ્વરૂપનું સ્વરૂપ શું? આ પાંત્રીશ પ્રશ્નોના ખુલાસા પ્રથમ પ્રમાણ-પરિચ્છેદમાં ગ્રંથકારે જણાવ્યા છે. બીજા નય-પરિચ્છેદમાં નયનું લક્ષણ અને તેના ભેદો બતાવવાના પ્રસંગે શબ્દની પંચતયી પ્રવૃત્તિ કયા નયવાળો કઈ અપેક્ષાએ માનતો નથી તે વિસ્તારથી દર્શાવીને અર્પિત, અનર્પિત, વ્યવહાર, નિશ્ચય, જ્ઞાનક્રિયા વગેરેનું ભેદપ્રદર્શનપૂર્વક સ્વરૂપ જણાવીને છેવટે નયાભાસને ટૂંકમાં સમજાવ્યો છે. ત્રીજા નિક્ષેપ નામના પરિચ્છેદમાં નામાદિ નિક્ષેપનાં સ્વરૂપ, ભેદ, પ્રયોજન દર્શાવીને દરેક નિક્ષેપ શું શું માને છે? તે જણાવીને તેને નયમાં ઉતાર્યાં છે. નિક્ષેપાની ઉત્પત્તિનો પ્રકાર જણાવતાં જીવના પણ નિક્ષેપા જણાવ્યા છે. તર્કશાસ્ત્રરૂપી મહેલમાં ચઢવા માટે આ ગ્રંથ પગથિયા જેવો છે. મૂળ ગ્રંથ ૮૦૦ શ્લોકપ્રમાણનો છે. તે જૈ. ધ. પ્ર. સ. ભાવનગર તરફથી છપાયો છે. એમ સંભવી શકે છે કે જેમ બૌદ્ધ પંડિત મોક્ષકારની 'તર્કભાષા' જોઈને વૈદિક પંડિત કેશવમિશ્રે સ્વમતાનુસારી 'તર્કભાષા' બનાવી, તેમ તે બંને તર્કભાષાનું નિરીક્ષણ કરીને વાચકવર્યે આ ગ્રંથની રચના કરી હોય.

૭. ગુરુતત્ત્વનિશ્ચય—મૂળ પ્રાકૃતગાથા ૯૦૫ છે અને તેની ઉપર વાચકવર્યે પોતે જ સંસ્કૃત ગદ્યમાં ૭૦૦૦ (સાત હજાર) શ્લોકપ્રમાણ ટીકા બનાવી છે. મૂળમાં પ્રસંગે 'વ્યવહાર-ભાષ્ય' વગેરે ગ્રંથોની પણ ગાથાઓ ગોઠવી છે. એ પ્રમાણે ટીકામાં પણ તે તે ગ્રંથોના પ્રસંગને અનુસારે જરૂરી પાઠો આપ્યા છે, એટલું જ નહિ પણ જ્યાં પોતાને જરૂર જણાય ત્યાં સ્પષ્ટીકરણ પણ કર્યું છે. ગુરુતત્ત્વનું યથાર્થ નિરૂપણ કરવા માટે અહીં વિશાળ અધિકારસ્વરૂપ ચાર ઉલ્લાસની સંકલના કરી છે. તેમાં પહેલા ઉલ્લાસમાં-(૧) શ્રીગુરુમહારાજનો પ્રભાવ કેવો હોય છે? (૨) ગુરુકુલ વાસનો પ્રભાવ શો? (૩) ગુરુ કેવા હોય? (૪) શુદ્ધાશુદ્ધભાવનાં કારણો કયાં કયાં હોઈ શકે? (૫) ભાવવૃદ્ધિ શાથી થાય? (૬) કેવળ નિશ્ચયવાદી સ્વમતના પોષણ માટે કઈ કઈ દલીલો રજૂ કરે છે? (૭) સિદ્ધાંતી તે (નિશ્ચય)વાદનું કઈ રીતે ખંડન કરે છે? આ સાતે પ્રશ્નોનો સ્પષ્ટ ખુલાસો છે. બીજા ઉલ્લાસમાં – ગુરુનું લક્ષણ જણાવતાં સદ્ગુરુ, વ્યવહારી, વ્યવહર્તવ્ય, વ્યવહારના પાંચ ભેદ, પ્રાયશ્ચિત્ત, તેને સેવાનો

૨૫

તથા દેવાનો અધિકારી; જણાવીને છેવટે શુદ્ધ વ્યવહારને પાળનાર સુગુરુનું માહાત્મ્ય દર્શાવવાપૂર્વક વ્યવહાર ધર્મને આદરવા સૂચના કરી છે. ત્રીજા ઉલ્લાસમાં – ઉપસંપત્‌ની વિધિ, કુગુરુની પ્રરૂપણા, પાર્શ્વસ્થ વગેરેનું સ્વરૂપ જણાવીને છેવટે કુગુરુને તજવાનું અને સુગુરુની સેવના કરવાનું જણાવ્યું છે. ચોથા ઉલ્લાસમાં–પાંચ નિર્ગ્રંથોનું સ્વરૂપ છત્રીસ દ્વારને વર્ણવી જણાવ્યું છે. છેવટે ગ્રંથકારે પ્રશસ્તિ વગેરે બીના જણાવીને ગ્રંથ પૂર્ણ કર્યો છે.

૮. દ્વાત્રિંશદ્દ્વાત્રિંશિકા—(બત્રીસ બત્રીસી)—આ ગ્રંથમાં ગ્રંથકારે દાન વગેરે ૩૨ પદાર્થોનું યથાર્થ સ્વરૂપ જણાવવા માટે ૩૨ વિભાગ પાડ્યા છે અને દરેક વિભાગને બત્રીસ બત્રીસ શ્લોકમાં સંપૂર્ણ કરેલા હોવાથી આનું યથાર્થ નામ દ્વાત્રિંશદ્દ્વાત્રિંશિકા પાડ્યું છે.

પહેલી દાન-દ્વાત્રિંશિકામાં–ગ્રંથકારે દાનનું સ્વરૂપ જણાવતાં કયા દાનમાં એકાંત નિર્જરા થાય? અને કયા દાનમાં અલ્પ નિર્જરા થાય? વગેરે બીનાનું સ્વરૂપ દર્શાવ્યું છે. અને છેવટે 'સૂત્રકૃતાંગ સૂત્ર'માં આવતાં आहाकम्माइं વગેરે પદોનું યથાર્થ સ્વરૂપ પ્રગટ કરતાં આતુર કુષ્ઠક દૃષ્ટાંત પણ સ્પષ્ટ જણાવ્યું છે.

બીજી દેશના-દ્વાત્રિંશિકામાં—(૧) દેશનાને લાયક કોણ? જ્ઞાનના ભેદ કેટલા? શ્રુતજ્ઞાન, ચિંતાજ્ઞાન, ભાવનાજ્ઞાનનું સ્વરૂપ શું? બાલ વગેરે જીવોને ઉદ્દેશીને કેવી કેવી દેશના દેવી અને તેમાં ક્રમ કેમ રાખવો? વગેરે પ્રશ્નોનું સ્વરૂપ જણાવ્યું છે.

ત્રીજી માર્ગ-દ્વાત્રિંશિકામાં—માર્ગના ભેદો, પ્રશસ્ત–અપ્રશસ્ત આચરણ, ધાર્મિકજનની પ્રવૃત્તિ, સંવિગ્ન પાક્ષિકનું સ્વરૂપ વગેરે બીના જણાવી છે.

ચોથી જિનમહત્ત્વ નામની દ્વાત્રિંશિકામાં—પ્રભુ શ્રીજિનેશ્વરદેવનું મહત્ત્વ શાબ્દિક યુક્તિઓને લઈને જ માનવું યોગ્ય વગેરે બીના જણાવી છે.

પાંચમી ભક્તિ નામની દ્વાત્રિંશિકામાં—દ્રવ્યભક્તિનું સ્વરૂપ જણાવતાં ભૂમિશુદ્ધિ, અપ્રીતિનો ત્યાગ, સ્નાનની જરૂરિયાત વગેરે બીના જણાવી છે.

છઠ્ઠી સાધુસામગ્ર્ય નામની દ્વાત્રિંશિકામાં—ત્રણ જ્ઞાન, તેનાં ચિહ્નો, ત્રિવિધ ભિક્ષા, પિંડવિશુદ્ધિ, વૈરાગ્યના ત્રણ ભેદ, ભાવશુદ્ધિનું સ્વરૂપ જણાવ્યું છે.

સાતમી ધર્મવ્યવસ્થા-દ્વાત્રિંશિકામાં—જે સાધુ હોય તે મધમાંસ ખાય જ નહિ, મૈથુનનું સદોષપણું, તપ, અનાયતનનો ત્યાગ કરવો વગેરે બીના વર્ણવી છે.

આઠમી વાદદ્વાત્રિંશિકામાં—ત્રણ પ્રકારના વાદ વગેરે બીના જણાવી છે.

નવમી કથા-દ્વાત્રિંશિકામાં—અવાંતર ભેદો જણાવવાપૂર્વક ચાર પ્રકારની કથાનું સ્વરૂપ વર્ણવ્યું છે.

દશમી યોગ-દ્વાત્રિંશિકામાં અને અગિયારમી પાતંજલયોગ-દ્વાત્રિંશિકામાં—વિવિધ યોગનાં લક્ષણ વગેરે જણાવ્યાં છે.

બારમી યોગપૂર્વસેવા નામની દ્વાત્રિંશિકામાં—ગુરુપૂજન, દેવપૂજા વગેરેનું સ્વરૂપ જણાવ્યું છે.

તેરમી મુક્ત્યદ્વેષપ્રાધાન્ય–દ્વાત્રિંશિકામાં—મુક્તિ, તેનાં સાધન અને મુક્તિનાં સાધનોને સેવનારા ભવ્ય જીવો આ ત્રણેમાં દ્વેષ નહિ રાખનારા ભવ્ય જીવો જ યથાર્થ ગુરુમહારાજ વગેરેની ભક્તિ વગેરે કરી શકે છે. પાંચ પ્રકારના અનુષ્ઠાનમાં વિષાનુષ્ઠાન વગેરે પણ અનુષ્ઠાન નકામાં છે. અને છેલ્લા બે તદ્ધેતુ અને અમૃત અનુષ્ઠાન કરવાલાયક છે તે જણાવ્યું છે.

ચૌદમી અપુનર્બંધક–દ્વાત્રિંશિકામાં—અપુનર્બંધક જીવનું સ્વરૂપ તથા શાંત ઉદાત્ત જીવનું સ્વરૂપ વગેરે બીના જણાવી છે.

પંદરમી સમ્યગ્દૃષ્ટિ–દ્વાત્રિંશિકામાં—શુશ્રુષા, ધર્મરાગ, ત્રણ કારણ વગેરે બીના જણાવી છે.

સોળમી મહેશાનુગ્રહ નામની દ્વાત્રિંશિકામાં—બીજા મતવાળાને માન્ય મહેશનું લક્ષણ, જપનું ફળ વગેરે બીના જણાવી છે.

સત્તરમી દૈવપુરુષકાર દ્વાત્રિંશિકામાં—નિશ્ચય વ્યવહારનું સ્વરૂપ, સમ્યગ્દર્શન પામ્યા બાદ સંસારી જીવ દેશવિરતિ આદિ ગુણોને ક્યારે કઈ રીતે પામે? અને માર્ગાનુસારિતા વગેરે ગુણોની બીના દર્શાવી છે.

અઢારમી યોગભેદ–દ્વાત્રિંશિકામાં—યોગના પાંચ ભેદો, મૈત્રી આદિ ચાર ભાવના, ધ્યાન, સમતા વગેરેની બીના જણાવી છે.

ઓગણીસમી યોગવિવેક નામની દ્વાત્રિંશિકામાં—ત્રણ પ્રકારનો યોગ, યોગવંચક વગેરે ત્રણ અવંચકનું સ્વરૂપ વગેરે બીના જણાવી છે.

વીસમી યોગાવતાર–દ્વાત્રિંશિકામાં—સમાધિ, આત્માના ત્રણ ભેદ, જરૂરી દૃષ્ટિનું સ્વરૂપ વગેરે બીના જણાવી છે.

એકવીસમી મિત્રા–દ્વાત્રિંશિકામાં—દૃષ્ટિના આઠ ભેદ પૈકી પહેલી મિત્રાદૃષ્ટિનું વિસ્તારથી સ્વરૂપ જણાવ્યું છે.

બાવીસમી તારાદિ–દ્વાત્રિંશિકામાં—ત્રણ દૃષ્ટિનું એટલે બીજી તારાદૃષ્ટિ, ત્રીજી બલા અને ચોથી દીપ્રાનું સ્વરૂપ જણાવ્યું છે.

તેવીસમી કુતર્કગ્રહનિવૃત્તિ નામની દ્વાત્રિંશિકામાં—કુતર્કનું સ્વરૂપ, ત્રણ પ્રકારનો બોધ, સદનુષ્ઠાનનું લક્ષણ, કાલ, નય વગેરેની અપેક્ષાએ થતા દેશનાના ભેદ વગેરે બીના જણાવી છે.

ચોવીસમી સદ્દૃષ્ટિ–દ્વાત્રિંશિકામાં—સદ્દૃષ્ટિ, કાંતા, ધારણાનું સ્વરૂપ, સ્થિરા દૃષ્ટિમાં થતી જીવની સ્થિતિ, પ્રભાદૃષ્ટિમાં અસંગાનુષ્ઠાન, નિવૃત્તિલાભ વગેરે બીના વર્ણવી છે.

પચીસમી ક્લેશહાનોપાય નામની દ્વાત્રિંશિકામાં—નિર્દોષ જ્ઞાન–ક્રિયાની નિર્મલ સાધના કરવાથી ક્લેશનો નાશ થાય છે, આ બાબતમાં અન્ય દર્શનીના વિચારોનું યુક્તિથી ખંડન કર્યું છે.

છવીસમી યોગમાહાત્મ્ય–દ્વાત્રિંશિકામાં—ધારણાદિ સંયમનું વિસ્તારથી સ્વરૂપ દર્શાવીને છેવટે શુદ્ધ સંયમનું સ્વરૂપ, મુક્તિપદ પ્રાપ્તિનું સ્વરૂપ વર્ણવ્યું છે.

સત્તાવીસમી ભિક્ષુભાવ-દ્વાત્રિંશિકામાં—દ્રવ્યભિક્ષુ, ભાવભિક્ષુ, પર્યાયવાચક શબ્દોનું વિવરણ વગેરે બીના જણાવી છે.

અઠ્ઠાવીસમી દીક્ષા-દ્વાત્રિંશિકામાં—દીક્ષા શબ્દનો નિરુક્તાર્થ, વ્યુત્પત્તિથી અર્થ, દીક્ષા આપવાનો વિધિ, ક્ષમાના બે ભેદ તથા બહુશ્રુતાદિની બીના જણાવી છે.

ઓગણત્રીસમી વિનય-દ્વાત્રિંશિકામાં—જ્ઞાનાદિ પાંચ પ્રકારના કાયિક વિનયના ૮ ભેદ, વાચિક વિનયના ૪, માનસિક વિનયના ૨ ભેદ; એમ ૧૩ ભેદના દરેકમાં ભક્તિ-બહુમાન-વર્ણના-અશાતનારૂપ ચાર ચાર ભેદ ઘટાવીને વિસ્તારથી બાવન ભેદો દર્શાવી છેવટે દીક્ષાપર્યાયે નાના એવા પણ પાઠકને વંદન કરવું જોઈએ એ વાત જણાવી છે.

ત્રીસમી કેવલિભુક્તિવ્યવસ્થાપન નામની દ્વાત્રિંશિકામાં—દિગંબરો "કેવલીને કવલાહાર ન હોય" એમ જે કહે છે તેનું ખંડન કર્યું છે.

એકત્રીસમી મુક્તિ-દ્વાત્રિંશિકામાં—અન્ય મતે મુક્તિનું સ્વરૂપ દર્શાવીને તેમાં અયોગ્યપણું જણાવી જૈન દર્શન પ્રમાણે યથાર્થ મુક્તિનું સ્વરૂપ જણાવ્યું છે.

બત્રીસમી સજ્જનસ્તુતિ-દ્વાત્રિંશિકામાં—સજ્જન દુર્જનનું સ્વરૂપ, ખલવચનનું ખંડન આપી છેવટે પ્રશસ્તિ આપી છે. આ બત્રીસ બત્રીશી અને તેના ઉપર 'તત્ત્વાર્થદીપિકા' નામક સ્વોપજ્ઞ ટીકા એ બન્નેનું શ્લોકપ્રમાણ ૫૫૦૦ શ્લોક છે.

૯. યતિલક્ષણસમુચ્ચય-આ ગ્રંથમાં વાચકવર્યે પ્રાકૃતની ૨૬૩ ગાથામાં સાધુનાં સાત લક્ષણો વિસ્તારથી જણાવ્યાં છે, તેમાં (૧) માર્ગને અનુસરતી ક્રિયા, આમાં માર્ગની વ્યાખ્યા, સિદ્ધાંતની રીતિ, આચરણાનું સ્વરૂપ વગેરે બીના જણાવી છે. (૨) શિક્ષાને લાયક પણું—આમાં વિધિસૂત્ર વગેરે સાત પ્રકારનાં સૂત્રોનું અને દેશનાનું સ્વરૂપ જણાવ્યું છે. (૩) શ્રદ્ધાલક્ષણમાં વિધિનું બહુમાન, વિધિજ્ઞાન, પચ્ચક્ખાણ પાળવાની યોગ્યતા, વધ અને દયાની તરતમતા વગેરે જણાવ્યું છે. (૪) ક્રિયામાં અપ્રમાદ-આમાં મુક્તિદાયક સાધનોની સાધના કરવાની તીવ્ર અભિલાષા, ઉપદેશ કરવાને લાયક ગુણો, દાન, પાત્ર, વગેરેની બીના જણાવી છે. (૫) શક્યક્રિયાઆદરલક્ષણમાં અનુષ્ઠાનવિધિ, નિર્મળ ભાવરક્ષા વગેરે બીના જણાવી છે. (૬) ગુણાનુરાગ લક્ષણમાં-ગુણવંત મહાપુરુષોની કઈ રીતે પ્રશંસા કરવી વગેરે બીના જણાવી છે. (૭) ગુરુઆજ્ઞા આરાધનમાં ગચ્છવાસ, એકાકી વિચારનારને લાગતાં દૂષણો, વિહારની રીતિ, ગુરુશિષ્યના ગુણો, સત્યપ્રરૂપકની પ્રશંસા, દુષમકાળમાં સાધુઓ હયાત છે ને વગેરે બીના જણાવી છે, આ ગ્રંથ ટીકા વિનાનો છે. મૂળ ગ્રંથ જૈનધર્મ પ્રસારક સભાએ અધ્યાત્મસારાદિ દશ ગ્રંથોમાં છપાવ્યો છે.

૧૦. નયરહસ્ય-આ ગ્રંથમાં વિસ્તારથી નૈગમાદિ સાત નયોનું સ્વરૂપ જણાવ્યું છે. પૂજ્ય શ્રીઉપાધ્યાયજી મહારાજે જે ગ્રંથના છેડે 'રહસ્ય' શબ્દ આવે એવા ૧૦૮ ગ્રંથો રચવા ધાર્યા હતા. એમ-'भाषाविशुद्ध्यर्थं रहस्यपदाङ्कितया चिकीर्षिताष्टोत्तरशतग्रन्थान्तर्गतप्रमारहस्यस्याद्वादरहस्यादि सजातीयं प्रकरणमिदमारभ्यते' એમ 'ભાષારહસ્ય' ગ્રંથની

શરૂઆતમાં જણાવેલ બીના ઉપરથી નિર્ણય થઈ શકે છે. પણ હાલ તે બધા ગ્રંથો લભ્ય નથી. કોઈ દ્વેષીએ તે ગ્રંથોનો નાશ કર્યો હોય એમ સંભવે છે. ફક્ત 'ભાષારહસ્ય, ઉપદેશરહસ્ય, નયરહસ્ય' મળી શકે છે. પ્રસ્તુત નયરહસ્યમાં–નયનું લક્ષણ, તેના પર્યાયો, તેને માનવાની જરૂરિયાત, નયોમાં માંહોમાંહે અવિરોધ વગેરે બીના દાખલાદલીલ સાથે સમજાવી છે. નયના બે ભેદ, દરેકનું લક્ષણ, પૂજ્ય શ્રીજિનભદ્રગણિ ક્ષમાશ્રમણ ઋજુસૂત્રને દ્રવ્યાર્થિકનો ભેદ માને છે અને શ્રીસિદ્ધસેન દિવાકર પર્યાયાર્થિકનો ભેદ માને છે–આ બંને વિચારનું સ્પષ્ટીકરણ, નયની વ્યાખ્યા જણાવતાં 'શ્રી. અનુયોગદ્વાર' સૂત્રોમાં જણાવેલાં પ્રદેશ–પ્રસ્થક-વસતિનાં ઉદાહરણ દર્શાવ્યાં છે. 'તત્ત્વાર્થ, વિશેષાવશ્યક' વગેરેમાં જણાવેલ નયલક્ષણોની અવિરોધ ઘટના કર્યો. નય કયા મુદ્દાથી કેટલા નિક્ષેપાને સ્વીકારે છે, દરેક નયમાંથી કયા કયા દર્શનની ઉત્પત્તિ થઈ છે? તેનું સ્વરૂપ શું? દરેક નયની પરસ્પર સાપેક્ષતા કઈ રીતે ઘટે? સપ્તભંગીનું સ્વરૂપ શું? વગેરે બીના જણાવી છે.

૧૧. નયપ્રદીપ–સંસ્કૃત ગદ્યમય આ ગ્રંથ લગભગ ૫૦૦ શ્લોકપ્રમાણનો સંભવે છે. આની ટીકા નથી. એને બે સર્ગ છે, તેમાં પહેલા સપ્તભંગી સમર્થન નામના સર્ગમાં–સાત ભાંગા કઈ રીતે થાય? સ્યાદ્વાદનું સ્વરૂપ શું? કોઈ ઠેકાણે સ્યાત્ શબ્દ ન હોય તો પણ ત્યાં અધ્યાહાર કરવો જોઈએ તેનું શું કારણ? ભાંગા સાત જ કહ્યા તેનું શું કારણ? વગેરે બીના બહુ જ સ્પષ્ટ જણાવી છે. બીજા નયસમર્થન નામના સર્ગમાં–નયવિચારની જરૂરિયાત, દરેક નયની મર્યાદા, દ્રવ્યનું સ્વરૂપ, સ્વભાવપર્યાય, વિભાવપર્યાય, દ્રવ્યર્થિકનયના દશ મુદ્દાઓ, તેનું સ્વરૂપ જણાવીને પર્યાયાર્થિક નયનું સ્વરૂપ વર્ણવ્યું છે. તેમાં પર્યાય અને ગુણના ભેદો, તેનું સ્વરૂપ, સામાન્ય–વિશેષનો સમાવેશ કયાં થઈ શકે? આ બીના સ્પષ્ટ જણાવીને (૧) નૈગમનયના સ્વરૂપમાં–ધર્મ, ધર્મી, ધર્મધર્મીની બાબતમાં નૈગમનો અભિપ્રાય, તેમાં સત્યાસત્યતા, નૈગમાભાસ વગેરે બીના જણાવી છે. (૨) સંગ્રહનયમાં–લક્ષણ, સલક્ષણ-ભેદ, સંગ્રહાભાસની બીના જણાવી છે. (૩) વ્યવહારનયમાં–૧૪ પ્રકારના વ્યવહાર, નવ પ્રકારના ઉપચાર અને સંબંધ જણાવ્યા છે. (૪–૭) ઋજુસૂત્રાદિ ચાર નયો પર્યાયાર્થિકનય તરીકે ગણાય છે. તેમાં ઋજુસૂત્રનયનું સ્વરૂપ જણાવતાં લક્ષણ અને ભેદનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે. શબ્દ નયમાં લક્ષણ જણાવીને કાલાદિની અપેક્ષાએ અર્થભેદ દર્શાવ્યો છે. એવંભૂતનયના પ્રસંગે લક્ષણ, સ્વરૂપ, શબ્દોનો ખરો અર્થ, નયના ભેદ વગેરે બીના જણાવી છે.

૧૨. નયોપદેશ–આ ગ્રંથની ઉપર પોતે 'નયામૃતતરંગિણી' નામની ટીકા બનાવી છે. તેમાં વિસ્તારથી બહુ જ સ્પષ્ટ રીતે પ્રસ્થકાદિ દૃષ્ટાંતો દઈને સાતે નયોનું સ્વરૂપ, દરેક નયની ક્યારે અને કયાં યોજના કરવી? દરેક નય કયા કયા નિક્ષેપા માને છે? તે તેમજ પ્રસંગે પ્રતિમા–પ્રતિષ્ઠાદિના વિચાર દર્શાવ્યા છે.

૧૩. જ્ઞાનબિંદુ–આ ગ્રંથનું પ્રકરણ–૧૨૫૦ શ્લોકનું છે. તેના ઉપર ટીકા નથી. (૧) જ્ઞાન એટલે શું? (૨) મતિજ્ઞાન વગેરે ચાર જ્ઞાન કઈ અપેક્ષાએ છાદ્મસ્થિક ગુણ

કહેવાય છે? (૩) જ્ઞાનનાં ભેદ કેટલા? (૪) મતિજ્ઞાનનું લક્ષણ શું? (૫) મતિજ્ઞાનને શ્રુત જ્ઞાનથી અલગ કહેવાનું શું કારણ? (૬) મતિજ્ઞાનનાં શ્રુતનિશ્રિત-અશ્રુતનિશ્રિત ભેદોનું સ્વરૂપ શું? (૭) પદાર્થ-વાક્યાર્થ-મહાવાક્યાર્થ જ્ઞાનને કયા જ્ઞાનમાં ગણવું? (૮) તે ચારે પ્રકારના બોધની ઘટના કઈ રીતે કરવી? (૯) ચૌદ પૂર્વીના ષટ્સ્થાનપતિત બોધને કયા જ્ઞાનમાં ગણવો? આ પ્રશ્નોના ખુલાસા સવિસ્તર જણાવીને અવગ્રહાદિકના ક્રમમાં પ્રયોજન, અવગ્રહના ભેદ, સ્વરૂપ, તેના પ્રામાણ્યાદિનો નિર્ણય, સમ્યક્ત્વને લઈને જ જ્ઞાનને પ્રમાણ તરીકે ગણી શકાય. સ્યાદ્વાદનું સ્વરૂપ, એક પદાર્થના જ્ઞાનથી સર્વ પદાર્થોનું જ્ઞાન, અવગ્રહાદિ ભેદોમાં જ્ઞાન-દર્શનની યોજના વગેરે બીના મતિજ્ઞાનના પ્રસંગે સ્પષ્ટ જણાવી છે. શ્રુતજ્ઞાનના વર્ણનમાં-સ્વરૂપભેદ, મતિશ્રુતમાં તફાવત વગેરે જણાવ્યું છે. અવધિજ્ઞાનના વર્ણનમાં-લક્ષણ, ભેદ, પરમાવધિ, મનઃપર્યવ જ્ઞાનથી ભિન્નતા જણાવી છે. મનઃપર્યવ જ્ઞાનના વર્ણનમાં-લક્ષણ, ચિંતિત પદાર્થને જાણવાની રીત, મનઃપર્યવમાં અપેક્ષાએ દર્શનનો સ્વીકાર-અસ્વીકાર, મનઃપર્યવથી જે મન જણાય તેનું સ્વરૂપ વગેરે બીના વર્ણવી છે. પાંચમા કેવલજ્ઞાનના વર્ણનમાં-તેનું લક્ષણ, સર્વજ્ઞતાની સિદ્ધિ, તેનું પ્રામાણિકપણું, કેવલજ્ઞાનાવરણના ક્ષયની આવશ્યકતા, કર્મનું આવારકપણું, કવલભુક્ત્યાદિથી શોભાદિની ઉત્પત્તિને સ્વીકારનારના મતનું ખંડન, નૈરાત્મ્યભાવ માનનાર બૌદ્ધમતે સર્વજ્ઞપણાનું અવ્યવસ્થિતપણું, એકરસ બ્રહ્મજ્ઞાનને કેવલજ્ઞાન તરીકે માનનારના મતનું ખંડન, પારમાર્થિક ત્રણ શક્તિ, દૃષ્ટિસૃષ્ટિવાદનું ખંડન, બ્રહ્મવિષય અને બ્રહ્માકારવૃત્તિનું-અધ્યાસનું-અજ્ઞાનકલ્પનાનું ખંડન, દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ સૂક્ષ્મ વિચારશ્રેણિ જણાવી છે. છેવટે મલ્લવાદી, શ્રીસિદ્ધસેન દિવાકર તથા જિનભદ્રગણિના કેવલજ્ઞાન-દર્શન અને તેના ઉપયોગની બાબતમાં વિચારો જણાવી 'સમ્મતિ-તર્ક'ની તે વિષયની ગાથાઓનું સ્પષ્ટ વિવેચન દર્શાવી નયવાદની અપેક્ષાએ તેનું એકીકરણ બતાવ્યું છે.

૧૪. જ્ઞાનસાર-આ ગ્રંથમાં જુદા જુદા પૂર્ણતા વગેરે ૩૨ પદાર્થોનું આઠ આઠ શ્લોકમાં બહુ જ સરસ વર્ણન. સંક્ષેપમાં કર્યું છે-આની ઉપર પોતે બાલાવબોધ (ટબો) પણ કર્યો છે, એમ નીચેના શ્લોકથી સાબિત થાય છે:

" ऐन्द्रवृन्दनतं नत्वा, वीरं तत्त्वार्थदेशिनम् ।
अर्थः श्रीज्ञानसारस्य, लिख्यते लोकभाषया ॥ "

આ ગ્રંથ ઉપર પાઠક શ્રીદેવચંદ્રજીએ અને પંન્યાસ શ્રીગંભીરવિજયજીએ સંસ્કૃત ટીકા રચી છે.

૧૫. ઐન્દ્રસ્તુતિઓ-આમાં શ્રીશોભનસ્તુતિના જેવી સ્તુતિઓ બનાવી છે.

૧૬. ઉપદેશ રહસ્ય. ૧૭. આરાધકવિરાધક ચતુર્ભંગી, ૧૮. આદિજિન-સ્તવન. ૧૯. તત્ત્વવિવેક, ૨૦. નિહ્નવચોક્તિ, ૨૧. ધર્મપરીક્ષા, ૨૨. જ્ઞાનાર્ણવ, ૨૩. નિશાભક્તવિચાર.

૨૪. ન્યાયખંડનખંડખાદ્ય—(મહાવીરસ્તવ પ્રકરણ) શ્રીઉપાધ્યાયજી મહારાજે રચેલ નવ્યન્યાયની વિશિષ્ટ કોટિનો આ ગ્રંથ અત્યંત અર્થગંભીર અને જટિલ છે. આ એક જ ગ્રંથ વાચકવર્યના પ્રખર પાંડિત્યની સાક્ષી પૂરે તેવો છે. આ ગ્રંથ ઉપર અમારા પરમોપકારી પરમપૂજ્ય ગુરુમહારાજ શ્રીવિજયનેમિસૂરીશ્વરજી મહારાજે મોટી ટીકા રચી છે અને અમારા મોટા ગુરુભાઈ પરમપૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રીવિજયદર્શનસૂરીશ્વરજી મહારાજે 'કલ્પલતિકા' નામની ટીકા બનાવી છે. આ ગ્રંથનું ગ્રંથપ્રમાણ ૫૫૦૦ શ્લોક છે.

૨૫. અસ્પૃશદ્ગતિવાદ.

૨૬. ન્યાયાલોક—આમાં ન્યાય દૃષ્ટિએ સ્યાદ્વાદાદિનું નિરૂપણ કર્યું છે. આ ગ્રંથની ઉપર અમારા પરમપૂજ્ય પરમોપકારી ગુરુવર્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રીવિજયનેમિસૂરીશ્વરજી મહારાજે સ્પષ્ટ તત્ત્વબોધદાયક વૃત્તિ બનાવી છે, જે શ્રીજૈન ગ્રંથપ્રકાશક સભા, અમદાવાદ તરફથી છપાયેલ છે. આ ગ્રંથનું ગ્રંથમાન ૧૨૦૦ શ્લોકપ્રમાણ છે.

ન્યાયખંડનખાદ્ય અને ન્યાયાલોકની શ્રીઉપાધ્યાયજીએ પોતાના હાથે લખેલી પ્રતો પણ મળી શકે છે.

૨૭. પંચનિર્ગ્રંથી પ્રકરણ—આમાં પંચ નિગ્રંથોની બીના જણાવી છે.

૨૮. પરમજ્યોતિઃપંચવિંશિકા.

૨૯. પરમાત્મપંચવિંશિકા.

૩૦. પ્રતિમાશતક—મૂળ શ્લોક ૧૦૦—આના ઉપર વાચકવર્યે મોટી ટીકા રચી છે. અને તે ટીકાને અનુસરીને વિ. સં. ૧૭૯૩ માં પૌર્ણિમીય ગચ્છાધીશ શ્રીભાવપ્રભસૂરિજીએ નાની ટીકા બનાવી છે. ગ્રંથકારે આ ગ્રંથમાં શરૂઆતમાં ૬૯ શ્લોકમાં શ્રી. જિનપ્રતિમાને અને જિનપ્રતિમાની પૂજાને જણાવનારા આગમાદિને નહિ માનનારા લુંપકમતનું ખંડન કર્યું છે. પછી ૯ શ્લોકમાં ધર્મસાગરીય મતનું ખંડન કર્યું છે. તે પછી બે શ્લોકમાં જિનપ્રતિમાની સ્તુતિ કરી છે. ત્યાર બાદ ૧૨ શ્લોકમાં પાયચંદ મતનું અને ત્રણ શ્લોકમાં પુણ્યકર્મવાદીના મતનું ખંડન કરીને બે શ્લોકમાં જિનભક્તિ કરવાનો ઉપદેશ આપ્યો છે. તે ઉપરાંત જિનસ્તુતિગર્ભિત નયભેદો પણ દર્શાવ્યા છે. પછીના ૬ શ્લોકમાં સર્વજ્ઞ પ્રભુની અને તેમની પ્રતિમાની સ્તુતિ જણાવીને છેવટે પ્રશસ્તિ કહીને ગ્રંથ પૂર્ણ કર્યો છે.

૩૧. પ્રતિમાસ્થાપનન્યાય—આ ગ્રંથ અપૂર્ણ મળ્યો છે.

૩૨. ફલાફલવિષયક પ્રશ્નોત્તર, (?) ૩૩. ભાષારહસ્ય, ૩૪. માર્ગપરિશુદ્ધિ, ૩૫. મુક્તાશુક્તિ, ૩૬. યતિદિનચર્યા પ્રકરણ, ૩૭. વૈરાગ્યકલ્પલતા, (ગ્રંથમાન—૬૦૫૦), ૩૮. શ્રી. ગોડીપાર્શ્વસ્તોત્ર—(૧૦૮ પદ્ય), ૩૯. વિજયપ્રભસૂરિસ્વાધ્યાય—(સંસ્કૃતમાં), ૪૦. શંખેશ્વરપાર્શ્વસ્તોત્ર—(ગ્રંથમાન ૧૨૨), ૪૧. સમીકાપાર્શ્વસ્તોત્ર, ૪૨. સામાચારી પ્રકરણ, સ્વોપજ્ઞટીકા સહિત, ૪૩. સ્તોત્રાવલી.

ન્યાયાચાર્ય શ્રીયશોવિજયજીકૃત ટીકાગ્રંથો

૪૪. અષ્ટસહસ્રીવિવરણ–ન્યાયશાસ્ત્રનો આ ગ્રંથ દિગંબરીય છે. મૂલ કારિકાના રચનાર–શ્રીસમંતભદ્ર છે. ભાષ્યકર્તા–શ્રીઅકલંક દેવ છે, અને તેને અનુસરીને વ્યાખ્યાકાર–વિદ્યાનંદ છે. શ્રીઉપાધ્યાયજી મહારાજે આના ઉપર વિવરણ રચ્યું છે.

૪૫. કર્મપ્રકૃતિ–મોટી ટીકા–ગ્રંથમાન ૧૩૦૦૦ શ્લોક. આની સ્વહસ્તલિખિત પ્રત પણ મળી શકે છે. શ્રીમલયગિરિ મહારાજે કરેલી નાની ટીકાના આધારે આ મોટી ટીકા બનાવી છે.

૪૬. કર્મપ્રકૃતિ–લઘુ ટીકા–આ ગ્રંથની સાત ગાથા સટીક મળી શકે છે, જે આત્માનંદ સભાએ છપાવી છે.

૪૭. તત્ત્વાર્થવૃત્તિ–પૂજ્ય શ્રીઉમાસ્વાતિ વાચક મહારાજે 'તત્ત્વાર્થાધિગમ સૂત્ર' નામક ગ્રંથની રચના કરી છે. તેની ઉપર જેમ શ્રીહરિભદ્રસૂરિ અને શ્રીસિદ્ધસેન ગણિ વગેરે મહાત્માઓએ ટીકા બનાવી છે, તેમ શ્રીઉપાધ્યાયજીએ પણ ટીકા બનાવી છે. પણ ટીકા આખી મળતી નથી. ફક્ત પ્રથમ અધ્યાયની ટીકા મળી છે. તેમાં પણ કારિકાની ટીકા અપૂર્ણ મળી છે, તેને મારા પરમોપકારી વિદ્યાગુરુ આચાર્યમહારાજ શ્રીવિજયઉદયસૂરીશ્વરજી મહારાજે પૂર્ણ કરી છે. તે અમદાવાદના સંઘવી શેઠ માણેકલાલ મનસુખભાઈએ છપાવી છે.

૪૮. દ્વાદશારનયચક્રોદ્ધાર વિવરણ–આ ગ્રંથનું ગ્રંથમાન ૧૮૦૦૦ શ્લોકપ્રમાણ છે.

૪૯. ધર્મસંગ્રહ ટિપ્પણ–મૂલકાર ઉપાધ્યાય શ્રીમાનવિજયજીના ગ્રંથ ઉપરનું ટિપ્પણ, ભાવનગરથી જૈન આત્માનંદ સભા તરફથી પ્રગટ થયું છે.

૫૦. પાતંજલ યોગસૂત્રવૃત્તિ–આ ગ્રંથ શ્રીજૈન આત્માનંદ સભા, ભાવનગર તરફથી પ્રગટ થયો છે.

૫૧. યોગવિંશિકા વિવરણ–પ્રકાશક–આત્માનંદ સભા, ભાવનગર.

૫૨. શાસ્ત્રવાર્તા સમુચ્ચયવૃત્તિ–*આ ટીકાનું નામ 'સ્યાદ્વાદકલ્પલતા' છે અને એનું ગ્રંથમાન ૧૩૦૦૦ શ્લોકપ્રમાણ છે. આ ગ્રંથ ભાવનગરની શ્રીયશોવિજયજી જૈન ગ્રંથમાલાએ પ્રકટ કર્યો છે.

૫૩. ષોડશકવૃત્તિ–મૂલકાર શ્રીહરિભદ્રસૂરિ, ગ્રંથમાન ૧૨૦૦ શ્લોક છે. પ્રકાશક શેઠ દેવચંદ લાલભાઈ જૈન પુસ્તકોદ્ધાર ફંડ, સૂરત, ટીકાનું નામ 'યોગદીપિકા' છે.

૫૪. સપ્તભંગી નયપ્રદીપ? —

* આ ગ્રંથ ઉપર પૂ. આ. શ્રીવિજયલાવણ્યસૂરીશ્વરજીએ સ્વતંત્ર ટીકા રચીને પ્રસિદ્ધ કરાવ્યો છે. સં.

ઉપાધ્યાયજીકૃત અનુપલબ્ધ ગ્રંથો અને ટીકાઓ

૫૫. અધ્યાત્મબિંદુ, ૫૬. અધ્યાત્મોપદેશ, ૫૭. અલંકારચૂડામણિટીકા—આનો ઉલ્લેખ 'પ્રતિમાશતક'ના ૯૯મા શ્લોકની સ્વોપજ્ઞટીકામાં આ પ્રમાણે છે—' प्रपञ्चितं चैतदलङ्कारचूडामणिवृत्तावस्माभिः ।'

૫૮. આકર, ૫૯. આત્મખ્યાતિ (જ્યોતિઃ ?), ૬૦. *કાવ્યપ્રકાશટીકા, ૬૧. છંદશ્ચૂડામણિટીકા, ૬૨. જ્ઞાનસારચૂર્ણિ, ૬૩. તત્ત્વાલોકવિવરણ, ૬૪. ત્રિસૂત્ર્યાલોકવિધિ, ૬૫. દ્રવ્યાલોક, ૬૬. પ્રમારહસ્ય, ૬૭. મંગલવાદ, ૬૮. લતાદ્વય, ૬૯. વાદમાલા, ૭૦. વાદરહસ્ય, ૭૧. વિચારબિંદુ, ૭૨. વિધિવાદ, ૭૩. વીરસ્તવટીકા, ૭૪. વેદાંતનિર્ણય, ૭૫. વેદાંતવિવેક-સર્વસ્વ, ૭૬. વૈરાગ્યરતિ, ૭૭. શઠપ્રકરણ, ૭૮. સિદ્ધાંતતર્કપરિષ્કાર, ૭૯. સિદ્ધાંત-મંજરી-ટીકા, ૮૦. સ્યાદ્વાદમંજૂષા (સ્યાદ્વાદમંજરીટીકા), ૮૧. સ્યાદ્વાદરહસ્ય—આ ગ્રંથનો ઉલ્લેખ 'ન્યાયાલોક'ના ત્રીજા પ્રકાશની છેવટે આ પ્રમાણે આવે છે.—'पर्यायाश्चानन्ता इति न तेषां विविच्यविभाग इत्यधिकमत्रत्यं तत्त्वं स्याद्वादरहस्यादावनुसंधेयम्' ।

આપણે ઉપર જોયું તે પ્રમાણે ઉપાધ્યાયજીકૃત ગ્રંથોના ત્રણ વિભાગ પાડી શકાય—(૧) મૂલગ્રંથો, (૨) ટીકાગ્રંથો, (૩) અનુપલબ્ધ ગ્રંથ-ટીકાદિ. તેમાં મૂલગ્રંથો લગભગ ૪૩, ટીકાગ્રંથો ૧૧, અને અનુપલબ્ધ ગ્રંથ-ટીકાદિની સંખ્યા ૨૭ છે. ગુરુતત્ત્વવિનિશ્ચયાદિ ગ્રંથો ઉપરથી એ પણ નિર્ણય જરૂર થઈ શકે છે કે વાચકવર્યે પ્રાકૃત મૂલગ્રંથો પણ રચેલા છે. અત્યાર સુધીમાં જણાવેલી બીના ઉપરથી વાચકો જાણી શકશે કે ન્યાયાચાર્યજી મહારાજ પ્રાકૃત અને સંસ્કૃતભાષાના અને બંને ભાષામાં રચાયેલા પ્રાચીન ગ્રંથોના ઉચ્ચકોટિના જાણકાર હતા.

ઉપાધ્યાયજીકૃત લોકભાષાબદ્ધ કૃતિઓ

પરોપકારરસિક વાચકવર્યે કેવળ વિદ્વદ્ભોગ્ય સાહિત્ય રચીને જ સંતોષ નથી માન્યો. તેમને બાલજીવોને પણ લાભ આપવાની તીવ્ર ઉત્કંઠા હતી. અને તેથી તેમણે લોકભાષાબદ્ધ અનેક નાની-મોટી, ગદ્ય-પદ્ય કૃતિઓની રચના કરી છે. આ સંબંધમાં એમ કહેવાય છે કે —ગુરુમહારાજની સાથે ઉપાધ્યાયજી કાશીમાં અભ્યાસ પૂર્ણ કરીને આગ્રા વગેરે બીજા બીજા સ્થળે વિહાર કરતા કરતા અનુક્રમે એક ગામમાં પધાર્યા. સાંજે પ્રતિક્રમણમાં એક શ્રાવકે શ્રીનયવિજયજીની આગળ વિનંતિ કરી કે, 'આપની આજ્ઞાથી આજે આપના વિદ્વાન શિષ્ય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ સજ્ઝાય બોલે, તે સાંભળવાની ઈચ્છા છે, કૃપા કરીને તેમને આજ્ઞા દેશોજી.' આ ઉપરથી ગુરુમહારાજે યશોવિજયજીને પૂછ્યું કે, 'કેમ, ભાઈ ! બોલશો ?' આના જવાબમાં વાચકવર્યે જણાવ્યું—'મને સજ્ઝાય કંઠસ્થ નથી (આવડતી નથી.)' શ્રીયશોવિજયજીનાં આ વેણ સાંભળીને શ્રાવકે કહ્યું કે, 'ત્યારે શું બાર વરસ કાશીમાં રહીને ઘાસ કાપ્યું ?' આ સાંભળીને શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ સમયસૂચકતા વાપરીને મૌન રહ્યા.

---

* ઉપરની યાદી ચાલુ પરંપરા મુજબની છે તેથી બરાબર નથી. વધુ ચોકસાઈવાળી યાદી ૨૦૧૧ માં અમે અલગ પ્રગટ કરી છે તે જોવી. —સંપા.

પ્રતિક્રમણ પૂરું થયા બાદ વિચાર કરતાં સ્પષ્ટ જણાયું કે, 'શ્રાવકનું કહેવું અક્ષરે અક્ષર વ્યાજબી છે. કારણ કે પ્રાકૃત–સંસ્કૃતના જાણકારની સંખ્યા બહુ ઓછી છે તે નહીં જાણનારને તો પ્રચલિત ભાષામાં જ બોધ થઈ શકે. આ ઇરાદાથી બહુ જ વૈરાગ્યમય સજ્ઝાય બનાવીને, મોઢે કર્યાં બાદ બીજે દિવસે પ્રતિક્રમણમાં શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ સજ્ઝાયનો આદેશ માગી તે બોલવા લાગ્યા. સાંભળનારા શ્રાવકો સાંભળતાં વૈરાગ્યરસમાં ઝીલવા માંડયા. સજ્ઝાય લાંબી હતી; તેથી વાર બહુ લાગી. શ્રાવકો પૂછવા લાગ્યા કે, 'હવે બાકી કેટલી રહી ?'

ઉપાધ્યાયજી મહારાજનો વિચાર એ હતો કે જ્યાં સુધી ઘાસ કાપવાનું કહેનાર શ્રાવક ન બોલે ત્યાં સુધી સજ્ઝાય ચાલુ રાખવી. કેટલોક સમય વીત્યા બાદ એ જ શ્રાવકે પૂછયું કે, 'હે મહારાજ ! હવે સજ્ઝાય કેટલી બાકી રહી ?' જવાબમાં શ્રીઉપાધ્યાયજીએ જણાવ્યું કે, 'મહાનુભાવ ! બાર વરસમાં પેદા થયેલા ઘાસના આજે પૂળા બંધાય છે. એક વરસના ઘાસના પૂળા બાંધવામાં ઘણો સમય જાય તો આમાં વધારે સમય લાગે એમાં નવાઈ શી ?' શ્રાવક મુદ્દો સમજી ગયો અને માફી માગવા લાગ્યો. શ્રીઉપાધ્યાયજીએ સજ્ઝાયની ઢાળ પૂરી કરી. આ રીતે ઉપાધ્યાયજી મહારાજે લોકભાષાબદ્ધ કૃતિઓ રચવાની શરૂઆત કરી એમ કહેવાય છે. ઉપર જણાવેલી ઘટના અમદાવાદમાં અગર સુરતમાં બની, એમ પણ કહેવાય છે. વાચકવર્યે ગુજરાતી ને હિંદી વગેરે ભાષામાં જે તત્ત્વબોધદાયક ગ્રંથો બનાવ્યા છે તેમાંના કેટલાકની નામાવલી આ પ્રમાણે છે:—

૧. અધ્યાત્મમત પરીક્ષાનો ટબો (મુદ્રિત), ૨. આનંદઘન–અષ્ટપદી; મેડતામાં આનંદઘનજી મહારાજને ઉપાધ્યાયજી મળ્યા હતા. તેમના વિશાલ અનુભવ, નિઃસ્પૃહતા વગેરે અપૂર્વ ગુણોથી આકર્ષાઈને વાચકવર્યે તેમની સ્તુતિ બનાવી હતી. તે આઠ શ્લોક પ્રમાણ હોવાથી 'અષ્ટપદી' કહેવાય છે. ૩. ઉપદેશમાલા, ૪. જંબૂસ્વામીરાસ, ૫. જસવિલાસ–આમાં અધ્યાત્માદિ આત્મદૃષ્ટિને પોષનારાં તત્ત્વોને લક્ષ્યમાં રાખીને પદ વગેરે સ્વરૂપે રચના કરી છે. ૬. જેસલમેર પત્ર, ૭. જ્ઞાનસારનો ટબો, ૮. તત્ત્વાર્થસૂત્રનો ટબો, ૯. દ્રવ્યગુણપર્યાયરાસ (મુદ્રિત), ૧૦. દિક્પટ ચોરાશી બોલ–આની રચના કાશીથી આવતાં કરી હતી, ૧૧. પંચપરમેષ્ઠિગીતા (મુદ્રિત), ૧૨. બ્રહ્મગીતા (મુદ્રિત), ૧૩. લોકનાલિ (બત્રીશી)–બાલાવબોધ (રચના સં. ૧૬૬૫), ૧૪. વિચારબિંદુ, ૧૫. વિચારબિંદુનો ટબો, ૧૬. શઠપ્રકરણનો બાલાવબોધ, ૧૭. શ્રીપાલરાસનો ઉત્તર ભાગ–(પૂર્ણ કરવાનો સમય વિ. સં. ૧૭૩૮. ઉપાધ્યાય શ્રીવિનયવિજયજી મહારાજે આ રાસની શરૂઆત કરી હતી. રાંદેરમાં અંતિમ સમય જાણીને તેઓએ પરમ વિશ્વાસભાજન શ્રીયશોવિજયજી મહારાજને તે પૂરો કરવાની ભલામણ કરી હતી. તે પ્રમાણે વાચકવર્યે આ રાસ પૂરો કર્યો.), ૧૮. સમાધિશતક, ૧૯. સમતાશતક, ૨૦. સમ્યક્ત્વશાસ્ત્ર સારપત્ર, ૨૧. સમુદ્રવહાણ સંવાદ, ૨૨. સમ્યક્ત્વ ચોપાઈ.

ઉપાધ્યાયજીકૃત સ્તવનો

૨૩. આવશ્યકસ્તવન–આમાં છ આવશ્યકનું સ્વરૂપ, ફળ વગેરે બીના જણાવી છે. ૨૪. કુમતિખંડન સ્તવન. ૨૫–૨૬–૨૭–વર્તમાન ચોવીશીના ચોવીશ તીર્થંકર પ્રભુ દેવનાં સ્તવનો–આ ત્રણ ચોવીશીમાં પ્રભુભક્તિ વગેરે બીના બહુ જ સુંદર રીતે સરલ ભાષામાં જણાવી છે. તેમાંની એક ચોવીશી શ્રી જૈનશ્રેયસ્કર મંડળે અર્થસહિત છપાવી છે. ૨૮. દશમતસ્તવન. ૨૯. નવપદપૂજા–આમાં શ્રીપાલરાસમાં નવપદનું સ્વરૂપ જણાવતી વેળાએ જે નવ ઢાળો આવે છે તે જ ઢાળો આપી છે. કેટલોક ભાગ વિમલગચ્છના શ્રીજ્ઞાનવિમલસૂરિએ અને કેટલાંક પદ્યો શ્રીદેવચંદ્રજીએ બનાવ્યાં છે, ૩૦. નયગર્ભિત શ્રીશાંતિજિન સ્તવન, ૩૧. નિશ્ચય–વ્યવહારગર્ભિત શ્રીસીમંધર પ્રભુનું સ્તવન, ગાથા–૪૨, ૩૨. પાર્શ્વનાથ સ્તવન (ધમાલ), ૩૩. પાર્શ્વનાથ (દાતણ) સ્તવન, ૩૪. મહાવીર સ્તવન, ૩૫. મૌન એકાદશી ૧૫૦ કલ્યાણકનું સ્તવન, ૩૬. વિહરમાન જિનવીશી, ૩૭. શ્રીવીર સ્તુતિ હુંડીરૂપ સ્તવન, ગાથા–૧૫૦; આમાં ઢૂંઢકમતનું ખંડન કરીને પ્રતિમાપૂજા કોણે કોણે કરી? તે બીના ઢૂંઢકને માન્ય એવાં ૩૨ સૂત્રોમાંના પાઠો જણાવીને પ્રતિમાની જરૂરિયાત વગેરેનું વર્ણન કર્યું છે, ૩૮. શ્રીસીમંધર ચૈત્યવંદન, ૩૯. શ્રીસીમંધરસ્વામીને વિનંતિ ગર્ભિત સ્તવન, ગાથા–૧૨૬; આમાં સાચા ગુરુનું સ્વરૂપ વગેરે બીના જણાવી છે, ૪૦. શ્રીસીમંધરસ્વામી સ્તુતિરૂપ સ્તવન, ગાથા ૩૫૦–આમાં સાધુજીવન અને શ્રાવકજીવનને અંગે બહુ જ જરૂરી બીના સ્પષ્ટભાવે જણાવી છે.

ઉપાધ્યાયજીકૃત સજ્ઝાયો

૪૧. અઢાર પાપસ્થાનકની સજ્ઝાય, ૪૨. અમૃતવેલી સજ્ઝાય, ૪૩. અગિયાર અંગની સજ્ઝાય—ઢાલ ૧૧, ૪૪. અગિયાર અંગઉપાંગની સજ્ઝાય, ૪૫. આત્મપ્રબોધ સજ્ઝાય, ૪૬. આઠ દૃષ્ટિની સજ્ઝાય, ૪૭. ઉપશમશ્રેણિની સજ્ઝાય, ૪૮. ચડતા પડતાની સજ્ઝાય, ૪૯. ચાર આહારની સજ્ઝાય, ૫૦. જ્ઞાન ક્રિયાની સજ્ઝાય, ૫૧. પાંચ મહાવ્રતોની ભાવનાની સજ્ઝાય, ૫૨. પાંચ કુગુરુની સજ્ઝાય, ૫૩. પ્રતિક્રમણ ગર્ભહેતુની સજ્ઝાય, ૫૪. પ્રતિમાસ્થાપનની સજ્ઝાય, ૫૫. યતિધર્મબત્રીશીની સજ્ઝાય, ૫૬. સ્થાપનાકલ્પની સજ્ઝાય, ૫૭. સુગુરુની સજ્ઝાય, ૫૮. સંયમશ્રેણિની સજ્ઝાય, ૫૯. સમકિતના ૬૭ બોલની સજ્ઝાય, ૬૦. હરિયાલીની સજ્ઝાય, ૬૧. હિતશિક્ષાની સજ્ઝાય—આ બધી સજ્ઝાયો મુદ્રિત થઈ ગઈ છે.

આ પ્રમાણે—(૧) પ્રાકૃત, સંસ્કૃત, હિંદી, ગુજરાતી ભાષાના જે જે ગ્રંથો પ્રાચીન ટીપ, (૨) જ્ઞાનભંડારોના અવલોકન, (૩) જુદા જુદા વિદ્વાનોએ વાચકવર્યના ગ્રંથોની કરેલી યાદી, (૪) મુદ્રિત ગ્રંથો અને (૫) જે ગ્રંથ હાલ મળી શકતા નથી, પણ છપાયેલા કે લખાયેલા પ્રાચીન ગ્રંથોમાં તે અલભ્ય ગ્રંથોના લીધેલા પાઠ અથવા કરેલા નામનિર્દેશ–આ વગેરે ઉપરથી પરિશ્રમપૂર્ણ વાચનના પરિણામે તૈયાર કરેલી વાચકવર્યની ગ્રંથાવલી જણાવી છે.

સંભવ છે કે, આથી પણ વધુ ગ્રંથો જરૂર હોવા જોઈએ, છતાં ઓછા ગ્રંથો દેખાય છે, તેનું કારણ શું? આના જવાબમાં કેટલાએક એમ માને છે કે ઉપાધ્યાયજીના સમયમાં યતિઓનું બહુ જ જોર હતું. આ વખતે પંન્યાસજી મહારાજ સત્યવિજયજી ગણિ વગેરેની સાથે સામેલ થઈ ઉપાધ્યાયજી મહારાજે ક્રિયા-ઉદ્ધાર કર્યો, સાચા ગુરુ કેવા ગુણવંત હોય વગેરે બીના નિડરપણે ઉપદેશદ્વારા અને ગ્રંથોદ્વારા જણાવવા લાગ્યા. આથી યતિઓએ દ્વેષ ધારણ કરીને શ્રીઉપાધ્યાયજી મહારાજ ઉપર બહુ જ ભયંકર જુલમો ગુજાર્યા, છતાં તેઓ ડગ્યા નહીં, અને તેમના ઘણા ગ્રંથોને અગ્નિશરણ કર્યા. આથી તે ગ્રંથો અલ્પ પ્રમાણમાં હયાતી ધરાવે છે.

ટીકાકાર મહાપુરુષોમાં પૂજ્ય શ્રીમલયગિરિજી મહારાજ વધારે વખણાય છે, કારણ કે તેઓએ બનાવેલા ગ્રંથોમાં શબ્દોની અને પદાર્થની સરલતા બહુ દેખાય છે. આથી તે ગ્રંથોનો અલ્પબોધવાળા જીવો પણ હોંશથી લાભ લઈ શકે છે. આવી સરલતા શ્રીવાચક-વર્યના પ્રાકૃતાદિ ભાષાના ગ્રંથોમાં જણાતી નથી, એમ ગ્રંથકાર પોતે પણ છેવટે સમજી શકયા છે. માટે જ ગુજરાતી, હિંદી ભાષામાં પણ પૂજ્યશ્રીએ વિશાલ પ્રમાણમાં ગ્રંથરચના કરી છે. એક જ ગ્રંથકાર જુદી જુદી ભાષામાં વિવિધ પ્રયત્નો કરે, એવાં દૃષ્ટાંતો વાચકવર્યની પહેલાના સમયનાં મળવાં મુશ્કેલ છે. પ્રશસ્ય સરલ ટીકાકાર શ્રીમલયગિરિજી મહારાજ અને સંગ્રહકાર શ્રીઉમાસ્વાતિ વાચકવર્યની માફક પૂજ્ય શ્રીઉપાધ્યાયજી મહારાજ દરેક પદાર્થના ખરા સ્વરૂપને નિડરતા અને મધ્યસ્થતા જાળવીને કહેવામાં સંપૂર્ણ પ્રશંસા પામેલા છે, માટે જ જ્યાં તેમના ગ્રંથોની સાક્ષી આપવામાં આવે, ત્યાં સર્વ કોઈ કબૂલ જ કરે છે.

બારમી સદીના મહાન જ્યોતિર્ધર કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રીહેમચંદ્રાચાર્યની જેમ મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ પોતાના પ્રખર પાંડિત્ય અને ઉદાત્ત ચારિત્રના બળે અઢારમી સદીના મહાન જ્યોતિર્ધર હતા. તેમણે જ્ઞાન અને ચારિત્રનો સુમેળ સાધીને પોતાનું કલ્યાણ સાધવા સાથે સમસ્ત સંઘને કલ્યાણનો માર્ગ દર્શાવ્યો હતો. શ્રીઉપાધ્યાયજી મહારાજની એ અમર કૃતિઓ આપણને એ જ પરમ કલ્યાણનો માર્ગ દર્શાવે એ ભાવનાપૂર્વક આ લેખ અહીં સમાપ્ત કરું છું.

★

જૈનદર્શનનું ચિંતનકાવ્ય

જ્ઞાનસાર

લેખક : શ્રીયુત પી. કે. શાહ (અમદાવાદ.)

શ્રીમદ્ યશોવિજયજીના અનેક ગ્રંથો, અનેક કૃતિઓ આપણને એમની વિરલ પ્રતિભાનો પરિચય આપી જાય છે. એમની સાહજિક પ્રતિભા, તત્ત્વગ્રાહી દૃષ્ટિ અને જીવનને ઉચ્ચ કરનારી ભાવના, સંસ્કૃતિ સાથેનો અને તર્કપદ્ધતિ સાથેનો એમનો ગાઢ સંપર્ક–આ બધાં શ્રીમદ્ યશોવિજયજીના જીવનના ને કવનના અનેકવિધ પાસાંઓ છે. શ્રીમદ્ યશોવિજયજી તર્કના પૂરેપૂરા જ્ઞાતા હતા અને એ રીતે દર્શનના વિવેચક હતા અને એ પણ માત્ર શુષ્ક પાંડિત્યપૂર્ણ વિવેચક નહિ પણ જીવનનું યથેચ્છ અને શાસ્ત્રીય દર્શન કરાવનાર વિવેચક–કવિ. શ્રીમદ્ યશોવિજયજીના સાહિત્યની અનેક કૃતિઓ ઉપલબ્ધ છે.

આ કૃતિઓમાં ઠેરઠેર ચિંતનની સાથે કવિહૃદયના ચમકારા જોવા મળે છે. માત્ર શુષ્ક પંડિત હોત તો શ્રીમદ્ યશોવિજયજીની અનેક કૃતિઓમાંથી આપણને માત્ર પંડિતાઈ મળત, પણ આપણને મળે છે શાસ્ત્રને કવિતામય રીતે જોવાની દૃષ્ટિ. શ્રીમદ્ યશોવિજયજીની અનેક કૃતિઓ માત્ર કવિતાની રીતે મૂલવવા જેવી છે. જૂની ગુજરાતી કવિતામાં એ રીતે એમનું અનન્ય સ્થાન છે. એમની અનેક કૃતિઓમાં ભાષાના વિકાસનો અને સમાજજીવનના દર્શનનો ખ્યાલ આવે છે. એ સમાજજીવનની રૂઢિઓ, ઇચ્છાઓ, આરોહો–અવરોહો એ સમયના જિવાતા જીવનની સમીક્ષા એમની કૃતિઓ કરે છે. ક્યારેક એમની કૃતિઓ સમાજની આરસી બનીને આવે છે, ક્યારેક એમની કૃતિઓ કવિત્વ ને ચિંતનની વિરલ કેડીને સિદ્ધ કરે છે. શ્રીમદ્ યશોવિજયજી કવિ છે, જૈન દર્શનના જ્ઞાતા કવિ Poet hidden in the light of Jain Darshan (Philosophy) છે અને કવિતાની સાથોસાથ ચિંતન ને દર્શન એમની અનેક કૃતિઓમાંથી જોવા મળે છે.

કવિતા ને ચિંતન આ બંનેનો સુમેળ વિરલ કવિ જ સાધી શકે છે. સાહિત્યનો ઇતિહાસ અને વિવેચન બતાવે છે કે આવો સુમેળ અપવાદના સંજોગોમાં હોય છે. અંગ્રેજી વિવેચક બ્રેડલી કવિતાની વ્યાખ્યા કરતાં કહે છે કે, "પ્રેમ સંગીતમાં વાત કરે છે ત્યારે કવિતા બને છે." કવિતા કેમ જન્મે છે યા સાહિત્યકૃતિનું ઉદ્ભવ સ્થાન શું હોય છે એ વિવેચનાનો સવાલ હજી અપૂર્ણ છે. ઓગણીસમી સદીના વિવેચકોથી માંડીને અદ્યતન અસ્તિત્વવાદના વિવેચકો સાહિત્યના ઉદ્ભવ અંગે પૂરેપૂરો જવાબ આપી શક્યા નથી. જેને માનસશાસ્ત્રીય વિવેચન કહેવાય છે અને જે માનસપૃથક્કરણ પર મોટો આધાર રાખે છે તે વિવેચન

કૃતિના ઉદ્ભવ સ્થાનનો પૂરેપૂરો જવાબ આપી શકતું નથી. આ વિવેચન કવિના જીવનના કેટલાક પ્રસંગો, કેટલાક બનાવો અને કવિમાનસમાં જન્મેલા સંવેદનનો પડઘો પાડે છે, અને એટલું જ કહે છે કે સાહિત્યકૃતિનો જન્મ આવા સંજોગોમાં થયો હશે અને એથી એનો અર્થ આવો ઘટાવી શકાય. આ રીતે જોતાં, કોઈ સર્જકની કૃતિમાં ચિંતન અને કવિત્વનો સુભગ સંયોગ થાય. ત્યારે એની વિવેચના એના જીવનની આસપાસના વાતાવરણ અને જીવનમાંથી ઉદ્ભવેલા પ્રસંગોમાંથી ઘટાવી શકાય.

શ્રીમદ્ યશોવિજયજીના જીવનનો આદર્શ આપણે સૌ કોઈ જાણીએ છીએ. આ આદર્શને કવિ અનેક સ્વરૂપ દ્વારા આપણી સમક્ષ રજૂ કરે છે. 'જ્ઞાનસાર'માં કવિનો આદર્શ મળે છે. કવિના શબ્દોમાં કહીએ તો "સૂરજીના પુત્ર શાંતિદાસના હૃદયને આનંદ આપવાના હેતુથી આ બાલાવબોધ કર્યો છે. આ 'જ્ઞાનસાર' એ એમની પ્રૌઢ કૃતિ, અને એની રચના થઈ સિદ્ધપુરમાં; અને જ્ઞાનસાર પૂર્ણ થયું દિવાળીના દિવસે. એમના જ શબ્દોમાં કહીએ તો જ્ઞાનસાર એ પૂર્ણાનંદઘન આત્માના ચારિત્રરૂપી લક્ષ્મીની સાથે પાણિગ્રહણના મહોત્સવરૂપ છે. "એમાં ભાવનારૂપી પવિત્ર ગોમયથી ભૂમિ લીંપાયેલી છે. ચારે તરફ સમતારૂપ પાણીનો છંટકાવ છે, રસ્તામાં જગાએ જગાએ વિવેકરૂપી પુષ્પની માળાઓ લટકાવી છે અને આગળ અધ્યાત્મરૂપ અમૃતથી ભરેલો કામકુંભ મૂક્યો છે. અપ્રમાદ નગરમાં પ્રવેશ કરવાના મંગલ સમો આ ગ્રંથ પૂર્ણાનંદઘન–આત્મા મળે છે."

'જ્ઞાનસાર'નો અર્થ સ્પષ્ટ છે. અંગ્રેજીમાં જેને 'essence of knowledge' કહીએ તે જૈનદર્શનનું બધું જ તત્ત્વ આ કવિતામાં કવિ શ્રીયશોવિજયજીએ પોતાની રીતે આપ્યું છે. સમગ્ર જીવનનો અને જૈનાગમોએ પ્રરૂપેલા ચિંતનનો પરિપાક આ કવિતામાં છે અને એથી એમાંથી બધું નવનીત સ્વરૂપે આપણને મળે છે. કવિએ આખા કાવ્યનું આયોજન એવી રીતે કર્યું છે કે એમાંથી જૈન દર્શનનો અને એની વિશિષ્ટતાનો ખ્યાલ સહેલાઈથી આવી શકે. જ્ઞાનનો સાર કવિએ આ કૃતિમાં આપ્યો છે પણ સાથોસાથ એ સાર એકલો જ નથી આપ્યો પણ કવિસુલભ કલ્પનાઓ, વિચારો, ઉત્પ્રેક્ષાઓ, ઉપમાઓ અને કાવ્યાલંકારો યોજીને જ્ઞાનસારને રસિક સંગીતમય બનાવ્યો છે. ચિંતનનું શુષ્ક સ્વરૂપ આપણને એ રીતે જ્ઞાનસારમાંથી નથી મળતું પણ ચિંતનની સાથોસાથ કવિત્વના ચમકારા મળે છે. જ્ઞાનસારનો સર્જક સાહિત્યરસને સ્પર્શી જાણે છે, એના માનસવ્યાપારનો પરિચિત છે અને એથી જ એ ચિંતનની સાથોસાથ કવિતા રજૂ કરે છે. આપણે ત્યાં અલંકારમય સ્તુતિઓ, પ્રાર્થનાઓ, સ્તવનો, સજ્ઝાયો આદિ ઘણું છે. કથાઓ છે, ધાર્મિક કથાઓ છે પણ સમગ્ર દર્શનનો સાર આવી રીતે જોવા નથી મળતો અને એથી જ સાહિત્યની રીતે શ્રીમદ્ યશોવિજયજીના જ્ઞાનસારનું મહત્ત્વ છે.

અઢીસો વર્ષનો ગાળો વીતી ગયો છે. અને એ રીતે સમયનો પ્રવાહ જ્ઞાનસારની કવિતા કે ચિંતનને સ્પર્શ કરી શક્યો નથી. જ્ઞાનસારનું સંસ્કૃત અઘરું નથી, કવિત્વમય છે, એનું આખું આયોજન સ્પષ્ટ અને સુરેખ છે, અને એની કવિતા ને ચિંતન આપણને સ્પર્શી જાય છે. સ્વ૦ પંડિત ભગવાનદાસે જ્ઞાનસારનો અનુવાદ કર્યો છે અને એમનું આ

પ્રકાશન આપણા આજના જૈન સાહિત્યની વિશિષ્ટ કૃતિ છે. સ્વ૦ પંડિત ભગવાનદાસે સામાન્ય માનવીને સુલભ જ્ઞાનસાર બનાવ્યો છે. એમનો 'જ્ઞાનસાર' જીવનનું દર્શન કરાવી જાય છે અને એ શ્રીમદ્ યશોવિજયજીની મૂળ કૃતિને ન્યાય આપે છે, અને એથી એ કૃતિની ભલામણ થતાં સ્વભાવિક આનંદ થાય છે.

'જ્ઞાનસાર' એ ચિંતનાત્મક કૃતિ છે અને આ ચિંતન સામાન્ય માનવીને સુલભ બને એ રીતે જ શ્રીમદ્ યશોવિજયજીએ યોજ્યું છે. જૈનદર્શનના ચિંતનનો પરિપાક આ કાવ્યમાં જોવા મળે છે, અને એ થોડાક શબ્દોમાં ઘણું ઘણું કહી જાય છે.

શ્રીમદ્ યશોવિજયજી જ્યારે સમગ્ર જ્ઞાનને સંક્ષિપ્ત અને પદ્યસ્વરૂપમાં આપવા મથતા હશે ત્યારે પસંદગીનો પ્રશ્ન એમની સમક્ષ આવ્યો હશે જ. જૈન દર્શન પરનું પ્રભુત્વ એમની મહાકાવ્ય રચવાની શક્તિનો ખ્યાલ આપે છે, પણ એક લઘુકાવ્યમાં જ્યારે એ શ્રીમદ્ યશોવિજયજીએ જીવનનો સાર આપી દીધો ત્યારે એ વાણી કેટલી અર્થઘન ગંભીર હશે? કવિતા વિચારનું–ચિંતનનું વાહન બની શકે છે અને એ જીવનને ઊંડાણથી સ્પર્શી શકે છે એનો સાચો પુરાવો 'જ્ઞાનસાર' આપે છે. સાગરના નીરની ગંભીરતા એ રીતે જ્ઞાનસારમાં છે અને સાથોસાથ શિશુની કોમળતા, નિર્મળતા પણ છે. અને એ રીતે જ્ઞાન-સારમાં–સ્વાદભરી મીઠી વાણી અને એમાંથી નીકળતો ગંભીર અર્થ–બન્નેનું સુભગ મિલન છે. કવિતા ને ચિંતનનો આવો સુમેળ વિશ્વસાહિત્યમાં ક્વચિત્ કૃતિઓમાં નજરે પડે છે, અને એ છે શ્રીમદ્ યશોવિજયજીની કવિ તરીકેની સિદ્ધિ.

જ્ઞાનસારનું વિસ્તૃત અવલોકન કરતાં માલૂમ પડશે કે કવિ યશોવિજયજી સમક્ષ સ્પષ્ટ ખ્યાલ હતો અને એ ખ્યાલથી પ્રત્યેક અંગનું ઘડતર તેઓએ કરેલું. જ્ઞાન–અનુભવનો સાર વર્ણવતા જ્ઞાનસારમાં બત્રીશ અષ્ટકો છે. આ અષ્ટક દરેક રીતે જોતાં સંપૂર્ણ છે અને એ આખી કૃતિના એક ભાગ તરીકે સંપૂર્ણ રીતે રજૂ થાય છે. બત્રીસ સોપાનની આ કૃતિ છે એમ કહેવું ખોટું નથી.

જ્ઞાનસારનું પ્રથમ પૂર્ણાષ્ટક. એમાં જૈનસ્વરૂપના સાધ્ય તરીકે પૂર્ણ અવસ્થાનું સ્વરૂપ રજૂ કરાયું છે. પૂર્ણનું સ્વરૂપ રજૂ કરતાં તેઓશ્રી જણાવે છે કે પૂર્ણાનંદ પુરુષની જ્ઞાનદૃષ્ટિ જાગૃત હોય છે, તે તૃષ્ણાથી દીન હોતો નથી, એમાં પુદ્ગલોની અપૂર્ણતા હોતી નથી. આત્મદ્રવ્યમાં આત્મપણાના સુખથી પૂર્ણ થયેલા જ્ઞાનીને ઇન્દ્ર કરતાં કોઈ જાતની ન્યૂનતા નથી અને ભાવોની પૂર્ણતા શુક્લપક્ષના ચંદ્રની માફક શોભે છે.

પ્રથમ અષ્ટકમાં રજૂ થયો છે આદર્શ પૂર્ણત્વનો. આ પૂર્ણત્વની પ્રાપ્તિ માટેના પ્રયાસો અને એ પ્રયાસોને કવિહૃદય બીજા અનેક અષ્ટકોમાં વર્ણવે છે. સંસારમાંથી નિવૃત્ત થનારો માનવી પૂર્ણત્વમાં મગ્ન થાય છે. એથી આવી વ્યક્તિને ધન માટે ઉન્માદ નથી હોતો, સ્ત્રી પ્રતિ રાગ નથી હોતો, એ જ્ઞાનમાં મગ્ન થયેલો છે, એથી સુખી છે, અને આ સુખથી કરુણાની વૃષ્ટિ જેવી દૃષ્ટિ પ્રાપ્ત થાય છે અને વાણીમાં પણ શાંતિરૂપી અમૃત વહે છે.

માનવીનું મન માળવે (માળવા દેશમાં) ભમતું હોય તો એના ચિત્તની સ્થિરતા ન હોય, એથી મનના ઘોડા પર કાબૂ મેળવવો એ મુશ્કેલ વસ્તુ છે. ત્રીજા અષ્ટકમાં કવિશ્રી મનના નિગ્રહ માટે સ્થિરતા માટેનો આદર્શ રજૂ કરે છે. માનવી જીવ સુખની પ્રાપ્તિ માટે ચંચલ ચિત્ત રાખી ગમે ત્યાં ભટકે છે. માનવીના મનને ભટકવાની આડે કોઈ સીમા નથી અને એનું માનસ ઘણી વાર અસ્થિર ઝોલાં ખાતું થઈ જાય છે. માનવી જીવનના સુખ માટે તલસે છે, ભમે છે અને જ્યારે સ્થિરતા આવે છે ત્યારે એને ખ્યાલ આવે છે કે એનું સાચું સુખ એની પાસે છે. કવિ સરસ ઉપમા દ્વારા કહે છે: "સંકલ્પ રૂપ દીવો ક્ષણવાર પ્રકાશ કરી વિકલ્પોરૂપી ધુમાડાઓ જમાવી આત્માને મલિન કરે છે." અસ્થિરતા, ચંચળ મન સુખના સાધનોની તૃષ્ણા જાગૃત કરે છે અનેક સંકલ્પ-વિકલ્પોની વિચારણા જન્માવે છે, એના પરિણામે માનવીની તૃષ્ણા જાગૃત થાય છે.

માનવીનું મન અસ્થિર થઈ આમતેમ ભટકે છે એનું કારણ છે મોહ અને મોહત્યાગ. એ જ જીવનની સ્થિરતા માટે જરૂરી છે. 'અહં' અને 'મમ' 'હું' અને 'મારું' જીવનમાં અનેક અનિષ્ટો જન્માવનાર આ જ તત્ત્વો છે. જેને અહંકાર ગયો એ જગ્યો, અને જગતમાં સ્વાર્થ વધારનાર આ જ તત્ત્વો છે. કવિની ભાષામાં કહીએ તો જેમ આકાશ કાદવથી લેપાતું નથી તેમ તેમ મોહત્યાગવાળો માનવી પાપથી લેપાતો નથી. તેનો આત્મા શરીરના જન્મ, જરા ને મૃત્યુના નાટકથી ખેદ પામતો નથી. મોહત્યાગીનું આત્મસ્વરૂપ નિર્મલ હોય છે અને પરદ્રવ્યની મૂંઝવણ થતી નથી અને એની બુદ્ધિ વિવેકી હોય છે.

આત્માના અનિષ્ટોનો ખ્યાલ જ્ઞાનથી આવે છે અને મોહનો ત્યાગ જ્ઞાન જ જન્માવી શકે છે, અને એથી કવિશ્રી કહે છે: "જેમ ભૂંડ વિષ્ટામાં મગ્ન થાય છે, તેમ અજ્ઞાની અજ્ઞાનમાં; અને જેમ હંસ માન સરોવરમાં મગ્ન થાય છે તેમ જ્ઞાની જ્ઞાનમાં." આ જ્ઞાન એટલે પોપટિયું જ્ઞાન નહિ પણ આત્માને આત્મરૂપ બનાવતું જ્ઞાન. આ જ્ઞાન એટલે જ્ઞાનનું અજીર્ણ નહિ પણ તત્ત્વસંવેદનરૂપ જ્ઞાન. આવું જ જ્ઞાન પ્રવૃત્તિ-નિવૃત્તિનો ખ્યાલ આપે. હેય અને ઉપાદેયનો વિવેક તરણાં શિખવે અને એથી ચારિત્ર વિશુદ્ધ થાય. જે જ્ઞાન અહંત્વ જગવે, મમતા વધારે અને જેથી માનવીની સર્વાંપરિતાની ભાવના જન્મે તે જ્ઞાન એટલે અધકચરું જ્ઞાન. અંગ્રેજ કવિએ સાચે જ એક જગાએ કહ્યું છે: "A Little learning is a dangerous thing, Drink deep or taste not Pierien spring !" આજે અધૂરા જ્ઞાનની બોલબાલા છે અને જ્ઞાનનો આટલો બધો વિકાસ છતાં વિજ્ઞાનના મદમાં ઘેલો બનેલો માનવી 'Eyeless in raza' છે, સાચું જ્ઞાન મિથ્યાત્વરૂપ પર્વતની પાંખને છેદે છે.

સાચું જ્ઞાન એટલે જગતને માન્ય પ્રવૃત્તિ નહિ પણ આત્માની સાચી પ્રવૃત્તિ. જ્ઞાની ધીરગંભીર હોય, જ્ઞાનીને મનના તરંગો ન થાય, એની આત્માની અવસ્થા ઉન્નત હોય અને જીવનમાં એણે સમભાવ કેળવેલો હોય. આવા જ્ઞાનીની દશા 'શમ' હોય છે, એનામાં અપૂર્વ શાંતિ હોય છે અને એવા જ્ઞાની 'રાગરૂપ સર્પના વિષના તરંગો વડે બળતા નથી અને એમની અસર વિશ્વમાં શાંતિ જન્માવાની થાય છે અને એ ચોમેર શાંતિ

ફેલાવે છે. સાચું જ્ઞાન માનવીને સાચી શાંતિ આપી જીવનને ધન્ય બનાવે છે. જ્ઞાની સમતાના ભાસ્કર સમાન છે અને આ સમતા ઇન્દ્રિયો પર જય મેળવવાથી આવે છે.

જ્ઞાનીને તૃષ્ણા હોતી નથી. જ્ઞાની ઇંદ્રિયજીત હોય છે. જ્ઞાનીઓને લાલસા–ખોટી ઇચ્છા જન્મતી નથી, કારણ કે લાલસા માનવીના જીવનને નીચું પાડે છે. ઇન્દ્રિયો ક્યારેય સંપૂર્ણ સંતોષ પામતી નથી. કવિના શબ્દોમાં કહીએ તો હજારો નદીઓ વડે ન પૂરી શકાય એવું સમુદ્રસમું માનવીનું પેટ છે; અને ઇન્દ્રિયોમાં મૂઢ થયેલો જીવ સારાસાર જોતો નથી, એ જ્ઞાનરૂપી ધનનો ઉપયોગ અયોગ્યરીતે કરી વિપયો વધારે છે, જ્ઞાનરૂપી અમૃતને છોડી રૂપ–રસ–ગંધ–સ્પર્શ–શબ્દાદિ ઝાંઝવાનાં નીર તરફ માનવીને દોડાવે છે, અને એની ખરાબ દશા કરે છે.

સાચો જ્ઞાની ઇન્દ્રિયજીત અને ત્યાગી હોય છે. ત્યાગની ભાવના જાગૃત કરવી એ મોટી વસ્તુ છે. જ્ઞાન જ્યારે સ્વાર્થ જન્માવે ત્યારે એ વિસંવાદ પેદા કરે છે. જ્ઞાન ત્યાગ કરીને ભોગવવાની વસ્તુ છે. એથી આધુનિક યુગમાં વિજ્ઞાનના સ્વાર્થી ઉપયોગે જીવનને વિષમ બનાવ્યું છે, યુદ્ધને અનિવાર્ય બનાવ્યું છે. વિજ્ઞાને વિકાસ કર્યો પણ એની સાથે માનવીના સાચા જ્ઞાનનો એની ત્યાગભાવનાનો વિકાસ ન થયો અને પરિણામે જગતમાં જ્ઞાન–વિજ્ઞાને ખોટા ભેદો, કલહો, યુદ્ધો જન્માવ્યાં. જે જ્ઞાન સર્જન માટે હતું એ જ્ઞાનનો સંહાર માટે ઉપયોગ થયો, કારણ કે તેમાં ત્યાગની ભાવના જ નથી.

સાચા જ્ઞાનીને સમતા વહાલી સ્ત્રી છે, સમાન ક્રિયાવાળાઓ સગાઓ છે અને એનું આત્માનું તત્ત્વ પ્રકાશે છે અને એ સાધુત્વમાં રાચે છે. આવો જ્ઞાની એ રીતે શાંતિને જન્માવે છે. એકલું જ્ઞાન જ નહિ પણ ત્યાગની ભાવના જન્માવતું જ્ઞાન કલ્યાણદાયી છે, અને એની સાથે ક્રિયાનો મેળ હોવો જોઇએ, એથી કવિ ક્રિયા પર ભાર મૂકે છે. કવિ કહે છે: "દીવા માટે તેલની જરૂર છે તેમ પૂર્ણ જ્ઞાની પણ અનુકૂળ ક્રિયાની અપેક્ષા રાખે છે." કવિને એકલું જ્ઞાન માન્ય નથી અને એથી સ્પષ્ટ કહે છે: "બાહ્યક્રિયાના ભાવને આગળ લાવીને જેઓ વ્યવહારમાં ક્રિયાનો નિષેધ કરે છે તેઓ મુખમાં કોળિયો નાખ્યા સિવાય તૃપ્તિને ઇચ્છે છે." 'પહેલાં જ્ઞાન ને પછી ક્રિયા' એ સાચી વસ્તુ છે. ક્ષાયોપશમિક ભાવો કેળવવા માટે એક સમયના પ્રમાદ વિના પ્રયત્ન કરવો જોઈએ, અને એ માટે ક્રિયા જરૂરી છે.

સાચા જ્ઞાનને ક્રિયાનો મેળ થતાં માનવી અનોખી તૃપ્તિ અનુભવે છે. સાચું જ્ઞાન અભિમાન નથી જન્માવતું, પણ એ સંસારના સ્વપ્નને ખુલ્લું પાડી સમ્યગ્દષ્ટિ પેદા કરે છે અને આ દૃષ્ટિથી માનવી જીવનને વિકસાવે છે. જે જ્ઞાન સંતોષ ન જન્માવે એ જ્ઞાનનો કશો અર્થ નથી. જ્ઞાન–ક્રિયાનો સુમેળ કર્મોનો મેલ કાઢી નાખે છે, અને એ સંતોષરૂપી અમૃતનું ભોજન કરાવે છે.

સાચું જ્ઞાન આત્મસંતોષ પેદા કરે છે અને એ કર્મોથી લેપાતો નથી. એ સંસાર પ્રત્યે અનુરાગ ધરાવતો નથી પણ એનાથી નિર્લેપ રહે છે. સંસારીઓ સ્વાર્થી હોય છે.

સાચો જ્ઞાની સંસારીને સમજી એનાથી દૂર ભાગે છે અને એ નિજાનંદમાં મસ્ત હોય છે. માનવી નિર્લેપ બને એટલે શુદ્ધ ધ્યાનની ભૂમિકા પર જાય અને એની સાચી દૃષ્ટિનો વિકાસ થાય.

માનવીનો આવો વિકાસ થતાં એ નિઃસ્પૃહી બને, એનામાં કોઈ જાતની ખોટી ઝંખના ન રહે. સ્પૃહાઓ–ઝંખનાઓ–ઇચ્છાઓ માનવીને વામણા બનાવે છે. અતિપંડિત વ્યવહારની દુનિયામાં લક્ષ્મીનંદનોની ખુશામત કરે તો એમાંથી અસંતોષ જન્મે નહિ તો શું થાય? સાચું જ્ઞાન માનવીની ઝંખનાને મર્યાદિત કરે છે, સાચો જ્ઞાની એવો નિઃસ્પૃહી હોય છે કે પૃથ્વી એની પથારી બને છે, ભિક્ષા એનો આહાર અને વન એનું ઘર બને છે. 'પારકી આશ સદા નિરાશ' એ આવાનું સૂત્ર છે અને પારકી આશા અનેક દુઃખો જન્માવનારી છે અને એથી નિઃસ્પૃહી માનવી જ સાચો સુખી હોય છે.

જગતમાં નિઃસ્પૃહી માનવી મુનિઓ જ હોય છે. મુનિપણું જગતના તત્ત્વને સમ્યક્-સ્વરૂપે જાણવામાં છે. રાગ, દ્વેષ અને મોહરૂપ દોષનિવૃત્તિ એટલે પુદ્ગલોમાં યોગોની અવ્યાપાર પ્રવૃત્તિ અને એનું બીજું નામ મૌન. આ કક્ષાએ પહોંચેલ માનવી ધીરગંભીર હોય છે અને એની ક્રિયા જ્ઞાનમય હોય છે.

સાચું મૌનત્વ જન્મે છે સાચી વિદ્યામાંથી. અનિત્ય બુદ્ધિ નહિ પણ તત્ત્વબુદ્ધિ. આ બુદ્ધિમાં રાચતા માનવી માટે વાક્પટુતા નથી, ખાલી બુદ્ધિનો પમરાટ કે ચનચનાટી નથી, આ બુદ્ધિ 'સમુદ્રના કલ્લોલ જેવી લક્ષ્મીની, વાયુ જેવા આયુષ્ય અને વાદળ જેવા શરીરની' અનિત્યતા ચિંતવે છે. એના જીવનનાં મૂલ્યો બદલાય અને દેહનાં આકર્ષણોમાંથી ખસી આત્માના આકર્ષણોમાં રાચે. એથી અજ્ઞાનરૂપી અંધકારનો નાશ થાય અને વિવેકબુદ્ધિ જન્મે.

વિવેક એટલે જીવ ને અજીવનું ભેદજ્ઞાન. સાચું જ્ઞાન માનવીને સારાસાર સમજાવે. વિવેક આવે એટલે ઇચ્છા, ગુસ્સો આદિ વિકારો ભાગે અને આત્માના શુદ્ધસ્વરૂપને એ ઓળખે. સાચી વિદ્યા વિવેક જન્માવે, ખોટી વિદ્યા ગર્વ પેદા કરે અને એમાંથી આત્માના અન્વેષણના પ્રયાસો થાય. સાચી વિદ્યા રાગ ને દ્વેષ ન કેળવે પણ માધ્યસ્થ્યભાવ કેળવે. રાગ અને દ્વેષથી કર્મો જન્મે પણ માધ્યસ્થ્ય ભાવ સમાનતા જન્માવે. જ્ઞાની પોતાના જ્ઞાનની પ્રશંસાની આશા રાખે એ જ એની નિર્બળતા. સાચો જ્ઞાની કર્મની લીલા જાણે અને એનાથી તેમજ એમાંથી જન્મતા રાગદ્વેષથી અલગ રહે. રાગ અને દ્વેષ સંસારના બે છેડાઓ, અને એ અનેક જાતની લીલા જન્માવે. ગૌતમસ્વામીનો મહાવીરસ્વામી પ્રત્યેનો અનુરાગ એમના કેવળજ્ઞાનની આડે આવ્યો એ આપણો માધ્યસ્થ્ય વૃત્તિ માટેનો સાચો દાખલો. મધ્યસ્થ પુરુષને કોઈ પણ પુદ્ગલની આસક્તિ ન હોય, પણ આત્માની સમાધિ હોય.

એમાંથી જન્મે નિર્ભયતા, આધુનિક માનસશાસ્ત્ર સર્વ દોષો–ખામીઓનું મૂળ બીજ સંધીને શોધે છે. પછી સાચા માનવીને 'જાણવા યોગ્ય વસ્તુને જ્ઞાન વડે જાણતા માનવીને કશું છુપાવવાનું હોતું નથી. આત્મજ્ઞાનમાં મસ્ત માનવીને ભયરૂપ સર્પો બિવડાવી શકતા

નથી. મૂઢ પુરુષો ભયરૂપ વાયુ વડે આકડાના રૂની માફક આકાશમાં ભમે છે, અને સાચો જ્ઞાની નિર્ભય રીતે જીવે છે.

આવા સાચા જ્ઞાનીને પ્રશંસા સ્પર્શી શકતી નથી. સામાન્ય કથન છે કે માનવી બધી વસ્તુ જીરવી શકે છે પણ પ્રશંસા–પોતાની સ્તુતિને જીરવી શકતો નથી. જે માનવીને પ્રશંસાનો–પ્રસિદ્ધિનો મોહ જન્મે છે તે પડે છે, અને એથી જ કવિશ્રી કહે છે: "પોતાની પ્રશંસામાં રાચતો માનવી મોહમાં ડૂબી જાય છે." જ્ઞાનનું અભિમાન જીરવવું મુશ્કેલ છે અને એ જ્ઞાનીને પછાડે છે. જ્ઞાન જન્માવે છે નમ્રતા પણ અક્કડતા નહિ. આવા માનવીની તત્ત્વ-દૃષ્ટિ વિકસેલી હોય છે. કવિશ્રી આ સ્થાને બાહ્યદૃષ્ટિને તત્ત્વદૃષ્ટિના ભેદ પાડે છે. સાત્ત્વિક દૃષ્ટિ જ માનવીના જીવનને વિકસાવે છે. બાહ્યદૃષ્ટિને સ્ત્રી સુંદર લાગે અને તાત્ત્વિકને તે સ્ત્રી વિષ્ટા અને મૂત્રની હાંડલી જેવા પેટવાળી લાગે છે. તાત્ત્વિક માનવી બહારના દેખાવો પર ભાર મૂકતો નથી પણ જ્ઞાનમાં જ રાચે છે.

આવો જ જ્ઞાની સાચી રીતે સમૃદ્ધ છે. સાચો જ્ઞાની ભોગ–વિલાસમાં રાચતો નથી પણ બ્રહ્મચર્યમાં રાચે છે, સદ્–અસદ્‌નો એ નિર્ણય કરે છે અને એની આ સમૃદ્ધિ આગળ દુન્યવી સંપત્તિનો હિસાબ નથી. એના અંતરંગ ગુણની સૃષ્ટિ બ્રહ્માની સૃષ્ટિથી અધિક છે. જ્ઞાન દર્શન અને ચારિત્ર એમ ત્રણ રત્નો પામેલા માનવી સિદ્ધયોગ મેળવે છે. આ દૃષ્ટિ માનવીને કર્મના પરિણામનો વિચાર કરાવે છે. એથી જગતની લીલા, શોકાશોક, સુખદુઃખ, કર્મ, વિષમ ગતિ એને સ્પર્શી શકતી નથી. ઊંટની પીઠ જેવી કર્મની રચના છે. અને એ કર્મની રચનામાં માનવી આસક્તિ કેળવે તો એ પડે. કવિશ્રી કહે છે: "જે માનવી પરિણામને વિચારતો હૃદયમાં સમભાવ કેળવે છે તે જ્ઞાનાનંદરૂપ મકરન્દનો ભોગી બને છે."

આવા માનવીને જીવોનો ઉદ્વેગ સ્પર્શી શકતો નથી. સંસારના વિષમ માર્ગો, તૃષ્ણા વિષયાભિલાષો, સ્નેહ–રાગ–લોભ–રોગ–શોક–મત્સર વગેરે સ્પર્શી શકતા નથી. અપ્રમત્ત દશાને પામીને આવો જ્ઞાની સંસાર નાટકમાં રાચતો નથી સંસારના અનિત્ય ભાવે માનવી જ્ઞાનનો પ્રયાસ કરે, આ રીતે પ્રયાસ કર્યા બાદ એનામાં સાચી દૃષ્ટિ આવે અને એના પરિણામે એને સંસારનો સાચો ખ્યાલ આવે અને એ નિસ્પૃહી બને.

આવા નિઃસ્પૃહીને લોકાદરની પરવા હોતી નથી. બાહ્યચરિત પર ભાર નહિ પણ આંતરગુણો પર ભાર મુકાય તો જ જીવન ધન્ય બને, અને એ આત્માની સાક્ષીમાં રાચે. આત્માના અવાજમાં એ મગ્ન રહે અને એથી આંતરિક સુખ એ મેળવે.

આવા જ્ઞાનીઓની દૃષ્ટિ શાસ્ત્રાભ્યાસથી વિકસેલી હોય છે. બધા પ્રાણીઓને ચર્મચક્ષુ છે, દેવોને અવધિજ્ઞાનરૂપ ચક્ષુ છે, સિદ્ધોને કેવળ ઉપયોગ ચક્ષુરૂપ છે, અને સાધુઓને શાસ્ત્રરૂપ ચક્ષુઓ છે. કેવલી ભગવાનની શિક્ષા એ જ આપણું સાધન. શાસ્ત્રો રૂપી દીવો આપણા અંધકારઘેરા માર્ગ પર પ્રકાશ નાખે અને આપણા જીવનને અજવાળે. શાસ્ત્રો

આપણી દૃષ્ટિ વિકસાવે અને એથી સ્વેચ્છાચાર જાય, અને એમાંથી ત્યાગવૃત્તિ ન વધે પણ સાચી દૃષ્ટિ થાય અને એ અપરિગ્રહ કરતાં માનવીને શિખવે.

સાચું જ્ઞાન સંપત્તિ માટેની ઝંખના નહિ પણ ત્યાગવૃત્તિ જન્માવે. કાંઈ પણ વસ્તુ માટેનો મોહ દૂર કરવા જેવી વસ્તુ છે—જ્ઞાનમાર્ગમાં આસક્તિ અને નહિ કે જ્ઞાનનાં સાધનો. ઉપકરણો પરનો મોહ અનિષ્ટો જન્માવે છે. પરિગ્રહ જાય એટલે મોહવૃત્તિ ઘટે અને એથી સંયમની વૃદ્ધિ થાય. શાસ્ત્રોનું પઠન એ જુદી વસ્તુ છે અને અનુભવ એ જુદી વસ્તુ છે. અનુભવ વિનાની વાણી એ માત્ર પોપટિયા જ્ઞાન બરાબર છે. એથી કવિશ્રી કહે છે: "સર્વની કલ્પના શાસ્ત્રમાં પ્રવેશ કરે છે, પરંતુ અનુભવરૂપ જીભ વડે શાસ્ત્રક્ષીરનો આસ્વાદ કરનાર થોડા."

આ અનુભવની પ્રાપ્તિ યોગ વિના થતી નથી. યોગની વ્યાખ્યા એટલે 'मोक्षेण योजनाद् योगः।' પાંચ યોગો, બે કર્મયોગ અને ત્રણ જ્ઞાનયોગ. યોગ અનુષ્ઠાનો જન્માવે અને એનું અંતિમ રૂપ મોક્ષ. યોગ એટલે શાસ્ત્રોક્ત ક્રિયા અને શાસ્ત્રવિહીન ક્રિયા ઉન્માર્ગ પ્રરૂપાવે અને એથી અનેક અનિષ્ટો જન્મે. [યોગ પરનું શ્રીમદ્ યશોવિજયજીનું સાહિત્ય અતિવિપુલ છે અને એ સ્વતંત્ર લેખ માગી લે છે.]

યોગક્રિયા માટે ભાવપૂજા જરૂરી છે. અહંકારનો નાશ એ મુખ્ય વસ્તુ અને ભાવનાથી અજ્ઞાન ટળે અને મિથ્યાત્વની વાસના જાય. એના માટે પૂજા જરૂરી છે અને કવિશ્રી કહે છે કે, "ક્ષમારૂપ ફૂલની માળા, વ્યવહાર અને નિશ્ચય એ વસ્ત્રો, ધ્યાનરૂપ ઉત્તમ આભરણ, જ્ઞાનરૂપ અગ્નિમાં શુભ સંકલ્પોરૂપી ધૂપ, સત્યરૂપ ઘંટ વગેરેથી પૂજા માનવીના હાથમાં મોક્ષ છે." ગૃહસ્થો માટે દ્રવ્યપૂજા અને સાધુ માટે ભાવપૂજા જરૂરી છે.

પૂજા ધ્યાનને જન્માવે છે અને ધ્યાન મોહનો નાશ કરે છે, આત્માને ઓળખાવે છે. અસ્થિર મનને સ્થિર કરનાર ધ્યાન બાહ્ય ઇન્દ્રિયને અનુસરનારી વૃત્તિને અવરોધે છે અને જ્ઞાનાનંદરૂપી અમૃતમાં આત્માને લીન કરે છે. જેણે ઇન્દ્રિયોને જીતી છે જેનો આત્મા સ્થિર છે તે પ્રશસ્ત ધ્યાનયોગી છે. ધ્યાનની સાથે તપ જરૂરી છે અને તપ કર્મોને તપાવે છે. ધનનો અર્થી દાહ-તાપ સહન કરે એમ તત્ત્વજ્ઞાનનો અર્થી તપ કરે. એના માટે તપ દુષ્કર નથી. "જે તપમાં બ્રહ્મચર્ય વધે, જ્યાં ભગવંતની પૂજા થાય, કષાયનો નાશ થાય અને વીતરાગની આજ્ઞા પ્રવર્તે તે શુદ્ધ કહેવાય."

તપસ્વીમાં યા મધ્યસ્થવૃત્તિ કેળવનાર જ્ઞાની સર્વ તપોને આશ્રિત હોય છે. ધર્મવાદથી સર્વ તપો જાણી શકાય અને એથી માનવી પરમાનંદ પામે અને એનો બધી રીતે ઉત્કર્ષ થાય.

બત્રીસ અષ્ટકોમાં આત્માનો વિકાસક્રમ બતાવ્યા બાદ કવિશ્રી યશોવિજયજી ઉપસંહારમાં જણાવે છે કે—'આ રીતે તત્ત્વને પ્રાપ્ત થયેલ મુનિ શુદ્ધ ચારિત્ર તથા મુક્તિરૂપ જ્ઞાનસારને પામે છે.' એવા માનવીના વિકારો ચાલ્યા જાય છે, જ્ઞાનસાર જે કર્મોનો ક્ષય કરે તે કર્મો પુનઃ ઉત્પન્ન ન થાય. એથી શાસ્ત્રનાં ક્રિયારહિત જ્ઞાન અને જ્ઞાનરહિત ક્રિયા પર

ભાર મૂકયો નથી પણ જ્ઞાન–ક્રિયાના યોગ પર ભાર મૂકયો છે. જ્ઞાનશૂન્ય ક્રિયા અલ્પ પ્રકાશવાળી છે અને પૂર્ણવિરતિરૂપ ચારિત્ર એજ જ્ઞાનને ઉત્કર્ષ છે.

પ્રત્યેક વસ્તુને રજૂ કરવા માટે શ્રીમદ્ યશોવિજયજીએ સરળ અને કવિત્વમય શક્તિનો ઉપયોગ કર્યો છે. આ બધાં અષ્ટકોમાં ઉપમાએ દ્વારા વસ્તુને તેએ રજૂ કરે છે અને પ્રાચીન સાહિત્ય પરનું એમનું પ્રભુત્વ અને વસ્તુને નવી રીતે રજૂ કરવાની એમની દૃષ્ટિની પ્રતીતિ એમાંથી આપણને થાય છે. તત્ત્વચિંતનને અને એના ગાઢ વિષયને આઠ શ્લોકના ગુચ્છોમાં રજૂ કરવો એ સહેલી વસ્તુ નથી. જ્ઞાનને કવિત્વના ચમકારા સાથે, શાસ્ત્રીય દૃષ્ટિથી રજૂ કરી સમસ્ત જીવનના જ્ઞાનનો સાર કવિશ્રી યશોવિજયજીએ આપી દીધો છે, અને એ રીતે જ્ઞાનસાર આપણી આધ્યાત્મિક કૃતિઓમાં અનન્ય સ્થાન પામે છે.

જીવન જ્યારે ઝડપી બન્યું છે, જ્યારે જીવનને અવલોકવાની દૃષ્ટિમાં નવા જ્ઞાન–વિજ્ઞાનનો ઉપયોગ થઈ રહ્યો છે ત્યારે ચિંતનના એક સત્ય તરીકેની આ કૃતિ આપણા જીવનને ધન્ય બનાવે છે. સર્વ વસ્તુઓના સાર સમી આ સાહિત્યકૃતિ કવિશ્રીની અનેક પ્રસાદીમાંની એક પ્રસાદી છે. આ પ્રસાદી માટે અતિજ્ઞાનની જરૂર નથી. ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજીએ માત્ર પંડિતો માટે આ કૃતિ નથી રચી પણ સામાન્ય જનો માટે રચી છે અને ઉપમાએ–ઉત્પ્રેક્ષાએ અને કાવ્યાલંકારો દ્વારા આપણી સમગ્ર કલ્પનાનાં ચિત્રો રજૂ કર્યાં છે. જ્ઞાનસારનું ચિંતન એથી ઝાંખું બન્યું નથી પણ કવિત્વથી ચમકતું બન્યું છે. અને એ આપણી સૌંદર્ય દૃષ્ટિ આંતર દૃષ્ટિની સાથેસાથ ખીલવે છે. 'જ્ઞાનસાર' આપણા જૈનચિંતનના વારસાનો ખજાનો છે. એમાં સર્વગ્રાહી અવલોકન અને જીવન પ્રત્યેની આર્ષદૃષ્ટિ છે. મોક્ષના માર્ગનો આદર્શ આપણી સમક્ષ રજૂ કરતાં આ કૃતિ એનો વિકાસ માર્ગ બતાવે છે અને એ જ માર્ગ આપણા કલ્યાણનો માર્ગ છે. આ માર્ગ બતાવનાર કવિ શ્રીયશોવિજયજીના આપણે ઋણી છીએ. 'શિવમસ્તુ સર્વ જગતઃ' એ ભાવનામાંથી જન્મેલું સાહિત્ય માનવજીવનને ઉન્નત અને સંસ્કારી બનાવે છે. એ હકીકતને કવિશ્રીની કૃતિએ વાજબી ઠેરવે છે. અને કવિશ્રીના આ વારસાને જીરવવાની તાકાત આપણે કેળવવાની છે, સાહિત્યનાં સ્વરૂપો બદલાય, કથનપદ્ધતિ બદલાય, પણ કવિની પ્રસાદી તો નદીનાં નિર્મળ નીર સમાન છે અને એનાથી આપણાં પાપો ધોવાઈ જાય છે.

★

જૈનસિદ્ધાંત અને સંસ્કૃતિનો સાચો પ્રચાર

લેખક : પૂજ્ય મુનિરાજ શ્રીમાન્ મલયવિજયજી

પ્રાચીન જગતમાં કોઈ પણ સિદ્ધાંત કે સંસ્કૃતિનો પ્રચાર ઉપદેશકોના ઉપદેશ અને આચાર-વિચાર દ્વારા થતો પણ અર્વાચીન જગતમાં યંત્રવાદનો યુગ આવતાં છાપાં, સિનેમા, રેડિયો વગેરે દ્વારા પણ થાય છે.

વીણાના ત્રણે તારમાં એક ઢીલો, એક કડક, એક મધ્યમ એમ હોય તો તે બેસૂરી વાગે અને સાંભળનારને કંટાળો આપે. પણ તેનો જાણકાર-ઉસ્તાદ તે ત્રણે તારને સમ કરે છે ત્યારે તે સુંદર સરોદો ઉત્પન્ન કરે છે. ને તેના રસિકોને ડોલાવે છે. તેમ ઉપદેશકનાં વિચાર, વાણી અને વર્તનરૂપ ત્રણે તારમાં જો કોઈ ઢીલો-પોચો હોય, કોઈ કડક હોય તો તેની અસર આમજનતા પર નહીંવત્ થાય છે પણ ચિરસ્થાયી થતી નથી.

તો પછી ઉપરના ગુણ રહિત અર્વાચીન જગતનાં યાંત્રિક સાધનો દ્વારા થતા પ્રચારમાં કદાચ તાત્કાલિક અતિશય દેખાતો હોય છતાં તેનાં પરિણામો અને સ્થિરતા તો ભાવિ ઇતિહાસ જ બોલશે.

“જ્ઞાનક્રિયાભ્યાં મોક્ષઃ” એ મહાન સૂત્ર વિચાર, વાણી અને વર્તનરૂપ ત્રણે તાર સમ રાખીને જૈન પૂર્વાચાર્યોએ આમજનતાના હૃદયમાં સંસ્કારો રેડવાનો પ્રયત્ન કર્યો છે. તેની છાપ “પડી પટોળે ભાત, ફાટે પણ ફીટે નહિ.” જીર્ણ શીર્ણ થઈ જવા છતાં જાણે તાજી જ ભાત ન હોય તેમ આજે ભૌતિક વિજ્ઞાનથી પાંગરેલા યંત્રવાદનો યુગ આવવા છતાં (ભાવિમાં ગમે તે થાઓ) હજુ પણ અનુભવાય છે. જેનો સામાન્ય આદર્શ આ ચરિત્રનાયક મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજીમાં પણ દેખાય છે.

એટલે કે જ્ઞાન અને ક્રિયા એ બન્નેને સમતુલાએ રાખીને કામ લેવામાં આવે તો “વિચાર, વાણી અને વર્તન” એ ત્રણે તાર સરખા રહે ને સુંદર સંગીત (સંસ્કાર) મળે. પણ આજે તો કેટલાએક જ્ઞાનને મુખ્ય કરીને ક્રિયા ઢીલી હોય તો ચાલે એમ કહે છે. જ્યારે કેટલાએક ક્રિયાને મુખ્ય કરીને જ્ઞાન ઓછુંવત્તું હોય તો ચાલે એમ માને છે ને મનાવવા પ્રયત્ન પણ કરે છે. ને તેમ કરતાં વાદમાં જેમ સાંઢોની સાઠમારીમાં ઉતરી એક બીજાને હલકા પાડવાનો પ્રયત્ન કરતાં “પાડે પાડા લડે અને વચ્ચે ઝાડનો ખો” એ કહેવત મુજબ આમ જનતાના હૃદયમાં રહેલ સિદ્ધાન્ત અને સંસ્કારની છાપ ભૂંસી રહ્યા છે. તેઓ

જોઈ શકતા નથી કે માત્ર જ્ઞાનને માનનાર શ્રુતકેવલી–ચૌદપૂર્વી પણ ક્રિયાહીન થતાં નિગોદમાં ચાલ્યા ગયા. સાડા નવપૂર્વી પણ અજ્ઞાની કહેવાયા. વસ્તુતઃ " ज्ञानस्य फलं विरतिः " વગેરે ચિરંતનાચાર્યોનાં વાક્યો તથા—

" आरुरुक्षुर्मुनिर्योगं, श्रयेद् बाह्यक्रियामपि ।
योगारूढः शमादेव, शुध्यत्यन्तर्गतक्रियः ॥ "

એ મહામહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજીના વાક્યને ભૂલી જાય છે. અને ક્રિયાવાદીઃ—

" દેશ આરાધક ક્રિયા કહી, સર્વ આરાધક જ્ઞાન;
જ્ઞાન વિના સર્વ ક્રિયા કહી, કાશકુસુમ ઉપમાન. "

એ વાક્યને ભૂલી જઈ સ્વ અને પર એમ ઉભયનું હિત બગાડે છે.

" દેવ, ગુરુ અને ધર્મ " એ ત્રણેનું સુંદર આરાધન તો સુસંસ્કાર હોય તોજ થઈ શકે. અને સંસ્કાર તો દેવ, ગુરુ અને ધર્મની આરાધનાવિધિને જણાવનાર જ્ઞાનથી થાય. તે જ્ઞાન દેવ, ગુરુ, ધર્મની આરાધના વિષયને જણાવનાર ગ્રંથના અભ્યાસથી થાય.

જૈન મતમાં તો તેને માટે 'દેવવંદન–ભાષ્ય, ગુરુવંદન–ભાષ્ય તથા પચ્ચક્ખાણ–ભાષ્ય' છે, તેના અભ્યાસથી અનુક્રમે દેવમંદિરમાં કેવી રીતે જવું તથા વર્તવું જોઈએ, કેટલી વસ્તુ નિવારવી જોઈએ વગેરે વર્ણન છે. 'ગુરુવંદન ભાષ્ય'માં ગુરુ પાસે કેવી રીતે જવું, તેમનો કયા પ્રકારે વિનય સાચવવો, વિનય કરવાથી કે ન કરવાથી શું લાભ કે નુકસાન થાય તે વગેરે વિષયોનું વર્ણન છે.

દાન, શિયળ, તપ અને ભાવરૂપ ધર્મનું આરાધન કેવી પ્રતિજ્ઞાઓ કરવાથી થઈ શકે? શા માટે પ્રતિજ્ઞાઓ કરવી જોઈએ? વગેરે વર્ણન 'પચ્ચક્ખાણ ભાષ્ય'માં છે. આ ગ્રંથોનો વિષય પ્રતિભાસ જ્ઞાન તરીકે અભ્યાસ કરવાથી અક્ષર જ્ઞાન સિવાય કંઈ ખાસ લાભ થતો નથી. પણ એ જ્ઞાન આત્મપરિણત થતાં તત્ત્વસંવેદન તરફ ઊર્ધ્વગમન કરાવે ત્યારે જ તેનો સાચો લાભ ઉઠાવી શકાય છે.

જો કે વિધિમાર્ગનો અજ્ઞ હોઈ જૈન સમાજમાં અરે, દરેક સમાજમાં આજનો ક્રિયાવાદી વર્ગ આડંબરી ક્રિયામાં જ રક્ત છે. જ્યારે જ્ઞાનવાદી વર્ગ વિધિ આમ થવો જોઈએ અને તેમ થવો જોઈએ તેમ કહે છે. પણ પોતે (જાણે કે શ્રદ્ધાહીન હોય તેમ) તદ્દન ક્રિયાશૂન્ય જણાય છે. માટે જ્ઞાનવાદી વર્ગ જ્ઞાન હોવાથી સ્વાનુભવપૂર્વક સુવિહિત વિધિમાર્ગને આદરે અને તે વર્તનમાં મૂકવા પૂર્વક પોતાની પાછળ મેંઢા જેવી ક્રિયાવાદી આમજનતાને દોરે તો સુંદર ફળ મળે. ગાડરિયા પ્રવાહના જેવી સહજ સ્વભાવવાળી આમજનતા તો " દુનિયાં ઝૂકતી હૈ ઝૂકાનેવાલા ચાહિયે " મુજબ જ્યાં દોરે ત્યાં જાય તેવી જ હોય છે. તો તેને શુભ દિશાએ વાળવાનો વિવેકપૂર્વક અને વિરોધ રહિત પ્રયત્ન જ્ઞાનવાદીઓએ જ કરવો રહ્યો.

★

પૂ. ન્યાયવિશારદ ન્યાયાચાર્ય મહોપાધ્યાય

શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજ

લેખક : પરમપૂજ્ય મુનિરાજ શ્રીમાન્ભદ્રંકરવિજયજી [લેખ નં. ૨]

સંવત ૧૬૮૮માં દીક્ષા ૧૭૧૮માં વાચકપદવી અને ૧૭૪૩માં સ્વર્ગગમન હોવાથી, આ મહાપુરુષનો સત્તાસમય લગભગ સંવત ૧૬૮૦ થી ૧૭૪૩ સુધીનો નક્કી થાય છે.

શ્રીમહાવીરપ્રભુની પટ્ટપરંપરાએ ચાલતા આવેલા તપાગચ્છમાં ભારતવર્ષના પ્રખ્યાત બાદશાહ અકબરને પ્રતિબોધ કરનાર સુવિખ્યાત જગદ્ગુરુ આચાર્ય ભગવાન્ શ્રીમદ્ વિજયહીરસૂરિવર થયા. તેમના શિષ્ય ઉપાધ્યાય શ્રીકલ્યાણવિજયજી ગણિ, તેમના મુખ્ય શિષ્ય શ્રીલાભવિજયજી ગણિ, તેમના મુખ્ય શિષ્ય શ્રીજિતવિજયજી ગણિ, તેમના ગુરુભ્રાતા શ્રીનયવિજયજી ગણિ, અને તેમના શિષ્ય શ્રીયશોવિજયજી ગણિ થયા. આ વાત એમના જ ગ્રન્થોમાં 'ઐન્દ્રસ્તુતિ-સ્વોપજ્ઞવિવરણ,' તથા '૩૫૦ ગાથાના સ્તવન'ના પ્રાન્ત ભાગાદિ સ્થળોએ ઉપલબ્ધ થાય છે.

ઉપાધ્યાય શ્રીમદ્ યશોવિજયજીની સંસ્કૃત-ગ્રંથરચનાઓની આદિમાં 'ઐઁ' પદ મૂકવામાં આવે છે. 'ઐઁ' એ સરસ્વતીનો મંત્ર છે. ઐઁ પદના જાપપૂર્વક તે મહાપુરુષે કાશીમાં રહી ગંગા નદીના તટે શ્રીસરસ્વતી દેવીનું આરાધન કર્યું હતું. તે વખતે તેઓશ્રીને સરસ્વતીદેવી પાસેથી તર્કશાસ્ત્ર તથા કાવ્યશાસ્ત્રનો પ્રસાદ પ્રાપ્ત થયો હતો. એ વાત સ્વરચિત 'શ્રીજંબૂસ્વામીનો રાસ' અને 'શ્રીમહાવીરસ્તુતિ'[1] આદિનાં પોતે કરેલાં મંગલાચરણો ઉપરથી સિદ્ધ થાય છે.

આ મહાપુરુષના સમકાલીન ધુરંધર વિદ્વાન, અનેક ગ્રંથરત્નોના પ્રણેતા મહોપાધ્યાય શ્રીમાનવિજયજી ગણિવર સ્વરચિત સ્વોપજ્ઞવૃત્તિસમેત 'શ્રીધર્મસંગ્રહ' નામના અતિ વિશદ ગ્રંથરત્નની પ્રશસ્તિમાં 'શ્રીઉપાધ્યાયજી'ના ગુણાનુવાદ કરતાં લખે છે કે– "[2] જે મહાપુરુષ

---

1. "ऐँकारजापवरमाप्य कवित्ववित्ववाञ्छासुरद्रुमुपगङ्गमभङ्गरङ्गम् ।
   सूक्तैर्विकासिकुसुमैस्तव वीर ! शम्भोरम्भोजयोश्चरणयोर्वितनोमि पूजाम् ॥१॥"
   [न्यायखण्डखाद्यटीका]
2. यत्तर्कतर्कशधियाखिलदर्शनेषु, मूर्धन्यतामधिगतास्तपगच्छधुर्याः ।
   काश्यां विजित्य परयूथिकपर्षदोऽग्र्या, विस्तारितप्रवरजैनमतप्रभावाः ॥१॥
   तर्कप्रमाणनयमुख्यविवेचनेन प्रोद्बोधितादिममुनिश्रुतकेवलित्वाः ।
   चक्रुर्यशोविजयवाचकराजिमुख्या ग्रन्थेऽत्र मय्युपकृतिं परिशोधनाद्यैः ॥२॥

સત્ય તર્કથી ઉત્પન્ન થયેલી તીક્ષ્ણ બુદ્ધિ વડે સમગ્ર દર્શનોમાં અગ્રેસરપણું પામ્યા છે, તપાગચ્છમાં મુખ્ય છે, કાશીમાં અન્ય દર્શનીઓની સભાઓને જીતીને શ્રેષ્ઠ જૈનમતના પ્રભાવને જેમણે વિસ્તાર્યો છે અને જેઓએ તર્ક, પ્રમાણ અને નયાદિકના વિવેચન વડે પ્રાચીન મુનિઓનું શ્રુતકેવલિપણું આ કાળમાં પ્રગટ બતાવી આપ્યું છે, તે શ્રીયશોવિજયોપાધ્યાય વાચકસમૂહમાં મુખ્ય છે.' આ 'ધર્મસંગ્રહ' ગ્રંથ તૈયાર થયા પછી શ્રીમાનવિજયજી મહારાજાએ 'શ્રીઉપાધ્યાયજી' મહારાજની પાસે તેને શોધાવેલ છે.

ઉપાધ્યાયજીએ રચેલા ગ્રંથો પૈકી હાલ થોડા જ ઉપલબ્ધ થાય છે. પોતે રચેલા 'જૈન તર્કપરિભાષા'[1] ગ્રંથની પ્રશસ્તિમાં તથા 'પ્રતિમાશતક'ની પ્રસ્તાવનામાં (૧૦૦) એકસો ન્યાયના ગ્રંથ રચ્યાનું સ્પષ્ટ પ્રતિપાદન છે. એ ઉપરાંત 'રહસ્ય' શબ્દાંકિત ૧૦૮ ગ્રંથો રચવાની હકીકત પોતે 'ભાષારહસ્ય'[2] ગ્રંથના પ્રારંભમાં જણાવી છે.

બીજા પણ અનેક સંસ્કૃત–પ્રાકૃત ગ્રંથો તેઓશ્રીએ રચેલા છે. એ વાત અત્યારે ઉપલબ્ધ થતા 'રહસ્ય' શબ્દ અને ન્યાય સિવાયના વિષયના અન્ય ગ્રંથોથી તથા તેમણે સાક્ષી તરીકે ભલામણ કરેલા ગ્રંથોથી પુરવાર થાય છે. આ રીતિએ અદ્વિતીય ગ્રંથોની રચનાઓ કરી આ મહાપુરુષે શ્રીજૈનશાસનની ભારે પ્રભાવના કરી છે. ઉપાધ્યાયજી વ્યાકરણ, કાવ્ય, કોષ, અલંકાર, છંદ, તર્ક, સિદ્ધાંત, આગમ, નય, નિક્ષેપ, પ્રમાણ, સપ્તભંગી આદિ સર્વ વિષય સંબંધી ઊંચા પ્રકારનું અતિશય સૂક્ષ્મ જ્ઞાન ધરાવતા હતા. એમના પ્રત્યેક ગ્રંથોમાં અપૂર્વ કવિત્વશક્તિ, વચન–ચાતુરી, પદ–લાલિત્ય, અર્થ–ગૌરવ, રસ–પોષણ, અલંકાર–નિરૂપણ, પર–પક્ષખંડન, સ્વ–પક્ષમંડન સ્થળે સ્થળે દૃષ્ટિગોચર થાય છે. એમની તર્કશક્તિ તથા સમાધાન કરવાની શક્તિ અપૂર્વ છે. પૂર્વાચાર્યપ્રણીત અનેક ગ્રંથોમાં સૂત્ર–ટીકા વગેરેમાં જુદી પડતી અનેક બાબતોનાં સમાધાન તેઓશ્રીએ બહુ યુક્તિપુરઃસર કર્યાં છે. પોતાના ગ્રંથોમાં તેઓશ્રીએ વ્યવહાર અને નિશ્ચયનું સ્વરૂપ તથા શ્રીજિનેશ્વર દેવની પ્રતિમા તથા પૂજાનું મંડન એવી ઉત્તમ રીતિએ કર્યું છે કે તેને મધ્યસ્થ અને જિજ્ઞાસુવૃત્તિએ વાંચનાર ને સમજનાર આત્મા તરત જ સન્માર્ગમાં સુસ્થિર બની જાય છે. સૂત્ર, નિર્યુક્તિ, ચૂર્ણિ, ભાષ્ય, અને ટીકા સ્વરૂપ પંચાંગીયુક્ત શ્રીજિનવચનના એક પણ અક્ષરને ઉત્થાપનાર પ્રત્યેક કુમતવાદીની તેઓએ સખત રીતે ખબર લીધી છે. ઢૂંઢકોના ખંડન માટે તથા યતિઓમાં પ્રવેશેલી શિથિલતા દૂર કરવા માટે તેઓએ પોતાના ગ્રંથોમાં ભારે પ્રયત્ન સેવ્યો છે. કુમતોનું સખત શબ્દોમાં ખંડન કરવાથી તેમના અનેક દુશ્મનો પણ ઊભા થયા હતા, પણ તેની લેશમાત્ર પરવા તેઓશ્રીએ કરી નથી. દરેક સ્થળેથી માનપાન મેળવવામાં જ પોતાની

---

૧. "पूर्वं न्यायविशारदत्वबिरुदं काश्यां प्रदत्तं बुधैः, न्यायाचार्यपदं ततः कृतशतग्रन्थस्य यस्यार्पितम् ।
शिष्यप्रार्थनया नयादिविजयप्राज्ञोत्तमानां शिशुः, तत्त्वं किञ्चिदिदं यशोविजय इत्याख्याभृदाख्यातवान् ॥१॥"
—इति जैनतर्कभाषायाम् ।

૨. "ततो भाषाविशुद्ध्यर्थं रहस्यपदाङ्कितया निर्दोषिताष्टोत्तरशतग्रन्थान्तर्गतप्रमारहस्य–स्याद्वादरहस्यादि सजातीयं प्रकरणमिदमारभ्यते ॥"
—इति स्वोपज्ञभाषारहस्यटीकायाम् ।

વિદ્વત્તાનો ઉપયોગ નહિ કરતાં, શિથિલાચારી યતિસમુદાય અને ઢૂંઢકો સામે નિડરપણે ઊભા રહી, તેઓશ્રીએ શ્રી જૈનશાસનની ભારેમાં ભારે સેવા બજાવી છે. અદ્વિતીય શાસનસેવા અને અનુપમ વિદ્વત્તાના પ્રતાપે–લઘુ હરિભદ્ર, બીજા હેમચંદ્ર તથા કલિકાલમાં શ્રુતકેવલીઓનું સ્મરણ કરાવનાર તરીકેની અનેકવિધ ઉત્તમ ઉપમાઓ તે પુણ્યપુરુષ પામી ગયા છે.

માત્ર ૨૫૦ વર્ષ પૂર્વે થયેલા આ મહાપુરુષનું પણ પૂરેપૂરું સાહિત્ય આજે ઉપલબ્ધ થતું નથી, એ ખરેખર આપણી ભયંકર કમનસીબી છે. છતાં વર્તમાનમાં જે સાહિત્ય મળે છે તે પણ આપણા ઉપકાર માટે ઓછું નથી. આવું પરમ ઉપકારક સાહિત્ય જગતમાં દીર્ઘકાળ પર્યંત ચિરસ્થાયી બની રહે, એ માટે સઘળા પ્રયત્નો યોજવા, એ સમ્યગ્દૃષ્ટિ આત્માઓનું પરમ કર્તવ્ય છે.

શ્રીઉપાધ્યાયજી મહારાજાએ, 'ન્યાયખંડ—ખાદ્ય' જેવા સંસ્કૃત ભાષામાં દુર્ઘટ ગ્રંથો બનાવવા સાથે, પ્રાકૃત જનોના ઉપકારાર્થે ગુજરાતી ભાષામાં પણ ઘણી સરસ પદ્યરચનાઓ કરી છે. અસાધારણ ન્યાય અને પ્રમાણ વિષયક ગ્રંથો દ્વારા પંડિતશિરોમણિઓનાં શિરોને પણ કંપિત કંપાવનાર આ મહાન્ પુરુષ 'જગજીવન જગ વા'લહો' અને 'પુખ્ખલવઈ વિજયે જયો' જેવા સરળ પણ ગંભીર આશયવાળાં સ્તવનાદિકની રચનાઓ કરે છે, એ તેઓની પરોપકારશીલતાની પરાકાષ્ઠા છે. ગૂર્જર ભાષામાં પણ તેઓશ્રીએ જેમ સરલ ચોવીશીઓ, વીસી અને પદોની રચના કરી છે, તેમ ૧૨૫–૧૫૦–૩૫૦ ગાથા જેવાં મોટાં ગંભીર સ્તવનો અને 'દ્રવ્ય–ગુણ–પર્યાયના રાસ' જેવી દુર્ઘટ રચનાઓ કરી છે. એમની ચિત્ર-વિચિત્ર કૃતિઓનો અનુભવ કરનાર વિદ્વાનો એમની અસાધારણ બુદ્ધિમત્તા અને અખંડ શાસ્ત્રાનુસારિતા જોઈને ચિત્તમાં ચમત્કાર પામ્યા સિવાય રહી શકતા નથી.

શ્રીઉપાધ્યાયજીની કૃતિઓએ તે સમયના વિદ્વાનોને આકર્ષ્યાં હતા, એટલું જ નહિ પણ આજ સુધી વિદ્વાનોનું તે તરફ એકસરખું આકર્ષણ કર્યું છે. તેઓશ્રીનાં વચનો આજે પણ પ્રમાણ તરીકે વિદ્વાનો તરફથી અંગીકાર કરવામાં આવે છે. વધારે આશ્ચર્ય ઉપજાવનારી બીના તો એ છે કે–સંસ્કૃત ગ્રંથોના ભાષાનુવાદો તો ઘણા થયા છે, પરંતુ શ્રીઉપાધ્યાયજી મહારાજના ગૂર્જર ગ્રંથ 'દ્રવ્ય–ગુણ–પર્યાય રાસ'નો અનુવાદ સંસ્કૃત ભાષામાં થયો છે એ પણ શ્રીઉપાધ્યાયજીની બહુશ્રુતતાને સૂચવવા સાથે, તે મહાપુરુષના વચનોની આદેયતા પુરવાર કરે છે.

ઉપાધ્યાયજીની ભાષાકૃતિઓએ અનેક આત્માઓને બોધિબીજની પ્રાપ્તિ કરાવી છે, સંખ્યાબંધ આત્માઓના સમ્યગ્દર્શન નિર્મળ કરાવ્યાં છે તથા અનેકાનેક અંતઃકરણોને શ્રીજિનશાસનના અવિહડ રંગથી રંગી દીધાં છે. વર્તમાન સદીના પરમ–પ્રભાવક પાંચાલ-દેશોદ્ધારક શ્રીમદ્ વિજયાનંદસૂરિ મહારાજાએ કુમતનો ત્યાગ કરી, જે મહાપુરુષનું શરણ સ્વીકાર કર્યું હતું તે, શ્રીમદ્ આત્મારામજી મહારાજના ગુરુદેવ, શ્રીમદ્ બુટેરાયજી મહારાજ વગેરે અનેક મહાત્માઓનો આ મહાપુરુષની ભાષાકૃતિઓએ મિથ્યામાર્ગમાંથી ખસેડીને સમ્યગ્-માર્ગની શ્રદ્ધા અને અનુસરણ કરાવ્યું છે, એ વાત પરિચિત આત્માઓને સુવિદિત છે.

શ્રીઉપાધ્યાયજીની ગૂર્જરકૃતિઓ સંસ્કૃત–પ્રાકૃત ભાષાના અભ્યાસી એવા મનુષ્યોને પણ જૈનશાસનનો તલસ્પર્શી બોધ કરાવે છે. સમુદ્ર જેવા ગંભીર આગમગ્રંથોનું સારભૂત તત્ત્વ પોતાની ગૂર્જર કૃતિઓમાં ગૂંથી તેઓશ્રીએ પ્રાકૃત જનતા ઉપર અનુપમ ઉપકાર કર્યો છે. કઠિનમાં કઠિન વિષયવાળા સંસ્કૃત પ્રાકૃત ભાષાના પૂર્વ મહર્ષિઓ વિરચિત ગ્રંથોનો સરળમાં સરળ ગૂર્જર પદ્યમય અકૃત્રિમ અનુવાદ કરવાની તેઓશ્રી અપૂર્વ શક્તિ અને કુશળતા ધરાવતા હતા.* તેઓશ્રીની પ્રત્યેક કૃતિ સપ્રમાણ છે. શાસ્ત્રાધાર સિવાયનો એક અક્ષર પણ નહિ ઉચ્ચારીને તેઓશ્રીએ પોતાનું ભવભીરુપણું સાબિત કરી આપ્યું છે. તેમનાં રચેલાં સ્તવનો આદિ એટલાં સરલ રસિક અને બોધપ્રદ છે કે, આજે પણ આવશ્યક –ચૈત્યવંદનાદિમાં તે હોંશપૂર્વક ગવાય છે.

તેમની નાનામાં નાની કૃતિમાં પણ તર્ક અને કાવ્યનો પ્રસાદ તરી આવે છે. આવા એક પ્રાસાદિક કવિ, મુક્તિમાર્ગના અનન્ય ઉપાસક, અખંડ સંવેગી, ગુણરત્નરત્નાકર, નિબિડ–મિથ્યાત્વ–ધ્વાંત–દિનમણિ, પ્રખર જિનાજ્ઞાપ્રતિપાલક અને પ્રચારક મહાપુરુષનું સ્મરણ જૈનોમાં કાયમ રહે એ માટે જેટલા પ્રયત્નો થાય તેટલા કરવા આવશ્યક છે. આ મહાપુરુષની સાચી ભક્તિ તેમની કૃતિઓનો પ્રચાર કરવામાં રહેલી છે. આ સ્થળે એક વાત યાદ રાખવા જેવી છે કે, આ મહાપુરુષની કૃતિઓ ગંભીર શ્રીજિનાગમરૂપી સમુદ્રમાંથી ઉદ્ધરિત થયેલી છે, તેથી તેના રહસ્યનો પૂરેપૂરો પાર પામવા માટે આગમશાસ્ત્રોના પારગામી ગીતાર્થ ગુરુઓના ચરણોની સેવાનો આશ્રય એ જ એક પરમ ઉપાય છે. આ મહાપુરુષની કૃતિઓનો ગુરુગમપૂર્વક અભ્યાસ, અર્થી આત્માઓને જૈનશાસનનો તલસ્પર્શી બોધ કરાવે છે, તથા સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રરૂપી મોક્ષમાર્ગની આરાધનામાં ઉત્તરોઉત્તર પ્રગતિ કરાવી આત્મિક અનંત સુખસાગરમાં નિશ્ચિતપણે ઝિલાવે છે.

[વિ. સં. ૧૯૯૨માં પ્રકાશિત થયેલ 'ગૂર્જર સાહિત્ય સંગ્રહ' ભાગ ૧ લામાં આપેલી પ્રસ્તાવનામાંથી ઉપયોગી ભાગ.]

* 'यत्सर्वविषयकाङ्क्षोद्भवं सुखं प्राप्यते सरागेण । तदनन्तकोटिगुणितं मुधैव लभते वीतरागः ॥'

—इति श्रीप्रशमरतौ

" સર્વ વિષય કષાયજનિત, જે સુખ લહે સરાગ; તેહથી કોટિ અનંત ગુણ મુધા લહે વીતરાગ. "

—[illegible]

શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

[જૈન સાહિત્યનો સંક્ષિપ્ત ઇતિહાસમાંથી]

લેખક : સ્વ. શ્રીયુત મોહનલાલ દલીચંદ દેસાઈ

૯૨૭. આ (સુજસવેલીના) જીવનવૃત્ત પરથી જણાય છે કે નાની વયે દીક્ષા લીધી હતી તેથી જન્મ સં. ૧૬૮૦ મૂકી શકાય. ૫૩ વર્ષનું આયુષ્ય એ ગણનાએ થયું. તે દરમ્યાન ૮ વર્ષની શિશુઅવસ્થા પછી નયવિજય ગુરુ પાસે ૧૧ વર્ષ અભ્યાસ કરી ગુરુ સાથે કાશી જઈ ત્રણ વર્ષ ત્યાં ને પછી આગ્રામાં ૪ વર્ષ અખંડ ઊંચો અભ્યાસ કરી—એમ ૧૭૦૬—૭ સુધી ૧૮ વર્ષ વિદ્યા—વ્યાયામમાં ગાળી જીવન પર્યંત ગ્રંથો રચવાનું ચાલુ રાખ્યું. ભાષાદૃષ્ટિએ પ્રાકૃત, સંસ્કૃત અને ગુજરાતીમાં પુષ્કળ કૃતિઓ રચી. વિષયો પરત્વે ન્યાય, યોગ, અધ્યાત્મ, દર્શન, ધર્મનીતિ; ખંડનાત્મક ધર્મસિદ્ધાંત, કથાચરિત, મૂલ તેમજ ટીકારૂપે રચનાઓ કરી. 'તેમના જેવી સમન્વયશક્તિ રાખનાર, જૈન જૈનેતર મૌલિક ગ્રંથોનું ઊંડું દોહન કરનાર, પ્રત્યેક વિષયના અંત સુધી પહોંચી તેના પર સમભાવપૂર્વક પોતાનાં સ્પષ્ટ મંતવ્ય પ્રકાશનાર, શાસ્ત્રીય અને લૌકિક ભાષામાં વિવિધ સાહિત્ય રચી પોતાના સરળ અને કઠિન વિચારોને સર્વ જિજ્ઞાસુ પાસે પહોંચાડવાની ચેષ્ટા કરનાર અને સંપ્રદાયમાં રહીને પણ સંપ્રદાયના બંધનની પરવા નહિ કરીને જે કાંઈ ઉચિત જણાયું તેના પર નિર્ભયતાપૂર્વક લખનાર, કેવલ શ્વેતાંબર-દિગંબર સમાજમાં જ નહિ બલ્કે જૈનેતર સમાજમાં પણ તેમના જેવો કોઈ વિશિષ્ટ વિદ્વાન અત્યાર સુધી અમારા ધ્યાનમાં આવેલ નથી. પાઠક સ્મરણમાં રાખે કે આ અત્યુક્તિ નથી. અમે ઉપાધ્યાયજીના અને બીજા વિદ્વાનોના ગ્રંથોનું અત્યાર સુધી જે કે અલ્પમાત્ર અવલોકન કર્યું છે તેના આધારે તોળી—જોખીને ઉક્ત વાક્ય લખ્યાં છે. નિઃસંદેહ શ્વેતાંબર અને દિગંબર સમાજમાં અનેક બહુશ્રુત વિદ્વાન્ થઈ ગયા છે. વૈદિક તથા બૌદ્ધ સંપ્રદાયમાં પણ પ્રચંડ વિદ્વાનોની કમી રહી નથી; ખાસ કરીને વૈદિક વિદ્વાન્ તો હંમેશથી ઉચ્ચ સ્થાન લેતા આવ્યા છે, વિદ્યા તો માનો કે તેમના બાપની; પરંતુ એમાં શક નથી કે કોઈ બૌદ્ધ યા કોઈ વૈદિક વિદ્વાન્ આજ સુધી એવો થયો નથી કે જેના ગ્રંથના અવલોકનથી એવું જાણવામાં આવે કે તે વૈદિક યા બૌદ્ધ શાસ્ત્ર ઉપરાંત જૈન શાસ્ત્રનું પણ વાસ્તવિક ઊંડું અને સર્વવ્યાપી જાણપણું રાખતો હોય. આથી ઊલટું ઉપાધ્યાયજીના ગ્રંથોને ધ્યાનપૂર્વક જોનાર કોઈ પણ બહુશ્રુત દાર્શનિક વિદ્વાન એવું કહ્યા વગર નહિ રહેશે કે ઉપાધ્યાયજી જૈન હતા તેથી જૈનશાસ્ત્રનું ઊંડું જ્ઞાન તો તેમને માટે સહજ હતું પરંતુ ઉપનિષદ્, દર્શન આદિ વૈદિક ગ્રંથોનું તથા બૌદ્ધ ગ્રંથોનું આટલું વાસ્તવિક પરિપૂર્ણ અને સ્પષ્ટ જ્ઞાન તેમની અપૂર્વ પ્રતિભા અને કાશીસેવનનું જ પરિણામ છે.'[1]

---

1. પ્રજ્ઞાચક્ષુ પંડિત શ્રીસુખલાલનો 'યોગદર્શન તથા યોગવિંશિકા'માં હિંદીમાં આપેલ 'પરિચય'માંથી અનુવાદ.

૯૨૮. 'તેઓ જન્મસંસ્કારસંપન્ન શ્રુતયોગસંપન્ન અને આજન્મ બ્રહ્મચારી ધુરંધર આચાર્ય હતા. સામાન્ય રીતે પોતાના બધા ટીકાગ્રંથોમાં તેમણે જે જે કહ્યું છે તે બધાનું ઉપપાદન પ્રાચીન અને પ્રામાણિક ગ્રંથોની સમ્મતિદ્વારા કર્યું છે, ક્યાંયે કોઈ ગ્રંથનો અર્થ કાઢવામાં ખેંચતાણ નથી કરી. તર્ક અને સિદ્ધાન્ત બંનેનું સમતોલપણું સાચવી પોતાના વક્તવ્યની પુષ્ટિ કરી છે, × × માત્ર અમારી દૃષ્ટિએ નહિ પણ હરકોઈ તટસ્થ વિદ્વાનની દૃષ્ટિએ જૈન સંપ્રદાયમાં ઉપાધ્યાયજીનું સ્થાન, વૈદિક સંપ્રદાયના શંકરાચાર્ય જેવું છે.'[1]

૯૨૯. પોતે શ્વેતામ્બર તપાગચ્છમાં હતા અને શ્રીઅકબરપ્રતિબોધક હીરવિજયસૂરિના શિષ્ય ષટ્તર્કી વિદ્યાવિશારદ પ્રસિદ્ધ ઉપાધ્યાય કલ્યાણવિજય, તેમના શિષ્ય સકલ શબ્દાનુશાસનનિષ્ણાત લાભવિજય, તેમના શિષ્ય પંડિત જીતવિજય, અને તેમના ગુરુભાઈ નયવિજયના શિષ્ય હતા. તેમનું ન્યાય–તર્કનું જ્ઞાન અદ્ભુત હતું ને પોતે જબરા વાદી હતા. પોતાના સમયમાં ચાલતા અન્ય સંપ્રદાયો નામે દિગંબરમત, અને સ્વ-શ્વેતાંબરમાંથી નીકળેલ મૂર્તિપૂજાનિષેધક લોંકાસંપ્રદાય તથા બીજી જુદી જુદી વિધિ અને માન્યતામાં જુદા પડતા એવા નાની શાખાઓ રૂપી ગચ્છો નામે પાર્શ્વચંદ્ર ગચ્છ, કડવાનો મત અને વીજાનો મત હતા. તદુપરાંત ધર્મસાગરે અનેક પ્રરૂપણાઓ કરી આખા શ્વેતાંબર ગચ્છના તંત્રને હલાવી મૂકયું હતું. અને પછી તેમના શિષ્યવર્ગે તે પ્રરૂપણા ચાલુ રાખી હતી. આ સર્વના મતોનો નિરાસ કરવા માટે પ્રમાણો આપવા ઉપરાંત તેમની કઠોર શબ્દોમાં ઝાટકણી કરી છે. દિગંબરો સામે ખાસ ગ્રંથો 'અધ્યાત્મમત પરીક્ષા, જ્ઞાનાર્ણવ' (અનુપલબ્ધ) એ સંસ્કૃતમાં, અને હિંદીમાં 'દિક્પટ ચોરાસી બોલ,' લોંકા–ઢૂંઢીઆ સામે સંસ્કૃત–ગદ્ય ગ્રંથ નામે 'દેવધર્મ–પરીક્ષા' સંસ્કૃત કાવ્યમાં 'પ્રતિમાશતક'ના ૯૯ શ્લોકો અને તે પછી રચેલી તે પર સ્વોપજ્ઞ ટીકા, ગૂજરાતીમાં 'મહાવીર સ્તવન' અને 'સીમંધર સ્તવન' આદિ, ધર્મસાગર સામે ઉક્ત 'પ્રતિમાશતક'માંના ૯ શ્લોક, પ્રા. 'ધર્મપરીક્ષા' અને તે પર સંસ્કૃત ટીકા રચેલ છે. આ ખંડનાત્મક ગ્રંથો રચવામાં પ્રેરણાત્મક વસ્તુ પોતાનો દઢ—'દર્શન પ્રક્ષ' છે અને વળી કહે છે કે, 'વિધિનું કહેવું, વિધિ પરની પ્રીતિ, વિધિની ઇચ્છા રાખનાર પુરુષોને વિધિમાગમાં પ્રવર્ત્તાવવા તથા અવિધિનો નિષેધ કરવો એ સર્વ અમારી જિનપ્રવચન પરની ભક્તિ પ્રસિદ્ધ છે.' ('અધ્યાત્મસાર'નો અનુભવાધિકાર શ્લો. ૩૧, ૩૨). આ દર્શનપક્ષ અને પ્રવચનભક્તિને પરિણામે આ ગ્રંથો રચ્યા અને તેમાં પોતાની તર્કશક્તિનો ઉપયોગ કર્યો. તે જ તર્કશક્તિને પાતંજલ, સાંખ્યાદિ સર્વ દર્શનોનો સ્વદર્શન સાથે યુક્તિયુક્ત સમન્વય કરવામાં પણ કામે લગાડી. એ રીતે યોગ અને અધ્યાત્મમાં ઊતરી આત્માનુભવ પણ પોતે પ્રાપ્ત કરી શકયા.

૯૩૦. ન્યાયનો ચોથો નામે ફલ–કાળ–આ યુગમાં જે સાહિત્ય રચાયું તે ફળરૂપ છે. ફળમાં બીજથી ફૂલ સુધીના ઉત્તરોત્તર પરિપાકનો સાર આવી જાય છે, તેવી રીતે આ યુગના સાહિત્યમાં પહેલા ત્રણે યુગના સાહિત્યમાં થયેલો પરિપાક એકસાથે આવી જાય છે. આ યુગમાં જે જૈન ન્યાય સાહિત્ય રચાયું છે તે જ જૈન ન્યાયના વિકાસનું છેલ્લું પગથિયું

---

૧. ઉક્ત સુખલાલ પંડિતજીનો 'ગુરુતત્ત્વવિનિશ્ચય' એ નામના યશોવિજયજી કૃત ગ્રંથમાં 'ગ્રંથ અને કર્તાનો પરિચય'.

છે; કારણ કે ત્યારબાદ તેમાં કોઈએ જરાય ઉમેરો કર્યો નથી. મલ્લિષેણની 'સ્યાદ્વાદમંજરી'ને બાદ કરીને આ યુગના ફૂલાયમાન ન્યાયવિષયક ઉચ્ચ સાહિત્ય તરફ નજર કરીએ તો જણાશે કે તે અનેક વ્યક્તિઓના હાથે લખાયું નથી; તેના લેખક ફક્ત એક જ છે અને તે સત્તરમા–અઢારમા સૈકામાં થયેલા, લગભગ સો (? આઠ) ગ્રન્થો સુધી મુખ્યપણે શાસ્ત્રયોગ સિદ્ધ કરનાર, સંસ્કૃત, પ્રાકૃત, ગૂજરાતી અને મારવાડી એ ચારે ભાષાઓમાં વિવિધ વિષયોની ચર્ચા કરનાર ઉપાધ્યાય યશોવિજયજી છે. ઉપાધ્યાયજીના જૈન તત્ત્વજ્ઞાન, આચાર, અલંકાર, છંદ વગેરે અન્ય વિષયોના ગ્રંથોને બાદ કરી માત્ર જૈન ન્યાયવિષયક ગ્રંથો ઉપર નજર નાખીએ તો એમ કહેવું પડે છે કે, સિદ્ધસેન ને સમંતભદ્રથી વાદી દેવસૂરિ અને હેમચંદ્ર સુધીમાં જૈન ન્યાયનો આત્મા જેટલો વિકસિત થયો હતો તે પૂરેપૂરો ઉપાધ્યાયજીના તર્કગ્રંથોમાં મૂર્તિમાન્ થાય છે; અને વધારામાં તે ઉપર એક કુશળ ચિત્રકારની પેઠે તેઓએ એવા સૂક્ષ્મતાના, સ્પષ્ટતાના અને સમન્વયના રંગો પૂર્યા છે કે, જેનાથી મુદિતમના થઈ આપોઆપ એમ કહેવાઈ જાય છે કે, પહેલા ત્રણ યુગનું બન્ને (દિગંબર અને શ્વેતાંબર) સંપ્રદાયનું જૈન ન્યાયવિષયક સાહિત્ય કદાચ ન હોય અને માત્ર ઉપાધ્યાયજીનું જૈન ન્યાયવિષયક સંપૂર્ણ સાહિત્ય ઉપલબ્ધ હોય તોયે જૈન વાઙ્મય કૃતકૃત્ય છે.

૯૩૧. 'ઉપાધ્યાયજીએ અધિકારીભેદને ધ્યાનમાં રાખી, વિષયોની વહેંચણી કરી તે ઉપર નાના–મોટા અનેક જૈન ન્યાયના ગ્રંથો લખ્યા. તેઓએ 'જૈનતર્કપરિભાષા' જેવો જૈન ન્યાયપ્રવેશ માટે લઘુ ગ્રંથ રચી, જૈનસાહિત્યમાં 'તર્કસંગ્રહ' અને 'તર્કભાષા'ની ખોટ પૂરી પાડી. 'રહસ્ય' પદાંકિત એકસો આઠ ગ્રંથો કે તેમાંના કેટલાક રચી જૈન ન્યાયવાઙ્મયમાં નૈયાયિકપ્રવર ગદાધર ભટ્ટાચાર્યના ગ્રંથોની ગરજ સારી; 'નયપ્રદીપ, નયરહસ્ય, નયામૃતતરંગિણી સહિત નયોપદેશ, સ્યાદ્વાદકલ્પલતા, ન્યાયાલોક, ખંડનખંડખાદ્ય, અષ્ટસહસ્રી ટીકા' આદિ ગ્રંથો રચી જૈન ન્યાયવાઙ્મયને ઉદયનાચાર્ય, ગંગેશ ઉપાધ્યાય, રઘુનાથ શિરોમણિ અને જગદીશની પ્રતિભાનું નૈવેદ્ય ધર્યું. 'અધ્યાત્મસાર, અધ્યાત્મોપનિષદ' જેવા ગ્રંથોથી જૈન ન્યાય વાઙ્મયનો 'ગીતા, યોગવાસિષ્ઠ' આદિ વૈદિક ગ્રંથો સાથે સંબંધ જોડ્યો. થોડામાં એટલું જ કહેવું બસ છે કે, વૈદિક અને બૌદ્ધ સાહિત્યે દાર્શનિક પ્રદેશમાં સત્તરમા સૈકા સુધીમાં જે ઉત્કર્ષ સાધ્યો હતો, લગભગ તે બધા ઉત્કર્ષનો આસ્વાદ જૈન વાઙ્મયને આપવા ઉપાધ્યાયજીએ પ્રમાણિકપણે આખું જીવન વ્યતીત કર્યું અને તેથી તેઓના એક તેજમાં જૈન ન્યાયનાં બીજાં બધાં તેજો લગભગ સમાઈ જાય છે, એમ કહેવું પડે છે.'[1]

૯૩૨. 'રહસ્ય'થી અંકિત 'પ્રમારહસ્ય, સ્યાદ્વાદરહસ્ય, (કે વા અને) વાદરહસ્ય, ભાષારહસ્ય, નયરહસ્ય અને ઉપદેશરહસ્ય' તેમણે રચ્યા છે તે નિર્વિવાદ છે. પ્રથમના ત્રણ અનુપલબ્ધ છે પણ તેમનો ઉલ્લેખ–નિર્દેશ અન્ય ગ્રંથોમાં સ્પષ્ટ છે. એવા 'રહસ્ય' અંકિત સો ગ્રંથ રચવાની પોતાની ઇચ્છા 'ભાષારહસ્ય'માં વ્યક્ત કરી છે.' આ 'રહસ્ય' શબ્દથી અંકિત કરવાની સ્ફુરણા, પ્રસિદ્ધ નૈયાયિક મથુરાનાથના 'તત્ત્વરહસ્ય' અને 'તત્ત્વાલોકરહસ્ય'

1. પંડિત સુખલાલનો ભાવનગરની સાતમી ગુજરાતી સાહિત્ય પરિષદ માટેનો નિબંધ નામે 'જૈન ન્યાયનો ક્રમિક વિકાસ.'

નામના ટીકાગ્રંથો પરથી થઈ લાગે છે. તેમના 'મંગલવાદ' અને 'વિધિવાદ' નામના હાલ અનુપલબ્ધ ગ્રંથોના નામમાં 'વાદ' શબ્દ વાપરવાની સ્ફુરણા તેમના સમકાલીન નવ્યન્યાયના વિદ્વાન ગદાધરે રચેલ 'વ્યુત્પત્તિવાદ', 'શક્તિવાદ' આદિ ન્યાયગ્રંથ પરથી થઈ લાગે છે. યશોવિજયજી નવ્યન્યાય પીને પચાવી ગયા હતા અને તેથી જ નવીન તત્ત્વો તેમણે જૈન દર્શનમાં આણ્યાં, તેમ જ નવ્યન્યાયનાં તત્ત્વોનું પણ જૈન દૃષ્ટિએ ખંડન કર્યું. આ જ યશોવિજયજીની વિશિષ્ટતા છે કે સં. ૧૨૫૦થી માંડી તેમના સમય સુધી જે અન્ય જૈનાચાર્યો ન કરી શક્યા તે તેમણે કર્યું. તેમની શૈલી જગદીશ ભટ્ટાચાર્યના જેવી શબ્દ-બાહુલ્ય વગરની ગંભીર ચર્ચા કરનારી છે. મથુરાનાથનો એમણે ઘણે સ્થળે ઉપયોગ અને નામોલ્લેખ પણ કર્યો છે. હેમચંદ્રાચાર્યે જેમ પોતાના સમકાલીન મલયગિરિ અને વાદી-દેવસૂરિનો ઉલ્લેખ નથી કર્યો, તેમ યશોવિજયજીએ પોતાના સમકાલીન જગદીશનો નથી કર્યો પરંતુ જગદીશના ગ્રંથથી તેઓ જાણીતા હતા એમ અનુમાન થાય છે.'[1]

૯૩૩. જૈનોના 'યોગ સાહિત્ય સંબંધમાં હરિભદ્રસૂરિના યોગવિષયક ગ્રંથ અને ત્યાર બાદ હેમચંદ્રાચાર્યનું 'યોગશાસ્ત્ર' આપણે જોઈ ગયા. પછી આ ઉપાધ્યાય યશો-વિજયકૃત યોગગ્રંથો પર નજર ઠરે છે. તે ઉપાધ્યાયના શાસ્ત્રજ્ઞાન, તર્કકૌશલ અને યોગા-નુભવ ઘણાં ગંભીર હતાં. તેથી તેમણે 'અધ્યાત્મસાર, અધ્યાત્મોપનિષદ' તથા 'સટીક બત્રીશીઓ' યોગ સંબંધી વિષયો પર લખેલ છે. તેમાં જૈન મંતવ્યોની સૂક્ષ્મ અને રોચક મીમાંસા કરવા ઉપરાંત અન્ય દર્શન અને જૈનદર્શનની સરખામણી પણ કરી છે. દા૦ ત૦ 'અધ્યાત્મસાર'ના યોગાધિકાર અને ધ્યાનાધિકારમાં પ્રધાનપણે 'ભગવદ્‌ગીતા' તથા 'પાતંજલ સૂત્ર'નો ઉપયોગ કરી અને જૈનપ્રક્રિયાપ્રસિદ્ધ ધ્યાનવિષયોનો ઉક્ત બંને ગ્રંથોની સાથે સમન્વય કર્યો છે. 'અધ્યાત્મોપનિષદ્'ના શાસ્ત્ર, જ્ઞાન, ક્રિયા અને સામ્ય એ ચાર યોગોમાં પ્રધાનપણે 'યોગવાસિષ્ઠ' તથા 'તૈત્તિરીયોપનિષદ્'નાં વાક્યોનાં અવતરણ આપી તાત્ત્વિક ઐક્ય બતાવ્યું છે. 'યોગાવતાર' દ્વાત્રિંશિકામાં ખાસ કરી 'પાતંજલ-યોગ'ના પદાર્થોનું જૈનપ્રક્રિયા અનુસાર સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે. આ ઉપરાંત તેમણે હરિભદ્રસૂરિકૃત 'યોગ-વિંશિકા' તથા 'ષોડશક' પર ટીકાઓ લખી પ્રાચીન ગૂઢ તત્ત્વોનું સ્પષ્ટ ઉદ્‌ઘાટન પણ કર્યું છે. આટલું જ કરીને સંતુષ્ટ ન રહેતાં તેમણે મહર્ષિ પતંજલિકૃત 'યોગસૂત્રો'ના ઉપર એક નાનીશી વૃત્તિ પણ લખી છે. આ વૃત્તિ જૈનપ્રક્રિયાનુસાર લખાયેલી હોવાથી તેમાં યથા-સંભવ યોગદર્શનની ભીંતરૂપ સાંખ્ય પ્રક્રિયાની જૈન પ્રક્રિયા સાથે સરખામણી પણ કરી છે. ઉપાધ્યાયજીની પોતાની વિવેચનામાં જેવી મધ્યસ્થતા, ગુણગ્રાહકતા, સૂક્ષ્મ સમન્વયશક્તિ અને સ્પષ્ટભાષિતા દેખાઈ છે તેવી બીજા આચાર્યોમાં ઘણી ઓછી નજરે પડે છે.'[2]

૯૩૪. મહર્ષિ પતંજલિએ પોતાનું 'યોગદર્શન' સાંખ્ય સિદ્ધાંત અને પ્રક્રિયા પર રચ્યું છે તો પણ તેમની દૃષ્ટિવિશાલતાથી તે સર્વ દર્શનોના સમન્વય રૂપ બન્યું છે, દા. ત. સાંખ્યનો નિરીશ્વરવાદ વૈશેષિક આદિ દર્શનો દ્વારા ઠીક નિરસ્ત થયો અને સાધારણ લોક-

---

૧. રા. મોહનલાલ ઝવેરીનો અભિપ્રાય.

૨. જુઓ તેમની 'શાસ્ત્રવાર્તાસમુચ્ચય-વૃત્તિ' અને 'પાતંજલસૂત્રવૃત્તિ'

સ્વભાવનો ઝુકાવ ઈશ્વરોપાસના પર વિશેષ જણાયો ત્યારે અધિકારીભેદ તથા રુચિવિચિત્રતાનો વિચાર કરી તેમણે ઈશ્વરોપાસનાને પણ સ્થાન આપ્યું (સૂત્ર ૧-૩૩) અને ઈશ્વરના સ્વરૂપનું નિષ્પક્ષભાવથી એવું નિરૂપણ કર્યું કે જે સર્વને માન્ય થઈ શકે (સૂત્ર ૧-૨૪, ૨૫, ૨૬) પસંદ આવે તે પ્રતીકની ઉપાસના કરો પણ કોઈ પણ રીતે મન એકાગ્ર-સ્થિર કરો અને તે દ્વારા પરમાત્મચિંતનના સાચા પાત્ર બનો. આથી ધર્મને નામે કલહ ટાળવાનો સાચો માર્ગ બતાવ્યો. આ દૃષ્ટિવિશાલતાની અસર અન્ય ગુણગ્રાહી આચાર્યો પર પણ પડી. તેવા આચાર્યોમાં હરિભદ્રસૂરિ અને યશોવિજયનું ખાસ સ્થાન છે. (દા. ત. હરિભદ્રે 'યોગબિંદુ' શ્લો. ૧૬-૨૦ માં સર્વ દેવોની ઉપાસના લાભદાયક બતાવી તે પર 'ચારિ સંજીવની ચાર' એ ન્યાયનો ઉપયોગ કર્યો છે અને એ જ રીતે યશોવિજયે પોતાની 'પૂર્વ-સેવા દ્વાત્રિંશિકા,' 'આઠ દૃષ્ટિઓની સજ્ઝાય' આદિ ગ્રંથોમાં અનુકરણ કરેલ છે.) જૈન દર્શન સાથે 'પાતંજલ યોગદર્શન'નું સાદૃશ્ય અન્ય સર્વ દર્શનોની અપેક્ષાએ અધિક છે. તે સાદૃશ્ય (૧) શબ્દનું (૨) વિષયનું અને (૩) પ્રક્રિયાનું-એમ મુખ્યતયા ત્રણ પ્રકારનું છે. (૧) મૂલ યોગસૂત્રમાં જ નહિ પરંતુ તેના ભાષ્ય સુદ્ધામાં એવા અનેક શબ્દો છે કે જે જૈનેતર દર્શનોમાં પ્રસિદ્ધ નથી યા તો ઓછા પ્રસિદ્ધ છે, જ્યારે જૈનશાસ્ત્રમાં ખાસ પ્રસિદ્ધ છે. જેવા કે ભવપ્રત્યય, સવિતર્ક-સવિચાર-નિર્વિચાર, મહાવ્રત, કૃત-કારિત-અનુમોદિત, પ્રકાશાવરણ, સોપક્રમ, નિરુપક્રમ, વજ્રસંહનન, કેવલી, કુશલ, જ્ઞાનાવરણીય કર્મ, સમ્યગ્જ્ઞાન, સમ્યગ્દર્શન, સર્વજ્ઞ, ક્ષીણક્લેશ, ચરમદેહ આદિ (સરખાવો-યોગસૂત્ર અને તત્ત્વાર્થ), (૨) વિષયોમાં પ્રસુપ્ત તનુ આદિ ક્લેશાવસ્થાઓ, પાંચ યમ, યોગજન્મ વિભૂતિ, સોપક્રમ નિરુપક્રમ કર્મનું સ્વરૂપ તથા તેનાં દૃષ્ટાંત, અનેક કાયોનું નિર્માણ આદિ. (૩) પ્રક્રિયામાં પરિણામી, નિત્યતા અર્થાત્ ઉત્પાદ, વ્યય, ધ્રૌવ્ય રૂપે ત્રિરૂપ વસ્તુ માની તદનુસાર ધર્મ-ધર્મીનું વિવેચન. આ રીતે જણાતી વિચારસમતાના કારણે હરિભદ્ર જેવા જૈનાચાર્યે મહર્ષિ પતંજલિ પ્રતિ હાર્દિક આદર પ્રગટ કરી પોતાના યોગગ્રંથોમાં ગુણગ્રાહકતાનો નિઃશંક પરિચય આપ્યો છે. (જુઓ 'યોગબિંદુ' શ્લો૦ ૬૬ ઉપર અને 'યોગદૃષ્ટિસમુચ્ચય' શ્લો૦ ૬૦ ઉપર ટીકા) અને સ્થળે સ્થળે પતંજલિના યોગશાસ્ત્રગત ખાસ સાંકેતિક શબ્દોને જૈન સંકેતો સાથે સરખાવી સંકીર્ણ દૃષ્ટિવાળાને માટે એકતાનો માર્ગ ખોલ્યો છે. (જુઓઃ 'યોગબિંદુ' શ્લો૦ ૪૧૮, ૪૨૦) યશોવિજયે પતંજલિ પ્રત્યે આદર બતાવી (જુઓઃ 'યોગાવતાર દ્વાત્રિંશિકા' હરિભદ્રસૂરિના સૂચિત એકતાના માર્ગને વિશેષ વિશાલ બનાવી પતંજલિના 'યોગસૂત્ર'ને જૈન પ્રક્રિયા અનુસાર સમજાવવાને થોડો પણ માર્મિક પ્રયાસ કર્યો છે (જુઓઃ 'પાતંજલ સૂત્રવૃત્તિ') આટલું જ નહિ બલ્કે પોતાની દ્વાત્રિંશિકાઓ (બત્રીસીઓ)માં તેમણે પતંજલિના યોગસૂત્રગત કેટલાક વિષયો પર ખાસ બત્રીશીઓ—નામે પાતંજલ યોગલક્ષણવિચાર, ઈશાનુગ્રહવિચાર, યોગાવતાર, ક્લેશહાનોપાય અને યોગમાહાત્મ્ય (દ્વાત્રિંશિકાઓ) રચી છે.'[1]

['જૈનસાહિત્યનો સંક્ષિપ્ત ઇતિહાસ' (સં. ૧૯૮૯)માંથી
'શ્રીયશોવિજય યુગ' વિભાગના પૃષ્ઠ : ૬૭૧ થી ૬૭૯.]

---

૧. પંડિતવર્ય શ્રીસુખલાલજીની 'યોગદર્શન તથા યોગવિંશિકા'ની હિંદી પ્રસ્તાવના પરથી.

શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

લેખક : શ્રીયુત નાગકુમાર મકાતી. [વડોદરા]

ભારતવર્ષ એ સતો અને મહાત્માઓની ભૂમિ છે એમ કહીએ તો તેમાં જરા પણ અતિશયોક્તિ નથી. રામ, કૃષ્ણ, મહાવીર અને બુદ્ધ જેવા પયગમ્બરોથી માંડીને દરેકની પરંપરાને જાળવી રાખનારી મહાન્ વિભૂતિઓ સમયે સમયે અને યુગે યુગે આ દેશમાં પ્રગટી છે. ભારતવર્ષનું એ સૌભાગ્ય છે કે તેના અનેક મોંઘા સપૂતોએ પોતાનાં ત્યાગ, તપ, વૈરાગ્ય, વિદ્વત્તા, જ્ઞાન, ધ્યાન, યોગ, અધ્યાત્મ, ઓજસ અને સ્વાર્પણથી જનની જન્મભૂમિની કૂખ દીપાવી છે.

આર્ય ધર્મની ત્રણ મહાન્ શાખાઓ–જૈન, વૈદિક અને બૌદ્ધ. તે પૈકી બૌદ્ધધર્મે ભારતમાંથી દેશવટો લીધા પછી પણ વૈદિક અને જૈનધર્મોએ દેશના સંસ્કારઘડતરમાં પોતાનો યશસ્વી ફાળો સતત આપ્યા કર્યો છે અને હજી પણ આપ્યે જાય છે.

જૈનધર્મે જે સંસ્કારસ્વામીઓ અને ધર્મધુરંધરોની ભેટ ભારતવર્ષને ચરણે ધરી છે તેમાં ૧૪૪૪ ગ્રંથોના રચયિતા શ્રીહરિભદ્રસૂરિ અને જ્ઞાન–વિજ્ઞાનનાં તમામ ક્ષેત્રોને ખૂંદી વળનાર કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રીહેમચંદ્રાચાર્યનાં નામો જૈન અને જૈનેતર જનતામાં સારી રીતે જાણીતાં છે. તેમના જ જેવી એક મહાન્ વિભૂતિએ આજથી અઢીસો વર્ષ ઉપર પોતાની જ્ઞાન–સૌરભથી ભારતને અને ખાસ કરીને ગુજરાતને અડધી સદી સુધી સુવાસિત કર્યું હતું. પોતાના ઉચ્ચ ચારિત્ર્યથી, દિવ્ય સાધુતાથી, પ્રખર પાંડિત્યથી, અદ્વિતીય બુદ્ધિ-પ્રતિભાથી, અભિનવ કાવ્યશક્તિથી, ષડ્દર્શનના તલસ્પર્શી જ્ઞાનથી, નવ્ય–ન્યાયની પ્રખર મીમાંસાથી અને ધર્મ–ઉત્થાનના ભગીરથ પ્રયત્નોથી વિશદ યશ પ્રાપ્ત કરનાર એ યુગ-પુરુષનું શુભ નામ હતું ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજય.

આ મહાપુરુષની જન્મસાલ ચોક્કસ પ્રાપ્ત થતી નથી પરંતુ વિ. સં. ૧૬૮૦ માં અગર તેની લગભગમાં તેમનો જન્મ ઉત્તર ગુજરાતમાં રૂપેણ નદીના કિનારા ઉપર આવેલા કનોડા ગામમાં થયો હતો. આ ગામ દશમા–અગિયારમા સૈકાથી પણ પ્રાચીન હોવાના પુરાવા મળી આવે છે. તેમની માતાનું શુભ નામ 'સોભાગદે' અને પિતાનું શુભ નામ 'નારાયણ' હતું. શ્રીયશોવિજયજીનું બાલ્યકાળનું નામ 'જશવંત' હતું અને તેમને 'પદ્મસિંહ નામે ભાઈ હતા. આ બન્ન ભાઈઓએ વિ. સં. ૧૬૮૮ માં પંડિત શ્રીનય-વિજયજીના શુભ હસ્તે દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી અને તેમનાં નામ અનુક્રમે 'શ્રીયશો-વિજય' અને 'શ્રીપદ્મવિજય' રાખવામાં આવ્યાં હતાં.

શ્રીયશોવિજયજીની બુદ્ધિપ્રતિભાના ચમકારા શરૂઆતથી જ જણાવા લાગ્યા હતા. વિ. સં. ૧૬૯૯ માં તેમણે અમદાવાદના 'સંઘ' સમક્ષ આઠ અવધાન કર્યાં. આથી પ્રભાવિત થઈ ત્યાંના એક શ્રેષ્ઠીએ તેમના ગુરુને વિનંતિ કરી કે, શ્રીયશોવિજયજી જેવા હોશિયાર યુવાન સાધુને કાશી જેવા સ્થાનમાં અભ્યાસ કરાવી બીજા હેમચંદ્ર જેવા બનાવો. કાશીના અભ્યાસનો બધો ખરચ પોતે ઉપાડી લેવા તૈયારી બતાવી અને બે હજાર દીનારની હુંડી લખી પણ દીધી. ગુરુ નયવિજય શિષ્યો સહિત કાશી આવ્યા અને ત્યાંના પ્રસિદ્ધ ભટ્ટાચાર્ય પાસે ત્રણ વર્ષ સુધી વિદ્યાભ્યાસ કરાવ્યો. તીક્ષ્ણ મેધા અને સૂક્ષ્મ ગ્રહણશક્તિથી તેમણે ત્રણ જ વર્ષના ગાળામાં અદ્ભુત વિદ્વત્તા પ્રાપ્ત કરી અને અનનુકરણીય વાદ અને વક્તૃત્વ-શક્તિથી કંઈ વિદ્વાનો ઉપર વિજય મેળવ્યો. આથી કાશીમાં જ પંડિતોની સભાએ તેમને 'ન્યાયવિશારદ' અને 'ન્યાયાચાર્ય' જેવી પદવીઓ આપી.

કાશી છોડયા પછી તેઓ ચાર વર્ષ આગ્રામાં રહ્યા અને ન્યાયશાસ્ત્રનો અને ખાસ કરીને નવ્ય-ન્યાયના ગહન વિષયનો સૂક્ષ્મ અભ્યાસ કર્યો.

ત્યારબાદ તેઓ અમદાવાદ આવ્યા. તેઓ ગુજરાત તરફ આવવા નીકળ્યા તે પહેલાંથી જ તેમની ઉજ્જ્વલ કીર્તિ ચારે દિશામાં ફેલાઈ ગઈ હતી. ગુજરાતના તે વખતના સૂબા મહોબતખાનની રાજસભામાં તેમની પ્રશંસા થતાં મહોબતખાને તેમને ખાસ આમંત્રણ આપી રાજસભામાં તેડી મંગાવ્યા; ત્યાં સૂબાખાનની વિનંતિથી તેમણે અઢાર અવધાન કરી બતાવ્યાં.

આ બનાવ પછી તેમની કીર્તિનો સૂર્ય મધ્યાહ્ને તપવા લાગ્યો. તેમની વિદ્વત્તાની સુવાસ સારાયે ગુજરાતમાં ફેલાઈ ગઈ. તેમના શાપગ્રભુત્વે, તેમના ચલણી સિક્કા જેવા ટંકોત્કીર્ણ પ્રમાણભૂત વચનામૃતોએ, તેમના ઉત્કટ સંયમ અને ચારિત્ર્યે, ઢંગીઓ-વેષ-વિડંબકોને ખુલ્લા પાડવાની તેમની નિડરતાએ, તેમ જ તેમના તેજોમય અધ્યાત્મ જીવને તેમને તે વખતના સમગ્ર વિદ્વાનવર્ગ અને શ્રમણસંઘમાં અનોખું સ્થાન પ્રાપ્ત કર્યું.

તેમણે લગભગ ૩૦૦ ઉપરાંત ગ્રંથો લખ્યા છે. ન્યાય, અધ્યાત્મ અને યોગના ગહન વિષયો ઉપર તેમણે સ્વાનુભવપૂર્વક પોતાની જોશીલી કલમ ચલાવી છે. ષડ્દર્શનના સર્વ સિદ્ધાન્તો તેઓ ઘોળીને પી ગયા હોય તેમ લાગે છે. તેમના વિષે એક લેખકે ખરું જ લખ્યું છે કે, "શ્રી યશોવિજયજીની નય-નિગમથી અગમ્ય અને ગંભીર સ્યાદ્વાદ-વચન-સિદ્ધાન્તોની રચના એ આગમના જ એક વિભાગરૂપ છે. તેમની શાસ્ત્ર-રચનારૂપી ચંદ્રિકા શીતલ, પરમ આનંદને આપનારી, પવિત્ર, વિમળ-સ્વરૂપ અને સાચી છે અને તેથી રસિકજનો તેનું હોંશે હોંશે સેવન કરે છે."

ન્યાય અને તર્કની એક મહાન્ પ્રણાલી ભારતવર્ષમાં પ્રાચીનકાળથી વિદ્યમાન હતી. મહર્ષિ ગૌતમ પ્રાચીન ન્યાયશાસ્ત્રના પુરસ્કર્તા ગણાય છે. ત્યાં પ્રમાણોને આધારે ન્યાય-શાસ્ત્રે સ્વીકારેલા પ્રમેયોની પણ ચર્ચા કરવામાં આવી હોય એવી પરંપરા પ્રાચીન-ન્યાય

તરીકે ઓળખાય છે. પરંતુ દશમી–અગિયારમી સદી પછી એક નવ્ય-ન્યાયની પરંપરા શરૂ થઈ છતાં નવ્ય–ન્યાયની શાસ્ત્રીય અને સચોટ રજુઆત તો મૈથિલી ગંગેશ ઉપાધ્યાયે લગભગ તેરમી સદીમાં કરી. આ પદ્ધતિમાં પ્રમેયોની ચર્ચા પડતી મૂકવામાં આવી અને કેવળ પ્રમાણોના આધારે વસ્તુ સિદ્ધ થવી જોઈએ એવી સૂક્ષ્મતમ વિચારશ્રેણીને અવલંબી ન્યાયશાસ્ત્રને શુદ્ધ અને વૈજ્ઞાનિક તર્કશાસ્ત્રનું સ્વરૂપ આપવામાં આવ્યું. નવ્ય–ન્યાયમાં બુદ્ધિની સૂક્ષ્મતા, વિચારોની સ્પષ્ટતા અને દલીલોની ઝીણવટ પ્રાધાન્ય ભોગવે છે અને તેથી આ ન્યાયને પચાવનારમાં અદ્વિતીય મેધાની અને અપ્રતિમ પ્રતિભાની જરૂર રહે છે. શ્રીયશોવિજયજી નવ્ય–ન્યાયના એક્કા અને તાર્કિકશિરોમણિ ગણાયા છે. તેમના ગ્રન્થો વાંચનારને તેમની સૂક્ષ્મ વિચારણા અને અકાટ્ય દલીલોથી તેમની બુદ્ધિ–પ્રભાના ચમકારા માન ઉપજાવ્યા સિવાય રહેતા નથી.

શ્રીયશોવિજયજીની કૃતિઓ સંસ્કૃત, પ્રાકૃત, ગુજરાતી અને હિંદી–મારવાડી એમ ચારે ભાષામાં ગદ્યબદ્ધ, પદ્યબદ્ધ તેમજ ગદ્ય–પદ્યબદ્ધ છે. તેમના લેખનના મુખ્ય વિષયો આગમિક, તાર્કિક હોવા છતાં તેમણે પ્રમાણ, પ્રમેય, નય, મંગલ, મુક્તિ, આત્મા, યોગ આદિ તાર્કિક વિષયો ઉપર નવ્ય તાર્કિકશૈલીથી લખ્યું છે; એટલું જ નહિ પણ વ્યાકરણ, કાવ્ય, છન્દ, અલંકાર, દર્શન આદિ તે વખતના સર્વપ્રસિદ્ધ વિષયો ઉપર તેમણે પોતાની વિદ્વત્તાભરી કલમ ચલાવી છે.

'સુજસવેલી'ના કર્તા તેમને માટે લખે છે કે, "નિશ્ચે આપનું દેવમણિ–ચિંતામણિ જેવું (નિર્મળ) શ્રુત–શાસ્ત્ર છે, વાદીઓનાં વચનરૂપી કસોટીએ ચઢેલું છે, તેનો અભ્યાસ પંડિતજનો બોધિ એટલે સમ્યક્ત્વની વૃદ્ધિ માટે કરે છે. તેમની વિદ્વત્તાથી તેમને "કુર્ચાલી શારદ" અર્થાત્ સરસ્વતીના મૂછાળા અવતારનું બિરુદ મળ્યું હતું. તેમની રચના અને ભાષા માટે 'સુજસવેલી'ના કર્તાએ લખ્યું છે કે:—

" વચન–રચન સ્યાદ્વાદનાં, નય-નિગમ–અગમ ગંભીરો રે;
ઉપનિષદા જિમ વેદની, જસ કઠિન લહે કોઈ ધીરો રે,
શીતલ પરમાનંદિની, શુચિ વિમલ–સ્વરૂપા સાચી રે;
જેહની રચના–ચંદ્રિકા, રસિયાજન સેવે રાચી રે. "

શ્રીયશોવિજયજી એક સફલ ગુર્જર ભાષાના કવિ પણ હતા. તેમનાં કાવ્યો નરસિંહ અને મીરાંની પેઠે ભક્તિપ્રચુર અને પ્રાસાદિક છતાં ઉત્તમ કાવ્યતત્ત્વથી ભરપૂર છે. તેમના પદ્યસાહિત્યમાં સ્તવનો, સજ્ઝાયો, ભજનો અને પદો મુખ્ય છે.

'આશ્રમભજનાવલિ'માં સંગ્રહાયેલાં અને મહાત્મા ગાંધીજીના પ્રિય ભજન—

" ચેતન અબ મોહિ દર્શન દીજે, તુમ દર્શન શિવસુખ પામીજે;
તુમ દર્શન ભવ છીજે, ચેતન અબ મોહિ દર્શન દીજે. "

આ ભજન શ્રીયશોવિજયનું જ છે.

પ્રભુના મુખનાં દર્શન થતાં તેમના ભક્ત હૃદયમાંથી કેટલી સુંદર અને ભવ્ય કલ્પનાઓ સરી પડે છે !

" આંખડી અંબુજ પાંખડી, અષ્ટમી શશી સમ ભાલ લાલ રે;
વદન તે શારદ ચંદલો, વાણી અતિહિ રસાળ લાલ રે. "

અને પ્રભુભક્તિના રસનો જેણે સ્વાદ ચાખ્યો તેને પછી બીજો રસ ક્યાંથી ગમે ?—

" અજિત જિણંદશું પ્રીતડી, મુજ ન ગમે હો બીજાનો સંગ કે;
માલતી ફૂલે મોહિયો, કિમ બેસે હો બાવળતરુ ભૃંગ કે. અ૦
ગંગાજળમાં જે રમ્યા, કિમ છિલ્લર હો રતિ પામે મરાલ કે;
સરોવર જળ જલધર વિના, નવિ ચાહે હો જગ ચાતક બાલ કે. અ૦
કોકિલ કલ કૂજિત કરે, પામી મંજરી હો પંજરી સહકાર કે;
ઓછાં તરુવર નવિ ગમે, ગિરૂઆશું હો હોયે ગુણનો પ્યાર કે. અ૦ "

અને

" હુઓ છીપે નહિ અધર અરૂણ જિમ, ખાતાં પાન સુરંગ;
પીવત ભરભર પ્રભુ ગુણ પ્યાલા, તિમ મુજ પ્રેમ અભંગ. "

ઉપાધ્યાયજીની કેટલીક કૃતિઓ ગૂર્જર સાહિત્યમાં અમર થઈ જાય તેવી છે.

આ મહાપુરુષનું અવસાન વિ. સં. ૧૭૪૩માં ઐતિહાસિક ડભોઈ નગરમાં થયું હતું, જ્યાં તેમની પાદુકા વિ. સં. ૧૭૪૫માં પ્રતિષ્ઠિત થયેલી હાલ પણ વિદ્યમાન છે. તેમના સમાધિસ્તૂપની પુનઃ પ્રતિષ્ઠાના શુભ અવસરે આ મહાન્ તાર્કિક, મહાન્ નૈયાયિક, મહાન્ ગૂર્જરી પુત્ર અને મહાન્ ભારતીય સંસ્કારસ્વામીને અર્ઘ્ય અર્પવા તા. ૭–૮ માર્ચના રોજ આ સારસ્વત સત્ર યોજવામાં આવ્યું છે. હું પણ તેમને મારી શ્રદ્ધા–સમાંજલિ અર્પી કૃતાર્થ થાઉં છું.

श्रीयशोविजयजीकी जीवन-कार्य रूपरेखा

लेखक : पं० श्रीमान् सुखलालजी संघवी

" प्रस्तुत ग्रन्थ जैनतर्कभाषाके प्रणेता उपाध्याय श्रीमान् यशोविजय है। उनके जीवनके बारेमें सत्य, अर्धसत्य अनेक बातें प्रचलित थीं पर जबसे उन्हींके समकालीन गणी कान्तिविजयजीका बनाया 'सुजशवेली भास' पूरा प्राप्त हुआ, जो बिलकुल विश्वसनीय है, तबसे उनके जीवनकी खरी-खरी बातें बिलकुल स्पष्ट हो गईं। वह 'भास' तत्कालीन गुजराती भाषामें पद्यबद्ध है जिसका आधुनिक गुजरातीमें सटिप्पण सार-विवेचन प्रसिद्ध लेखक श्रीयुत मोहनलाल द. देसाई B. A. LL. B. ने लिखा है। उसके आधारसे यहाँ उपाध्यायजीका जीवन संक्षेपमें दिया जाता है।

" उपाध्यायजीका जन्मस्थान गुजरातमें कलोल (बी. बी. एन्ड सी. आई. रेल्वे) के पास 'कनोडु' नामक गाँव है, जो अभी भी मौजूद है। उस गाँवमें 'नारायण' नामका व्यापारी था जिसकी धर्मपत्नी 'सोभागदे' थी। उस दम्पतिके 'जसवंत' और 'पद्मसिंह' दो कुमार थे। कभी अकबरप्रतिबोधक प्रसिद्ध जैनाचार्य हीरविजयसूरिकी शिष्यपरंपरामें होनेवाले पण्डितवर्य श्री. 'नयविजय' पाटणके समीपवर्ती 'कुणगेर' नामक गाँवसे विहार करते हुए उस 'कनोडु' गाँवमें पधारे। उनके प्रतिबोधसे उक्त दोनों कुमार अपने माता-पिताकी सम्मतिसे उनके साथ हो लिए और दोनोंने पाटणमें पं. नयविजयजीके पास ही वि. सं. १६८८ में दीक्षा ली और उसी साल श्रीविजयदेवसूरिके हाथसे उनकी बडी दीक्षा भी हुई। ठीक ज्ञात नहीं कि दीक्षाके समय दोनोंकी उम्र क्या होगी, पर संभवतः वे दस—बारह वर्षसे कम उम्रके न रहे होंगे। दीक्षाके समय 'जसवंत'का 'यशोविजय' और 'पद्मसिंह'का 'पद्मविजय' नाम रखा गया। उसी पद्मविजयको उपाध्यायजी अपनी कृतिके अंतमें सहोदररूपसे स्मरण करते हैं।

सं. १६९९ में 'अहमदाबाद' शहरमें संघ समक्ष यशोविजयजीने आठ अवधान किये। इससे प्रभावित होकर वहाँके एक धनजी सूरा नामक प्रसिद्ध व्यापारीने गुरु श्रीनयविजयजीको विनति की कि पण्डित यशोविजयजीको काशी जैसे स्थानमें पढ़ाकर दूसरा हेमचन्द्र तैयार कीजिए। उक्त सेठने इसके वास्ते दो हजार चाँदीके दीनार खर्च करना मंजूर किया और हुंडी लिख दी। गुरु नयविजयजी शिष्य यशोविजय आदि सहित काशीमें आए और उन्हें वहाँके प्रसिद्ध किसी भट्टाचार्यके पास न्याय आदि दर्शनोंका तीन वर्षतक दक्षिणा-दान-पूर्वक अभ्यास कराया। काशीमें ही कभी

बादमें किसी विद्वान् पर विजय पानेके बाद पं. यशोविजयजीको 'न्यायविशारद'की पदवी मिली। उन्हें 'न्यायाचार्य' पद भी मिला था ऐसी प्रसिद्धि रही। पर इसका निर्देश 'सुजशवेलीभास' में नहीं है।

काशीके बाद उन्होंने आगरामें रहकर चार वर्ष तक न्यायशास्त्रका विशेष अभ्यास व चिन्तन किया। इसके बाद वे अमदावाद पहुँचे जहाँ उन्होंने औरंगजेबके महोबतखाँ नामक गुजरातके सूबेके समक्ष अठारह अवधान किये। इस विद्वत्ता और कुशलतासे आकृष्ट होकर सभीने पं. यशोविजयजीको 'उपाध्याय' पदके योग्य समझा। श्रीविजयदेवसूरिके शिष्य श्रीविजयप्रभसूरिने उन्हे सं. १७१८ में वाचक 'उपाध्याय' पद समर्पण किया।

वि. सं. १७४३ में डभोई गाँव, जो बडोदा स्टेटमें अभी मौजूद है उसमें उपाध्यायजीका स्वर्गवास हुआ, जहाँ उनकी पादुका वि. सं. १७४५ में प्रतिष्ठित की हुई अभी विद्यमान है।

उपाध्यायजीके शिष्यपरिवारका निर्देश 'सुजसवेली' में तो नहीं है पर उनके तत्त्वविजय, आदि शिष्य-प्रशिष्योंका पता अन्य साधनोंसे चलता है जिसके वास्ते 'जैन गूर्जर कविओ' भा. २ पृ. २७ देखिए।

उपाध्यायजीके बाह्य जीवनकी स्थूल घटनाओंका जो संक्षिप्त वर्णन ऊपर किया है, उसमें दो घटनाएँ खास मार्केकी है जिनके कारण उपाध्यायजीके आन्तरिक जीवनका स्रोत यहाँतक अन्तर्मुख होकर विकसित हुआ कि जिसके बल पर वे भारतीय साहित्यमें और खासकर जैन परम्परामें अमर हो गए। उनमेंसे पहिली घटना अभ्यासके वास्ते काशी जानेकी और दूसरी न्याय आदि दर्शनोंका मौलिक अभ्यास करनेकी है। उपाध्यायजी कितने ही बुद्धि व प्रतिभासम्पन्न क्यों न होते उनके वास्ते गुजरात आदिमें अध्ययनकी सामग्री कितनी ही क्यों न जुटाई जाती, पर इसमें कोई संदेह ही नहीं कि वे अगर काशीमें न जाते तो उनका शास्त्रीय व दार्शनिक ज्ञान, जैसा उनके ग्रन्थोंमें पाया जाता है, संभव न होता। काशीमें आकर भी वे उस समय तक विकसित न्यायशास्त्र खास करके नवीन न्याय-शास्त्रका पूरे बलसे अध्ययन न करते तो उन्होंने जैन परम्पराको और तद्द्वारा भारतीय साहित्यको जैन विद्वानकी हैसियतसे जो अपूर्व भेंट दी है वह कभी संभव न होती।

दसवीं शताब्दीसे नवीन न्यायके विकासके साथ ही समग्र वैदिक दर्शनोंमें ही नहीं बल्कि समग्र वैदिक साहित्यमें सूक्ष्म विश्लेषण और तर्ककी एक नई दिशा प्रारम्भ हुई और उत्तरोत्तर अधिकसे अधिक विचारविकास होता चला जो अभी तक हो ही रहा है। इस नवीनन्यायकृत नव्य युगमें उपाध्यायजीके पहले भी अनेक श्वेताम्बर दिगम्बर विद्वान् हुए जो बुद्धि-प्रतिभासम्पन्न होनेके अलावा जीवनभर शास्त्रयोगी भी रहे फिर भी हम देखते हैं कि उपाध्यायजीके पूर्ववर्ती किसी जैन विद्वान्ने जैन मन्तव्योंका उतना सतर्क दार्शनिक विश्लेषण व प्रतिपादन नहीं किया जितना उपाध्यायजीके काशीगमनमें और नव्यन्यायशास्त्रके गम्भीर अध्ययनमें ही हैं। नवीन न्यायशास्त्रके अभ्याससे

और तन्मूलक सभी तत्कालीन वैदिक दर्शनोंके अभ्याससे उपाध्यायजीका सहज बुद्धि-प्रतिभासंस्कार इतना विकसित और समृद्ध हुआ कि फिर उसमेंसे अनेक शास्त्रोंका निर्माण होने लगा। उपाध्यायजीके ग्रन्थोंके निर्माणका निश्चित स्थान व समय देना अभी संभव नहीं। फिर भी इतना तो अवश्य ही कहा जा सकता है कि उन्होंने अन्य जैन साधुओंकी तरह मन्दिरनिर्माण, मूर्तिप्रतिष्ठा, संघ निकालना आदि बहिर्मुख धर्मकार्योंमें अपना मनोयोग न लगा कर अपना सारा जीवन जहाँ वे गये और जहां वे रहे वहीं एकमात्र शास्त्रोंके चिन्तन तथा नव्य शास्त्रोंके निर्माणमें लगा दिया।

उपाध्यायजीकी सब कृतिया उपलब्ध नहीं हैं। कुछ तो उपलब्ध हैं फिर भी जो पूर्ण उपलब्ध है वे ही किसी प्रखर बुद्धिशाली और प्रबल पुरुषार्थीके आजीवन अभ्यासके वास्ते पर्याप्त हैं। उनकी लभ्य, अलभ्य और अपूर्ण लभ्य कृतियोंकी अभी तककी यादी अलग दी जाती है जिसके देखने से ही यहाँ संक्षेपमें किया जानेवाला उन कृतियोंका सामान्य वर्गीकरण व मूल्याङ्कन पाठकोंके ध्यानमें आ सकेगा।

उपाध्यायजीकी कृतियाँ संस्कृत, प्राकृत, गुजराती और हिंदी-मारवाड़ी इन चार भाषाओंमें गद्यबद्ध, पद्यबद्ध और गद्य–पद्यबद्ध हैं। दार्शनिक ज्ञानका असली व व्यापक खजाना संस्कृत भाषामें होनेसे तथा उसके द्वारा ही सकल देशके सभी विद्वानोंके निकट अपने विचार उपस्थित करनेका संभव होनेसे उपाध्यायजीने संस्कृतमें तो लिखा ही, पर उन्होंने अपनी जैनपरम्पराकी मूलभूत प्राकृत भाषाको गौण न समझा। इसीसे उन्होंने प्राकृतमें भी रचनाएँ कीं। संस्कृतप्राकृत नहीं जाननेवाले और कम जाननेवालों तक अपने विचार पहुँचानेके लिए उन्होंने तत्कालीन गुजराती भाषामें भी विविध रचनाएँ की। मौका पाकर कभी उन्होंने हिंदी मारवाडीका भी आश्रय लिया।

विषयदृष्टिसे उपाध्यायजीका साहित्य सामान्यरूपसे आगमिक, तार्किक दो प्रकारका होने पर भी विशेष रूपसे अनेक विषयावलम्बी है। उन्होंने कर्मतत्त्व, आचार, चरित्र आदि अनेक आगमिक विषयों पर आगमिक शैलीसे भी लिखा है; और प्रमाण, प्रमेय, नय, मंगल, मुक्ति आत्मा, योग आदि अनेक तार्किक विषयों पर भी तार्किक शैलीसे खासकर नव्य तार्किक शैलीसे लिखा है। व्याकरण, काव्य, छन्द, अलंकार, दर्शन आदि सभी तत्कालप्रसिद्ध शास्त्रीय विषयों पर उन्होंने कुछ न कुछ अतिमहत्त्वपूर्ण लिखा ही है।

शैलीकी दृष्टिसे उनकी कृतियाँ खण्डनात्मक भी हैं, प्रतिपादनात्मक भी हैं; और समन्वयात्मक भी। जब वे खण्डन करते हैं तब पूरी गहराई तक पहुँचते हैं। प्रतिपादन उनका सूक्ष्म और विशद है। वे जब योगशास्त्र या गीता आदिके तत्त्वोंका जैन मन्तव्यके साथ समन्वय करते हैं तब उनके गम्भीर चिन्तनका और आध्यात्मिक भावका पता चलता है। उनकी अनेक कृतियाँ किसी अन्यके ग्रन्थकी व्याख्या न होकर मूल, टीका या दोनों रूपसे स्वतन्त्र ही हैं, जब कि अनेक कृतियाँ

प्रसिद्ध पूर्वाचार्योंके ग्रन्थोंकी व्याख्यारूप हैं। उपाध्यायजी थे पक्के जैन और श्वेताम्बर। फिर भी विद्याविषयक उनकी दृष्टि इतनी विशाल थी कि वह अपने सम्प्रदाय मात्रमें समा न सकी अतएव उन्होंने 'पातञ्जल योगसूत्र' ऊपर भी लिखा और अपनी तीव्र समालोचना की। अन्य-दिगम्बर-परम्पराके सूक्ष्मप्रज्ञ तार्किकप्रवर विद्यानन्दके कठिनतर 'अष्टसहस्री' नामक ग्रन्थके ऊपर कठिनतम व्याख्या भी लिखी।

गुजराती और हिंदी मारवाड़ीमें लिखी हुई उनकी कृतियोंका थोड़ा बहुत वाचन पठन व प्रचार पहिले ही से रहा है; परन्तु उनकी संस्कृत-प्राकृत कृतियोंके अध्ययन-अध्यापनका नामोनिशान भी उनके जीवन कालसे लेकर ३० वर्ष पहले तक देखनेमें नहीं आता। यही सबब है कि ढाई सौ वर्ष जितने कम और खास उपद्रवोंसे मुक्त इस सुरक्षित समयमें भी उनकी सब कृतियाँ सुरक्षित न रहीं। पठन-पाठन न होनेसे उनकी कृतियोंके ऊपर टीका टिप्पणी लिखे जानेका तो सम्भव रहा ही नहीं पर उनकी नकलें भी ठीक-ठीक प्रमाणमें होने न पाईं। कुछ कृतियाँ तो ऐसी भी मिल रही हैं कि जिनकी सिर्फ एक एक प्रति रही। सम्भव है ऐसी ही एक एक नकलवाली अनेक कृतियाँ या तो लुप्त हो गई हों, या किन्हीं अज्ञात स्थानोंमें तितर-बितर हो गई हों। जो कुछ हो पर अब भी उपाध्यायजीका जितना साहित्य लभ्य है उतने मात्रका ठीक-ठीक पूरी तैयारीके साथ अध्ययन किया जाय तो जैन परम्पराके चारों अनुयोग तथा आगमिक तार्किक कोई विषय अज्ञात न रहेंगे।

उदयन और गङ्गेश जैसे मैथिल तार्किकपुङ्गवोंके द्वारा जो नव्य तर्कशास्त्रका बीजारोपण व विकास आरम्भ हुआ और जिसका व्यापक-प्रभाव व्याकरण, साहित्य, छन्द, विविध-दर्शन और धर्मशास्त्र पर पड़ा और खूब फैला उस विकाससे वञ्चित सिर्फ दो सम्प्रदायका साहित्य रहा। जिनमेंसे बौद्ध साहित्यकी उस त्रुटिकी पूर्तिका तो सम्भव ही न रहा था क्योंकि बारहवीं तेरहवीं शताब्दीके बाद भारतवर्षमें बौद्ध विद्वानोंकी परम्परा नाममात्रको भी न रही इसलिए वह त्रुटि उतनी नहीं अखरती जितनी जैन साहित्यकी वह त्रुटि। क्योंकि जैन-सम्प्रदायके सैकड़ों ही नहीं बल्कि हजारों साधनसम्पन्न त्यागी व कुछ गृहस्थ भारतवर्षके प्रायः सभी भागोंमें मौजूद रहे, जिनका मुख्य व जीवनव्यापी ध्येय शास्त्रचिन्तनके सिवाय और कुछ कहा ही नहीं जा सकता। इस जैन साहित्यकी कमीको दूर करने और अकेले हाथसे पूरी तरह दूर करनेका उज्ज्वल व स्थायी यश अगर किसी जैन विद्वानको है तो वह उपाध्याय यशोविजयजीको ही है।"........

[सिंघी जैनग्रन्थमाला ग्रन्थाङ्क ८, वि. सं. १९९४ में प्रकाशित उपा. यशोविजयजीकृत 'जैन तर्कभाषा'की प्रस्तावनामेंसे]

श्रीमद्यशोविजयवाचकानां वैदुष्यमाध्यात्मिकत्वं च।

लेखक : व्या० साहित्याचार्यश्रीनारायणाचार्यजी

जैनश्रमणपरम्परायां बृहत्तपागच्छे युगप्रधानानां विश्ववन्द्यचारित्राणां अकब्बरसम्राट्प्रतिबोधकानां तपस्विचूडामणीनां तत्रभवतां जगद्गुरुश्रीविजयहीरसूरीश्वराणामन्वये बहूनि मुनिरत्नानि प्रादुर्भूतानि। अद्यत्वेऽपि च योऽतिविशालो जैनमुनिसङ्घो विद्यते तस्य महत्तमोंऽशस्तेषामेव महात्मनां शिष्यपरिवारभूतः। सर्वर्तुकफलैरलङ्कृतः कल्पतरुरिव तेषां परिवारः निखिलगुणकलितमुनिवृन्देन विराजितोऽभूत्। तेषां परिवारे बहवो नानाशास्त्रपारदृश्वानो विद्वांसः, बहवः कवीन्द्राः, अनेका वादीन्द्राः, बहवो हि स्वान्तग्राहिव्याख्यानशैल्या राजप्रतिबोधकाः, बहवोऽतिदीर्घतपस्विनः, एवंधर्मेण जगतीतलमुद्द्योतयन्तो नैके महात्मान आसन्। पण्डितप्रवरश्रीलाभविजयगणिन उपाध्याय-श्रीविनयविजयादयश्च वैयाकरणशिरोमणयः, 'हीरसौभाग्य' आदिकाव्यरत्ननिर्मातारः कविशिरोमणयः, विजयसेनसूरि—देवसूरि—शान्तिचन्द्रोपाध्याय—भानुचन्द्रगण्यादयो यवननृपाणामपि हृदये धर्मसञ्चारका उपदेशकाः, ग्रन्थत्रिशतीनिर्मातारः 'कूर्चालीशारदा' इत्यप्रतिमविरुदधारिणो न्यायविशारदा न्यायाचार्याः पीतवाङ्मया योगिधुरीणा वाचकपुङ्गवाः श्रीयशोविजयवाचकाश्च एतेषां हीरसूरिमहात्मनामेव साक्षात् परम्परया वा शिष्याः।

एतेषु सर्वेष्वपि श्रीमतां यशोविजयवाचकानां वैदुष्यं विशिष्टमुल्लेखमर्हति। समासादितसुरभारतीप्रसादा इमे महानुभावाः सर्वमपि वाङ्मयं पपुरिति वचने नात्युक्तिलेशः। १६८८ तमे वैक्रमे संवत्सरेऽभिनव एव सुकुमारे वयसि गृहीतदीक्षाका सवितृवद्ब्रह्मचर्यतेजोमण्डलेन देदीप्यमाना इमे महानुभावाः स्वगुर्वादिसमीपे शास्त्राभ्यासं विधाय दर्शनशास्त्राध्ययनार्थं परमपवित्रां वाराणसीं जग्मुः। सा च वाराणसी कीदृशी? सुरभारत्या सुरसरितश्च परं धाम, यत्र निखिलेष्वपि विषयेषु लब्धपारा दिगन्तव्याप्तकीर्तयो विद्वद्वर्याः परिवसन्ति। ये खलु अन्यस्थानादागतं विद्वन्मणिमपि तृणाय मन्यन्ते स्म। तत्र गत्वा इमे यशोविजयवाचका कस्यचिदेकस्य न्यायाचार्यस्य सविधे तर्कशास्त्राध्ययनं प्रारेभिरे। तत्र ऐङ्कारपदोपलक्षितेन सरस्वतीमनुना तत्र भवतीं शारदां प्रसाद्य लब्धवरा वर्षत्रयमात्रेणैव कालेन लीलयैव दार्शनिके वाङ्मये नव्य-न्याये च विशारदा बभूवुः। नन्वयमाश्चर्योपादको व्यतिकरो यत् स्वल्पीयांसमपि कालं यावदधीत्य एते वाराणसेया वादिपर्षदो विजिग्युः साम्प्रदायिकभेदं च मनसि नाणुमपि निधाय यशोविजयप्रतिभयाऽतितरां चमत्कृता वाराणसेया विद्वांसस्तान् 'न्यायविशारद'विरुदेन नितरामलञ्चक्रुः। पश्चाद् गूर्जरभूमिमागत्य नव्यन्यायप्रणालीं यथायथं जैनन्यायेऽवतार्य विरचितपरः-

સુજસવેલી ભાસ

કર્તા : પૂજ્ય મુનિવર શ્રીકાંતિવિજયજી

[ઢાળ : ૧]

[ઝાંઝરીયા મુનિવર ! ધન ધન તુમ અવતાર—એ દેશી.]

પ્રણમી સરસતિ સામિણી જી, સુગુરુનો લહી સુપસાય;
શ્રીયશોવિજય વાચક તણા જી, ગાઈસું ગુણ-સમુદાય.
ગુણવંતા રે મુનિવર ! ધન તુમ જ્ઞાન—પ્રકાસ. ૧
વાદિ—વચન—કસણિ ચઢયો જી, તુજ શ્રુત સુરમણિ ખાસ,
બોધિ—વૃદ્ધિ—હેતિં કરિ જી, બુધજન તસ અભ્યાસ. ગુ૦ ૨
સકલ મુનીસર સેહરો જી, અનુપમ આગમનો જાણ;
કુમત—ઉત્થાપક એ જયો જી, વાચક—કુલમાં રે ભાણ. ગુ૦ ૩
પ્રભવાદિક શ્રુતકેવલી જી, આગઈ હુઆ ષટ્ જેમ;
કલિમાંહી જોતાં થકાં જી, એ પણ શ્રુતધર તેમ. ગુ૦ ૪
જસ—વર્દ્ધાપક શાસને જી, સ્વસમય — પરમત — દક્ષ;
પોહચે નહિ કોઈ એહને જી, સુગુણ અનેરા શત લક્ષ. ગુ૦ ૫
' કૂર્ચાલીશારદ ' તણો જી, બિરુદ ધરે સુવિદિત;
બાલપણિં અલવિં જિણે જી, લીધો ત્રિદશ ગુરુ જિત. ગુ૦ ૬
ગુજ્જરધર—મંડણ અછિં જી, નામે કનોડું વર ગામ;
તિહાં હુઓ વ્યવહારિયો જી, નારાયણ એહવે નામ. ગુ૦ ૭
તસ ઘરણી સોભાગદે જી, તસ નંદન ગુણવંત;
લઘુતા પણ બુદ્ધે[1] આગલો જી, નામે કુમર જસવંત. ગુ૦ ૮
સંવત સોલઅઠયાસિયેં જી, રહી કુણગિરિ[2] ચોમાસિં;
શ્રીનયવિજય પંડિતવરુ જી, આવ્યા [3]કન્હોડે ઉલ્લાસિ. ગુ૦ ૯
માત પુત્રસ્યું સાધુનાં જી, વાંદિ ચરણ સવિલાસ;
સુગુરુ ધર્મ ઉપદેશથી જી, પામી વયરાગ પ્રકાસ. ગુ૦ ૧૦
અણહિલપુર પાટણિં જઈ જી, લ્યૈં ગુરુ પાસેં ચારિત્ર;
યશોવિજય એહવી કરી જી, થાપના નામની તત્ર. ગુ૦ ૧૧

પાઠાંતરો—૧ બુદ્ધિ. ૨ કુણગેર. ૩ કન્હોડે ઉલ્લાસ.

પદમસિંહ[4] બીજો વળી જી, તસ બાંધવ ગુણવંત;
તસ પ્રસંગે પ્રેરિયો જી, તે પણિ થયો વ્રતવંત. ગુ૦ ૧૨
વિજયદેવગુરુ-હાથની જી, વડ દીક્ષા હુઈ ખાસ;
બિહુને સોલઅઠયાસિયેં જી, કરતાં[5] યોગ-અભ્યાસ. ગુ૦ ૧૩
સામાઈક આદિ ભણ્યા જી, શ્રીજસ ગુરુમુખિ આપિ;
સાકર-દલમાં મિષ્ટતા જી, તિમ રહી મતિ શ્રુત વ્યાપિ. ગુ૦ ૧૪
સંવત સોલનવાણુએં જી, રાજનગરમાં સુગ્યાન;
સાધિ સાખિ સંઘની જી, અષ્ટ મહાઅવધાન. ગુ૦ ૧૫
'સા' ધનજી સૂરા તિસેં જી, વીનવિ ગુરુ[6] એમ;
'યોગ્ય પાત્ર વિદ્યાતણું જી, થાસ્યેં એ બીજો હેમ'. ગુ૦ ૧૬
જો કાશી જઈ અભ્યસે જી, ષટ દર્શનના ગ્રંથ;
તરિ દેખાડે ઉજલું જી, કામ પટચેં[7] 'જિન-પંથ'. ગુ૦ ૧૭
વચન સુણી સદ્ગુરુ ભણિ જી, 'કાર્ય એહ ધનને અધીન;
મિથ્યામતિ વિણ સ્વાર્થેં જી, નાપે નિજ શાસ્ત્ર નવીન.' ગુ૦ ૧૮
નાણીના ગુણ ઓલતાં જી, હુઈ રચનાની ચોપ(ખ);
સુજસવેલિ સુણતાં સવેં જી, કાંતિ સકલ ગુણપોખ. ગુ૦ ૧૯

[ઢાળ : ૨]

[થાશું મંદસૌ કાપડિ, મેહ ઝબૂકે વીજળી હો લાલ, ઝબૂકે વીજળી—એ દેશી]

ધનજી સૂરા સાહ, વચન ગુરુનું સુણી હો લાલ, વચન ગુરુનું સુણી હો લાલ.
આણી મન ઉચ્છાહ, કહેં ઇમ તે ગુણી હો લાલ, કહેં ઇમ તે ગુણી હો લાલ.
'દોઈ સહસ દીનાર, રજતના ખરચસ્યું હો લાલ, રજતના૦
પંડિતને વારંવાર, તથાવિધિ અરચસ્યું હો લાલ, તથાવિધિ૦ ૧
છિ સુજસ એહવી વાત, ભણાવો તે ભણી હો લાલ, ભણાવો૦
ઇમ સુણી કાશીનો સાહ, અહે ગુરુ દિનમણિ હો લાલ, અહે૦
હુંડી કરિ ગુરુરાય, ભગતિ ગુણ અટકલી હો લાલ, ભગતિ૦
પાઠવિયી સદાય, કરકંવા મોકલી હો લાલ, કરકંવા૦ ૨
કાશીદેશ-મઝાર, પુરી વાણારસી હો લાલ, પુરી૦
જેહ તણો ગુણ ખાણિ, જિહાં સરસતિ વસી હો લાલ, જિહાં૦
તાર્કિક-કુલ-માર્તંડ, આચારજ ભટ્ટનો હો લાલ, આચારજ૦
જાણું સકલ અખંડ, તે દર્શન ષટનો હો લાલ, તે૦ ૩
ભટ્ટાચારિજ પાસ, ભણે શિષ્ય સાતસેં હો લાલ, ભણે૦
મીમાંસાદિ અભ્યાસ, કરે વિચારસ્યું હો લાલ, કરે૦

---

૪ પદ્મસિંહ. ૫ કરતાં. ૬ ગુરુનઈ. ૭ પ્રગટે. ૮ જગમાં.

તે પાસિ જસ આપ, ભણે પ્રકરણ ઘણાં હો લાલ, ભણે૦
ન્યાય મીમાંસાલાપ, સુગત જૈમિનિતણાં હો લાલ, સુગત૦ ૪

વૈશેષિક સિદ્ધાંત, ભણ્યાં ચિંતામણિ હો લાલ, ભણ્યાં૦
વાદિ–ઘટા દુરદાંત, વિબુધ–ચૂડામણી હો લાલ, વિબુધ૦
સાંખ્ય પ્રભાકર ભટ્ટ, મતાંતર સૂત્રણા હો લાલ, મતાંતર૦
ધારે મહા દુરઘટ્ટ, જિનાગમ–મંત્રણા હો લાલ, જિનાગમ૦ ૫

પંડિતને દે આપ, રૂપૈયો દિન પ્રતિ હો લાલ, રૂપૈયો૦
પઠન મહારસ વ્યાપ, ભણે જસ શુભમતિ હો લાલ, ભણે૦
તીન વરસ લગિ પાઠ, કરે અતિ અભ્યસી હો લાલ, કરે૦
સંન્યાસી કરિ ઠાઠ, આયો એહવે ધસી હો લાલ, આયો૦ ૬

તેહસું માંડો વાદ, સકલ જન પેખતાં હો લાલ, સકલ૦
નાઠો તજિ ઉન્માદ, સંન્યાસી દેખતાં હો લાલ, સંન્યાસી૦
પંચશબદ–નીશાણ, ધુરંતિ ઇજતિ હો લાલ, ધુરંતિ૦
આવ્યા જસ બુધ–રાણ, નિજાવાસિં તિતિં હો લાલ, નિજા૦ ૭

વારાણસી શ્રીપાસ, તણી કીધી થુઈ હો લાલ, તણી૦
ન્યાયવિશારદ તાસ, મહાકીરતિ થઈ હો લાલ, મહા૦
કાશીથી બુધરાય, ત્રિહુ વરષાંતરે હો લાલ, ત્રિહુ૦
તાર્કિક નામ ધરાય, આવ્યા પુર આગરે હો લાલ, આવ્યા૦ ૮

ન્યાયાચાર્યનિં પાસિ, બુધ વલિ આગરે હો લાલ, બુધ૦
કીધો શાસ્ત્ર–અભ્યાસ, વિશેષથી આદરે હો લાલ, વિશેષથી૦
ચ્યાર વરસ પર્યંત, રહી અવગાહિયાં હો લાલ, રહી૦
કર્કશ તર્ક સિદ્ધાંત, પ્રમાણ પ્રવાહિયાં હો લાલ, પ્રમાણ૦ ૯

આગરાઈ સંઘ સાર, રૂપૈયા સાંતસે હો લાલ, રૂપૈયા૦
મૂકે કરિ મનુહાર, આગે જસને રસે હો લાલ, આગે૦
પાઠાં પુસ્તક તાસ, કરાય ઉમંગસ્યું હો લાલ, કરાય૦
છાત્રોને સવિલાસ, સમાપ્યાં રંગસ્યું હો લાલ, સમાપ્યાં૦ ૧૦

દુર્દમ વાદી–વાદ, પરિ પરિ જીપતા હો લાલ, પરિ૦
આવ્યા અહમદાવાદ, વિદ્યાઈ દીપતા હો લાલ, વિદ્યાઈ૦
ઇણિ પરિ સુજસની વેલિ, સદા ભણસ્યે જિકે હો લાલ, સદા૦
કાંતિ મહારંગ રેલિ, સહી લહિસ્યે તિકે હો લાલ, સહી૦ ૧૧

[ઢાળ : ૩]

[ખંભાયતી—ચાલો સહેલી વાંદ વિલોક્યા જી—એ દેશી.]

કાશીથી પાછા ધારે શ્રીગુરુજી ઇહાં જી, જીતી દિશિ દિશિ વાદ;
ન્યાયવિશારદ બિરુદ ધરે વડા જી, આગે તૂર-નિનાદ. ૧

ચાલો સહેલી રે! સુગુરુને વાંદવા જી, ઇમ કહે ગોરી વેણ;
શાસનદીપક શ્રીપંડિતવરુ જી, જોવા તરસે નેણ. ચાલો૦ ૨

ભટ-ચટ-વાદી વિબુધે વીંટિઓ જી, તારાએ જિમ ચંદ;
ભવિક ચકોર ઉલ્લાસન દીપતો જી, વાદિ-ગરુડ ગોવિંદ. ચાલો૦ ૩

યાચક-ચારણ-ગણિ સલહીજતા જી, વીંટ્યા સંઘ સમથ્થ;
નાગપુરીય-સરાહે પધારિયા જી, લેતા અરથ ઉદથ્થ. ચાલો૦ ૪

કીરતિ પસરી દિશિ દિશિ ઉજલી જી, વિબુધતણી અસમાન;
રાજસભામાં કરતાં વર્ણના જી, નિસુણ્યું મહબતખાન. ચાલો૦ ૫

ગુજ્જરપતિને હૂંસ હુઈ ખરી જી, જોવા વિદ્યાવાન;
તાસ કથનથી જસ સાથે વલીજી, અષ્ટાદશ અવધાન. ચાલો૦ ૬

પેખી જ્ઞાની ખાન ખુશી થયા જી, બુદ્ધિ વખાણે નિખાપ;
આડંબરસ્યું વાજિત્ર વાજતે જી, આવે થાનિક આપ. ચાલો૦ ૭

શ્રીજિનશાસન ઉન્નતિ તાં થઈ જી, વાધી તપ-ગચ્છ-શોભ;
ગચ્છ ચોરાસીમાં સહુ ઇમ કહે જી, એ પંડિત અક્ષોભ. ચાલો૦ ૮

સંઘ સકલ મિલિ શ્રીવિજયદેવને જી, અરજ કરે કર જોડી;
'બહુશ્રુત' એ લાયક વાચક પદિ જી, કુણ કરે એહની હોડિ? ચાલો૦ ૯

ગચ્છપતિ લાયક એહવું જાણિને જી, ધારે મનમાં આપ;
પંડિતજી થાનક-તપ વિધિસ્યું આદરે જી, છેદણ ભવ-સંતાપ. ચાલો૦ ૧૦

બીના* મારગ શુદ્ધ સંવેગને જી, ચાહે સંયમ ચોખ (ખ);
જયસોમાદિક પંડિત-મંડલી જી, સેવે ચરણ અદોષ. ચાલો૦ ૧૧

ઓલી તપ આરંભ્યું વિધિથકી જી, તસ ફલ કર-તલિ કીધ;
વાચક-પદવી સત્તરઅઢારમાં જી, શ્રીવિજયપ્રભ દીધ. ચાલો૦ ૧૨

વાચક જસ-નામી જગમાં એ જયો જી, સુરગુરુનો અવતાર;
'સુજસવેલિ' ઇમ સુણતાં સંપજે જી, કાંતિ સદા જયકાર. ચાલો૦ ૧૩

[ઢાલ : ૪]

[આજ અમારે આંગણિયેં–એ દેશી.]

'શ્રીયશોવિજય' વાચક તણા, હું તો ન લહું ગુણ–વિસ્તારો રે;
ગંગાજલ–કણિકાથકી, એહના અધિક અછેં ઉપગારો રે. શ્રી૦ ૧

વચન–રચન સ્યાદ્વાદનાં, નય–નિગમ ગંભીરો રે;
ઉપનિષદા જિમ વેદની, જસ કઠિન લહેં કોઈ ધીરો રે. શ્રી૦ ૨

શીતલ પરમાનંદિની, શુચિ વિમલ–સ્વરૂપા સાચી રે;
જેહની રચના–ચંદ્રિકા, રસિયા જણ સેવેં રાચી રે. શ્રી૦ ૩

લઘુબાંધવ હરિભદ્રનો, કલિયુગમાં એ થયો બીજો રે;
છતા યથારથ ગુણ સુણી, કવિયણ બુધ કો મત ખીજો રે. શ્રી૦ ૪

સતરત્રયાલિં ચોમાસું રહ્યા, પાઠક નગર ડભોઈ રે;
તિહાં સુરપદવી અણુસરી, અણુસણિ કરિ પાતક ધોઈ રે. શ્રી૦ ૫

સીત–તલાઈ પાખતી, તિહાં થૂભ અછેં સસનૂરો રે;
તેમાહિંથી ધ્વનિ ન્યાયની, પ્રગટેં નિજ દિવસિં પડૂરો રે. શ્રી૦ ૬

સંવેગી શિર–સેહરો, ગુરુ ગ્યાન–રયણનો દરિયો રે;
પરમત તિમિર ઉછેદિવા, એ તો બાલારુણ દિનકરિયો રે. શ્રી૦ ૭

શ્રીપાટણના સંઘનો લહી, અતિ આગ્રહ સુવિશેષિં રે;
સોભાવી ગુણ–ફૂલડિં, ઇમ 'સુજસવેલિ' મ્હે લેષિ (ખિ) રે. શ્રી૦ ૮

ઉત્તમ–ગુણ ઉદ્‌ભાવતાં, મ્હેં પાવન કીધી જીહા રે;
'કાંતિ' કહે જસ–વેલડી, સુણતાં હુઈ ધન ધન દીહા રે. શ્રી૦ ૯

*　　*　　*

इति श्रीमन्महोपाध्यायश्रीयशोविजयगणिपरिचये 'सुजसवेलि' नामा भासः संपूर्णः ॥

[૩–૧૪ શ્રીશાંતિસાગરજી *ભંડારની પ્રતિ]

★

* આ પ્રતિ અમદાવાદના શ્રીશાન્તિસાગરજીના ભંડારમાં તથા શ્રીવીરવિજયજીના ભંડારમાં હતી. હાલમાં [વિ. સં. ૨૦૧૨માં] વીરવિજયજીના ભંડારમાં ન હોવાનું જાણવા મળ્યું છે. સં.

સુજસવેલીનો સાર

[ઢાળ : પહેલી]

[સૂચના- નીચેના અનુવાદની મહત્ત્વની બાબતોનાં સ્પષ્ટીકરણ માટે યથોચિત ટિપ્પણો આપ્યાં છે તે જોવાં.]

સરસ્વતી[1] દેવીને પ્રણામ કરી, સદ્‌ગુરુની સત્કૃપા પામી [2]શ્રીયશોવિજય વાચકના ગુણસમુદાયનું ગાન કરીશું. હે ગુણવંતા મુનિવર શ્રીયશોવિજયજી! તમારા જ્ઞાનપ્રકાશને ધન્ય છે. (૧)

નિશ્ચયે આપનું દેવમણિ–ચિંતામણિ જેવું (નિર્મળ) શ્રુત–શાસ્ત્ર છે, વાદીઓનાં વચનરૂપી કસોટીએ ચઢેલું છે, તેનો અભ્યાસ પંડિતજનો [3]બોધિ એટલે સમ્યક્ત્વ (સાચી શ્રદ્ધા)ની વૃદ્ધિ કરવા માટે કરે છે. (૨)

સકલ મુનીશ્વરોમાં શિરોમણિ, [4]આગમ–સિદ્ધાન્તોના અનુપમ જ્ઞાતા, [5]કુમતોના ઉત્થાપક, અને વાચકો (ઉપાધ્યાયો)ના કુળમાં સૂર્ય જેવા આપ જયવંતા વર્તો છો. (૩)

પૂર્વે પ્રભવસ્વામી આદિ છ [6]"શ્રુતકેવળી" થયા, તેવી રીતે કલિકાળમાં જોઈએ તો આ શ્રીયશોવિજય પણ તેવી રીતે (વિશિષ્ટ) શ્રુતધર વર્તે છે. (૪)

---

૧. સુંદર યશવાળા યશોવિજયજીની ગુણરૂપી લતાનાં વર્ણન કરનારી હોવાથી આ કૃતિનું નામ કર્તાએ 'સુજસવેલી' રાખ્યું છે.

૨. શ્રીયશોવિજયજી, તે જગદ્‌ગુરુ શ્રીહીરસૂરિજીના શિષ્ય ઉપાધ્યાય શ્રીકલ્યાણવિજયજી, તેમના શિષ્ય શ્રીલાભવિજયજી ગણિ હતા, અને તેમના શિષ્ય શ્રીનયવિજયજીના શિષ્ય તરીકે હતા.

૩. એમની સંસ્કૃત-પ્રાકૃત ગુજરાતી અને મિશ્ર ભાષાઓની કૃતિઓ એવી છે કે નાસ્તિકોને આસ્તિક બનાવે, અધર્મીને ધર્મી બનાવે, અશ્રદ્ધાળુને શ્રદ્ધાળુ બનાવે ને શ્રદ્ધા હોય તો શ્રદ્ધાનાં મૂળ મજબૂત કરે; અર્થાત્ સત્‌ અસત્ માર્ગનો સ્પષ્ટ વિવેક કરાવી આપે છે.

૪. તેઓશ્રી ૪૫ આગમોનું પાન કરી ગયા હતા. જૈનધર્મના સિદ્ધાંતોને 'આગમ' શબ્દથી ઓળખાવવામાં આવે છે.

૫. મૂર્તિ અને મૂર્તિપૂજા વિરોધી મતો, ક્રિયાલોપક બનારસીદાસ પ્રમુખ શુષ્ક વિદ્વાનોના તેમજ અન્ય અનેક જૂઠા કુમતોને શાસ્ત્ર અને તર્કબળદ્વારા ઉખેડી નાખનારા હતા.

૬. '[illegible] प्रभवः प्रभुः । शय्यंभवो यशोभद्रः सम्भूतिविजयस्ततः ॥ भद्रबाहुः स्थूलभद्रः श्रुतकेवलिनो हि षट् ।' આજથી બે હજાર વર્ષ પૂર્વે પ્રભવસ્વામી આદિ છ 'શ્રુતકેવળી' થયા. ચૌદ પૂર્વના જ્ઞાનવાળા

વળી, તેઓશ્રી જૈનશાસનના યશની વૃદ્ધિ કરનાર, સ્વસમય[7] એટલે પોતાના સિદ્ધાંતોના અને [8]અન્ય મતો ને શાસ્ત્રોના દક્ષ–જ્ઞાતા હતા. તે ઉપરાંત તેમનામાં બીજા સેંકડો–લાખો અનોખા સદ્ગુણો હતા કે એથી તેમને કોઇ જ પહોંચી શકે તેમ ન હતું. (૫)

તેઓ [9]કૂર્ચાલી શારદા (મૂછાળી–સરસ્વતી) ના બિરુદથી સારી રીતે જાણીતા થયા હતા અને જેણે બાલપણમાં લીલામાત્રથી (અલ્પ પ્રયાસથી) દેવતાના ગુરુ બૃહસ્પતિ જેવાને પણ જીતી લીધેલા હતા. (૬)

ગૂર્જર–ભૂમિના શણગાર રૂપ [10]'કનોડુ' નામે ગામ છે, ત્યાં 'નારાયણ' એવા નામવાળો વ્યવહારિયો (વણિક) વસતો હતો. (૭)

તેને [11]'સોભાગદે' નામની ગૃહિણી હતી, અને તેઓને ગુણવંત પુત્ર નામે 'જસવંત' કુમાર હતો, જે પુત્ર ઉમ્મરમાં લઘુ હોવા છતાં બુદ્ધિમાં અગ્રણી–મહાન હતો. (૮)

વ્યક્તિઓને 'શ્રુતકેવળી' ની ઉપમા આપવામાં આવતી હતી. કારણ કે તેઓ સંપૂર્ણ શાસ્ત્ર–સિદ્ધાંતોને જાણવાવાળા હોય છે. સર્વજ્ઞ ન હોવા છતાં સર્વજ્ઞના જેવી જ પદાર્થોની વ્યાખ્યાને કહેનારા હોય છે. આવા શ્રુતકેવલીની યાદ શ્રીયશોવિજયજીએ પોતાના જ્ઞાનદ્વારા કરાવી. એટલે કવિનો કહેવાનો આશય એવો છે કે સેંકડો વર્ષોમાં (અથવા ૭ શ્રુતકેવલીઓ પછી) આવો મહાજ્ઞાની પુરુષ થયો નથી આ શ્રુતકેવલીનું આરોપણ એકલા કવિએ જ કર્યું છે એમ નહીં, પરંતુ એમના જ સમકાલિક અને પરિચિત થયેલા શ્રીમાનવિજયજી ગણિએ પોતાનો સં. ૧૭૩૮માં રચી પૂર્ણ કરેલો 'ધર્મસંગ્રહ' નામનો ગ્રન્થ કે જે ખુદ શ્રીયશોવિજયજીએ સંશોધ્યો હતો, તેની પ્રશસ્તિમાં જણાવે છે કેઃ—

> तर्क-प्रमाण-नयमुख्यविवेचनेन, प्रोद्बोधितादिममुनिश्रुतकेवलित्वाः ।
> चक्रुर्यशोविजयवाचकराजिमुख्याः, ग्रन्थेऽत्र मय्युपकृतिं परिशोधनाद्यैः ।

—તર્ક, પ્રમાણ અને નયની પ્રધાનતાવાળા વિવેચન વડે પ્રાચીન મુનિઓનું શ્રુતકેવલીપણું પ્રગટ કરી બતાવ્યું છે (એટલે કે પોતાની જ્ઞાનપ્રતિભાથી બતાવી આપ્યું છે કે અગાઉના શ્રુતકેવલીઓ આવા અગાધ જ્ઞાની હતા) એવા, અને વાચકસમૂહમાં મુખ્ય શ્રીયશોવિજયજીએ આ ગ્રંથમાં પરિશોધનાદિ કરવા વડે મારા પર ઉપકાર કરેલો છે. બીજી રીતે ઘટાવીએ તો અન્તિમ શ્રુતકેવળીની માફક આ 'અન્તિમ શ્રુતપારગામી' હતા, ત્યાર પછી આવો પુરુષ પાક્યો નથી.

૭. 'સમય' એ સંસ્કૃત શબ્દ છે તેનો ગુજરાતી અર્થ સિદ્ધાન્ત–શાસ્ત્ર થાય છે.

૮. સાંખ્ય, યોગ, વૈશેષિક, ન્યાય, વેદાન્ત, બૌદ્ધ વગેરે.

૯. જાણે સાક્ષાત્ સરસ્વતી જ મૂછધારી શ્રીયશોવિજયરૂપે રહી છે કે શું?

૧૦. કન્હોડુ–એ કલોલ પાસે નહિ પણ કુણગેરથી ૧૨ ગાઉ અને ધીણોજથી અમુક ગાઉ ઉપર છે; શ્રીયુત મો. દેસાઈએ કલોલ પાસે લખેલું છે તે બરાબર નથી.

૧૧ સૌભાગ'દે'–દેવીના અર્થમાં 'દે' વપરાયો છે.

[12]'કુણગેર'માં ચોમાસું (આષાઢથી કાર્તિક સુધીના ચાર માસ) કરીને સંવત ૧૬૮૮માં પંડિતવર્ય [13]શ્રીનયવિજયજી આનંદપૂર્વક 'કનોડુ' ગામમાં પધાર્યા. (૯)

માતા સોભાગદેએ પુત્ર સાથે ઉલ્લાસથી તે સાધુ પુરુષનાં ચરણોમાં વંદન કર્યું અને સદ્ગુરુના ધર્મોપદેશથી જસવંતકુમારને વૈરાગ્યનો પ્રકાશ થયો. (૧૦)

[14]અણહિલપુર-પાટણ (ગુજરાત-પાટણ)માં જઈ તે જ ગુરુ પાસે જસવંતકુમારે ચારિત્ર (દીક્ષા) લીધું અને તે વખતે [15]'યશોવિજય' એવું નામ સ્થાપન કરવામાં આવ્યું. એટલે હવે તે નામથી ઓળખાવા લાગ્યા. (૧૧)

વળી, બીજા 'પદ્મસિંહ' જેઓ જસવંતકુમારના ભાઈ હતા અને ગુણવંત હતા, તેમને પ્રેરણા કરતાં તે પણ વ્રતવંત થયા એટલે મહાવ્રતો લેવા દ્વારા ચારિત્ર અંગીકાર કર્યું. (તેનું નામ [16]પદ્મવિજય રાખ્યું.) (૧૨)

[17]વડીદીક્ષા માટેનો [18]યોગ-તપ અને [19]દશવૈકાલિકાદિક સૂત્રનો અભ્યાસ કરતાં (યોગ્યતા પ્રાપ્ત થતાં), આ બંને મુનિ-બંધુઓને [20]સં. ૧૬૮૮ની સાલમાં [21]તપાગચ્છના આચાર્ય [22]શ્રીવિજયદેવસૂરિના હસ્તે વડીદીક્ષા આપવામાં આવી. (૧૩)

---

૧૨. આ પાટણની (ધીણોજ દરવાજાના માર્ગે) નજીકમાં જ આવેલું છે. ઐતિહાસિક 'વિજયપ્રશસ્તિ' આદિ સંસ્કૃત ગ્રંથોમાં કુમારગિરિ તરીકે તેનો ઉલ્લેખ મળે છે.

૧૩. જસવંતકુમારના ભાવિ ગુરુ થનાર આ મહાપુરુષ કોના શિષ્ય હતા તે માટે ટિપ્પણી નં. ૨ જુઓ.

૧૪-૧૫. 'અણહિલ' નામના ભરવાડના નામથી ઓળખાતું. વર્તમાનમાં મૂર્તિપૂજક સંપ્રદાયમાં જૈનધર્મની દીક્ષામાં ગૃહસ્થાશ્રમનું નામ બદલી, તેની જન્માદિક રાશિને મળતું કોઈ પણ માંગલિક નામ રાખવાની પ્રથા છે. એથી ગૃહસ્થાશ્રમના નામને મળતું જ નામ પાડવામાં આવ્યું.

૧૬. શ્રીપદ્મવિજયજીનો ઉલ્લેખ 'ન્યાયખંડખાદ્ય'ની પ્રશસ્તિમાં–'પ્રેમ્णां सद्म च यस्य 'पद्मविजयो' जातः सुधीः सोदरः'–એ પંક્તિથી કર્યો છે.

૧૭. જૈનધર્મમાં પ્રથમ લઘુદીક્ષા આપવાનો અને અમુક યોગ્યતા આવ્યા બાદ પુનઃ વડીદીક્ષા આપવાનો વિધિ છે.

૧૮. યોગ-તપ એટલે લઘુદીક્ષા બાદ શ્રુતજ્ઞાન ભણવા અંગે યોગના એક પ્રકારરૂપ તપ અને વિધિ બતાવવામાં આવ્યો છે.

૧૯. એ નામનો સૂત્રગ્રંથ જે દીક્ષા બાદ પ્રારંભમાં જ ભણાવવામાં આવે છે.

૨૦. સં૦ ૧૬૮૮માં વડીદીક્ષા આપવામાં આવી છે એ હિસાબે તેમણે ૮-૧૦ વરસની ઉમ્મરમાં દીક્ષા લીધી હોવી જોઈએ. એથી એમની જન્મસાલનો સમય સં૦ ૧૬૮૦ની આસપાસનો સંભવે છે.

૨૧. જૈન સાધુઓમાં એ નામથી ઓળખાતી–મુખ્ય શાખા.

૨૨. આ આચાર્ય, તપાગચ્છના આચાર્ય શ્રીવિજયહીરસૂરિજીના પટ્ટધર ગચ્છનાયક શ્રીવિજયસેનસૂરિજીના પટ્ટધર હતા, અને તેમને વિ. સં૦ ૧૬૭૧માં ગચ્છાચાર્યનું પદ મળ્યું હતું.

વડીદીક્ષા બાદ શ્રીજશવિજયજીએ ગુરુમુખદ્વારા [૨૩]સામાયિક આદિ (ષડાવશ્યક સૂત્રાદિ) સૂત્ર-જ્ઞાનનો અભ્યાસ કર્યો, જેના પરિણામે જેમ સાકરના દલમાં મીઠાશ વ્યાપીને (અણુએ અણુએ) રહે છે, તેવી રીતે તેમની મતિ [૨૪]શ્રુત-શાસ્ત્ર જ્ઞાનમાં વ્યાપી ગઈ. (૧૪)

સં. ૧૬૯૯માં [૨૫]રાજનગર—અમદાવાદમાં સંઘ સમક્ષ સુજ્ઞાની શ્રીયશોવિજયે આઠ [૨૬]'મહા અવધાન' કર્યાં. (૧૫)

તે વખતે શ્રીસંઘના એક અગ્રણી શાહ [૨૭]'ધનજી સૂરા' હતા તેમણે ગુરુ શ્રીનયવિજયજીને આ પ્રમાણે વિનંતિ કરી કે—"આ [શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ] [૨૮]વિદ્યા-જ્ઞાન મેળવવાનું યોગ્ય પાત્ર છે. એમને (ભણાવવામાં આવે તો) આ [૨૯]બીજા હેમાચાર્ય થાય તેમ છે. (૧૬)

---

૨૩. સામાયિક આદિ આવશ્યક સૂત્રોનો અભ્યાસ શ્રીગુરુમુખદ્વારા ગ્રહણ કર્યો, તે જ્ઞાન ગ્રહણનો 'વિનયાચાર' ધર્મ સૂચિત કરે છે.

૨૪. જૈન તત્ત્વજ્ઞાનની પરિભાષામાં 'શ્રુત' શબ્દ દ્વાદશાંગી વગેરે શાસ્ત્રોના અર્થમાં બહુધા વપરાય છે.

૨૫. 'રાજનગર' એ અમદાવાદનું અપરનામ છે.

૨૬. મહા અવધાન—એટલે ધારણા શક્તિના વિશિષ્ટ પ્રકારના પ્રયોગો. અત્યારે જે પ્રકારનાં અવધાનો થાય છે તેથી આ કોઈ વિશિષ્ટ પ્રકારનાં હોવાં જોઈએ, ને કાં તો ક્રમશઃ આઠ અવધાન કર્યાં એમ નહિ કિન્તુ એક સાથે જ આઠ જણાએ જુદાં જુદાં આઠ કાર્યો એક સાથે જ કરી રહ્યા હોય તે બધાને એકીસાથે જ ધારી લઈને પછી તે ક્યાં ક્યાં થયાં? તે જનતા સમક્ષ કહી બતાવવાં તે. આ તીવ્ર ધારણાશક્તિ વિના કદી બની શકતું નથી.

૨૭. આ ધનજી સૂરા તે અમદાવાદના ઓશવાળવંશના સંઘવી સૂરા અને રતન એ નામના બે ભાઈઓ સં. ૧૬૭૪ પહેલાં વિદ્યમાન હતા. તેમણે સં. ૧૬૮૭ના દુકાળમાં દાનશાળા ખોલી હતી અને શ્રીશત્રુંજયતીર્થનો ઉદ્ધાર તો સંઘે કરાવ્યો હતો.

આ પૈકી સૂરના પુત્રનું નામ ધનજી અને રતનના પુત્રનું નામ પનજી હતું, તે બન્નેએ સમેતશિખરનો પગપાળો યાત્રાસંઘ કાઢી, તેમાં એક લાખ ને એંસી હજારનું ખર્ચ કરી સંઘવી પદવી મેળવી હતી વળી આ ધનજી સૂરાએ શ્રીવિજયદેવસૂરિજીની સાથે વિજયપ્રભસૂરિજી સં. ૧૭૧૧માં અમદાવાદમાં આવ્યા ત્યારે, વિજયપ્રભસૂરિજીનો 'ગણાનુજ્ઞા'નો નંદિમહોત્સવ આઠ હજાર મહામુદ્રા ખરચીને કર્યો હતો. [જે માટે 'જૈન ઐ૦ રાસમાળા' અને 'પ્રાચીન તીર્થમાળા સંગ્રહ' જુઓ.]

૨૮. ધનજી શાહની દીર્ઘદૃષ્ટિ ને ગુણજ્ઞબુદ્ધિએ શ્રીયશોવિજયજીને વિદ્યાના યોગ્ય પાત્ર અને બીજા હેમાચાર્ય તરીકેની જે ભવિષ્યવાણી ઉચ્ચારી તે કેવી સફળ નીવડી તે આપણે આ 'સુ.સં'થી જોઈ શકીશું.

૨૯. કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રીહેમચંદ્રાચાર્ય મહારાજ સાથે શ્રીઉપાધ્યાયજી મહારાજનું અનેક ક્ષેત્રોમાં સામ્ય જોવા મળે છે. જેમ કે—

બંને બાળ દીક્ષિતો હતા, બંનેની માતાઓએ પોતાના પુત્રોને રાજીખુશીથી ધર્મ-શાસનના ચરણે સોંપી દીધા હતા. બંને સરસ્વતીના કૃપાપાત્રો હતા. બંને જૈન-જૈનેતર શાસ્ત્ર-સિદ્ધાન્તોના

આ 'સુજસવેલી' કાવ્યના રચયિતા [૩૪]શ્રીકાન્તિવિજયજી કહે છે કે જ્ઞાની-પુરુષોના ગુણોનું કથન કરતાં મારી જિહ્વા નિર્મલ થઈ અને આ સુજસવેલી કાવ્યને સાંભળતાં સઘળા ગુણોની પુષ્ટિ થાય છે. (૧૯)

[ઢાળ : બીજી]

ગુરુજીનું વચન સાંભળીને ગુણી શ્રાવક શાહ ધનજી સૂરાએ મનના ઉત્સાહપૂર્વક કહ્યું કે, 'રૂપા નાણાંની બે હજાર [૩૫]દીનારનો હું ખર્ચ આપીશ અને પંડિતનો તથાવિધિ-યથાયોગ્ય રીતે વારંવાર સત્કાર પણ કરીશ. (૧)

'માટે મારી એવી ઇચ્છા છે કે તે તરફ જઈને તમે ભણાવો.' આ સાંભળી સૂર્ય જેવા તેજસ્વી ગુરુએ કાશી તરફ વિહાર કર્યો, અને તે શ્રાવકે હુંડી કરી (લખી). તેથી ગુરુરાજે તે શ્રાવકનો ભક્તિગુણ કળી લીધો, અને પાછળથી સહાય અર્થે (નાણાં મળી શકે માટે) તે [૩૬]હુંડીને કાશી મોકલી આપી. (૨)

કાશી દેશની [૩૭]વારાણસી નગરી છે, જે ક્ષેત્રના ગુણ–મહિમાને લક્ષ્યમાં લઈને જ્યાં [૩૮]સરસ્વતીદેવીએ પોતાનો વાસ કર્યો છે. ત્યાં તાર્કિક-કુલમાં સૂર્ય સરખા ષડ્દર્શનના અખંડ રહસ્યને જાણનાર એક ભટ્ટાચાર્ય હતા કે જેની પાસે સાતસો શિષ્યો મીમાંસા આદિ દર્શનોનો અભ્યાસ વિદ્યાના રસપૂર્વક કરતા હતા. તેમની જ પાસે શ્રીયશોવિજયજી પોતે ઘણાં પ્રકરણો ભણવા લાગ્યા. [૩૯]ન્યાય, મીમાંસાવાદ, સુગત (બૌદ્ધ), જૈમિનિ,

---

૩૪. સુજસવેલીના કર્તા શ્રીકાંતિવિજયજી એ કયા છે? તે બાબતમાં તો શ્રીમોહનલાલ દ. દેસાઈ તેમને શ્રીકીર્તિવિજયજી ઉપાધ્યાયના શિષ્ય તરીકે ને ઉપાધ્યાય શ્રીવિનયવિજયજીના ગુરુભ્રાતા તરીકે હોવાની સંભવના કરે છે. પરંતુ એ સમયમાં એક બીજા કાંતિવિજયજી પણ થયા છે. એમાંથી કયા લેવા? તેનો ચોક્કસ નિર્ણય હજુ કરી શકાયો નથી.

૩૫. એક દીનારના અઢી રૂપિયા થતા હતા. આ નાણું પૂર્વ દેશનું હતું. એમ 'બૃહત્કલ્પસૂત્ર'માં જણાવ્યું છે. 'દીનાર' સુવર્ણ અને રજત–એમ બે પ્રકારનાં હતાં. સુવર્ણની કિંમત રજત કરતાં વધુ હતી.

૩૬. જૂના વખતમાં હુંડી લખવામાં આવતી, અત્યારે પણ હુંડીનો રિવાજ છે. અત્યારના સુધરેલા યુગમાં તેનું સ્થાન બેંકના 'ચેક'એ લીધું છે.

૩૭. વરણા (વારણા?) અને અસી એ બન્ને નદીના સંગમ પર વસેલી નગરી હોવાથી 'વારાણસી' (પ્રાકૃત નામ વાણારસી) છે ને તે ઉપરથી અત્યારે લોકમાં 'બનારસ' નામ પ્રચલિત થયું છે.

૩૮. કહેવાય છે કે સરસ્વતીનું પ્રથમ નિવાસ સ્થાન 'કાશ્મીર' હતું ને ત્યાર પછી કાશી થયું ને તે અત્યારે પણ ચાલુ જ છે.

૩૯. ન્યાયમાં પ્રથમ પ્રાચીન ન્યાયનું જ અસ્તિત્વ હતું, પરંતુ વિક્રમની દશમી સદી પછી ભારતમાં નવ્ય ન્યાયની નવ્ય દિશા ખૂલી, તેનું અધ્યયન અદ્યાપિ પર્યંત ચાલુ રહ્યું છે. પ્રાચીન ન્યાય અને નવ્યન્યાય બન્ને વચ્ચેનો ભેદ–પદ્ધતિ–શૈલી અને તેનું સ્વરૂપ સમજવા જેવું છે. બુદ્ધિમાનોએ 'ગોદરેજની ચાવી' [માસ્ટર કી] જેવા સર્વદર્શનોના આશયોને ખોલી આપનાર નવ્યન્યાયનું અધ્યયન અવશ્ય કરવું જોઈએ.

વૈશેષિક આદિના સિદ્ધાન્તો સાથે [40]ચિંતામણિ જેવા ઉત્કટ ન્યાય ગ્રન્થોનો પણ અભ્યાસ કર્યો. જેથી વાદીઓના સમૂહથી ન જીતી શકાય તેવા અને પંડિતોમાં શિરોમણિ થયા. તેમણે સાંખ્ય અને [41]પ્રભાકર ભટ્ટ [પૂર્વમીમાંસા]ના મહાદુર્ગમ (સૂત્રના) મત-મતાંતરોની રચનાનો અભ્યાસ કરી જિનાગમ-સિદ્ધાંતો સાથેનો સમન્વય પણ કરી લીધો. (૩-૪-૫)

અધ્યાપક પંડિતજીને રોજનો રૂપિયો અપાતો, એક બુદ્ધિશાળી શ્રીયશોવિજયજીને અધ્યયન કરવામાં મહારસ લાગ્યો હતો, તેઓશ્રીએ [42]ત્રણ વર્ષ સુધી સતત ને ખૂબ [43]પરિશ્રમપૂર્વક અભ્યાસ કર્યો. એવામાં ત્યાં મોટા ઠાઠથી ધસી આવેલા એક સંન્યાસી સાથે, સર્વજન-સમક્ષ શ્રીયશોવિજયજીએ વાદ (શાસ્ત્રાર્થ) શરૂ કર્યો. તે સંન્યાસી શ્રીયશોવિજયજીની પ્રચંડ વાદ-શક્તિ દેખતાં ઉન્માદ (ગર્વ) તજી પલાયન થઈ ગયો. પછી જેમની આગળ [44]છત્ર-નિશાન સૂચવતાં પંચ શબ્દ-પાંચ પ્રકારનાં વાજિંત્રો વાગી રહ્યાં છે એવા શ્રીયશોવિજયજી પોતાના નિવાસે પધાર્યા,—અર્થાત્ તેમને વાજતે-ગાજતે ભારે સત્કાર સાથે પોતાના સ્થાને લઈ જવામાં આવ્યા. (૬-૭)

ત્યાં આવીને [45]વારાણસી-શ્રીપાર્શ્વનાથની સ્તુતિ કરી અને તેઓની [46]ન્યાય-

---

૪૦. તત્ત્વ-ચિન્તામણિ એ ન્યાયશાસ્ત્રના અતિમહત્ત્વનો પ્રાચીન ગ્રંથ છે.

૪૧. મીમાંસાના બે પ્રકાર છે. (૧) પૂર્વ મીમાંસા (૨) ઉત્તર મીમાંસા. પ્રભાકર ભટ્ટ એ પૂર્વ મીમાંસાના સમર્થક પ્રખર વિદ્વાન હતા.

૪૨. કિંવદન્તીઓમાં ૧૦ કે ૧૨ વર્ષ રહ્યાની વાતો જણાય છે પણ ઉપરનું કથન એમ સૂચવે છે કે તેઓ કાશીમાં ત્રણ વર્ષ જ રહ્યા હતા.

૪૩. આ શ્રમના જ પરિણામે ષડ્દર્શનમાં નિષ્ણાત થયા. સમન્વય શક્તિ સૂઝી કળાએ ખીલી ઊઠી અને તેથી દર્શનોનો સમ્યગ્ દૃષ્ટિથી વિવેચન કરવાની પ્રતિભા પણ ઉત્પન્ન થઈ અને નવ્યન્યાયના આવશ્યક અભ્યાસના કારણે જૈન દાર્શનિક સાહિત્યમાં-નવ્ય-ન્યાયની શૈલીને, તર્ક અને વિચારનું માધ્યમ—વાહન બનાવીને પદાર્થનિર્ણય કરવાનો અભૂતપૂર્વ ચમત્કાર સર્જ્યો ને નવ્ય-ન્યાયના અન્ય ભારતીય સાહિત્યકારોની હરોળમાં જૈન સાહિત્યે પોતાનું સમર્થ સ્થાન જમાવ્યું.

૪૪. કાશી જેવા ધુરંધરના ક્ષેત્રમાં જઈને અજાણ્યા વિદ્વાન ગણાતા પંડિતના પડકારને ઝીલવો ને ધુરંધર વિદ્વાનોની સભા વચ્ચે નિર્ભયપણે વાદ કરી જયપતાકા મેળવવી એ કંઈ નાનીસૂની ઘટના નથી. એક ગુજરાતી કાશીમાં ભણી અને વળી તે કાશીના કાશીમાં જ વિજય મેળવે, એ પ્રત્યેક ગુજરાતી માટે ખૂબ જ ગૌરવ લેવા જેવો બનાવ છે. ને ભારતવર્ષના પંડિતો સમક્ષ જીતીને તાજેતરમાં જ તૈયાર થયેલો એક જૈન શ્રમણ, આવો ભવ્ય વિજયવાવટો ફરકાવે એ જૈન સંઘ માટે ભારે મગરૂરી લેવા જેવી ને સુવર્ણાક્ષરે નોંધ કરવા જેવી ઘટના છે.

૪૫. પ્રાચીનકાળમાં "વારાણસી પાર્શ્વનાથ" એ એક તીર્થરૂપ સ્થાન હતું ને આજે પણ છે. વારાણસી(કાશી) તે ૨૩ મા તીર્થંકર શ્રીપાર્શ્વનાથની જન્મ વગેરે કલ્યાણકોવાળી ભૂમિ હોવાથી તે જૈનોનું તીર્થક્ષેત્ર મનાયું.

૪૬. અહીં કવિએ 'ન્યાયવિશારદ' બિરુદનો ઉલ્લેખ કર્યો છે પરંતુ પંડિતવર્ગ ભેગા થઈને

વિશારદ' તરીકેની મહાકીર્તિ થઈ. આ પ્રમાણે ત્રણ વર્ષ સુધી કાશીમાં રહીને [46]'તાર્કિક' નામ ધારણ કરીને પંડિતરાજ શ્રીયશોવિજય કાશીથી આગ્રા નગરે પધાર્યા. (૮)

ત્યાં [47]આગ્રા શહેરમાં પણ [48]ચાર વર્ષ પર્યન્ત રહીને વિદ્વાન ન્યાયાચાર્ય પાસે આ પંડિત શ્રીયશોવિજયજીએ વિશેષ આદરપૂર્વક એટલે અતિસૂક્ષ્મતા ને ઊંડાણથી કઠિન-કર્કશ અને પ્રમાણોથી અતિભરપૂર તર્કના સિદ્ધાન્તોને અવગાહી લીધા (૯)

શ્રીયશોવિજયજીની વિદ્વત્તાથી આકર્ષાઈ આગ્રાના ભક્તિવંત શ્રીસંઘે તેમની આગળ આગ્રહપૂર્વક [48]સાતસો રૂપિયા ભેટ ધર્યા, તેનો ઉપયોગ ઉમંગથી પુસ્તકો લેવા-લખાવવામાં અને પઠાં (પાટલીઓ આદિ) બનાવવામાં કર્યો અને પછી તે વસ્તુઓ આનંદ ને ઉત્સાહથી વિદ્યાભ્યાસીઓને સમર્પણ કરવામાં આવી. (૧૦)

ત્યાંથી વિહાર કરીને સ્થળે સ્થળે [49]દુર્દમ વાદીઓની સાથે જાતજાતના વાદો કરતા, તેમને પરાજિત કરતા, વિદ્યાઓથી દીપતા શ્રીયશોવિજયજી અમદાવાદ નગર(ગુજરાત)માં પધાર્યા.

આ પ્રમાણે આ સુયશની વેલીને જે સદા ભણશે, તે મહા આનંદના પૂરને પ્રાપ્ત કરશે—એમ શ્રી કાંતિવિજયજી કહે છે. (૧૧)

પદવી પ્રદાન કરી હતી એમ સ્પષ્ટ શબ્દોમાં જણાવ્યું નથી, પરંતુ ધ્વનિ એજ વ્યક્ત થાય છે કે તેમને તે પદ અર્પણ કરવામાં આવ્યું હતું. અને એ તો નિશ્ચિત વાત છે કે, સંન્યાસી સાથેના વાદથી કાશીના વિદ્વાનો મંત્રમુગ્ધ બન્યા હતા અને તેમણે એકત્રિત થઈને પ્રસ્તુત બિરુદથી નવાજ્યા હતા. જે વાત તેઓશ્રીએ જ સ્વકૃત 'જૈન તર્કભાષા'ની 'पूर्वं न्यायविशारदत्वबिरुदं काश्यां प्रदत्तं बुधैः।' આ પ્રશસ્તિની પંક્તિથી સ્પષ્ટ જણાવી છે; તદુપરાંત દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ, શ્રીસીમંધર સ્તવન, સામાચારી, ઐન્દ્રચતુર્વિંશતિકા, મહાવીર સ્તવન, ન્યાયખંડનખાદ્ય-ટીકા, વગેરેની પ્રશસ્તિઓમાં તેમ જ શ્રીજમ્બૂસ્વામિ રાસ વગેરેમાં પણ જણાવી છે. એટલું જ નહિ પણ તેમના શિષ્ય શ્રીતત્ત્વવિજયજીએ સ્વકૃત 'અમરદત્ત મિત્રાનંદ'ના રાસમાં પણ 'જગમાંહિં જેણઈ લહ્યું રે લાલ, 'ન્યાયવિશારદ' બિરુદ રે, જેણઈ કીયા વાદી સમ-રદ રે' વગેરે ઉલ્લેખો અને અનેક પ્રમાણોથી તે વાત સુનિશ્ચિત છે.

૪૬. આજે પણ ઉપાધ્યાયજીને 'તાર્કિક' તરીકે જ ઓળખાવવામાં આવે છે.

૪૭. આગ્રા અને કાશીમાં કુલ [૩ + ૪ =] ૭ વર્ષ પસાર કર્યાં છે, એટલે લગભગ સં. ૧૭૦૭ સુધીનો સમય કાશી-આગ્રામાં પસાર થયો અને ત્યાર પછી ગુજરાત તરફ પ્રયાણ કર્યાનું સંભવે છે.

૪૮. આ પ્રમાણે સત્કાર કરીને આગ્રાના ભક્તિવંત શ્રીસંઘે પોતાના વિનય, વિવેક અને જ્ઞાનભક્તિનું અન્ય સંઘોને માટે અનુકરણીય દૃષ્ટાંત પૂરું પાડ્યું છે. અને તે રૂપિયાઓનો ઉપયોગ વિદ્યાર્થીઓને જ્ઞાનોપકરણ માટે દાન કરવામાં કરાવેલો એ ઉપાધ્યાયજીના-છાત્રપ્રેમ, જ્ઞાનોત્તેજન, વિશાળ હૃદય અને નિઃસ્પૃહપણાનું જ્વલંત દૃષ્ટાંત પૂરું પાડે છે.

૪૯. એક વિજયી સેનાપતિ ઠેર ઠેર વિજય મેળવતો પોતાની રાજધાનીમાં પાછો ફરે અને રાજધાનીના સમસ્ત નાગરિકો તેનું શાનદાર સ્વાગત કરે એવું જ ચિત્ર ઉપરની પંક્તિઓ આપણી સામે ખડું કરે છે. કવિ કહે છે કે દુર્દમ્ય એટલે મહાધુરંધર પંડિતો સાથે ઠેર ઠેર વાદો કરી, વિજયો મેળવી, પોતાની જન્મભોમ તરફ પાછા ફર્યા અને રાજનગરની સમસ્ત પ્રજાએ તેઓશ્રીનો શાનદાર ને બાદશાહી સત્કાર કર્યો જે વર્ણન કવિ થોડા શબ્દોમાં પણ યથાર્થ રીતે હવે પછીની ત્રીજી ઢાળમાં કહી રહ્યા છે.

[ઢાળ : ત્રીજી]

[નોંધ:- વિદ્યાધામ કાશી જેવા દૂરના પ્રદેશમાંથી વિજયી બની અમદાવાદ પધારતાં અમદાવાદની જનતાએ તેમનું ભાવભીનું સ્વાગત કર્યું તે વાતને કવિ આ ઢાળમાં વર્ણવે છે.]

અમદાવાદની નારીઓ આ પ્રમાણે વચનો ઉચ્ચારી રહી છે કે કાશીથી ગુરુદેવ યશોવિજયજી દશે દિશામાં વાદમાં વિજયો મેળવીને, 'ન્યાયવિશારદ' જેવી મોટી પદવીથી અલંકૃત થઈને, વળી જેમની આગળ વાજિંત્રો જોરથી વાગી રહ્યાં છે તે અહીં (અર્થાત્ વાજતે-ગાજતે ધામધૂમથી) પધાર્યા છે માટે હે સાહેલીઓ ! સદ્ગુરુદેવને વાંદવા ચાલો.

આ શાસનદીપક પંડિતવર્ય છે, એમને જોવાને માટે અમારાં નેત્રો તલસી રહ્યાં છે. (૧-૨)

તારાઓ વડે જેમ ચંદ્ર વીંટાયેલો છે, તેવી રીતે ભટ્ટો, છાત્રો, વાદીઓ અને પંડિતજનો વડે તેઓશ્રી પરિવર્યાં હતા. અર્થાત્ તેમના સ્વાગતમાં તેઓ સાથે હતા. શ્રીયશોવિજયજી ભવ્ય જીવોરૂપી ચકોરોને આનંદ આપવામાં ચંદ્ર સરખા ને વાદીરૂપ ગરુડોને વશ કરવામાં વિષ્ણુ સરખા હતા. (૩)

યાચકો ને ચારણોના સમુદાયથી સ્તુતિ-પ્રશંસા કરાતા, ઉત્તમ અર્ઘ (પૂજન)ને ગ્રહણ કરતા સકળ સંઘ-સમુદાયથી વીંટાયેલા [અમદાવાદની રતનપોળના નાકે આવેલી] નાગપુરીય સરાહ (ઢાળમાં—નાગોરી સરાઇ છે) તેમાં પધાર્યાં. (૪)

આથી આ અજોડ પંડિતની ઉજ્જ્વલ કીર્તિ પ્રત્યેક દિશામાં ફેલાઈ ગઈ અને (અમદાવાદની) [50]રાજસભામાં તેમની થતી પ્રશંસાને મહોબતખાને સાંભળી તેથી ગૂર્જર-પતિ (સૂબા) [51]મહોબતખાનને પંડિતવર્ય શ્રીયશોવિજયજીને જોવાની તીવ્ર હોંશ જાગી અને સૂબાખાનની વિનંતિથી (બુદ્ધિની મહત્તાનાં સૂચક) તેમણે [52] 'અઢાર અવધાન' સાધી બતાવ્યાં. (૫-૬)

---

૫૦. 'વિદ્વાન્ સર્વત્ર પૂજ્યતે'ની ઉક્તિ અહીં ચરિતાર્થ થતી જોવામાં આવે છે.

૫૧. ઔરંગઝેબે ગુજરાતના સૂબા તરીકે મહોબતખાનની સને ૧૬૬૨ માં એટલે વિ. સં. ૧૭૧૮ માં નિમણૂક કરી અને તેની સૂબાગીરી સને ૧૬૬૮ સુધી સં. ૧૭૨૪ સુધી કાયમ રહી. એવું મુંબઈ ગેઝેટિયર [વૉ. ૧, ભાગ ૧]માં ગુજરાતના ઇતિહાસમાં જણાવ્યું છે. એમ શ્રી મો. દ. દેસાઈનું કહેવું છે. જો કે આ બાબત વધુ સંશોધન માગે છે.

૫૨. પ્રથમ આઠ ને બીજીવાર અઢાર અવધાન કર્યાં છે. અવધાનકારક આદ્યનામ તરીકેનો ઉલ્લેખ આપણને સહસ્રાવધાની શ્રીમુનિસુંદરસૂરિજીનો મળે છે, જે ૧૫ મી સદીમાં જન્મ્યા હતા. તે પહેલાંના અવધાનકારોની નોંધો ઉપલબ્ધ થઈ નથી. ત્યાર પછી જગદ્ગુરુ શ્રીહીરસૂરીશ્વરજીની શિષ્યપરંપરામાં ૧૦૮ વર્ષોના અવધાનકાર મુનિઓની સારી સંખ્યા ઉપલબ્ધ થાય છે. એ સંબંધીની નોંધો પ્રશસ્તિઓ તથા શિલાલેખો વગેરેમાં પણ મળે છે. ત્યાર પછી શ્રમણવર્ગમાં ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજીની નોંધ વાંચવા મળે છે.

નવાબ-ખાન જ્ઞાની ગુરુની જ્ઞાન-શક્તિથી ખુશી થયો; તેઓશ્રીની બુદ્ધિનાં વખાણ કર્યાં, અને [ગુરુશ્રી] મહા આડંબરથી વાજતે-ગાજતે સ્વસ્થાનકે પધાર્યા. (૭)

આથી જૈનશાસનની ઉન્નતિ થઈ અને તપાગચ્છની શોભા ખૂબ વધી. આ પંડિત ચોરાશી ગચ્છના સાધુઓમાં અક્ષોભ-કોઈથી ક્ષોભ ન પામે તેવા છે; એમ સર્વ લોકો કહેવા લાગ્યા. (૮)

અમદાવાદના શ્રીસંઘે [૫૩]શ્રીવિજયદેવસૂરિ ગચ્છનાયકને હાથ જોડી અરજ કરી કે, [૫૪]'બહુશ્રુત' શ્રી યશોવિજયજી કે જેમની [૫૫]હોડ કોઈ કરી શકે તેવું નથી. તેથી તેઓ [૫૬](પંચપરમેષ્ઠી) ના ચોથા [૫૭](ઉપાધ્યાય)પદે સ્થાપન કરવા યોગ્ય છે.' (૯)

તપગચ્છાધિપતિ શ્રીવિજયદેવસૂરિજીએ પોતે, એ વાત જાણીને મનમાં ધારી લીધી. ત્યાર બાદ પંડિત શ્રીયશોવિજયજીએ સંસારના સંતાપોનું ઉચ્છેદન કરવા માટે [૫૮]'સ્થાનક'

આપણને શંકા થાય છે કે, આવા સમર્થ પુરુષ શતાવધાની શું પણ દ્વિ-ત્રિ શતાવધાનીનું દૃષ્ટાંત પૂરું પાડે તેવા હતા તો અઢાર કેમ? તે માટે ટિપ્પણ નં. ૨૬ જુઓ. વળી, ઉભય પક્ષને લાંબો સમય સુધી રોકવાનું અનુકૂલ ન હોય એવી અપેક્ષાથી મર્યાદિત કરી બતાવ્યાં હોય.

૫૩. સમગ્ર ગચ્છના સાધુઓએ તેમને નિડર પુરુષ તરીકે વર્ણવ્યા તે યથાર્થ છે. એની પ્રતીતિ અન્ય-ગચ્છીઓએ કરેલી પ્રશંસા વગેરેથી પણ જોવા મળે છે. કારણ કે તે કોઈથી ગાંજ્યા જાય તેવા ન હતા. અસદ્માર્ગનું ઉન્મૂલન કરવામાં તેમણે કદી પીછેહઠ કરી નથી.

૫૪. ઉપાધ્યાયજીને શ્રીસંઘ 'બહુશ્રુત' તરીકે બિરદાવે એ વાત પણ ખૂબ સૂચક છે. અને તેમાં કશી જ નવાઈ નથી.

૫૫. 'ઉપાધ્યાયજી' પોતાના સમયના અજોડ કર્મયોગી શ્રમણ, સત્યમાર્ગના પરમ પ્રકાશક, સદા કર્તવ્ય-પરાયણ, શાસનના અવિહડ રાગી, બુદ્ધિવાદના પુરસ્કર્તા, મહાન શાસનપ્રભાવક, જૈન સિદ્ધાન્તો, આચારો અને તેની પરંપરાના જાગરુક ને સમર્થ ચોકિયાત હતા, એટલું જ નહિ પણ તેમણે જૈનશાસનની સેવા-રક્ષા અને પ્રચારમાં પોતાના મન, વચન અને કાયાના ત્રિવિધ યોગોને સમર્પિત કરી દીધા હતા. આવા એક મહાન વિચારક, મહાન ક્રાન્તિકાર, અને મહાન કિંમ્સક્ત શ્રમણ, ઇતિહાસની પાછલી કેડી ઉપર નજર નાખતાં છેલ્લા સૈકાઓ દરમિયાન આપણને જોવા નહીં મળે. ને ત્યાર પછીથી આજ સુધીમાં પણ આવો શ્રુતવેત્તા અને શાસ્ત્રપ્રણેતા જન્મ્યો નથી.

આવા મહાજ્ઞાની, પરમ અધ્યાત્મ-યોગી, આર્ષદ્રષ્ટાને અનંત વંદન!

૫૬. શ્રીઅરિહંત, સિદ્ધ, આચાર્ય, ઉપાધ્યાય અને સાધુ. વિશ્વમાં આ પાંચ પરમેષ્ઠી પુરુષો કહેવાય છે.

૫૭. અહીં સંઘે ઉપાધ્યાયજીને ગચ્છનાયકપદે સ્થાપવા અને આચાર્યપદ આપવા વિનંતિ કેમ ન કરી? એ પ્રશ્ન વિચારણીય છે, જેથી વધુ ટિપ્પણ ન કરતાં અત્યારે તો તે વાત સંશોધકો ઉપર છોડું છું.

૫૮. સ્થાનકથી 'વીશ સ્થાનક' નામનું એક તપ લેવાનું છે. તે ઉપવાસ વગેરે તપથી વિધિપૂર્વક કરવાનું હોય છે. એમાં જુદાં જુદાં વીશ ઉત્તમપદો-સ્થાનોનું આરાધન હોય છે. એ તપ ભાવ ને વિધિની શુદ્ધિપૂર્વક કરવામાં આવે તો તેથી તીર્થંકરપદ જેવી મહાન પદવી મેળવી શકાય છે એમ જૈન-ધર્મમાં કહેલું છે. ખુદ તીર્થંકરના આત્માઓ પોતાના ત્રીજા પૂર્વજન્મમાં આ તપની કે તેના કોઈ

(વીશ સ્થાનક નામનું) તપ વિધિ-પૂર્વક આદર્યું. મોક્ષની સાધનાના- ધ્યેયથી શુદ્ધ માર્ગથી [59]પ્રભાવિત થયેલા આ મુનિશ્રી સંયમની નિર્મળતામાં ચઢ્યા હતા. તે વખતે [60]જયસોમ આદિ પંડિત-મંડળી તેમનાં નિર્મળ ચરણોની સેવા કરતી હતી. (૧૦-૧૧)

વિધિપૂર્વક વીશ સ્થાનકનું તપ આરાધ્યા પછી તેના પ્રત્યક્ષ ફલરૂપે તેમને [61]વાચક—ઉપાધ્યાયની પદવી [62]સંવત ૧૭૧૮, માં (ગચ્છપતિ) [63]શ્રીવિજયપ્રભસૂરિજીએ આપી. (૧૨)

આ વાચક-ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજય જગતમાં જયવંતા યશનામી થયા. તેઓ ખરેખર બૃહસ્પતિના અવતાર સમા હતા. શ્રીકાંતિવિજયજી કહે છે કે આ સુજસવેલીને સાંભળતાં હૈયામાં જય જયકાર થાય છે. (૧૩)

[ઢાળ : ચોથી]

કર્તા શ્રીકાંતિવિજયજી કહે છે કે હું શ્રીયશોવિજય વાચકના ગુણના વિસ્તારોને પામી શકું તેમ નથી. તેમના ઉપકારો ગંગા-જલનાં બિન્દુઓ કરતાં પણ અધિક છે. જેમ ૧૧૨ ઉપનિષદો વેદના એક ભાગરૂપ છે, તેમ શ્રીયશોવિજયજીની નય-નિગમથી અગમ્ય

પ્રકારની ઉત્કૃષ્ટ કોટિએ આરાધના કરે છે જે, તે ત્યારે જ તે પદને યોગ્ય થાય છે. આજેય કેટલા પુણ્યાત્માઓ તે તપનું આરાધન કરી વિષય ને કષાયોની વાસનાનો ક્ષય કરી આત્માને પવિત્ર બનાવી રહ્યા છે.

૫૯. ઉપાધ્યાયજીની મોક્ષસાધના અને જિનેશ્વરદેવકથિત શુદ્ધ માર્ગ ઉપર આત્માના અણુએ અણુએ વ્યાપેલો રંગ ને શ્રદ્ધા કેવી હતી? તે માટે ઘણાં પાનાં રોકવાં પડે. જિજ્ઞાસુ વધુ નહીં તો તેમની ગુર્જર કૃતિઓ ઉપરથી પણ તેનું માપ કાઢી શકે તેમ છે. અહીં કવિએ ટૂંકા શબ્દોમાં તેમના આંતર જીવનને પણ સત્ય રીતે પ્રકાશિત કર્યું છે.

૬૦. જયસોમ એ તપગચ્છની ૫૬મી પાટે થયેલા શ્રીઆનંદવિમલસૂરિના શ્રીસોમવિજય ઉપાધ્યાય તેમના પાઠક શ્રીકીર્તિસોમ તેમના યશસોમ અને તેમના શિષ્ય જયસોમ પંડિત હતા. તે તપગચ્છના હતા. તેમણે સં. ૧૭૦૩માં બારભાવનાની સજ્ઝાય વગેરે કૃતિઓ રચી છે. તે સિવાય અન્ય સાધુઓ વગેરે ઉપાધ્યાયજીના સહવાસી હતા. અને વિ૦ સં૦ ૧૭૧૦માં ગુજરાત પાટણમાં શ્રીનયચક્ર જેવા મહાન ગ્રન્થને વ્યવસ્થિત કરી ઉપાધ્યાયજીએ પુનર્લેખન કરાવ્યું ત્યારે જે સહાયકો પૈકીના તે હતા. તે વાત તે ગ્રન્થના અન્તમાં તેઓશ્રીએ જ જણાવી છે.

૬૧. પંચપરમેષ્ઠીના ચોથા પદે વર્તતા આચાર્યશ્રીના જેઓ મંત્રી કે યુવરાજ તરીકે ઓળખાય છે. ભણવું ને ભણાવવું એ જ જેનું કર્તવ્ય છે, જે અંગોપાંગરૂપ આગમોના જ્ઞાતા હોય છે, તેને ઉપાધ્યાય કહેવાય છે.

૬૨. દીક્ષા લીધા બાદ ૨૯ વર્ષનો દીક્ષાપર્યાય થયો (વય લગભગ ૪૦ની આસપાસ હશે) ત્યારે તેમને પદવીપ્રદાન થયું.

૬૩. શ્રીવિજયપ્રભસૂરિજી ટિપ્પણી નં. ૨ પ્રમાણે શ્રીવિજયદેવસૂરિજીના પટ્ટધર આચાર્ય. આચાર્યપદ સં. ૧૭૧૦ ગંધારમાં અને ગચ્છપતિપદ સં. ૧૭૧૧ અમદાવાદમાં ને સ્વર્ગવાસ સં. ૧૭૪૯ ઉનામાં. તેઓનું જન્મ સ્થાન કચ્છ મનોહરપુર હતું.

અને ગંભીર સ્યાદ્વાદ-વચન-સિદ્ધાન્તોની રચના એ આગમ (૪૫)ના જ એક [૬૪]વિભાગ-રૂપે છે. અને તે અતિ કઠિન છે. આનો લાભ કોઈ ધીર પુરુષ જ ઉઠાવી શકે તેમ છે. (૧-૨)

જેમની [૬૫]શાસ્ત્ર-રચનારૂપી ચંદ્રિકા શીતલ, [૬૬]પરમ-આનંદને આપનારી, પવિત્ર, વિમળ-સ્વરૂપ અને સાચી છે, અને તેથી [૬૭]રસિકજનો તેનું હોંશે હોંશે સેવન-પાન કરે છે. (૩)

---

૬૪. ઉપાધ્યાયજી નય-પ્રમાણ, નિક્ષેપ-સપ્તભંગી આદિ સિદ્ધાન્તોની ગહનતા ને આમૂલચૂલ ખૂબીઓનું આકંઠ પાન કરી ગયા હતા એમ એમની કૃતિઓ જોનારને લાગે છે અને તેથી જ સહસા 'પ્રવચનના લઘુ અવતાર' જેવા હોય તેવો ભાસ ખડો કરે છે. (માટે જ તેમને શ્રુતકેવળી તરીકે બિરદાવ્યા છે તે બરાબર ઘટે છે) આજે પણ તેમનું વચન ટંકશાલી ગણાય છે ને 'ઉપાધ્યાયજીની સાખ એટલે આગમસાખ' એવી પ્રસિદ્ધિ પણ વર્તે છે.

વળી, કવિએ તેમની કૃતિઓને કઠિન કહી છે તે ખોટું નથી. તેમની નય-ન્યાયને પ્રમાણાદિની શૈલીથી ભરપૂર સંસ્કૃત-પ્રાકૃત કૃતિઓ પ્રાજ્ઞ અને પ્રતિભાશાળી મતિમાન પુરુષોથી ગ્રાહ્ય થાય તેવી ગહન અને તાત્ત્વિક વિચારોથી ભરપૂર છે. તેની કાઠિન્યતાનો અનુભવ આજના વિદ્વાનોને પણ થાય જ છે. વળી, એમની વાણી કોઈ નયથી અધૂરી નથી અર્થાત્ સમગ્ર નયો-દષ્ટિબિન્દુઓથી વ્યાપક છે. એ વાત પોતે જ શ્રીવિનયવિજયજીએ અધૂરા મૂકેલા શ્રીપાળરાસને પૂર્ણ કરતાં એક ઢાળને અન્તે લખે છે કે-'વાણી વાચક જસતણી, કોઈ નયે ન અધૂરી રે.'

૬૫. તેમની શાસ્ત્રરચના અને અન્ય કૃતિઓનું શું મહત્ત્વ છે. એના પર તો એક એક મહાનિબંધ લખી શકાય તેમ છે. એક એક નિબંધ પીએચ. ડી. ની ગરજ સારે તેવો બને. પણ એમના કવન ઉપર સ્વતંત્ર જીવનચરિત્ર લખાય ત્યારે જ છૂટથી લખી શકાય.

૬૬. તેમના સ્વર્ગગમન બાદ ૨૫૦ વરસથી બાલથી વૃદ્ધપર્યંત, નિરક્ષરથી સાક્ષર પર્યંત, આત્માર્થી ગૃહસ્થ અને સાધુ સહુના ઉપર તેમનો અસાધારણ ઉપકાર છે. આત્માને પરમાનંદ આપનારી તેમની શીતલ કૃતિઓએ જ જૈનસંઘમાં ધર્મશ્રદ્ધાનાં મૂળ ઊંડા નાખ્યાં છે. ને દૃઢપણે ટકાવી રાખ્યાં છે. કૃતિઓમાં આધુનિક માનવીના અંતરમાંથી ઊઠતા સંદેહોનું નિરાકરણ કરવાની સઘળી સામગ્રીઓ ગોઠવાયેલી છે. તેમની કૃતિઓનો અભ્યાસ કરનારના અંતઃકરણમાં શ્રીજિનશાસન અને તેની પવિત્રતમ સઘળી મર્યાદાઓ પ્રત્યે અવિચળ શ્રદ્ધા પેદા થાય છે. દરેકને પોતાના ક્ષયોપશમ પ્રમાણે તેમાંથી પવિત્રધર્મની પ્રેરણાઓ મળે છે, તેથી તેમની કૃતિઓનો વધુ પ્રચાર-અધ્યયન-અધ્યાપન વધે એ માટે એક સંગીન અને સક્રિય પ્રયત્ન થાય એ બુદ્ધિવાદના જમાનામાં અતિ ઉપયોગી છે. આપણી ભાવિ પ્રજાને અધર્મના માર્ગે જતી બચાવી લેવા, અને ધર્મમાર્ગમાં સ્થિર કરવા માટેનો અચૂક ઉપાય છે. જડવાદના ઝેરનો નાશ કરનારું રામબાણ ઔષધ છે. આજે પણ તેમની 'યશોવાણી' અમર છે. અને ભવભીરુ આત્માઓ તેના આલંબનથી ભારે કલ્યાણ સાધી રહ્યા છે. અન્ય ગચ્છ અને પક્ષવાળાઓ પણ તેમની વાણીનું વ્યાખ્યાનો, પ્રવચનો ને પુસ્તકો દ્વારા ભારે સત્કાર, સમ્માન ને પૂજન કરી રહ્યા છે. એ વાણી આજે પણ હોંશે હોંશે સર્વત્ર ગવાઈ રહી છે

૬૭. એમની કૃતિઓ એવી રસપૂર્ણ છે કે ભણનારને ખૂબ જ રસાહ્લાદ ઉત્પન્ન કરે.

[68]શ્રીહરિભદ્રસૂરિનાં આ લઘુ બાંધવ એટલે કળિયુગમાં ‘બીજા હરિભદ્ર’ થયા. આ પ્રમાણે મેં સ્તવેલા તેમના પ્રગટ અને યથાર્થ ગુણોને સાંભળીને કોઈ પણ કવિઓ કે પંડિતો રોષ કરશો નહિ. (૪)

[69]સંવત ૧૭૪૩ માં આ પાઠક–ઉપાધ્યાય [70]ડભોઈ નગરમાં ચોમાસું રહ્યા હતા.

---

૬૮. શ્રીહરિભદ્રસૂરિજી નામના આચાર્ય આઠમા (મતાંતરે છઠ્ઠા) વર્ષ ઉપર થયા, જેમણે ૧૪૪૪ ગ્રન્થો રચ્યા હતા. તેઓ એક મહા ધુરંધર વિદ્વાન હતા. તેમની કૃતિઓની રચના, શૈલી, ને તટસ્થ પ્રતિપાદનશૈલીથી આજેય જૈનેતરો પણ તેમના પ્રત્યે પક્ષપાત ધરાવે છે. તેઓ ષડ્દર્શનના મહાન અભ્યાસી, અધ્યાત્મ અને જૈનયોગના આદ્ય પુરસ્કર્તા, ને અભિનવ દૃષ્ટિએ તલસ્પર્શી વ્યાખ્યાતા હતા. તેઓશ્રી વિરચિત શાસ્ત્રવાર્તાસમુચ્ચય, યોગવિંશિકા, ષોડશક ગ્રન્થો ઉપર ઉપાધ્યાયજીએ મૂલકારના આશયને વિશદ અને સ્પષ્ટ કરતી ગંભીર મીમાંસા (ટીકા) કરી છે. અધ્યાત્મ અને યોગનાં પ્રાચીન ગૂઢ તત્ત્વોને ખુલ્લાં કરી દીધાં છે, આનો અર્થ એ કે ન્યાય, યોગ ને અધ્યાત્મ માર્ગ ઉપર એક હજાર વર્ષ ઉપર જે ખેડાણ થયું, તેના વધુ ખેડાણનો સૌપ્રથમ પ્રયત્ન કરવાનું માન ઉપાધ્યાયજીને સાંપડ્યું તેથી તેમને બીજા હરિભદ્ર તરીકે ઓળખાવ્યા છે.

૬૯. વિ. સં. ૧૬૮૮ માં દીક્ષા અને ૧૭૪૩ માં સ્વર્ગવાસ એટલે દીક્ષા-પર્યાય ૫૫ વર્ષનો થયો. દીક્ષા વખતની વય જો આઠ વર્ષની માન્ય રાખીએ તો તેમની વય કાળધર્મ–સ્વર્ગગમન વખતે ૬૩ વર્ષની થાય. આ જોતાં આ ઉલ્લેખના આધારે તેઓ બહુ લાંબું જીવન જીવવા પામ્યા નથી એમ કહી શકાય. (અન્ય પુરાવાના આધારેથી તેઓશ્રીનું આયુષ્ય ૮૦ વર્ષથી અધિક થવા જાય છે. એ ચર્ચા અન્ય પ્રસંગે) તેઓશ્રીએ જે ભગીરથ કાર્યો કર્યાં ને આયુષ્યની પ્રત્યેક પળને સફળ કરવા જે જીવન સાધનાઓ કરી, એ અદ્ભુત આદર્શ ઉપસાવે તેવી છે. જ્ઞાન અને તપના ગંગા–યમુના જેવા વિરલ સુયોગે વિશ્વને ઉમદા સિદ્ધાન્તો અને ઉદાત્ત વિચારોની જે મહાન ભેટ આપી, તે માટે વિશ્વનો દરેક સુજ્ઞ માનવી તેમને નમસ્કાર વંદન કર્યા વિના નહીં રહે. જીવન અને સાહિત્યના નિર્મળ અને પુનિત એ વારસાને આપણાં અગણિત વંદન હો!

બીજી વાત એ કે જ્યારે ‘સુજસવેલી’ પ્રાપ્ત થઈ ન હતી ત્યારે તેમની પાદુકાના લેખ અને તેમની મૂરતની એક ગુર્જર કૃતિની પ્રશસ્તિ ઉપરથી તેમની કાળધર્મની સાલ ૧૭૪૫ (તિથિ માગશર સુદિ ૧૧) જણાતી હતી, પણ જો સુજસવેલીના કથનને માન્ય રાખીએ તો પ્રસ્તુત પ્રમાણ ખોટું ઠરે છે. ને ૧૭૪૩ની સાલ એ સત્ય ઠરે છે. એ અંગે વિશેષ ચર્ચા કરવાનું આ સ્થાન નથી.

તેઓશ્રીની જન્મસાલ અને તિથિ બન્ને મળતાં નથી, ત્યાર બાદ દીક્ષા અને ઉપાધ્યાયપદની કેવળ સાલ મળે છે પણ એકેયની તિથિ મળતી નથી, સ્વર્ગારોહણ ૧૭૪૩માં જ થયું કે ૧૭૪૪માં એ પણ સ્પષ્ટ થતું નથી, ચોમાસામાં કાળધર્મ કર્યો હોય તો ૧૭૪૪ને સ્થાન અપાય. આ રીતે તેઓશ્રીની એકેય તિથિ મળતી નથી એ આપણું મહદ્ દુર્ભાગ્ય છે અને એથી એમનો ‘ગુણાનુવાદ દિન’ કયો મુકરર કરવો એ પ્રશ્ન અણઉકલ્યો રહ્યો છે. જૈનસંઘે કોઈ પણ એક દિવસ નક્કી કરવાની ખાસ જરૂર છે.

કેટલાંક પંચાંગો વગેરેમાં ઉપાધ્યાયજીની જન્મતિથિ કે કાળધર્મની તિથિ તરીકે માગશર સુદિ ૧૧ હજુ સુધી છપાય છે. તે ભૂલ વહેલી તકે સુધારી લેવી જોઈએ.

અને તે ગામમાં તેઓશ્રી [૭૧]અનશનતપ કરી, પાપોને ધોઇ, સુર-પદવીને અનુસર્યા—અર્થાત્ [૭૨]સ્વર્ગવાસી થયા. (૫)

---

૭૦. ડભોઈ વડોદરા (ગુજરાત)થી દક્ષિણ-પૂર્વના રેલ્વે રસ્તે ૧૯ માઈલ દૂર આવેલું શહેર છે. તેની વસ્તી અત્યારે ૩૦ હજારની છે. તેનું પ્રાચીન (સંસ્કૃત) નામ દર્ભાવતી છે. ભૂતકાળમાં લાટ દેશની આ નગરી ગણાતી હતી છે. ન્યાયનિષ્ણાત વાદી શ્રીદેવસૂરિજીના ગુરુ શ્રીમુનિચંદ્રસૂરિજીનો જન્મ આ નગરમાં થયેલો. ત્યાં મંત્રીશ્વર પેથડશાહ અને તેજપાલે વિશાળ જિનમંદિરો બંધાવેલાં, મંત્રીશ્વર તેજપાલે આ મહાન નગરીને દક્ષિણ સરહદનું સંરક્ષક થાણું બનાવતાં આક્રમણકારોથી સુરક્ષિત રાખવા ત્યાં મજબૂત કિલ્લો બંધાવ્યો હતો અને એ કિલ્લાના દરવાજાનું ભવ્ય ને કલાત્મક સ્થાપત્ય ગુજરાતના ઈતિહાસપ્રસિદ્ધ ગણાતા અગત્યના સ્થાપત્યોમાંનું એક ગણાય છે. એને જોવા માટે દર વર્ષે સેંકડો પ્રવાસીઓ આવે છે. એમાં હીરા ભાગોળનું સ્થાપત્ય વધુ મહત્ત્વનું છે. આ કિલ્લા પાછળ ઈતિહાસપ્રસિદ્ધ હીરા કડિયાનો રોમાંચક ને રસિક ઈતિહાસ રહેલો છે. આ કિલ્લો કોણે બંધાવ્યો તે બાબતમાં એવો એક પ્રઘોષ ચાલે છે કે ગૂર્જરેશ્વર સિદ્ધરાજ જયસિંહે બંધાવ્યો પરંતુ તે બાબતમાં કોઈ ઐતિહાસિક પુરાવો જોવા મળ્યો નથી. તેમજ જાણવામાં પણ આવ્યો નથી. પણ મંત્રીશ્વર તેજપાલે આ કિલ્લો બંધાવ્યો એ વાત શ્રીજિનહર્ષરચિત 'શ્રીવસ્તુપાલચરિત્ર'માં અતિ સ્પષ્ટ રીતે કહી છે. અને ત્યાં પ્રસ્તુત કિલ્લો તદ્દન નવો જ બનાવ્યાનું સૂચવ્યું છે. સં. ૧૨૮૮ના ગિરનાર પરના વસ્તુપાલ-તેજપાલ મંત્રીના શિલાલેખના ઉલ્લેખથી જણાય છે કે દર્ભાવતી તે વખતનું ગુજરાતના પ્રધાન શહેરોમાંનું એક હતું. આજે તો સાપ ગયા ને લીસોટા રહ્યા જેવું છે. ડભોઈમાં ૧૭૦ દેરીવાળું મૂલનાયક પાર્શ્વપ્રભુનું જિનમંદિર તેજપાલે બંધાવ્યું. તેજપાલનાં જ માતુશ્રીએ વૈદ્યનાથના મંદિરની મરામત કરાવીને તેમણે પણ એક જૈનમંદિર બંધાવ્યું અને પૂર્વ તથા ઉત્તરના દરવાજે શિલોત્કીર્ણ પ્રશસ્તિઓ લખાવેલી; તેમ છતાં અર્ધપદ્માસને બિરાજમાન તીર્થસ્વરૂપ ભવ્ય શ્રીલોઢણપાર્શ્વનાથની મૂર્તિ અને તાર્કિકશિરોમણિ મહાન જ્યોતિર્ધર ન્યાયાચાર્ય ન્યાયવિશારદ ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજની સ્વર્ગવાસ ભૂમિથી ડભોઈ બડભાગી બન્યું છે.

એમના સમાધિસ્થળે જલમંદિર પાવાપુરીનું નાજુક મંદિર તેમજ શાસનપ્રભાવક આચાર્ય શ્રીવિજયમોહનસૂરીશ્વરજી મહારાજનું ભવ્ય ગુરુમંદિર રહેલું છે ને તેની પ્રતિષ્ઠા પરમપૂજ્ય આચાર્ય શ્રીવિજયપ્રતાપસૂરિજી મ. ની અધ્યક્ષતામાં થયેલી છે. વળી, ત્યાં યુગાદિપાદુકાની ભવ્ય દેરી પણ રહેલી છે. તપગચ્છાધિપતિ શ્રીવિજયપ્રભસૂરિજી મ. ને તેમના જ શિષ્ય-પ્રશિષ્યોની તથા અન્ય પાદુકાઓ પણ ત્યાં સ્થાપિત થયેલી છે.

ડભોઈમાં જૈનોનાં ૩૦૦ ઘરો, ૬ મંદિરો, ૪ ઉપાશ્રયો, ૨ ભવ્ય જ્ઞાનમંદિરો ને પાઠશાળા છે. આ સમગ્ર સ્થાનો જૈન વસતિ વચ્ચે છે. જૈનોની તમામ વસતિ એક જ ભાગમાં વસેલી છે. આ નગરની પ્રથમથી જ આ એક વિશેષતા છે. અન્ય જાતિઓ પણ પોતે પોતાના નિશ્ચિત વિસ્તારોમાં જ વસેલી છે. ડભોઈની ઐતિહાસિક ને પુણ્યભૂમિમાંથી દીક્ષિત થયેલા અનેક આત્માઓ આજે સાધુજીવન ગાળી રહ્યા છે. વળી, ગુજરાતના જાણીતા કવિ શ્રીદયારામ પણ આજ શહેરના હતા. આ છે માત્ર ડભોઇનું ઊડતું અવલોકન.

૭૧. અનશન એટલે અન્ન, જળના ત્યાગરૂપ તપ.

૭૨. ૧૭૪૩ માં ઉપાધ્યાયજી ચોમાસુ રહ્યા પણ કાળધર્મ ચોમાસામાં પામ્યા કે ચાતુર્માસ બાદ તે માટે કર્તાએ મૌન સેવ્યું છે.

—ત્યાં (અગ્નિ-સંસ્કારના સ્થળે) તેમનો તેજોમય [૭૩]સમાધિસ્તૂપ વર્તે છે અને તેની પડખે જ [૭૪]'શીત' નામની તલાવડી છે. તે સ્તૂપમાંથી [૭૫]'ન્યાયની ધ્વનિ' નિજ-સ્વર્ગવાસના દિવસે પ્રગટ રીતે પ્રકટે છે. (૬)

(કર્તા પોતાનો ભક્તિભાવ વ્યક્ત કરતાં છેવટે કહે છે કે-) આ ગુરુદેવ સંવેગી—શ્રમણોના શિરોમણિ, જ્ઞાનરૂપી રત્નના સાગર, અને અન્યમતરૂપી અંધકારનો નાશ કરવામાં બાલ સૂર્ય જેવા છે. (૭)

શ્રીગુજરાત-પાટણના શ્રીસંઘના અતિ આગ્રહથી સુજસ (શ્રીયશોવિજયજી)ના સુવિશેષ ગુણો વડે કરીને શોભતી આ **સુજસવેલી** લખી-રચી છે. (૮)

(કર્તા) શ્રીકાંતિવિજય કહે છે કે ઉત્તમ પુરુષોના ઉત્તમ ગુણોને પ્રગટ કરતાં મેં મારી જીભને પવિત્ર કરી છે, આ યશ-વેલડીને સાંભળતાં સાંભળનારના દિવસો ધન્ય થાય છે. (૯)

इति श्रीमन्महोपाध्यायश्रीयशोविजयगणि-परिचये सुजसवेलि-
नामा *भासः संपूर्णः (३-४)

[શ્રી શાંતિસાગરજીના ભંડારની પ્રતિ]

અર્થકાર અને ટિપ્પણકાર:—

મુનિ યશોવિજય

---

૭૩. સ્તૂપ એટલે તેમના અગ્નિદાહના સ્થળે અથવા આસપાસમાં તેમની યાદ તરીકે કરવામાં આવતું સ્મારક. હાલમાં પણ ઉપાધ્યાયજીની પાદુકાનો સ્તૂપ વિદ્યમાન છે ને તેમાં તેઓશ્રીની પવિત્ર પાદુકા સ્થાપિત કરવામાં આવી છે. તેના પર એક લેખ પણ કોતરેલો છે—

'संवत् १७४५ वर्षे ॥ शा ॥ १६११, प्रवर्त्तमाने मार्गशीर्षमासे शुक्लपक्षे एकादशीतिथौ ॥ छ ॥ श्रीश्रीहीरविजयसूरीश्वर ॥ पं ॥ श्रीकल्याणविजय ग । शिष्य पं । श्रीलाभविजय ग । शिष्य । पं । श्रीजीतविजय ग । सोदर । सतीर्थ्य । पं । श्रीनयविजय ग । शिष्य । पं । श्रीजसविजयगणीनां पादुका कारापिता । प्रतिष्ठितात्रेयं । तच्चरणसेवक...विजयगणिना श्रीराजनगरे ॥'

૭૪. એ સ્તૂપથી ૨૦૦ ડગલાં દૂર આજેય 'શીતતલાઈ' નામનું તળાવ વિદ્યમાન છે ને ત્યાંના લોકો તેને 'શીતલાઈ' કહે છે.

૭૫. 'ન્યાયના ધ્વનિ'ના ઉલ્લેખથી કર્તા એમ કહેવા માગે છે કે તેમના સ્વર્ગવાસના દિવસે સ્તૂપમાંથી કોઈ 'નાદ-ધ્વનિ' પ્રગટ થાય છે. તે શું છે તે શોધવાનું-જાણવાનું રહે છે.

* કર્તાએ પોતાના કાવ્યમાં સુજસવેલીનો 'ભાસ' તરીકે કશો જ ઉલ્લેખ નથી કર્યો.

[નોંધ:—અહીં ઉપાધ્યાયજીની બે અપ્રસિદ્ધ કૃતિઓ હસ્તપ્રતિમાં જેમ હતી તેમ જ આપવામાં આવી છે.]

આધ્યાત્મિક પદ

[અંતરના અનુભવ ઉદ્ગાર]

(૧)

હમ બઈઠે અપને ગ્યાનમઈં;
વાગવાદ કરત હઉ કાહે, બ્રહ્મ ન આવઈ વચાનમઈં. હમ૦ ૧

શુદ્ધ દ્રવ ગુન પર્યંય ચીન્હઈં; રહે તાહિકે ધ્યાનમઈં;
રાચે માચે પ્રવચન રસમઈં; લીને અનુભવ પાનમઈં. હમ૦ ૨

ઝગરત લરત બહુત નિજ મતમઈં; તે કછુ ન ધરઈ કાંનમઈં;
આપહીમઈં અપની ઋદ્ધિ પ્રગટી, કહા ઓરકે તાનમઈં. હમ૦ ૩

પઢ પઢકેઈ રિઝાવત પરકું, કઈ [1]અષ્ટ અવધાનમઈં;
આપકું આપ રિઝાવત નાહી, ભેદ ન જાન અજાનમઈં. હમ૦ ૪

ધારન ધ્યાન સમાધિ એકરસ, સંયમ ન રહઈ ગ્યાનમઈં;
વાચક જશ કહઈ મોહ મહાભટ, જીતિ લીઓ મયદાનમઈં. હમ૦ ૫

॥ ઇતિ શ્રી ગીતં ॥

સંવત ૧૭૪૮ વર્ષે આશુ શુદિ ૧૩ દિને પં. ધનજી લખીતં હબદપુર મધ્યે લપીતં ॥ કલ્યાણમસ્તુ । શુભં ભવતુ । શ્રી ભગવંતજી સત ॥

૧.—'સુજસવેલીભાસ'માં આપેલી સાક્ષીની પ્રામાણિકતા માટે અન્ય ઉલ્લેખોએ મોટો વિસંવાદ ઊભો કર્યો છે, અને તેથી તે માંહેની બીજી હકીકતો પ્રામાણિક હશે કે કેમ? એવી શંકા સહેજે થઈ આવે છે. પરંતુ ઉપરનો મહત્ત્વનો ઉલ્લેખ ખૂબ જ માર્મિક છે અને સુજસવેલીમાં જણાવેલી અષ્ટઅવધાનની વાતને મજબૂત ટેકો આપે છે. તો શું સુજસવેલીમાંની સાક્ષી, સુજસવેલીની સમગ્ર હકીકતને અપ્રામાણિક ઠરાવવા કોઈએ ફેરવી હશે ખરી?

શ્રીગોડીપાર્શ્વનાથ સ્તવન

(૨)

હિતકારી તે હિતકારી, ગોડીપાસ પરમ ઉપગારી રે,
તોરી મૂરતિ મોહનગારી રે, તે તો લાગઈ મુઝનઈ પ્યારી રે ॥ ૧ ॥

ચાહઈ જીમ ચંદ ચકોરા રે, જીમ વંછઈ ઘનનઈ મોરા રે,
જીમ વાલ્હી ગજનઈ રેવા રે, તીમ વ્હાલ્હી મુઝ તુઝ સેવા રે ॥ ૨ ॥

જે સાહિબ ચતુર સનેહી રે, તેહેસ્યૂં વાત અગોચર કેહી રે,
સગુણાસ્યૂં તિણિ પરિ મિલિઈ રે, જીમ સાકર દૂધિં ભલિઈ રે ॥ ૩ ॥

જે તુઝ ગુણ મઈ ચિતિ ધારિયા રે, તે તો જાઈ નવિ વીસારિયા રે,
સૂહણઈ પણિ સાંભરિવાઈ રે, પરના ગુણ ચિતિ ન સુહાવઈ રે ॥ ૪ ॥

મદ–માન–મનોભવ દલિયા રે, પર સુર તો સઘલા ગલિયા રે,
તેહના ગુણ જે મુખિ ભાખેઈ રે, તે તો દષ્ટિરાગ નિજ દાખઈ રે ॥ ૫ ॥

બિહૂંમાંહિ ઈક અધિકાઈ રે, પરખંતાં મુઝ મનિ ભાઈ રે,
તુઝ વચનઈ સઘલું સાચું રે, પર વચનઈ સઘલું કાચું રે ॥ ૬ ॥

જાણો તિમ જગત જાણો રે, મુઝ મનિ તો તૂઝ સુહાણો રે,
સપ્તભંગી નયની વાણી રે, તુઝ વિણુ અવરઈ નવિ જાણી રે ॥ ૭ ॥

આજ અમિય ઘનાઘન વૂઠા રે, સમકિતદષ્ટી સુર તૂઠા રે,
નિજ કરિ ચિંતામણિ આયો રે, જે મઈ તુઝ દરશન પાયો રે ॥ ૮ ॥

સાહિબ તુઝ અરજ કરીજઈ રે, સેવક ઉપરિ હિત કીજઈ રે,
વાચક જશ કહેઈ અવિધારો રે, ભવસાયર પાર ઉતારો રે ॥ ૯ ॥

॥ ઇતિ શ્રીગોડીપાર્શ્વનાથ સ્તવન સંપૂર્ણ ॥

સમાપ્તં ॥ શ્રી ॥

શ્રીયશોવિજયોપાધ્યાય અને તેમણે લખેલી હાથપોથી
*न य च क्र

[લે. પૂ. મુનિવર શ્રી પુણ્યવિજયજી મ.]

જૈન શ્રીસંઘ પાસે આજે જે જ્ઞાન સંગ્રહો અને તેમાં જે વિશાળ ગ્રંથરાશિ વિદ્યમાન છે તે આજે એના વિશિષ્ટ ગૌરવની વસ્તુ છે. અને ભલભલાને પણ આશ્ચર્ય ઉત્પન્ન કરે તેવા અને તેટલા વિશાળ છે. હજારોની સંખ્યામાં વિનાશના મુખમાં જવા છતાં ય આજે જૈન મુનિવરો અને જૈન ગૃહસ્થ શ્રીસંઘોની નિશ્રામાં જે ગ્રંથ સંગ્રહો છે તેની ડરતાં ડરતાં પણ સંખ્યા કલ્પવામાં આવે તો તે પણ લગભગ પંદરથી વીસ લાખ જેટલી છે. આ બધા જ્ઞાન ભંડારોમાં માત્ર જૈન ગ્રંથો જ છે તેમ નથી પણ તેમાં ભારતીય જૈન–જૈનેતર વિધવિધ પ્રકારના સમગ્ર સાહિત્યનો સંગ્રહ છે. કોઈ એવી સાહિત્યની દિશા ભાગ્યે જ હશે જેને લગતા ગ્રંથો આ સંગ્રહોમાં ન હોય આ સંગ્રહોની મહત્તા જ એ છે કે તે માત્ર સાંપ્રદાયિક ગ્રંથોની સીમામાં જ વિરમી જતી નથી, પણ તેમાં વૈવિધ્યપૂર્ણ ભારતીય વિશાળ સાહિત્ય રાશિ છે. જૈનેતર સંપ્રદાયના એવા સેંકડો ગ્રંથો આ સંગ્રહોમાંથી મળી આવ્યા છે. જેની પ્રાપ્તિ તે તે સંપ્રદાયના સંગ્રહોમાંથી પણ નથી થઈ. હજુ તો બધા જૈન જ્ઞાનસંગ્રહોનું સંપૂર્ણપણે અવલોકન થયું જ નથી, તે છતાં તેની વિવિધતા અને વિશાળતા વિદ્વજ્જગતને દંગ કરી દે તેવી પુરવાર થઈ છે, પરંતુ જ્યારે આ સમગ્ર જ્ઞાનભંડારોનું અવલોકન વ્યવસ્થિત રીતે કરવામાં આવશે ત્યારે તેમાંથી એવો સાહિત્યરાશિ પ્રાપ્ત થશે કે જગત મુગ્ધ બની જશે, એવી આ નક્કર વાત છે. જૈન મુનિવરો અને જૈન શ્રીસંઘોની આજે એ અનિવાર્ય ફરજ છે કે પોત-પોતાના અધીનમાં રહેલા જ્ઞાનભંડારોનું સમગ્રભાવે સૂક્ષ્મ અવલોકન કરે. આટલું પ્રાસંગિક જણાવ્યા પછી આજે પ્રસ્તુત સ્મારક ગ્રંથમાં नयचक्र ગ્રંથના આદિ અંતના પાનાંઓનું જે પ્રતિબિંબચિત્ર આપવામાં આવ્યું છે તેનો પરિચય અહીં કરાવવામાં આવે છે.

नयचक्रग्रन्थ જેને द्वादशारनयचक्रના નામથી પણ ઓળખવામાં આવે છે. એ મૂળગ્રંથ આચાર્ય શ્રીમલ્લવાદિ વિરચિત છે. જૈનદાર્શનિક આચાર્યો અને જૈન પ્રજા આ આચાર્યને "વાદી" તરીકે ઓળખે છે. આચાર્ય શ્રી હેમચંદ્રે સિદ્ધહેમ વ્યાકરણમાં उत्कृष्टोऽनूपेन સૂત્રમાં अनु मल्लवादिनं तार्किकाः, तस्मादन्ये हीनाः એમ મલ્લવાદી આચાર્ય માટે જણાવ્યું છે.

જૈનદાર્શનિક ક્ષેત્રમાં સન્મતિતર્ક અને નયચક્ર એ બે ગ્રંથનું સ્થાન ઘણું ગૌરવવંતુ છે. આ બન્ને ય ગ્રંથોનું સંશોધન અને સંપાદન એ પં. શ્રીસુખલાલજીના જીવનનું મુખ્યધ્યેય હતું. પરંતુ સન્મતિતર્ક ગ્રંથનું સંશોધન અને સંપાદન પં. શ્રી બેચરદાસ દોસીના સહકારથી કર્યા પછી નયચક્રગ્રંથના સંશોધન અને સંપાદનની વાત કેટલાક સંયોગોને લીધે ત્યાં જ વિરમી ગઈ ત્યાર પછી એ ગ્રંથનું સંશોધન અને પ્રકાશન ગાયકવાડ ઓરિએન્ટલ સિરિઝ વતી પૂજ્યપાદ શ્રીઅમરવિજયજી મહારાજના વિદ્વાનશિષ્ય કવિ શ્રીચતુરવિજયજીએ હાથમાં લીધું. તેનો પ્રથમ ભાગ બહાર પાડે તે પહેલાં આ આખા ગ્રંથનું સંશોધન અને સંપાદન સ્વકૃત અવચૂરિ સાથે પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી વિજય લબ્ધિસૂરિજીએ સ્વતંત્ર રીતે કરવા માંડ્યું. પરંતુ જ્યારથી

* શ્રીમહાવીર વિદ્યાલયના આ. શ્રી. વિજયવલ્લભસૂરિ સ્મારકઅંકમાંથી ઉદ્ધૃત.

એમાં એક वादमाला નામને ગ્રંથ (છપાયેલ वादमालाथी જુદો), બીજો वीतरागस्तोत्र अष्टमप्रकाशवृत्ति (स्याद्वादरहस्य ?) અંતિમ શ્લોક વ્યાખ્યા અપૂર્ણ પર્યંત અને ત્રીજો મલ્લવાદી આચાર્યરચિત નયચક્ર ગ્રંથની પ્રતિ એ રીતે ત્રણ અપૂર્વ ગ્રંથો મને આપ્યા. આ ત્રણેમાંની नयचक्र ગ્રંથની પોથી જોતાં મને હર્ષરોમાંચ પ્રકટી ગયા અને અપૂર્વ સ્વર્ગીય આનંદનો પ્રત્યક્ષ અનુભવ થયો.

આ પ્રતિના અંતમાં ઉપાધ્યાયજી મહારાજે જે પુષ્પિકા આલેખી છે એ તો વર્ષો પહેલાં ભાવનગરથી પ્રસિદ્ધિ પામતા 'શ્રી આત્માનંદ પ્રકાશ'માં મુનિ શ્રી જંબૂવિજયજીએ પ્રસિદ્ધ કરી જ દીધી છે. તે છતાં પ્રસ્તુત સ્મારક ગ્રંથમાં ઉપાધ્યાયજી મહારાજની એ પોથીના પ્રતિબિંબને સાક્ષાત્ જોનારા રસિક ભક્ત વાચકોને અતૃપ્તિ ન રહે તે માટે એ આખી પુષ્પિકા અહીં આપવામાં આવે છે: —

प्रतिष्ठितसिद्धविजयावहजगन्मूर्द्धस्थसिद्धवत्प्रतिष्ठितं यशस्करमिति ॥छः॥ इति श्रीमल्लवादिक्षमाश्रमणपादकृत-नयचक्रस्यतुम्बं समासम् ।छः॥ ग्रंथाग्रं १८००० ॥

यादृशं पुस्तके दृष्टं तादृशं लिखितं मया ।
यदि शुद्धमशुद्धं वा मम दोषो न दीयते ॥१॥

संवत् १७१० वर्षे पोसवदि १३ दिने श्रीपत्तन नगरे ॥ पं० श्रीयशविजयेन पुस्तकं लिखितं । शुभं भवतु ॥

उदकानलचौरेभ्यो । मूषकेभ्यो विशेषतः ।
कष्टेन लिखितं शास्त्रं यत्नेन प्रतिपालयेत् ॥१॥

भग्नपृष्टिकटिग्रीवा । दृष्टिस्तत्र अधोमुखी ।
कष्टेन लिखितं शास्त्रं यत्नेन प्रतिपालयेत् ॥२॥

पूर्व पं० यशविजय गणिना श्रीपत्तने वाचितं ॥छ॥

आदर्शोऽयं रचितो । राज्ये श्रीविजयदेवसूरीणां ।
संभूय यैरमीषा- । मभिधानानि प्रकटयामि ॥१॥

विबुधाः श्रीनयविजया गुरवो जयसोम पंडिता गुणिनः ।
विबुधाश्च लाभविजया गणयोऽपि च कीर्त्तिरत्नाख्याः ॥२॥

तत्त्वविजयमुनयोऽपि प्रयासमत्र स्म कुर्वते लिखने ।
सह रविविजयैर्विबुधैरलिखच यशोविजयविबुधः ॥३॥

ग्रंथप्रयासमेनं । दृष्ट्वा तुष्यंति सज्जना बाढं ।
गुणमत्सरव्यवहिता । दुर्जनदृक् वीक्षते नैनं ॥४॥

तेभ्यो नमस्तदीयान्स्तुवे गुणांस्तेषु मे दृढा भक्तिः ।
अनवरतं चेष्टंते जिनवचनोद्धासनार्थं ये ।५॥ श्रयोस्तु ॥

समहानप्ययमुचैः । पक्षेणैकेन पूरितो ग्रंथः ।
कर्णामृतं पटुधियां जयति चरित्रं पवित्रमिदं ॥६॥ श्रीः ॥

આ પુષ્પિકામાં એમ જણાવવામાં આવ્યું છે કે — "પ્રસ્તુત હાથપોથી પાટણમાં વિ. સં. ૧૭૧૦માં લખી છે. એ લખવા પહેલાં ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજે આ આખો ગ્રંથ પાટણમાં વાંચી લીધો

હતો અને ત્યારપછી શ્રીનયવિજયજી મહારાજ, શ્રીજયસોમપંડિત, શ્રીલાભવિજયજી મહારાજ, શ્રી કીર્તિરત્નગણી, શ્રીતત્ત્વવિજયજી, શ્રીરવિવિજય પંડિત અને ખુદ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ, એમ સાત મુનિવરોએ મળીને ૧૮૦૦૦ શ્લોક પ્રમાણ આ મહાકાય શાસ્ત્રની માત્ર એક પખવાડીયામાં — પંદર દિવસમાં જ પોથી લખી છે — નકલ કરી છે."

આ ગ્રંથની નકલ કરવા માટે આટલી બધી ઉતાવળ કરવી પડી એ એક નવાઈ જેવી વાત છે. શું જેમની પાસે આ વિરલ ગ્રંથની પ્રતિ હશે તેમણે આવી શરત પાડી હશે કે શું? — એ એક કોયડો જ છે; અસ્તુ. આ ગ્રંથ કેટલા મહત્ત્વનો અને જૈન દર્શનનિરૂપણના અને જૈનશાસનના આધાર સ્વરૂપ છે! એની પ્રતીતિ આપણને એટલાથી જ થાય છે કે શ્રીયશોવિજયજી જેવાએ આ ગ્રંથની નકલ કરવાનું કાર્ય હાથ ધર્યું.

પ્રસ્તુત પ્રતિને લખવામાં જે સાત મુનિવરોએ ભાગ લીધો છે તેમના અક્ષરો અત્યારે પારખવાનું શક્ય નથી. આ લખાણમાંથી આપણે માત્ર શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ અને તેમના ગુરુવર શ્રી નય-વિજયજીના હસ્તાક્ષરોને પારખી શકીએ તેમ છીએ. આ ગ્રંથમાં પત્ર ૧ થી ૪૪, ૫૭ થી ૭૬, ૨૫૧ થી ૨૫૫ અને ૨૬૧ થી ૨૬૪ એમ કુલે ૭૩ પાનાં શ્રીયશોવિજયજીએ લખેલાં છે. જેનાં અક્ષરો ઝીણા હોઈ એકંદર ૪૫૦૦ થી ૪૮૦૦ જેટલી શ્લોકસંખ્યા થાય છે. શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ પંદર દિવસમાં ચોક્સાઈપૂર્વક આટલું બધું લખી કાઢે, એ એમની લેખનકળા વિષયક સિદ્ધહસ્તતાનો અપૂર્વ નમૂનો જ છે અને એ સૌ કોઈને આશ્ચર્યચકિત કરે તેવી હકીકત છે.

પ્રસ્તુત પ્રતિનાં કુલે ૨૦૯ પાનાં છે. તેમાં પંક્તિઓનાં લખાણનો કંઈ ખાસ મેળ નથી. સૌએ પોતાની સુવિધા પ્રમાણે લીટીઓ લખી છે છતાં મોટે ભાગે ૧૭ થી ઓછી નથી અને ૨૪ થી વધારે નથી. પ્રતિની લંબાઈ-પહોળાઈ ૧૦×૪॥ ઇંચની છે. ૨૦૯મા પાનામાંના અંતિમ ૭ શ્લોક પ્રમાણ પુષ્પિકા શ્રીયશોવિજયજી મહારાજે લખેલી છે.

અંતમાં એક વાત જણાવીને આ વક્તવ્ય પૂરું કરવામાં આવે છે. આજે આપણને નયચક્ર ગ્રંથની જે પ્રાચીન — અર્વાચીન પોથીઓ મળે છે અને શ્રીયશોવિજયજી મહારાજના હાથની જે પોથી મળી આવી છે તે માત્ર નયચક્ર ગ્રંથ ઉપર આચાર્ય શ્રીસિંહવાદી — ગણિ — ક્ષમાશ્રમણે રચેલી ટીકા માત્ર જ છે. આજે જૈન શ્રીસંઘના જ્ઞાનભંડારોની નિરાશા છે કે આચાર્ય શ્રી મલ્લવાદિ પ્રણીત એ મૂલ્યવાન નયચક્ર ગ્રંથની નકલ આજે ક્યાંય જોવામાં આવતી નથી. આ ગ્રંથની હાથપોથીને શોધી કાઢનાર ખરેખર જૈન જગતમાં જ નહિ પણ સમસ્ત વિદ્વજ્જનમાં સુવર્ણ કીર્તિરૂપે ચમકતો રહેશે, મનાશે અને પૂજાશે.

ક્રિયાનું મહત્ત્વ

જૈસે પાવ કોઉ શિર બાંધે, પહિરન નહિ લંગોટી,
સદ્ગુરુ પાસ ક્રિયા બિનુ માગે, આગમ બાત ત્યૂં ખોટી.

—ઉપા. શ્રી યશોવિજયજી

न्यायविशारद न्यायाचार्य उपाध्याय श्रीयशोविजयजी महाराजना जीवनकालनी विचारणामां अपूर्व प्रकाश पाडतो
वि. सं. १६६३ मां चीतरायेलो ऐतिहासिक वस्त्रपट

[मुनि श्री यशोविजयजीना संग्रहमांथी]

અન્ય વિષયક નિબંધો

વિભાગ બીજો

નોંધ—અહીં પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી ભગવાનના જીવન-કવનને સ્પર્શતા લેખો-નિબંધોનો પ્રથમ વિભાગ પૂર્ણ થાય છે. શ્રીમદ્‌ના જીવન-કવન ઉપર સુજસવેલી સિવાય કોઈ વિશિષ્ટ સાહિત્ય તૈયાર ન હોવાના કારણે તેમ જ તે અંગેના જાણકારો પણ અલ્પ હોવાથી, સત્ર પ્રસંગે સમિતિએ લેખો માટે જે વિનંતિ કરેલી તેમાં સમજીને જ તેઓશ્રીના જીવન સિવાયના અન્ય વિષયો ઉપર પણ લખી શકશો તેવું જણાવેલું. એ વિનંતિનો સમાદર કરીને વિદ્વાન લેખકોએ મોકલાવેલા નિબંધોનો બીજો વિભાગ અહીંથી શરૂ થાય છે.

—સંપાદક

अरुणन्महेन्द्रो मथुराम्—

[लेखक— डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, काशी विश्व-विद्यालय]
(Dr. Vasudeva Saran Agrawal)

जैनेन्द्रव्याकरण सूत्र २।२।९२ (अनद्यतने लङ्) की अभयनन्दि विरचित महावृत्ति में लिखा है—

परोक्षे लोक विज्ञाते प्रयोक्तुः शक्यदर्शनत्वेन–दर्शनविषये लङ् वक्तव्यः। अरुणन्महेन्द्रो मथुराम्। अरुणद् यवनः साकेतम्।

इस उल्लेख को पढ़ते ही पतञ्जलि के महाभाष्य के अन्तर्गत निम्नलिखित प्रकरण का ध्यान आता है—

(वार्तिक) परोक्षे च लोकविज्ञाते प्रयोक्तुर्दर्शनविषये:।

(भाष्य) परोक्षे च लोकविज्ञाते प्रयोक्तुर्दर्शनविषये लङ् वक्तव्यः। अरुणद्यवनः साकेतम्। अरुणद्यवनो मध्यमिकाम्। (महाभाष्य, सूत्र ३।२।१११ अनद्यतने लङ्।

यह स्पष्ट है कि यहां जैनेन्द्रव्याकरण के रचयिता ने उसी विषय की चर्चा की है जिस पर कात्यायन का वार्तिक और पतञ्जलि का भाष्य है और यह भी सम्भव है कि महावृत्ति के कर्त्ता अभयनन्दि के सामने उदाहरण लिखते हुये पतञ्जलि की सामग्री उपस्थित थी। 'अरुणद्यवनः साकेतम्' उदाहरण-दोनों में समान हैं। शेष दो उदाहरण भिन्न हैं। इस प्रकार यहां तीन ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख है—

पतञ्जलि { १–अरुणद् यवनः साकेतम्।
२–अरुणद् यवनः मध्यमिकाम्।

अभयनन्दि { ३–अरुणन्महेन्द्रो मथुराम्।

'यवन ने साकेत और मध्यमिका पर आक्रमण करके उन दो नगरों पर घेरा डाला। महेन्द्र ने मथुरा को छेडकर उसका घेरा डाला।' व्याकरण के नियम के अनुसार ये तीनों लोकों में प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटनाएँ (लोकविज्ञात) होनी चाहिये। दूसरी शर्त यह थी कि जो व्यक्ति इस वाक्य का प्रयोग करे वह उस काल में जीवित हो, जब ये घटनाएँ घटीं, अर्थात् घटनाएँ उसके समकालीन होनी चाहिये। पतञ्जलि ने जब साकेत और मध्यमिका पर यवन-आक्रमण का उल्लेख

किया तब वे इन लोकविज्ञात घटनाओं के समकालीन थे। ऐतिहासिकों का मत है कि यवन राजा मीनंडर ने पंजाब या मद्रदेश की राजधानी शाकल पर अधिकार करके पूर्वी भारत की ओर एक अभियान किया और वह बढ़ता हुआ साकेत और पाटलिपुत्र तक चला गया। पर वहां वह स्थिर न रह सका। किसी कारणवश वह शीघ्र ही पाटलिपुत्र से वापिस लौटा। इसका एक कारण यह कहा जाता है कि कलिंगराज महामेघवाहन खारवेल ने मगध पर जो अभियान किया था उसके भय से यवनराज डिमित मथुरा की ओर लौट गया। यवनों का यह अभियान पुष्यमित्र शुंग के समय में हुआ था। उस समय पतञ्जलि जीवित थे। अतएव सूत्र पर लिखते हुये उन्होंने अपने समय की 'आंखों देखी' (प्रयोक्तुर्दर्शनविषये) लोकप्रसिद्ध घटना का उल्लेख कर दिया। वस्तुतः पतञ्जलि ने यवनों के दो अभियानों का वर्णन किया है। एक पूर्वी जो साकेत की ओर हुआ था, और दूसरा दक्षिण-पश्चिमी, जो मध्यमिका नगरी की ओर हुआ था। मध्यमिका चित्तौर के पास नगरी स्थान है जहांसे प्राप्त शिवि जनपद के पुराने सिक्कों पर 'मझमिका' नाम पाया गया है। मध्यमिका और मझमिका एक ही हैं। इससे निश्चित है कि यवनों का एक हमला दक्षिण की ओर हुआ जिसमें यवन-सेना तीर की तरह देश के भीतर घुसती हुई चित्तौड तक पहुंच गई थी। दक्षिण-पश्चिम का अभियान अरखोसिया (हरहैती) या अरगन्दाब प्रदेश की ओर से बढ़कर पाटल (दक्षिणी सिन्ध), और सुराष्ट्र पर अधिकार करता हुआ सिगर्दिस् तक पहुंच गया था, जिसकी पहचान श्वभ्रमती या साबरमती के कांठ से की जा सकती है, जिसका प्राचीन नाम 'बहुगर्त' देश भी था (कैम्ब्रिज हिस्ट्री १।५४२) यूनानी इतिहास लेखक स्त्राबो ने लिखा है कि मीनंडर और डिमिट्रियस दोनों ने, यवनों के ये अभियान किये थे। ज्ञात होता है कि मीनंडर यवनराज था जिसकी अध्यक्षता में डिमिट्रियस ने सेना का संचालन किया। लोक में ख्याति यही हुई कि मीनंडर ने ही विजय की। इसी प्रसंग में डिमिट्रियस ने सिन्ध-सौवीर देश में दात्तामित्री नगरी की विजय की स्थापना की, जिसका उल्लेख काशिका (४।२।७६) में आया है।

भारतीय साहित्यमें भी इस यवन अभियान की गूंज पाई जाती है। गार्गी संहिता के युग-पुराण अंश में लिखा है :—

ततः साकेतमाक्रम्य पाञ्चाला [न्] माथुरांस्तथा।
यवनाश्च सुविक्रान्ताः प्राप्स्यन्ति कुसुमध्वजम्॥
ततः पुष्पपुरे प्राप्ते कर्दमे प्रथिते हिते।
आकुलाः विषयाः सर्वे भविष्यन्ति न संशयः॥
मध्यदेशे न स्थास्यन्ति यवना युद्धदुर्मदाः।
तेषामन्योन्यसंभावाद् भविष्यन्ति न संशयः॥
आत्मचक्रोत्थितं घोरं युद्धं परमदारुणम्।
ततो युगवशात्तेषां यवनानां परिक्षये॥

इसमें स्पष्ट कहा है कि सुविक्रान्त यवन साकेत, पाञ्चाल और मथुरा को आक्रान्त करके उन्हें अपने अधिकार में लाकर, कुसुमध्वज पाटलिपुत्र तक पहुंच जायेंगे। वहां बड़ी मारामारी होगी और समस्त देश आकुल हो उठेगा। किन्तु युद्धदुर्मद यवन मध्यदेश में ठहर न पावेंगे, क्योंकि आपसी स्पर्धा से (अन्योन्य संभावाद्) उनके अपने ही मंडल में घनघोर युद्ध छिड़ जायगा, जिसके कारण वे मध्यदेश से हटने पर बाध्य होंगे।

इस वर्णन में यवनों द्वारा साकेत और मथुरा पर आक्रमण करने का स्पष्ट उल्लेख है। वही लोकप्रसिद्ध घटना व्याकरण के निम्नलिखित दो उदाहरणों में कही गई है—

अरुणन्महेन्द्रो मथुराम्। अरुणद् यवनः साकेतम्।

जैनेन्द्रमहावृत्ति के लेखक अभयनन्दि के सामने कोई अति प्राचीन अनुश्रुति विद्यमान थी, जहांसे शुंगकाल की ऐतिहासिक घटनाओं के ये उदाहरण उन्होंने लिये। व्याकरण के नियम के अनुसार तो लेखक को अपनी समकालीन घटना के उदाहरण देने चाहिये, जैसा—हेमचन्द्रने 'ख्याते दृश्ये' सूत्र (५।२।८) पर स्वोपज्ञ लघुवृत्ति में 'अरुणत् सिद्धराजोऽवन्तीम्' लिखकर किया है। किन्तु अभयनन्दिने इसकी उपेक्षा करके दो टकसाली प्राचीन उदाहरण ही रख लिए। उनके सामने ये इस प्रकार के व्याकरण नियम के लिये मूर्धाभिषिक्त उदाहरण की तरह विद्यमान थे। अभयनन्दि ने कहां से ये उदाहरण लिये यह तो इस समय विदित नहीं, किन्तु इनमें 'अरुणन्महेन्द्रो मथुराम्' उदाहरण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, जो किसी प्राचीन टीका में पड़ा रह गया होगा। इस उदाहरण में ऐतिहासिक तथ्य यह है कि यहां यवनराज मीनंडर के पूर्वी अभियान के प्रसंग में मथुरा पर अधिकार कर लेने का उल्लेख है। इसका मूलपाठ मेरी समझमें इस प्रकार था—

अरुणन्मेनन्द्रो मथुराम्।

अर्थात् मेनन्द्र ने मथुरा को आक्रान्त किया। मीनंडर के सिक्को पर उसके नाम का भारतीय रूप खरोष्ठी लिपि में मेनन्द्र ही मिलता है। पीछे के किसी लेखक ने 'मेनन्द्र' नाम से परिचित न होने के कारण भ्रम में पड़कर 'महेन्द्र' पाठ बना दिया। मेरी दृष्टि में मूलपाठ मेनन्द्र निश्चित ही है। साकेत का यवन आक्रमण और मेनन्द्र द्वारा मथुरा का आक्रमण—ये दोनों उदाहरण एक ही कोटि के हैं और यूनानी राजा मीनंडर के पूर्वी भारत पर चढ़ाई के स्मारक हैं।

बहुत कुछ सम्भावना यही है कि अभयनन्दि ने उदाहरणों का जो क्रम रक्खा है वही क्रम उस मूलग्रन्थ में भी था, जहांसे उन्होंने अपनी सामग्री ली। उन्हें जैसा मिला, वैसा ही यथावत् रख लिया। यदि यह अनुमान सत्य हो तो इससे एक परिणाम और निकलता है। पूर्वी अभियान का नेतृत्व स्वयं यवनराज मेनन्द्र कर रहे थे और मथुरा तक की चढ़ाई में स्वयं आए। मथुरा पर अधिकार कर लेने के बाद सम्भवतः वे स्वयं आगे नहीं बढ़े। आगे साकेत की चढ़ाई में सेनाका

नेतृत्व उनके सेनानी डिमिट्रियस ने किया ज्ञात होता है और वही सेना पाटलिपुत्र भी पहुंची होगी। इसीलिए 'यवनराज दिमित' का नाम खारवेल के हाथीगुफा लेख में आया है, जैसा श्री जायसवालजी ने पढ़ा था।

इस अभियान के कुछ पुरातत्वगत प्रमाण भी हाल में मिले हैं। मीनेंडर के सिक्के तो मथुरा में पहले से ही मिलते थे। इधर १९४० की खुदाई में काशी के समीप गंगा तट पर स्थित राजघाट नामक पुराने अवशेषों में यूनानियों की बहुत सी मिट्टी की मुहरें पाई गई हैं। उनपर देवी अथीना, देवता अपोलो, विजय की देवी नाइकी और हरक्यूलीज की मूर्तियां अंकित हैं। एवम् कुछ मुद्राओं पर किसी यूनानी राजा का मस्तक भी है, जो अभी तक ठीक नहीं पहचाना गया। इन मुहरों के राजघाट में मिलने की व्याख्या इसी प्रकार हो सकती है कि जब यवनसेना साकेत-विजय के बाद पाटलिपुत्र की ओर बढ़ी तो उनकी एक छावनी मार्ग में काशी के गंगातट पर बनाई गई। वहीं ये मुहरें मिली हैं। इसमें तो सन्देह नहीं कि यवन-सेना ने काशी-राजघाट में ठीक उसी स्थान पर गंगा पार की, जहां आज भी राजघाट के पुल से रेल गंगा पार करती है। कुसुमध्वज पाटलिपुत्र के लिये यही आखिरी नाका था। प्राचीन काल से ही बिम्बिसार और अजातशत्रु जैसे मगधराज काशी के इस नाके को अपने अधिकार में रखने के लिये उत्सुक रहते थे।

ધર્મમાંહી દયાધર્મ મોટો બ્રહ્મવ્રતમાંહિ વજ્જર-હીરો
દાનમાંહિ અભયદાન રૂડું, તપમાંહિ જે કહેવું ન કૂડું

× × ×

રતનતણી જિમ પેટી, ભાર અલ્પ બહુ મૂલ
ચૌદપૂરવનું સાર છે, મંત્ર એ તેહને તુલ્ય
સકલ સમય અભ્યંતર, એ પદ પંચ પ્રમાણ
મહસુઅ-ખંધ તે જાણો, ચૂલા સહિત સુજાણ
[યશોવિજય] [પંચપરમેષ્ઠિ ગીતા]

× × ×

आध्यात्मतत्त्ववेत्ता श्रीमद् देवचंद्रजी—

[लेखक-श्रीयुत अगरचंदजी नाहटा]

जैन दर्शन के अनुसार विश्व ६ द्रव्योंका समूह है। इनमेंसे धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय व आकाशास्तिकाय ये अरूपी आगम एवम् अनुमान प्रतीतिरूप है। काल औपचारिक द्रव्य माना गया है। शेप पुद्‌गलास्तिकाय व जीवास्तिकाय ये दो प्रतीतिसुलभ है। इनमें से पुद्‌गलास्तिकाय ही रूपी द्रव्य है, बाकी के सभी अरूपी हैं। मूलत: जड़ और चेतन दो में ही इन छहों द्रव्यों का समावेश हो जाता है। जीव के अतिरिक्त पांचों द्रव्य जड़ के अंतर्भुक्त होते हैं। जीव भी अनादि काल से पुद्‌गलों के साथ रहा हुआ है इससे इसकी दो अवस्थायें मानी गई हैं। मूलतः जो उसका स्वरूपधर्म है उसे स्वभावदशा और पौद्‌गलिक संभोगों से प्राप्त दशा को विभावदशा कहा गई है। वस्तु स्वरूप का गहरा चिन्तन करने पर मनीपियों ने आत्मा के स्वरूप का अनुभव किया और उसकी वर्तमान विभावदशा के कारणों की शोध कर स्वभावदशा की प्राप्ति के साधन ढूंढ निकाले। जहां तक हमारी वृत्ति बाह्यमुखी रहती है वहां तक आत्मअनुभव ठीक से नहीं हो सकता। अतः उन्होंने बाह्यदशा पौद्‌गलिक पदार्थों व उनके संभोग से होने वाले जीव के रागद्वेपादि भावों से सम्बन्ध घटाते रह अंतर्मुखी होने पर जोर दिया है। उन्होंने अपने जीवन में जिस तत्त्वज्ञान की उपलब्धि चिरसाधना से की, जनता के हितार्थ प्रचारित किया। शरीर, इन्द्रिय व बाहरी पदार्थों से वृत्ति हटाकर आत्मा की शोध में लगना यही आध्यात्मिक भूमिका है।

आत्मा की शुद्ध अवस्था का नाम परमात्मा या सिद्धअवस्था है। साधारण जीव बहिरात्मा होते हैं उनका ध्यान धन, देह, गेह, कुटुम्ब परिवार आदि बाहरी पदार्थों में गुंथा रहता है। इसके पश्चात् जब आत्मा देहादि भिन्न आत्मा के स्वरूपप्राप्ति की ओर अग्रसर होता है तो उसे अन्तरात्मा कहा जाता है और साधना के द्वारा आत्मा की शुद्ध अवस्था प्राप्त कर ली जाती है तब परमात्मा कहा जाता है। जीवन के लिये परमात्मा स्वरूप ही लक्ष्य है। इस तत्त्वज्ञान का अनुभव व साक्षात्कार करने वाले अनेक आध्यात्मिक महापुरुष हो गये हैं। उन्होंने भिन्न भिन्न प्रकार व साधनों से आत्मा की अनुभूति की और जीवों की रुचि व प्रकृतिभिन्नता को हृदयंगम कर विविध मार्गों को प्रचारित किया। लक्ष्य आत्मा की शुद्धावस्था-परमात्मदशा की प्राप्ति एक ही होने पर भी किसी ने भक्ति को प्रधानता दी, किसी ने योग को, किसी ने ज्ञान को। योग में भी हठयोग, राजयोग,

कर्मयोग प्रधान हैं। जैन दर्शन में ज्ञान एवम् क्रिया दोनों के सम्मिलित को मोक्षमार्ग माना है। इस दर्शन के अनुसार प्रत्येक जीव स्वभावरूप से परमात्मा है। उस अवस्था का तिरोभाव कर्मबंध के कारण हुआ है। कर्मबंध मिथ्यात्व अविरति कषाय और योग से होता है और संयम और तप द्वारा कर्मनाश होता है। कर्मनाश ही मुक्ति है-यही जीव का चरम व परम लक्ष्य है-साध्य है।

भ० महावीर के पश्चात् कुन्दकुन्द, पूज्यपाद, योगीन्द्र शुभचन्द्रादि अनेक आचार्य आध्यात्म ग्रन्थ प्रणेता हो गये हैं, जिनके ग्रन्थ सर्वत्र प्रसिद्ध हैं। आचार्य सिद्धर्षि ने रूपक के बहाने आत्म-तत्त्व को जो विशद् स्वरूप चित्रित किया है वह अनुपम है। आ० उमास्वाति का प्रशमरति, हरिभद्रसूरि के योगबिन्दु, योगदृष्टिसमुच्चय आदि ग्रन्थ मौलिक से हैं। आ० मुनिचन्द्रसूरि का आध्यात्मकल्पद्रुम भी अच्छा ग्रन्थ है। सतरहवीं शती के उत्तरार्द्ध में कविवर बनारसीदासजी के समयसार ग्रन्थ का चारों ओर अच्छा प्रभाव विस्तार हुआ। १८वीं शती में मुल्ताण में कई श्रावक आध्यात्म रंग में रंगे हुए प्रतीत होते हैं। उनकी चर्चा का यही एक विषय था। उनकी आध्यात्म-रसिकताकी छाप मुल्ताण में चातुर्मास करने वाले यतियों पर पड़ती। मेरी धारणानुसार प्रस्तुत लेख में जिन आध्यात्मतत्त्ववेत्ता का परिचय करवाया जा रहा है। उन पर भी उस वातावरण के प्रभावने अच्छा काम किया है।

१८वीं शती के प्रारम्भ में भरत योगीराज आनन्दघनजी की साधना मेडता में होना सर्वविदित है। उनकी चोवीशी एवम् पदों से जैन समाज तो सुपरिचित है ही, जैनेतर विद्वान भी आपके प्रशंसक हैं। आनन्दघनजी की चोवीसी के बाद आध्यात्मतत्त्व गर्भित चोवीशी श्रीमद् देवचन्द्रजी की मानी जाती है। आपके समग्त ग्रन्थों की खोज कर आध्यात्म ग्रन्थ प्रणेता योगी श्रीबुद्धिसागरसूरिजी ने श्रीमद् देवचन्द्र नामक दो बड़ी बड़ी जिल्दों में आध्यात्म ज्ञान प्रसारक मण्डल से प्रकाशित करने का निश्चय किया था। तदनुसारप्रथम भाग में श्रीमद् देवचन्द्रजी के आगमसार, नयचक्रसार, कर्मग्रन्थ व प्रश्नोत्तरादि ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं और दूसरे भाग में ध्यानचतुष्पदी, द्रव्यप्रकाश, चोवीसी, बीसी, सज्झायादि पद्य रचनाएँ प्रकाशित हैं। ज्ञानसार टीकादि का भाग प्रकाशित नहीं हुआ, यद्यपि वे पहले संस्करण भी छप ही चुके हैं। मुझे आपकी अप्रकाशित कई रचनायें प्राप्त हुई थीं जिन्हें अतीत चौवीसी स्तवनादि के परिशिष्टमें प्रकाशित कर दीया गया हैं। अप्रकाशित में दण्डक बालावबोध की नकल हमारे संग्रह में है। सप्त-स्मरण की प्रति कई वर्ष पूर्व देखी थी, पर जिस संग्रह में देखी वह बिकी हो इतस्ततः हो गयी। शांतरस नामक एक गद्य भाषाकृति के कर्ता एक प्रति के अनुसार श्रीमद् ही हैं, पर अन्य प्रतियों में इसका सूचन नहीं होने से संदेहास्पद है।

श्रीमद् देवचन्द्रजी का जन्म वि० सम्वत् १७४६ में बीकानेर के निकटवर्ती किसी ग्राम में हुआ था। लूणीया तुलसीदासजी की पत्नी धनबाई की कुक्षि से आपका जन्म हुआ था। १० वर्ष की आयु में खरतरगच्छीय वाचक राजसागरजी से आपने दीक्षा ग्रहण की। देवचन्द्र आपका जन्म नाम

था। दीक्षित होने पर आपका नाम राजविमल रखा गया था, पर आपका वह नाम अधिक प्रसिद्ध नहीं हुआ। श्रीमद् ने ध्यानचतुष्पदी आदि की प्रशस्ति में यह नाम भी प्रयुक्त किया है। विद्याध्ययन आपका बहुत अच्छी तरह हुआ। देवविलास के अनुसार वेनातट में दीक्षागुरु राजसागरजी के दिये सरस्वतीमन्त्र की आपने साधना कर सरस्वती की प्रसन्नता प्राप्त की। द्रव्यनुयोग में आपकी विशेष गति थी।

संयोगवश अपने गुरुश्री के साथ सिन्ध की ओर विहार किया। जैसा कि ऊपर लिखा गया है उस समय मुलताण में मिट्ठमल भणसाली आदि आध्यात्मरसिक श्रावक रहते थे उनकी प्रेरणा से आपने आध्यात्मिक ग्रन्थो का अध्ययन—आध्यापन किया। आपकी सर्वप्रथम रचना ज्ञानार्णव का राजस्थानी पद्यानुवाद ध्यानदीपिकाचतुष्पदी के नाम से प्रकाशित है जिसकी प्रशस्ति में आपने लिखा है—

> " आध्यातम श्रद्धानां धारी, जिहां वसे नरनारीजी,
> परमिथ्यात्वना परिहारी, स्वपर विवेचन कारीनी ॥
> निजगुण चरचा तिहांथी करता, मन अनुभव में वढताजी,
> स्याद्वाद निजगुण अनुसरतां नित अधिको सुख धरतांजी ॥
> भणसाली मिट्ठमल ज्ञाता, आतम-सूरज ध्याताजी,
> तसु आग्रह चउपाई जोडी, सुणतां सुखनी कोडीजी ॥ "

इसकी परवर्ती रचना "द्रव्य-प्रकाश" है, जो हिन्दी सवैया, दोहा आदि में षड् द्रव्य निरूपणार्थ सं० १७६७ बीकानेरमें बनाया गया है। यह भी उपर्युक्त मिट्ठमल आदि के लिये ही बनाया गया था—'आतम सभाव मिट्ठमलका'।

द्रव्यानुयोग विषयक गद्य ग्रन्थरत्न आगमसार की रचना मरोठ में विमलदासजी की पुत्री माइजी अभाईजी के लिये की गई थी।

सं० १७७७ में आपका विहार गुजरात की ओर समृद्धिशाली गुजरात की भूत-पूर्व राजधानी जैनधर्म के केन्द्र स्थान पाटण नगर में पधारे। नगरसेठ तेजसी दोसी सहस्रकूट जिनालय बना रहे थे। प्रसंगवश "सहस्रकूट" जिनके नामों के सम्बन्ध में श्रीमद् देवचन्द्रजी के पूछने पर सेठने ज्ञानविमलसूरिजी से नाम पूछने पर सूरिजी बता नहीं सके। अन्त में दोनों विद्वानों के जिनालय में 'सत्तर-भेदी' पूजा के समय उपस्थित होने पर, सुयोग देख, नगरसेठने फिर सूरिजी को पूछा। उनके अनुपलब्ध बतलाने पर श्रीमद् देवचन्द्रजीने शिष्य की ओर संकेत कर सहस्रकूट जिन नामावलि का पत्र हाथ में थमा दिया। यह देख ज्ञानविमलसूरिजी अत्यन्त चमत्कृत हुए और आपकी विद्वत् गुरु परम्परादि की प्रशंसा की। पाटण में आपके तात्विक-व्याख्यानों से जनता को असीम लाभ हुआ।

श्रीमद् देवचन्द्रजी के समय साध्वाचार में कुछ शिथिलता आ गई थी। अन्तमें आपने क्रियोद्धार कर उसका परिहार किया। सं० १७७७ में ही अहमदाबाद पधारे। "नागोरीसराय" (हाल-'नागोरीशाला') में आपका ठहरना हुआ। व्याख्यान में अध्यात्मज्ञान की अविरल धारा प्रवाहित होने लगी। श्रोतागणों में धार्मिक आह्लाद बढ़ने लगा तथा भगवती-जैसे सूत्रों का गंभीर रहस्योद्घाटन होने लगा। सं० १७८१ का चातुर्मास खंभात किया। आपश्री के उपदेश से शत्रुंजय तीर्थ की व्यवस्था व जीर्णोद्धार के निमित्त पेढ़ी की स्थापना हुई। सूरतादि में चौमासा समाप्त करते हुए सं० १७८८ में "राजनगर" में चौमासा किया। मिती आषाढ शुक्ला २ को आपके गुरु दीपचन्द्रजीका स्वर्गवास हो गया। तपागच्छीय विवेकविजयादि को आपने शास्त्रों का अध्ययन कराया।

अहमदाबाद का शासनसूत्र इस समय रत्नचन्द्रजी भण्डारी के हाथ में था। 'आणंदरामजी' उनके प्रधान कार्यकर्ता थे और वे भी श्रीमद् के अनन्य भक्त थे। उनसे आपकी प्रशंसा सुनकर भण्डारीजी भी आपके उपदेशों से लाभ उठाने लगे। आपश्रीने भण्डारीजी के अनुरोध से महामारी का उपद्रव मन्त्राम्नाय से निवारण किया था। धोलका के श्रेष्ठी जयचन्दने पुरुषोत्तम योगी को गुरुश्री के पास लाके प्रतिबोधित कराया। सं० १७९५ में पालीताना व सं० १७९६–९७ का नवानगर में चातुर्मास किया। पश्चात् राणावाव का ठाकुर आपका भक्त हो गया। सं० १८०४ में भावनगर में चातुर्मास कर पालीतानाका मृगि उपद्रव उपशान्त किया। सं० १८०५ में लींबडी के श्रावकों को धर्म-लाभ दिया। राजनगर, पालीताना, लींबडी, ध्रांगध्रा, नवानगर चूड़ा आदि में आपने जिनालयों व जिनबिम्बों की प्रतिष्ठा की। अनेक मूर्ति-पूजा-विरोधी व्यक्तियों ने जिनभक्ति में मन लगाया। सं० १८०८–१० में शत्रुंजय तीर्थका संघ निकला। उसमें आप भी सम्मिलित थे। कचरा कीका संघयात्रा प्रसिद्ध है। सं० १८१२ में आपका चातुर्मास राजनगर में हुआ और वहीं आपका स्वर्गवास हो गया। आपके शिष्य मनरूपजी, विजयचन्द्रजी व शिष्य वस्तुजी रायचन्द्रजी, सभाचन्द, विवेकचन्द्रादि विनयवान् एवं सद्गुणानुरागी व क्रियापात्र थे। अन्तिम समय पर उत्तराध्ययन, दशवैकालिकादि सूत्रोंका श्रवण करते हुए सं० १८१२ में भाद्र वदि १५ एक प्रहर रात्रि व्यतीत होने पर आपने स्वर्गारोहण किया।

श्रीमद् यशोविजयजी के "ज्ञानसार" ग्रन्थ पर संस्कृत में आपने सुन्दर टीका बनाई है। प्राकृत में कर्मग्रन्थ सम्बन्धी ३–४ ग्रन्थों का निर्माण किया है। हिन्दी में 'द्रव्यप्रकाश' पूर्ववर्ती रचनाएँ, मातृभाषा राजस्थानी की गद्यपद्य में व परवर्ती गुजरात में अधिक रहने से गुजराती भाषा में रचित हैं।

चौबीसी के आदि स्तवनों में अपने तत्त्व ज्ञान के साथ साथ भक्ति का अखण्ड प्रवाह बहाया है। "अध्यात्म-गीता" अध्यात्म ज्ञानकी सुन्दर रचना है। "अष्ट प्रवचन" माता की सज्झाय में आपने मुनि के प्रत्येक प्रवृत्ति का रहस्योद्घाटन किया है "पंच भावना में सत्व एकत्वं एकत्वं

भावना तो प्रमाद निद्रा से हटाने के लिये सुघोषघंटानाद सदृष्य है। गजसुकुमाल, ढंढण एवम् प्रभंजना आदि सज्झायों में जो अध्यात्म-रस उडेला गया है वैसे अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। "स्नात्र-पूजा" तो आपकी भक्तिरस की श्रोतस्विनी ही है। स्तवन सज्झाय आदि तो अनेक जैन कवियों की हजारों की संख्या में उपलब्ध हैं पर आपकी रचनाओं में अध्यात्म-रसधारा जिस रूप में छलक पडती है, वह अपनी अमिट छाप हृदय पर सर्वदा के लिए अंकित कर जाती है। अध्यात्म-तत्व मानों आपके हृदय में मूर्तिमान होकर विराजमान हो गया हो। स्तवनों एवम् स्नात्र पूजा आदि में भक्ति-रस की जो मन्दाकिनी प्रवाहित की है, उसकी शैली अन्य कवियों से भिन्न है। आपके भक्ति पदों में भी अध्यात्म जैन तत्व-ज्ञान का गहरा प्रभाव नजर आता है। फलतः आपकी प्रभुभक्ति में, जैसे दूसरे जैन कवि भावावेश में जैनेत्व को भूल से गये हैं, वैसी वात आपकी रचनाओं में कहीं दृष्टि-गोचर नहीं होती। जैनमान्यतानुसार प्रभु परमात्मा है सही पर एक व्यक्ति विशेष नहीं, अनेक हैं। हां! गुणों की दृष्टि से उनमें एकता सहधार्मिकता अवश्य है। जैन व जैनेतर दृष्टिकोण में ईश्वर सम्बन्धी यह अन्तर है जैनेतर ईश्वरको "एक महान् शक्ति" सृष्टि कर्ता और कर्म-फलादिक दाता मानते हैं तव जैन कृतकृत्य वा सिद्ध शुद्ध मानते हैं। ईश्वरत्व प्राप्तकर लेने पर फिर कुछ भी करना उनके लिये अवशेष नहीं रह जाता अतः वे किसीको तारते हैं और न संसार में रुलाते हैं। जीव अपने भले के लिए सर्वथा स्वतंत्र है। वह अपने कार्यों द्वारा कर्म-बंधकर भवभ्रमण करता, बाह्य सुखदुखका अनुभव करता है और अपने ही प्रयत्न द्वारा कर्मों से मुक्त हो, शुद्ध-स्वरूप परमात्मा पद प्राप्त कर लेता है। यहां प्रश्न हो सकता है कि तव भक्तिको स्थान कहां रहा। इसका उत्तर यह है कि कर्म-निष्पत्ति के दो कारण हैं उपादान और निमित्त। मूल कारण तो उपादान ही है पर बहुत हदतक निमित्त को भी महत्वपूर्ण स्थान है। जैन-दर्शन के अनुसार मुक्ति पाने में उपादान तो स्वयं अपनी आत्मा या उसका पुरुषार्थ-प्रयत्न ही है पर प्रभु मार्ग प्रदर्शक, प्रेरक के रूपमें निमित्त कारण है। अतः उपादानको शुद्धता के लिये निमित्तका अवलम्बन भी आवश्यक माना गया है। और वहीं भक्ति को अवकाश मिलता है। हमें प्रभु से कुछ लेने व मांगने नहीं जाना है बल्कि उनको देखकर अपने शुद्ध व वास्तविक स्वरूप को स्मरण करना है और उनके जीवन और उपदेशों से निज-स्वरूप प्राप्ति के मर्म को जानकर प्रवृत्त होने की प्रेरणा लेनी है। कर्ता-भोक्ता हम स्वयं ही हैं। अरिहंत, जीवन-मुक्त, इसमें सहाय मार्गप्रदर्शन व वस्तुतत्वका वास्तविकरूप मोक्ष के उपाय वतलाने द्वारा करते हैं। और सिद्ध तो कह भी नहीं सकते उनसे तो हमें केवल प्रेरणा लेनी है। उनके दर्शनद्वारा अपने शुद्ध-स्वरूप का दर्शन करना है। उनके गुण-कीर्तनद्वारा अपनी आत्माके स्वाभाविक व वास्तविक गुणों को ही संभालना है। उनकी पूजा व भक्तिद्वारा उनके गुणों का अनुसरण व आदर-बुद्धि उत्पन्न करना है। उनके चरित्र से साधन मार्ग, उसके लिए आवश्यक तैयारी व अपने जीवन को तदनुरूप बनाने की प्रेरणा लेनी है। अपनी अशुद्धता व आत्मिक दौर्बल्य हटाना है। और दृढतर तितिक्षा, सहनशीलता सत्भाव वीतरागता आदि बढ़ाते जाना है।

श्रीमद् देवचन्द्रजी ने प्रभुलयताको पुनः पुनः जिस प्रकार स्पष्ट शब्दोंमें दुहराया है वैसा अन्य किसीने किया नहीं है। यही उनकी महान विशेषता व मौलिकता है। अब पाठकों को आपकी रचनाओं के कुछ चुने हुए पद्योंका रसास्वादन करा देना उचित समझता हूं जिससे उपरोक्त कथन को वे स्वयं अनुभव कर सकें।

प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेवके स्तवन में प्रभु से प्रीति करने का जो उपाय बतलाया गया है, वह अत्यन्त ही मार्मिक है—यथा सुनिये।

" प्रीति अनंती पर थकी, जे तोड़े हो ते जोड़े एह।
परम पुरुषथी रागता, एकत्वता हो दाखी गुणगेह ॥ "

अर्थात् प्रभु से प्रीति जो पर यानी अन्य भौतिक, क्षणभंगुर पदार्थों से मोह हटाने पर ही हो सकती है। प्रीति की डोर जो पर पदार्थों की ओर से हटाकर प्रभु के हाथमें ही जा सकती है। प्रीति करना मनुष्य का एक स्वभाव विशेष है। उसे जिधर जिस के साथ आप लगाना चाहें, लगा सकते हैं। लेकिन अन्य दूसरे पदार्थ और प्रभु अपने गुणों के अन्दर एक दूसरे से भिन्न गुण वाले तथा विरोधी हैं। इसलिये दोनों से ही एक संग प्रीति नहीं की जा सकती। इस पद के प्रथम चरणमें कहा गया है कि जितनी मात्रामें हमारी प्रीति पर पदार्थों व विषयादि में है, उसको तोड़ते हुए यदि हम प्रभुसे प्रीति-उनके गुणस्मरण और कीर्तन करते जाते हैं तब एक तरफ तो उदासीनता और दूसरी ओर तल्लीनता अपने आत्म-गुणोंमें निमग्नता को प्राप्त करते हैं।

दूसरे पद्में प्रभु को " आलम्बनरूप" बताया है कि जिसके द्वारा अपनी वास्तविक प्रभुता प्रगट होती है। वह इस प्रकार है—

" प्रभुजीने अवलम्बतां, निज प्रभुता हो प्रगटे गुण राश।
देवचन्द्रनी सेवना, आपे मुझ हो अविचल सुख वास ॥ "

अजितनाथ प्रभुके स्तवन के आरंभ में ही अजितप्रभु के अनन्त गुणोंकी सम्पदा को सुनकर गुणों के प्रगटीकरण होनेकी रुचि उत्पन्न होने का कहा गया है। दूसरे चरणों में कार्य सिद्धि तो कर्त्ता के हाथमें है पर निमित्त रूप से अपने सहायक प्रभु जिनेश्वर हैं। कारण से ही कार्य की सिद्धि होती है। प्रभु के दर्शन से आत्म-स्वरूप व शक्ति का स्मरण हो जाता है—इसे किस सुन्दर दृष्टान्त के साथ श्रीमद् देवचन्द्रजी कहते हैं।

" अज-कुलगत केसरी लहेरे, निज-पद सिंहनिहाळ।
तिम प्रभु भक्ते भवि लहेरे, आतम-शक्ति संभाळ ॥ "

अर्थात् जिस प्रकार सिंह-शावक बकरियों के झुंड में रहने के कारण अपने को भूलसे वैसा ही मानता है पर जब वह सिंह को देख लेता है, तब वह अपने वास्तविक स्वरूप को समझ कर सिंहों के समूह में चला जाता है। उसी प्रकार सांसारिक-उपमाओं में भूली हुई हमारी आत्मा जब वीतराग-प्रभु

के दर्शन करती है तब उसे अपनी वीतराग दशा व अनन्त ज्ञान-दर्शन-चरित्रादि गुणों का ज्ञान होता है और तद्रूप भक्त की आत्मा अपनी वास्तविक दशा को प्राप्त होती है।

कार्य-सिद्धि यदि अपने हाथ से ही हो तो फिर प्रभुको तारने आदि के लिए क्यों कहा जाता है? इसका रहस्य श्रीमद् अगले चरणमें स्पष्ट करते हैं।

" कारण पद कर्ता पिणेरे, करी आरोप अभेद।
निज-पद अर्थो प्रभु थकीरे, कर्ता अनेक उमेद ॥ "

अर्थात्—प्रभु कारण हैं। उनमें कर्त्तापने का आरोप कार्यसिद्धिमें सहायक मानकर किया गया है और उसी कर्त्तापने के आरोप के कारण प्रभुसे भक्त-याचक अनेक उम्मीदें व याचनाओं की मांग करता है।

प्रभु के दर्शनसे क्या लाभ मिला इसका उल्लेख अगले पदोंमें किया गया है। वाह्य पौद्-गलिक पदार्थोंमें सुख का जो भ्रम था-वह टल गया और आत्मा के वास्तविक सुख, आनन्द का बोध हो गया। इससे ग्राहकता, स्वामित्वता, भोक्ता-भाव रमणता दानपरिणामादि वाह्यगुण, अब अन्तर्मुखी हो गये। इसलिए प्रभु को निर्यामक (भव-समुद्र के तारक), माहण, वैद्य (भवरोग निवारक) गोप (षट्जीव रक्षक) और भाव धर्म दाता कहा जाता है।

तीसरे स्तवनमें प्रभु को अविसंवाद निमित्त होने से जगत जंतुओं के सुखकारक हैं। प्रभु मोक्ष-रूप कार्य के हेतु हैं। इस भावनासे वहुमान-पूर्वक सेवा करनेसे भव्य-जीवों को मोक्ष मिलता है। उपादान कारण आत्मा है और पुष्ट अवलम्बनरूप प्रभु हैं। उनकी सिद्धता हमारे लिये साधन रूप है अतःप्रभु-स्वरूप को जानकर उन्हें वंदन करने वाला उनकी शरणमें रहनेवाला धन्य है।

चौथे अभिनन्दन-स्तवन में प्रभु से रसरीति कैसे और कब होगी इस जिज्ञासा के उठाते हुए उत्तर में कहा गया है कि पौद्गलिक अनुभव के त्याग से ही प्रभुसे मिलने की प्रतीति होगी। प्रभुके गुणों की चर्चा आगे के पदों में की गई है।

पंचम सुमतिनाथ के स्तवन में उनके आध्यात्मिक गुणोंका वर्णन है। अन्तमें कहा गया है "माहरी शुद्ध सत्तातणी पूर्णता तेहनो हेतु प्रभु तूँही साचो" यानी हे प्रभु! मेरी शुद्धताकी पूर्णता के कारण आप ही हैं।

६वें श्री पद्म-प्रभप्रभु के स्तवन में प्रभु के संयोग से आत्मा की संपदा प्रकट होने का कहा गया है। "तिम मुझ आतम संपदारे, प्रगटे प्रभु संयोग।" पारसपत्थर के संयोग के स्पर्श से लोहा स्वर्ण वन जाता है उसी प्रकार प्रभु के गुण व्यक्त हैं। उनके गुणों के संयोग से हमारी अध्यात्म-दशा प्रगट होती है। आत्मसिद्धि में कारणभूत प्रभु का नाम निर्यामक सदृश है।

चन्द्र-प्रभप्रभु के स्तवन में वंदन, नमन, अर्चन, एवं गुणग्राम को द्रव्य सेवा वतलाते हुए भावसेवा से प्रभु-मय अभिन्न हो जाने को वतलाया है। आगे सेवा पर सानन्द घटाये गये हैं।

सुविधि-जिन स्तवन में प्रभु दर्शन से होनेवाले आनन्द का बड़ा मार्मिक चित्रण किया गया है। यथा:—

" दीठो सुविधि जिणंद, समाधि रसे भर्यो हो लाल।
भास्यो आत्म-स्वरूप अनादिनो विसर्यो। ,,
सकल विभाव उपाधि थकी मन ओसर्यो ,,
सत्ता साधन मार्ग भणी ए संचर्यो हो। ,,
दानादिक निजभाव हता जे परवशा ,,
ते निज सन्मुख भाव ग्रही लही तुज दशा रे! ,,
मोहादिकनी धूमि अनादिनी ऊतरे ,,
अमल अखण्ड अलिप्त, स्वभाव ज सांभरे रे। ,,
तत्त्व-रमण शुचि ध्यान भणी जे आदरे रे ,,
ते समतारस धाम, स्वामि मुद्रा वरे। ,,
प्रभु मुद्राने योग प्रभु प्रभुता लखे हो लाल। ,,
इण तणे साधर्म्य स्वसंपत्ति ओळखे हो। ,,
ओळखतां बहुमान सहित रुचि पण वधे, ,,
रुचि अनुयायी वीर्य चरण धारा सधे हो॥" ,,

यह पूरा स्तवन ही कवि के हृदय-स्थल से निसृत अध्यात्म-प्रवाह है। जिसे गाते ही हृदय आनन्द विभोर हो उठता है। पाठक स्वयं इसका रसास्वादन कर देखें!! निम्नलिखित स्तवन में कवि अपनी अभिलाषा भी कैसे सुन्दर ढंग से व्यक्त करता है:—

" प्रभु छो त्रिभुवन नाथ, दास हूं ताहरो,
करुणानिधि अभिलाष, अछे ए मुझ खरो।
आतम वस्तु स्वभाव सदा मुझ सांभरो,
भासन-वासन एह चरण ध्याने धरो।"

आगे के स्तवनों में श्रीमद् दूसरे कवियों की भांति दीनता व्यक्त नहीं कर प्रभु के निमित्त से अपना आत्म-स्वरूप समझ कर उसकी प्राप्ति में प्रवृत्त होने की ही प्रेरणा करते हैं।

" प्रभु-प्रभुता संभारता, गाता करतां गुणग्राम।
सेवक साधनता वरे निज संवर परिणति पाम रे।
प्रगट तत्त्वता ध्यावतां निजतत्त्वनो ध्याता थाय
तत्त्व रमण एकाग्रता पूर्णतावे एह समाय
प्रभु दीठे मुझ सांभरे परमातम पूर्णानंद॥"

बारहवें वासुपूज्य प्रभु के स्तवन में उपर्युक्त तत्त्व को बड़ी ही स्पष्टता से व्यक्त किया गया है:—

" आप अकर्त्ता सेवाथी हुवे रे, सेवक पूरण-सिद्धि।
निज धन न दिये पिण, आश्रित लहे रे, अक्षय अक्षर-सिद्धि॥
जिनवर-पूजा रे निज पूजना रे, प्रगटे अन्वय शक्ति।
परमानन्द विलासी अनुभवे रे, "देवचन्द्र" पद व्यक्ति॥"

प्रभु अकर्ता हैं पर उनकी सेवा से सेवक पूर्ण-सिद्धि प्राप्त कर लेता है। प्रभु अपना धन किसीको कुछ भी नहीं देने पर उनके आश्रित-साधक उनके निमित्त कारण से अपनी अक्षय रिद्धिको प्राप्त कर लेता है। "प्रभुकी पूजा वास्तवमें अपनी ही पूजा करनी है" इस वाक्य में कविने "मानों उसके हृदय में उसका अध्यात्म-तत्व सजीव बोल उठा है" व्यक्तकर कमाल कर दिया है। इस स्तवन की प्रथम गाथामें कहा है कि प्रभु में पूज्य-भाव स्वयं प्रगट हुआ है। वे दूसरों द्वारा की गई पूजाकी कभी वांछा नहीं करते अपितु साधक अपनी कार्य-सिद्धि के लिए ही उनका पूजन करता है। प्रभु को इसकी तनिक भी इच्छा व प्रसन्नता नहीं।

प्रभु विमलनाथके स्तवनमें भी प्रभुको सम्बोधित करते हुए श्रीमद् देवचन्द्रजी कहते हैं:—

" ताहरा शुद्ध-स्वभाव ने जो आदरे धरी बहुमान।
तेहने तेहि जे नीपजे ए कोई अद्भुत तान "

अनन्त-जिन स्तवन में प्रभु-मूर्तिकी अपूर्व समता से भव्य-जीवों पर होनेवाले प्रभावों को व्यक्त किया गया है। सर्वत्र एक ही तत्व भिन्न भिन्न शब्दोंमें परिस्फुट हुआ है।

धर्मनाथ-प्रभु के स्तवन में प्रभु के साथ अपनी जातीय एकता व्यक्त करते हुए श्रीमद्ने उनके समान ही अपने को समझने की अभिलाषा प्रगट की है। स्वामी ने तो पर भाव परिहार कर अपना आत्मिक आनन्द पा लिया और मैं पर-भावकी संगति व आसक्ति में फंसा हुआ पड़ा हूँ लेकिन फिर भी स्फटिक के समान एक ही सत्ता की दृष्टिसे-निर्मल हूँ। परोपाधि मेरी नहीं है अतः परमात्माकी भक्ति के रंगमें अपने को रंगकर अपनी आत्माके शुद्ध-स्वरूप का ग्राहक बन, परभाव का त्याग करना ठीक है। मेरा आत्म-स्वरूप मेरे द्वारा ही संपन्न होगा। मेरा सब आत्म-ऐश्वर्य, शौर्य, वीर्य, "प्रभु को ही मेरे मन-मन्दिर में ध्यान करते हुए"—मैं ही प्रगट कर सकूंगा।

शान्ति-नाथ के स्तवन में देव-निर्मित समवशरण में प्रभु देशना देते हैं। उसका वर्णन है। और भगवान कुंथुनाथ के स्तवन में श्रीमद् ने निम्नप्रकार अभिलाषा व्यक्त की है। यथाः—

" अहित स्वभाव जो आपणो रे, रुचि वैरांग्य समेत।
प्रभु सम्मुख वंदन करी रे; मांगीश आत्म-हेतोरे।"

अरनाथ-प्रभु के स्तवन में कार्य-सिद्धि के २ कारणोंको आत्मा पर घटाते हुए उपादान कारण आत्मा और निमित्त कारण प्रभु को बतलाते हुए कवि के भक्त-हृदय की उर्मि दीप्त हो उठी है। आप कहते हैं:—

" मोटा ने उत्संग बैठा ने शी चिन्ता
तिम प्रभु चरण प्रसाद, सेवक थया निश्चिन्ता ॥ "

मल्लिनाथ-स्तवन में ६ कारकों को आत्मा पर ही घटाकर बतलाया है। प्रभु सेवा की आवश्यकता

बतलाते हुए श्रीमद् कहते हैं:—

" साहब पूर्णानन्द प्रगट करया मर्णा रे।
पुष्टावलंबनरूप-सेव प्रभुजी तर्णा रे।"

मुनिसुव्रतनाथ के स्तवन में यही भाव इन शब्दों में व्यक्त किया है।

" आतम आतम कर्ता, कार्य-सिद्धि तारे, प्रभु साधन जिनराज।
प्रभु दीठे प्रभु दीठे कारज रुचि ऊपजे रे प्रगटे आत्म-समाज॥ "

२१ वें नमिनाथ स्तवन में कवि ने अध्यात्म-वर्षा का रूपक बहुत ही भाव-पूर्ण बांधा है।

२२ वें अरिष्ट-नेमी-प्रभु के स्तवन में आप कहते हैं कि रागी की संगतिसे रागदशा बढ़ती है। प्रभु वीतरागी हैं इसलिए उनमें प्रेम को जोड़ने से भव से पार हो जाता है।

२३ वें प्रभु पार्श्वनाथ के स्तवन में प्रभु ने शुद्धता, एकता, तीक्ष्णतादि द्वारा मोह-रिपु पर कैसे विजय प्राप्त की—इसका सुन्दर विवेचन है। अन्त में प्रभु को वंदन कर गुणों को चित्त में रमाते हुए कवि अपने को धन्य कृतपुण्य जन्म-सफल हुआ, ऐसा मानता है।

अन्तिम वीर-प्रभु के स्तवन में अपने अवगुणों पर खेद प्रकाश्य करते हुए प्रभु द्वारा अपने को तारने के लिए, प्रभु से अनुरोध किया गया है। प्रभु का सच्चा भजन, प्रभु के गुणों को पहचानने से ही होता है। अपनी आत्मा के समग्र दर्शन-ज्ञान-चारित्र, वीर्यादि गुणों के उल्लास से ही भव्य जीव कर्मों को जीतकर मोक्ष पा लेता है।

'बीसी' इत्यादि पदों में श्रीमद् ने जैनत्व आत्मतत्त्व को परिप्लावित कर दिया है। यहां सब उन स्तवनों के पदों को उद्धृत कर देना संभव नहीं। अतः ४-५ उदाहरणों के द्वारा ही सहृदय पाठक सन्तोष करें।

प्रथम सीमन्धर-स्वामी के स्तवन में प्रभुसे विनती बहुत सुन्दर ढंग से की गई है। सुनते ही हृदय नाच उठेगा। देखिए! आपकी अनोखी विनती! सुनिये:—

" श्री सीमन्धर जिनवर स्वामी वीनतड़ी अवधारो,
शुद्ध-धर्म प्रगट्यो जे तुमचो, प्रगटे तेह अमारो रे।
जे परिणामिक धर्म तुम्हारो, ते हवो अमचो धर्म।
श्रद्धा भासन रमण वियोगे, वलग्यो विभाव अधर्म। "

निम्नांक कड़ी के गाते हुये तो मानो अध्यात्म का सारा रहस्य मिल जाता है:—

" अशुद्ध निमित्ते ए संसरता, अत्ता कत्ता पर नो।
शुद्धनिमित्त रमे सचिद्घन, कर्त्ता भोक्ता घरनो॥ "

सीमन्धर-प्रभु की सेवा अवलम्बन व उपदेश ग्रहण करने के योग्य है क्योंकि अच्छे निमित्तों को ग्रहण कर संसार की कुटेवों को छोड़ना ही साधन मार्ग है।

युगमंधर-स्वामी के स्तवन में पर-परिणती के रंग से बचाने की प्रार्थना की गई है। ऋषभानन-स्तवन में "जब तक अपनी आत्म-संपदा न प्रगट हो जाय"—जगत गुरु-प्रभु की सेवा आवश्यक है। क्योंकि कार्य-पूर्ण जबतक न हो तबतक कारण को नहीं छोड़ा जाता। प्रभु मेरी सिद्धि के पुष्ट हेतु हैं। कारण के कार्य होता है अतः प्रभु तो स्वीकृत-कारण हैं। वज्रधर स्तवन में अपनी वर्तमान पतित दशा का चित्र प्रभु के सम्मुख बड़ी मार्मिक रीति से रखा गया है।

चन्द्रानन-स्तवन में वर्तमान काल की विषमता व जीवों की हीन सत्वता का चित्रण सुन्दर ढंगसे किया है। नमिप्रभुके स्तवन में अपने अनादि भूल का घटस्फोट किया गया है कि मैं परभाव कर्ता, भोक्ता तथा बंध, आश्रव का ग्राहक हो गया हूँ। जड़ में रचा हुआ हूँ। आत्म-धर्म को भूल रखा है। बंध आश्रवको अपनाया व संवर निर्जरा का त्याग कर दिया है। जड़ चल कर्म और शरीरको आत्मा मान लिया अर्थात् पूर्ण रूप से बहिरात्म बन गया। पर अब सुयोग से परमात्मा को देखने से मेरी अनादि की भ्रान्तियां मिट गईं। प्रभु के समान ही अपनी सत्ता को जानकर उस स्वरूप के प्रगटीकरण की इच्छा हुई, यह अंतरात्मा की अवस्था है। जहां पर परिणति के प्रति सर्वथा निरीहपना हो जाता है।

. १४ वें देवदत्त-प्रभु के स्तवनमें भक्ति-भाव प्रगट करते हुए कवि-हृदय बोल उठता है:—

" होवत जो तनु पांखडी आवत नाथ हजूर लाल रे।
जो होती चित्त-आंखडी, देखत नित प्रभु-नूर लाल रे ॥ "

अन्तिम अजित वीर्य्यस्तवन में प्रभु-भक्ति के सुफल की चर्चा करते हुए श्रीमद देवचन्द्रजी कहते हैं कि:—

" जिन-गुण-राग परागथी, वासित मुझ परिणाम।
तजशे दुष्ट विभावतारे, सरसे आतम कामरे ॥
जिन-भक्ति रत चित्तनेरे, वेधक रस गुण प्रेम रे।
सेवक निज पद पामशेरे, रसवेधित अय जेमरे ॥ "

अतीत चौबीसी के चतुर्थ स्तवन में आध्यात्मिक-होरी का रूपक सुन्दर बना है। अष्टम स्तवन में वसंत ऋतु में फाग खेलने का भिन्न रूप से चित्रण है। १६ वें नमीश्वर स्तवन में प्रभु के मुख का दर्शन कर आत्मा की अनादि भूल दूर हो यह इच्छा प्रगट की गई है तथा निज स्वरूप दशा जागी-उसका वर्णन है। १९ वें अनील जिन स्तवन में "प्रभुजी कुछ नहीं करते"। भक्त अपनी आत्माको प्रभु के निमित्त से ही ऊंचा उठाता है तथा अपना कार्य सिद्ध कर लेता है जैसा कि:—

" पर कारज करता नहीं रे, सेवक फार न देत।
जे सेवे तनमय थई रे, ते लहे शिव संकेत ॥
सेवा-भक्ति भोगी नहीं रे, न करे परनो सहाय।
तुज गुण रंगी-भक्तनो रे, सहजे कारज थाय ॥ "

कृतान्त-जिन स्तवन में श्रीमद् कहते हैं कि मैं सेवा का फल नहीं मांगता बल्कि सच्ची सेवा फल अवश्य मिलेगा। अतीत चौबीसी के १० स्तवन प्राप्त नहीं हैं। अन्तिम तीन तो अप्राप्य हैं। चौबीसी एवं बाहु जिन स्तवन पर तो श्रीमद्ने स्वयं विवेचन किया है। भावों को स्पष्ट कर दिया है। वीर निर्वाण स्तवन ढाल में भक्ति-रस की गंगा जोरों से बहाई है। गौतम स्वामी का "विरहका विलाप" तो बड़ा ही करुणोत्पादक है।

सिद्धाचल-स्तवन में वहां मुनियोंने किस प्रकार सिद्धता प्राप्त की इसका तो चित्र सा अंकित कर दिया है। आत्माको उद्बोधन करते हुए आप कहते हैं कि:—

" आतम भाव रमो हो चेतन, आतम भाव रमो।
परभावे रमतां हो चेतन, काल अनन्त गमो॥ हो चेतन ॥१॥
रागादिक दुर्मतिने चेतन, पुद्गल-संग भम्यो।
चौगति मांहि गमन करन्तां, निज आतमने दम्यो॥ हो चेतन ॥२॥
ज्ञानादिक गुण रंग धरीने, कर्म को संग वमो।
आतम अनुभव ध्यान धरंतां, शिव-रमणी सु रमो॥ हो चेतन ॥३॥
परमातम सुं ध्यान करंतां, भव थिति में न भमो।
"देवचन्द्र" परमातम साहिब, स्वामी करीने नमो॥ हो चेतन ॥४॥

साधु की पांच भावनाओं में अध्यात्म का कैसा आकर्षक पुट दिया गया है। वह देखने योग्य है। इनमें प्रथम में "श्रुत" का, दूसरी में "तप" का महत्त्व बतलाकर तीसरी और चौथी में सत्व और एकत्व में आत्मा को बड़े ही मार्मिक शब्दों में उद्बोधित किया गया है। मुनियों को भावनाओं से क्या प्राप्त होती है। प्रारंभ में ही कहा है:—

" श्रुत-भावना मन थिर करे, टाले भवनो खेद।
तप भावना काया दमे, वामे वेद उमेद॥
सत्व भाव निर्भय दशा, निज लघुता इक भाव।
तप भावना आतमगुण, सिद्ध साधना दाव॥ "

तप-भावना में तपस्वी मुनि की भूरि भूरि प्रशंसा की गई है:—

अणसण तप गुण आदरे, तप तेजे रे छीजे कुकर्म।
विषय विकार सहु टले, मन गंजे हो भंजे भव-भर्म॥
जीते सर्व इन्द्रिय जय लहा, तपसाणी हो कर्म सूडणहार॥

% % %

जिण साधु तप खड्गधार थी, मूक्यो छे हो अरि मोह गयंद।
तिण साधुने हुं नमुं सदा, नित्य वंदे हो तस पद अरविंद॥
धन्य तेह जे धन-गृह तजी, तन स्नेहनो कीधो छेद।
निर्मल व्रतधारी थके, तपधारी हो तो अविहड नेह॥

तीसरी सत्व-भावना में चेतनको उद्‌बोधन करते हुए कहा है:—

"रे जीव साहस आदरो, मत थाओ दीन।
सुख दुःख संपद आपदा, पूरव कर्म आधीन॥
क्रोधादिक वसे रण समे, सह्या दुःख अनेक।
ते जो समता में सहे, तो तुझ खरो विवेक॥"

तेरे वैभव का मान कैसा !

"चक्री हरिवलं प्रतिहरी, तस विभव अमान।
ते पिण काले संहर्या, तुझ धन स्यो मान॥
हा हा हुं तो तूं फिरे, परियणनी चिंत।
नरक पड्यां कहो तुझने, कोण करे निचिंत॥"

रोगादि में धैर्य-धारण करे !

"रोगादिक दुख उपने, मन अरतिम धरेय।
पूरव निज कृत कर्मनो, ए अनुभव देवरे॥"

देह पर प्रीति कैसी !

"एह शरीर अशाश्वतो, खिण में सीझंत।
प्रीति किसी ते उपरे, जे स्वारथवंत॥
× × ×
"आगल पाछल चिहु दिने, जे विणसी जाय।
रोगादिकथी नवि रहे, क्रोधे काडि उपाय॥
अन्ते पिण एहने तज्यां, थाये शिव सुख।
तो जे छूटे आपथी, तुझने स्यो दुख॥
ए तन विणसै ताहरे, नवि कोई हाण।
जो ज्ञानादिक गुण तणो, तुझ आवे ज्ञाण॥

अष्ट-प्रवचन-माताकी सज्झाय में मुनि-जीवन का रहस्य विशद ढंग से खोला गया है। प्रारंभ में कहा गया है कि अयोगी भाव के इच्छुक रुचि वाले मुनि मन, वचन, काया, इन तीनोंकी गुप्ति रखते हैं। मन को तत्व चिन्तन, वचन से मौन और काया से स्थिर रखते हैं। साधना में तल्लीन रहने से योगों का उपयोग बाहर नहीं हो पाता बल्कि गुप्त रहता है। पर वह अवस्था विरला ही उच्च साधक को थोड़े समय तक ही प्राप्त होती है अतः साधारणतया इन तीनों योगों की शुभ प्रवृत्ति में जोड़े जाते हैं। उनको प्रवृत्ति वर्तन में जो दोप उत्पन्न होता है उससे वे उपयोग विवेक पूर्वक बचे रहते हैं।

"भाव अयोगी करण रुचि, मुनिवर गुप्ति धरंत।
जो गुप्तिना रहि सकै, तो सुमत्ते विचरंत॥

व्यवहार-क्रिया करते हुए मुनि की दृष्टि परमार्थिक हो। कहा है :—

" भाव दृष्टि द्रव्यतः क्रिया, सेवी लहो शिवमिच्छ । "

अन्तरुपयोग ठीक रहने के कारण ही सम्यक् दृष्टि की क्रिया व भोग को निर्जरा का कारण माना गया है। आहार में आसक्ति नहीं होती। तत्त्वदृष्टि से क्रिया करते हुए भी बंध से वह मुनि अलग रहता है।

प्रथम समिति का कार्य गुप्ति रूप उत्सर्ग-मार्ग का अपवाद बतलाते हुए ज्ञानध्यान में स्थिर मुनि उठने, विचरने की चपलता क्यों करते हैं। यह प्रश्न उठाकर उत्तर में श्रीमद् बतलाते हैं कि मुनि निम्नोक्त 2 कारणों से उठता है।

" मुनि उठे वसही थकी. जी, पामी कारण च्यार ।
जिन वंदन (१) ग्रामांतरे जी (२) के आहार (३) निहार (४) ॥

जिनवंदन, ग्रामानुग्राम विहार, आहार निहार, भी क्यों किया जाता है:—

" परम चरण संवर धरुजी, सर्व जाण जिन दीठ ।
शुचि समता रुचि उपजेजी तिणे मुनिने ए ईठ ॥
राग बंधे स्थिर भावथी जी, ध्यान विना परमाद ।
वीतरागता दृढ़ताली, विचरे मुनि साल्हाद ॥
ए शरीर भवमूल छे, तसु पोषक आहार ।
भाव अयोगी नवि हुवेजी, त्यां अनादि आचार ॥
कवलाहारे निहार छेजी, एह अंग विवहार ।
धन्य अतनु, परमात्माजी, जिहां निश्चलता सार ॥
पर परिणति छल चपलताजी, केम मुकस्ये रे एह ।
एम विचारी कारणेजी, करे गोचरी तेह ॥ "

अर्थात् महानचरित्र-संपन्न, संवर-धारक, सर्वज्ञ जिनेश्वर या उनकी मूर्ति को देख समता भाव की पवित्र रुचि उत्पन्न होती है इसलिए मुनि जिनदर्शन, वंदन करे। एक स्थान में अधिक समय पर रहने से स्थान व व्यक्तियों के प्रति मोह हो जाता है। इससे ज्ञानध्यान में बाधा पड़ती है। प्रमाद बढ़ता है। अतः वीतराग-भाव की पुष्टि के लिए मुनि विचरता रहे। एक ही स्थान पर डेरा नहीं जमाये। जहां तक अयोगी भाव प्राप्त नहीं हो जाता। शरीर के लिए आहार की आवश्यकता है और आहार करने पर निहार यानी मलमूत्रादि का परिहार स्वाभाविक है अतः आहार और निहार के लिए भी मुनि को स्थानांतरित होना पड़ता है। चलना होता है। पर चलते समय दृष्टि नीची रहे-जीवों के रक्षण में सावधान रहे।

दूसरी भाषा-समिति कायिक प्रवृत्ति का कारण बतलाते हुए आपने कहा है-वचन-गुप्ति रूप उत्सर्ग मार्ग का अपवाद भाषा-समिति है। सर्वथा मौन रहना संभव न हो तो हित-मित सत्य, निर्दोष

वचन बोले। आश्रवरूप वचन न बोले। भाषा पर्याप्ति प्राप्त हुई है उसका उपयोग स्वाध्याय, स्वरूप-बोधक, परोपदेश के लिए करे। जो वाक्य-शक्ति आश्रव मार्ग है उसे मुनि निर्जरा में परिणित कर दें। प्रभु गुण की स्तवना अपने स्वरूप को संभालने के लिये व अन्य-जीवों को प्रतिबोधित करने के लिए धर्मोपदेश करे। सूत्र वांचना वस्तु-स्वरूप इत्यादि अपने बोध के लिए करे। श्रीमद् कहेते हैं:

" योगजे आश्रव पद हतो, ते कर्यो निर्जरा रूप रे।
लोह थी कंचन मुनि करे, साध्यता साध्यचिद्रूपरे॥
अल्पहित परहित कारणे, आदेश पांच सिज्झाय रे।
ते भणी अशन वसनादिका, आश्रय सवे अववाय रे।
जिनगुण स्तवन निज तत्वने, जोयवा करे अविरोध रे॥
देशना भव्य प्रतिबोधवा, वायणकरण निज बोधरे॥ "

तीसरी समिति शुद्ध आहार ग्रहणरूप-एषणा समिति है। मूलतः आत्मा अनाहारी है। अतः उत्सर्ग मार्ग वही है। उसका अपवाद निर्दोष आहार-भिक्षा वृत्ति से लेना है। काया पुद्गल निर्मित है और यह आहार-भोजन रूप पुद्गल ग्रहण करती है अतः आहार देह धर्म है। आत्मा धर्म नहीं। तब आहार ग्रहण क्यों किया जाता? इस प्रश्न का उत्तर श्रीमद् इस प्रकार देते हैं :—

" इम पर त्यागी संवरी, न गहे पुद्गल खंध।
साधक कारण राखवा, अशनादिक संबंध॥
आत्म तत्त्व अनंतता जी, ज्ञान विना न जणाय।
तेह प्रगट करवा भणी जी, श्रुति स्वाध्याय उपाय॥
तेह जेह थी देह रहेजी आहारे बलवान।
साध्य अधूरे हेतुनेजी, केम तजे गुणवान॥
तनु अनुयायी वीर्यनोजी, वर्तन अशन संजोग।
वृद्धयष्टि सम जाणिनेजी, अशनादिक उपभोग॥
जो साधकता नवि अडेजी, तो न ग्रहे आहार।
बाधक परिणती वारवाजी; अशनादिक उपचार॥ "

अर्थात्—आत्म तत्त्वका बोध ज्ञान द्वारा होता है। उसके प्रगटीकरण के लिए श्रुत का स्वाध्याय आवश्यक होता है। श्रुत-स्वाध्याय देह से और देह के लिए आहार की आवश्यकता है अतः जहांतक साधक पूर्ण नहीं हो जाता साधन हेतु को गुणवान छोड नहीं सकता। मुनिगण आहार देह को भाड़ा देने के लिए ही करते हैं। पुष्ट बनाने व स्वाद प्राप्ति के लिए नहीं। अतः जहां विना आहार लिए भी साधना में विघ्न प्रतीत न हो तो मुनि आहार न करे। शारीरिक शक्ति की क्षीणता से साधनसिद्धि में बाधा पड़ती है इसके लिए ही आहार लिया जाता है।

भिक्षा के लिए जानेपर यदि संयोगवश निर्दोष भिक्षा न मिले तो मुनि को खेद नहीं करना

चाहिए। उसे तपवृद्धि निर्जरा हुई, समझकर शान्त रहे। मैं कब अनाहारी पद पाऊंगा-यह भावना में रहे।

चौथी समिति संयम साधक बाह्य वस्तुओं के ग्रहण का-त्याग विवेक वा उपयोग पूर्वक करने को आदाननिक्षेपना नामक है। सर्व परिग्रह परित्यागरूप का यह अपवाद मार्ग है कि संयम से तप की वृद्धि के लिए, आवश्यक वस्तुओं को कम से कम मात्रा में ग्रहण करें और उनका विवेकपूर्वक उपयोग करें। इससे व्यर्थ का कर्म-बंध नहीं होता है।

परिग्रह त्यागी पश्चात विरक्त मुनि साधनोचित मर्यादित उपकरणों का भी संग्रह क्यों करे। इसके उत्तर में, प्रत्येक उपकरण रखने का कारण समझाते हुए श्रीमद्‌ने कहा है कि:—

" भाव अहिंसकता कारणे भणी, द्रव्य अहिंसक साधि।
रजोहरण मुख वस्त्रिका धरे, धरवा योग समाधि ॥६॥

शिवसाधनतो मूल ते ज्ञान छे, तेहनो हेतु सज्झाय।
ते आहारे ते वलि पात्र थी, जयणाए ग्रहवाय ॥७॥

बाल तरुण नरनारी जंतु ने, नग्न दुगंछानो हेतु।
तिणे चोलपट ग्रह्यो मुनि उपदिशे, शुद्ध धरम संकेत ॥८॥

डंस मसक शीतादिक परिसहे, न रहे ध्यान समाधि।
कल्पक आदिक निरमोही पणे, धारे मुनि निरुपाधि ॥९॥

लेप अलेप नदीना ज्ञानने, कारण दंड ग्रहंत।
दशवैकालिक भगवई साखथी, तन थिरता ने तंत ॥१०॥

लघु सजीव सचित्त रजादिनो, वारण दुःख संघट्ट।
देखी पुंजे रे मुनिवर तेहथी, ए पूरव मुनि वट्ट ॥११॥

पुद्गल खंध ग्रहण निक्षेपना, द्रव्ये जयणारे तास।
भावे आतम परिणति नव नवी, ग्रहतां समिति प्रकाश ॥१२॥

बाधक भाव अक्षेप पणे तजे, साधक जे गतराग।
पूरव गुण रक्षक पोषक पणे, नीपजे तव शिव माग ॥१३॥

अर्थात्:—"भाव अहिंसा"—आत्म-गुण रक्षण के लिए, "द्रव्य-अहिंसा" प्राणि-मात्रको आवश्यक है। छोटे जीवोंकी रक्षा के लिए रजोहरण, मुखवस्त्रिका आवश्यक है। इसीप्रकार मोक्ष साधन में ज्ञान और ज्ञान के लिए स्वाध्याय और स्वाध्याय के लिए आहार। और आहार को जयणा पूर्वक ग्रहण करे तथा इसके लिए पात्रों की आवश्यकता होती है।

बालक व युवा नरनारी को मुनि के नग्न रहनेसे दुगंछा (घृणा) हो सकती है अतः इसके निवारण के लिए, जनसम्पर्क में रहने वाले मुनि के लिए चोलपट्टा ग्रहण करने का विधान किया गया है। मच्छरादि और शीतादिमें ध्यान में विघ्नता-चित्त विक्षेपता होती है अतः समाधि के

लिए कलक-ओढने का कपडा रखे। नदी की गहराई के ज्ञान करने के लिए दंड रखे व छोटे जीव तथा धूल इत्यादि को दूर करने के लिए रजोहरण रखे। मुनि जतना से पौद्गलिक वस्तुओं को उठावे व रक्खे। भाव से आत्म परिणितियों की सावधानी से गवेषणा करता रहे। बाधक भावों को द्वेष-रहित हो, छोड़ें तथा साधक कारणों को रागरहित हो, ग्रहण करें।

पांचवीं समिति "परिष्ठापविका" है। यह मलमूत्र तथा अधिक व अभक्ष्य आया हुआ आहार, टूटे फूटे संयम के उपकरण आदि को शुद्ध तथा एकान्त स्थानों में विसर्जन कर दिये जाने रूप है। श्रीमद् देवचन्द्रजी कहते हैं कि शरीर है। वहां मल भी उत्पन्न होता ही है। उससे किसी प्राणी का नुकसान न हो उस स्थान में विसर्जन कर देना चाहिए। संयम के बाधक, आत्म विराधक उपधि आहार व शिष्यादि को मुनि छोड़ दें। श्रीमद् कहते हैं:—

" संयम बाधक आत्मविराधनारे, आणाघातक जानि।
उपधि अशन शिष्यादि परठेव रे आयति लाभपिछानि॥ "

तीनों गुप्तियों में मन, वचन, काया की चपलता को छोड़ आत्मा में मन स्थिर करने का विधान है। मन से धर्म, शुद्ध ध्यान ध्यावे। आर्त और रौद्र ध्यान छोड़ दे। वचन में मौन रहे तथा स्वाध्याय करे। काया से स्थिर नहीं यदि चपलता है तो वह बंधन है। चंचल भाव आश्रव का मूल है।

अन्त की कलशरूप ढालमें मुनियों के गुणों की स्तवना की गई है।

प्रभंजना-सती की सज्झायमें भी आध्यात्मिक-तत्वका निरूपण बड़ा ही सुन्दर हुआ है। राजकुमारी "प्रभंजना" हज़ार सखियों के साथ स्वयंवर मंडप जा रही है। रास्ते में साध्वी मंडल मिलता है। वे राजकुमारी को संसारके स्वरूप का वर्णन कर उसे धर्म में उद्यम करनेकी प्रेरणा देती हैं। प्रभंजना को उन साध्वियों के कथन की वास्तविकता प्रतीत हो जाती है, पर उसका सखी-समुदाय उसे स्वयंवर मंडप में जाकर पूर्व-निश्चित वरको वरने की इच्छा पूरी करने को कह कर फिर धर्म-साधना में लग जाने को कहता है तब प्रभंजनाने जो कहा उसे कवि स्वयं कहता है कि "धर्म प्रथम करवो सदा, देवचन्द्रनी वाणी रे लो।" साध्वी-समुदाय भी उसके विचारों की पुष्टि करता हुआ राजकुमारीसे कहता है कि प्रथम भोगों में फंसकर फिर धर्म-आराधना करना यह उसी प्रकार है जैसा कि पहिले जानबूझकर कीचड में गन्दा होना और फिर स्नान करना। उत्तम पुरुषों का आचार यही है कि पहिले गन्दा ही नहीं होना—

" खरड़ीने वलि धोयवुं रे कन्या, एह न शिष्टाचार।
रत्न-त्रयी साधन करोरे कन्या, मोहाधीनता वाररें। सुग्यानी कन्या॥ "

साध्वियां राजकुमारी को और उपदेश करती हैं कि माता-पितादि कुटुम्ब तथा सांसारिक वस्तुएँ सब क्षण-भंगुर हैं। शत्रु मित्र हो जाते हैं और मित्र शत्रु। यह मेरा व पराया इत्यादि सब आरोपित-कल्पित-मानी हुई बातें हैं। पोद्गलिक पदार्थों की मोहकता में पड़ना-भूल है। पुद्गल-

जड़ रूप है और हमारी आत्मा-चैतन्य-स्वभावी है। इस तरह के प्रभेद प्रगट होने पर आत्म-ज्ञान को कौन रोक सकता है:—

" पुद्गल ने पर जीव थीरे अप्पा, कीनो भेद विज्ञान "
बाधकता दूरे टली रे अप्पा, हिव कुण रोके आनंद। सुख्याती कन्या ॥

इन अमूल्य उपदेशों को सुनकर राजकुमारी प्रभंजना चमत्कृत हुई और आत्मा व संसार तथा उसकी तथा पौद्गलिक वस्तुओं की क्षण-भंगुरता पर विचार करने लगी। विचार की तन्मयता में उसके कर्मोंकी निर्जरा होने लगी। अपनी ध्यानावस्था में उसे अपना आत्म-बोध भान होने लगा और वह बोल उठी। उसे कवि के शब्दों में सुनिये—

" तव प्रभंजना चिन्तवे रे अप्पा, तूं छे अनादि अनन्त,
कर्त्ता भोक्ता तत्त्वनो रे अप्पा, सहज अकृत महन्त रे ॥ "

इस प्रकार उसे आध्यात्मिक ध्यान करते हुये उसे कैवल्य ज्ञान हो गया।

गजसुकुमाल मुनि के सज्झाय में अध्यात्मिक-तत्त्वका प्रवाह अच्छे ढंगसे किया है। गजसुकुमाल पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण के सहोदर लघु-भ्राता थे। माता का उन पर अगाध स्नेह था। भगवान नेमिनाथ के द्वारिका-पुरी के उद्यान में पधारने पर श्रीकृष्ण के साथ कुमार भी प्रभुदर्शन करने गये। वहां प्रभु ने देशना में आध्यात्म-तत्त्वका निरूपण किया कि सम्यक् दर्शन, ज्ञान और चारित्र ही वास्तविक सुख की खान है और शुद्ध-आत्मिक भाव द्वारा ही ये त्रय रत्न आत्मा को अन्दर देदिप्यमान हो उठते हैं। परपरिणति संयोगी भाव है। ये शुद्ध स्वभाव नहीं, विभाव अवस्था है। कर्मादि उपाधि से आत्मा स्वभावतः भिन्न है। ऐसी श्रद्धा पूर्वक आत्मा में स्थिर रहने से शुद्ध स्वभाव प्रकट होता है।

प्रभु के वचन सुनकर गजसुकुमाल सजग हो जाता है और विचारने लगता है। जिसे श्रीमद् कहते हैं:—

" वैभाविक ए सुख गुणमांहि, तो किम रहेशुं सुख ए मांहि।
जेहथी बंधाये निज तत्त्व, तेहनो संग करे कुण सत्त्व ॥ "

घर आकर कुमार अपनी माता श्री देवकी से कहते हैं कि मां! प्रभु देशना बड़ा ही सुन्दर है!! सुनकर माता प्रसन्न होती है। पर जब कुमार गजसुकुमाल माता से भगवान के पास स्वयं दीक्षा लेने को कहते हैं तो माता का हृदय टूक-टूक हो जाता है। वे कुमार को संयम की कठोरता, बतला कर कुमार का मन संयम से विमुख करना चाहती हैं तब कुमारके मुंह से जो उद्गार निकलते हैं उसे श्रीमद् के शब्दोंमें पाठक! सुनिये! और देखिए इनकी मार्मिकता:—

" माताजी निज घर आंगणे जी, बालक रमे निरबीह रे।
तेम मुझ आतमधर्म में, रमण करंता किसी बीहरे ॥ "

और साथ ही साथ कुमार माता से ऐसे बचन कहते हैं कि जिन्हें सुनकर देवकी विवश हो चुप रह जाती हैं ।

" मात तुमे श्राविका नेमिनी, तुमें एम न कहाय रे ।
मोक्ष-सुख हेतु संयम तणो, किम करो मात ! अन्तरायरे ॥

× × ×

" नेमिथी कोई अधिको हुवै तो मानियै तास वचन्न रे ।
माताजी कई नहीं भाखियै, मोह रे संयम में मन्न रे ॥ "

दीक्षा लेते ही कुमार की मोक्ष–साधन की उत्सुकता देखते ही बढ़ती है । प्रभुसे सिद्धि पाने का शीघ्र मार्ग बतलाने का अनुरोध करते हैं । प्रभु ने कहा कि आत्म–तत्त्व में स्थिर हो जाओ, उदय–कर्म के भोगों को समभाव पूर्वक सहन करो । एक रात्रि को प्रतिमा धारण कर आत्मभावों में धीरज के साथ तल्लीन हो जाओ ।

राजकुमार श्मशान–भूमि में जाकर ध्यान में लीन हो जाते हैं । "सोमिल ब्राह्मण" जो राजकुमारका श्वसुर था–उधर से आ निकला । अपनी पुत्री से कुमार विवाह न कर मुनि बन गये थे इससे वह–कुमार को मुनि–वेश में ध्यानास्थ देखकर–क्रोधसे जल उठा और मुनि के मस्तक पर मिट्टी का पाल बनाकर, उसके भीतर अग्नि प्रज्वलित कर दी । मस्तक जल रहा हे–उस समय मुनि चिन्तन करते हैं–वह अपूर्व है । पाठक उसे श्रीमद् के इस पद द्वारा सुनें:—

" दहन-धर्म ते दाह जे अग्निथी रे, हुं तो परम अदाह अगाह रे ।
जे दाझे ते तो माहरो धन नथी रे, अक्षयचिन्मय तत्व प्रवाह रे ॥ "

इति

लेखकके उद्‌गार—

देवचन्द्रकी पद पुष्पावलि, जो पढ़िरे भविजन "अगर" ।
महकत आत्म–सुगन्ध, निरमल हो शिवपुर–डगर ॥
भव्य "भ्रमर" अति लुब्ध भये, चख रस अतिनीको ।
प्रीति–रीति अविलाय छांडि पुद्‌गल–रस फीको ॥
पान करत नहिं जात उड़ि तन–मन सुधि विसराय ।
मोहन प्रीति अनूप लख, निज–घर जात समाय ॥

★

તરૂણી સુખી સ્ત્રી પરિવર્યો રે, ચતુર સુણે સુરગીત;
તેહથી રાગે અતિ ઘણે રે, ધર્મ સુણ્યાની રીત રે. પ્રાણી.
[સમકિતના સડસઠ બોલની સજ્ઝાય] [શ્રી યશોવિજયજી]

श्रीयशोविजय उपाध्याय कृत तत्त्वार्थगीत के विवेचक

श्रीमद् ज्ञानसारजी

[लेखक—श्रीयुत भंवरलाल नाहटा]

उपाध्याय यशोविजयजी सत्रहवीं और अठारहवीं शती के जैन शासन के तेजस्वी नक्षत्र थे। उनके जैसी पाण्डित्य प्रतिभा विरल ही दृष्टिगोचर होती है। आपने साहित्य निर्माण भी बहुत अधिक रूप में किया है। संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी और गुजराती, चारों भाषाओं में आपकी लेखनी चली। न्याय और जैन तत्त्वज्ञान पर तो आपका लेखन बहुत ही प्रशस्त हुआ है ऐसे महाविद्वान का स्मृति-मंदिर बनवाया गया है, यह जैन समाज के लिए बहुत ही गौरव की बात है। महापुरुषों की कृतियाँ ही हमें पथ-प्रदर्शन करती हैं और उनके आदर्श चरित्र बड़े प्रेरणादायक होते हैं।

उपाध्यायजी के साहित्य पर दृष्टिपात करने पर वे पिछले जीवन में आध्यात्माभिमुख विशेष हो गए प्रतीत होते हैं। संभव है श्रीमद् आनंदघनजी के मिलन का प्रभाव भी इसमें बहुत कुछ प्रेरणादायक हुआ हो। संस्कृत में ज्ञानसार, आध्यात्मसार आदि ग्रंथ तथा भाषामें समताशतक, समाधिशतक पद आदि उसके उज्ज्वल उदाहरण हैं। खेद है कि ऐसे महापुरुष की अनेक रचनाएँ, किन्तु २५० वर्ष जैसे थोड़े काल में ही लुप्त हो गईं। प्राप्त रचनाओं में भी कई ग्रंथों की तो एक एक प्रति ही मिली है इससे उनकी बहुत सी रचनाओं का प्रचार हुआ ही नहीं सिद्ध होता है। राजस्थान के अनेक ज्ञान भण्डारों का हमने अवलोकन किया है, इससे यह बात और भी पुष्ट होती है। यहाँ के ज्ञान-भण्डारों में उपाध्यायजी के कुछ प्रसिद्ध ग्रंथों को छोड़ कर अधिकांश ग्रंथों की प्रतियाँ ही प्रायः नहीं मिलतीं। १८ वीं शताब्दी में जैन विद्वानों में जो प्रौढ़ प्रतिभा पहले देखनेमें आती थी, उसमें क्रमशः ह्रास होता गया प्रतीत होता है। उपाध्यायजी के बाद श्रीमद् देवचंद्रजी में जैन तत्त्वज्ञान और आध्यात्मिक क्षेत्रमें विशद अनुभव देखने को मिलता है। उनकी आध्यात्मिक प्रेरणा का स्रोत सिंध व मुल्तान में विशेषतः दिगम्बर आध्यात्मिक ग्रंथों से प्रस्फुटित हुआ और गुजरात में उसका सर्वोच्च विकास हुआ। उपाध्यायजी के समकालीन विद्वानों में विनयविजयजी, मेघविजयजी, आनन्दघनजी, आदि विशेष रूपसे उल्लेख के योग्य हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी में एक आध्यात्मिक महापुरुष का हम फिर दर्शन पाते हैं। वे हैं खरतर-गच्छीय योगिराज श्रीमद् ज्ञानसारजी। आनंदघनजी की रचनाओं से आपका अगाध प्रेम था।

उस पर जैसा चिंतन-मनन आपने किया ऐसा संभवतः और किसीने नहीं किया। आपके आनंदघन चौवीसी, बालावबोध और कुछ पदों पर प्राप्त विवेचन अत्यंत मार्मिक हैं। उपाध्याय यशोविजयजी के कुछ पद, पंक्तियाँ आपने इन विवेचनों में तथा अन्यत्र भी उद्धृत की हैं। अजितनाथ स्तवन के बालावबोध में उपाध्यायजीके "शुद्ध भाविकनी वलिहारी" और कुन्थुनाथ स्तवन के विवेचनादि में 'जबलग आवें नह मन ठाम' पद की पंक्तियाँ उद्धृत की हीं पर वहाँ आपने इस पद को आनन्द-घनजी का माना है उपाध्यायजी के तत्त्वार्थ गीत पर तो आपने अच्छा विवेचन किया है, जिसे प्रकाशित किया जा रहा है। इससे पूर्व श्रीमद् ज्ञानसारजी का संक्षिप्त जीवन-परिचय दिया जा रहा है।

*　　　*　　　*

श्रीमद् ज्ञानसारजी का संक्षिप्त जीवन-परिचय

उन्नीसवीं शताब्दीमें श्रीमद् ज्ञानसारजी के नामसे एक श्वेताम्बर जैन यति प्रतिभा-सम्पन्न कवि मस्त योगी एवम् राजमान्य महापुरुष हो गये हैं। उनका जन्म सं. १८०१ में बीकानेर राज्यांतर्गत् जांगलू के समीपवर्ती जैणलैवास में हुआ था। उनके पिताका नाम उदयचंदजी सांड ? और माता का नाम जीवणदेवी था। उनका जन्म नाम 'नारायण' था। और इसी नाम से उनकी सर्वत्र प्रसिद्धी हुई।

सं० १८१२ में मारवाड़ में भीषण दुष्काल पड़ा था। उस समय से यह खरतगच्छ के आचार्य श्री जिनलाभसूरि जी की सेवा में रहने लगे थे और उन्हींके तत्त्वावधान में उनका विद्याध्ययन हुआ। सं. १८२१में उन्हें दीक्षा के योग्य जानकर पादरुग्राम में मिती माह शुक्ला ८ को उक्त श्री पूज्यजी ने यति-दीक्षा दी। दीक्षा के अनन्तर उनका नाम "ज्ञानसार" रक्खा और अपने शिष्य श्री रायचंद जो के शिष्य रूप से प्रसिद्ध किया। सं. १८३४ तक वे अपने गुरुजी के साथ श्री जिन-लाभसूरि जी की सेवा में ही रहे। इसी बीच में इनके गुरु श्री रायचंदजी का स्वर्गवास हो गया। सं. १८३४ के आश्विन कृष्णा १० को गूढ़ा में श्री पूज्यजी भी स्वर्ग सिधारे। इसके पश्चात् सं. १८३५में सूरिजी के ७ शिष्य अलग अलग हो गए। तब से ज्ञानसारजी अपने गुरु के बड़े गुरुभ्राता श्री राजधर्मजी के साथ रहने लगे। प्रथम चातुर्मास उनके साथ ही पाली में किया। वहाँ से विहार कर राजधर्मजी नागौर आए और ज्ञानसारजी किशनगढ़ चले गए। किशनगढ़ जा कर राजधर्मजी के पास नागौर वापस चले आए। उसके बाद सं. १८४५ तक आप अधिकांश उन्हींके साथ रहे थे। सं. १८४५ —४७ के चातुर्मास जयपुर में किए।

सं० ९८४८में जब वे जयपुर में थे, तत्कालीन आचार्य श्री जिनचंदसूरिजी ने इन्हें वहाँ से विहार कर महाजन टोली जानेका आदेश दिया। उनके आदेशानुसार इन्होंने पूर्व देश की ओर विहार-कर सं. १८४९ का चातुर्मास महाजनटोली में किया। वहाँ से संघ सहित विहार कर श्री सम्मेत-शिखर तीर्थ की यात्रा की। सं. १८५०–५१ के चातुर्मास अजीमगंज आदि में करके सं. १८५१

माघ शुक्ला ५ को द्वितीय बार श्री सम्मेत-शिखर की यात्रा की। वहाँ से वापस पश्चिम की ओर विहार करते हुए, सं. १८५२ का चातुर्मास संभवतः दिल्ली में किया। वहाँ से लौटते हुए, सं. १८५३ में जयपुर पधारे। पूर्व देश के नाना अनुभवों का सजीव वर्णन आपने "पूरब देश वर्णन" में किया है।

कहा जाता है कि जिस समय आप जयपुर पधारे थे उस समय के महाराजा का पट्ट-हस्ति बीमारी के कारण दिनोंदिन सूख रहा था। रोग-प्रतिकार के अनेक उपचार किए गए, किन्तु कोई फल न मिला, तब किसी राज्याधिकारीने राज्यगुरु खरतर गच्छीय यति श्री की याद दिलाई और यह भी कहा गया कि वे राज्य के दिए हुए कई गाँवों की उपज लेते हैं। अतः उनसे हाथीकी चिकित्सा के लिए अवश्य कहना चाहिए। महाराजा ने इस मतको पसंद कर यतिजी को हाथी स्वस्थ करने को कहलाया। यति जी को पशुचिकित्सा का समुचित ज्ञान न होने से वे चिंतित हो उठे और इस कार्य के उपयुक्त किसी चतुर व्यक्ति की खोज में लगे। उन्हें श्री ज्ञानसार जी का स्मरण हुआ और तुरन्त अपनी चिंता का कारण बताकर गजराज की चिकित्सा का भार उन पर सौंपा। श्री ज्ञानसारजी ने हाथी के रोग का निदान कर के अपने असाधारण बुद्धि-वैभवसे हाथी के पेटमें लगी हुई बेलिको निकाल कर उसे पूर्ण स्वस्थ कर दिया।

इस घटना से महाराजा प्रतापसिंहजी चमत्कृत होकर श्रीमद् के सद्गुणों के प्रति श्रद्धा रखने लग गए। श्रीमद् भी प्रायः राजसभा में जाया करते थे। राज्यकीय विद्वानोंसे विद्वद्-गोष्ठी कर अपनी विद्वत्ता से महाराजाको प्रभावित कर दिया। खास खास प्रसंगों पर उनकी उपस्थिति और आशीर्वाद परमावश्यक समझे जाते थे। इन आशीर्वादात्मक कविताओं में से सं. १८५३ माघ कृष्णा ८ को रचित 'मुक्तबद्ध प्रतापसिंह गुणवर्णन' पर स्वोपज्ञ-वचनिका', एवम् 'कामोद्दीपन' ग्रंथमें दो सवैये उपलब्ध हैं।

राजादर आदि कारणोंसे सं. १८५३से १८६२ तक के १० चातुर्मास जयपुर में किए। वहाँ पर 'संबोध-अष्टोत्तरी' आदि ९ कृतियाँ रचीं। उसके बाद कृष्णगढ़ गए। सं० १८६३ सं. १८६८ तक के ६ चातुर्मास कृष्णगढ़में किए। कृष्णगढ़ के राजा भी इनका बहुत सम्मान करते थे। यहाँ श्रीमद् प्रायः आध्यात्म-चिन्तन किया करते। इनका अध्यात्म अनुभव बहुत बढ़ा चढ़ा था। यहाँ श्रीमद् ने आनंदघन जी के गूढ़ रहस्यमय २२ तीर्थंकरों के स्तवनों पर विशद आलोचनात्मक 'बालावबोध' बनाकर सं. १८६६ भाद्र शुक्ला १४ को संपूर्ण किया। जिन स्तवनों पर वह सं. १८२३ से अबतक सतत मनन करते रहे थे। उन पर अपने परिपक्व अनुभव का उपयोग कर के उन्होंने मुमुक्षु जनता का परम हित-साधन किया। प्रस्तुत 'बालावबोध' में इनका आध्यात्म अनुभव पद-पद पर झलकता है। भाषा प्रौढ़ और जैनशैली की राजस्थानी है। कृष्णगढ़ में इनके उपदेश से चिंतामणि पार्श्वनाथजी के मंदिर का जीर्णोद्धार और दंड-ध्वजारोपण समारोह से हुआ।

सं० १८६५ में वहां से विहार कर शत्रुंजय तीर्थ पधारे। फाल्गुन कृष्णा-१४ को यात्रा कर

वापस बीकानेर आए वृद्धावस्था के कारण उन्होंने शेष जीवन वहीं विताया। बीकानेर में उनका प्रभाव बढ़ता गया। उनका जीवन भी परम सात्विक और आध्यात्मिक था। अनेक लोक-प्रपंचों में भाग लेते हुए भी वह उदासीन एवं निर्लेप रहते थे।

इन दिनों का उन्होंने सर्वथा त्याग कर दिया था और एकांतवास उनको विशेप प्रिय था। बीकानेर के गोगा दरवाजे के बाहर वाला स्मशान (टटों की शाला) ही उनकी तपोभूमि थी। कहते हैं कि पार्श्व यक्ष (देवता) उनके प्रत्यक्ष थे। वे समय-समय पर रात्रि में प्रकट होकर नाना विध ज्ञानगोष्ठी एवं भूत-भविष्य-संबंधी बातें किया करते थे।

महाराजा सूरतसिंहजी की इन पर अत्यंत भक्ति थी। वे स्वयं इनके दर्शनार्थ अनेक बार पधारते और पत्र-व्यवहार बराबर होता रहता। महाराजा के लिए पच्चीस पत्र हमारे अन्वेपण में आये हैं। उन खास रुक्कों को पढ़ने से श्रीमद् के प्रति महाराजा का विनय, पूज्यभाव, अटलश्रद्धा, अविरल भक्ति, तलस्पर्शी हार्दिकभाव और अनेक ऐतिहासिक रहस्यों की जानकारी होती है। बीकानेर में रहकर उन्होंने बहुत से ग्रंथों की रचना की। यहां की प्रवृत्तियों के बहुत-से स्मारक अब भी विद्यमान हैं एवं आपसे संबंध रखनेवाले अनेक चमत्कारिक प्रसंग सुनने में आते हैं।

सं. १८८९ में आश्विन और मार्गशीर्ष के बीच ९८ वर्षकी दीर्घायु पूरी कर श्रीमद् ज्ञानसारजी स्वर्ग सिधाए। स्वयं ही अपनी आयु के संबंध में 'पार्श्वनाथ-स्तवन' में कहा है कि:—

> साठी बुध नाठी सब कहि है असियखिसी लोकोक्ति कही।
> मैं तो अठाणुं ऊपर झो', मो में बुद्धि कही कहां ते रही॥
> गौड़ीराय कहो बड़ी बेर भई।

उनका अग्निसंस्कार वर्तमान शंखेश्वर पार्श्वनाथजी के मंदिर के पीछे हुआ था। उस स्थान पर आज भी एक समाधि-मंदिर विद्यमान है, उसमें प्रवेश करते ही सामने के एक आले में उनकी चरणपादुकाएँ प्रतिष्ठित हैं, जिन पर निम्नोक्त लेख उत्कीर्ण है:—

सं. १९०२ वर्षे मार्ग सुदी ६ पं० प्र+ज्ञानसारजी पादु....

श्री ज्ञानसारजी के हरसुख (हर्पनंदन), खूबचंद (क्षमानंदन), सदासुख (सुखसागर) नामक तीन शिष्य थे, जिनमें-प्रथम दोनों की दीक्षा सं. १८५६ से पूर्व और तृतीय की सं. १८६७ से पूर्व हो चूकी थी। इनमें से क्षमानंदन और सदासुख सं. १८९८ में तक विद्यमान थे। एकबार खूबचंदजी की मरणांत अवस्था में श्री गौड़ी पार्श्वप्रभु की कृपा से शांति हुई थी, जिसका उल्लेख श्रीमद् ने स्वयं अपने गौड़ी पार्श्वनाथ-स्तवन में किया है।

इन तीनों शिष्यों के अतिरिक्त इनके शिष्य-प्रशिष्यों में थे चतुर्भुज, भैरजी, कीरपाचंद, लछमन आदि का भी उल्लेख पाया जाता है। इन में से चतुर्भुजजी के शिष्य जोरजी थे जिनका देहांत सं. १९५५ में हुआ था। बस यहीं से उनकी संतति विच्छिन्न हुई।

श्रीमद् का एक चित्र हमारे 'ऐतिहासिक जैनकाव्य संग्रह' में प्रकाशित है, और भी कितने ही चित्र उपलब्ध हैं। श्रीमद् के बाह्य वेष-मुद्रा के संबंध में एक तात्कालीन पत्र महत्वपूर्ण है अतः उस पत्र का आवश्यक उद्धरण नीचे दिया जाता है:—

तुं नन्हा श्री बाबा जी साहिबां सौ वन्दना १०८ वार लिखड़े की। आपके गुणग्राम याद करता हुं। किसी भाग(क) हुं नहीं कृतकृत्य क्योंकर हूँगा। मरण तो आया, इहां कछु नहीं हुं कमाया, एक आपके दर्शन तो पाया बाकी जनम ले गमाया।

अब वह मुनिमुद्रा कान पर चश्मा ओघा कंधे पर हस्त में तमाखू डब्बी, ठुमक ठुमक चाल, मे वचनामृत अलौकिक अनेक आनन्दकारी भावमयी माधुरी मूरत कब देखूंगा। बाबा अब कहां दर्शन पाऊंगा, जो है पाया इस जन्म में और तो कछु नहीं मैं कमाया एक यही दर्शन अपूर्व पाया, इस ध्यान से जनम जनम का पाप गमाया, इतना तो खूब ही पुण्य कमाया आप ध्यान में मुझ निर्बुद्धी को रखोगे तो मैं धन्य धन्य कहाया, सिवाय इसके और कुछ है नहीं।

पत्र बाबाजी श्री १०८ ज्ञानसारजी महाराज के चरणों में।

श्रीमद् ने अपना किंचित् परिचय अपनी बहुत्तरी के पूर्व पद्य में दिया है:—

साधो भाई निहचे खेल अकेला। सोई निहाचे खेला। सा०
ना हमरे कुल जात न पांता एवं मेरा आचारा।
मदिरा मांस विवर्जित जो कुल, उन घर में पैसारा ।१। सा०
वर्जित वस्तु बिना जो देवे, सो सबही हम खावे।
उन्हों या फासू अकरापित, धोवण जल सब पीवे ।२। सा०
पडिकमणा पांचू नहीं छाडक, सामायिक ले बैसे।
साधु नहीं जैन के लिन्हे, जिन घर फिर नहीं पैसे ।३। सा०
श्रावक साधु नहीं को साधवी, नहीं हमरे श्रावकणी।
सुधी श्रद्धा जिन संबंधी, सो गुरु सोई गुरुणी ।४। सा०
नहीं हमरे कोई गच्छ विचारा, गच्छवासी नहीं निन्दे।
गच्छवास रत्नाकर सागर, इनकुं अहनिश वन्दे ।५। सा०
थापक उत्थापक जिन वादी, इनसे रीझ न खीजे।
न सिखणो न निन्दन वंदन, न हित अहित धरी जे ।६। सा०
न हमरे इन सुं वाद स्पन्द, चरचा में नहीं खीजें।
क्रिया रुचि क्रिया न रागी, हम किरिया न पतीजें ।७। सा०
किरिया बट के पात समाना स्वनारक जिन भाखी।
सोई अवंचक वंचक सौ तो, चउगति कारण दाखी ।८। सा०
पै किरिया कारक कुं देखें आतम अति ही हींसे।
पंचम काले जैन उद्दीपन, एह अंग थी दीसे ।९। सा०
सब गच्छ नायक नायक मेरे, हम हैं सब के दासा।
पै आलाप संलाप न किणसुं, नहीं कोई रस उदासा ।१०। सा०

पड़कमणा पोसा न करावे, करता देख्या राजी ।
पच्चखाणे व्याख्यान न आग्रह, आग्रह थीं न विराजी ।११। सा०
गो हमरी कोउ करे निन्दा, किंचित अमरस आवे ।
फिर मनमें जग रीति विचारें अब अति ही पछतावे ।१३। सा०
क्रोधी मानी मायी लोभी, रागी द्वेषी यौद्धी ।
साधुपनानो लेश न देश, न अविवेकी अपबोधी ।१४। सा०
प हमरी हम चर्चा भाखी, पै इनमें इक सारा ।
जो हम ज्ञानसार गुण चीन्हे, तो हुवे भवदधि पारा ।१५। सा०

उन्होंने वृद्धावस्था में गच्छ परंपरादि से अलग होकर एकाकी रहने और विहार करने का उल्लेख 'आनंदघन चौबीसी बालावबोध' में इस प्रकार किया है— '

कि वै प० ज्ञानसार प्रथम भट्टारक खरतरगच्छ संप्रदायी वृद्धवयोन्मुखिमै सर्वगच्छ परंपरा संबंधी हठवाद स्वेच्छायें मूकी एकाकी विठारियैं कृष्णगढ़े सं. १८६६ बावीसीनुं अर्थ लिख्युं ।

यद्यपि श्रीमद् का अनुभव एवं ज्ञान बहुत बढा—चढा था, फिर भी उन्होंने कई ग्रंथों में मंद—बुद्धि आदि शब्दों द्वारा अपना परिचय देकर विनम्रता प्रदर्शित की है । देवचंद्रजी कृत 'साधुपद सज्झाय के बालावबोध' में लिखते हैं—

हुं महा निर्बुद्धि को वज्रठार छुं जैन ऐ जिन्दो छुं म्हारो माजणो अति अल्प छे । सज्झाय कर्तानो माजणो मोटो छे ।

इसी प्रकार 'चौबीसी बालावबोध' आदि में भी अपनी लघुता व्यक्त की है । 'आत्मनिंदा' ग्रंथ तो उनकी विनम्रता का प्रतीक है ।

आध्यात्म-साधना और तत्वज्ञान के अतिरिक्त वैदक में भी श्रीमद् की अच्छी गति थी । लेखन-कला और तत्संबंधी सामग्री के निर्माण में वह अद्वितीय थे । उनके बनाए हुए पूठे, फाटिये, परड़ी आदि आज भी नामांकित वस्तुओं में हैं, ।जन की मजबूती ओर सुंदरता की बराबरी में दूसरे नहीं आ सकते । अब भी वे "नारायण साही' नाम से सुप्रसिद्ध हैं । लेखनशैली प्रौढ़ और लिपि बड़ी मनोहर थी । उनकी हस्त-लिपि हमारे संग्रह में पर्याप्त है, जिन में से एक पत्र का फोटो हमारे 'ऐतिहासिक जैन काव्यसंग्रह' में प्रकाशित है । वह अनेक हुन्नरों में निपुण थे, यह बात स्वयं 'बोसी' में लिखते हैं:—

हुन्नर केता हाथे कीधा ते पण उदय उपाये सीधा ।
जस उपजायो जस उदय थी, मंद लोभ ते मंदोदय थी ॥३॥ (१२ वां स्तवन)

इसके संबंध में उनके गुण—वर्णनात्मक काव्यों में अन्य भक्तों ने भी कहा है कि:—

कर्मे विश्वकर्मा सो हुन्नर हजार जाके वैधन में जान सब ज्योतिष मंत्र तंत्र को ॥

(नवलराय कृत गुणवर्णन)

उन्होंने कई विख्यात विद्वानों और कवियों की कृतियों पर विशद गद्य वचनिकाएँ लिखी हैं, जिनसे उनके स्पष्ट वक्तृत्व और निडर समालोचक होने का परिचय मिलता है। श्रीमद् आनंदघनजी की चौबीसी के बालावबोध में श्री ज्ञानविमलसूरिजी को खूब आड़े हाथों लिया है, और कई स्थानों में उनके बालावबोध की कड़ी समालोचना की है। अंत में उन्होंने लिखा है कि:—

"ज्ञानविमलसूरि महापंडित हुता, तेह ए उपयोगी तीक्ष्ण प्रयुंज्यो हुत तो तेह तो समर्थ अर्थ करी सकता पण तेह ए नो अर्थ करते विचारणा अत्यन्त न्यून ज करी ने मैं ज्ञानसार मारी बुद्धि अनुसारें सं. १८२९ थी विचारतें सं १८६६ श्री कृष्णगढ़ मध्ये टबो लिख्यो पर मैं इतरा बरसां विचार विचारतां ही सो सिद्धी थई तेहवो मोटो पंडित विचार विचार लिखितो तो संपूर्ण अर्थ थातो। परं ज्ञानविमलसूरि जी ये तो असमझ व्यापारी ज्युं सौदो वेच्यो करें नफो तोटो न समझे तिमि ज्ञानविमलसूरिजी ये पिण लिखतां लखण न अटकावणी एजं पंडिताईनो लक्षणं निर्द्धार कांनो अर्थ व्यर्थ अर्थ समर्थित नी गिणनां न गिणी।"

इसी प्रकार स्पष्ट वक्तृत्व के नाते आनंदघनजी जैसे महापुरुषों पर भी एक जगह कुछ आलोचना की है। आध्यात्म-अनुभवी श्रीमद् देवचंदजी की दो कृतियों पर उन्होंने बालावबोध रचा। उनमें भी कई स्थानों में उनकी विशद समालोचना की है। 'साधु सज्झाय बालावबोध' में तो कई बातें बड़ी ही मनोरंजक और रहस्यमयी कह डाली हैं। उपयोगी होने से उनके कुछ अवतरण यहां देते हैं:—

ध्रुव छै ए तो कथन क्षायिक भावे छै परं क्षायिक भाव आतम वित्त ने सिद्ध मां तो अभेदोपचारी पणुं छै ए विरोधाभास छै....

एह थुं जे कह्यु ए क्षायिक भाव कथन ते विरोध इति सटंक। हिवे आगल सज्झाय नी गाथाओं मां स्यो वर्णन करस्यो। परं ए कविराज नी योजना नो एज सुज्झाय छै तेज वात नै गटर पटर आगे नी पाछे नी आगे हांकतो चाल्यो जाय ते तमे पोते विचारी लेज्यो संबन्ध विरुद्ध अंगोपांग मेरा कविता वारंवार एक पद गुंथाणो ने पुनरुक्ति दूषण कविता ते एही ज सज्झाय में तमे ही जोइ लेज्यो एक निज पद रस लाग्या गुथ्यों छै ते गिण लेज्यो एकलो मुझ ने दूषण मत देज्यो। बीजु एह नो छूटक लिखत सप्तनयाथयी सप्तभंगाथयी जुगत छै स्वरूप नो कथन नो योजना एमां तो गटर पटर छै ए बिना बीजी सहित छूटक योजना सटंक छै। योजना करवी ए पिण विद्या न्यारी छै, कौमुदी कर्तायें शिष्य थी आद्य श्लोक करायो, आप थी न थयो। वली ए वात खुली न लिखुं तो ए लिखत वांचण वालो मूर्खशेखर जाणे ए कारण लिखुं। गुजरात में ए कहिवत छै—"आनंदघन टंकशाली, जिनराजसूरि बाबा अवध्य वचनी. उ० यशोविजय टारर टुनरिया पोते थाप्यो तेज उथाप्यो, उ०

* આ સ્તવન એમને ક્યાંથી મળી હશે? આજે આ સ્તવન ગુજરાતમાં તો જાણ્યું નથી. વળી આ ઉખાણામાં અનૈતિહાસિક પણાનો અંશ વધુ છે. જેથી આને સંપૂર્ણ પ્રામાણિક કહી ન શકાય. સં૦ પા૦

देवचंद्रजी ने एक* पूर्व नुं ज्ञान हतुं तेथी गटर पटरिया, मोहनविजय पन्यास ते लटकाला मुझ नै आगल अर्थ लिखवुं छे ते अक्षर प्रमाणे अर्थ लिखीश किहां सरखो अर्थ दीसे ते माहरो दूषण न काढ़स्यौ अक्षर विरुद्ध अर्थ माहरौ दूषण सही।

अठारहवीं शताब्दी में मोहन-विजय अति लोकप्रिय कवि हुए हैं उनके 'चंदरास'का प्रचार बहुत जोरों से था। उस पर दोहों में जो सुंदर और सजीव समालोचना की है, वह समालोचना-पद्धति का एक अच्छा उदाहरण है।

इस ग्रंथ का विशेप परिचय आगे दिया जायगा। कविवर बनारसीदासजी के 'समयसार' की भी कुछ आलोचना 'आत्मप्रबोध-छत्तीसी' में की है।

जयपुर ओर बीकानेर के नरेशों पर श्रीमद् के असाधारण प्रभाव का उल्लेख आगे किया जा चूका है। इन के अतिरिक्त जैसलमेर-नरेश गजसिंह भी इन्हें बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। जयपुर के महाराणा जवानसिंहजी से भी उनका अच्छा संबंध विदित होता है। कहा जाता है कि राणा जी की दुहागिन (कृपाहीन) राणी प्रतिदिन उनके पास आकर विनती किया करती थी की गुरुदेव! एसा कोई मंत्र दीजिए जिससे महाराणा मेरे वश में हो जाय।' उन्होंने उसे बहुत समझाया पर राणी किसी तरह न मानकर यंत्र देने के लिए विशेष हठ करने लगी। +तब श्रीमद् ने उसे एक कागज पर कुछ लिखकर दे दिया। राणीकी श्रद्धा ओर श्रीमद् की वचनसिद्धि से महाराणा की राणी पर पूर्ववत् कृपा हो गई। लोगों के भड़काने पर जब महाराणा ने यंत्र के संबंधमें उनसे पूछताछ की तो उन्होंने कहा, 'राजन्! हमें इन सब कार्यों से क्या प्रयोजन? अंतमें यंत्र खोलकर पढ़ने पर "राजा राणी सुं राजी, तो नारायण ने कंई, राजा राणी रुसे, तो नारायण ने कंई" लिखा मिला। इसे देखकर महाराणा आपकी निस्पृहता से बडे संतुष्ट हुए। महाराणा के आशीवार्द में एक कविता भी उपलब्ध है।

श्रीमद् ने सत्रहवीं शताब्दी के शेषार्द्ध के परम योगिराज आनंदघनजी की चौवीसी और बहुत्तरी पदों का चिंतन अपनी यौवनावस्था से प्रारंभ कर अंतिमावस्था पर्यंत किया था। अतः उनके जीवन पर आनंदघनजी के अनुभवों की गहरी छाप अंकित हो गई थी। आनंदघनजी के पद उन्हें अति प्रिय थे। उनके कई पदों के उद्धरण 'चौवीसी-बालावबोध,' 'आध्यात्मगीता बालावबोध' ओर 'साधु सज्झाय बालावबोध' आदि में दिए हैं। श्रीमद् के बहुत्तरी [७२]आदि पदों पर योगिराज आनंदघनजी के पदों का प्रभाव बील्कुल स्पष्ट है। इसीलिए कई आचार्यों ने उन्हें 'लघु आनंदघन' विशेषण से संबोधित किया है।

श्रीमद् के जीवन-चरित्र की बहुत बड़ी सामग्री हमने संग्रह की है। परंतु विस्तार-भय से बहुत-ही संक्षेप रूप से यह निबंध लिखा गया है।

+ આવો પ્રસંગ અન્ય સ્થળે અધ્યાત્મયોગી આનંદઘન સાથે બન્યાનો ઉલ્લેખ મળે છે. સંપા૦

रवप करतौ छतौ शुद्ध निर्मल कर्म रज रहित निजरूप पोतानौ अछेद्य, अभेद्य, अनंतज्ञान अनंत दर्शनमयी आत्म स्वरूप नै जोवै नाम स्वरूपे प्रत्यक्ष करै, नाम साक्षात्कार करै, एतलै स्वरूप प्रकट करै ।

स्याद्वाद पूरण जो जाणै, नय गर्भित जस वाचा ।
गुण परजाय द्रव्य जो बूझ, सोई जैन है साचा ॥ प० । जै० ॥३॥

फिरी ते आत्मा केहवौ थयौ स्याद्वाद नाम स्यात् पुरस्सर नाम कथंचित् वाद कथनै सहित जैन दर्शन नै जो जाणै जिको ओळखै । एतलै स्यादस्ति, स्याद्नास्ति स्यादस्तिनास्ति इत्यादि ना सर्व गर्भित रहस्य नै जाणै । वलि ते आत्मा केहवो एक थयो छै ? स्यादस्ति प्रमुख सप्त भंगी नै जाणवै करी नै जस वाचा जेहनी वाणी बोलवौ एहवौ थई गयौ छै । एतलै कोई तेह थी पक्ष सम्बन्धी बात करचां छतां तेह नै पाछौ प्रत्योत्तर सप्त नयै गर्भित सहित हीज दै वितण्डावादी न हुवै । एहवौ थयौ छतौ द्रव्य शब्दै धर्मास्तिकायादि छए द्रव्य नै भिन्न भिन्न लक्षणैं करी बूझै समझै। तिम ज द्रव्य द्रव्य दीठ गुण रह्या छे, तिमज पर्याय रह्या छै ते सर्व नै जो बूझै, जो समझै । एनै एतला में समझी लेज्यो केतलो एक लिखूं पानौ छोटौ । सोई नाम तेहीज जैन नाम जैन दर्शन साचा नाम साचौ सत्य छै । अनंत केवलज्ञान केवल दर्शनिये भाख्यौ ते ए छै नै आगामी काले पिण केवली एक मात्रा हीनाधिक न उपदिससी । स्यात् कथनै रहित नैगम संग्रहादि सात नयै रहित, द्रव्य गुण पर्यायैं रहित अनंता तीर्थंकर केवली न उपदिससी ।

किरिया मूढमती जे अज्ञानी, चालै चाल अपूठी ।
जैन दशा उन मांहे नांही, कहै सो सब ही झूठी ॥ प० । जै० ॥४॥

नैं जे किरियानाम एकंत किरियावादी, मूढमती मूरख बुद्धि, अतएव एथीज ते अज्ञानी किम जिन दर्शन नूं रहस्य अणजाणता वा मुग्ध लोकोनै वंचवा कारणै बाह्य क्रर क्रिया दिखावै । ते क्रिया रूप जाल में भोळा प्राणी रूप मृग आवी फंसै । पछी तेओना दृष्टिरागी थया छता । तेओ कहै ते साचूं जैन दर्शन संबंधित जाणी नै । तेओ कहै तिम धर्मरुची थका प्रवर्त्तै । तेओ देव नै कुदेव कही बतावै । कुधर्म जैन थी विरुद्ध नै जैन शुद्ध कही बतावें । आप थी अन्य नै कुगुरु कुपात्र कही बतावै । आप थी अन्य जै दिक्षावान् नै लिंगिया कही बतावै । परं परमेश्वरो नो तौ पारणामिक धर्म छे तेनै–'**विवहार नयच्छेए तित्थच्छेओ जओ भणिओ**'–एहवौ कहीनै एकंत क्रियाजाळ में फसावी दै । नें परनेश्वरे एहवूं कह्यूं–'**एगंते होई मिच्छतं**' । तेथी अपूठी उलटी चाल पोतें चालै अन्य नै चलावै । जैन दशा नाम जैन दर्शनमां उक्त-कही साधु नी दशा-मुद्रा दीसती दीसै तौ पिण उन मांहे नाम तेहवी मुद्रा धारियो में नाहीं-नहीं । एतलै ते बग पंखी नी वृत्ति मुद्रा देखी नै भरमस्यो नहीं । ते मुद्रा हारलपंखी नी लकड़ी परैं जाणज्यो । यथा जिम हारलपंखी एक पगै वृक्षनी डाळी पकड़ बैसै । बीजो पग चूंचकानै राखै, चूंच में लकड़ी राखै तेथी तेने

एहवूं जग गुरे उपदिस्यां छतां तत्त्व गेवषिए परमेश्वरथी फिरी प्रश्न पूछयो स्वामी महाक्रियावान् देखी अमे इम जाणूं ए कहैं ते साचूं। नै तेनैं देख्यां अमे जाणूं ए साधु नथी, मूर्त्तवान् जैन दर्शन छै, नै आप फरमायौ तेहवा तौ कहयो न मानवौ, तेहवा नै जैन दर्शनी न कहिवाय। तौ कुरमावौ नी स्वामी जैनी केनैं कहियै? एहवूं पूछ्या परमेश्वर नूं वचन। जैन नूं भाव छतां पणूं सर्वनाम सरवे ग्यानि में छै कथं? जैन तौ पारणामिक धर्म छे ने परणाम नै नाम शुद्ध परणाम नै हीज शिव साधन नाम मुक्ति नूं कारण सरदहियै सरदहिणाराखीजै। एतलै "शुद्ध भाव एव मुक्ति कारणं स्यात्" यथा—

—: दोहा :—

नमुक्कारसी व्रत नहीं, करतौ कूर आहार।
भाव शुद्ध तै सिद्ध है, कुरगडू अणगार ॥१॥
भाव शुद्धता जौ अर्हंतो कहा किया कौ चार
द्रढ पहार मुगतै गयौ, हत्या कीनी च्यार ॥२॥ [एषा मदुक्तिः]

फिरी जगतगुरु प्रश्न पूछवा वाला आत्मार्थी नें जैन दर्शन में अत्यंत परिपाक करवा कारणे कहै तमे मारुं मेष ओघो मुंहपोती देखीनें शंका नाम मन संबंधी एहवौ भरम न कीजै नाम न कीज्यो जे परमेश्वरनूं ए मेष छे। फिरी परमेश्वरे भाषो—पढमे पोरसिज्झायं बीए झाणं तीए गोयरिकालं चउत्थे पुणरवि सिज्झायं, रात्रे पढमे पोरसि सिज्जायं, बीए झाणं, तीए सयण कालं, चउत्थे पुणरविसिज्झायं ए आचरणा जोइ नैं फिरी महात्तपस्वी, बाह्येन्द्रिय दमनी जोई नै तेनैं विषे मुनिनी शंका न कीज्यो एतलै तेजेनै देखी मन में इम न जाणस्यौ परमेश्वरे सिद्धान्तो में भाख्या तेहवा मुनि ए छे तेथी तेहवाओ नै देखी नै तेओथी उदासी भावै रहियै। एतेले तेजो नै देखी नै सराग भावै न रहियै नाम न प्रवर्तीजै। इम न जाणीजै। शुद्ध आत्म स्वरूपानुजाई जैन दर्शन नै ए प्रवर्त्ते छै। एऊनों आसेवना थी हूं शुद्ध जैन दर्शन पामीस एहवूं न ते जाणवुं। किम ते महा मायावी छता भोळा लोक तेही ज थया मृगने तेउ नै पोताना मतरूप पासमां नांखवा कारणै वंचक क्रिया प्रवर्त्ती रह्या छै। तेथी भूली नै तेहवाओ थी सरागी न रहियै। अक्रियावान थी क्रियावान महा मायावी है। तेथी तेओथी सरागी पणे प्रवर्त्त्यो कैत तत्काळ पेट में एहवा फलिया घाली दे तेथी जैन धर्म थी भ्रष्ट थाय।

ज्ञान सकल नय साधन साध्यौ, किरिया ज्ञान की दासी।
किरिया करत धरत है ममता, एही गलै में फासी ॥ ५० । जै० ॥७॥

फिरी कोई कहिस्यै अवंचक क्रियाकारी हुवै तो पिण नाणी सासोसास एक में जे कर्मनी निर्जरा करै तेतळा कर्म दलिया नरकनी तीव्र वेदना सहितो नारकी एक क्रोड़ वरस में निर्जरायै। तेथी ज्ञान सकल नयज्ञान नै समस्त नाम साते ही नयरूप साधने कारणै साध्यो एतलै साध्य साधन भावे ज्ञान नैं सर्व नये साधी नै, जोयो नाम सात नय रूप साधन कारणैं ज्ञानरूप कार्य सिद्ध कीजै

तो ज्ञाननी कहवीक मुख्यता जणाय ते लिखूं—ए सात नय सम्मत ज्ञान एक दिशा नैं थापीजे नै एक दिशायें क्रिया थापी जोइयें, तइयें ज्ञान आगल क्रिया केवीक जणाय। ज्ञान राजा प्रायः दीसे नै क्रिया दासी बांदी प्राय निजर आवै।

यथा दृष्टान्त; सदोक्तिः—

पूर्व कोड देशोनता, क्रिया कठिन जिन कीन।
कुरट उकुरट नरकगति अशुद्ध भाव तें लीन ॥१॥

ज्ञान सूर्य प्राय, क्रिया खजुआ प्राय। इति सटंक। एहवो। क्रिया नैं कष्ट नाम करै आदरै परं स्यै कारणे क्रिया नैं आदरै ते लिखूं—कष्ट है ममता नाम सता नैं धारयां छतां ते ममता सी? मुझ नैं लोक क्रियावान देखी नै एहवूं मन में जाणस्यै। ते शास्त्रोमां पिण एहवूं ज लिखै छै। यथा "यः क्रियावान् सः पण्डितः" ए ममता आव्या। त्रा ए मनुमें महा क्रियावान एहो छै। वा एथी घणा प्राणी मुझ नैं पूजस्यै वा मारा मन नैं घणा आदरस्यै ते आहार वा पाणी, वस्त्र, पाट, चादर प्रमुख थी भक्तिवान थास्यै। एहना एहवी क्रिया नो प्रवर्त्तन तेनै तत्त्वबुद्धियें विचारी नै जोइयें तो गले में नाम आत्म स्वरूप रूप पामवानो गलो ते शुद्ध श्रद्धान ते गला नै फांसी तुल्य छै। जिम कोई प्राणी रै गले फांसी लागां श्वास रूकनैं मरण पामे तिम आत्मस्वरूप रूप पुरुष नो गलो शुद्ध श्रद्धान तेनो श्वास शुद्धश्रद्धाननो प्रवर्त्तन तेनै रुकवै नाम बंध होवै करी आत्मस्वरूप रूप पुरुष नो नाश थई जाय। तिम ज आनंदघन मुनि कहै:—

" जब लग आवै नहीं मन ठाम।
तब लग कष्ट क्रिया सब निष्फल, ज्यों गगने चित्राम ॥ "

पुनः एहनी ज उक्तिः—

"बाह्य कष्ट थी कर्तूं चढवूं, ते तो जड नो भाव" इति सटंक

क्रिया बिना ज्ञान नहिं कबहू, क्रिया ज्ञान बिन नांही।
क्रिया ज्ञान दोऊ मिलत रहित है, ज्यूं जल रस जल मांही ॥ प० । जै० ॥८॥

पूर्वे क्रिया नो कथन कर्यो ते सर्व बंधक क्रिया नो कथन कर्यो। बीजूं परमेश्वर भाषित आगमानुसारि नो वचन छै—"ज्ञान क्रियाभ्यां मोक्षः" ना इकला ज्ञानथी, इकली क्रिया थी पिण मोक्ष न कह्युं। कथं नाम किम तिहां लिखूं, एहवूं परमेश्वर नूं कह्युं वचन छै—"एगंते होइ मिच्छत्तं"

पुनः गाथा;—

" नाणेण जाणए भावं, दंसणेण य सद्दहे
चारित्तेण मणुबाइ, तवेण परिसिज्झइ "

पुनः गाथा:—

हयं नाणं क्रिया हीणं, हया अन्नाणिणो क्रिया।
पासंतो पंगुलो दड्ढो, धावमाणोय अंधलो ॥१॥

संजोग सिद्धी अफलं वयंती, नहु एगचक्केण रहो पयाई ।
अंधोय पंगूय वणे समेच्चा, तेनं पउत्ता नगरे पविट्ठा ॥२॥

तेथी क्रिया विना नाम क्रिया नें अभावे ज्ञान नौ अभाव नै ज्ञान नें अभावें क्रिया नौ अभाव यथा—आनंदघनमुन्युक्तिः—

ज्ञान धरौ करौ संजम किरिया न फिरावौ मन ठाम ।
चिदानंद घन सुजस विलासी प्रगटै आतमराम ॥१॥

तेथी ज्ञान क्रिया नी जोड़ी छै । ते कारणै क्रिया नै ज्ञान ए दोनूं नाम क्रिया प्रवर्त्तनरूपा ज्ञान विशेष विचारणरूप यथा ज्ञान लक्षणं—"विशेषावबोधो ज्ञानं" तेथी ज सूत्रो मां एहवूं कथन छै—"पढमं नाणं तओ पवत्ति"—ए कारण थी प्रथम जाणपणूं पछै प्रवर्त्ति नाम क्रिया तेथी एउनी संजोग सिद्धता छै । एनुं लिखत घणुं छै पानौ छोटौ केतलो एक लिखूं । एतला में सर्व समझ लेज्यो । क्रियाज्ञान केहवा एक मिलो रह्या छै । जिम जल पाणी नो रस स्वाद पाणीमां रह्यो छै । तिम क्रिया प्रवर्त्तनरूप ज्ञान जाणपणां में रह्यौ छै । प्रथम जाणीजै पछी प्रवर्त्तन थाय ते विना न थाय । ज्ञान जाणवारूप । ते जाणता छतां प्रवर्तियै नहीं तइयें जाणपणौ निष्फल थयौ । कथं ? "फल शून्यत्वात्" तेथी जल दृष्टान्तैं बेई मिल्या रहै छै परं आत्म तत्त्व गवेषी नै किसै सम्मिलत रहै छै ।

क्रिया मगनता बाहिर दीसै, ज्ञान भगत जस भाजै ।
सदगुरु सीख सुनै नहिं कबहू, सो जन जन सूं लाजै ॥ प० । जै० ॥९॥

नै जे आत्मार्थी नथी आत्म स्वरूप ग्रहणार्थी नथी । ते नै तौ क्रिया मगनता नाम क्रिया प्रवर्तवानी मगनता । तदाकारी पणूं नाम एकंत दिनरात्रे क्रिया प्रवर्तवानी बाह्य लौकिक नै विसै आपरी उन्नता दिखाववानै कारणै दीसै नाम एतौ प्रत्यक्ष दीसै छै किम क्रियानी मगनता विना ज्ञाननी भक्ति हुवै नै एकंत क्रिया वादी हुवै । जस नाम जेहनै न हुवै एतलै ज्ञाननी भक्ति थी भाजै नाम वेगलौ रहै । वा ज्ञान जे आत्मस्वरूप तेनौ ज्ञानी हुवै तेनी भक्ति बहुमानता करवाथी जस जेनौ मत भाजै नाम वेगलौ रहै एतलै आप क्रियारुचि छै । तेथी क्रियावान थी तौ पोतानौ मन हीसै नै ज्ञानवाननी भक्ति कोई करै तेहनै देखी तेनौ मन भाजै वेगलौ रहै नाम तेथी मत न मिलै । फिरी ज्ञानवान नौ कोई जस गावै तेथी पिण तेहनो मन भाजै वेगलौ रहै नाम ज्ञानी नौ जस नसुं होवै । फिरी सदगुरु नाम शुद्धोपदेष्टा नाम शुद्धस्याद्वाद कथन थी उपदेष्टा—उपदेशना दाता एहवा गुरो ना उपदेश परम शिक्षारूप तिहां कोई कहिसी तैं परम सीख रूप किम कह्यूं । तिहां लिखूं जे शुद्धोपदेष्टा गुरु हुसी ते ज्ञानाक्रिया बे थीज सिद्धनी सिद्धता कहिसी । किम परमेश्वरे एकंतवादी नै मिथ्यामती कह्यूं नै तेहवा गुरु सिद्धान्तानुजाई ज उपदेश देस्यै । नें ते एकांत पक्षी तेथी तेओ नौ उपदेशक बहु कहे न सुणै । तेथी नाम तेओना उपदेश न सुणवाथी सो नाम एकांत पक्षी । जन जनसुं नाम स्याद्वाद मतधारी मात्र पुरसासुं लाजै । नाम अनेकान्तवादी नै देख्यां लज्या पामै । किम

પૂ૦ ઉપાધ્યાય શ્રી મેઘવિજયજી ગુંફિતા

अर्हद्गीता

[લેખક : પૂ. પંન્યાસ શ્રી રમણિકવિજયજી મહારાજ. અમદાવાદ]

વીતરાગદેવ શ્રીમહાવીર–વર્ધમાનસ્વામીના શાસનનાં પચીસો વર્ષ દરમિયાન દરેક શતાબ્દીમાં સંખ્યાબંધ વિદ્વાન્ જૈનાચાર્યો અને મુનિપુંગવો થતા રહ્યા છે. તે પૈકી અઢારમી સદીમાં જે અનેક જૈન વિદ્વાન્ મુનિપ્રવરો થયા છે તેમાં ઉચ્ચકોટિના વિદ્વાન અને મહાકવિ તરીકે ઉપાધ્યાય શ્રીમેઘવિજયજી મહારાજનું વિશિષ્ટ સ્થાન છે.

ઉપાધ્યાય શ્રીમેઘવિજયજી જગપ્રસિદ્ધ મોગલસમ્રાટ અકબર પ્રતિબોધક જગદ્ગુરૂ શ્રીહીરવિજયસૂરીશ્વરજીની પરંપરામાં થયા છે. તેમના દીક્ષાગુરૂ પંડિત શ્રીકૃપાવિજયજી મહારાજ હતા. તપાગચ્છીય આચાર્યપ્રવર વિજયદેવસૂરિ પટ્ટધર શ્રીવિજયપ્રભસૂરિએ તેમણે વાચક–ઉપાધ્યાય પદવીથી અલંકૃત કર્યા હતા. આટલી ટૂંકી હકીકત શ્રીમેઘવિજયોપાધ્યાયજીએ પોતે રચેલા ગ્રંથોની પ્રશસ્તિઓમાં આવે છે તેથી એમ જણાય છે કે તેઓ શ્રીવિજયપ્રભસૂરિના ધર્મસામ્રાજ્યમાં મુખ્યત્વે વિદ્યમાન હતા.

આજે પ્રાપ્ત થતી તેમની કૃતિઓ જોતાં તેમનું પાંડિત્ય અસાધારણ અને સાહિત્યની વિવિધ દિશામાં વ્યાપીને રહેલું હતું. તેમણે વ્યાકરણ, કાવ્ય છંદ, ન્યાયદર્શન, કથાસાહિત્ય, જ્યોતિષ, સામુદ્રિક, મંત્ર, યંત્ર, અધ્યાત્મ આદિ અનેક વિષયના ગ્રંથોની રચના કરી છે.

અધ્યાત્મવિષયક ત્રણ ગ્રંથની રચના તેમણે કરી છે. (૧) માતૃકાપ્રસાદ, (૨) બ્રહ્મબોધ અને (૩) અર્હદ્ગીતા. આ ત્રણ ગ્રંથો પૈકી અર્હદ્ગીતાનો પરિચય અહીં આપીએ છીએ.

બ્રાહ્મણ પરંપરામાં ગીતા ગ્રંથ સુપ્રસિદ્ધ છે, જે મહાભારતનો એક ભાગ છે. ગીતામાં અઢાર અધ્યાયો છે અને તેનું બીજું નામ બ્રહ્મવિદ્યાનિરૂપક યોગશાસ્ત્ર છે. ("ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे") ગીતા ભારતીય સાહિત્યનું ઉત્તમ ગ્રંથરત્ન છે, એવો તમામ પંડિતોનો મત છે.

જૈનેતર પરંપરામાં જે જે સાહિત્ય વિશિષ્ટ સુપ્રસિદ્ધ અને આત્મશોધન આદિ માટે ઉપયોગી હોય તેના અનુકરણરૂપે તે તે સાહિત્યના ઊંડા અભ્યાસથી જૈનાચાર્યોએ પણ એવું અને એ જ નામનું સાહિત્ય રચવાનો પ્રયત્ન કરેલ છે અને એવા પ્રયત્નો દ્વારા તેઓ સાક્ષર અને સામાન્ય જનતા સુધી પોતાનો ધર્મસંદેશ પહોંચાડી શક્યા છે. આ જાતનો

સ્પષ્ટ દાખલો જોવો હોય તો 'વસુદેવ હિંડી' નામનો ગ્રંથ બતાવી શકાય. આ ગ્રંથના બીજા અથવા પ્રથમ ખંડમાં તેની રચનાનું કારણ જણાવતાં ગ્રંથકારે આ જ[1] હકીકત લખી છે.

આ ઉપરાંત એવાં અનુકરણોને સમજાવવા સારુ આચાર્ય શ્રીહરિભદ્રસૂરિ આદિએ રચેલા ધર્મબિંદુ, લલિતવિસ્તરા આદિ ગ્રંથો, તથા મેઘદૂતનાં અનુકરણો અને માઘકાવ્ય વગેરેની પાદપૂર્તિ જેવા ગ્રંથો કે જે જૈન કવિઓએ રચેલાં છે તે પણ ગણાવી શકાય.

ઉપાધ્યાય શ્રીમેઘવિજયજી પણ આ જાતની પોતાની પૂર્વ ગુરુપરંપરાને અનુસરીને કેવળ આત્મશોધન દૃષ્ટિથી આ અર્હદ્ગીતા રચવાને પ્રેરાય છે. તેમણે અર્હદ્ગીતા–તત્ત્વગીતા અથવા ભગવદ્ગીતા એ ત્રણ નામો આ ગ્રંથનાં આપ્યાં છે. અર્હદ્ગીતામાં છત્રીસ અધ્યાયો છે, જે કૃષ્ણે કહેલી ગીતા કરતાં બમણું છે. જેમ શ્રીકૃષ્ણવાળી ગીતામાં શ્રીભગવાન ઉવાચ તથા શ્રીઅર્જુન ઉવાચ એ વાક્યો આપેલાં છે તેમ આમાં શ્રીभगवान् उवाच અને શ્રીઅર્જુનને બદલે શ્રીगौतम उवाच એ વાક્યો દરેક અધ્યાયના પ્રારંભમાં મૂકેલાં છે. ગીતામાં જેમ શ્રીકૃષ્ણ માટે ભગવાન શબ્દની યોજના છે, તેમ અર્હદ્ગીતામાં શ્રીમહાવીરસ્વામી માટે ભગવાન શબ્દની ઘટના છે. શ્રીકૃષ્ણવાળી ગીતામાં જેમ પૂછનાર અર્જુન શ્રીકૃષ્ણનો પરમમિત્ર છે તેમ પ્રસ્તુત ગીતામાં શ્રીઇન્દ્રભૂતિગૌતમ શ્રીમહાવીરના મુખ્ય અને પ્રિયશિષ્ય છે. આ છત્રીસ અધ્યાયોમાં જ્ઞાનસાધન તથા ક્રિયાસાધન એવા આધ્યાત્મિક વિષયોની ચર્ચા છે. એ ચર્ચા કરતાં પ્રસંગોપાત્ત ભિન્ન ભિન્ન દર્શનોનો સમન્વય અને ખાસ કરીને વેદાંતનો સમન્વય તથા ॐ नमः सिद्धं એ વાક્યની વિવિધ રીતે સમજૂતી આપેલી છે. તેમ જ જ્યોતિષ, સામુદ્રિક, તિથિવિચાર, આયુર્વેદને લગતો વિચાર, નયોનું નિરૂપણ વગેરે વિવિધ વિષયોની ચર્ચા આ ગીતામાં કરી છે. આ બધા વિષયોનો વિસ્તૃત પરિચય ન આપતાં માત્ર સંક્ષેપથી ગ્રંથની ખાસ વિશેષતા અને એમાં નિરૂપેલી ખાસ ખાસ બાબતો અહીં જણાવવાની વાન્છા છે.

ઋગ્વેદના પ્રત્યેક મંત્રને મથાળે તે મંત્રનો ઋષિ, છંદ વગેરે જેમ બતાવેલા છે. તેમ આ અર્હદ્ગીતાના પ્રારંભમાં જણાવેલું છે કે[2] અર્હદ્ગીતાનો ઋષિ ગૌતમ છે, છંદ અનુષ્ટુપ્

1. જુઓ વસુદેવહિંડી પ્રથમ ખંડ પાનું પહેલું.

તેમાં જે ઉલ્લેખ છે તેનો સાર એ છે કે—નરવાહન, નલરાજા, રામ, રાવણ, જનમેજય, કૌરવ-પાંડવ વગેરેની કામકથાઓમાં લોકો પ્રીતિ રાખે છે, એટલે ધર્મકથાઓને સાંભળીને પણ લોકો તેમાં રુચિ રાખતા નથી. માટે કામકથાઓમાં રસ ધરાવનાર લોકો માટે શૃંગાર કથાને બહાને ધર્મને સમજાવવાની બુદ્ધિથી આ શૃંગારપ્રધાન કથાને લખવામાં આવે છે. કામકથામાં રસ ધરાવનાર લોકો પૂછે છે કે ઉત્તમ કામભોગને કેવી રીતે મેળવી શકાય? તેનો ઉત્તર શૃંગારપ્રધાન આ કથામાં આપવામાં આવે છે અને તે એ છે કે "ઉત્તમ ચરિત્ર આચરવાથી ઉત્તમ કામભોગો મેળવી શકાય છે."

2. ॐ अस्य श्री अर्हद्गीतासूत्ररत्नागमबीजमंत्ररूपस्य महामहोपाध्यायपूज्यस्य श्रीगौतम ऋषिः, अनुष्टुप् छंदः, श्रीवर्धमानो जिनः परमात्मा देवता, सर्वेऽपि सूत्रार्थ यतः कार्याः आगमसूत्रा तथा, इति बीजम्, येनात्माऽऽत्मन्यवस्थाता तद् वैराग्यं प्रशस्यं इति शक्तिः, अपुनर्बन्धक्रमानुसारतो नियमात् स्याद्वादनिश्चयया इति कीलकम् ॥ [अर्हद्गीता पत्र २]

છે, દેવસર્વજ્ઞ જિન પરમાત્મા છે "प्राप्तेऽपि नृभवे यत्नः कार्यः" ઇત્યાદિ, આ ગીતાનું બીજ છે "येन आत्मा आत्मनि अवस्थाता" ઇત્યાદિ આ ગીતાની શક્તિ છે. અને "अमुक्तोऽपिक्रमान्मुक्त" ઇત્યાદિ, આ ગીતાનો કીલક છે, આ ઉપરાંત ઠેકઠેકાણે વૈદિક મંત્રની પેઠે વષટ્, સ્વધા, સ્વાહા વગેરે મંત્રાક્ષરોનો પ્રયોગ ઉપાધ્યાય શ્રીમેઘવિજયજીએ કરેલો છે.

જો કે અર્હદ્ગીતા શ્રીમેઘવિજયોપાધ્યાયે પોતે પોતાની કલ્પનાથી ઉપજાવેલી છે ને રચેલી છે. છતાં તેમણે નમ્રભાવે પોતાની આ રચનાને શ્રીગૌતમસ્વામીના મુખમાં પ્રશ્નરૂપે અને શ્રીમહાવીરસ્વામીના મુખમાં ઉત્તર રૂપે ગોઠવવાની યોજના કરી છે. જૈન પરંપરામાં ઘણા એવા પ્રાચીન–અર્વાચીન ગ્રંથકારો થઈ ગયા છે જેમણે નમ્રભાવે પોતાની રચનાને શ્રીમહાવીર સ્વામીના મુખથી રજૂ કરાવી છે. પ્રસ્તુત ગીતા ગ્રંથમાં શ્રીમેઘવિજયજીએ પણ ઉપર્યુક્ત પૂર્વગુરૂપરંપરાની પદ્ધતિ સ્વીકારેલી છે.

ઉ. શ્રીમેઘવિજયજી પોતાની આ રચના વિષે કહે છે કે—

" श्रीवीरेण विबोधिता भगवता श्रीगौतमाय स्वयं,
सूत्रेण ग्रथितेन्द्रभूतिमुनिना सा द्वादशांग्यां पराम् ।
अद्वैतामृतवर्षिणीं भगवतीं षट्त्रिंशदध्यायिनीं,
मातस्त्वां मनसा दधामि भगवद्गीते ! भवद्वेषिणीम् ॥१॥
[अर्हद्गीता पत्र ३]

અર્થાત્—ભગવાન્ શ્રીમહાવીરે પોતે ગૌતમને છત્રીસ અધ્યાયવાળી અને અદ્વૈતામૃત રસને વરસાવનારી અર્હદ્ગીતા અથવા ભગવદ્ગીતા કહેલી છે અને શ્રીઇંદ્રભૂતિમુનિએ તેને દ્વાદશાંગીમાં સૂત્રરૂપે ગૂંથેલી છે. આટલું લખ્યા પછી ગીતાને માતા કહીને તેઓએ તેનું ધ્યાન ધરેલું છે. ઉપર જણાવેલ શ્લોકને અંતે એમ જણાવ્યું છે કે—

" इति परसमयमार्गपद्धत्या शास्त्रप्रज्ञाश्रुतदेवतावतारः । "

એ પ્રમાણે પરમતની પદ્ધતિને અવલંબીને શાસ્ત્રપ્રજ્ઞારૂપ શ્રુતદેવતાનો અવતાર થયો સમજવો.

આમાં કુલ છત્રીસ અધ્યાયો છે તેમાં ચૌદથી સોળ અધ્યાયોને બ્રહ્મકાંડ નામ આપેલ છે અને સત્તરથી છત્રીસ અધ્યાયોને કર્મકાંડ નામ આપેલ છે પહેલાના એકથી તેર અધ્યાયોને માત્ર સામાન્ય અધ્યાય નામ આપેલ છે.

આ ગીતામાં જે ખાસ બાબતો છે તે આ પ્રમાણે છે. ચોથા અધ્યાયના ૧૯મા શ્લોકમાં જણાવેલું છે કે કોઈ અપેક્ષાએ આશ્રવ પણ સંવર થઈ જાય છે. અને કોઈ અપેક્ષાએ સંવર પણ આશ્રવ થઈ જાય છે.

" संवरः स्यादाश्रवोऽपि संवरोऽप्याश्रवाय ते ।
ज्ञानाज्ञानफलं चैतन्मिथ्या सम्यक्श्रुतादिवत् " ॥१९॥

ગ્રંથકારે આ વિવેચનમાં પ્રધાનપણે વિવેકને મુખ્ય સ્થાન આપેલું છે અર્થાત્ વિવેક વગરનો સંવર તે આશ્રવ થાય છે અને વિવેકયુક્ત આશ્રવ પણ સંવર થઈ જાય છે. એમ એમનું કહેવાનું છે. એમનું આ કથન જૈન સિદ્ધાંતથી સર્વથા અવિરુદ્ધ છે એ પ્રત્યેક વિવેકીની સમજમાં આવે તેવું છે.

છઠ્ઠા અધ્યાયના પંદરમા શ્લોકમાં ધર્મને અમૃતરૂપ કહેલ છે.

"वातं विजयते ज्ञानं दर्शनं पित्तवारणम् ।
कफनाशाय चरणं धर्मस्तेनामृतायते" ॥१५॥

આ હકીકતને સમજાવતા તેઓ કહે છે કે—જ્ઞાન વાત દોષ જીતે છે, દર્શન પિત્તદોષને નિવારે છે, ને ચારિત્ર કફ દોષનો નાશ કરે છે. આમ છે માટે ધર્મ અમૃતરૂપ છે.

આ સ્થળે ગ્રંથકારે જ્ઞાન–દર્શન–ચારિત્રને વાત–પિત્ત–કફના નિવારક કહેલા છે. એ હકીકત વધારે વિચારતાં ખરેખર સત્ય જણાય છે; કેમકે વાત પ્રકૃતિવાળા પ્રાણીમાં જ્ઞાન ઓછું હોય છે, જેમ જેમ બુદ્ધિશક્તિ વધતી જાય છે તેમ તેમ વાત પ્રકૃતિ મંદ પડતી જાય છે. એ જ રીતે દર્શનમોહ જે પ્રાણીમાં હોય ત્યાં ક્રોધાદિ કષાયો વધારે દેખાય છે. કષાય અને પિત્ત બન્નેની પ્રકૃતિ લગભગ સરખી છે. સમ્યગ્ દર્શનથી પિત્ત મંદ પડે છે એટલે કષાયોનું ક્રમે ક્રમે મંદપણું અને અંતે અભાવ થાય છે. ચારિત્રમાં ક્રિયાત્મક પ્રકૃતિ છે એટલે ચારિત્રવાળો પ્રાણી સદ્ અનુષ્ઠાન તરફ નિરંતર રચ્યો પચ્યો રહે છે. અને એમ થાય છે એથી તેવા પ્રાણીની જડતાવર્ધક કફપ્રકૃતિ મંદ પડી જાય છે આ રીતે ગ્રંથકાર જ્ઞાનાદિ ત્રણ ગુણ અને વાતાદિ ત્રણ દોષ તેનો પરસ્પર જે સંબંધ બતાવે છે તે એમણે પોતાના અનુભવથી મેળવ્યો છે. જો કે આ વાત અમે બીજા ગ્રંથોમાં વાંચી નથી તેમ સાંભળી નથી એટલે ઉપાધ્યાયજીની આ વાત તદ્દન નવીન ઢબની લાગે છે છતાં એ પુરેપુરી સત્ય છે એમાં શંકા નથી.

અધ્યાય ૧૮ શ્લોક ૬ થી ૮માં ઉપર કહેલી વાતનું ફરીથી નિરૂપણ કરે છે ને તેઓ લખે છે કે—

"ज्ञानावरणसंबंधो वातः सिद्धान्तवादिनाम् ।
पित्तमायुः स्थितेर्वाच्यं नामकर्म कफात्मकम् ॥६॥
रक्ताधिक्येन पित्तेन मोहप्रकृतयोऽखिलाः ।
दर्शनावरणं रक्तकफसांकर्यसम्भवम् ॥७॥
तत्तद्विकारजं वेद्यं गोत्रं पित्तकफात्मकम् ।
अन्तरायः सन्निपातादेषां विकृतिकारणम्" ॥८॥

સૈદ્ધાંતિકોના મતે જ્ઞાનાવરણ એ વાત દોષ છે, આયુષ્યસ્થિતિનું નામ પિત્તદોષ છે, નામકર્મ કફરૂપ છે. જેમાં લોહિનું અધિકપણું છે તેવી પિત્ત પ્રકૃતિથી બધીયે મોહપ્રકૃતિઓ ઉદ્ભવે છે. લોહી અને કફના મિશ્રણ રૂપ દર્શનાવરણ છે. અને તે તે વિકારોથી થનારૂં સુખદુઃખનું વેદન વેદનીય છે. ગોત્રકર્મ પિત્ત–કફરૂપ છે. વાત–પિત્ત–કફના સંનિપાતરૂપ

અંતરાયકર્મ આ ત્રણેની વિકૃતિનું કારણ બને છે. તેથી મનના તમામ ભાવોને મેં બરોબર સમજીને ઉપર કહેલા છે. એ બાહ્ય તેમ જ આંતર હેતુદ્વારા પ્રયત્ન પૂર્વક મન વશ કરવા આત્માર્થી પુરુષે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ.

ઉપરના કથનમાં ઉ. શ્રીમેઘવિજયજીએ જ્ઞાનવરણીય આદિ કર્મ અને વાત–પિત્ત–કફ વગેરે દોષો એ બે વચ્ચે જે જાતનો સંબંધ બતાવ્યો છે તે એક અશ્રુતપૂર્વ છે છતાં ગંભીર રીતે વિચારતાં એમનું એ કથન કોઈ પણ અનુભવી જ્ઞાની, આત્માર્થીની કસોટીમાંથી પાર થઈ શકે તેવું છે. તેમની લખેલી આ હકીકતથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે આધ્યાત્મિક શુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરનાર જિજ્ઞાસુએ દેહને શત્રુવત્ ન સમજતાં તેના આરોગ્યની, સંયમની આરાધનામાં ઉપયોગિતા થાય તેવી રીતે સાવધાની પૂર્વક દરકાર લેવી જોઈએ. વાત-પિત્ત-કફથી પરસ્પરની વિષમતા ટાળવી જરૂરી છે, અને એમ કરવા માટે આહારશુદ્ધિ પર વિશેષ ધ્યાન રાખવાની જરૂર છે. તેમના કહેવાનું તાત્પર્ય એમ લાગે છે કે આત્માની સ્વસ્થતા મનના આરોગ્ય પર રહેલી છે અને તે આરોગ્ય દેહના આરોગ્યને અવલંબીને રહેલું છે.

આઠમા અધ્યાયના ઓગણીસમા શ્લોકમાં શૌચ વિશે જણાવતાં તેઓ કહે છે કે—

"शौचं च द्रव्यभावाभ्यां यथार्हता स्मृतम् ।
अस्वाध्यायं निगदता दशधौदारिकोद्भवम्" ॥१९॥

અર્હન્ત ભગવાને દશ પ્રકારના અસ્વધ્યાયને બતાવેલો છે એથી એ ભગવાને દ્રવ્યશૌચ અને ભાવશૌચ બન્નેને સ્વીકારેલા છે. એટલે દ્રવ્યશૌચ અને ભાવશૌચ એ બન્નેનું સાપેક્ષપણે જૈન શાસનમાં જરાએ ઓછું મૂલ્ય નથી. દ્રવ્યશૌચ એટલે પાણી, માટી આદિ દ્વારા બાહ્ય શુદ્ધિ અને ભાવશૌચ એટલે ધ્યાન–વિચારણા દ્વારા અંતરશુદ્ધિ.

બ્રહ્મકાંડના પંદરમા અધ્યાયના પંદરમા શ્લોકમાં ઉપાધ્યાયજી કહે છે કે—

"जैना अपि द्रव्यमेकं प्रपन्ना जगती तले ।
धर्मोऽधर्मोऽस्तिकायो वा तथैक्यं ब्रह्मणे मतम्" ॥१५॥

સાપેક્ષપણે વિચારતાં જૈન સમ્મત દ્રવ્યવાદ અને વેદાન્ત સમ્મત બ્રહ્મવાદ બન્ને એક સરખા છે. આમ કહીને તેઓ વેદાન્ત અને જૈન દર્શનનો પરસ્પર સમન્વય કરે છે. તેઓ એકબીજાના ખંડનમંડન વિવાદમાં ન પડતાં તે બે વચ્ચેની સંગતિ બતાવે છે. એ સંગતિ દ્વારા તેમના પોતાના માનસિક ઉદાર આશયનું પ્રદર્શન આપોઆપ થઈ જાય છે.

કર્મકાંડના અઢારમા અધ્યાયના શ્લોક સાતમામાં તો સ્પષ્ટ કહે છે કે—

"द्रव्यक्षेत्रकालभावाऽपेक्षया बहुधा स्थितिः ॥
आचाराणां दृश्यतेऽसौ न वादस्तत्र सादरः" ॥७॥

આચારોની ભિન્નતાને, વિવિધ ક્રિયાઓની ભિન્નતાઓને, વિવિધ પ્રકારના અનુષ્ઠાન ભિન્નતાઓને વિશેષ સ્થાન આપવાનું નથી અને તે બાબત વાદવિવાદ કરવો ઉચિત નથી.

આચાર-ક્રિયા અને અનુષ્ઠાનની જે ભિન્નતા જણાય છે તે દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવની અપેક્ષાએ દેખાય છે, એટલે કોઈ પણ આત્માર્થી પોતાની આત્મશુદ્ધિને છોડીને તેના વાદવિવાદમાં તે ઉતરે આદર પાત્ર નથી. તેમનો આ ઉદાર વિચાર તેમના પોતાના સમયમાં ઉપયોગી હતો એટલું જ નહિ પરંતુ અત્યારે પણ એ વિચાર આપણા સૌ માટે એટલો જ ઉપયોગી છે. એટલે એ જૂના થયેલા વિચારને અવલંબીને આપણે બધા બને એટલી સત્પ્રવૃત્તિ કરીએ તો સર્વ કોઈનું શ્રેયસ છે.

ઉપાધ્યાયજીએ ૧૯ મા અધ્યાયના શ્લોક ૧૧-૧૨ માં ઉપનિષદ્‌ના એ સુંદર વાક્યનું વિવેચન કરેલું છે. એ વાક્ય આ છે—

" आत्मा वा अहो श्रोतव्यः मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः "

એનું જૈન દૃષ્ટિએ વિવેચન કરતાં શ્રવણ કોને કહેવું, મનન કોને કહેવું અને નિદિધ્યાસન કોને કહેવું એ સંબંધી એમણે ઘણું સુંદર વિવેચન કરેલું છે—

" श्रोतव्यश्चापि मन्तव्यः साक्षात्कार्यश्च भावनैः ।
जीवो मायाविनिर्मुक्तः स एव परमेश्वरः ॥११॥
श्रोतव्योऽध्ययनैरेव मन्तव्यो भावनादिना ।
निदिध्यासनमस्यैव साक्षात्काराय जायते " ॥१२॥

કર્મકાંડ રૂપ ૨૭ મા અધ્યાયના ૧૫ મા શ્લોકમાં ઉપાધ્યાયજીએ બહુ ઉદારભાવથી 'જિન' અને 'શિવ'ની એકતાનું સમર્થન કર્યું છે આ સમર્થન કરવાની તેમણી શૈલી એકદમ અનોખી છે. તેઓ કહે છે કે—

" एवं जिनः शिवो नान्यो नाम्नि तुल्येऽत्र भावया ।
स्थानादियोगात्तयोर्नयो श्चैक्यमावन् " ॥१५॥

અર્થાત્—જિનોનો 'જ' અને 'ઇ' તથા શિવનો 'શ' અને 'ઇ' બન્નેનું તાલુસ્થાન છે તથા જિનનો 'ન' અને શિવનો 'વ' બન્નેનું દન્તસ્થાન સરખું છે અથવા એમનું અનુનાસિકાનું સ્થાન પણ સરખું છે· આ રીતે 'જિન' અને 'શિવ' બન્નેનો અર્થ સરખો અને શબ્દદૃષ્ટિએ બન્ને સરખા છે માટે 'જિન' અને 'શિવ' વચ્ચે કોઈ જાતનો ભેદ સમજવાનો નથી. તેમની સરખામણી વજન નવી ઢબની છે અને કોઈ પણ વાંચનારને સ્ફૂર્જ પેદા કરે તેવી છે.

આજ અધ્યાયના ૧૮ મા શ્લોકમાં તેઓ શ્વેતામ્બરની પેઠે દિગમ્બર મુનિની પણ પવિત્રતાને માને છે અને માનવાની આપણને સૂચના કરે છે. તેઓ કહે છે કે બાહ્યલિંગ ગૌણ છે. જ્યાં પવિત્રતા છે ત્યાં વાસ્તવિક રીતે મુનિપણું છે ને તે વંદનીય પણ છે.

" श्वेताम्बरधरः सौम्यः शुद्धः कश्चिद्दिगम्बरः ।
कारुण्यपुण्यः सम्बुद्धः दान्तः शान्तः शिवो मुनिः " ॥१८॥

નવમા અધ્યાયના શ્લોક ૧૩ ને ૧૪ માં તેઓ જણાવે છે કે — જેઓ એમ માને છે કે લક્ષ્મી અને સરસ્વતીને વૈર છે તે વાત તદ્દન ખોટી છે, કારણ કે જ્ઞાનધર્મને ધારણ કરનાર પુરૂષને જ લક્ષ્મી વશ થાય છે, કેમકે જ્ઞાની નિષ્પાપ હોય છે અને નિષ્પાપ હોવાથી જ્ઞાની પુરુષોત્તમરૂપ થાય છે તેથી એવા પુરુષોત્તમસ્વરૂપ સરસ્વતી–સંપન્ન જ્ઞાનીને લક્ષ્મી જરૂર વરે છે, એટલે કોઈ રીતે લક્ષ્મીને અને સરસ્વતીને વૈર છે તે માનવું બરોબર નથી.

" वैरं लक्ष्म्याः सरस्वत्या नैतत् प्रामाणिकं वचः ।
ज्ञानधर्मभृतो वश्या लक्ष्मीर्न जडरागिणी ॥१३॥
ज्ञानी पापाद् विरतिभाग् यः स वै पुरुषोत्तमः ।
तस्यैव वल्लभा लक्ष्मीः सरस्वत्येव देहभाक् " ॥१४॥

આ રીતે પ્રસ્તુત અર્હદ્ગીતામાં આપેલી હકીકતોનું સંક્ષિપ્ત દિગ્દર્શન વાંચનારને આકર્ષક થાય એવી રીતે અહીં જણાવેલું છે.

છેલ્લા છત્રીસમા અધ્યાયના શ્લોક ૨૦ માં તેઓએ પોતાનું નામ સૂચવેલ છે—

" छंदोविशारदैरेवदर्शि शिवशर्मणे ।
धर्मस्तस्मान्नित्यसुखं श्रीमेघविजयोदयः " ॥२०॥

આ પુસ્તક મૂલરૂપે ધૂળીયા (પશ્ચિમ ખાનદેશ)થી પત્રાકારે છપાયેલ છે. જો કે છપાઈ સારી છતાં તેમાં અશુદ્ધિઓ ઘણી રહી ગયેલી છે. કોઈ વિવેકી વિદ્વાન આ ગ્રંથને સારી રીતે શુદ્ધ કરીને પુનઃ સંપાદિત કરે તથા તેનું ચાલુ ભાષામાં વિવેચન કરે તો આ પુસ્તક ઘણું જ ઉપયોગી થાય તેમ છે.

ज्ञानदर्शनचारित्रैरात्मैक्यं लभते यदा ।
कर्माणि कुपितानीव भवन्त्याशु तदा पृथक् ॥१७९॥

અર્થ—જ્યારે આત્મા સમ્યગ્ જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રની સાથે એકતાને પામે છે ત્યારે કર્મો જાણે કોપાયમાન થયા હોય તેમ, તેનાથી શીઘ્ર જુદાં પડે છે.

અધ્યાત્મસાર] [ઉ. યશોવિજયજી

★

હીરકલશકૃત

'પંચાખ્યાન'–ગત 'બક–નાલિકેર કથા'

[સંપાદક : ડૉ૰ શ્રીયુત ભોગીલાલ જ. સાંડેસરા]

સને ૧૯૪૭-૪૮ માં ગુજરાતી સાહિત્ય પરિષદ માટે હું 'પંચતંત્ર'નું સંપાદન અને અનુવાદ કરતો હતો. (જે ગ્રંથરૂપે ૧૯૪૯ માં બહાર પડેલ છે.) ત્યારે પાટણના શ્રી હેમ-ચંદ્રાચાર્ય જ્ઞાનમંદિરમાંથી (હસ્તપ્રત નં. ૧૮૭૦) પૂ૰ મુનિ શ્રીપુણ્યવિજયજી મહારાજના સૌજન્યથી આ નાનકડા કથાનકની એક પાનાની હસ્તપ્રત મળી હતી. 'પંચતંત્ર'ની તમામ પ્રાચીન પાઠ પરંપરા સાથેનો તુલનાત્મક અભ્યાસ કરવાનો મારો ઉદ્દેશ હોઈ તે સાથે સંબંધ ધરાવતા આ કથાનકની નકલ પણ તે સમયે મેં કરી લીધી હતી.

'આત્મવર્ગનો ત્યાગ કરીને પરવર્ગમાં જેઓ પ્રીતિ રાખે છે તેઓ પાછળથી પસ્તાય છે'—એ સૂત્રનું પ્રતિપાદન કરવા માટે આ કથાનક રચાયું છે. એના કર્તા કવિ હીરકલશ સં. ૧૬૩૬ માં 'સિંહાસન બત્રીશી' રચનાર તરીકે પ્રસિદ્ધ છે. એટલે આ કથાનક પણ તે અરસામાં રચાયું હશે. એની પુષ્પિકામાં જણાવ્યું છે તે પ્રમાણે, હીરકલશશિષ્ય હેમાણંદ મુનિના શિષ્ય આણંદવિજયે સં. ૧૬૪૯ માં એની નકલ કરેલી છે એ નોંધપાત્ર છે.

કવિ હીરકલશે સમગ્ર 'પંચાખ્યાન' ('પંચતંત્ર')નો સારોદ્ધાર ગુજરાતીમાં કરેલો જાણવામાં નથી; આ એક જ કથાનક તેમણે પ્રસંગોપાત્ત પદ્યમાં ઉતાર્યું હોય એમ એની કડીઓના ઉલ્લેખ ઉપરથી જણાય છે. પરંતુ મેં તપાસેલી 'પંચતંત્ર'ની બધી ઉપલબ્ધ વાચનાઓ પૈકી એક માત્ર 'તંત્રોપાખ્યાન'માં જ (ત્રિવેન્દ્રમ્ સંસ્કૃત સિરિઝ, નં. ૧૩૨) આ કથાનક મળે છે. મારા જોવામાં નહિ આવેલી કોઈ વાચનામાં તે કદાચ મળે. કવિના સમયમાં આ કથાનક લોકમુખે પ્રચલિત હોવાનો પણ પૂરો સંભવ છે.

૩૩ કડીમાં રચાયેલી આ કથાની ગુજરાતી ભાષા ઉપર મારવાડીની સારી અસર દેખાય છે. કથાસાહિત્યના અને ખાસ કરીને 'પંચતંત્ર'ના અભ્યાસીઓને તે ઉપયોગી થાય એ આશયથી તેનું પ્રકાશન અહીં કર્યું છે.

મૂલકૃતિ

॥ ईं० ॥ श्रीहर्षप्रभुगणिगुरुभ्यो नमः ॥

ધૂરિ દૂહા

સમરિય સરસતિ કવિ કહઇ, સંપદ સારઇ દાંન;
દઇતા કહહી તેહ ધના લહુ ષુટઇ એ ગ્યાંન. ૧
થોડઇ ધન વિસ્તાર બહુ જે મંડઇ નરનારિ;
તે બગલહિ નાલેર જિઉં, પછિતાસી સંસારિ. ૨
જિમ કિણુહી વનિ કિણિ સરહિ બહુ તરવર તસુ પાસ;
વાસ વસઇ તિહાં પંષીયા જલ જલધરની આસ. ૩
કિણુહી અવસરિ તિણિ વનહિ મેઘ પરાભવતીવ;
થોરઇ જલિ પંષી સહૂ ઊડી ગયા પર દીવ. ૪
બગલઉ ઇગ બગલી સહિત વડપણિ વ્યાપઇ રોગિ;
કરિ સંતોષ રહિયઉ તઠઇ સઇધા સરનઇ જોગિ. ૫
એક દિવસિ એ કિણિ સમઇ બઇઠઉ સરવર પાસ;
દેષઇ જલ વિણુ પંષીયા ઊડિયા જાઇ અગાસિ. ૬
ઊમાહિઉ મિલિવા ભણી, ચીંતિઉ સયણા કાજિ;
'તેડી સરવર આપણઇ જલ ભગતાવઉ આજ.' ૭
દેષીય ઘરણી પ્રિય ચવઇ, 'મ કરિસિ કૂડી માંમ;
થોડઉ જલ આપણુ સરઇ, સીઝઇ કોઇ ન કામ. ૮
કિસી ક્રિયા વરતે ભણી, તઉં તુઝ પાલે પિંડ;
એ પંષી શતના સહસ વહિ જાસિ પરષંડિ. ૯
થારી ભગતિ ઇયાં તણી, ચીહાની હુયઇ ષોટ;
છલ અણુપૂગઇ તાહરા સવિ ગુણ જાસિ લોટ. ૧૦
આપંણુ બિહુનઇ જલ વિના રહણુ નહી હુયઇ એથિ;
તિણિ કારણિ બૂઢઉ થઈ ઊડી જાઇસિ કેથિ. ૧૧
ડાહા સીષ દીયઇ ઇસી; ભગતિ હવઇ ઘરસારિ;
ઘરિની ત્રેવડ બાહિરી ન રહઇ માંમ લિગાર. ૧૨
ઊષાંણુઉ સુણિયઇ ઇસઉ ફિરતા લોક મઝારિ;
જેતા પુહચઇ પંગુરણુ તેના પાઉ પસારિ.' ૧૩
સુણિ બગલઉ બગલી વયણુ ઊતર દિયઇ ઉચ્છાહિ;
'વલિ વલિ અવસર દોહિલા, કુણુ આવઇ કિયા માંહિ? ૧૪
વાઉ વલાવણિ આવિયા આ લસીએ જિમ ગંગ,
તિડીનઇ ભગતા વિસ્યાં, પછઇ હુસ્યાં ઇયાં સંગિ.' ૧૫

यतः पंचाख्याने श्लोक
आत्मवित्तं न जानामि करोति वहुविस्तरा ।
ते नरा निधनं यान्ति नालकेर वगो यथा ॥ ३१
હોડ ન કીજઇ પારકી આપણુ સગતિ પસાઇ;
ધરમ કરીજઇ અહિનિસઇં દાન સીલ તપ ભાઈ. ૩૨
ઇણુ પરિ જાંણી સુગુણુ નર પંચાખ્યાંની થાઇ;
હીરકલસ કહિ તિહ તણી આપદ દૂરિ પુલાઇ. ૩૩

इति पंचाख्यान कथानकं ॥ संवत् १६४९ वर्षे माह वदि १३ दिने श्रीनागपुरे महाराजाधिराज श्रीराइसिंहजीविजयराज्ये श्रीवृहत्खरतरगगच्छे भट्टारक श्री श्री श्री श्री श्री श्री श्रीजिणचंद्रसूरिविजय-राज्ये ॥ पं. हर्षप्रमुगणिः तच्छिष्य पं. हीरकलसमुनि तच्छिष्य पं. हेमाणंदमुनि तच्छिष्य विनेय चेला आणंदविजयलिषतं ॥ श्रीरस्तु ॥

—ः નિશ્ચય – વ્યવહાર ઃ—

બહુ મુખ ખાણી તુજ વાણી પરિણમે રે, જેહ એક નય પક્ષ,
ભૂલા રે ભૂલા રે, તે પ્રાણી રડવડે રે. ૨
મેં મતિ મોહે એક જ નિશ્ચયનય આદર્યો રે, કે એક જ વ્યવહાર;
ભેલા રે ભેલા રે, તુજ કરૂણાએ ઓળખ્યા રે. ૩
શિબિકા વાહક પુરૂષ તણી પરે તે કહ્યા રે, નિશ્ચયનય-વ્યવહાર;
મિલિયા રે મિલિયા રે, ઉપગારી નવિ જાજૂઆ રે. ૪
બહુલા પણ રતન કહ્યાં જે એકલાં રે, તે માલા ન કહાય;
માલા રે માલા રે, એક રાત્રે તે સાંકલ્યા રે. ૫
તિમ એકાકીનય સઘલા મિથ્યામતિ રે મિલિયા તે સમકિતરૂપ;
કહીએ રે કહીએ રે લહીએ સમ્મતિ સમ્મતિ રે. ૬
હોય પંખ વિણુ પંખી જિમ નવિ ચલી સકે રે,
જિમ રથ વિણુ હોય ચક્ર;
ન ચલે રે ન ચલે રે, તિમ શાસનનય બિહું વિના રે. ૭
શુદ્ધ અશુદ્ધપણું પણ સરખું છે બેઉને રે, નિજ નિજ વિષે શુદ્ધ;
જાણો રે જાણો રે, પર વિષે અવિશુદ્ધતા રે. ૮
નિશ્ચયનય પરિણામપણાએ છે વડો રે, તેહવો નહી વ્યવહાર;
ભાખે રે ભાખે રે, કોઈક ઈમ તે નવિ ઘટે રે. ૯

શ્રી. યશોવિજયજી] * [નિ૦ વ્ય૦ ગર્ભિત સીમંધર સ્તવન

શ્રીમદ્ હેમચન્દ્રાચાર્યકૃત સંસ્કૃત

ત્રિષષ્ટિશલાકા પુરુષચરિત મહાકાવ્યના

પ્રથમપર્વના પ્રથમસર્ગનું

સમાજદર્શન

[લેખક—પ્રો. શ્રીયુત જયન્ત પ્રે. ઠાકર એમ. એ કોવિદ
અધ્યક્ષ, મુદ્રિત વિભાગ, પ્રાચ્ય વિદ્યામન્દિર, વડોદરા]

શ્રીયશોવિજયજીથી પાંચ શતક પૂર્વે થયેલા શ્રીહેમચન્દ્રાચાર્ય પણ એક મહાગુજરાતી હતા. વ્યાકરણ, કાવ્ય, છન્દસ્, યોગ, ધર્મ તેમ જ કોશ જેવાં શાસ્ત્રોના અતિઆદરણીય ગ્રન્થો રચનાર શ્રીહેમચન્દ્રાચાર્યે કલિકાલસર્વજ્ઞનું બિરુદ સાર્થક કરી બતાવ્યું છે. 'દ્વયાશ્રયકાવ્ય'માં તો શાસ્ત્ર અને ઇતિહાસનો સુન્દર સમન્વય કરી અપૂર્વતા ખિલવી છે. તેમની સરળ અને પ્રવાહી શૈલીએ તેમની કૃતિઓને વિશેષ લોકભોગ્ય બનાવી છે તેમાં યે 'त्रिषष्टिशलाका-पुरुषचरितमहाकाव्य' તો તેમની ઉત્તરાવસ્થામાં લખાયેલું હોઈ સર્વથી અનેરી જ ભાત પાડે છે. ટૂંકમાં એ ધર્મ તેમ જ સાહિત્યના ક્ષેત્રના મહાન આચાર્યના પેંગડામાં પગ મૂકવાનું હજી સુધી તો કોઈને માટે શક્ય બન્યું નથી એમ કહેવામાં અતિશયોક્તિ નહીં થાય.

આથી આજના અવસરે શ્રીહેમચન્દ્રાચાર્યના ગ્રન્થ વિષે જે કાંઈ કહેવું તે અસ્થાને નહીં ગણાય.

તેમનું 'त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरितमहाकाव्य' તેના લાંબા નામને અનુરૂપ આશરે ૩૫૦૦૦ શ્લોકનો વિસ્તાર ધરાવતું હોઈ દશ પર્વમાં વહેંચાઈને જાણે 'મહાભારત'ની સ્પર્ધા કરે છે. ૫૦૪૧ શ્લોકોના* બનેલા તેના પ્રથમ પર્વમાં પ્રથમ તીર્થંકર શ્રીઋષભદેવ તથા તેમના લૌકિક દૃષ્ટિએ પુત્ર શ્રીભરતચક્રવર્તીના ચરિતો ગૂંથાયા છે. તેના કુલ છ સર્ગોમાંથી ૯૧૧ શ્લોકપ્રમાણના પહેલા સર્ગમાં શ્રીઆદીશ્વરના જીવના જન્મ બન્યા પછીનાં અગિયાર પૂર્વજન્મોનું વર્ણન છે. તેની વિગતમાં નહીં ઊતરતાં એ પ્રથમ સર્ગમાંથી સમકાલીન સમાજનાં દર્શન જેવાં હું કરી શક્યો છું તેવાં અન્યને કરાવવાનો આ એક વિનમ્ર પ્રયાસ છે.

---

* આ લેખ માટે પ્રમાણભૂત ગ્રન્થ તરીકે શ્રી જૈન–આત્માનન્દ સભા, ભાવનગર તરફથી ઈ. સ. ૧૯૨૬ માં પ્રકટ થયેલ અને મુનિશ્રી ચરણવિજયજીએ સંપાદિત કરેલ પ્રથમ પર્વનો સ્વીકાર કર્યો છે.

"જો કે સમકાલીન સમાજનું નિરૂપણ કરવાનો ગ્રન્થકારનો હેતુ નથી જ. જે પુરાણા કાળની કથા કહે છે, તેનું હૂબહૂ ચિત્ર દોરવાનું આમાં અભિપ્રેત છે. કેમકે પરાપૂર્વથી ચાલી આવતી પ્રણાલિકાઓની પણ વિગતો આપતાં આ ગ્રન્થમાંથી સામાજિક સ્થિતિ વિષે જે કાંઇ જાણી શકાય તે બધું ગ્રન્થકારના સમયને જ લાગુ પડે છે, તેમ માનવું ઉચિત નથી. અલબત્ત જે વિગતો ગ્રંથકારે નોંધી છે, તે પરાપૂર્વથી ચાલી આવતી તેમના સમય સુધીમાં કેટલી વિકાસ પામી ચૂકી હતી એનો સ્પષ્ટ ખ્યાલ આવી શકશે ખરો.

છતાં પોતાના સમયથી તદ્દન જુદા સમયના સમાજનું ચિત્ર દોરતાં દરેક રચયિતા ઉપર કાલના પ્રવાહના પ્રાબલ્યનો પ્રભાવ પડ્યા સિવાય રહેતો નથી; અને તેથી છિદ્રોવાળા ઘડામાં મૂકેલા દીપકના પ્રકાશનાં કિરણો જેમ છિદ્રોમાંથી ડોકિયાં કરે, તેમ આ મહદ રચનામાંથી ઉપમાઓ, ઉત્પ્રેક્ષાઓ વગેરેના ચમત્કારને જોરે સમકાલીન સમાજના ચિત્રની જે રેખાઓ ઊપસી આવે છે તેનું નિરૂપણ કરવાનું આ એક દુઃસાહસ છે.

પરાપૂર્વથી ચાલી આવતી વર્ણવ્યવસ્થા તે સમયે પણ હતી. બ્રાહ્મણ સહુથી ઊંચો ગણાતો (૩૧૩) ક્ષત્રિય રક્ષક રાજા હતો. વૈશ્યો વાણિજ્ય દ્વારા પુષ્કળ ધન પ્રાપ્ત કરતા. (૩૬) અને શૂદ્રો સેવક હતા. ધનસાર્થવાહનું ચરિત તત્કાલીન વાણિજ્યરીતિનો સુન્દર ખ્યાલ આપે છે.

વાહનવ્યવહારની આજના જેવી સરળતા તે જમાનામાં ન હોવાથી વસ્તુઓના ખરીદ–વેચાણ અર્થે પગરસ્તે જ જવું પડતું. આ માટે જનાર શ્રેષ્ઠી દાંડી પિટાવી સાદ પડાવતો કે જેને સાથે જવું હોય તે તૈયાર થઈ જાય (૪૫–૬). આમ એક વિશાળ સંઘ–સમુદાયમાં બધા નીકળતા, કુલસ્ત્રીઓ પ્રસ્થાનસમયે મંગલવિધિ કરતી (૪૯). ઘોડેસવાર આરક્ષકોના રક્ષણને લીધે ચોર–લૂંટારા તથા હિંસક પ્રાણીઓ આ જંગી સમૃદ્ધ કાફલાથી દૂર જ રહેતાં. (૪૮,૬૫,૭૬). મોટાં મોટાં શકટો ઉપરાંત ઘોડા, ખચ્ચર, ઊંટ, મોટા આખલા, મહિષો અને ગર્દભો જેવા ભારવાહક પ્રાણીઓનો પણ આવા પ્રસંગોએ છૂટથી ઉપયોગ થતો (૪૧, ૬૩, ૬૭) બળદને ગળે ઘંટડીઓ બાંધવામાં આવતી (૭૩) અને કોઈક વખત તો વધારે પડતા ભારને લીધે બળદ જેવાં પ્રાણીઓ લથડી પણ પડતાં (૫૯૦) બન્ને પડખે લટકતી ગુણોથી, દોડતા વેસર (એટલે ખચ્ચર) પાંખોવાળા લાગતા (૬૮).

આવી લાંબી સફરોમાં પણ સર્વ પ્રકારની આનન્દ–પ્રમોદની સામગ્રી સાથે જ રહેતી, અને પરિણામે ગાડાં તે જાણે ચાલતાં ઘર બની જતાં :—

"यूनामन्तर्निविष्टानां, तत्रक्रीडानिबन्धनम् ।
जङ्गमानीव वेश्मानि, शकटानि चकासिरे " (६९)

ઘણી લાંબી મુસાફરી હોવાથી જુદી જુદી ઋતુઓનો સામનો લોકોને કરવો પડતો. જ્યારે વરસાદ ખૂબ પડવા લાગતો ત્યારે જંગલમાં જ પડાવ નાખવો પડતો (૧૦૦). આમ

ઘણા દિવસો વીતી જતા અને તેથી એવા પણ પ્રસંગો આવતા કે પોતાની પાસેનું પાથેય ખૂટી પડતાં સાર્થવાહોને કુલપતિ તાપસોની આશ્રમ કંદમૂળ માટે ભટકવું પડતું (૧૦૮).

શરદ ઋતુનો પ્રારંભ થતાં યોગ્ય સમયની ઘોષણા મંગલપાઠક કરે એટલે ફરી સંઘ ચાલી નીકળતો (૨૦૫–૨૧૮).

ઉદ્દિષ્ટ સ્થાને પહોંચી પોતાનો માલ વેચી નવો માલ ખરીદી ફરીનો સંઘ પાછો ફરતો (૨૨૪)

ખેતી (૨૯૩, ૮૨૮) ઉપરાંત પશુપાલનનો ધંધો પણ તે સમયે ચાલતો હતો (૨૧૯). વાંસના ભૂંગળામાંથી બનાવેલ ગોપ્રુંજનાત્મક વાદ્ય ગોવાળિયા વગાડતા એટલે ગાયોનું ધણ દોડતું આવી લાગતું (૨૧૯). ભારભૂજનના ધંધાનો ઉલ્લેખ પણ અહીં મળે છે (૫૭૨). વળી તલને પીલીને તેલ કાઢવાનાં યંત્રો પણ તે સમયે હતાં (૫૬૩). ધીવર (એટલે માછીમાર)નો ધંધો પણ ચાલતો (૫૭૧). ગરીબો પર્વતપ્રદેશમાંથી લાકડાના ભારા બાંધી લાવી વેચતા (૫૮૭). ઘણાં જેવાં સાધનોના નિર્દેશ પણ મળે છે (૫૬૫).

વર્ણવ્યવસ્થાની સાથે આશ્રમવ્યવસ્થા પણ હશે, જોકે તેનાં સ્પષ્ટ પ્રમાણ મળતાં નથી. રાજા સ્વહસ્તે પુત્રનો રાજ્યાભિષેક કરી સંસારમાંથી નિવૃત્તિ લઈ પ્રવ્રજ્યા સ્વીકારતા. (૨૬૮, ૩૭૮) એવું બીજા વર્ણોમાં પણ હોઈ શકે.

ધર્માચાર્યો શિષ્ય–મુનિઓથી પરિવૃત થઈ વિહાર કરતા. વેપાર અર્થે જતા સંઘની સાથે ઘણીવાર તેઓ જોડાતા. (૫૩), અને સાર્થવાહ તેમ જ અન્ય જનો તેમને સર્વ પ્રકારનું રક્ષણ તથા પોષણ આપીને કૃતકૃત્યતા અનુભવતા (૬૧–૨, ૧૩૧–૨) કોઈ પણ સંયોગોમાં તેઓ પોતાનાં વ્રતોનું પાલન અવશ્ય કરતા (૬૦). વર્ષા જેવી મુશ્કેલીઓને કારણે રસ્તામાં સંઘ સાથે પડાવ નાખવા પડતા ત્યારે પણ તેઓ હંમેશ મુજબ ધ્યાન, મૌન કાયોત્સર્ગ, આગમ–પઠન, વાચના, ભૂમિપ્રમાર્જના, વંદના, ધર્મકથા વગેરે કાર્યક્રમમાં મગ્ન રહેતા (૧૨૨–૮). આવે વખતે તેઓ નિર્જન્તુ સ્થળે પલાશના આચ્છાદનવાળા અને અને ઘાસની છિદ્રોવાળી ભીંતિવાળા ઉટજ–ઉપાશ્રયોમાં રહેતા (૧૦૨, ૧૧૮)

આ આચાર્યો પ્રસંગે પ્રસંગે, પોતાનો ધર્મ સમજી; ધર્મદેશનાઓ આપતા, જેમાં ધર્મના સૂક્ષ્મ સ્વરૂપ વિષે, તેના પ્રકાર વિષે, અને તેના અનુષ્ઠાન વિષે બોધ આપતા (૧૮૫–૨૦૧). પ્રસંગોપાત્ત ઉદાહરણો આપી તેઓ ઉપદેશ આપતા અને શ્રોતાઓ ઉપર તેની ઊંડી અસર થતી. તેમને દુઃખ સહન કરવાની પ્રેરણા અને પ્રવ્રજ્યા સ્વીકારવા ઉત્તેજના મળતી (૫૬૧–૫૯૩).

સંઘની સાથે જતા આચાર્યો વિકટ રસ્તો વટાવી સંઘથી છૂટા પડી વિહાર કરી જતા (૨૨૩)

રાજસભામાં પણ ધર્મ અને તત્ત્વજ્ઞાન ઉપર વાદવિવાદ થતો. રાજાને મન્ત્રીઓ ધાર્મિક્ય સાથે ચેતવતા પણ ખરા ((૨૮૫–૩૨૯) ચાર્વાકમત, બૌદ્ધમત તથા માયાવાદનાં

નિરૂપણુ અને નિરસન આ સર્ગમાં આવે છે, આ વિષય એક સ્વતન્ત્ર લેખ માગી લેતો હોવાથી અહીં તેનો વિચાર નહીં કરીએ.

સંયુક્ત કુકુમ્બમાં મુખ્ય પુરુષ કુટુંબનો વડો હતો. લાજ કાઢવાના રિવાજ વિષે કોઈ સ્પષ્ટ પ્રમાણુ મળતું નથી, પરંતુ સ્ત્રીનું સ્થાન કાંઈક નીચું હતું (૭૯૬) લગ્નની પ્રથા વિષે ખાસ માહિતી મળતી નથી. આ પછીના સર્ગોમાં વિસ્તૃત લગ્નવર્ણુન આવે છે, જે બહુ રસિક પણુ છે. પરંતુ તે આ નિબન્ધની મર્યાદાની બહાર હોવાથી તેને સ્પર્શવું અહીં ઉચિત નથી.

છોકરાના પરાક્રમથી અગર બીજી કોઈ રીતે છોકરીને તે ગમી જતો ત્યારે—

" अस्वातन्त्र्यं कुलस्त्रीणां, धर्मो नैसर्गिको यतः "

એ સૂત્રને અનુસરી પોતાની સખી દ્વારા તે પિતાને વિનંતિ કરતી (૬૮૪). અને પિતા યોગ્યતા હોય તો વિરોધ કરતો નહીં ને તેવાં લગ્ન કરી આપતો (૬૮૫).

કન્યા પરણીને પતિને ઘેર જતી (૬૮૮) નવયુગલ સિત ને ક્ષૌમ વસ્ત્રો પહેરી ઘેર જતું (૬૮૮).

બાળલગ્નો તે કાળે નહીં થતાં હોય તેમ તો નહીં જ. ૨૪૪મા શ્લોકમાં પિતાના આદેશથી મહાબલ પરણે છે, અને ૨૪૫મા શ્લોકમાં કહ્યું છે કે:—

" रतिलीलावनं सोऽथ, यौवनं प्रत्यपद्यत "

જો કે આ પહેલાં તેણે બધી કળાઓ હસ્તગત કરી લીધી હતી (૨૪૩), એટલે પરણવાને યોગ્ય ઉમ્મર થઈ હશે. છતાં આ કથન અપક્વ વયનાં લગ્નો તરફ અંગૂલિનિર્દેશ કરે છે એમ કહી શકાય.

સ્ત્રીઓ છૂટથી હરીફરી શકતી હશે. કેમ કે વાણિજ્યાર્થે વિચરતા સંઘમાં પોતાનાં સંબંધીઓ સાથે ઘણી સ્ત્રીઓ જતી (૮૭–૮): ગ્રીષ્મના તાપને લીધે માર્ગની સરિતાઓમાં પડતી અને નલિનીનાલ ગળા ઉપર ધારણુ કરી ઠંડક કરવાનો પ્રયત્ન કરતી.

પુત્રીનો જન્મ એ દુષ્કર્મનું ફલ લેખાતું (૫૩૪). એક સ્થળે તેને ખસના ફોડલા સાથે સરખાવી છે (૫૧૩). તેના ઉછેરમાં પણુ ગરીબ લોકો તો બેદરકારી જ રાખતા (૫૪૨).

પહેરવેશમાં સામાન્ય વસ્ત્રો ઉપરાંત દિવ્ય વસ્ત્રોનો નિર્દેશ મળે છે, જેનો દેવાંગવાસસ્ અથવા તો દેવદૂષ્ય વસ્ત્ર તરીકે ઉલ્લેખ છે (૪૦). ધર્મિષ્ઠ શ્રીમંતોને ત્યાં તો એના ઢગલા હતા (૪૦). ઢીંચણુ સુધીના બૂટ અગર મોજાં (मोचक)નો પણુ સ્પષ્ટ ઉલ્લેખ છે:

" अध्वन्यजन आजानुसंलग्ननवकर्दमः ।
आमुक्तमोचक इव, प्रचचाल शनैः शनैः " (९६)

આથી સ્પષ્ટ થાય છે કે मोचकને લીધે ગતિ ધીમી પડી જતી હતી.

કર્પૂર, અગરુ, કસ્તૂરી, ચન્દન અને ઘનસાર અંગલેપ માટે વપરાતાં (૩૪૨, ૩૬૭). આભૂષણોમાં — પગમાં રત્નકટક, કેડ પર કટિસૂત્ર, હાથમાં કંકણ, બાહુ ઉપર અંગદ(કડાં), છાતી ઉપર હારયષ્ટિ, ગળામાં ગ્રૈવેયક અથવા "નેકલેસ", કાને કુંડળ અને મસ્તક ઉપર કૂલહાર તેમ જ કિરીટ પહેરવામાં આવતાં (૪૯૫-૬).

સૂવા માટે તૂલશય્યા અથવા રૂનાં ગાદલાં વપરાતાં (૪૧૩). દોલા અથવા હીંચકો પણ એક મન બહેલાવવાનું સાધન હતું (૫૦૬) સુન્દર ક્રીડાપર્વતો, સરિતાઓ, વાપીઓ, દીર્ઘિકાઓ અને ઉપવનો તેમ જ ઉદ્યાનો જેવાં આનન્દપ્રમોદનાં સ્થાનો પણ પુષ્કળ હતાં (૬૧૩). મૃગયા પણ પ્રવર્તતી (૫૭૪).

વારાંગનાઓનું પ્રમાણ પણ કાંઈ નાનું ન હતું. ચામર, દર્પણ અને પંખા જેવાં સાધનો વડે રાજા (અથવા બીજા એવા શ્રીમન્ત મનુષ્યો)ની સેવામાં વારાંગનાઓ રહેતી(૪૮૮).

પાન અથવા હોડી (૫૮૬) તથા तरण्ड અથવા तरापा (૩૧૮) પણ હતા. લોકો તેમાં બેસી સહેલગાહ પણ કરતા હશે.

કાચા સૂતરવાળા ખાટલા ઉપર બેસાડી નીચે પાડવાની મશ્કરી પણ થતી (૫૫૬).

કપિકચ્છૂ ફલનો સ્પર્શ થતાં ખૂબ ખૂજલી આવ્યા કરે છે અને ક્યાંય ચેન પડતું નથી; એવું આજે પણ અનુભવાય છે. કેટલીક વાર સાસાને "ઊંચા-નીચા કરવા", સાસ તેમજ નરસા મિષે; ખુરશી જેવાં સ્થળોએ આને વેરીને ક્રૂર મશ્કરી કરવામાં આવે છે. તે વખતે પણ તેવી મશ્કરી કરવામાં આવતી (૫૮૮).

અનાજના ઢગલા તથા ગૂણોનો ઉલ્લેખ પણ મળી આવે છે (૪૦). અનાજ કોઠીઓમાં ભરતા (૮૬૪). પાકી કેરી (૫૮) ઉપરાંત પક્વ શ્યામાક, નીવાર, વાલુંક(ચીભડું), કુવલ(કાકડી, બોર) વગેરે પણ પુષ્કળ પ્રમાણમાં મળતાં (૨૧૧). શેરડીનાં તો વન હતાં (૨૧૨). ઉત્સવ પ્રસંગે મોદકાદિ મિષ્ટ પણ આરોગાતાં (૫૪૮). ગોળ, લોટ અને પાણીના મિશ્રણમાંથી મદશક્તિ ઉત્પન્ન થાય છે એવું વિધાન છે (૩૩૨). દૂધ, મધ તથા ઘીનો પણ છૂટથી ઉપયોગ થતો (૮૬૯-૭૦). થીજેલા ઘીનો પણ ઉલ્લેખ મળે છે (૧૩૮).

ભોજનના ચાર પ્રકાર એક સ્થળે જણાવ્યા છે: અશન, પાન, ખાદ્ય(ફળાદિ) અને સ્વાદ્ય(મુખવાસાદિ) (૪૫૬). કડવી તુંબડીનો ઉલ્લેખ પણ એક સ્થળે મળે છે (૫૯૭).

તે સમયે માંસાહાર પણ થતો હતો (૫૭૧-૩, ૫૭૭). માંસ રાંધીને ખાતા, તેમ જ મદ્ય ગાળીને લેતા. પણ તેવા લોકો હલકા ગણાતા હશે.

ચોર-લૂંટારાનો ભય રહેતો (૪૮, ૭૭). મુસાફરી તો પગરસ્તે જ કરવાની હોવાથી સારા પ્રમાણમાં રક્ષકોની વ્યવસ્થા રાખવી પડતી. ભરચક વસ્તીવાળા શહેરમાં નાનાં ગામડાં કરતાં ચોરી-લૂંટનો ભય ઓછો રહેતો (૨૬૪).

પરસ્ત્રીગમન એ બીજો દોષ હતો (૫૮૦). આ બન્ને ગુના માટે ગુનેગારોને પકડવામાં આવતા (૫૮૦). કેદીઓને બેડી પહેરાવવામાં આવતી (૫૧૩). લાંચ–રુશવત અને બીજા વિત્તમાંથી ઉત્પન્ન થતા દોષો તે સમયે પણ પ્રચલિત હતા (૭૧૨–૪). રાજપુત્ર રાજ્યના લોભમાં ફસાઈને પ્રજામાં પૈસો વેરી તેને લેટે છે અને રાત્રે સૂતેલાં પોતાનાં મા–બાપને વિષધૂપ આપી ગૂંગળાવી મારે છે (૭૧૨–૪). રાજાઓ ઉપરાંત બીજા શ્રીમંતોના ઘરમાં પણ આવો અનેક પ્રકારનો સડો હશે 'द्वादशपञ्जरिकास्तोत्र'માં સાચું જ કહ્યું છે કે :—

" पुत्रादपि धनभाजां भीतिः, सर्वत्रैषा विहिता रीतिः " ॥

દ્યૂત વિષે કોઈ માહિતી અહીં મળતી નથી, પણ પછીના સર્ગોમાં આવે છે. વારાંગનાઓ વિષે તો આગળ કહેવાઈ ગયું છે. તેમનો ધંધો રીતસર ચાલતો (૭૩૯).

આ બધાં દૂષણો સર્વકાલસામાન્ય હોવાથી એમાં કાંઈ જ વિશિષ્ટતા નથી.

કેટલાક રોગો અને તેના ઉપચારો વિષે પણ કેટલીક માહિતી મળે છે. સામાન્ય જ્વર ઉપરાંત પામા–એટલે ખસ–નો ઉલ્લેખ મળે છે તે ખણવાથી વધ્યા કરે છે એવું એક વિધાન છે (૨૯૮) વળી બીજા એક સ્થળે કહે છે કે, જેમ પામાના પિટક–એટલે કે ખસના ફોડલા એક બીજાની નીચે ઉત્પન્ન થયા જ કરે તેમ ઉપરાઉપરી પુત્રીઓ જન્મી (૫૧૩). આથી સ્પષ્ટ થાય છે કે આ રોગ ચેપી લેખાતો.

જન્મથી અન્ધ, બધિર, પંગુ અને કુષ્ઠીનો સામાન્ય ઉલ્લેખ છે (૫૭૯). કૃમિકુષ્ઠ એટલે જન્તુઓથી ફેલાતો કોઢ કુસમયે અપથ્ય ખોરાક લેવાથી થતો (૭૩૪). કોઢના નિવારણ માટે લક્ષપાક તેલ, ગોશીર્ષચન્દન અને રત્નકમ્બલ–એ ત્રણનો પ્રયોગ સૂચવ્યો છે (૭૪૬). તે ઉપરાંત ૧૬ શ્લોકોમાં આ ઉપચારનો પ્રયોગ બતાવ્યો છે (૭૬૧–૭૬), જે સંક્ષેપમાં નીચે પ્રમાણે છે :—

લક્ષપાક તેલથી શરીર ચોળવું. આ તેલ બહુ ઉગ્રવીર્ય હોવાથી રોગી મૂર્છિત થઈ જશે, પણ શરીરની અન્દરથી કુષ્ઠના કૃમિઓ, જેમ રાફડા ઉપર પાણી છાંટવાથી કીડીઓ બહાર ઉભરાઈ આવે તેમ, વ્યાકુલ થઈને ઉપર આવી જશે. પછી ચન્દ્ર જેમ જ્યોત્સ્નાથી આકાશને આચ્છાદિત કરે તેમ, રત્નકમ્બલથી શરીર બરાબર ઢાંકી દેવું. આથી ગ્રીષ્મના મધ્યાહ્નતાપથી પીડાયેલી માછલીઓ જેમ શેવાળ ઉપર આશ્રય લે છે તેમ તેલની ઉષ્ણતાથી પીડિત થયેલા કીડાઓ શીતળ રત્નકમ્બલને ચોંટી જશે. સાચવીને કાંબળો ઉઠાવી લઈ પાસે રાખેલા ગાયના (કે બીજા કોઈ પ્રાણીના) શબ ઉપર ધીમે ધીમે ખંખેરવો, એટલે કૃમિઓ બધા એ મૃતદેહ ઉપર પડશે. આ પછી ગોશીર્ષચન્દનના લેપથી રોગીને બહુ રાહત રહેશે. પહેલા પ્રયોગે ચામડીમાંના કીડાઓ દૂર થશે. બીજી વાર આ જ પ્રમાણે કરવાથી માંસમાંના કીડાઓને પણ દૂર કરી શકાશે. અને ત્રીજા પ્રયોગે હાડકામાંના જન્તુઓ નીકળી આવશે. આ ઉપાયથી રોગીનું શરીર ચકચકિત સોનાની મૂર્તિ જેવું કાન્તિમાન થઈ જશે.

આજે કોઢનો રોગ વિશેષ ફેલાતો માલૂમ પડ્યો છે, અને તેનો સામનો પણ આગળ વધેલા વિજ્ઞાનની મદદ વડે પાશ્ચાત્ય પદ્ધતિએ થઈ રહ્યો છે. આજે તો એવી કેટલીયે ઔષધિઓ, આપણે પિછાની શકતા ન હોવાથી અંધારામાં અટવાઈ જાય છે. જો એ બધી પ્રાપ્ત થાય તો આયુર્વેદ માનવ-સમાજની ઉત્તમ સેવા બજાવી શકે. તેથી સુજ્ઞ વૈદ્યમહાશયોનું ધ્યાન આ તરફ દોરવાની ઇચ્છા થાય છે. શાસ્ત્રાદિ ગ્રંથોમાં સંશોધન થાય એ ઘણું સારું છે અને જૂના જમાનાઓ ઉપર તેથી બહુ પ્રકાશ પડી શકે છે; પણ માનવસમુદાયની સાચી સેવાની વ્યાવહારિક દૃષ્ટિથી આયુર્વેદના ક્ષેત્રમાંના સંશોધનની આજે અત્યન્ત આવશ્યકતા છે, અને તેથી આયુર્વેદની ઉપયોગિતાનું મૂલ્ય ઓછું આંકવું તે ભયંકર ભૂલ ગણાશે.

મૂર્છિતની મૂર્છા વાળવા માટે કપાળે તેમ જ છાતીમાં ચન્દનનો લેપ કરવામાં આવતો એવું પણ જાણવા મળે છે. (૬૮૬).

ત્રીજે એક સ્થળે અષ્ટાંગ આયુર્વેદ અને ઔષધિઓના સ્વાદ (રસ), શક્તિ (વીર્ય) તેમ જ અસર (विपाक)ના જ્ઞાનનો પણ ઉલ્લેખ મળે છે:—

" विदाष्टाङ्गमायुर्वेदं, जीवानन्दोऽपि पैतृकम् ।
अबुद्धौषधीश्चापि, रस-वीर्य-विपाकतः " (૭૦૯)

અને આજે વૈદ્ય-ડૉક્ટરોમાં જે શોચનીય સ્થિતિ પ્રવર્તે છે તેવી આજથી ૮૦૦ વર્ષ પૂર્વે પણ હતી તેની પ્રતીતિ કરાવનાર એક સ્ફુટ કટાક્ષ તેમને માટે અતિ મનનીય છે:—

" भद्राः कुंकुमपत्राणामपि प्रार्थकमन्यहो ?
वेश्या इव विना द्रव्यं, यूयं नाडीमपि पश्यथ " (૭૮૯)

ભૂતપ્રેત વિષેની માન્યતા આજના જેવી જ ત્યારે પણ હતી. મન્ત્રના પ્રભાવથી ભૂત-પ્રેતને દૂર કરતા (૫૮૫). જ્યારે કોઈ રોગ ઔષધિઓને ન ગણકારે ત્યારે આધિદૈવિક દોષની શંકાથી મન્ત્ર-તન્ત્રાદિનો ઉપચાર યોજતા (૬૮૦).

કણ્ટક નામનો રાજા પોતાના ખજાનામાં અજગર થઈ તેનું રક્ષણ કરે છે (૪૮૫). પરાપૂર્વથી ચાલી આવતી " મતિ તેવી ગતિ " તથા ભૂગર્ભમાંના ખજાનારક્ષક નાગોની માન્યતાનો, એ પ્રસંગ દ્યોતક છે.

કોટિવેધરસથી તાંબું સુ-વર્ણ બનતું એવું પણ સ્પષ્ટ કથન છે (૮૮૮). એ એક જાતની કીમિયા હશે?

કોઈ પણ બાબતની જાહેરાત કરવી હોય તો डिण्डिम એટલે દાંડી પિટાવી સાદ પડાવવામાં આવતો (૪૫). આવા સાદ પાડનારને " આઘોષક નર " કહેતા (૫૦). આજે પણ આ પ્રથા પ્રચલિત છે.

મડદાં ઉપર પાણીની પખાલો મૂકી ફેરવવાનો રિવાજ, આજની માફક, ત્યારે પણ હતો (૭૦).

બૌદ્ધ સ્તૂપો જેવા સ્મારકસ્તૂપોમાં જૈન તીર્થંકરોનાં અસ્થિ રખાતાં (૪૯૩).

ગુલામીની પ્રથા તે સમયે પ્રચલિત હતી અને ગુલામોની દયાજનક સ્થિતિનું બ્યાન એક જ શ્લોક સરસ રીતે કરે છે :—

" मुल्यक्रीताश्च ताऽयन्ते, केचिदश्वतरा इव ।
अतिभारेण वाह्यन्तेऽनुभाव्यन्ते तृषादिकम् " (૫૮૨)

મૂત્રાદિ ક્રિયાઓ પથ્થર ઉપર કરવાની રીતિનો ઉલ્લેખ પણ એક જગાએ મળે છે (૩૨૬). કપડાંને પથ્થર ઉપર ઝીકીને ધોવાની પ્રથા તરફ પણ એક શ્લોક ધ્યાન દોરે છે (૫૬૪).

રાજસભાઓ ભરાતી તેમાં મળેલા લોકોની નજર રાજા ઉપર જ કેન્દ્રિત થતી (૨૮૫–૬). નાટયશાસ્ત્રમાંના વર્ણન સાથે આ કથન સુસંગત છે એમ એક વિદ્વાન મિત્રે જણાવ્યું છે.

આ સર્ગમાં ઘણાં પશુ–પક્ષીઓનાં નામ આવે છે. તેમાંના કેટલાક નીચે પ્રમાણે છે:—

જળચરોને ખાઈ જનાર બક (૫૭૧); તિત્તિરિ, શુક, કપોત અને ચટકા (ચકલી)ને ખાઈ જનારા શ્યેન, શિંચાન અને ગૃધ્ર (૫૭૬); ઉપરાંત બલાકા (૨૭૧), હંસ (૨૮૧) વગેરેનો ઉલ્લેખ છે. ઉન્દર (૩૦૧), બિલાડી (૩૧૩–૪), કૂતરા (૩૧૨), શિયાળ (૩૮૬), મીન (૩૮૬), તથા વ્યાલ–શાર્દૂલ–શ્યેનાદિ યોનિઓ વિષે પણ જાણવા મળે છે (૩૧૪). એક સ્થળે ઊધેઈ (उपदेहिका) વસ્તુને સાવ ફોલી ખાય છે તેવું કથન મળે છે (૫૩૫). લાવક અગર લાવરીની વિશિષ્ટતા આ પ્રમાણે રજૂ કરી છે:—

" यथा क्ष्मापातशङ्क्येकाङ्घ्रिणा नृत्यति लावकः " (૩૮૯)

સામાન્ય હાથી ઉપરાંત ગન્ધગજ (૮૪૮)નો ઉલ્લેખ પણ છે, જેની ગન્ધમાત્રથી સામાન્ય હાથીઓ નાસી જાય છે. હાથીને "પાકલ" નામનો તાવ આવે ત્યારે તેને ક્યાંય ચેન પડતું નથી (૬૧૩). જેની દૃષ્ટિ પડતાં જ વિષની કાતિલ અસર થાય તેવો દૃગ્વિષ સર્પ (૬૯૬) દેવતાઓના ઉદ્દ્યોતથી નિર્વિષ બની જતો (૭૦૨). બીજાં કેટલાંક પ્રાણીઓ વિષે આપણે આગળ જોઈ ગયા છીએ.

હવે શિલ્પાદિ કળાઓનો વિચાર કરીએ. ઠેર ઠેર ગામ બહાર ધર્મશાળાઓ હતી (૫૫૭). ગામની અંદર તેમ જ બહાર ઉદ્યાનો હતાં (૩૪૩, ૭૬૧). ઉદ્યાનોમાં પાણીની નીકો રાખવામાં આવતી (૭૬૧), જેથી સહેલાઈથી સર્વત્ર પાણી પાઈ શકાય. વળી આજની નહેરયોજનાઓ એ કોઈ નવી વાત નથી. મોટા મોટા સરોવરોમાંથી નાની નહેરો મારફત આજુબાજુની જમીનને તે સમયે પણ પાણી પાવામાં આવતું (૪૩, ૨૯૨). બાંધેલા રસ્તાઓ પણ ઘણા હતા (૩૪૩). વાવ, કૂવા વગેરે ઉપરાંત પરબો પણ ઠેર ઠેર હતી જ્યાં થાકેલા ને તાપથી આર્ત થયેલા યાત્રિકો શાન્તિ મેળવી શકતા (૮૨). મન્દિરોની દીવાલો ઉપર ગોળ ફરતી સરસ કોતરણી કરવામાં આવતી, જે શિલ્પનો એક સુંદર નમૂનો ગણાય (૩૪૩).

સંગીતકળા પણ સારા પ્રમાણમાં વિકસેલી હતી (૨૮૨). મૃદંગ (૩૯૪) ઉપરાંત ડિણ્ડિમ (૪૫) અને દુન્દુભિ (૨૭૧,૪૬૮)ના ઉલ્લેખો વારંવાર આવે છે. મંગળ પ્રસંગે દુન્દુભિ વગાડવામાં આવતા (૨૭૨). પ્રસ્થાન-પ્રસંગે ભેરી ફૂંકવાનો રિવાજ હતો (૫૦,૨૧૮).

ગોવાળિયા ગોશૃંગ વગાડતા જેથી ગાયોનાં વૃંદ ભેગાં થતાં (૨૧૯). વેણુ-વીણા જેવાં વાદ્યો પણ ઠીક પ્રચારમાં હતાં (૩૯૪). ગીત તેમજ નૃત્ય પોષક સાધનો ઘડાતાં (૩૦૫). સંગીતકોવિદોનો એક આખો વર્ગ હતો, જે ચતુર્વિધ આતોદ્યમાં ચતુર ગણાતો (૪૮૯). ષડ્જ, મધ્યમ અને ગાન્ધાર એ ગ્રામત્રયથી ગીત વધારે મધુર બનતું (૪૯૬).

ચિત્રકળાના શિક્ષણ અર્થે પણ ઠેરઠેર ચિત્રશાળાઓ ચાલતી (૩૮૩). શ્રીમતીના અનેક જન્મોનો વૃત્તાન્ત પંડિતાએ પટ ઉપર આલેખ્યો હતો (૬૪૮). તે આખો પ્રસંગ ચિત્રકળાની ઉન્નતિ સૂચવે છે. કાળા, ધોળા, પીળા લીલા, લાલ વગેરે રંગો પૂરી ચિત્રને હૂબહૂ બનાવવામાં આવતું (૬૫૪). આવી કલાનું બજારમાં પ્રદર્શન પણ થતું (૬૫૦), અને તેની કદર કરનારા કુશળ કલાવિદો પણ હતા (૬૫૩).

નેપથ્યકર્મ, નટ અને વિનટનના ઉલ્લેખો સ્પષ્ટ કરે છે કે તે જમાનામાં નાટ્યકળા પણ સુવ્યવસ્થિત રૂપે પ્રસરેલી હતી (૮૨૯).

પલાશ, તાલ, હિન્તાલ, નલિની અને કદલીનાં દલમાંથી પંખા બનાવવામાં આવતા (૮૯); અને મોરનાં પીંછાંની છત્રીઓ બનતી (૬૬).

આ માહિતી તો માત્ર પ્રથમ પર્વના પ્રથમ સર્ગમાંથી જ મેળવી છે, અને તે પણ અધૂરી. ત્યારે દશ પર્વના તે મહાગ્રંથનો સાંગ અભ્યાસ કરી પૃથક્કરણ કરવામાં આવે તો તત્કાલીન સંસ્કૃતિ ઉપર કેટલો બધો પ્રકાશ પડે તેનો ખ્યાલ જો આ અલ્પ પ્રયત્નથી આવી શકશે તો કૃતાર્થતા થશે.

સમાજ-સંસ્કૃતિ ઉપરાંત બીજી દૃષ્ટિઓએ પણ સમસ્ત ગ્રંથનો સમીક્ષાપૂર્વક અભ્યાસ થવો જરૂરી છે અને તે કાર્ય કેટલાક સમયથી મેં સ્વીકારેલું છે. આજે જે થોડી વાનગી મારા જેવો અલ્પજન આ વિદ્વાનોની સંસદ સમક્ષ પીરસી શક્યો છે, તેનો સાચો યશ આવા મહત્ વિષયમાં પ્રવેશ કરાવનાર મારા ગુરુ શ્રી રસિકલાલ પરીખને જાય છે. આ માટે તેમનો જેટલો આભાર માનું તેટલો ઓછો છે. આ નિબંધમાં જે સારાં તત્ત્વો હોય તે તેમનાં છે અને જે ત્રુટિઓ જણાય તે મારી છે. તેઓશ્રીની પ્રેરણા અને અન્ય શુભેચ્છકોની સહાય આ ભગીરથ કાર્યમાં મને સદા મળી રહે એવી નમ્ર પ્રાર્થના અને દૃઢ શ્રદ્ધા સાથે વિરમીશ.

★

અહિંસાધર્મ અને તેનો સંસ્કૃતિના-વિકાસક્રમમાં ઉપયોગ

[લેખક : શ્રીયુત પ્રહ્‌લાદ ચન્દ્રશેખર દિવાનજી એમ. એ., એલ. એલ. એમ., મુંબઈ]

૧. અહિંસા ધર્મ એટલે શું?

૨. તે ધર્મની શોધ કોણે કીધી હતી?

૩. આર્યસંસ્કૃતિમાં તેનું સ્થાન.

૪. હિન્દુ, જૈન અને બૌદ્ધ ધર્મોમાં તેનું સ્થાન.

૫. સમ્રાટ અશોકે તેનો કરાવેલો પ્રચાર.

૬. મહારાજા કુમારપાળના રાજશાસનમાં તેનો થયેલો અમલ.

૭. પરરાષ્ટ્રશાસનમાંથી મુક્તિ મેળવવામાં મહાત્મા ગાંધીએ તેનો કરેલો ઉપયોગ અને તેની માનવસંસ્કૃતિ ઉપર થયેલી અસર.

૮. આધુનિક સંસ્કૃતિમાં તેનું સ્થાન.

૧. અહિંસા ધર્મ એટલે શું?

'અહિંસા' શબ્દ અભાવવાચક છે. એવા શબ્દોનો પ્રયોગ કરવાની ક્યારે જરૂર પડે છે કે જ્યારે તેથી ઊલટો ભાવ સિદ્ધ અગર નિશ્ચયાત્મક હોય એ શબ્દ જ તેથી સૂચવે છે કે, જ્યારે પણ એનો પ્રથમ પ્રયોગ થયો હશે ત્યારે પહેલાંના કાળમાં 'હિંસા' એટલે ઈજા કરવી અગર મારવું અગર મારી નાખવું એ પ્રસિદ્ધ અગર નિશ્ચિત અર્થવાળો શબ્દ સંસ્કૃત ભાષામાં પ્રચલિત હોવો જોઈએ અને તેથી જ તે ભાષાથી પરિચિત સામાન્ય જનતા પણ તેનો અર્થ વિના પ્રયત્ને સમજતી હોવી જોઈએ. તેથી ઊલટો ભાવ સાંભળનારના હૃદયમાં ઉત્પન્ન કરી શકાય તે માટે બીજો કોઈ સહેલાઈથી સમજી શકાય એવો ભાવાત્મક શબ્દ બનાવી શકાયો નહીં હોય તેથી 'હિંસા' શબ્દ ને જાણીતા અર્થવાળો હતો તેનો કોઈએ નય તત્પુરુષ સમાસ બનાવી તેનો પ્રયોગ કરીને ધારેલો અભાવાત્મક અર્થ સમજાવવા માંડયો હશે. તે સમજાવવાની શી જરૂર પડી હશે તે વિચાર કરવા જેવું છે. વળી 'ધર્મ' શબ્દ અનેક અર્થોમાં વપરાય છે, તેમાંનો જે એક અહીં બંધ બેસતો છે તે 'આચરણ માટેનો એક અનુલ્લંઘનીય નિયમ' છે. તેથી "અહિંસાધર્મ"એ સમાસનો અર્થ એ થાય છે કે 'હિંસા કરવી નહીં એ આચરણ માટેનો અનુલ્લંઘનીય નિયમ.'

૨. એ ધર્મની શોધ કોણે કીધી હતી ?

આવો નિયમ ઘડીને મનુષ્યજાતિના એક વિશિષ્ટ સમૂહના આચરણ માટેના નિયમોમાં તેને સ્થાન આપનાર કોઈ મહાન વ્યક્તિ હોવી જોઈએ એ તો સહેજે સમજી શકાય એવી બાબત છે કારણ કે આપણે જોઈએ છીએ તે ઉપર વિચાર કરતાં લાગે છે કે વિશ્વમાં અનેક નાના મોટા કદનાં, ઓછી વત્તી શક્તિવાળાં પ્રાણીઓ છે, તે દરેકને પોતાનો પ્રાણ ટકાવી રાખવા માટે તેને પોષણ આપવાનું સાધન મેળવી લેવા માટે સ્વાભાવિક પ્રેરણા થાય છે અને તે મેળવવા જતાં તેઓ એક બીજા સાથે સંબંધમાં આવે છે એટલું જ નહીં પરંતુ તેમને પરસ્પર કલહ થવાના પ્રસંગો બને છે અને આખરે જે વિશેષ બળવાન હોય છે તે અલ્પબળવાળાને દબાવીને અને જરૂર પડે તો માર-હાણ કરીને એટલે કે 'મત્સ્યન્યાય' પ્રમાણે વર્તીને પણ પોતાનો સ્વાર્થ સાધી લે છે. વિશેષ, પશુઓમાં તો એ નૈસર્ગિક ધર્મજ પ્રચલિત છે કે બિલાડી ઉંદરને ખાય છે, વાઘ અને સિંહ ઘેટાં, બકરાં, ગાય, બળદ કે ભેંસ, પાડાને ખાય છે. મોટી માછલી નાની માછલીનું ભક્ષણ કરે છે. જ્યાં લગી મનુષ્યપ્રાણી ખેતી કરીને ધાન્ય ઉગવતાં શીખ્યો નહોતો ત્યાં લગી તે કંદમૂળ અને શિકાર કરેલાં ગરીબ પ્રાણીઓના માંસ ઉપર પોતાનો નિર્વાહ કરતો હતો. તે શીખ્યાને હજારો વર્ષો થઈ ગયાં છે તે છતાં ધાન્ય, ફળો અને વનસ્પતિ માંસ-મચ્છી ખાનારા મનુષ્યોની સંખ્યા તે ન ખાનારાઓની સંખ્યા કરતાં હિંદ સિવાય પૃથ્વી ઉપરના દરેક દેશમાં વધારે છે.

એવી વ્યક્તિ કોણ હશે તે વિષે પુરાણ સાહિત્યમાંથી શોધતાં જણાય છે કે તે સાંખ્યશાસ્ત્રનાં મુખ્ય તત્ત્વો શોધી કાઢનાર અને તત્ત્વજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને જન્મમરણ અને આધિ, વ્યાધિ અને ઉપાધિથી જીવને મોક્ષ મેળવવાનો માર્ગ શોધી આપનાર ભગવાન કપિલમુનિ હતા.[1] 'શ્રીમદ્ ભગવદ્ગીતા'માં એમને સિદ્ધોમાં મુખ્ય અને અર્થાત્ જે તે વર્ગના માણસોમાં પરમાત્માની વિભૂતિ તરીકે જાહેર કરેલા છે.[2] 'શ્રીમદ્ભાગવત-પુરાણ'માં એને ભગવાન અક્ષરબ્રહ્મના અવતાર તરીકે ઓળખાવેલા છે.[3] 'ત્રિષષ્ટિશલાકા-પુરુષ ચરિત'માં વાસુદેવ-કૃષ્ણ ચરિત્ર છે, તેમાં ધાતકીખંડના રાજા પદ્મનાભ અને તેના ગુરુ કપિલ સાથેના પ્રસંગનું વર્ણન છે તેમાં 'चंपानृपः शिष्यः कपिलाख्यस्य सेवकः' તરીકે પદ્મનાભને ઓળખાવ્યો છે.[4]

'શ્રીમદ્ ભાગવતપુરાણ'માં એના માબાપનાં લગ્નથી માંડીને એ પોતાની માતા દેવહૂતિને બોધ આપીને પ્રાગુદીચી દિશા (આગ્નેકોણ)માં સિધાવ્યા ત્યાં સુધીનું વૃત્તાન્ત

---

1. શ્વેતાશ્વતરોપનિષદ્ ૫.૨.
2. ભ. ગી. ૧૦.૨૬. શ્રીમદ્ ભાગવત ૩.૨૪.૧૯માં પણ એને सिद्धगणाधीशः તરીકે ઓળખાવેલ છે.
3. ભા. પુ. ૩.૨૪.૨.
4. ત્રિ. શ. પુ. ચ. ૮.૧૦.

છે.[5] તે ઉપરથી જણાય છે કે એની માતા દેવહૂતિ સ્વયંભૂમનુની પુત્રી અને ઉત્તાનપાદ તથા પ્રિયવ્રતની બહેન થતી હતી. વળી, તેમાં જ એકબીજા આગળના સ્કંધમાં પ્રિયવ્રતના વંશનું વર્ણન છે,[6] તેમાં જણાવ્યું છે કે, પ્રિયવ્રતના એક છોકરાનું નામ અગ્નીધ્ર હતું, તેને નાભિ નામે પુત્ર થયો હતો, તેના મરૂદેવી નામની સ્ત્રીથી ભગવાન ઋષભદેવ તરીકે જે પ્રખ્યાત છે તે પુત્રરૂપે અવતર્યા હતા, તેની સ્ત્રી જયન્તીથી તેને ભરત નામે પુત્ર થયો હતો. તે બધા પુત્રોમાં સૌથી મોટો હતો, મહાયોગી હતો, તેનામાં એટલા શ્રેષ્ઠ ગુણો હતા કે તે ઉપરથી આ વર્ષને 'ભારત' નામ આપવામાં આવ્યુ છે, તથા એ ભરત વિશ્વરૂપની કન્યા પંચજની સાથે પરણ્યો હતો તેથી તેને પાંચ પુત્રો થયા હતા તેમાં સૌથી મોટાનું નામ સુમતિ હતું. આ ઉપરથી એમ જણાય છે ભગવાન કપિલ મુનિ ઋષભદેવના દાદા આગ્નીધ્રની ફોઈના છોકરા થતા હતા અને તેથી જ તે ઋષભદેવથી બે પેઢી આગળ જન્મ્યા હતા.

૩. આર્ય સંસ્કૃતિમાં તેનું સ્થાન

અહીં કોઈને શંકા થશે કે સાંખ્યશાસ્ત્રમાં, અહિંસા જે યોગશાસ્ત્રના યમો પૈકી એક અને તેમાં મુખ્ય છે તેને સ્થાન શી રીતે હોઈ શકે. તેણે એટલો વિચાર કરવો જોઈએ કે જોકે સાંખ્યસૂત્રમાં ज्ञानान्मुक्तिः[7] એમ કહ્યું છે તો પણ આગળ જતાં તેમાં જ જ્ઞાનનાં સાધનોનું જે નિરુપણ કર્યું છે તેમાં જ્ઞાનના પ્રતિબન્ધક વિષયોપરાગનો નાશ થાય નહીં ત્યાં લગી જ્ઞાનનો ઉદય શકય નથી. તેનો નાશ કરવા માટેનું સાધન ધ્યાન છે,[8] ધ્યાનસિદ્ધિ વૃત્તિનિરોધથી થઈ શકે છે,[9] વૃત્તિનો નિરોધ વળી ધારણા, આસન અને સ્વકર્મથી સિદ્ધ થઈ શકે છે,[10] પ્રાણાયામની ક્રિયાથી ધારણાસિદ્ધિ થાય છે,[11] આસનથી સ્થૈર્ય અને સુખ, જેની પ્રાણાયામની ક્રિયામાં આવશ્યકતા છે તે આવે છે,[12] સ્વાશ્રમવિહિત કર્મનું અનુષ્ઠાન એ સ્વકર્મ છે[13] અને ઉપલા ઇલાજ સિવાય વૈરાગ્ય અને અભ્યાસથી પણ ચિત્તવૃત્તિનો નિરોધ થઇ ધ્યાનસિદ્ધિ થાય છે,[14] એવું પ્રતિપાદન કીધેલું છે. આ પ્રમાણે 'પાતંજલ-યોગ'માંના યોગનાં આઠ અંગો પૈકી આસન, પ્રાણાયામ, ધારણા અને ધ્યાનનો તો સ્પષ્ટ જ ઉપયોગ દેખાડેલો છે, વૈરાગ્યમાં પ્રત્યાહાર(ઇન્દ્રિયોને વિષયમાંથી ખેંચી લેવી તે)નો સમાવેશ થાય છે અને ધ્યાન કરવાનો હેતુ છેવટે સમાધિદશાની પ્રાપ્તિ એ જ હોઈ શકે. એટલે સાંખ્યસૂત્ર પ્રમાણે જ્ઞાન એટલે માત્ર બુદ્ધિજન્ય જ્ઞાન નહીં પરંતુ વિજ્ઞાન સહિત જ્ઞાન એવો અર્થ ફલિત થાય છે અને તે થવા માટે યમનિયમોનું પાલન આવશ્યક છે જ

---

૫. ભા. પુ ૩.૨૧ થી ૩૩ સર્ગો   ૬. તેજ ૫.૧–૧૫ સર્ગો   ૭. સાં. સૂ ૩.૨૩.

૮. रागोपहतिर्ध्यानम् । सां. सू. ३.३० ॥   ९. वृत्तिनिरोधात्तत्सिद्धिः ॥ तदेव ३.३१ ॥

१०. धारणासनस्वकर्मणा तत्सिद्धि ॥ तदेव ३.३२ ॥   ११. निरोधश्छर्दि विधारणाभ्याम् ॥ तदेव ३.३३ ॥

१२. स्थिरसुखमासनम् ॥ तदेव ३.३४ ॥   १३. स्वकर्म स्वाश्रमविहितकर्मानुष्ठानम् ॥ तदेव ३.३५ ॥

१४. वैराग्या–दभ्यासाच्च ॥ तदेव ३.३६ ॥

એટલે અહિંસા જે યમો પૈકી એક છે તે સાંખ્યપ્રક્રિયા પ્રમાણે આવશ્યક છે એમ ઠરે છે. સાંખ્યકારિકા,–૨ માં યજ્ઞયાગાદિ વૈદિક કર્મ કરતાં જ્ઞાનમાર્ગ શ્રેષ્ઠ છે તેનો વિચાર કરેલો છે અને તે ઉપર ટીકા કરતાં ટીકાકારો વૈદિક કર્મમાં હિંસા કરવી પડે છે અને તે હિંસા ન કરવી એ વિધિવાક્યનું ઉલ્લંઘન થાય છે એ બાબતનો વિચાર કરે છે. વળી કારિકા–૪૪ માં કહ્યું છે કે ધર્મથી ઊર્ધ્વગમન અને અધર્મથી અધોગમન, જ્ઞાનથી મોક્ષ અને અજ્ઞાનથી બન્ધ પ્રાપ્ત થાય છે અને કારિકા–૪૫ માં કહ્યું છે કે વૈરાગ્યથી પ્રકૃતિલય, અને રજોગુણજન્ય રાગથી સંસારની એટલે કે દુઃખની વૃદ્ધિ થાય છે. કારિકા–૪૮ માં અજ્ઞાનના પાંચ પ્રકારો જે સમ્યગ્જ્ઞાનમાં અન્તરાયરૂપ છે તેનો વિચાર કર્યો છે. કારિકા–૫૭ માં કહ્યું છે કે જેમ વાછરડાની વિવૃદ્ધિ માટે અજ્ઞ દૂધની પ્રવૃત્તિ થાય છે તેમ પુરુષના મોક્ષને માટે પ્રધાનની પ્રવૃત્તિ થાય છે, અને કારિકા–૫૯ માં કહ્યું છે કે જેમ કોઈ નૃત્ય કરનારી સ્ત્રી પોતાનો દેખાવ પ્રેક્ષકવર્ગ આગળ કરીને નૃત્ય કરવું બંધ કરે છે તેમ પ્રકૃતિ પુરુષને પોતાનું સ્વરૂપ દેખાડીને અદૃશ્ય થાય છે. એ ઉપરથી જણાય છે કે તે ગ્રંથ પ્રમાણે પણ જે જ્ઞાનથી પુરુષને મોક્ષ મળે છે તે વિજ્ઞાનરૂપ જ છે અને તે ક્યારે પેદા થાય છે કે જ્યારે પ્રકૃતિના સત્ત્વગુણમાં રહેલા ધર્મનો પુરુષાર્થથી ઉપયોગ થાય ત્યારે. એટલું ખરું કે એમાં સ્પષ્ટપણે અહિંસાદિ યમોનું વિવેચન કોઈ જગ્યાએ આવતું નથી. પણ તેનું કારણ એ છે કે એ ગ્રંથ સિદ્ધાન્તનું ન્યાયની પદ્ધતિથી યુક્તિપુરઃસર પ્રતિપાદન કરવા માટેનો છે, નિઃશ્રેયસના માર્ગમાં મુમુક્ષુએ કેવી રીતે પ્રયાણ કરવું તે માટેનો નથી. તે માટે તો કોઈ સાંખ્યાચાર્યનાં ચરણની સેવા જ કરવાની હતી. સાંખ્યાચાર્યોનાં શાં શાં લક્ષણો હતાં તે જાણવા માટે 'ભાગવતપુરાણ' વગેરે ગ્રન્થોનો અભ્યાસ કરવો પડતો.

તે ઉપરાંત એ પણ વિચાર કરવાનો છે કે આ ગ્રંથ કાંઈ ઉપર કહેલા વિષ્ણુના અવતારરૂપી કપિલમુનિના અગર તેના પોતાના શિષ્યના રચેલા નથી. તે પૈકી સાંખ્યસૂત્રના કર્તા કોઈ કપિલ હોય તો પણ તે મજકૂર મહર્ષિ નહીં પરંતુ તે નામ ધારણ કરનાર કોઈ બીજી વ્યક્તિ હોવી જોઈએ એવો શ્રી શંકરાચાર્યે આવા બે કપિલો વચ્ચેનો ભેદ 'શારીરક-ભાષ્ય'માં જણાવ્યો છે.[15] 'યોગસૂત્ર'–૧-૨૫ ઉપરના વ્યાસ-ભાષ્યમાં तथा चोक्तम् એટલું કહીને એક આદિ વિદ્વાન કપિલનું વચન ટાંક્યું છે,[16] તે ઉપર ટીકા કરતાં વાચસ્પતિ મિશ્ર લખે છે કે, એ આદિવિદ્વાન તે કપિલ હતા કે જેની ગુરુપરંપરામાં પંચશિખાચાર્ય આવતા હતા, નહિ કે અનાદિ મુક્ત પરમગુરુ કપિલમુનિ. તેઓ 'હિરણ્યગર્ભસૂક્તના'[17] દ્રષ્ટા હોવાથી ઘણા પ્રાચીન કાળમાં થઈ ગયા હતા. વાચસ્પતિએ વ્યાસના 'યોગસૂત્ર'ના ઉપોદ્ઘાત ઉપરની ટીકામાં યોગી યાજ્ઞવલ્ક્યનું એક વચન ટાંક્યું છે[18], તે પ્રમાણે 'યોગ-શાસ્ત્ર'ના આદ્ય પ્રણેતા તે હિરણ્યગર્ભ કપિલ હતા. 'શ્વેતાશ્વતરોપનિષદ્'–૫. ૨,માં જે ઋષિ કપિલ વિષે ઉલ્લેખ છે તે ઉપરના ભાષ્યમાં શ્રી શંકરાચાર્ય તે જ ઉપનિષદમાં આગળ

---

૧૫ બ્ર. સૂ. ૨.૧.૧. ઉપરનું શાં. ભાષ્ય. ૧૬. આ. સં. ગ્રન્થ ૪૭ પૃ. ૮૨. ૧૭. ઋ. વે. ૧૦.૧૨૧. ૧૮. हिरण्यगर्भो योगस्य वक्ता नान्यः पुरातनः । આ. સં. ગ્ર. ૪૭ પૃ. ૨.

આવતા 'यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मा' એ મંત્ર ટાંકીને કહે કે 'कपिलोऽग्रज' એ પુરાણ વચન ઉપરથી કપિલ હિરણ્યગર્ભનો નિર્દેશ ત્યાં કરેલો છે. વળી તે પુરાણ વચન જેમાં કપિલ ભગવાનને વિષ્ણુનો અંશ, સર્વભૂતાત્મા કપિલાદિ સ્વરૂપ ધારણ કરનાર અને સમસ્ત જગતના હિતને માટે પરમજ્ઞાન કૃતયુગમાં પ્રવર્તાવનાર, વગેરે તરીકે વર્ણવ્યા છે તે ટાંકીને લખે છેઃ—

इति परमर्षिः प्रसिद्धः × × × × स एव वा कपिलः प्रसिद्धोऽग्रे सृष्टिकाले यो ज्ञानैर्धर्मज्ञानवैराग्यैश्वर्यैः विभर्ति बभार जायमानं च पश्येदपश्यदित्यर्थः ।[१९]

આ પ્રમાણે તે મહર્ષિ સાંખ્યમાર્ગના જ નહીં પરંતુ યોગ માર્ગના પણ પ્રવર્તક હતા, મતલબ કે, 'સાંખ્યયોગ'ના પ્રવર્તક હતા. તેમનું રચેલું 'સાંખ્યયોગશાસ્ત્ર' અત્યારે મળી શકતું નથી પરંતુ 'પાતંજલયોગશાસ્ત્ર' મુખ્યત્વે કરીને તેને જ આધારે રચાયેલું છે એમ વાચસ્પતિની ટીકા ઉપરથી જણાય છે.

એ મુનિ સૃષ્ટિના આદિકાળમાં થઈ ગયેલા તેથી ઉપનિષદકાળમાં થઈ ગયલા ઋષિઓ તેણે પ્રવર્તાવેલા યોગને 'સાંખ્યયોગ' 'અધ્યાત્મયોગ,' વગેરે નામથી ઓળખતા. શ્વેતાશ્વતરોપનિષત્'૧.૩માં 'ધ્યાનયોગ' ને દેવની આત્મશક્તિનો સાક્ષાત્કાર કરવાના સાધન તરીકે ૬. ૧૩માં તે 'સાંખ્યયોગ'ને જગતની ઉત્પત્તિનું કારણ, નિત્યોમાંનિત્ય, ચેતનોમાં ચેતન, અનેક વ્યક્તિઓની ઇચ્છા પૂરી કરનાર દેવનું જ્ઞાન થવાના સાધન તરીકે ઓળખાવેલો છે. અને ૧. ૧૦માં તેના અભિધ્યાન, યોજન અને તત્ત્વભાવને વિશ્વમાયાની નિવૃત્તિ કરવાનાં સાધન જણાવ્યાં છે. 'કઠોપનિષત્'– ૧. ૩. ૧૨.માં તે જ દેવને ઓળખવા માટેના 'અધ્યાત્મયોગ' નામના સાધન તરીકે ઓળખાવ્યો છે. 'મુંડકોપનિષત્' ૩. ૨. ૬. માં તેના મુખ્ય લક્ષણ 'સંન્યાસયોગ'નો ઉલ્લેખ છે. 'સંન્યાસયોગ' એ શબ્દ 'સંન્યાસ' અને 'યોગ' એ શબ્દોના સમાસથી થયેલો છે અને તેમાં 'સંન્યાસ' એ શબ્દ 'સમન્તાન્યાસઃ' (બધી તરફથી ત્યાગ) એટલે કે બાહ્ય તેમજ આન્તરત્યાગ અને વિશેષે કરીને વર્ણાશ્રમ ધર્મ પ્રમાણે કર્તવ્ય શાસ્ત્રવિહિત કર્મનો ત્યાગ એ અર્થમાં વપરાયલો જોવામાં આવે છે. આ ઉપરથી જણાય છે કે સાંખ્યયોગ યાને જ્ઞાનયોગ તેના અસલ સ્વરૂપમાં મજકૂર ઉપનિષદોની રચના થઈ તે પહેલાંથી વેદકાળના ઋષિમુનિઓમાં પ્રચલિત હતો અને તેનો ઉપયોગ તત્ત્વજ્ઞાનના સાધન તરીકે થતો હતો. તેને અંગે અહિંસા, સત્યભાષણ, અસ્તેય, બ્રહ્મચર્ય અને અપરિગ્રહ એ યમો પળાતા હોવા જોઈએ. કારણ કે હૃદયશુદ્ધિ સિવાય તત્ત્વજ્ઞાનનો ઉદય થઈ શકે નહીં એ બાબતનો નિશ્ચય થઈ ગયેલો હતો. એ યમો પૈકી અહિંસાનો સંબન્ધ મન અને શરીર બન્ને સાથે હતો કારણકે મનથી, વાચાથી કે કર્મથી કોઈ ઈતર પ્રાણીને હિંસા કરવાથી મનમાં રાગદ્વેષની વૃદ્ધિ થાય છે અને હિંસા કરીને પ્રાપ્ત થતા માંસાહારથી શરીરનું પોષણ કર્યાથી મનુષ્ય હૃદયમાં પશુના ગુણોની વૃદ્ધિ થાય છે.

---

૧૯. આ. સં. ગ્ર. ૪૭ પા. ૬૨–૬૩.

એ ઉપનિષદો ક્યાંયાં ત્યાં લગીમાં 'યોગ સૂત્ર'માં ઉપલા પાંચ યમો પાળવાની આવશ્યકતાનું પ્રતિપાદન કીધેલું છે તેવું નિશ્ચિતપણે અને સર્વમાન્યપણે ઠરેલું નહીં હોય એમ જણાય છે. પરંતુ મૈત્રાયણ્યુપનિષદ.'ના ૩જા પાઠકમાં પ્રકૃતિના રજોગુણ અને તમોગુણોના અભિભાવથી જે પરિણામો જીવને સહન કરવાં પડે છે તેનું વિવેચન છે; તેમાં રજોગુણના અભિભાવથી થતાં પરિણામોમાં 'હિંસા'નો ઉલ્લેખ છે.[20]

શ્રીમદ્ ભગવદ્ગીતા' જે કાળે એ રચાઈ હતી તે કાળમાં, જાણીતા જ્ઞાન, ઉપાસના અને કર્મમાર્ગોનો સમન્વય સાધવા માટે રચાયલી હશે એ સ્પષ્ટ છે. તેથી તેના ઉપાસનાષટ્ક પૈકી ૧૦મા અધ્યાયમાં વિભૂતિયોગ જે ઉપાસનાનો એક માર્ગ હતો તેનું પ્રતિપાદન છે. તેમાં વાસુદેવ કિંવા આદિદેવથી પૃથક્ કેટલાક ઉપાસનામાં ઉપકારક ભાવો જણાવ્યા છે. તેમાં 'અહિંસા' આવી જાય છે.[21] તેમાં જ જ્ઞાનષટ્ક પૈકી ૧૩મા અધ્યાયમાં "જ્ઞાન"નાં લક્ષણો ગણાવ્યાં છે. તેમાં પણ અહિંસાનો સમાવેશ કીધેલો છે.[22] તેમાંથી વળી આગળ જતાં ૧૬મા અધ્યાયમાં "અભિજાત" એટલે કે ઉત્તમ કુળમાં જન્મેલા મનુષ્યમાં જે દૈવી સંપત્નો આવિર્ભાવ થાય છે તેનાં લક્ષણોમાં સત્ય, અક્રોધ ઇત્યાદિ સાથે અહિંસાનો ઉલ્લેખ છે.[23] છેવટે ૧૭મા અધ્યાયમાં સાત્ત્વિક, રાજસિક અને તામસિક તપ ઉપરાંત શારીરિક વાચિક અને માનસિક તપનાં લક્ષણોનું પ્રતિપાદન છે તે પૈકી શારીરિક તપનાં લક્ષણોમાં દેવાદિનું પૂજન, શૌચ, આર્જવ અને બ્રહ્મચર્ય ઉપરાંત અહિંસાનો ઉલ્લેખ છે. આ ઉપરથી એમ લાગે છે કે અહિંસા ધર્મ તે કાળના ઉપાસના (જેમાં યોગ માર્ગનો સમાવેશ થતો હતો) અને જ્ઞાન માર્ગોના અનુયાયીઓએ સર્વથા સ્વીકાર કરી લીધેલો હતો. ગીતાના કર્મષટ્કમાં 'અહિંસા' શબ્દ જ કોઈ ઠેકાણે વપરાયલો દેખાતો નથી. તે ઉપરથી કર્મમાર્ગીઓએ તે માન્ય કીધેલો નહીં એમ માની શકાય. વિશેષ, તેમાં જે કર્મયોગનું પ્રતિપાદન છે અને આખી ગીતાનો ઉપક્રમ અને ઉપસંહાર અર્જુનને કર્મમાં પ્રવૃત્ત કરવા પ્રત્યે જ છે એ દેખીતું છે. તે ઉપરથી અને જો હિંસા કરવી પડે તો તે જો વર્ણાશ્રમ ધર્મથી સમ્મત હોય તો, અહંકારબુદ્ધિથી નહીં પરંતુ અનિવાર્ય કર્તવ્ય તરીકે, અને આત્મા અકર્તા છે, ગુણોની પ્રવૃત્તિ સ્વાભાવિક રીતે જ ગુણો પ્રત્યે થાય, એમાં કે કર્મ માત્ર પ્રકૃતિનો ધર્મ છે, આત્માનો અગર પુરુષનો નથી, એમ સમજીને કરવામાં આવે તો તેથી થતાં વિપરીત પરિણામ ભોગવવાં પડતાં નથી એ પ્રમાણે ઉપદેશ છે. તે ઉપરથી એમ ફલિત થાય છે કે વ્યાસમુનિનો અભિપ્રાય એવો હતો કે હિંસામાં દોષતો છે જ પરંતુ જગતનું તન્ત્ર જ એવા પ્રકારનું છે કે જે સમાજમાં રહીને ગૃહસ્થી જીવન ગાળે છે તેને હાથે કોઈને કોઈ કારણે થોડે ઘણે અંશે હિંસા થયા વગર રહેતી નથી. તેથી જ તેણે કર્મયોગનો સિદ્ધાન્ત પ્રતિપાદન કરીને એટલી મર્યાદા બાંધી આપી કે વર્ણાશ્રમ ધર્મનું પાલન કરતાં જો તે થઈ જાય તો તે અનિવાર્ય છે. પરંતુ તે થાય એવા કાર્યમાં પ્રવૃત્ત થતાં પહેલાં આત્માનું સ્વરૂપ ઓળખીને નિરહંકારપણે તે કાર્ય કરવું; વળી એને એમ પણ લાગ્યું હોવું જોઈએ કે બધા ગૃહસ્થીઓ એવી જ્ઞાન

૨૦. મૈ. ઉ. ૩.૫ ૨૧. ભ. ગી. ૧૦.૫ ૨૨. તેજ. ૧૩.૭. ૨૩. તેજ. ૧૬.૨

બુદ્ધિ કેળવીને નિરહંકારપણે પ્રવૃત્તિમય જીવન ગાળી શકે નહીં તેથી તેણે બીજો એવો તોડ કાઢ્યો હતો કે તેવા મનુષ્યોએ પોતાનું જીવન પરમાત્માને આધીન છે અને તે જ અન્તર્યામી તરીકે હૃદયમાં પ્રેરણા કરે છે તેથી જે કાંઈ કરીએ તે તેની ઉપાસના જ છે એમ સમજીને અગર તે પણ જેનાથી ન બને તેણે કોઈ પણ કાર્ય કરીને તેનું ફળ તેને અર્પણ કરવું એટલે તેના ગુણદોષથી મનુષ્ય અલિપ્ત રહે છે.

મહાભારત અને રામાયણની સનાતન ધર્મના સાહિત્યમાં ઇતિહાસ ગ્રન્થો તરીકે ગણના થાય છે. તે પૈકી રામાયણ દાશરથી રામચન્દ્રના કાળની સંસ્કૃતિનું અને મહાભારત પાંડવ-કૌરવોના તે પછીના કાળની સંસ્કૃતિનું ચિત્ર આલેખે છે જોકે ભાષા અને શૈલીની દૃષ્ટિએ મહાભારત વધારે પ્રાચીન છે. પાંડવ-કૌરવોના કાળની સંસ્કૃતિનું ઘડતર યોજવામાં શ્રી કૃષ્ણ અને શ્રી વેદવ્યાસ (અપાન્તરતમસ, તે વેદકાળના અન્તિમ ભાગમાં થઈ ગયેલા એક ઋષિ) એ બેએ મુખ્ય ભાગ ભજવ્યો હતો. તે પૈકી શ્રી કૃષ્ણે પોતાના નિઃસ્વાર્થી, સનાતન વર્ણાશ્રમ ધર્મને અનુસરીને યોજેલા, જીવનથી કર્મયોગના વ્યાવહારિક સ્વરૂપનું દૃષ્ટાન્ત પુરું પાડ્યું હતું. તેથી તે કાળના ધર્મિષ્ટ અને શિષ્ટ પુરૂષો અને સ્ત્રીઓ તેને પર બ્રહ્મના સાક્ષાત્ અવતાર તરીકે માનતા હતા અને પોતાની સમાજમાંની સ્થિતિને બંધ-બેસતી આવે તેવી રીતે તેની સલાહને માન આપીને તેઓ કર્મયોગના સિદ્ધાન્તને પોતાના જીવનમાં ઉતારતા હતા. તેમના કૌટુમ્બિક અને સામાજીક જીવનોના વૃત્તાન્તદ્વારા સામાન્ય જનતા, જેને વેદનો ગૂઢાર્થ સમજાય નહીં તેમના હિતાર્થે, શ્રી વેદવ્યાસે તે યોગનું શાસ્ત્રીય રીતે પ્રતિપાદન તે કાળના સ્ત્રીપુરુષો સમજી શકે તેવી સાદી અને સરળ ભાષામાં શ્રીમદ્-ભગવદ્ ગીતામાં કર્યું હતું અને તેનો વ્યવહારમાં કેવી રીતે અમલ થઈ શકે તેના દૃષ્ટાન્ત રૂપે 'ભારત' જેમાં ગીતાનો સમાવેશ કર્યો હતો તે રચીને તેનો પ્રચાર પોતાના શિષ્ય પ્રશિષ્યો દ્વારા કરાવ્યો હતો. એ વ્યાસ એટલે અપાન્તરતમસ ઋગ્વેદના મન્ત્રદૃષ્ટા પૈકી એક છે અને પાંડવોના પુરોહિત ધૌમ્યઋષિ, એકબીજા મન્ત્રદૃષ્ટા દેવલ, જેનું નામ શ્રી કૃષ્ણના ભક્તોમાં ગીતામાં આવે છે,[૨૪] તેના ભાઈ થતા હતા. આથી એ સિદ્ધ થાય છે કે વૈદિક કાળના અન્ત અને પૌરાણિકકાળના આરમ્ભની સંધિનો કાળ અથવા બીજા શબ્દોમાં કહીએ તો દ્વાપર અને કલિયુગોની સંધિનો કાળ તે જ પાંડવ-કૌરવોના યુદ્ધનો અને કૃષ્ણ-બળદેવ અને વેદવ્યાસ મુનિના જીવનનો કાળ હતો ઉપર કહ્યું તે પ્રમાણે સાંખ્યયોગ એ ઘણા પ્રાચીન કાળથી પ્રચલિત હતો અને કર્મયોગના અનુયાયીઓ તરીકે રાજા જનક વગેરેનાં દૃષ્ટાન્ત[૨૫] અને તેના પૂર્વેતિહાસની રૂપરેખા ગીતામાં આપ્યાં હોવાથી[૨૬] તે પણ વૈદિકકાળમાં પ્રચલિત હોવો જોઈએ એમ માનવાને કારણ છે. તે પૈકી સાંખ્યયોગ એ નૈષ્કર્મ્યનો એટલે નિવૃત્તિ માર્ગ હતો અને કર્મયોગ પ્રવૃત્તિમાર્ગ હતો. તેમાંથી પહેલા માર્ગના અનુયાયિઓ એટલે કે જ્ઞાનીઓ અને ઉપાસકો (જેમાં યોગીઓનો સમાવેશ થતો

---

૨૪. ભ. ગી. ૧૦.૧૩. ૨૫. તેજ. ૩.૨૦ ૨૬. તેજ. ૪.૧૩.

હતો) એ અહિંસા ધર્મને પોતપોતાના સિદ્ધાન્તોમાં સમાવી લીધો હતો અને તેનું ચુસ્તપણે પાલન કરતા હતા અને નિર્બળ કર્મમાર્ગિઓ, જેને ગીતામાં "અવિપશ્ચિતો", "વેદવાદરતો", "કામાત્માઓ", "ભોગૈશ્વર્યપ્રસકતો", "ત્રયી ધર્મમનુપ્રપન્નો", "કામકામો", વગેરે વિશેષણો લગાડીને હલકા દરજ્જાના ગણેલા છે,[૨૭] તેઓએ તેને આશ્રય લીધેલો નહોતો. જોકે શ્રીકૃષ્ણના કાળ વિષે આ હકીકત હતી તથાપિ કર્મયોગનો સિદ્ધાન્ત એમણે પોતે નવો સ્થાપિત કીધો નહોતો પરંતુ જે લુપ્ત થયો હતો તેનો પુનરુદ્ધાર કીધો હતો એમ જે ગીતાના ચોથા અધ્યાયમાં લખેલું છે. તે ઉપરથી તથા શ્રી શંકરાચાર્યે પોતાના ગીતાભાષ્યના ઉપોદ્ઘાતમાં લખ્યું છે કે નિવૃત્ત માર્ગ અને પ્રવૃત્તિમાર્ગ એ બન્ને માર્ગો અગાઉ પ્રચલિત હતા તથા તે પૈકી પ્રવૃત્તિમાર્ગ, જે કાલક્રમે લુપ્ત થયો હતો[૨૮] તેને, ભગવાન નારાયણે શ્રીકૃષ્ણરૂપે અવતરીને તેનો પુનઃ પ્રચાર શરૂ કર્યો હતો તે ઉપરથી લાગે છે કે ઉપર કહ્યું છે તે પ્રમાણે પ્રવૃત્તિ માર્ગ જ્યાં લગી અવિચ્છિન્ન ચાલુ રહ્યો હશે ત્યાં લગી તેના અનુયાયિઓમાંથી પણ ક્ષત્રિય અને શૂદ્ર સિવાયના વર્ણો એટલે કે બ્રાહ્મણ અને વૈશ્યો પૈકી જેને પોતાના કર્મને અર્થે હિંસા કરવાની જરૂર પડે નહીં તેઓ અહિંસા ધર્મ પાળતા હશે. તેવી જ વ્યવસ્થા પાછળથી વ્યાસે પાછી ચાલુ કરી હશે એમ આ ઉપરથી જણાય છે.

૪. હિન્દુ, જૈન અને બૌદ્ધ ધર્મોમાં તેનું સ્થાન

જ્યારે વ્યાસે મહાભારત યુદ્ધ પછી કેટલેક કાળે વર્ણાશ્રમ વ્યવસ્થા, જે છિન્નભિન્ન થઈ ગયેલી હતી, તેને પુનઃ સ્થાપિત કરીને યજ્ઞયાગાદિ ક્રિયા ફરીથી ચાલુ થાય તેવી યોજના કરી ત્યારે જૈનોના ગુરુ આ તીર્થંકર અરિષ્ટનેમિ હયાત હતા. તે શ્રીકૃષ્ણના કાકા સમુદ્રવિજયના પુત્ર હતા અને દ્વારકામાં શ્રીકૃષ્ણની દેખરેખ નીચે જ રહીને તે વિદ્યાભ્યાસ

---

૨૭. ગી૦ ૨.૪૨-૪૪; ૧૬.૭-૨૧.

૨૮. આ બનાવ વિષે મહાભારતમાં શાન્તિપર્વના મોક્ષધર્મમાં પાંચરાત્ર ધર્મનું વિવેચન છે તેમાં પરિચર વસુનો દૃષ્ટાન્ત આવે છે. તે જ દૃષ્ટાન્ત કેટલાક વિસ્તારથી જૈન ગ્રંથોમાં જોવામાં આવે છે અને કિંચિત્ વિકૃત સ્વરૂપમાં બૌદ્ધ જાતક કથાઓમાં પણ જોવામાં આવે છે. તેનો સાર એ છે કે એક વખતે નારદમુનિ અને પર્વતના એક બ્રાહ્મણ વચ્ચે એક ઋચામાં આવતા 'અજ' શબ્દના અર્થ વિષે તકરાર પડી હતી. નારદના કહેવા પ્રમાણે તેમના ગુરુએ તેમને એ શબ્દ ઔષધિવાચક છે એમ સમજાવ્યું હતું અને પર્વતના કહેવા પ્રમાણે તેમને તે શબ્દ બકરાવાચક છે એમ સમજાવ્યું હતું એ બેના તથા પરિચર વસુ એ ત્રણેના ગુરુ એક હતા તેથી તેઓ તેની પાસે ન્યાય કરાવવા ગયા. તેણે તે દિવસે નિર્ણય ન આપતાં બીજે દિવસે આવવાનું કહ્યું અને તે દિવસ શરૂ થતા પહેલાં પર્વતની માએ પરિચર વસુ પાસે જઈને પોતાના પુત્રની આજીવિકાનું સાધન જતું ન રહે તે માટે તેના અર્થનું ખરાપણું જાહેર કરવા માટે સમજાવ્યો હતો. તેથી તેણે તેમ કીધું. તે ઉપરથી ઉત્તેજન થઈને પર્વતે આખા ભારતમાં ફરીને પોતાના અભિપ્રાયનો પ્રચાર કર્યો હતો અને એ એ રીતે યજ્ઞયાગાદિને અંગે પશુહિંસા થતી ઘણે ઠેકાણે બંધ થઈ હતી તે પુનઃ ચાલુ થઈ હતી. જૈન પુસ્તકોમાં આ હકીકતનો જેટલો વિસ્તાર છે તેટલો હિન્દુ અને બૌદ્ધ પુસ્તકોમાં નથી. પરંતુ બધામાંથી સાર ઉપર પ્રમાણે નીકળે છે.

કરતા હતા. તેની ઉંમર આશરે ૧૬ વર્ષની થઈ ત્યારે તેના લગ્નની વ્યવસ્થા તેના કુટુમ્બી-જનોએ કરી હતી. પરંતુ તે પોતાના લગ્નને અંગે પશુ હિંસા થવાની છે તે જાણીને શ્વસુર-ઘેરથી પાછા ફર્યા હતા અને પછી એક વર્ષ વ્રતો પાળીને યોગ્યતા મેળવી તેણે યતિધર્મ સ્વીકાર્યો હતો. તે ધર્મમાં હિંસા સર્વથા વર્જ્ય હતી. તેવી જ દીક્ષા તેણે પાછળથી ઘણા ક્ષત્રીયો તથા વૈશ્યોને આપીને નિવૃત્તિ માર્ગની પ્રણાલિકાને આગળ ચલાવી હતી એમ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર, હરિવંશ-ચરિત્ર, ત્રિષષ્ઠી શલાકા પુરુષચરિત્ર વગેરે જૈન ગ્રન્થો ઉપરથી જણાય છે.

બૌદ્ધ ધર્મ પણ બુદ્ધના નિર્વાણ પછી આશરે ૧૦૦ વર્ષ લગી આર્યધર્મમાંના નિવૃત્તિ માર્ગના એકપંથ તરીકે રહ્યો હતો. તેમાં પણ અહિંસાધર્મ ઉપર ખાસ ભાર મૂકવામાં આવતો હતો એમ ત્રિપિટક જાતક કથાઓ વગેરે ઉપરથી જણાય છે. પરંતુ તેમાં પ્રાણીમાત્ર ઉપર દયા રાખી તેનાં દુઃખનું નિવારણ કરવા માટે બનતા ઈલાજ કરવા ઉપર વિશેષ ભાર મુકેલો છે અને જૈન ધર્મમાં કોઈ પણ જીવ, પછી ભલે તે ગમે તેટલો સૂક્ષ્મ અને નિરિન્દ્રિય હોય, જેવો કે માંકડ અથવા મચ્છર, તેને પણ જાનથી ન મારવા ઉપર વિશેષ ભાર મુકેલો છે. આથી બન્ને ધર્મના યતિઓના ધર્મો વચ્ચે નોંધવા લાયક અંતર અસલથી જ છે અને તે એકે ઠેઠ બુદ્ધ ભગવાનના જીવનકાળથી જ બૌદ્ધ યતિઓને અમુક મર્યાદા સહિત માંસાહાર કરવાની છૂટ હતી અને તે મર્યાદા એવી હતી કે કોઈ બૌદ્ધ યતિ કોઈ ગૃહસ્થીને ત્યાં ભિક્ષા માટે જાય તો તેણે તેને આગળથી ખબર ન આપવી કે હું તે માટે તમારે ત્યાં આવવાનો છું. તેનું કારણ એ કે બુદ્ધભગવાને પોતાના કાળની સમાજીક સ્થિતિનો વિચાર કરીને એવો તોડ કાઢી આપ્યો હતો કે જો કોઈ યતિને માટે ભિક્ષા તૈયાર કરવા માટે જ કોઈ પ્રાણીની હિંસા થઈ ન હોય તો માંસમિશ્રિત અન્ન તેને ત્યાંથી લઈને ખાવામાં દોષ નથી. એથી ઊલટું જૈન સાધુઓ માટે એટલો કડક નિયમ છે કે કાંદા, લસણ, ગાજર, બટાટા વગેરેનો જે રસોઈમાં વપરાશ થયો હોય તેવી રસોઈમાંથી આપેલી ભિક્ષા લઈને તે આરોગવી નહીં. તેટલો જ કડક નિયમ બ્રાહ્મણ ક્ષત્રિયમાંથી યતિ થયેલા પણ પાળે છે. અને ગૃહસ્થીઓ પૈકી વૈષ્ણવો પાળે છે.

૫. સમ્રાટ્ અશોકે તેનો કરાવેલો પ્રચાર

એ ઐતિહાસિક ઘટના જાણીતી છે કે સમ્રાટ અશોકના સૈન્યે કલિંગ દેશ જીત્યા પછી ત્યાંની વસતી પ્રજાના લગભગ એક લાખ માણસોની કતલ કરી નાંખી હતી. એ વાત તેના જાણવામાં આવી ત્યારે તેને ઘણું દુઃખ થયું હતું અને છેવટે તેણે નિશ્ચય કીધો હતો કે કોઈ પણ પ્રદેશ જીતી લેવા માટે હવે પછી સૈન્ય મોકલવું નહીં. તેમ જ તેણે ધર્માનુસાર રાજ્ય કરવાનો પણ નિશ્ચય કીધો હતો અને પોતાના અમલદારોને તે માટે સખત તાકીદ આપી હતી એટલું જ નહીં પરંતુ બૌદ્ધધર્મના ભૂતદયા વગેરેના સિદ્ધાન્તો સામાન્ય જનતાને જાણીતા થાય તે માટે પોતાના સામ્રાજ્યની સીમાઓને દરેક છેડે સ્તમ્ભો ઊભા કરાવી તે ઉપર અને ઠેકાણે ઠેકાણે ગિરિસ્કન્ધો ઉપર તે સિદ્ધાન્તો તે સમયમાં પ્રચલિત પાલીભાષામાં

મોકલ્યા હતા. તેમ જ ભારતની બહારના જે જે દેશો સાથે એને રાજકીય સમ્બન્ધ હતો તે તે દેશોમાં ધર્મપ્રચારકો મોકલીને તે સિદ્ધાન્તોથી હિન્દની ઉત્તરે, દક્ષિણે અને પશ્ચિમે આવેલા દેશોની પ્રજાઓને જાણીતા કર્યા હતા. તેમાંથી સિલોન જેવા કેટલાક દેશના રાજાઓએ બૌદ્ધધર્મને રાજધર્મ તરીકે સ્વીકાર્યો હતો. આથી અહિંસા ધર્મ તેના સમયથી ભારતમાં સર્વત્ર અને તેની આસપાસના કેટલાક દેશોમાં પળાતો થયો હતો. આ સિવાય જગતના ઇતિહાસમાં પહેલી જ વાર તેણે મનુષ્યો તથા પશુઓનાં શારીરિક વ્યાધિઓના ઉપચાર કરવાની સગવડ કરી આપવા માટે ઠેકઠેકાણે દવાખાનાંઓ ખોલ્યાં હતાં અને તેમાં આયુર્વેદશાસ્ત્રથી નિષ્ણાત વૈદ્યોની નિમણૂંકો કરી હતી. આની અસર એટલી કાયમની થઈ હતી કે એના મરણ પછી એનું સામ્રાજ્ય હિન્દમાંના અને હિન્દ બહારના કેટલાક રાજાઓએ કીધેલાં આક્રમણોથી તૂટીને મગધનું નાનું રાજ્ય જ મૌર્યવંશીઓને કબજે રહ્યું હતું તો પણ હિન્દ બહારના આક્રમણ કરનારાઓ પૈકી જે કેટલાક બૅક્ટ્રિઅન ગ્રીક અને શક રાજાઓએ હિન્દમાંના કેટલાક પ્રાન્તો જીતી લઈ ને પોતાનાં સ્વતંત્ર રાજ્ય સ્થાપ્યાં હતાં તે પૈકી કેટલાકે બૌદ્ધધર્મનો સ્વીકાર કરી અને કેટલાકે ભાગવતધર્મ સ્વીકારીને તેને રાજ્યધર્મ તરીકે માન્ય રાખ્યો હતો એટલું જ નહીં પરંતુ તેનો ઉત્તર-પૂર્વના કેટલાક દેશોમાં ફેલાવો કરવામાં પણ રાજ્ય તરફથી જોઈતી મદદ કરી હતી. આ બનાવો ઇસ્વીસનની પૂર્વેના અને પછીના એક બે સૈકાઓમાં બનેલા હતા.

૬. કુમારપાળના રાજ્ય શાસનમાં તેનો થયેલો અમલ

જૈન ગ્રંથોમાંથી એવી હકીકત મળી આવે છે કે ઈ. સ. પૂ. ૪ થા સૈકામાં થઈ ગયેલા મૌર્ય સામ્રાજ્ય સ્થાપનાર, અશોકના દાદા ચન્દ્રગુપ્તે જૈન ધર્મનો સ્વીકાર કર્યો હતો અને તે પોતાની જીંદગીના પાછલા ભાગમાં એક જૈન સાધુની સાથે કર્ણાટકમાં જઈને રહ્યો હતો અને ત્યાં ધર્મ પ્રચાર કર્યો હતો. તે બાબતના શ્રવણ બેલગોલા નામે મૈસૂરરાજ્યમાં આવેલા એક સ્થળે કેટલાક જૈન સ્થાપત્યના નમૂના અને લેખો પણ મળી આવ્યા છે. પરંતુ તે બધી હકીકતને આધારે તૈયાર કર્યા હતા કે કેમ તે વિષે ઘણા વિદ્વાનોએ શંકા ઉઠાવી છે. તથાપિ એટલું તો ખરું જ છે કે ઈ. સ. ના ૭મા સૈકામાં કર્ણાટકમાં દિગમ્બર જૈન મત ઘણો પ્રચાર પામ્યો હતો અને તે સૈકાના અને તે પછીના કેટલાક જૈન મુનિઓએ રચેલા ઘણા ધાર્મિક ગ્રન્થો આજે પણ ઉપલબ્ધ છે. તે પૈકી એક મહત્ત્વનો ગ્રન્થ હરિવંશ પુરાણ છે. તે ઉપરથી એ શક્ય લાગે છે કે ઇસ્વીસનના ૪-૫ સૈકામાં હૂણોના આક્રમણથી બીને ઉત્તર હિન્દમાંથી નાસીને જેમ હિન્દુઓ (શૈવો અને વૈષ્ણવો) તામીલ દેશમાં જઈને વસ્યા હતા અને બૌદ્ધયતિઓ પૈકી કેટલાક ચીન અને તિબેટ જઈને વસ્યા હતા. તેમ તે જ વખતે જૈનો નાસીને કર્ણાટકમાં જઈને વસ્યા હોય. ભાગવતપુરાણમાં તો એવી આખ્યાયિકા

* 'યતિ' શબ્દથી આજના ગોરજી નહિં પણ સાચા ત્યાગી સાધુઓ સમજવા. સંપા૦

છે[૨૯] કે જૈનોના આદિ તીર્થંકર ઋષભદેવ ભગવાન વાસુદેવનો અવતાર હતા. તેને ૧૦૦ છોકરા હતા. તે પૈકી ભરત જે સૌથી મોટો હતો તેને ભારત અને બીજા ૯૯ વચ્ચે કુશાવર્ત, ઈલાવર્ત, બ્રહ્માવર્ત, મલય, કેતુ, ભદ્રસેન, ઈન્દ્રસ્પૃક્, વિદર્ભ, અને કીટક એ પ્રદેશો વહેંચી આપી તેમને યથાયોગ્ય ઉપદેશ આપી પોતે બ્રહ્માવર્તમાં પ્રયાણ કીધું હતું. ત્યાં રહેતા બ્રહ્મર્ષિપ્રવરસભાના પ્રજાજનોને ભક્તિ જ્ઞાન અને વૈરાગ્યનો બોધ આપીને ત્યાંથી અવધૂતના વેષમાં મૌન ધારણ કરીને આગળ પ્રયાણ કર્યું હતું. જતાં જતાં તેણે અનેક શહેર, ગ્રામ, વન વગેરેમાં વાસ કર્યો હતો અને નાના તરેહના યોગના આચરણથી તેણે કૈવલ્યપદ પ્રાપ્ત કર્યું હતું. તેથી તેને અનેક યોગસિદ્ધિઓ પ્રાપ્ત થઈ હતી પરંતુ તેની બ્રહ્મચર્યા કોઈ ગ્રહની અસરથી માણસ દેહભાન ભૂલીને ઉન્મત બનીને ભટકતો ફરે તેના જેવી હતી. આવી દશામાં તે દક્ષિણ કર્ણાટકના કોંક, વેંક અને કુટક તરીકે ઓળખાતા ભાગોમાં ગયા હતા. ત્યાં તે કુટકાચલના ઉપવનમાં મ્હોંમાં પથ્થરો રાખીને ભટકયા કરતા હતા. તેવામાં તે ઉપવનમાં એક વખતે વાંસના ઝાડોમાંથી અતિશય વેગવાળા પવનથી ઘર્ષણ થતાં દાવાનળ પ્રકટયો હતો અને તેમાં તેનું શરીર ભસ્મીભૂત થઈ ગયું હતું. આ પછી એવી ભવિષ્યવાણી છે કે તેના બાહ્યાચરણને ધર્મ સમજીને તે પ્રદેશનો અર્હત્ નામનો રાજા તેનો પ્રચાર કરશે તેથી કલિકાળમાં વૈષ્ણવધર્મનો નાશ થઈને પાખંડ ધર્મ પ્રવર્તશે. ઋષભદેવના ત્યાં ગયાની હકીકતમાં તથ્ય હોય કે ન હોય તો પણ દક્ષિણ કર્ણાટકમાં જૈન ધર્મની શરૂઆત તો કળિકાળમાં થવાની ભવિષ્યવાણી છે. તે ઉપરથી ૪–૫માં સૈકામાં તેની શરૂઆત ઉત્તરમાંથી નાસી આવેલા જૈનોના વસવાટથી થઈ હોય એ આ ઉપરથી શકય લાગે છે. એ હકીકતમાં જણાવેલ અર્હત્ નામના રાજા વિષે ઐતિહાસિક પુરાવો મળે છે કે કેમ તે કહી શકાય એમ નથી.

જૈન ધર્મના પવિત્ર ધામો બિહાર સિવાય પાલીતાણા પાસે શત્રુંજય, જૂનાગઢ પાસે ગિરનાર, અને આબુ પર્વત ઉપર દેલવાડામાં છે. તેથી સૌરાષ્ટ્ર ગુજરાત અને રજપુતાનામાં જૈન ધર્મનો પ્રચાર હમણાં જોવામાં આવે છે. તેની શરૂઆત કયારથી થઈ હશે તે ચોક્કસ કહેવું શકય નથી. અલબત્ત તે લોકોની માન્યતા પ્રમાણે અને ૭ થી ૧૦ મા સૈકામાં રચાયલા ગ્રન્થો ઉપરથી તો જણાય છે કે શ્રીઋષભદેવ પણ સૌરાષ્ટ્રમાં આવ્યા હતા અને શ્રીઅરિષ્ટનેમિએ ગિરનાર ઉપર વાસ કર્યો અને તે દરેકને મોટાં શિષ્યમંડળો હતાં પરંતુ ઐતિહાસિક દૃષ્ટિએ જોતાં વલભીવંશની શરૂઆત પાંચમા સૈકામાં થઈ હતી ત્યારથી તો સૌરાષ્ટ્ર અને ગુજરાતમાં જૈન ધર્મનાં ધામો અને જૈનોની કાયમની વસ્તી હોવી જોઈએ એ ચોક્કસ છે. વસ્તુપાળ અને તેજપાળના વખતથી તો તેને રાજ્યાશ્રય પણ સારો મળ્યો હતો. પરંતુ જૈન ધર્મના સિદ્ધાન્તની અસર ગુજરાત અને રજપુતાના તથા થાણાજીલ્લાના પશ્ચિમ ભાગની સામાન્ય વસ્તીનાં જીવન ઉપર જે પડી હતી તે મહારાજા કુમારપાળ સોલંકીના કાળમાં એટલે કે ૧૨–૧૩ મા સૈકામાં બન્યું હતું. તેનું કારણ એ હતું કે તે રાજાએ

---

૨૯. ભા. પુ. ૫. ૪. ૮–૧૯; ૫. ૫.૨૮–૩૫, ૬. ૧–૧૫.

શ્રીહેમચંદ્રાચાર્યના ગાઢ સહવાસને લીધે જૈન ધર્મ સ્વીકાર્યો હતો અને તેની જ સલાહને માન આપી પોતાના રાજ્યમાં જીવહિંસા થતી અટકાવવા માટે યોગ્ય હુકમો કાઢ્યા હતા. તે અસર હજુ સુધી રહી છે તે એ ઉપરથી જણાય છે કે માત્ર ભીલ, કોળી, માછી વગેરે હલકી વર્ણ સિવાય ગુજરાત અને સૌરાષ્ટ્રમાં સર્વત્ર માંસાહારી હિન્દુઓ જોવામાં આવતા નથી.

૭. પરરાષ્ટ્ર શાસનમાંથી મુક્તિ મેળવવામાં મહાત્મા ગાંધીએ તેનો કરેલો ઉપયોગ

એ હિન્દુઓમાં વણિકોની ઘણી જ્ઞાતિઓ છે. તેમાં કેટલાક જૈનધર્મ પાળે છે અને કેટલાક વૈષ્ણવધર્મ પાળે છે અને તેમની વચ્ચે કન્યા વ્યવહાર પણ ચાલુ છે. આવાં બે વણિક કુટુમ્બ વચ્ચે સૌરાષ્ટ્રમાં લગ્ન સમ્બન્ધ બંધાયેલો. તેના પરિણામ તરીકે મહાત્મા ગાંધી તરીકે વિશ્વખ્યાતિ પામેલા, મોહનદાસ કરમચંદ ગાંધીનો જન્મ થયો હતો. આથી એના જન્મથી જ એના મન ઉપર વૈષ્ણવ તેમજ જૈન ધર્મ પ્રમાણેના આચારની છાપ પડેલી. એમના વૈષ્ણવપિતા સૌરાષ્ટ્રના એક દેશી રાજ્યના કારભારી હોવાથી પૈસે ટકે સુખી હતા. તેથી મોહનદાસ નાની ઉમરમાં જ વિદ્યાભ્યાસ માટે ઇંગ્લાંડ જઈ શક્યા હતા. ત્યાં રહ્યાથી પાશ્ચાત્ય સંસ્કૃતિનો પાસ એમને શરૂઆતમાં થોડો ઘણો તો લાગ્યો જ હતો પરંતુ છેવટ તે સ્વતન્ત્ર દેશના વાતાવરણમાં રહ્યાથી એમના હૃદયમાં સ્વમાન અને સ્વદેશાભિમાનની વૃત્તિઓ પણ જાગૃત થઈ હતી. તેથી જ્યારે એ ઇંગ્લાંડથી પાછા ફર્યા ત્યારથી જ બની શકે તેટલી દેશની સેવા કરવાની એને ઉમેદ હતી. આથી બૅરિસ્ટર તરીકેનો ધંધો કરવા માટે દક્ષિણ આફ્રિકા ગયા પછી થોડા જ વખતમાં તે દેશમાં વસતા હિન્દીઓને યૂરોપીઅનો પોતાનાથી હલકી જાતિના ગણીને તેમનું સ્વમાન ઘવાય એવી તેમની પ્રત્યે વર્તણુક ચલાવતા જોઈને એમણે તેમને કોઈ પણ સુધરેલા દેશના નાગરિકને હોવા જોઈએ તેવા હક્ક અપાવવા માટેની લડત ચલાવવાનું બીડું તેણે ઝડપ્યું હતું અને તે ઉપાડી હતી. તે માટે જે રીત એમણે સ્વીકારી હતી તેનું મુખ્ય લક્ષણ અહિંસકવર્તન હતું. એટલે કે એમણે ઉભા કરેલા સ્વયંસેવક દળના સભ્યોને એમણે સમજાવી દીધું હતું કે આપણે યૂરોપીઅનો સામે બળજબરીથી લડી શકીએ તેટલું આપણી પાસે સાધન નથી તથાપિ તે કારણે લડત ન ઉપાડવી એ પણ ઠીક નથી માટે આપણે સામો ઘા કર્યા સિવાય પરંતુ નિશ્ચયપૂર્વક તેમના અન્યાયીપણા સામે બંડ ઉઠાવવું અને તેને લીધે જે દુઃખ સહન કરવાં પડે તે મૂંગે મોઢે સહન કરી લેવાં. પરંતુ કાયર થઈને લડત છોડી દેવી નહીં. તે પ્રમાણે ૫-૭ વર્ષ લડત ચલાવીને તેણે જનરલ સ્મટ્સની સરકાર પાસેથી ત્યાંના નાગરિકોને કેટલાક માનવજાતિના હક્કો આપવાનો કરાર કરાવ્યો હતો. અને તેને અનુસરીને પછી ત્યાંની સરકારે કાયદામાં યોગ્ય સુધારા કર્યા હતા. તે સને ૧૯૧૪ માં ફર્યા. પછી તે ઇંગ્લાંડ ગયા હતા ને ત્યાં રહેતા હતા, તેવામાં પ્રથમ વિશ્વ વિગ્રહ શરૂ થયો હતો. તેમાં મદદ કરવા માટે હિન્દી સ્વયંસેવકોનું દળ ઉભું કરવાની તેણે તૈયારી કરવા માંડી હતી. પરંતુ કેટલાક સલાહકારોની સલાહને માન્ય રાખી તે સને ૧૯૧૫માં હિન્દમાં

આવીને વસ્યા હતા અને તે કાળની હિન્દની રાજકીય પરિસ્થિતિનો બરાબર અભ્યાસ કરી અમદાવાદમાં સત્યાગ્રહાશ્રમ કાઢી સત્યાગ્રહીઓની એક ટુકડી તૈયાર કીધી હતી. તેને પ્રસંગ આવતાં બારડોલી, ચંપારણ્ય વગેરે સ્થળે ઉપયોગમાં આણી તેણે ખાત્રી કરી લીધી હતી કે હિન્દની બ્રિટિશ સરકાર સામે માથું ઉંચકવાનો પ્રસંગ આવે તો તે ઉપયોગી થઈ પડે એમ છે. છેવટે સને ૧૯૧૯ની સાલમાં વિશ્વયુદ્ધનો અંત આવ્યા પછી તેમાં ભાગ લેનારા કેટલાક પંજાબી યુવાનો ઉપર જલીયાંવાળા બાગ અમૃતસરમાં, એક લશ્કરી ટુકડીએ દરવાજા બંધ કરી ગોળીબાર કરી અનેકના જાન લીધા હતા તે ઉપરથી એનો બ્રિટિશ સરકારના ન્યાયીપણા વિષેનો વિશ્વાસ ઉઠી ગયો હતો તેથી તેણે હિન્દી મહાસભામાં ઠરાવ પસાર કરાવીને સત્યાગ્રહની લડત ગેરકાયદે મીઠું પકવવા માટે અમદાવાદથી દાંડી સુધી પગપાળા પોતાની ટુકડી સાથે કૂચ શરૂ કરી હતી. ત્યારથી તે સને ૧૯૪૨ સુધી એવા અનેક પ્રસંગ બન્યા હતા. કે જે વખતે તેને અંગ્રેજ સરકાર સામે લડવું પડયું હતું અને તેમાં દેશમાંના અનેક સ્ત્રીપુરૂષોએ તેને મદદ આપી હતી અને અનેક દુ:ખ સહન કર્યાં હતાં. છેવટે સને ૧૯૪૨ થી ૧૯૪૪–૪૫ સુધી કારાવાસની યાતના સહન કરી હતી અને તેને અંતે હિન્દને સ્વાતન્ત્ર્ય આપવાનું વચન મેળવ્યું હતું અને એમણે ધાર્યા પ્રમાણે સમસ્ત બ્રિટિશ હિન્દની રાજ્યસત્તા તો જો કે મહાસભાના કાર્યકર્તાઓના હાથમાં સોંપાવી શકયા નહોતા તોપણ તેનો ઘણો મોટો ભાગ સોંપાવી શકયા હતા. આ ઇષ્ટ પરિણામ મેળવવામાં એમની અહિંસક લડત લડવાની નીતિ મોટે ભાગે મદદરૂપ થઈ હતી. આ પ્રમાણે અહિંસાધર્મ જેનો આરંભથી તે એમના કાળ સુધી આધ્યાત્મિક ઉન્નતિ મેળવવામાં માત્ર વ્યક્તિગત અને સામાજીક જીવનમાં સુધારો કરવામાં ઉપયોગ થતો હતો, જેનો સામાન્ય સમૂહમાં પ્રચાર અશોક અને કુમારપાળ જેવા રાજ્યસત્તાનો ઉપયોગ કરીને કરી શકયા હતા તેનો ઉપયોગ એમણે પોતાના આધ્યાત્મિક-બળને આધારે જનસમૂહ ઉપર એક મહાન કાબુ મેળવી એક મહાન પરકીય રાષ્ટ્રના પ્રતિનિધિઓ સામે બંડ ઉઠાવવામાં કર્યો હતો. તેની આન્તરરાષ્ટ્રીય અસર એ થઈ છે કે તે ધોરણ ઉપર રાજકીય લડત ઘણા દેશોમાં થઈ ગઈ છે અને હજી પણ થાય છે. આ પ્રમાણે એમણે અહિંસા ધર્મનો ઉપયોગ એક રાષ્ટ્રની પરકીયરાષ્ટ્ર સામેની રાજકીય લડતના ક્ષેત્રમાં કરીને તેનું ક્ષેત્ર વિશાળ બનાવ્યું હતું.

૮. આધુનિક સંસ્કૃતિમાં તેનું સ્થાન

સને ૧૯૩૯ થી ૧૯૪૫ સુધી બીજા વિશ્વયુદ્ધને લીધે યૂરોપ, એશિયા અને આફ્રિકામાંના કેટલાક દેશોમાં એટલી મોટી મનુષ્યની સંખ્યા અને એટલી વ્યવહારોપયોગી સામગ્રીનો નાશ થયો હતો અને વિશેષ કરીને જાપાનમાંના હિરોશિમા અને નાગાસીકી શહેરો ઉપર અમેરિકન લશ્કરે અણુબોમ્બ નાંખ્યા હતા તેને લીધે એટલું તાત્કાલિક નુકશાન તે શહેરોની નિર્દોષ વસ્તીને પણ થયું હતું અને તેનાં રેડીઓ-એકટીવ કિરણોની અસર એટલી ચિરસ્થાયી નિવડી છે કે તેથી આખા જગતમાં

લોકમત બંધાઈ ગયો છે કે કોઈ પણ બે રાષ્ટ્ર વચ્ચે કોઈ પણ કારણે ટંટો ઊભો થાય તો તેનો નિકાલ યુદ્ધ કર્યાથી નહીં, પરંતુ બને ત્યાં સુધી પ્રતિનિધિઓ મારફતે વાટાઘાટ કરીને અને તેમાં સફળતા ન મળે તો કોઈ તટસ્થ રાષ્ટ્રની મધ્યસ્થીથી કરી લેવો જોઈએ. એ મત એટલો વ્યાપક અને દૃઢ છે કે તેની અસર સુધરેલા વ્યવસ્થિત રાજ્યોના કારભાર કરનારા સત્તાયુક્ત મંડળો અને વ્યક્તિઓ ઉપર પણ થયો છે. તેને લીધે અમેરિકામાં તેવાં લગભગ ૫૫-૬૦ રાષ્ટ્રોની રાજ્યસત્તાઓ તરફથી એક સંયુક્ત રાષ્ટ્રોની સંસ્થા (યુનાઈટેડ નેશન્સ ઓર્ગેનિઝેશન) ઊભી કરવામાં આવી છે. અને તેમાં જે જે રાષ્ટ્રની સરકાર સભ્ય તરીકે જોડાય છે તેને પોતાના નિયુક્તપ્રતિનિધિ મારફત એવા એક દસ્તાવેજ ઉપર સહી કરવી પડે છે કે જેમાં એક શરત એવી છે કે અમારું રાષ્ટ્ર પોતાને બીજા કોઈ રાષ્ટ્ર સાથે ટંટો ઊભો થાય ત્યારે બનતાં સુધી વાટાઘાટથી અને સફળતા ન મળે તો કોઈ તટસ્થરાષ્ટ્રના પ્રતિનિધિને મધ્યસ્થ નિમી કરશે અને તેમાં સફળતા ન મળે તો મજકૂર સંસ્થાને તેનો નિકાલ કાઢી આપવા અરજ કરશે.

આને લીધે જુનાં નાનાં રાષ્ટ્રો વચ્ચે સ્વતન્ત્રપણે યુદ્ધો થતાં તો લગભગ અટકી જ ગયાં છે એમ કહીએ તો કાંઈ ખોટું નથી. પરંતુ ૧૬મીથી ૧૯મા સૈકા લગીમાં જે જે યુરોપીઅન રાષ્ટ્રોએ એશિયા અને આફ્રિકાના કેટલાક દેશોમાં ત્યાંના લોકોને દબાવીને અગર ફોસલાવીને પોતાની રાજ્યસત્તા જમાવી હતી તેમની સાથે એવા કોઈ દેશના રાષ્ટ્રીયપક્ષને જ્યારે તકરાર પડે છે ત્યારે યુદ્ધ થવાના પ્રસંગ ઊભા નથી થતા એમ નથી. તેમ એવા કોઈ સ્થાનિક પક્ષને યુદ્ધ શરૂ કરવામાં તથા તે ચાલુ રાખવામાં મોટાં પાશ્ચાત્ય રાષ્ટ્રો શસ્ત્રસરંજામ, નેતાગિરિ વગેરે પુરાં પાડવારૂપી મદદ નથી કરતા એમ પણ નથી. ત્રીજું, આજે જગતમાંના બે મહાબળવાન રાષ્ટ્રો, અમેરિકાના સંયુક્ત રાષ્ટ્રો અને રૂસની નેતાગિરિ નીચેનો રાષ્ટ્રસમૂહ, હજી એ માન્યતાને વળગી રહ્યાં છે કે વિશ્વયુદ્ધ ફાટી નીકળતું અટકાવવાનો એ જ રસ્તો છે કે તેવું યુદ્ધ સામો પક્ષ કરવા માટે કેટલી તૈયારી કરે છે તે બાબતમાં તકેદારી રાખ્યા કરવી અને તેને પ્રસંગ આવતાં હારી જઈ શકાય તેટલી લશ્કરી, નૌકા અને હવાઈદળોની તૈયારી પોતે રાખવી. આથી તેમની વચ્ચે લશ્કરો તૈયાર કરવાની અને તેમને માટે શસ્ત્રસામગ્રી તૈયાર કરવાની હોંસાતોંસી ચાલી રહી છે અને વખતોવખત છુટકાછુટકી થયા કરે છે. વળી હાલ એકાદ સાલથી કોરીઆનું યુદ્ધ બંધ કરાવવા માટે સંયુક્ત અમેરિકન રાજ્યોના પ્રમુખે નવી નીતિ અખત્યાર કરી છે. તેથી એશિયામાં વિશ્વયુદ્ધ ફાટી નીકળવાનો સંભવ વધ્યો છે.—ચોથું, હમણાં જેવું તા. ૨૨ ફેબ્રુઆરી ૧૯૫૩ ને દિવસે સર એલેક્ઝાન્ડર કેડોગને નવી દિલ્હીમાં આવેલી ઇન્ટરનેશનલ લૉ એસોસીએશનના વાર્ષિક મેળાવડામાં ભાષણ કરતી વખતે કહ્યું હતું કે જો આપણને કોઈ પૂછે કે તમે કેવી દુનિયામાં વસવાનું પસંદ કરો તો આપણે સૌથી પહેલું એમ જ કહીએ કે જેમાં બળ અગર સત્તાને બદલે ધર્મનું રાજ્ય ચાલતું હોય તેવી જ દુનિયા આપણને પસંદ પડે. એવાં ભાષણો તો અવારનવાર થયા જ કરે છે. પરંતુ દેશનાયકનાં

કારણો, જેવાં કે દક્ષિણ આફ્રિકાની સરકારની એપરથિડની નીતિ, હજી જેમના તેમ છે. તેમને નાબુદ કરવા માટે સમૂહરાષ્ટ્રો તરફથી સક્રિય પગલાં લેવાતાં નથી અને કોઈ પણ રાષ્ટ્રની સરકાર પોતાની સ્વતંત્રતાનો કાંઈ પણ અંશ સંયુક્તરાષ્ટ્ર સંસ્થાને સોંપવા કોઈ તૈયાર નથી. આથી આન્તરરાષ્ટ્રીય જાહેર જીવનમાં અહિંસા ધર્મને કાયમનું સ્થાન મળ્યું છે એમ સંતોષ માની શકાય એમ નથી. તથાપિ એટલો સંતોષ માની શકાય એમ છે કે દરેક સત્તાધારીને એમ લાગે છે કે તે જીવનમાં તેને કાયમનું સ્થાન નહીં આપવામાં આવે તો જરૂર મોડું વહેલું પણ ત્રીજું વિશ્વયુદ્ધ ફાટી નીકળશે અને તે થશે તો બળ અને સત્તા ઉપર વિશ્વાસ રાખનારાં રાષ્ટ્રો છપ્પનકોટી યાદવની માફક પરસ્પર કાપાકાપી કરીને પોતાના વર્ચસ્વનો અન્ત પોતે જ લાવશે. પ્રસિદ્ધ વિશ્વેતિહાસ લખનાર એચ. જી. વેલ્સે તો ભવિષ્ય ભાખ્યું જ હતું કે આધ્યાત્મિક તત્ત્વો પર રચાયેલી સંસ્કૃતિની સ્થાપના ક્યારે થશે કે જ્યારે ત્રીજું વિશ્વયુદ્ધ થઈ માનવપ્રાણીની સંખ્યા હાલ છે તેના કરતાં ત્રીજા ભાગની જ અવશિષ્ટ રહેશે. હજી તો આગ પ્રજળ્યા કરે છે, તેમાંથી કાંતો ભડકો ઉઠી નીકળે કે કાંતો કજળાઈ જાય. તેનો આધાર વિશ્વ બળો ઉપર છે. તેની ગતિ કોઈ કળી શકતું નથી. શું થાય છે તે કાળે જીવશે તે જોશે અને તે પછીના જમાનામાં માણસો તેના ઇતિહાસથી જાણશે.

મમતા થિર-સુખ શાકિની, નિર્મમતા સુખ મૂળ;
મમતા શિવ-પ્રતિકૂલ હૈ, નિર્મમતા અનુકૂલ.
મમતા-વિષ મૂર્છિત ભયે, અંતરંગ ગુણ-વૃંદ;
જાગે ભાવ-નિરાગતાં, લગત અમૃતકે બુંદ.

*   *   *

ચાટે નિજ લાળા મિલિત, શુષ્ક હાડ જ્યું શ્વાન;
તેસેં રાચે વિષયમેં, જડ નિજ રૂચિ અનુમાન.

સમતાશતક] * [ઉપા. શ્રીયશોવિજયજી

---

* શ્રી૦ ગાંધીજીએ સ્વયં પોતાની અહિંસાને ધાર્મિક કોટિની નહીં પણ રાજકીય કોટિની કહી છે. એટલે ઉપરની હકીકત એ જ સંદર્ભમાં ઘટાવવી. અને તેમની રાજકીય અહિંસાની હવા દુનિયા પર ફેલાઈ ગઈ તેનું કારણ, હિન્દના છેલ્લા વોઈસરૉય લોર્ડમાઉન્ટબેટનના શબ્દોમાં 'પાંચમી સત્તાનું સ્થાન ધરાવતા અખબારોને આભારી છે.' સં.

જ્ઞાનદૃષ્ટિ અને મોહદૃષ્ટિ

ચેતન ? જ્ઞાનકી દૃષ્ટિ નિહાલો. ચેતન !
મોહદૃષ્ટિ દેખે સો બાઉરો, હોત મહામતવાલો. ચેતન—૧

મોહ-દૃષ્ટિ અતિ ચપલ કરતુ હૈ, ભવ ભવ વાનર ચાલો,
જોગ-વિયોગ દાવાનલ લાગત, પાવત નાહિ વિચાલો. ચેતન—૨

મોહદૃષ્ટિ કાયરનર ડરપે, કરે અકારન ટાળો,
રન મેદાન લરે નહીં અરિસું, શૂરલરે જિઉં પાલો. ચેતન—૩

મોહદૃષ્ટિ જન જનકે પરવશ, દીન અનાથ દુખાલો,
માગે ભીખ ફિરે ઘરિઘરિસું, કહે 'મુજકું' કોઉ પાલો. ચેતન—૪

મોહદૃષ્ટિ મદ-મદિરા માતી, તાકો હોત ઉછાળો,
પર-અવગુન રાચે સો અહનિશિ, કાગ અશુચિ જ્યોં કાલો. ચેતન—૫

જ્ઞાનદૃષ્ટિમાં દોષ ન એતે, કરો જ્ઞાન અજુઆલો,
ચિદાનંદ ઘન 'સુજશ' વચન રસ સજ્જન હૃદય પખાલો. ચેતન—૬

卐

પૂ. ઉ. શ્રીયશોવિજય ગુરુમંદિર પ્રતિષ્ઠા

અને

'શ્રીમદ્ યશોવિજયસારસ્વતસત્ર'નો હેવાલ

હવે અહીંથી જે હેવાલ કે હકીકતો પ્રગટ થાય છે, તે ઉભયકાર્યનું બીજ કયાં કયારે રોપાયું, તે અંગે શું શું પ્રવૃત્તિઓ થએલી, અને બે વરસને અંગે તેનું કેવું ફળ આવ્યું, તેનો સળંગ હેવાલ પ્રગટ કરવામાં આવે તોજ ખબર પડે. અને બીજી વખતે આવી કોઈ પણ ઉજવણી કરવી હોય ત્યારે, આવી નોંધો ને હકીકતોને બહુ જ સરળતાથી ઉપયોગમાં લઈ શકાય. વળી આવો ઇતિહાસ ગ્રન્થસ્થ થાય તો સદાને માટે સચવાઈ રહે. જાણકાર અને નહીં જાણકાર બંનેને એક જ સ્થળે સંપૂર્ણ સળંગ સામગ્રી જાણવાની મલી જાય. આવી અનેક સજજનોની વિનંતિથી આખો હેવાલ અહીં રજૂ કરવામાં આવે છે. આ હેવાલની ઓછી વત્તી હકીકતો મુંબઈ, અમદાવાદ, પુના, ભાવનગર, વડોદરા વગેરે અનેક સ્થળના જુદી જુદી ભાષાઓના પત્રોમાં પ્રગટ થઈ હતી. એમાં ખાસ કરીને સહુથી વધુ માહિતી જાણીતા 'જૈન' પત્રમાં પ્રગટ થઈ હતી; તેથી તેના હેવાલને મુખ્ય રાખીને બધી હકીકતો પ્રગટ કરી છે.

સંપાદકઃ—નાગકુમાર ના. મકાતી
જસુભાઇ મ. જૈન
મંત્રીઓ, ભૂતપૂર્વ સત્રસમિતિ. વડોદરા

નોંધ:—પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજ શ્રીમદ્ ૧૦૦૮ યશોવિજયજી મહારાજના ગુરુમંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર કરવાનો પાયો મુંબઈમાં રોપાયો, એકંદર કહીએ તો જે કંઈ બન્યું તેની ભૂમિકા મુંબઈ નગરમાં જ રચાઈ હતી. એ ભૂમિકા કેવા રીતે તૈયાર થઈ હતી, તેની જાણ માટે તે વખતે બહાર પડેલ સાહિત્યને અહીં રજૂ કરીએ છીએ.

પરમપ્રભાવકશ્રીગોડીપાર્શ્વનાથાય નમ: * તીર્થસ્વરૂપશ્રીઆદીશ્વરાય નમ:

જૈન શાસનના મહાન જ્યોતિર્ધર, સકલશાસ્ત્ર પારંગત મહોપાધ્યાય ૧૦૦૮

શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજનો

—ગુણાનુવાદ મહોત્સવ—

[તિથિ-માગશર સુદિ ૧૦-૧૧, તારીખ ૧૯-૨૦ સ્થળ-ભાયખલા]

વિ.વિ. સાથે જણાવવાનું કે જૈનશાસનના પરમપ્રભાવક, સેંકડો ગ્રંથોના રચયિતા, અસાધારણ દાર્શનિક વિદ્વાન, ષડ્દર્શનના સમન્વયસાધક, ન્યાય, સાહિત્ય, છંદ, અલંકાર, અધ્યાત્મ, યોગ, આચાર, ત્યાગ, ભક્તિયોગ, કર્મયોગ, જ્ઞાનયોગ, શ્રદ્ધાયોગ, ચારિત્રયોગ, દેવતત્ત્વ, ગુરુતત્ત્વ અને ધર્મતત્ત્વ, પ્રમાણ-નયવાદ ઇત્યાદિ અનેકવિધ વિષયો ઉપર સંસ્કૃત, પ્રાકૃત ભાષામાં, વિપુલ સાહિત્ય સર્જનાર એ જ વિષયોને તત્કાલીન લોકભાષામાં ઉતારીને સુંદર કાવ્યોની હારમાળા ખડી કરી વિદ્વાન-અવિદ્વાન સમાજ ઉપર અનહદ ઉપકાર કરનાર, જૈનશાસન અને તેની દાર્શનિક પ્રણાલિકાનું પૂર્ણપાન કરી જનાર, પરમ કૃપાળુ સ્વર્ગસ્થ મહર્ષિ ન્યાયવિશારદ ન્યાયાચાર્ય મહોપાધ્યાય ૧૦૦૮ શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજ સાહેબનો 'ગુણાનુવાદ મહોત્સવ' પૂજ્યપાદ પરમ ઉપકારી આચાર્યદેવ ૧૦૦૮ શ્રી વિજય પ્રતાપસૂરીશ્વરજી મહારાજ તથા પરમપૂજ્ય પ્રખર વક્તા ઉપાધ્યાયજી ૧૦૮ શ્રીમાન ધર્મવિજયજી મહારાજ તથા પરમપૂજ્ય સાહિત્યરસિક મુનિરાજ શ્રી યશોવિજયજી મહારાજાદિની છત્રછાયામાં ભવ્યરીતે ઉજવવાનો અમોએ નિર્ણય કર્યો છે. તે નિમિત્તે બે દિવસના વિવિધ કાર્યક્રમ રાખવામાં આવ્યા છે.

— કાર્યક્રમ —

માગશર સુદિ બીજી દશમ, મંગળવાર તા. ૧૯-૧૨-'૫૦

સવારના ૯ થી ૧૦॥ : સંગીતમાં મંગલાચરણ તથા તેઓશ્રીના જીવન ઉપર જુદા જુદા વિદ્વાન વક્તાઓનું ગુણકીર્તન.

* બપોરના બે વાગે શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજ કૃત નવપદજીની પૂજા. (મોતીશા જૈન પાર્ટીવાળા) શેઠ શાન્તિદાસ દામજી ધારશી તથા મોહનલાલ હરગોવિંદદાસ તથા શ્રી બાબા સોલંકી એન્ડ સન્સ તરફથી ઘણા ઠાઠમાઠથી ભણાવવામાં આવશે.

રાતના ૭॥ વાગે : ઉપાધ્યાયશ્રી વિરચિત 'સાહિત્ય પ્રદર્શન' તથા તેઓશ્રીની ભવ્ય છબી તથા તેઓશ્રીના વિવિધજીવન પ્રસંગોના આકર્ષક ચિત્રો આગળ તેઓશ્રીના જ બનાવેલા સ્તવનો પદોનું શ્રી નાનુભાઈની મંડળી તથા શેઠ મોતીશા જૈન પાઠશાળાના બાળકો 'રાત્રિ જાગરણ' કરશે અને તેઓશ્રીના નામની ધૂન જગાવશે. અને બહેનોનો ભાવનાનો કાર્યક્રમ.

માગસર શુદિ ૧૧, ને બુધવાર તા. ૨૦-૧૨-'૫૦

સવારના ૯ થી ૧૧ : સંગીતમાં મંગલાચરણ પૂ૦ મહારાજશ્રીનું 'સુજસવેલી ભાસ'નું વિવેચન સાથે વાચન તથા પૂજ્ય ગુરૂદેવો તથા અન્ય વક્તાઓ તેમના જીવન અને કવન ઉપર વિવેચન કરશે. અન્ય ગુણગીતો સાથે વિદાયગીત.

રાતના ા વાગે : ઘાટકોપરના આત્માનંદ જૈન મંડળનું 'રાત્રિ જાગરણ' અને તેઓશ્રીના નામની ધૂન.

તો આપણા શાસનના એ મહાન ઉપકારી સદ્‌ગુરૂદેવની કલ્યાણકારી ઉજવણીમાં દરેક જૈન ભાઈઓ અને બ્હેનોને અવશ્ય હાજરી આપવા આગ્રહભરી અમારી વિનંતિ છે.

લિ. સેવકો:—ફત્તેહચંદ ઝવેરભાઈ, વીરચંદ નાગજી, દીપચંદ મગનલાલ શાહ
સેક્રેટરીઝ : ગુણાનુવાદ સમિતિ

ચંદુલાલ વર્ધમાન શાહ
મનુભાઈ ગુલાબચંદ કાપડીઆ
ગોકળદાસ મગનલાલ

૧ મંત્રીઓ, શ્રી યશોવિજયજી જૈન ગુરૂકુળ
બાલચંદ જી. દોશી, કાલીદાસ હરજીવન

૨ મંત્રીઓ, મહુવા યશોવૃદ્ધિ જૈન બાલાશ્રમ
ચીનુભાઈ લાલભાઈ શેઠ, ભાઈચંદ નગીનભાઈ ઝવેરી, ધીરજલાલ જીવણલાલ
ફુલચંદ માણેકચંદ શાહ

૩ મંત્રીઓ, શ્રી સિદ્ધક્ષેત્ર જૈન બાલાશ્રમ
શાંતિલાલ એમ. શાહ, નટવરલાલ નેમચંદ શાહ

૪ મંત્રીઓ, શ્રી કેસરીયાજી જૈન ગુરૂકુળ
સૌભાગ્યચંદ ઉમેદચંદ દોશી
બબલચંદ કેશવલાલ મોદી

૫ મંત્રીઓ, જૈન શ્વે૦ એજ્યુકેશન બોર્ડ
મણિલાલ મોહનલાલ પાદરાકર
મંગળદાસ લલ્લુભાઈ
ચંદુલાલ નગીનદાસ ભાખરીઆ

૬ મંત્રીઓ, શ્રી અધ્યાત્મ જ્ઞાનપ્રસારક મંડળ
શાંતિલાલ મગનલાલ શાહ
રૂપચંદ પન્નાલાલ ભણશાળી

૭ મંત્રીઓ, શ્રી વીરતત્ત્વ પ્રકાશક
હીરાલાલ મંછાચંદ શાહ

૮ મુખ્ય મંત્રી, શ્રી મોહનલાલજી જૈન સેં૦ લાયબ્રેરી
મોહનલાલ દીપચંદ ચોકસી
મોહનલાલ ગુલાબચંદ ઝવેરી

૯ મંત્રીઓ, શ્રી ભારતીય જૈન સ્વયંસેવક પરિષદ
દીપચંદ મગનલાલ શાહ

૧૦ મુખ્ય મંત્રી, શ્રી મુંબઈ જૈન સ્વયંસેવક મંડળ
વીરચંદ નાગજીભાઈ, મનસુખલાલ હેમચંદ, હીરાલાલ સોમચંદ

૧૧ મંત્રીઓ, જૈન શિક્ષણ સંઘ
મોહનલાલ ડી. ચોકસી, વાડીલાલ ટોકરસી, કાન્તિલાલ ઉજમલાલ શાહ

૧૨ મંત્રીઓ, આત્માનંદ જૈન સભા
ભીખાલાલ કપૂરચંદ સોલંકી

૧૩ મંત્રી, ભાયખલા શેઠ મોતીશા જૈન પાઠશાળા
શાંતિલાલ મગનલાલ શાહ

૧૪ મંત્રી, અયોધ્યાતીર્થ જીર્ણોદ્ધાર કમીટી અને માળવા મેવાડ જીર્ણોદ્ધારકમીટી
કાંતિલાલ ઉજમશી, હજારીમલ ગુલાબચંદ

૧૫ શ્રી ગોડીજી જૈન મિત્રમંડળ
કાલીદાસ હરજીવન, મણિલાલ દુર્લભજી

૧૬ મંત્રીઓ, શ્રી ઘોઘારી વીશાશ્રીમાલી જ્ઞાતિ
પ્રાણચંદ માણેકચંદ, રાયચંદ મગનલાલ

૧૭ મંત્રીઓ, શ્રી ઘોઘારી જૈન મિત્રમંડળ
મંગળદાસ લલ્લુભાઈ ઘડીઆળી

૧૮ મંત્રી, શ્રી ગોડીજી જ્ઞાનસમિતિ

તા. ૯-૧૨-૫૦

નોંધ—'જૈન' પત્રમાં ગુણાનુવાદ ઉત્સવ અન્યત્ર ઉજવાય, તે માટે કરેલી વિનંતિનો ઉતારો

સ્વ૦ ઉપાધ્યાય શ્રીમદ્ યશોવિજય મહારાજનો
"ગુણાનુવાદ મહોત્સવ" ઉજવવા
—જાહેર વિનંતિ—

પરમ શાસનપ્રભાવક, મહાન તાર્કિક, પરમ અધ્યાત્મી-યોગવેત્તા, જૈન શાસન અને તેની દાર્શનિક વિચારપ્રણાલિકાઓનું પૂર્ણપાન કરનાર, અસાધારણ દાર્શનિક વિદ્વાન, વ્યાકરણ, ન્યાય, સાહિત્ય તથા દર્શનશાસ્ત્રનું પ્રાકૃત તથા સંસ્કૃત ભાષામાં વિપુલ સાહિત્ય સર્જનાર, તેમજ જૈન દૃષ્ટિએ, તત્ત્વ, આચાર, વિચાર, અધ્યાત્મ, યોગ, ભક્તિ, જ્ઞાન, ત્યાગ, વૈરાગ્ય, મોક્ષ તથા ચર્ચાત્મક સાહિત્ય વગેરે વિષયો ઉપર ગુજરાતી હિન્દી અને મિશ્ર ભાષામાં સ્વકૃતિઓની હારમાળા ખડી કરનાર, અને તેથી વિદ્વાન અને અવિદ્વાન ઉભય કક્ષાની પ્રજા ઉપર મહાન ઉપકાર કરનાર, પ્રભાવશાળી, મૌલિક સાહિત્યના સર્જક, સ્વસંસ્થ ન્યાયવિશારદ, ન્યાયાચાર્ય મહોપાધ્યાય ૧૦૦૮ શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજ તેઓશ્રીનો વિ. સં. ૧૭૪૩માં, અતિપ્રાચીન અને ઐતિહાસિક દર્ભાવતીનગરી એટલે હાલનાં ડભોઈ (વડોદરાથી ૧૮ માઈલ દૂર) શહેરમાં સ્વર્ગવાસ થયા હતો, જેને આજે ૨૬૪ વર્ષ થવા આવ્યા

એ મહાપુરુષનો 'ગુણાનુવાદ મહોત્સવ' ભવ્ય રીતે ઉજવવાનો મુંબઈના જૈનોએ નિર્ણય કર્યો છે શાસનના કેટલા આપણા આ સમર્થ વીર પુરુષ તરફ આપણી થોડી ઉદાસીન વૃત્તિ થઈ છે. પરિણામે, સમાજ કલિકાલસર્વજ્ઞ ભગવંત શ્રી હેમચંદ્રાચાર્યજી મહારાજ તથા જગદ્ગુરુ શ્રી હીરસૂરીશ્વરજી મહારાજને સમજતો થયો, પણ હજુ આ મહાપુરુષને સમજતો નથી થયો, માટે એ મહાપુરુષના પ્રેરક અને પવિત્ર જીવનને જાણવા, સમજવા અને જીવનમાં ઉતારવા માટે આપણે ઘણું ઘણું કરવાનું છે. પણ સમય થોડો હોવાથી હાલ તો તેઓશ્રીને સમાજ વધુમાં વધુ જાણતો થાય; એ માટે એ મહાપુરુષને છાજે તે જ રીતે તેમનો 'ગુણાનુવાદ મહોત્સવ' હિંદનો જૈન સંઘ ઠેર ઠેર ઉજવે.

અર્થાત્ તેઓશ્રીના ગુણાનુવાદ, ઉપરાંત તેમની સાહિત્યિક પ્રવૃત્તિ, અખંડ જ્ઞાનોપાસના ઉપર વિવેચનો થાય, શાસનને અવિચ્છિન્ન ટકાવવા માટે જીવનની પળેપળનો કેવો ઉપયોગ કર્યો તે, તથા ખાસ કરીને તો તેમના સાહિત્યનો અભ્યાસ સમાજ કેમ કરતો થાય અને તેમના મહાન સાહિત્યનો પ્રચાર વધુમાં વધુ કેમ થાય; તે માટે શું શું કરવું જોઈએ, તે માટે નવા સક્રિય સંકલ્પો કરવા. અને એ માટે બનતું બધું કરવા પરમપૂજ્ય આચાર્યદેવો, મુનિવરો અને જૈનસંઘને આગ્રહ વિનંતિ છે. જનતાને જાણ કરવામાં થોડું મોડું થયું છે, છતાં જૈનસંઘો તથા જૈનાચાર્યો તથા શ્રમણો, જ્યાં જ્યાં બિરાજતાં હોય ત્યાં ત્યાં પૂરેપૂરા ઉત્સાહથી આ ઉત્સવ ઉજવે.

ઉત્સવ ક્યારે ઉજવવો ?

જૈન પત્રમાં જણાવ્યું છે તેમ, આપણા સદ્ભાગ્યે આ મહાપુરુષના જન્મથી લઈ સ્વર્ગવાસ સુધીની માહિતી મળી આવી છે. પરંતુ દુર્ભાગ્યે સતત પ્રયત્નો છતાં, એક પણ પ્રસંગની ચોક્કસ તિથિ નથી મળી. ત્યારે શું કરવું? એટલે ડભોઈમાં તેઓશ્રીના સમાધિસ્થળે કાલધર્મ પછી બે વર્ષે (૧૭૪૫માં) તેઓશ્રીની ચરણપાદુકાની પ્રતિષ્ઠા માગશર સુદિ ૧૧ (મૌન એકાદશી)ના દિવસે થયેલ હોવાથી હાલ તુરત માટે તે જ દિવસ ઉજવવો ઉચિત છે. અમોએ પણ પૂજ્યપાદ આચાર્ય મહારાજ શ્રીમદ્ વિજયપ્રતાપસૂરીશ્વરજી મહારાજની નિશ્રામાં પરમપૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી શ્રીધર્મ-વિજયજી મહારાજ તથા પૂજ્ય મુનિવર્ય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજની પ્રેરણાથી અત્રે ૧૦, ૧૧, અને દિવસે ભવ્ય ઉજવણી કરવાનો નિર્ણય કર્યો છે.

—શ્રીયશોવિજયજી ગુણાનુવાદ મહોત્સવ સમિતિ તરફથી

ઠે. ગોડીજી જૈન ઉપાશ્રય
પાયધુની મુંબઈ
માગ. સુદિ બીજ ૨૦૦૭
તા. ૧૧-૧૨-૫૦

મંત્રીઓ
ફતેચંદ ઝવેરભાઈ
વીરચંદ નાગજી
દીપચંદ મગનલાલ શાહ

★

[જૈનપત્રનો તા. ૩૦-૧૨-૧૯૫૦નો ઉતારો]

મુંબઈમાં ભારે ઠાઠથી ઉજવાએલો સ્વ. મહોપાધ્યાય

શ્રીમદ્ યશોવિજયજીનો ગુણાનુવાદ મહોત્સવ

મુંબઈ ભાયખલા કે જ્યાં ૫૬૦ પુણ્યાત્માઓ બબે મહિનાના કઠીન ઉપધાનતપ વ્રતની અત્યુત્સાહથી આરાધના કરી રહ્યા છે, ત્યાં આગળ વિશાળ મંડપમાં ન્યાયાચાર્ય ન્યાયવિશારદ, દ્વિસહસ્રાબ્દના છેલ્લા જ્યોતિર્ધર ને અજોડ શાસનપ્રભાવક મહોપાધ્યાય શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજનો ગુણાનુવાદ મહોત્સવ ભારે ઉત્સાહપૂર્વક ઉજવાઈ ગયો.

એ નિમિત્તે પૂજ્ય મહારાજશ્રીની પ્રેરણાથી જાણીતા ગૃહસ્થોની ગુણાનુવાદ સમિતિ નિમાણી. તે કમીટીના સેક્રેટરી શ્રી ફતેહચંદભાઈ, શ્રી વીરચંદભાઈ તથા શ્રી દીપચંદ શાહની સહીથી શ્રીમદ્‌ની ઉજવણી માટે જાહેર વિનંતિ બહાર પાડી. બાદ મુંબઈની ઉજવણી માટેની આમંત્રણ પત્રિકા મુંબઈની જાણીતી અઢાર સંસ્થાઓ તરફથી બહાર પાડવામાં આવી. તે મુજબ માગશર સુદિ ૧૦, ૧૧ એ દિવસની ઉજવણી ભવ્ય રીતે થઈ. તે પ્રસંગે સ્વર્ગસ્થની મહત્તા દર્શાવતાં સ્વાગત બોર્ડો, ધ્વજા-પતાકાથી ભાયખલાનો મંડપ શોભી ઊઠ્યો હતો.

આ પ્રસંગે સ્વ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજ વિરચિત લભ્ય ગ્રંથોનું એક વિશાળ સ્વરૂપમાં સાહિત્ય પ્રદર્શન આકર્ષક રીતે વ્યાખ્યાન મંડપમાં ભવ્ય દેખાવો કરવા પૂર્વક ગોઠવવામાં આવ્યું હતું. વચગાળે ડભોઈથી આવેલી સ્વર્ગસ્થની સુંદર વિશાળ પ્રતિકૃતિ તેમ જ ચારે બાજુ તેમના સંસ્કૃત, પ્રાકૃત ભાષા, ગ્રંથો, તેમ જ સ્વર્ગસ્થના હસ્તાક્ષરોની છબી ગોઠવવામાં આવી હતી તે ઉપરાંત સ્વર્ગસ્થના ચારેય ભાષાના સાહિત્યમાંથી ખાસ બોધક ગ્રંથોમાંથી અર્થ સાથે લખેલા શ્લોકોના બોર્ડોની હારમાળા ગોઠવવામાં આવી હતી જે અનેકોને જીવનદર્શન કરાવી રહી હતી. સુંદર બોર્ડોમાં લભ્યાલભ્ય ગ્રંથની યાદી ચીતરાવીને મૂકી હતી

દશમના દિવસે પૂ૦ આચાર્ય શ્રીવિજયપ્રતાપસૂરીશ્વરજી તથા પૂ૦ ઉપાધ્યાયજી શ્રીધર્મવિજયજી મહારાજ તથા પૂ૦ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ તથા શતાવધાની શ્રીજયાનંદવિજયજી વ્યાસપીઠ પર પધારવા અગાઉ સાહિત્ય પ્રદર્શનની વચગાળે રાખેલી છબી તથા તેમની જ્ઞાનસાધનાની સહુએ સ્તુતિ કરી. ગુરૂદેવ પાટ પર બીરાજ્યા બાદ, ૧૨૧ મણ 'ઘી'થી કમળાબ્હેન, તે મફતલાલ ગગલદાસ મ્હેસાણાવાળાએ ઉપાધ્યાયજીની જમણા ચરણે ગુરૂપૂજા તથા બાદલાનો હાર ચઢાવ્યો હતો તથા બીજા એક બ્હેને સાઠ મણથી સ્વર્ગસ્થના જ્ઞાનરાશીની વાસક્ષેપ-પૂજા તથા હાર ચઢાવી, બહુમાન ભક્તિ કરવામાં આવી હતી. બાદ સ્વર્ગસ્થની જય બોલાવી અધ્યક્ષસ્થળેથી પૂજ્ય આચાર્યદેવે મંગલાચરણ કર્યું. પછી મોતીશા જૈન પાઠશાળાની બાળિકાઓએ ગુરુગુણ મંગલાચરણ, સ્વાગત ગીત સંગીતના મધુર સુરો સાથે ગાયું હતું સમિતિના મંત્રી શ્રી વીરચંદ નાગજીભાઈએ પત્રિકાવાચન કર્યું.

ત્યારબાદ સભાના વક્તાઓમાં શ્રીયુત ફતેહચંદભાઈએ શ્રી સ્વર્ગસ્થના જીવનને મહાન તરીકે જણાવ્યું હતું. શ્રીયુત પાદરાકરે સ્વર્ગસ્થને જૈન શાસનના એક મહાન પુરૂષ ને સાહિત્યકાર તરીકે ઓળખાવી તેમના વારસાને જાળવવા જોરદાર અપીલ કરી, ડભોઈમાંનું તેમનું સ્મારક સારું થાય તે માટે પૂ૦ મહારાજશ્રીને તથા ખાસ કરી મહારાજ શ્રીયશોવિજયજીને વિનંતિ કરતાં સ્વર્ગસ્થનો મુંબઈને આંગણે જે ભવ્યોત્સવનું આયોજન કરી લાભ આપ્યો છે તેવો લાભ દરેક વખતે મળે તે કહીને સ્વર્ગસ્થના સાહિત્યનો ઉદ્ધાર

કરવાનું જણાવ્યું હતું. શ્રીયુત ચંદુલાલ વર્ધમાન શાહે પણ ઉપાધ્યાયજીને સુંદર શબ્દોમાં અંજલિ આપી. આપણે શાસનના મહાન પુરુષના કીમતી વારસાને જાળવવા જણાવ્યું ને આવા પ્રસંગોની ઉપયોગિતા જણાવી. શેઠ જીવતલાલ પ્રતાપસીએ બોલતાં તેઓશ્રીએ બાલ્યાવસ્થામાં લીધેલી દીક્ષાથી કેવા પ્રભાવિક પુરુષ નીવડ્યા તે જણાવી, તેમના જીવનમાંથી બોધ લેવાની જોરદાર સૂચના કરી. શ્રી મગનલાલ મૂળચંદ શાહે સ્વ૦ ના જીવન પ્રસંગો કહ્યા. પંડિત શ્રી પ્રભુદાસ બેચરદાસે સ્વર્ગસ્થને અને તેમની શાસનસેવાને અંજલિ આપી. જૈનસાધુઓને તેમના સાહિત્યના અભ્યાસી બનવાની સૂચના કરી. બાદ શ્રી ધીરજલાલ ટોકરસી શાહે તેમનું જીવનચરિત્ર તૈયાર કરવાની સૂચના કરી બાદ મહારાજ શ્રીયશોવિજયજીએ જણાવ્યું કે ઘણાં વર્ષોથી મારા અંતરમાં શાસનના એક અજોડ પ્રભાવક મહર્ષિથી સમાજનો મોટો ભાગ અણુજાણ રહ્યા કરે તે પરિસ્થિતિ સાલતી હતી અને તે દૂર કરવાનો મનોરથ થોડે ઘણે અંશે આજે સફળ થયો છે તેથી આનંદ થાય છે. સ્વર્ગસ્થ માટે બંને પ્રકારના સ્મારકની જરૂર છે. સ્થાવર અને જંગમ. ડભોઈમાં ધર્મ-શ્રદ્ધાળુ સંઘે ૨૫ વરસ પહેલાંની કુદશાને નાબૂદ કરી આજે તે સ્થળને ભવ્ય બનાવ્યું, સ્વર્ગસ્થની સુંદર દેરી બનાવી છે, પરંતુ મેં જ્યારે પ્રથમ જોઈ ત્યારે જૈનશાસનમાં તેનું અતિ ઉચ્ચસ્થાન જોતાં આટલું જ સ્મારક ઘણું જ અપૂર્ણ લાગેલું, હવે તે પુરુષને છાજે તે રીતે ત્યાં ભવ્ય સ્મારક ખડું કરવું જોઈએ. આવા સ્મારકો એ આધ્યાત્મિક પ્રેરણાનાં હમેશા પ્રતીક બનતા આવ્યા છે. ને આબાલગોપાલ માટે તો પ્રથમ તે થવું જ જોઈએ. બીજું કાર્ય તેમનું જીવનચરિત્ર જે છૂટુંછવાયું પડ્યું છે તેને પણ સાંકળવાનું છે. વળી, સત્ય અર્ધસત્ય હકીકતોથી ઘણાં જાળાંજાંખરાં પણ ચઢ્યાં છે તેની સાફસૂફી કરવાની છે, તથા અભ્યાસપૂર્ણ ઘણી ઘણી બાબતો તારવવાની અગત્યતા જણાવીને સ્વર્ગસ્થની સાહિત્ય સાધનાનાં પુસ્તકોનું અભ્યાસપૂર્વક એક જ સરખી પદ્ધતિએ પુનર્મુદ્રણ કરાવી, જૈન જૈનેતરોમાં પહોંચાડવાની, ગુજરાતી સાહિત્યને જૈનોના ઘરે ઘરે ફરતું કરવાની ઉપયોગિતા દર્શાવી હતી છેવટે શેઠ ભાયચંદભાઈ ઝવેરીએ વક્તાઓની અપીલને ધ્યાનમાં લઈને સ્મારક માટે એક સમિતિ નીમવાનું જણાવતાં એક સ્મારક સમિતિ નીમાણી, ને પૂ. મહારાજશ્રીના ઉપદેશથી સ્મારક ફંડમાં ઉદાર ગૃહસ્થોએ સારી રકમ લખાવી હતી. પૂ. આચાર્યશ્રીએ બે શબ્દો કહી સભાને ઉત્તેજિત કરી, બાદ પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજે જૈનશાસનમાં ઉપાધ્યાયપદનું સ્થાન અને તેની આરાધનાથી થતી બોધિબીજની પ્રાપ્તિ ઉપર સુંદર પ્રકાશ પાથર્યો બાદ સભાની પૂર્ણાહૂતિ થઈ

માગશર સુદિ ૧૧ ના દિવસે બરાબર નવ વાગતાં કાર્યક્રમ શરૂ થયો. છબીનું ગુરુ તથા જ્ઞાનપૂજન થયું તથા સમસ્ત સંઘે પ્રાર્થના કર્યા બાદ પૂજ્ય ગુરુદેવોની અધ્યક્ષતામાં કાર્યક્રમ શરૂ થયો. સંગીત સાથે પ્રાર્થના થયા બાદ વક્તાઓમાં પાલીતાણાકર શ્રી ચીમનલાલ તથા શ્રીયુત ઝવેરી ભાયચંદભાઈ, શેઠ લલ્લુભાઈ કરમચંદ દલાલ વગેરેએ સ્વર્ગસ્થના ગુણાનુવાદ કરી પૂ. મહારાજશ્રીની પ્રેરણાથી મુંબઈની પ્રજાને એક મહાન પુરુષની જીવનઝાંખી કરવાનો ભવ્ય પ્રસંગ સાંપડ્યો તે બદલ આનંદ વ્યક્ત કર્યો હતો.

બાદ પૂ. મહારાજ શ્રી યશોવિજયજીએ સમયોચિત પ્રસ્તાવ રજૂ કરી 'મુક્ત્યદ્વેષીબાસ'નું વાચન વિવેચન સાથે કરી સ્વર્ગસ્થના મહાન જીવનની ઝાંખી કરાવ્યા બાદ, તેઓશ્રીના મહાન સાહિત્યની મહાનતાની ઝાંખી કરાવી, તેઓને આજન્મ જ્ઞાનોપાસક, મહાનગ્રંથકાર, શાસનના સાચા ભડવીર સુભટ, જૈન શાસ-નમાં નવ્યન્યાયના અજોડ અને બીનહરીફ વિદ્વાન, ભગવાન મહાવીરના એક સાચા, ખરા અને મહાન પ્રતિનિધિ તરીકે બિરદાવી, ભાવભીની શ્રદ્ધાંજલિ આપી હતી. તેમના જીવનની છૂટીછવાઈ હકીકતો ને ખુલાસા કર્યા બાદ ડભોઈના સ્મારક બાબતનો ખ્યાલ આપી, પ્રતિવર્ષે આ વખતની જેમ સાહિત્ય પ્રદર્શન ભરીને ઉજવણી થાય ને ઠેર ઠેર ઉજવાય, તે માટે પ્રતિબંધ કરવા તથા શ્રીમદ્ હેમચંદ્રાચાર્ય મહારાજ તથા ઉપાધ્યાયજી મહારાજ બંનેના ગ્રંથોના પુનર્મુદ્રણનું કાર્ય મુંબઈ ઉપાડી લે, એક સરખા સાઈઝમાં એક નિશ્ચિત પદ્ધતિએ પ્રકાશન થાય, વિદ્વદ્વર્ગને તે સાહિત્ય પૂરું પાડવામાં આવે, અને તે ઉપરથી ઉપયોગી

ગ્રન્થોના ભિન્નભિન્ન ભાષામાં અનુવાદો કરાવી તેઓશ્રીના સાહિત્યનો પ્રચાર કરે તો મુંબઈ એટલે કે મુંબઈની કોઈ પણ પ્રકાશક સંસ્થા ધન્ય ને અમર બની જશે. મુંબઈ પહેલ કરે, નક્કી કરે, તો દસ વરસમાં ઘણું કરી બતાવશે. તે સિવાય શ્રીમદ્ હેમચંદ્રાચાર્ય મહારાજ માટે ઘણું કરવાનું છે છતાં તે અંગે તો કંઈક થયું છે. પણ અગાઉ કહેલી શ્રીમદ્ હીરસૂરિજીના સ્થૂલ સ્મારકની બાબત પુનઃ ભૂલાઈ ન જાય, માટે શ્રીયુત ભાઈચંદ-ભાઈ વગેરેને સૂચના કરું છું. ને ઉપાધ્યાયજી મહારાજ માટેના સ્મારકની જવાબદારી આપણી સહીયારી લઈએ છીએ તેનો ખ્યાલ આપું છું. અને શ્રી વિજયદેવસૂરિજી મહારાજના જીવનચરિત્રનો ગૂર્જર અનુવાદ તૈયાર કરવાની સૂચના થતાં તેનો પણ નિર્ણય લેવાયો.

બાદ અધ્યક્ષપદેથી પૂ. આચાર્યદેવે પોતાના જાણપણાની કેટલીક હકીકત જણાવી તેઓશ્રીની પાદુકા પાસે ભૂતકાળમાં બનેલા અદ્‌ભુત ચમત્કારોની બાબતો જણાવી હતી. સ્વ. શ્રીમદ્ વિજયમોહનસૂરિજી મહારાજને તેમના ગ્રન્થો પરત્વે કેવો પક્ષપાત હતો તેની યાદ આપી ઉપાધ્યાયજીનો વર્તમાનનો પણ જાગતો મહિમા કહ્યો હતો. પ્રતિમાશતક ન્યાયના પાનાં કેવી રીતે મળ્યાં તેની રસિક હકીકત કહી, અન્ય-દર્શનના ગ્રંથો પર ટીકા કરી તેનું કારણ એ કે-ઇતરના ઘરમાં પ્રવેશી તેની જ અસત્ માન્યતાઓનું તેનાં જ વચનો દ્વારા નિરસન કરવાનું હતું ને તે કામ તેઓશ્રીએ બરાબર પાર પાડયું છે. ડભોઈના સંઘની તેમના પ્રત્યેની ભક્તિ અને તેમના જ નામધારી અહીં બેઠેલા મુનિ યશોવિજયજીની તેમના પ્રત્યેની અપાર શ્રદ્ધાને કારણે આ ઉત્સવનું આયોજન, ને લાભ સહુને તેમણે અપાવ્યો છે. બાદ ગુરૂદેવની છબીને સહુએ હાથ જોડયા પૂ. મહારાજશ્રી તરફથી તેમના નામનો જાપ કરવાની સૂચના થઈ. સભાની પૂર્ણાહુતિમાં સમિતિના સે૦ શ્રીદીપચંદ શાહે સહુનો આભાર માનતાં મહારાજ શ્રીયશોવિજયજીએ ઘણો જ પરિશ્રમ ઉઠાવીને આપણને અભૂતપૂર્વ જે લાભ આપી, મુંબઈ જે મહાપુરૂષને ઓછું જાણતું, સ્વ૦ ઉપાધ્યાયજી જેઓ એક મહાન જ્યોતિર્ધર થયા, તેનો સચોટ ખ્યાલ આજે સહુને આપ્યો છે. તે માટે પાટ પર બિરાજતા પૂજ્ય ગુરૂદેવોનો તથા વક્તાઓ, સભાજનો અને ડભોઈ જૈન સંઘ કે જેમણે ઉપાધ્યાયજીની છબી મોકલાવી તે બધાયનો આભાર માન્યો હતો. વિદાયગીત ગાઈને જયનાદો વચ્ચે સભા વિસર્જન થઈ.

ઉપાધ્યાયજીનું સાહિત્ય પ્રદર્શન રવિવાર સુધી દર્શનાર્થે રાખવામાં આવ્યું છે. દશમે બપોરે સ્વ. શ્રીમદ્ યશોવિજયજીકૃત નવપદ પૂજા જાણીતા ગવૈયા શ્રી. દેવેન્દ્રવિજયે ભણાવી ભારે રંગ જમાવ્યો હતો. રાતના બંને દિવસોએ રાત્રિજાગરણ, ભાવના ને ધૂન જમાવી હતી. સુજસવેલીના આધારે કહેવાએલું સ્વર્ગસ્થનું વિગતવાર જીવન આગામી અંકે.

પવિત્ર પુરૂષ કોને કહેવાય?

शुचीन्यप्यशुचीकर्तुं, समर्थेऽशुचिसम्भवे ।
देहे जलादिना शौच-भ्रमो मूढस्य दारुणः ॥

यः स्नात्वा समताकुण्डे, हित्वा कश्मलजं मलम् ।
पुनर्न याति मालिन्यं, सोऽन्तरात्मा परः शुचि ॥

ઉપા. શ્રીયશોવિજયજી] [જ્ઞાનસાર

મુંબઈમાં ન્યાયવિશારદ, ન્યાયાચાર્ય મહોપાધ્યાય ૧૦૦૮ શ્રીમદ્ યશોવિજયજી 'ગુણાનુવાદ મહોત્સવ' સમારંભ વખતે સંગીતના કાર્યક્રમમાં શ્રી. મણિલાલ મોહનલાલ પાદરાકરકૃત જે ગીતો ગવાયાં હતાં તે અત્ર પ્રગટ કર્યાં છે. સં. [તા. ૧૯-૨૦-૧૨-'૫૦]

(૧)

—પ્રભુ સ્મરણ મંગલ—

(રાગ-પંછી બાવરા)

જ્યોતિ જિનવરા !

જ્ઞાનકી જ્યોત જગાઓ ! ઉત્સવ સુયશ સુહાઓ ! જ્યોતિ—
શાસનદેવ દેવીઓ આઓ, નવગ્રહ સ્વયં પધારો !

પાર્શ્વપ્રભુ ધરણેન્દ્ર પદ્માવતી ! શાંતિ સુધારસ પાઓ—જ્ઞાન.
યોગ અરૂ અધ્યાત્મ જ્ઞાનકી, ધનવૃષ્ટિ બરસાઓ !

સદા ધર્મ-પ્રતાપ નમો નવ-અમીદૃષ્ટિ કરાઓ !—જ્ઞાન.
શુદ્ધ હૃદયમેં તાર લગાઉં, ભીતર હોય ઉજાલા !

ચેતન જાગે સુમતિ કે સંગ-એસે રાસ રસાલા !—જ્ઞાન.
ચાંદ પ્રભુ મણિ આપ ચકોરા, કીરપા સુધા પીલાદો !

ઉપાધ્યાય યશધ્વજ નભ લહેરે ! ઉત્સવ આજ મનાઓ !—જ્ઞાન.

* *

(૨)

—પરમ જ્ઞાનમૂર્તિ ૐ—

(કવ્વાલી)

પરમ જ્ઞાનમૂર્તિ ૐ

અલખ આત્મયોગી ૐ, નિજાનંદ ભોગી ૐ

જગી જીવન જ્યોતિ ૐ અન્યના એ જોગી ૐ—પરમ.
પંચ મહાવ્રત ધ્યાન, સ્વ-પર સદા પ્રતિભાન !

આત્મ જ્યોત ઝખમાન ! ઉપાધ્યાય યશ: ૐ—પરમ.
ન્યાયવિશારદ મહાન, સુકવિ નય સુનડું ગાણુ !

યોગને અધ્યાત્મ લાણુ ! અમર ઉજ જીવંત વાણુ !—પરમ.
શારદ સુજ્ઞાન ૐ, પદ પદ સુગમ ૐ

સરલ વિરામ ૐ સાધક-સાધુ-સિદ્ધ ૐ—પરમ.

* *

(૩)

—સ્વાગત—

(આશા-પીલુરાગ)

સંત સુજન નરનાર,
પધારો કવિ પંડિત અમદાર !

રાજહંસ સુમાનસસરના, જ્ઞાન મોતી ચરનાર !
પ્રેમમૂર્તિ બંધુ ભગિની હો, ધર્મ-સુયશ સત્કાર !—પધારો.

રસરાજહ રસતરસ્યાં ઉતર્યાં, ઉન્નત ગિરિ વસનાર !
યશોવિજય જયવંત ગુણોત્સવ, રસ અધ્યાત્મ પીનાર !—પધારો.

ધર્મ સુયશ રસરાજે ખોલી, જ્ઞાનપરબ-પીનાર !
કુંજ કુંજ રસતરસ્યાં. પીજો, છેડી હૃદય સિતાર !—પધારો.

જ્ઞાન રસામૃતના પીનારાં, ભક્ત ભવ્ય નરનાર !
અભેદ થઈએ આવો ભાંડુ, ફરી ફરી ક્યાં મળનાર ?—પધારો.

મહાકવિ પંડિત વાદીવિજેતા, યોગી ન્યાય અવતાર !
ઉપાધ્યાય યશવિજય ગુણોત્સવ, ભાયખલાને દ્વાર !—પધારો.

ગિર્વાણીનો ગરવો ગાયક, ગૂર્જરીનો અવતાર !
મહાગ્રંથ આલેખક ભાસ્કર, શાસન નભ ઝળકાર !—પધારો.

દશમ ઉજ્વળી મૃગશિર સોમે, ચઢતે પહોર સ્હવાર !
પ્રતાપ ધર્મ યશોધ્વજ લહેરે, જય આનંદ મલ્હાર !—પધારો.

કવિ તત્ત્વજ્ઞાની યોગી કો, હશો ભક્તિ આગાર !
સ્વાગત મણિમય મોદમયીનાં હો શાસન શણગાર !—પધારો.

* *

(૪)

શ્રી શારદા-શ્રુતદેવતા સ્તવનાષ્ટક

(કલ્યાણ)

વંદન ! જય શારદ ! શ્રુતદેવીસરસ્વતી ! અમિત આત્મશક્તિ તું સદા વહાવતી !—વંદન.
પરમ પ્રેમ રેલતી, દિવ્ય સૂર છેડતી ! પુણ્યભૂમિ ભારત યશને સુહાવતી !—વંદન.
ગૌતમ ગુણું ગાવતી, વીણા બજાવતી ! બ્રાહ્મી સુંદરી સ્વરૂપને રમાવતી !—વંદન.
સુરભિ સુમન સુરસ જ્ઞાનકુંજ ખેલતી ! મૂર્તિમંત સૂત્ર આગમે થી ડોલતી !—વંદન
રસવિલાસ રેલતી, રસિક રીઝાવતી ! ગૂઢ તત્ત્વજ્ઞાન ગીતડાં ગજાવતી !—વંદન.
શાસન પ્રભુ વીર સદા તું ઉજાગતી ! ધર્મ યશ ધ્વજે સદૈવ દેવી જય વતી !—વંદન
ઉપાધ્યાયજી જ્વલંત જ્યોત રેલતી ! યુગે યુગે રહો સદૈવ સુયશ પ્રસવતી !—વંદન.
જૈન ધર્મજ્યોત વિશ્વ ઝગહળાવતી ! ઉત્સવે સુયશ મણિમયી પધારતી !—વંદન.

* *

(૫)

—સુયશ મેઘ—

(રાગ-દુર્ગા, તાલ ત્રિતાલ)

સુયશ રસ મેઘન કે ઘન ઘોર—સુયશ.

ઘન ઘન અંજન જ્ઞાનશલાકા, ખોલત સુરત કિશોર—સુયશ.
ખોલત ઔર ખૂલાવત અખિયાં, આતમગુન રુચિ દોર—સુયશ.
દમકી સુયશ અમીરસ નીરઝર, કાટત કર્મ કઠોર—સુયશ.
આતમ સત્ય પ્રભુ પથ લાગે, જૈસે ચંદ ચકોર—સુયશ.
શ્રી જસ જ્ઞાન વિલાસ સુંદર મેં, અજર અમિ ઝર જોર—સુયશ.

(૬)

—વિદ્યાશાળામાં ભણેલી સાચી શ્રાવિકાની ભાવના—

(મ્હારે આજની ઘડી છે)

મ્હારે થાવું છે સાચુકલી શ્રાવિકા રે લોલ, જેના ચિત્તે સદાય ગુરુ જ્ઞાન જો;
એવું સાચું જીવન-પ્રભુએ ઘડ્યું રે લોલ, ધર્મ નીતિ ને તત્ત્વજ્ઞાન ભાન જો.—મ્હારે.
કુળ અને સ્વધર્મનિષ્ઠ હું કરું રે લોલ, ક્રિયા આચાર વ્રત ધર્મ પ્રાણ જો;
ભાવ ભૂલ્યા લોકોમાં ધર્મને ભરું રે લોલ, વિશ્વ પ્રકટાવું જૈન ધર્મ ભાણ જો—મ્હારે.
કદી ના ડગું હું ધર્મ જતાં પ્રાણથી રે લોલ, કરું રક્ષા હું શીલ સદાચાર જો;
મ્હારા ચારિત્ર દીવો દીપ્યા આવશે રે લોલ, દેશું ધર્મ-પ્રેમભાવ-એક તાર જો.—મ્હારે.
કરું શાસ્ત્રાર્થ તત્ત્વજ્ઞાન ગોઠડી રે લોલ, જ્ઞાનમન્દિરોને દેશો ઉદ્ધાર જો;
ગાવું સાત્વિક સંગીત સ્તવને રે લોલ, ગાવું સાચી નરને સંસાર જો—મ્હારે.
જૈન ધર્મધ્વજ વિશ્વે ફરકાવવા રે લોલ, મ્હારે દેવું છે ભર્યાં ભર્યાં કોડ જો;
પિતા બંધુ માતાઓ સહુ સાંભળો રે લોલ, અમિ પ્રતાપ ધર્મ છે અતોલ જો !—મ્હારે.

(૭)

—વિદાય—

(ઓધવજી સંદેશો)

વાડીલા ઓ વીરનંદન શ્રી આવજો, જય માનસર ગુણહંસ રાજજો;
પધારીઆ શ્રી યશોવિજય ગુરુકુળથી, સુહાવતા યશ-ધર્મ-નીતિ સંસ્કાર જો.—વાડીલા.
આવ્યા આજ સત્યના રસાળતી, નિત્યાનંદ રસામૃત કરવા પાન જો;
પીધાં પાયાં દિવ્ય રસામૃત શાસ્ત્રનાં, દેશ કરવા વિદ્યાના વરદાન જો.—વાડીલા.
આનંદિત વિદ્યાસંસ્કારી આપ તો, આનંદ સુંદર નવનામૃત અભિરામ જો;
ધર્મ પિપાસુ બાળા સ્નેહ નિભાવજો, યાદ્યા દિવના-મ્હારા આ વિશ્રામ જો.—વાડીલા.
ધર્મ પ્રતાપે સુયશ જય ધ્વજ ફરકજો, આપ્યા આદરથી ન શક્યા બહુમાન જો;
ક્ષમા ભર્યાં કરુણામૃત પાન કરાવજો, અભિનય જના દિની આજ વિદાયજો.—વાડીલા.

*　　　　*

નોંધ—'જૈન' પત્રમાં ગુણાનુવાદ ઉત્સવ અંગે પ્રગટ થએલી તંત્રી નોંધનો ઉતારો.

ઉપાધ્યાયજીનું સ્મારક

જૈન સંસ્કૃતિના ઉજ્જ્વલા મહાન જ્યોતિર્ધર ઉપાધ્યાયશ્રી યશોવિજયજી મહારાજનો ગુણાનુવાદ મહોત્સવ ગત મૌન એકાદશીના દિવસે મુંબઈખાતે સુંદર રીતે ઉજવવામાં આવ્યો.

સર્વ અંગોને સ્પર્શતું તેઓશ્રીનું સાહિત્યસર્જન એ જૈનસંસ્કૃતિના મહામૂલા વારસાનું એક અપૂર્વ અંગ છે. બાળ જીવથી માંડીને વિદ્વદ્વર્ગને રૂચે તેવી તેઓશ્રીની અનેક કૃતિઓ છે. અને સૌ કોઈ તેઓશ્રીની જ્ઞાનગંગાનો લાભ લઈ શકે તે માટે તેઓશ્રીએ સંસ્કૃત, પ્રાકૃત, ગુજરાતી અને કવચિત મારવાડી ભાષામાં પણ સાહિત્ય લખ્યું છે. તેઓશ્રીની અપૂર્વ સાહિત્યસેવાનો વાસ્તવિક ખ્યાલ આપણા વિદ્વદ્વર્ગમાં પણ જોઈએ તેટલા પ્રમાણમાં નથી. આમ જનતા તો તેઓશ્રીની સાહિત્ય–સેવાથી ભાગ્યે જ પરિચિત હશે.

જૈન સંસ્કૃતિના એક મહાન જ્યોતિર્ધરથી જૈન સમાજ પણ પૂર્ણ પરિચિત ન હોય તે આપણા માટે અયોગ્ય ગણાય.

મુંબઈએ આવી ચમકતી વિભૂતિને બહાર લાવવા માટે સુપ્રયાસ કર્યો છે તે ખરેખર અભિનંદનનો વિષય છે. મુંબઈનો આ મહોત્સવ એ દિવસનો માત્ર જલસો બની ન રહે પરંતુ તેમાંથી કંઈક સક્રિય પરિણામ આવે તે માટે મહોત્સવ કમિટિએ એક સમિતિ નિયુક્ત કરી જે રચનાત્મક કાર્યની શરૂઆત કરી છે તે ખરેખર અભિનંદનીય છે.

આ કમિટિએ ઉપાધ્યાયજીને અંગે ત્રણ યોજના કરી છે અને શરૂઆતમાં ડભોઈ કે જ્યાં તેઓશ્રી સ્વર્ગવાસ પામ્યા હતા. ત્યાં સુયોગ્ય કળાયુક્ત સ્મારક ઊભું કરવાનો તેમજ શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજનું સર્વાંગ સુંદર એક જીવનચરિત્ર તૈયાર કરવાનો નિર્ણય કર્યો છે અને વધુમાં ત્રીજી યોજનામાં ઉપાધ્યાયજીની સર્વ કૃતિઓ શુદ્ધ સ્વરૂપમાં પ્રગટ કરવાનો પણ નિર્ણય કર્યો છે.

મુંબઈના આ નિર્ણયને અમો આવકારીએ છીએ. અને ઇચ્છીએ છીએ કે ડભોઈનું સ્મારક કે ઉપાધ્યાયજીનું જીવન–ચરિત્ર તૈયાર કરીને કમિટિ બેસી ન રહે, ઉપાધ્યાયજીનો વાસ્તવિક પરિચય તો તેઓશ્રીની અમૂલ્ય સાહિત્યસેવામાં રહેલો છે. તેઓશ્રીનું તમામ સાહિત્ય તો આજે ઉપલબ્ધ નથી. પ્રાપ્ત થએલ સાહિત્યમાં પણ કેટલુંક ત્રુટક છે અને ત્રુટક ભાગને જૈન સાહિત્યસેવીઓએ પૂર્ણ કરવાનો પ્રયાસ પણ કર્યો છે, પરંતુ આ કાર્ય એટલું ભગીરથ અને વિશાળ છે કે તે માટે છૂટાછવાયા થએલ પ્રયાસો બસ નથી. આ માટે તો સામુદાયિક પ્રયાસ, પૂર્ણ ઉત્સાહ અને ઊંડી યોજનાપૂર્વક કરવો ઘટે. મુંબઈની કમિટિ આ વસ્તુનો પુખ્ત વિચાર કરે અને પોતે શરૂ કરેલ મહત્વનું કાર્ય યશપૂર્વક પાર પાડવામાં સફળતા પ્રાપ્ત કરે તેમ અમો ઇચ્છીએ છીએ.

મુંબઈખાતે ઉજવાએલ આ મહોત્સવના પ્રાણદાતા ઉપાધ્યાયજી ધર્મવિજયજી મહારાજના વિદ્વાન શિષ્યરત્ન મુનિ મહારાજશ્રી યશોવિજયજી મહારાજને અમો આ તકે ભૂલી શકતા નથી. તેઓશ્રી ડભોઈના જ છે અને ઉપાધ્યાયશ્રીનું સ્વર્ગગમન પણ ડભોઈમાં જ થયું છે મહોત્સવ સમયના ભાષણમાં તેઓશ્રીએ કહ્યું છે તેમ ઉપાધ્યાયજીને અંગે કંઈક કરી છૂટવાની તમન્ના તેઓશ્રીના દિલમાં ઘણા સમયથી જાગી હતી. અને એ ભાવનાને આજે મૂર્ત સ્વરૂપ મળતું જોઈ તેઓ આનંદ પામે છે. અને સાથોસાથ આપણે ઇચ્છીએ છીએ કે પોતાનું સિદ્ધ થતું સ્વપ્ન પાર પાડવામાં તેઓશ્રી પૂર્ણ સહકાર આપતા રહે.

卐

'મુંબઈ સમાચાર' દૈનિક પત્રનો તા. ૨૭-૮-૫૧ નો ઉતારો

—તાર્કિક શિરોમણિ શ્રીમદ્ યશોવિજયજી—

ડભોઈમાં તેમના સ્મારકનો મંગળવિધિ

ડભોઈ, તા. ૨૦ મી ઑગસ્ટ

આજથી ત્રણસો વરસ ઉપર જૈન ધર્મના છેલ્લા મહાન તાર્કિક શિરોમણિ સેંકડો ગ્રન્થોના રચયિતા, છએ દર્શનના નિષ્ણાત, ન્યાયાચાર્ય, ન્યાયવિશારદ શ્રીમદ્ યશોવિજયજી જેઓ ડભોઈ મુકામે સ્વર્ગવાસ થયેલા અને ત્યાં તેમના સમાધિ સ્થળે તેમની પાદુકા અને ગુરૂ મંદિર બાંધવામાં આવેલું, પરંતુ તે તેઓશ્રીને છાજે તેવું ન હતું તેથી તેઓશ્રીને અનુરૂપ ભવ્ય સ્મારક થાય તેવી પ્રબળ ઇચ્છા મુનિશ્રી યશોવિજયજી જેઓ ડભોઈના વતની છે તેઓશ્રીને જન્મેલી અને તે પૂજ્ય ગુરૂદેવો આગળ વ્યક્ત કરતાં તેઓશ્રીએ વધાવી લીધી હતી.

જૈન ધર્મના છેલ્લા મહાન સર્જકને જ્યોતિર્ધરની મહાનતાને જૈન સમાજ સારી રીતે જાણતો થાય તેવી, લાંબા વખતની ભાવનાને ચાલુ સાલમાં શ્રી મુંબઈ ભાયખલા મુકામે તેઓશ્રીનો બે દિવસનો 'ગુણાનુવાદ મહોત્સવ' પરમ પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી. વિજય પ્રતાપસૂરીશ્વરજી. પૂજ્યપાદ આચાર્ય શ્રી. વિજય ધર્મસૂરીશ્વરજી, પૂજ્ય મુનિશ્રી યશોવિજયજીની હાજરીમાં ઉજવવામાં આવ્યો ત્યારે મૂર્ત સ્વરૂપ મળ્યું હતું.

તેનું ખાતમુહૂર્ત શ્રાવણ સુદ તેરસની સવારે શેઠ વાડીલાલ ચતુર્ભુજે ઘણી જ ધામધુમથી વિદ્વાન જૈનાચાર્ય શ્રીમાન્ અમૃતસૂરીશ્વરજી તથા મહારાજશ્રી ધુરંધરવિજયજીની હાજરીમાં હજારો માણસોની માનવ મેદની વચ્ચે વાજતે ગાજતે કર્યું હતું.

જાહેર થએલી સખાવતો

તે પ્રસંગે જાહેર સભા યોજવામાં આવી હતી. શેઠ વાડીભાઈએ તે શુભ પ્રસંગે ગુરૂ મંદિરના કાર્યમાં રૂા. ૨૫૦૧ ની રકમ તથા અન્ય મિત્રોની રકમ તથા શ્રી ડભોઈ જૈન સંઘ તરફથી સારી રકમો ભેટ કરવામાં આવી હતી. તથા અન્ય સખાવતો પણ થઈ હતી.

★

卐

तपः श्रुतादिना मत्तः, क्रियावानपि लिप्यते ।
भावना ज्ञानसम्पन्नो – निष्क्रियोऽपि न लिप्यते ॥

समलं निर्मलं चेद – मिति द्वैतं यदा गतम् ।
अद्वैतं निर्मलं ब्रह्म, तदैकमवशिष्यते ॥

卐

ઉ. શ્રીયશોવિજયજી] [અધ્યાત્મોપનિષત્

નોંધઃ—ગીત વર્ષે મુંબઈમાં ઉજવાએલા ગુણાનુવાદ મહોત્સવની આમંત્રણ પત્રિકા

પરમપ્રભાવક શ્રીગોડીપાર્શ્વનાથાય નમઃ

જૈન શાસનના મહાન જ્યોતિર્ધર, સકલશાસ્ત્ર પારંગત મહોપાધ્યાય ૧૦૦૮

શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજનો

—: ગુણાનુવાદ ઉત્સવ :—

[તિથિ—માગશર સુદિ ૧૧ રવિવાર—ગોડીજી જૈન ઉપાશ્રય]

વિ. વિ. સાથે જણાવવાનું કે જૈન શાસનના પરમપ્રભાવક, સેંકડો ગ્રંથોના રચયિતા, અસાધારણ દાર્શનિકવિદ્વાન, ષડ્દર્શનના સમન્વયસાધક, ન્યાય, સાહિત્ય, છંદ, અલંકાર, અધ્યાત્મ, યોગ, આચાર, ન્યાગ, ભક્તિયોગ, કર્મયોગ ઈત્યાદિ અનેકવિધ વિષયો ઉપર સંસ્કૃત, પ્રાકૃત ભાષામાં, વિપુલ સાહિત્ય સર્જનાર, એ જ વિષયોને તત્કાલીન લોકભાષામાં ઉતારીને સુંદર કાવ્યોની હારમાળા ખડી કરી વિદ્વાન—અવિદ્વાન સમાજ ઉપર અજોડ ઉપકાર કરનાર, પરમ કૃપાલુ સ્વર્ગસ્થ મહર્ષિ ન્યાયાચાર્ય, ન્યાય વિશારદ મહોપાધ્યાય ૧૦૦૮ શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજ સાહેબનો 'ગુણાનુવાદ ઉત્સવ' ગોડીજી જૈન ઉપાશ્રયમાં પૂજ્યપાદ પરમ ઉપકારી આચાર્ય દેવ શ્રીમદ્ વિજય પ્રતાપ સૂરીશ્વરજી મહારાજના પટ્ટધર પરમપૂજ્ય વિદ્વદ્વર્ય આચાર્ય શ્રીમાન ધર્મ સૂરીશ્વરજી મહારાજના શિષ્ય પરમ પૂજ્ય મુનિરાજ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજની અધ્યક્ષતામાં ઉજવવાનો નિર્ણય કર્યો છે. તેનો કાર્યક્રમ નીચે મુજબ છે.

—કાર્યક્રમ—

માગશર સુદિ અગીયારસ રવિવાર તા. ૧૦—૧૨—૫૧

સવારે ૯ વાગે—શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજના નવા ઓર્ડરપોર્ટ્રેટ કરાવેલા ફોટાનો અનાવરણ તથા અર્ચન વિધિ.

આગાઓનું મંગલાચરણ. ત્યારબાદ જુદા જુદા વિદ્વાન વક્તાઓનું ગુણકીર્તન

રાતના ૮ વાગે—ઉપાશ્રયમાં જ સ્વર્ગસ્થની અનાવેલી સ્તવના—પદો દ્વારા ગાયિ ભજનકુ શ્રી નાનુભાઈની મંડળી, તથા સંગીતકાર શ્રી મણિલાલ સંગીતના સાજ સાથે ભક્તિભાવ પૂર્વક કરશે

તો આપણા શાસનના મહાન ઉપકારી સદ્‌ગુરુદેવની ઉજવણીમાં દરેક જૈન ભાઈઓ અને બહેનોને અવશ્ય હાજરી આપવા આગ્રહભરી વિનંતિ છે.

લી. સંઘ સેવકો
શ્રી યશોવિજયજી સ્મારક સમિતિના
મંત્રીઓ,

મૂલચંદ વાડીલાલ દોલતરામ
ફૂલચંદ ઝવેરભાઈ
વીરચંદ નાગજીભાઈ

ગોડીજી જૈન ઉપાશ્રય
પાયધુની—મુંબઈ.
તા. ૭—૧૨—૫૧

નોંધઃ—અહીંથી શ્રી યશોવિજય સારસ્વત સત્રનો વિસ્તૃત હેવાલ; તે પ્રસંગે મુદ્રિત રૂપે બહાર પડેલો તે શરૂ થાય છે, આ હેવાલ આપવાનું કારણ, આ એક પ્રસંગ પ્રેરક હતો, ઐતિહાસિક હતો. આવા બનાવો ગ્રન્થસ્થ થાય તો ભવિષ્યમાં અનેકને પ્રેરણાનું કારણ બને. ક્રમશઃ જે જે સાહિત્ય બહાર પડેલું તે ક્રમશઃ જ અત્રે મૂકવામાં આવ્યું છે. સંપા૦

जयन्तु वीतरागाः

પત્રિકા નં. ૧

શ્રી યશોવિજય સારસ્વત સત્ર

સ્થળ; ડભોઈ-ગૂજરાત

શ્રીમાન્/શ્રીમતી

સંતપ્રસૂ ગૂર્જર ભૂમિમાં જે અનેક સંતો, મહાત્માઓ અને વિદ્વાનો પ્રકટ્યા છે, તેમાં સત્તરમી સદીમાં જન્મેલા ષડ્દર્શનવેત્તા, ન્યાયાચાર્ય, ન્યાયવિશારદ, મહોપાધ્યાય પૂજ્યપાદ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજનું સ્થાન મોખરે છે. તેઓશ્રી પોતાની અપ્રતિમ વિદ્વત્તા અને વિપુલ સાહિત્ય-સર્જન શક્તિથી લઘુ શ્રીહરિભદ્રાચાર્યજી તથા દ્વિતીય શ્રીહેમચંદ્રાચાર્યજી તરીકે પ્રશંસાને પામ્યા છે. છેલ્લા ત્રણસો વર્ષમાં તેમના જેવી તાર્કિક મહાન-વિભૂતિ જૈનસમાજમાં પ્રગટી દેખાતી નથી. તેઓશ્રીએ પ્રાકૃત-સંસ્કૃત-ગૂજરાતી અને મિશ્ર ભાષામાં ગદ્ય-પદ્ય ને ઉભય શૈલીમાં લગભગ ૩૦૦ જેટલા ગ્રન્થો રચેલા છે. જેમાંના કેટલાક અપ્રસિદ્ધ છે ને મોટા ભાગના અપ્રાપ્ય છે.

કલિકાલ સર્વજ્ઞ શ્રીમદ્ હેમચંદ્રાચાર્ય મહારાજ પછી જૈન સમાજે વિપુલ સાહિત્યના સર્જનકાર અને નવ્ય ન્યાયના પ્રખર વિદ્વાન તરીકે, બીજા જ્યોતિર્ધરની ગુજરાતને ભેટ આપી છે.

તેઓશ્રીનું સ્વર્ગગમન વિ. સં. ૧૭૪૩ માં (દર્ભાવતી) ડભોઈ (જીલ્લો વડોદરા) મુકામે થએલું, જ્યાં તેમની પુનિત પાદુકા સંવત ૧૭૪૫ થી વિદ્યમાન છે. તે પાદુકા-સ્થાને નૂતન ગુરુમંદિરની રચના કરવામાં આવી છે. તેની પ્રતિષ્ઠાના શુભ પ્રસંગે સં. ૨૦૦૯ના ફાગણ વદિ સાતમ-આઠમ તા. ૭-૮, ૩-૫૩ ના રોજ "શ્રીયશોવિજયજી સારસ્વત સત્ર" રૂપે એક મહોત્સવની યોજના કરવામાં આવી છે.

આ પ્રસંગે ભારતવર્ષના અને ખાસ કરીને બૃહદ્ ગુજરાતના વિદ્વાનો એકત્ર મળે અને પરસ્પર સમ્યગ્ જ્ઞાન ગોષ્ઠી કરે એવી સમિતિની હાર્દિક ઇચ્છા છે.

આ સારસ્વત સત્રમાં હાજર રહેવા તેમ જ આ પ્રસંગને અનુરૂપ એક નિબંધ મોકલવા આપશ્રીને નમ્ર વિનંતિ છે.

આ નિબંધો યોગ્ય સમયે પુસ્તકાકારે પ્રસિદ્ધ કરવામાં આવશે.

નિબંધોનો વિષય પસંદ કરવા માટે એક સૂચી આ સાથે અમે મોકલી છે. તેમાંથી આપની પસંદગીના અથવા તેને લગતા કે પ્રસંગને અનુરૂપ બીજા કોઈ વિષય ઉપર આપ મોડામાં મોડા ફેબ્રુઆરીની આખર સુધીમાં આપનું લખાણ અવશ્ય મોકલી આભારી કરશો.

મહોપાધ્યાય શ્રીમદ્ યશોવિજયજીનાં જીવન અને કાર્યની ટૂંકી રૂપરેખા આપને બનતી ત્વરાએ મોકલવામાં આવશે.

મહોત્સવની આમંત્રણ પત્રિકા યથાસમયે મોકલાવાશે.

નિવેદકો :—

લાલચંદ્ર ભગવાન ગાંધી	ભોગીલાલ જે. સાંડેસરા
નાગકુમાર ના. મકાતી	જયભાઈ મ. જૈન

માનદ મંત્રીઓ:—શ્રી યશોવિજય સારસ્વત સત્ર સમિતિ

સૂચના:—લેખકોને વિનંતિ છે કે લેખો બને ત્યાં સુધી ઉપાધ્યાયજીનાં જીવન અને કવન અંગે તથા સૂચીમાં આપેલી તેઓશ્રીની સાથે નિકટ સંબંધ ધરાવતી બાબતો ઉપર લખવા.

નિબંધો મોકલવાનું ઠેકાણું:—વકીલ નાગકુમાર નાથાલાલ મકાતી ઠે. બાબાજીપુરા, દાંડીયાબજાર, મુ. વડોદરા (ગુજરાત)

શ્રી યશોવિજય સારસ્વત સત્ર સમિતિ

—સભ્યો—

બાલચંદ જેઠાલાલ શાહ
કાઉન્સીલર, ડભોઈ મ્યુનિસિપાલીટી
મંત્રી, શેઠ દેવચંદ ધરમચંદ પેઢી, ડભોઈ

મગનલાલ ગીરજાશંકર શાસ્ત્રી સાહિત્યભૂષણ
પ્રમુખ, દયારામ સાહિત્ય સભા, ડભોઈ

ચંદુલાલ હિંમતલાલ શાહ
કાર્યાધિકારી, સ્મારક સમિતિ, ડભોઈ

વઘાભાઈ નાથાલાલ શાહ
કાર્યાધિકારી સ્મારક સમિતિ, ડભોઈ

શાંતિલાલ મોતિલાલ શાહ
ઉપપ્રમુખ, શ્રી ય. જૈ. સેવાસદન, ડભોઈ

લક્ષ્મીનાથ બદરીનાથ શાસ્ત્રી. બી. એ. (ઓનર્સ)
નિવૃત્ત મુખ્યઅધ્યાપક, રાજકીય સંસ્કૃત મહાવિદ્યાલય, વડોદરા

પ્રો. કેશવલાલ હીંમતલાલ કામદાર, એમ. એ.
અર્થશાસ્ત્ર અને ઇતિહાસ, યુનીવરસિટિ. વડોદરા

ઉમાકાન્ત પ્રેમાનંદ શાહ એમ. એ. વડોદરા

પંડિત લાલચંદ્ર ભગવાનદાસ ગાંધી
ભૂતપૂર્વ જૈન પંડિત, પ્રાચ્ય વિદ્યામંદિર, વડોદરા

ડૉ. ભોગીલાલ જે. સાંડેસરા એમ. એ. પીએચ. ડી.
અધ્યક્ષ, ગુજરાતી વિભાગ, શ્રી મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, વડોદરા

લાલચંદ નંદલાલ શાહ
કાર્યાધિકારી, શ્રી મુક્તિકમલ જૈન મોહન જ્ઞાનમંદિર, વડોદરા
મંત્રી, શ્રી વડોદરા પાંજરાપોળ સંસ્થા, વડોદરા

નાગકુમાર નાથાલાલ મકાતી બી. એ.; એલએલ. બી.

જયભાઈ મગનલાલ જૈન
કાઉન્સીલર, ડભોઈ મ્યુનિસિપાલીટી

—નિબંધો લખવા અંગે વિષયસૂચિ—

૧ શ્રી યશોવિજયજી મ. નું જીવન અને તેમની કૃતિઓ
૨ „ ના સમકાલીક વિદ્વાનો અને તેમની કૃતિઓ
૩ „ ના સમયનું ગુજરાત
૪ „ ની દાર્શનિક વિદ્વત્તા
૫ „ નાં અધ્યાત્મ અને યોગ
૬ „ અવધાનકાર તરીકે તથા અન્ય અવધાનકારો
૭ „ નું ગૂર્જર સાહિત્ય
૮ „ મહારાજ અને તેમનાં બિરૂદો (ન્યાય વિશારદ, ન્યાયાચાર્ય, વાચક–ઉપાધ્યા
૯ „ ના ગુરૂબંધુઓ [શ્રી પદ્મવિજયજીઆદિ]
૧૦ „ ના દીક્ષાગુરૂ, વિદ્યાગુરૂ, અને પૂજ્યો [શ્રીનયવિજયજી, શ્રીવિજયદેવસૂરિજી અને શ્રીવિજયપ્રભસૂરિજી વગેરે]
૧૧ „ ના શિષ્યો અને ગુણાનુરાગીઓ [શ્રી તત્ત્વવિજય, શ્રી માનવિજય, શ્રી કાન્તિવિજયજી વગેરે]
૧૨ „ ના ગ્રંથો [મુદ્રિત, અમુદ્રિત, પ્રાપ્ય, અપ્રાપ્ય, સ્વતંત્ર રચનાઓ અને ટીકાઓ, સંસ્કૃત–પ્રાકૃત અને લોકભાષામાં]
૧૩ „ ની રચનાઓમાં મળતાં પ્રમાણ ગ્રંથોનાં અને ગ્રંથકારોનાં નામનો પરિચય
૧૪ „ ની જન્મભૂમિ અને દીક્ષાભૂમિ [કન્હોડુ અને પાટણ]
૧૫ „ ની વિદ્યાભૂમિ [કાશી–આગ્રા]
૧૬ „ ની વિહારભૂમિ [પાટણથી કાશી વગેરે]
૧૭ „ ની સ્વર્ગવાસ ભૂમિ [દર્ભાવતી–ડભોઈ]
૧૮ „ ના સંપર્કમાં આવેલા તાર્કિક વિદ્વાનો
૧૯ „ ના કાશીના વિદ્યાભ્યાસમાં અર્થસહાયક શેઠ ધનજી શરા કોણ હતા ?
૨૦ „ અને નવ્ય ન્યાય
૨૧ „ અને શ્રી આનંદઘનજી
૨૨ „ અને શ્રી હેમચંદ્રાચાર્યજી
૨૩ „ અને શ્રી હરિભદ્રસૂરિજી
૨૪ „ અને શ્રી સિદ્ધસેન દિવાકરજી
૨૫ „ અને શ્રી મલ્લવાદિજી તથા અન્ય તાર્કિકો
૨૬ „ વિષેની કિંવદંતીઓ
૨૭ „ નો જૈન સંઘ ઉપરનો ઉપકાર અને તેમના કાર્યની થએલી અસર
૨૮ „ ની જન્મ સાલ તથા તિથિ, અને દીક્ષા, ન્યાય વિશારદ–ઉપાધ્યાય વગેરે પદ પ્રદાન અને સ્વર્ગગમનની તિથિ કઈ ?
૨૯ „ નાં રચેલાં સેંકડો ગ્રંથો અપ્રાપ્ય કેમ બન્યાં ?
૩૦ „ ની આચાર્યપદની પરિપૂર્ણ યોગ્યતા છતાં તે કેમ ન થઈ શકી તેનાં કારણો
૩૧ „ નાં પોતાના જ હસ્તાક્ષરથી લખેલી પ્રતિઓ તેમજ અન્ય લેખકો દ્વારા લખાએલી કૃતિઓ ક્યાં ક્યાં છે તે અને તેનો પરિચય
૩૨ „ 'શ્રુતકેવળી' જેવી મહાઉપમા, તેમ જ 'લઘુહરિભદ્ર' બીજા હેમચંદ્ર, તરીકે પ્રશંસાયા તેનાં કારણો
૩૩ „ ના ડભોઈમાં વર્તતા સમાધિસ્તૂપના પ્રાચીન–અર્વાચીન સ્થળનોતથા ચીન તથાઈનો પરિચય અને જીર્ણોદ્ધારો

૩૪ „ ની પાદુકાસ્થાપન ભૂમિ પ્રથમથી શું આજ હતી?

૩૫ „ ને મૂર્તિ અને મૂર્તિપૂજાના વિરોધીઓ, ઇતર ગચ્છો–સંપ્રદાયોને પક્ષકારનાં વિરોધીઓ તરફથી સહન કરવું પડેલું ખરું?

૩૬ „ ની પાદુકા ઉપર ૧૭૪૫ની સાલમાં અમદાવાદમાં પ્રતિષ્ઠા કર્યાનું લખ્યું છે તો તે પ્રતિષ્ઠા કોણે કરેલી? કોણ કોણ હાજર હતું? પાદુકાને ડભોઈ ક્યારે ને કેવી રીતે લાવવામાં આવી? અને ડભોઈમાં કોણી હાજરીમાં પ્રતિષ્ઠાદિ કાર્યો થએલાં?

૩૭ „ કાશીમાં કેટલાં વર્ષો રહ્યા? તે અને ત્યાંના પ્રવૃત્તિઓ

૩૮ „ ની સ્વર્ગારોહણ તિથિએ સ્તૂપમાંથી 'ન્યાયધ્વનિ' પ્રગટે છે. એટલે શું?

૩૯ „ ની ગ્રંથ–સાહિત્યકૃતિઓ અને તેઓશ્રીના આદર્શોના પ્રચાર માટે શું કરવું જોઈએ? તેની યોજના

૪૦ „ ના નામ સાથે સંકળાએલી સંસ્થાઓનો પરિચય, તથા તેમની મુદ્રિત કૃતિઓ કોણે કોણે છપાવી વગેરે

૪૧ „ ની સરસ્વતી સાધના અને 'ऐँ' પદનો કરેલો ઉપયોગ

૪૨ „ ના નય–નિક્ષેપ–તર્ક–પ્રમાણને સપ્તભંગીવાદની વિશેષતાઓ

૪૩ „ ની નવ્યન્યાયની વિદ્વત્તાથી જૈન સિદ્ધાન્તો ને માન્યતાઓમાં શું નવીનતા પ્રગટી

૪૪ „ નાં જીવન અને સાહિત્યક વિષયમાં આજ સુધીમાં કયા કયા વિદ્વાને ક્યાં ક્યાં વિવેચન કર્યું છે તે

૪૫ „ નાં કાર્યની અવશિષ્ટ રહેતી બાબતો (પદો–સ્તવનો–સજ્ઝાઓ બનારસીદાસ, જ્ઞાનવાદ, ક્રિયાવાદ, ભક્તિવાદ, ક્રાન્તિકારી વ્યક્તિત્વ, ભાષાશૈલી, ગ્રન્થનામ કરણ રહસ્ય, ગ્રન્થ રચના ક્રમ, અનુકરણ શું કર્યું છે તે, વગેરે)

અન્ય વિષય સૂચી

૧ આજના સંતપ્ત વિશ્વમાં શાંતિ સ્થાપવામાં જૈની અહિંસા કેવી રીતે સફળ અને ઉપયોગી થાય?

૨ મહારાજા શ્રી કુમારપાળની અહિંસાનો પ્રભાવ કેટલા દેશો પર પડેલો અને તેથી શું લાભો થયેલા

૩ સ્યાદ્વાદની વ્યાખ્યા અને તેનો જીવનના વ્યવહારોમાં શો ઉપયોગ

૪ ભારતીય દર્શનોમાં નવ્યન્યાયનો પ્રારંભ ક્યારથી થયો? અને પ્રાચીન ન્યાય અને નવ્યન્યાય વચ્ચેનું અંતર અને વિશેષતાઓ

૫ શ્રી સિદ્ધસેન દિવાકરજી, શ્રી હરિભદ્રસૂરિજી, શ્રી હેમચંદ્રાચાર્યજી, શ્રી યશોવિજયજી વચ્ચેનું સામ્ય, પ્રત્યેકનો પરિચય અને જૈનધર્મની તેમની સેવાઓ

૬ જૈનધર્મ તેની મહાનતા તેના સિદ્ધાન્તો અને તેની પ્રાચીનતા

૭ શ્રી હેમચંદ્રાચાર્યજીનું જીવન અને કવન

૮ શ્રી સિદ્ધહેમ વ્યાકરણ ને હેમકોષની વિશેષતાઓ

૯ જગદ્ગુરુ શ્રી હીરસૂરીશ્વરજી ને સમ્રાટ્ અકબર

૧૦ બૃહદ્ ગુજરાતમાં જૈનધર્મ અને તેનું શિલ્પ સ્થાપત્ય

૧૧ બૃહદ્ ગુજરાતના રાજાઓ, મંત્રીઓ, આચાર્યો અને તેમનું કાર્ય

૧૨ બૃહદ્ ગુજરાતમાં જૈન ધર્મીઓની સંખ્યા અને તેમના અહિંસક જીવનની અન્ય ધર્મીઓ ઉપર અસર

૧૩ ભારતવર્ષના ઉત્કર્ષમાં જૈન મુનિઓ અને ગૃહસ્થોનો ફાળો

૧૪ ગુજરાતીઓ પ્રાકૃત–સંસ્કૃત ભાષામાં કયા કયા ગ્રન્થો રચ્યા છે

૧૫ જૈન સિદ્ધાન્તો તેના ઉપદેશો અને જૈન સંસ્કૃતિના પ્રચાર માટે શું કરવું જોઈએ.

★

શ્રી. ય. સાં. સત્ર, ડભોઈ

નોંધ—સદર પ્રસંગે જૈન સંઘને મોકલાવાયેલી કંકોત્રીની નકલ

अनन्तलब्धिनिधानाय श्रीमते गौतमगणधराय नमः ॥
वाचकशिरोमणिश्रीमद्यशोविजयजीगणिगुरुभ्योनमः ॥
महाप्रभावक—पुरुषादानीय श्रीलोढणपार्श्वनाथाय नमोनमः ॥

ન્યાયાચાર્ય ન્યાયવિશારદ મહોપાધ્યાય પૂજ્ય ૧૦૦૮ શ્રીમદ્ યશોવિજયજીગણિવરની મૂર્તિના પ્રતિષ્ઠામહોત્સવ નિમિત્તે

મુ. ડભોઈ } **શ્રીસંઘ—આમંત્રણ પત્રિકા** { ગૂજરાત

卐 ॐ नमः परमानन्द-निधानाय महस्विने । दर्भावतीपुरोत्तंस-पार्श्वनाथाय तायिने ॥१॥ 卐

अर्हद्वक्त्रप्रसूतं गणधररचितं द्वादशाङ्गविशालं,
चित्रं बह्वर्थयुक्तं मुनिगणवृषभैर्धारितं बुद्धिमद्भिः ।
मोक्षाग्रद्वारभूतं व्रतचरणफलं ज्ञेयभावप्रदीपं,
भक्त्या नित्यं प्रपद्ये श्रुतमहमखिलं सर्वलोकैकसारम् ॥१॥

卐

न्याये गौतम एव कोऽपि कणभुग् वैशेषिके दर्शने,
शाब्दे पाणिनिरेव यः समभवत् मीमांसके जैमिनिः ।
स्याद्वादे च यदीयबुद्धिरमला नैसर्गिकी तं गुरुं,
न्यायाचार्य 'यशो' यतिं मुनिमहोपाध्याय पादं नुमः ॥१॥

સ્વસ્તિ શ્રી પાર્શ્વજિનં પ્રણમ્ય મહાશુભસ્થાને જિનચૈત્યોપાશ્રયાદિ ધર્મસ્થાન વિભૂષિતે શ્રી ________ નગરે દેવગુરુભક્તિકારક પુન્યપ્રભાવક પંચપરમેષ્ઠિમહામંત્રસ્મારક શ્રદ્ધાસંપન્ન સુશ્રાવક શ્રેષ્ઠિવર્ય શ્રીમાન્ ________ વગેરે શ્રીસંઘ સમસ્ત જોગ.

ડભોઈથી લિ૦ શ્રી વિજયદેવસૂરિ જૈન સંઘ સમસ્તના સબહુમાન પ્રણામ સાથે જયજિનેન્દ્ર વાંચશોજી. અહિં દેવગુરૂકૃપાથી આનંદ મંગલ વર્તાય છે, આપ શ્રીસંઘના કુશલ સમાચાર ઈચ્છીએ છીએ.

વિ. વિ. સાથે સહર્ષ જણાવવાનું જે—મહાપ્રભાવક અર્ધપદ્માસને બિરાજમાન શ્રી લોઢણ-પાર્શ્વનાથ, શ્રી શામલાપાર્શ્વનાથ, શ્રી પ્રગટપ્રભાવક પાર્શ્વનાથ શ્રી આદીશ્વર પ્રભુ વગેરે અતિ પ્રાચીન—પરમાનંદદાયક દેવાધિદેવ–શ્રી જિનેશ્વર ભગવંતની પ્રતિમાઓથી અલંકૃત, ગગનચુંબી–શિખર-બંધી, શિલ્પ અને કળાના ભવ્ય નમૂના સમાન અનેક જિન મંદિરો અહિં હોવાથી અમારૂં ડભોઈ શહેર (દર્ભાવતી નગરી) તીર્થભૂમિ જેવું પવિત્ર સ્થાન ગણાય છે. વિ. સં. ૧૭૪૩માં અહિં ડભોઈમાં સ્વર્ગસ્થ થયેલા, જૈન સંઘના પરમ ઉપકારી, મહાગુજરાતના મહાન્ જ્યોતિર્ધર પૂજ્ય મહોપાધ્યાયજી શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજના પવિત્ર ચરણ પાદુકાવાળા સ્થૂભ (સમાધિસ્થળ) નું વિ. સં. ૧૭૪૫ થી વિદ્યમાનપણું થતાં, તે સ્થળે કોઈ કોઈવાર 'ન્યાયધ્વનિ' પ્રગટ થતો હોવાથી તેમજ આધ્યાત્મિક વાતાવરણ માટે અનુપમ સ્થળ બનવાને અંગે આ તીર્થભૂમિની મહત્તામાં ખૂબ વૃદ્ધિ થઈ છે. અને તેથીજ લગભગ ઘણાખરા આચાર્ય મહારાજાદિ પૂજ્ય મુનિવરો આ પવિત્ર ભૂમિના દર્શન–સ્પર્શન માટે આજ સુધીમાં પધાર્યા છે. કાળક્રમે આ સમાધિસ્થળ (સ્થૂભ) જીર્ણ થતાં–પૂજ્યપાદ, શાસન પ્રભાવક, શુદ્ધપ્રરૂપક, આચાર્ય મહારાજ ૧૦૦૮ શ્રીમાન્ વિજય મોહનસૂરીશ્વરજી મહારાજના પટ્ટાલંકાર, પૂજ્યપ્રવર, પ્રાતઃસ્મરણીય આચાર્ય મહારાજ ૧૦૦૮ શ્રીમાન્ વિજય-પ્રતાપસૂરીશ્વરજી મહારાજ, તથા તેમના શિષ્યરત્ન વિદ્વદ્વર્ય તાત્વિક વ્યાખ્યાતા, પરમપૂજ્ય

તે ઉપરાંત હંમેશા ભવ્ય અંગરચના, રાત્રે ભાવના તથા બ્હેનોનાં ધર્મગીતો રાખવામાં આવશે. પૂજા-ભાવના માટે અહિંના જાણીતા સંગીતકાર શ્રીયુત મુલજીભાઈ ચુનિલાલ તથા માસ્તર સુંદરલાલ મુલજીભાઈ ઉપરાંત સુશ્રાવક પ્રભુભક્તિપરાયણ શ્રીયુત્ મોહનલાલ પાનાચંદ સુરતવાલા તથા પાદરા જૈન સંગીત મંડળ પણ આવનાર છે.

વિધિ-વિધાન માટે ધર્મ શ્રદ્ધાળુ શ્રેષ્ઠિવર્ય બાલુભાઈ ઉત્તમચંદ સુરતવાલા તથા ડભોઈવાળા શાહ જીવણલાલ ચુનિલાલ આવનાર છે. આ મહોત્સવ પ્રસંગે પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજનાં 'જીવન દર્શનોની રચના' તેમ જ તેઓશ્રીની પ્રાચીન હસ્તલિખિત તથા મુદ્રિત કૃતિઓનું તથા પૂ. ઉપાધ્યાયજીની સ્વહસ્તાક્ષરી કૃતિઓનું તથા જૈન સ્થાપત્ય અને શિલ્પકળાનું સુંદર 'સાહિત્ય પ્રદર્શન' પણ ગોઠવવામાં આવનાર છે.

વળી આ શુભ પ્રસંગે અમારી આગ્રહભરી વિનંતિનો સ્વીકાર કરી પૂ. આચાર્ય શ્રી વિજય પ્રતાપસૂરીશ્વરજી મહારાજ, પૂ. આચાર્ય શ્રી માણેકસાગરસૂરીશ્વરજી મહારાજ સપરિવાર, પૂ આચાર્ય શ્રી વિજય ધર્મસૂરિજી મહારાજ, અવધાનકાર પૂ. મુનિપ્રવર શ્રીમાન યશોવિજયજી મહારાજ, પૂ. શતાવધાની મુનિશ્રી જયાનંદ વિજયજી મહારાજ, મુનિશ્રી કનકવિજયજી, મુનિશ્રી વાચસ્પતિવિજયજી, મુનિશ્રી મહાનંદવિજયજી, મુનિશ્રી સૂર્યોદય વિજયજી વગેરે શિષ્ય-પ્રશિષ્યોના મંડળ સાથે અહિં પધારવાના છે. આપને પણ અમારી આગ્રહભરી વિનંતિ છે કે—આ શુભ પ્રસંગે અત્ર પધારી શાસન શોભામાં વૃદ્ધિ કરશો. અહિં આવવાથી અહીંના ભવ્ય જિનાલયો, શ્રીયુગાદિજિનપાદુકા મંદિર, પાવાપુરી-જલમંદિર, શ્રી મોહન ગુરુમંદિર વગેરેનાં દર્શન સાથે પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજાદિ મુનિ મંડલનાં દર્શન-વંદન, વ્યાખ્યાન શ્રવણનો પણ લાભ પ્રાપ્ત થશે.

મુ. ડભોઈ
ઠે શ્રીમાળી વગા
શેઠ દેવચંદ ધરમચંદની પેઢી
સંવત ૨૦૦૯, ફાગણ શુ. ૧૩ ગુરુવાર

લિ૦ શ્રી વિજય દેવસૂરિ જૈન સંઘનાં
સબહુમાન પ્રણામ વાંચશોજી.

તા. ક. : બહાર ગામથી આવનાર સાધર્મિક ભાઈઓ બ્હેનો માટે ફાગણ વદિ ૬-૭-૮ (શુક્ર-શનિ-રવિ) ભક્તિ કરવાની અમારી ભાવના છે. આવનાર ભાઈઓ-બ્હેનોને બિસ્તરો સાથે લાવવા વિનંતિ છે. વડોદરા-વિશ્વામિત્રી તથા પ્રતાપનગર સ્ટેશનથી તેમજ મોટી લાઈનના મીયાગામ સ્ટેશનથી ડભોઈ જવા માટે રેલ્વેની સવારથી સાંજ સુધીમાં ચાર-પાંચ ગાડીઓ મળે છે.

— ક્રોધ ન કરવા વિષે —

જબ લગે સમતા ક્ષણું નહિ આવે, જબ લગે ક્રોધ વ્યાપક હે અંતર;
તબ લગે જોગ ન સોહાવે. જબ૦ ૧

બાહ્યક્રિયા કરે કપટ કેળવે, ફિર વો મહંત કહાવે,
પક્ષપાત કબહુ નહિ છોડે, ઉનકું કુગતિ બોલાવે. જબ૦ ૨

નોંધ : સત્ર પ્રસંગે બહાર પડેલા પોસ્ટરની નકલ.

श्रीलोढणपार्श्वनाथाय नमः

卐 ચલો ડભોઈ 卐

જૈન શાસન દીપક, ગૂર્જર દીપક, સત્ય ગવેષક, નિર્ગ્રંથ અને સમર્થ સમાલોચક, જૈન જગતમાં નવ્ય ન્યાયના શ્રીગણેશ માંડનાર, સંસ્કૃત–પ્રાકૃત તેમજ ગુર્જરાદિ લોકભાષામાં પણ સમ્યગ્ જ્ઞાનનો વિપુલ સાહિત્ય ભંડાર અનુપમ રીતે રચનાર, 'લઘુહરિભદ્ર' અને 'દ્વિતીય હેમચંદ્ર'નું ગૌરવશાળી બિરુદ પ્રાપ્ત કરનાર, કાશી જેવા વિદ્યાના ધામમાં અનેક વિદ્વાનો સમક્ષ જૈન ધર્મનો વિજય ધ્વજ ફરકાવનાર, કટોકટીના સમયે શ્રીવીરશાસનની જ્યોતિને સુરક્ષિત રાખનાર, નિર્મળ શ્રદ્ધા અને પવિત્ર સંયમના મૂર્તિમાન પુંજ સમા, સમ્યગ્જ્ઞાનના આજીવન ઉપાસક, આરાધ્યપાદ, મહાન્ વિભૂતિ, પ્રાતઃસ્મરણીય, ન્યાયાચાર્ય, ન્યાયવિશારદ મહોપાધ્યાય ૧૦૦૮ શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજની નવા આરસના ગુરુ મંદિરમાં થનારી મનોહર મૂર્તિની પ્રતિષ્ઠા તથા "શ્રીયશોવિજય સારસ્વત સત્ર" —જ્ઞાનોત્સવ પ્રસંગની વિરલ ઘડીમાં:—

અવશ્ય ડભોઈ પધારો

સત્રના પ્રમુખ : તર્ક મીમાંસા ન્યાયરત્નાકર દાર્શનિક વિદ્વાન શ્રીમાન્ બેચરદાસજી પંડિતજી
સાહિત્ય પ્રદર્શનનું ઉદ્ઘાટન : શેઠ પરશોત્તમદાસ સૂરચંદ ધાંગધ્રાવાળાના શુભ હસ્તે થશે.

કાર્યક્રમ

ફાગણ વદિ ૭ શનિવાર, તા. ૭ માર્ચ.

૧. સવારે ૧૧—૪૫ કલાકે પ્રતિષ્ઠા.

પ્રતિષ્ઠાકાર્ય પૂજ્યપાદ આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજય પ્રતાપસૂરીશ્વરજી મહારાજ તથા પૂ૦ આચાર્ય શ્રીમદ્ માણિક્યસાગર સૂરીશ્વરજી મહારાજ, પૂજ્યપાદ આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજયધર્મસૂરિજી મહારાજ તથા પૂ. મહારાજશ્રી યશોવિજયજી વગેરેની અધ્યક્ષતામાં થશે.

૨. બપોરે ૧ વાગે શ્રી યશોવિજયજી સારસ્વત સત્રનું ઉદ્ઘાટન, અને સત્રના પ્રમુખશ્રી વગેરેનાં ભાષણ.

ફાગણ વદ ૮ રવિવાર, તા. ૮ માર્ચ.

૧. સવારે ૯ કલાકે સંસ્કૃત વિદ્વાનોનાં જૈન સંસ્કૃતિને લગતાં પ્રવચનો.
૨. બપોરે ૨ કલાકે નિબંધ વાચન વગેરેનો રોચક કાર્યક્રમ.

આ સિવાય અન્ય વિવિધ કાર્યક્રમ તથા ભક્તિરસનો આધ્યાત્મિક કાર્યક્રમ વગેરે પ્રસંગ ઉપર સ્થાનિક જાહેર કરાશે.

શ્રીમાળી વગા, ડભોઈ
તિથિ ફા. સુદિ ૧૨ સં. ૨૦૦૯
તા. ૨૬-૨-'૫૩

શ્રી વિજય દેવસૂરિ જૈન સંઘ
તથા શ્રી 'યશોવિજયજી સારસ્વત સત્ર' સમિતિ

નોંધ : વ્યક્તિગત મોકલવામાં આવેલી ગુજરાતી, ઇંગ્લીશ પૈકી
ગુજરાતી આમંત્રણ પત્રિકાનો નમૂનો.

जयन्तु वीतरागाः ।

श्री यशोविजय सारस्वतसत्र महोत्सव

निमंत्रण पत्रिका

स्थल : डभोई. [वडोदरा जील्लो, गूजरात]

उजवणी तिथि : फागण वदि सातम, आठम. वार : शनि, रवि

उजवणी तारीख : मार्च : सातमी, आठमी. „ „ „

શ્રીમાન્,

સંતપ્રસૂ ગૂર્જર ભૂમિમાં સત્તરમી સદીના ઉત્તરાર્ધમાં અવતરેલા ષડ્દર્શનવેત્તા, સેંકડો ગ્રંથોના રચયિતા, ન્યાય, વ્યાકરણ, સાહિત્ય, અલંકાર, છંદ, કાવ્ય, તર્ક, સિદ્ધાન્ત, આગમ, નય, પ્રમાણ, અધ્યાત્મ, યોગ, સ્યાદ્વાદ, આચાર, તત્ત્વજ્ઞાન, ઉપદેશ ઇત્યાદિ વિષયો ઉપર સંસ્કૃત, પ્રાકૃત અને સામાન્ય જનતા માટે ગૂજરાતી વગેરે લોક ભાષામાં પણ, વિપુલ સાહિત્યનો રસથાળ ધરનાર, નવ્ય ન્યાયના આદ્ય જૈન વિદ્વાન, પંડિત પ્રવર, કૂર્ચાલી શારદ, ન્યાયાચાર્ય, ન્યાય-વિશારદાદિ, બિરુદોને પ્રાપ્ત કરનાર, જ્ઞાનવારિધિ **મહોપાધ્યાય શ્રી ૧૦૦૮ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજના** અંતિમ **સમાધિસ્થાને**, ઇતિહાસ પ્રસિદ્ધ **દર્ભાવતી-ડભોઈ** નગરીમાં શીત-સરોવરના રમણીય કિનારે તેઓશ્રીની 'ચરણ-પાદુકા' વિ. સં. ૧૭૪૫થી સ્થાપિત થયેલી છે.

તે સ્થાને હાલમાં આરસના નવીન ભવ્ય '**થૂભ**'-ગુરુ મંદિરની રચના કરવામાં આવેલી છે. તેની પ્રતિષ્ઠાના શુભ અવસરે વિ. સં. ૨૦૦૯ના ફાલ્ગુન માસની કૃષ્ણપક્ષની તિથિ સપ્તમી-અષ્ટમી. તા. ૭-૩-'૫૩ અને તા. ૮-૩-'૫૩ને શનિ અને રવિવારના દિવસોમાં '**શ્રી યશોવિજયજી સારસ્વત સત્ર**' રૂપે એક મહોત્સવની યોજના કરવામાં આવી છે.

આ સત્રનું પ્રમુખપદ સ્વીકારવા પંજાબ-લાહોરના દાર્શનિક વિદ્વાન **પંડીતજી શ્રીમાન ઇશ્વરચંદ્રજીએ** અનુમતિ આપી છે.

આ પ્રસંગે ભારતવર્ષના અને ખાસ કરીને ગુજરાતના વિદ્વાનો એકત્ર થાય અને ઉપાધ્યાયજીના પ્રેરક અને આદર્શ જીવન ઉપર પ્રકાશ ફેંકે તેમજ પરસ્પર સમ્યગ્ જ્ઞાનગોષ્ઠી કરે એવી સમિતિની હાર્દિક ઇચ્છા છે.

આપને આ મહોત્સવમાં ભાગ લેવા અમારું હૃદયપૂર્વકનું નિમંત્રણ છે.

આશા છે કે આ જ્ઞાનોત્સવ સત્રમાં હાજરી આપી આપ અમોને આભારી કરશો.

મુ. ડભોઈ
[સ્ટેશન ડભોઈ]
જીલ્લો વડોદરા (ગૂ.)

શ્રી વિજય દેવસૂર જૈન સંઘ તરફથી
બાલચંદ જેઠાલાલ
પ્રમુખ, સ્વાગત સમિતિ

★ કાર્યક્રમ ★

સ્થળ : ડભોઈ | સ્થાન : શ્રીમાળી વાગા

તિથિ : ફાગણ વદિ ૭] [તા. ૭-૩-૫૩ શનિવાર

સમય બપોરના : ૧-૩૦ થી ૫-૩૦

૧. મંગલાચરણ અને પ્રાર્થના
૨. શ્રી યશોવિજયજી જ્ઞાન-સાહિત્ય પ્રદર્શનનું ઉદ્ઘાટન.
૩. સ્વાગત પ્રમુખનું ભાષણ, — શેઠ ખાલચંદ જેઠાલાલ
૪. સારસ્વત સત્રનું ઉદ્ઘાટન અને પ્રવચન
૫. સંદેશા વાચન
૬. સત્રના પ્રમુખનું ભાષણ, — વિદ્વદ્વર્ય દાર્શનિક વિદ્વાન શ્રીમાન ઈશ્વરચંદ્રજી (પંજાબી)
૭. નિબંધ વાચનાદિ.

સમય રાતના : ૮-૩૦ થી ૧૦-૩૦

૧. જાણીતા સંગીતકારો દ્વારા ઉપાધ્યાયજીનાં પ્રાસંગિક ગુણ ગીતો અને ઉપાધ્યાયજી રચિત આધ્યાત્મિક પદોની રસલ્હાણ વગેરે.

તિથિ : ફાગણ વદિ ૮] [તા. ૮-૩-૫૩ રવિવાર

સમય સવારના : ૯ થી ૧૨

૧. મંગલાચરણ-પ્રાર્થના
૨. સત્રનો અધૂરો રહેલો કાર્યક્રમ
૩. સંસ્કૃત વિદ્વાનોની સભા
૪. ઉપાધ્યાયજીના જીવન ઉપર તથા અહિંસા અને સ્યાદ્વાદ ધર્મ અંગે પ્રવચનો ને સંસ્કૃત ભાષામાં સંવાદની ઝલક

સમય બપોરના : ૨ થી ૫-૩૦

૧. નિબંધ વાચનાદિ
૨. ઉપાધ્યાયજીનાં સાહિત્યના પ્રકાશન અને પ્રચાર અંગે વિચાર વિમર્શ
૩. ઠરાવો અને જાહેરાતો
૪. ઉપસંહાર
૫. આભાર પ્રદર્શન વગેરે

* સત્રની કાર્યવાહી સમાપ્ત થયા બાદ પૂ૦ જૈનાચાર્ય વિજય ધર્મસૂરિજીના મંગલ આશીર્વાદ અને પૂ૦ મુનિ શ્રી યશોવિજયજીનું ઉદ્બોધન.

શ્રી યશોવિજય સારસ્વત સત્ર સમિતિ

—: સભ્યો :—

બાલચંદ જેઠાલાલ શાહ
કાઉન્સીલર, ડભોઈ મ્યુનિસિપાલીટી
મંત્રી, શેઠ દેવચંદ ધરમચંદ પેઢી, ડભોઈ

મગનલાલ ગીરજાશંકર શાસ્ત્રી સાહિત્યભૂષણ
પ્રમુખ, દયારામ સાહિત્યસભા, ડભોઈ

ચંદુલાલ હિંમતલાલ શાહ
કાર્યાધિકારી, સ્મારક સમિતિ, ડભોઈ

ડાહ્યાભાઈ નાથાલાલ શાહ
કાર્યાધિકારી, સ્મારક સમિતિ, ડભોઈ

લક્ષ્મીનાથ બદરીનાથ શાસ્ત્રી (બી. એ. ઓનર્સ)
નિવૃત્ત મુખ્ય અધ્યાપક, રાજકીય સંસ્કૃત
મહાવિદ્યાલય, વડોદરા

પ્રો. કેશવલાલ હિંમતરાય કામદાર એમ. એ.
અર્થશાસ્ત્ર અને ઇતિહાસ,
મહાવિદ્યાલય, વલ્લભવિદ્યાનગર

ઉમાકાન્ત પ્રેમાનંદ શાહ એમ. એ. વડોદરા

પંડિત લાલચંદ્ર ભગવાનદાસ ગાંધી
ભૂતપૂર્વ જૈન પંડિત, પ્રાચ્ય વિદ્યામંદિર, વડોદરા

ડૉ. ભોગીલાલ જે. સાંડેસરા એમ.એ. પી.એચ.ડી.
અધ્યક્ષ, ગુજરાતી વિભાગ, શ્રી મહારાજા
સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, વડોદરા

લાલચંદ નંદલાલ શાહ
કાર્યાધિકારી, શ્રી મુક્તિકમલ જૈન મોહનજ્ઞાન
મંદિર, વડોદરા
મંત્રી, શ્રી વડોદરા પાંજરાપોળ સંસ્થા, વડોદરા

શાંતિલાલ મોતિલાલ શાહ
ઉપપ્રમુખ, શ્રી ય. જૈ. સેવાસદન, ડભોઈ

નાણકુમાર નાથાલાલ મહાતી વકીલ બી. એ; એલએલ. બી.

જશુભાઈ મગનલાલ જૈન
કાઉન્સીલર, ડભોઈ મ્યુનિસિપાલીટી

અનિવાર્ય સંયોગોને કારણે આપ પ્રત્યક્ષ ભાગ લઈ શકો તેમ ન હો તો આપનો સંદેશો પણ અમને પ્રેરણારૂપ બનશે.

સૂચનાઓ : ૧. આપ ક્યારે પધારશો તેની જાણ અગાઉથી કરવા ખાસ વિનંતિ છે. ૨. બને ત્યાં સુધી સુવાનું સાધન સાથે લાવવા વિનંતિ. ૩. સ્ટેશન ઉપર સ્વયંસેવકો હાજર રહેશે.

* ડભોઈ આવવા માટે વેસ્ટર્ન રેલ્વેના વડોદરા પાસેના વિશ્વામિત્રી, પ્રતાપનગર સ્ટેશનથી તથા મીયાગામથી સવારથી સાંજ સુધી ટ્રેનો મળે છે.

નોંધ—ઢભોઈમાં પ્રતિષ્ઠા અને સત્રની સફળતા માટે નિમાએલી સમિતિઓ અને સભ્યોનાં નામો

શ્રી યશોવિજય સારસ્વત સત્ર તથા પ્રતિષ્ઠા નિમિત્તે કામકાજ અંગે નિમાએલી સમિતિનાં નામો

૧–સ્વાગત સમિતિ
(૧) શેઠ નગીનદાસ દોલતભાઈ
(૨) શેઠ ફકીરચંદ મગનલાલ
(૩) વકીલ છગનલાલ છોટાલાલ
(૪) શાહ છોટાલાલ દલસુખભાઈ
(૫) શાહ હિંમતલાલ બાપુભાઈ
(૬) શાહ જેઠાલાલ બાપુભાઈ
(૭) શાહ જીવણલાલ ગુલાબચંદ
(૮) શાહ જીવણલાલ કસ્તુરચંદ

૨–ઉતારા સમિતિ
(૧) શાહ સુંદરલાલ ત્રિકમલાલ
(૨) શાહ ચંપકલાલ ખુશાલચંદ
(૩) શાહ નગીનદાસ કેશવલાલ
(૪) શાહ મણિલાલ ત્રિભોવનદાસ
(૫) શાહ રમણલાલ ચુનિલાલ

૩–રસોડા સમિતિ
(૧) શાન્તિલાલ હિંમતલાલ
(૨) છગનલાલ દલસુખભાઈ
(૩) જીવણલાલ ગુલાબચંદ
(૪) મુલજીભાઈ ચુનિલાલ
(૫) ચીમનલાલ મોતિલાલ
(૬) નગીનદાસ દોલતભાઈ
(૭) ખુશાલચંદ ભવાનીદાસ
(૮) અંબાલાલ ત્રિભોવનદાસ

૪–મંડપ સમિતિ
(૧) શાહ ડીકુભાઈ મગનલાલ
(૨) શાહ ત્રિકમલાલ સવાઈચંદ
(૩) શાહ બાબુલાલ ચંદુલાલ
(૪) શાહ જયન્તિલાલ ચુનિલાલ
(૫) શાહ ચંપકલાલ મુલજીભાઈ
(૬) શાહ અમૃતલાલ ત્રિકમલાલ

૫–ઉકાળેલા પાણીની સમિતિ
શાહ હીરાલાલ નગીનદાસ

૬–ન્હાવાના પાણીની સમિતિ
શાહ બાલુભાઈ ગીરધરલાલ

૭–પ્રદર્શન સમિતિ
(૧) અમૃતલાલ ફકીરચંદ
(૨) રમણલાલ નગીનદાસ
(૩) રમણલાલ ચંદુલાલ
(૪) રમણલાલ પીતામ્બરદાસ

૮–પૂજા પ્રતિષ્ઠા કાર્યવાહી સમિતિ
(૧) શાહ બાલુભાઈ ગીરધરલાલ
(૨) શાહ અમૃતલાલ ડાહ્યાભાઈ
(૩) શાહ હીરાલાલ ત્રિભોવનદાસ

નાણાખાતું અને હિસાબખાતું
શાહ ડાહ્યાલાલ નાથાલાલ

न्यायविशारद न्यायाचार्य महोपाध्याय श्रीयशोविजयजी महाराजना हस्ताक्षर (जंबूस्वामीरास)

[मुनिश्री पुण्यविजयजीना संग्रहमांथी]

શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર સ્વાગતસમિતિ–ડભોઈ. વિ. સં. ૨૦૦૯

ખુરશીપર : શ્રી. હીંમતલાલ બી. શાહ, શ્રી. જેઠાલાલ આ. શાહ, શ્રી. છગનલાલ જી. શાહ. શ્રી. દલીચંદ એમ. શાહ, શ્રી. બાલચંદ જે. શાહ (સ્વાગત પ્રમુખ). શ્રી. ચંદુલાલ એમ. શાહ, શ્રી. જશુભાઈ એમ. જૈન. શ્રી. ડાહ્યાભાઈ એન. શાહ. શ્રી. શાન્તિલાલ એમ. શાહ.

પહેલી લાઈન : શ્રી. નિકમલાલ એસ. શાહ. શ્રી. હીરાલાલ જી. પારેખ, શ્રી. સુમનભાઈ સી. પારેખ. શ્રી. સુંદરલાલ એમ. માસ્તર. શ્રી. ફુલચંદભાઈ સી. શાહ, શ્રી. નગીનદાસ કે. દરૈગામવાળા, શ્રી. છગનલાલ ડી. શાહ. શ્રી. રમણિકલાલ શાહ ચિત્રકાર. શ્રી. અંબાલાલ ટી. શાહ. શ્રી. વાડીલાલ સી. શાહ. શ્રી. મગનલાલ સી. શાહ.

બીજી લાઈન : શ્રી. રમણલાલ પી. શાહ. શ્રી. સુંદરલાલ ડી. શાહ. શ્રી. શાન્તીલાલ બી. શાહ, શ્રી. ભાસ્કરલાલ સા. વસોકર શ્રી. મણિલાલ ટી. શાહ. શ્રી. કીકુભાઈ એમ. શાહ. શ્રી. શાન્તિલાલ એચ. શાહ, શ્રી. મથુરદાસ એન. શાહ, શ્રી. મગનલાલ ડી. રામપુરાવાળા, શ્રી. રમણલાલ સી. શાહ

ત્રીજી લાઈન : શ્રી. ચન્દ્રકાન્ત ડી. શાહ. શ્રી. મફતલાલ એચ. શાહ, શ્રી. નગીનદાસ એન. શાહ. શ્રી. બાલચંદજી શાહ. શ્રી. મોહનલાલ ટી. શાહ. શ્રી. વાડીલાલ બો. શાહ. શ્રી. મફતલાલ ટી. શાહ. શ્રી. મોહનલાલ સી શાહ. શ્રી. ચંપકલાલ કે. શાહ.

નોંધ-તા. ૨૧-૪-૫૭ના જૈન સાપ્તાહિક પત્રમાં પ્રતિષ્ઠા અને સત્રોત્સવ અંગે પ્રગટ થએલા વિગતવાર હેવાલોના ઉતારા અહીંથી શરૂ થાય છે. સંપા૦

ડભોઈના આંગણે, મહાન જ્યોતિર્ધર જૈન-શાસનના પરમપ્રભાવક

પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજ શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજની મૂર્તિની ભવ્ય પ્રતિષ્ઠા

તથા

શ્રીયશોવિજયસારસ્વતસત્ર મહોત્સવની દબદબાભરી અભૂતપૂર્વ ઉજવણી

દેશના જુદા જુદા સ્થળોએથી આવેલા વિદ્વાનો અને અન્ય વક્તાઓએ આપેલી ભાવભરી શ્રદ્ધાંજલિઓ

પૂ. ઉપાધ્યાયજીના મહાન સાહિત્યના મુદ્રણ માટેની અપીલને સભામાંથી મળેલો આવકાર

પસાર થએલા મહત્ત્વના ઠરાવો, દેશભરમાંથી આવેલા અભિનંદનના સંખ્યાબન્ધ સંદેશાઓ

શ્રી યશોવિજય જૈન સાહિત્ય પ્રદર્શનનો હજારો લોકોએ લીધેલો લાભ

આ નિમિત્ત ડભોઈ સંઘના વરસો જૂના ઝઘડાનો આવેલો સુખદ અંત

મુનિવર શ્રી યશોવિજયજીની મંગલકામના, અને 'શ્રીયશોવિજય સારસ્વત સત્ર'ની ઉજવણી કરવાનો નિર્ણય

દેવમંદિરો કે ગુરુમંદિરોમાં, દેવાધિદેવ કે ગુરુદેવની મૂર્તિની પ્રતિષ્ઠાના પુણ્ય પ્રસંગે મહોત્સવ, પૂજા, આંગી, પ્રભાવનાદિ ભક્તિપ્રધાન કાર્યો તો દરવખતે થાય છે, અને તે અવશ્ય કરવા યોગ્ય છે પરંતુ આવા શાસનના શણગાર, ધુરંધર દાર્શનિક વિદ્વાન અને તાર્કિકશિરોમણિ મહાપુરૂષના ભક્તિ પ્રસંગે જ્ઞાન–ચારિત્રોત્સવની ઉજવણી થાય, તો જૈન સમાજ ઉપરાંત જૈનેતર સમાજમાં એ મહાત્માના જીવનનો પ્રકાશ વધુ વિસ્તરવા પામે; એવી શુભ કામના સાહિત્યપ્રેમી મુનિવર શ્રી યશોવિજયજી, જેઓ શ્રી જન્મે ડભોઈના જ છે તેમના હૈયામાં જન્મી. વર્ષો થયાં પૂ. ઉપાધ્યાયજીને જગતના ચોકમાં રજૂ કરી, તેમની મહત્તા અને વિદ્વત્તાને જગત ઓળખતું થાય અને તેમની અમર સાહિત્ય કૃતિઓનો લાભ પ્રજા ઉઠાવતી રહે એ માટે કંઈક કરવાના સેવેલા ભૂતકાલીન સ્વપ્નાને મૂર્તરૂપ આપવાની તક ઉભી થઈ. તેઓશ્રીના વડીલ ગુરુદેવો આ. શ્રીમદ્ વિજયપ્રતાપસૂરિજી મ. તથા આ. શ્રીમદ્ વિજયધર્મસૂરિજીએ તે માટે શુભ આશીર્વાદ પાઠવ્યા અને અન્ય જૈન, જૈનેતર વિદ્વાન મહાશયો તથા ગૃહસ્થોએ પણ એ સુંદર ભાવનાને ખૂબ જ વધાવી લીધી. અન્ય જૈન શ્રમણોએ પણ હાર્દિક ટેકો આપ્યો. પરિણામે 'શ્રી યશોવિજય સારસ્વત સત્ર' પ્રતિષ્ઠા મહોત્સવ સાથે જ ઉજવવાનો નિર્ણય લેવાયો. સાથે સાથે સમય થોડો અને અનુકૂળ સાધનોના અભાવે, એક નાનકડા સંમેલન દ્વારા પૂ. ઉપાધ્યાયજીની મહાનતા અને તેમના અક્ષરદેહના ગુણગાન કરવા અને તે દ્વારા જાહેર જનતામાં આંદોલનો ઉભા કરવા એટલી ટૂંકી મર્યાદા સત્ર ઉત્સવની નક્કી કરી અને તરત જ અવિધિસરની એક મીટીંગ વડોદરા શ્રી મુક્તિકમલ જૈન મોહન જ્ઞાનમંદિર ના પુસ્તકાલયના હોલમાં પૂ. મુનિશ્રી યશોવિજયજીની અધ્યક્ષતામાં બોલાવવામાં આવી, જે પ્રસંગે જૈન જૈનેતર વિદ્વાનોએ હાજરી આપી અને કેટલીક ચર્ચા વિચારણાને અંતે અગાઉ પાટણમાં શ્રી હેમસારસ્વત સત્ર ઉજવાએલું ઉપાધ્યાયજી પણ શ્રી હેમચંદ્રાચાર્યજી જેવા મહાન હતા એવા આ પણ હતા એવા સમાન ખ્યાલને ઉભો કરવા પ્રસ્તુત ઉજવણીને 'શ્રીયશોવિજય સારસ્વત સત્ર' એવું નામકરણ કરવામાં આવ્યું. અને તે જ વખતે ચર્ચા–વિચારણા બાદ ડભોઈ, વડોદરાના જૈન જૈનેતર વિદ્વાનો તથા કાર્યકરોની એક સમિતિ નીમાઈ.

સત્ર સમિતિના સભ્યોની નામાવલિ.

શાહ બાલચંદ જેઠાલાલ (કાઉન્સીલર ડભોઈ મ્યુનીસીપાલીટી મંત્રી, શેઠ દેવચંદ ધરમચંદની પેઢી, ડભોઈ) મગનલાલ ગીરજાશંકર શાસ્ત્રી સાહિત્ય ભૂષણ (પ્રમુખ, દયારામ સાહિત્ય સભા–ડભોઈ) શા. ચંદુલાલ હીમનલાલ (કાર્યાધિકારી, સ્મારક સમિતિ ડભોઈ) શા. ડાહ્યાભાઈ નાથાભાઈ (કાર્યાધિકારી, સ્મારક સમિતિ–ડભોઈ) લક્ષ્મીનાથ બદરીનાથ શાસ્ત્રી (બી. એ. ઓનર્સ) નિવૃત્ત મુખ્ય અધ્યાપક, રાજકીય સંસ્કૃત મહાવિદ્યાલય–વડોદરા) પ્રો. કેશવલાલ હીમતલાલ કામદાર એમ. એ. (અર્થશાસ્ત્ર અને અને ઇતિહાસ મહાવિદ્યાલય–વડોદરા) ઉમાકાન્ત પ્રેમાનંદ શાહ (એમ. એ. વડોદરા) (૧) પંડીત લાલચંદ્ર ભગવાનદાસ ગાંધી (ભૂતપૂર્વ જૈન પંડિત પ્રાચ્ય વિદ્યામંદિર વડોદરા) (૨) ડૉ. ભોગીલાલ જે. સાંડેસરા એમ એ. પી. એચ. ડી. (અધ્યક્ષ, ગુજરાતી વિભાગ, શ્રી મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય વડોદરા) લાલચંદ નંદલાલ શાહ (કાર્યાધિકારી, શ્રી મુક્તિકમલ જૈન મોહન જ્ઞાનમંદિર–વડોદરા તથા મંત્રી–શ્રી વડોદરા પાંજરાપોળ સંસ્થા) શાન્તિલાલ મોતિલાલ શાહ (ઉપપ્રમુખ શ્રી ધ. જૈ. સેવાસદન–ડભોઈ) (૩) નાગકુમાર નાથાલાલ મકાતિ બી. એ. એલ. એલ. બી. (૪) જયુભાઈ મગનલાલ જૈન (કાઉન્સીલર, ડભોઈ મ્યુનિસીપાલીટી)

વિનંતિરૂપે અનેક સ્થળે પાઠવેલાં પરિપત્રો

અને સમિતિના એક, બે, ત્રણ ચાર અંકેવાળા મંત્રીઓની સહીથી એક પરિપત્ર તૈયાર કરવામાં

અઢારમી સદીના પ્રખર જ્યોતિર્ધર

[લેખક :—શ્રીયુત મોહનલાલ દીપચંદ ચોકસી]

૧. સંસારી જીવનની ઝાંખી :—

ગુજરાત પ્રાંતના કલોલ તાલુકા નજીકના 'કનોડું' નામના ગામમાં આપણા આ મહાન જ્યોતિર્ધર જન્મ્યા ત્યારે કેવા ગ્રહો હતા અને કયું ચોઘડિયું કે કયું નક્ષત્ર હતું એ જાણવાનું સાધન હજી ઉપલબ્ધ થયું નથી; છતાં ભાવિ કારકિર્દીના માપે માપતાં એટલું તો વિના શંકાએ કહી શકાય કે આ કુળદીપકના જન્મકાળે શુભ મુહૂર્ત અને શુભ યોગ વર્તતા હતા. પિતાશ્રી 'નારાયણ' અને માતુશ્રી 'સોભાગદે' એ પુત્રનું 'જસવંત' નામ રાખી આનંદિત બન્યા હતા. થોડાં જ વર્ષોમાં બંધવબેલડીરૂપે જસવંતને 'પદ્મસિંહ' મળ્યો. વ્યવહારી જીવન જીવતાં આ નાનકડા કુટુંબમાં ઉછરનાર બાલુડાંઓને દેવદર્શન અને ગુરુવંદનના સંસ્કાર ગળથૂથીમાંથી મળ્યા હતા. એમાં પણ માતા–પિતાના સંસ્કાર ઉપરાંત પૂર્વભવના પુણ્યથી જસવંતની સ્મરણશક્તિ બાલ્યકાળથી જ વધતી ચાલી હતી. 'સુજસવેલી ભાસ'માં જેની નોંધ નથી છતાં જે લોકવાયકા પૂજ્યશ્રી બુદ્ધિસાગરસૂરિજી અને સાક્ષરવર્ય શ્રીયુત મોહનલાલ દલીચંદ દેસાઈ પોતાના નિબંધોમાં આલેખે છે– 'વરસાદના કારણે માતા ઉપાશ્રયે ન જઈ શક્યાં અને 'ભક્તામર સ્તોત્ર' ન સાંભળી શક્યાં, પણ બાળક એવા જસવંતે એ સંભળાવ્યું.' એમાં તથ્ય હો કિંવા ન પણ હો, છતાં વર્ષોના વહેવા સાથે યશોવિજય મુનિ બન્યા પછી જે સાધના જસવંતના આત્માએ કરી છે અને એમાં પ્રજ્ઞાના જે ચમકારા દૃષ્ટિગોચર થાય છે, એ જોતાં કહેવું જ પડે કે, 'પુત્રનાં લક્ષણ પારણામાંથી જણાય' એ ગુજરાતી કહેવત અક્ષરશઃ સત્ય લાગે છે. જસવંત જેવા સંસ્કારી બાળક માટે ભક્તામરનું રટણ અસંભવિત ન ગણાય. વિહાર કરતાં શ્રી નયવિજયજી મહારાજ કુણગેર (પાટણ સમીપના) ગામથી 'કનોડું' પધાર્યા. તેઓની વૈરાગ્યભીની વાણી શ્રવણ કરવાનો યોગ ઉપરોક્ત બંધવજોડીને સાંપડ્યો. ઉભયના હૃદયમાં સંસાર છોડી દઈ સંયમના માર્ગે સંચરવાનાં ઝરણ ફૂટવા માંડ્યાં. એની જડ દૃઢપણે ઊંડી ઊતરવા માંડી. સંતાકુકડીનો આશ્રય લીધા વિના ખુલ્લા અંતરે મનની વાત વડીલો સમક્ષ વડીલ ભ્રાતા જસવંતે મૂકી. પદ્મસિંહે એમાં સાથ પૂર્યો. ગુરુઉપદેશથી ધર્મરહસ્યની પ્રાપ્તિ જેમને થયેલી છે એવા માતપિતાએ કહ્યું કે, 'તમારું કલ્યાણ થાઓ, ગુરુ મહારાજ સાથે વિહારમાં થોડો સમય ફરો, તલવારની ધાર સમા ચારિત્રપાલનનો અભ્યાસ પાડો અને અંતરનો અવાજ પારખો. સાચા સાધુ બનો.'

પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીનાં જીવન દૃશ્યો

પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીનાં જીવન દૃશ્યો પણ આ પ્રસંગે ભરૂચના જાણીતા કલાકાર ગોવિંદભાઈ પાસે તાત્કાલિક ભવ્યરૂપે તૈયાર કરવામાં આવ્યા. એક દૃશ્યમાં પૂ. ઉપાધ્યાયજી, તેમના ગુરુજી નયવિજયજી મહારાજ સાથે અમદાવાદના ઉપાશ્રયમાં બેઠા છે. શેઠ ધનજી સુરા, પૂ. યશોવિજયજીને ન્યાયશાસ્ત્રના અભ્યાસ માટે કાશી મોકલવાની ગુરુદેવને વિનંતિ કરે છે. અને તે કાર્યમાં ભણાવનાર બ્રાહ્મણ પંડિતોને જે કાંઈ આપવું પડે તેનો કુલ ખર્ચ કરવાની ઉદાર ભાવના વ્યક્ત કરે છે તે પ્રસંગ બનાવવામાં આવ્યો હતો.

બીજું દૃશ્ય

બીજા દૃશ્યમાં કાશી–ગંગા કિનારે પૂ. યશોવિજયજી, શ્રુતદેવી સરસ્વતીનું ધ્યાન કરે છે. અને શ્રુતદેવી–સરસ્વતી પ્રસન્ન થઈને વરદાન આપે છે. તે ભાવ રજૂ કરાયો હતો.

ત્રીજું દૃશ્ય

ત્રીજા દૃશ્યમાં કાશીમાં, સેંકડો વિદ્વાન–પંડિતોની સભામાં, વાદવિવાદ પ્રસંગે વિજય પ્રાપ્ત કરનાર શ્રીમદ્ યશોવિજયજીને સભાના મુખ્ય પંડિતરાજ "ન્યાયવિશારદ"નું ગૌરવવંતુ બિરુદ આપતાં નજરે દેખાય છે. અને તે દૃશ્ય ભેગું જ પૂ. ઉપાધ્યાયજીને 'ન્યાયાચાર્ય'પદ જે કારણથી મલ્યું, તે બતાવનાં સો ગ્રંથોનો જથ્થો બતાવી, પૂ. ઉપાધ્યાયજી ગ્રન્થરચના કરવામાં તલ્લીન બન્યા છે તે બતાવ્યું હતું. આ દૃશ્યો વડોદરાથી લાવવામાં આવેલ કલાત્મક કમાનો ને મંડપ વચ્ચે ગોઠવવામાં આવ્યા હતા.

મંગળઅભિષેક વિધિ

ફાગણ વદિ ૨ ના રોજ શ્રી શામળા પાર્શ્વનાથજીના દેરાસરે શ્રીયુત બાલચંદ જેઠાલાલ તરફથી શ્રી ગિરનારજી મહાતીર્થનો સુંદર પટ આરસમાં તૈયાર થયેલો, તેના અભિષેકની ક્રિયા શ્રીયુત જીવણભાઈએ પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી આદિ મુનિરાજોની હાજરીમાં કરાવી અને પૂજા આંગી વગેરે ધર્મકાર્યો થયાં.

ગુરુમૂર્તિ વગેરેના પવિત્ર અભિષેક

ફાગણ વદિ ૪ ના રોજ સવારે ચતુર્વિધ સંઘ સાથે પાદુકાએ વાજતે ગાજતે જવાનું થતાં ત્યાં પૂજ્ય ઉપાધ્યાય યશોવિજયજીના ગુણાનુવાદ આચાર્ય શ્રીપ્રતાપસૂરિજી તથા ધર્મસૂરિજી આદિએ કર્યાં, બપોરે શ્રી શામળાજી દેરાસરે ધરણેન્દ્ર તથા પદ્માવતીદેવીની અભિષેક વગેરે ક્રિયાઓ કરવામાં આવી. ફા. વ. ૫ ના રોજ સવારે સકલ સંઘ સાથે પાદુકાએ જવાનું થતાં ત્યાં પૂ. શ્રી ઉપાધ્યાયજી મહારાજની નવી મૂર્તિ તથા ધ્વજદંડ–કળશ અને દરેક ચરણપાદુકાના અભિષેક કરાવવામાં આવ્યા. અભિષેકની વિધિમાં પૂ. ઉપાધ્યાયજીની મૂર્તિ ભરાવનાર કંસારા શ્રી જમુભાઈ મગનલાલ ડભોઈવાલા, ઉપરાંત ડૉ. શ્રી લીલાભાઈ વગેરે ઉદાર આત્માઓએ સારો લાભ લીધો હતો. અભિષેકવિધિ પૂર્ણ થયા બાદ શામલાજીના દેરાસરે ધરણેન્દ્ર પદ્માવતીની પ્રતિષ્ઠા કરવામાં આવી હતી. અને બપોરે પોતાની સુપુત્રી બાલકુમારિકા જાસુદબ્હેનની દીક્ષા નિમિત્તે પાનાચંદ બાપુભાઈ વડજવાલા તરફથી ઘણા ઠાઠથી પૂજા–આંગી–પ્રભાવના–ભાવના વગેરે ધર્મ કાર્યો થયા હતા. દરેક પ્રસંગે ડભોઈની જૈન જનતા ઉલટભેર ભાગ લેતી હતી.

ઠમઠઆભર્યો ભવ્ય વરઘોડો

ફાગણ વદિ ૬ સવારે રથ ઇન્દ્રધ્વજ ચૌદ સ્વપ્નની રુપાગારેલ સુંદર ગાડી, ટેઆરખાનું. પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીની છબી પધરાવેલ વિક્ટોરીયા, વરસીદાન દેનાર દીક્ષાર્થી જાસુદબ્હેનની ગાડી, બીજા પણ અનેક સાજેસા, સોનાચાંદીનો અબ્બરથ અને વડોદરાનું સુપ્રસિદ્ધ મીલીટરી બેન્ડ વગેરે સામગ્રીથી ઠમઠઆભર્યો વરઘોડો નવવાગે શ્રીમાળીવાગામાંથી ચઢીને ટાવર, વડોદરીભાગોળ થઈને ૧૨ વાગના ઉતર્યો હતો.

શહેરના દરેક રસ્તાઓ તેમજ આજુબાજુના મુકામો હજારો પ્રેક્ષકોથી ઉભરાઈ ગયા હતા. વરઘોડામાં પૂ. આચાર્ય શ્રી પ્રતાપસૂરિ મહારાજ, પૂ. માણેકસૂરિ મહારાજ, પૂ. શ્રી જંબુસૂરિજી, પૂ. શ્રી ધર્મસૂરિજી અને પૂ. મુનિ શ્રી યશોવિજયજી વગેરે વિશાલ મુનિમંડલ શહેર તથા બહારગામના આવેલા સાજનોના અગ્રભાગમાં શોભી રહ્યું હતું. તે જ પ્રમાણે પ્રભુના રથના પાછળ વિશાલ સાધ્વી મંડલની આગેવાની નીચે ચાલતું નારીવૃંદ ધર્મગીતોથી શહેરના રસ્તાઓને ગજાવી રહ્યું હતું.

શ્રી સિદ્ધચક્રયન્ત્રનું ભવ્ય પૂજન

બપોરે યશોવાટિકાના પાદુકાસ્થાને શાહ જેઠાલાલ ખુશાલ તરફથી સિદ્ધચક્ર ભગવંતનું મહાપૂજન રાખવામાં આવ્યું હતું. તે અંગે વિવિધ પ્રકારના અનાજ અને રંગબેરંગી ચોખાથી સોના–ચાંદીના વરખ છાપેલું નવપદજીનું સુંદર મંડળ શ્રી હીરાલાલ જીવણલાલ તથા શ્રી સુંદરલાલ વગેરે ભાઈઓએ બનાવ્યું હતું. બપોરના સુરતવાળા શ્રી બાલુભાઈએ વિશિષ્ટ વિધિવિધાન સાથે પૂજન શરૂ કરાવેલું. જે અવસરે પૂજ્ય આચાર્યાદિ મુનિવરો, સાધ્વીજી મહારાજો તેમજ વિશાલ સંઘસમુદાયની હાજરી ઉપરાંત સુરતના મોહનલાલ પાનાચંદ ખંજરીવાલા, સ્થાનિકના શ્રી મૂલજીભાઈ તથા શ્રી સુંદરભાઈ વગેરે સંગીત દ્વારા પૂજા ભણાવતા હોવાથી ખૂબ જ આનંદ આવ્યો હતો. અને છેવટે લાડુની પ્રભાવના થઈ હતી. નાગડોલવાલા શા. છોટાલાલ તથા શા. મોતિલાલ તરફથી તે દિવસે સ્વામિવત્સલ કરવામાં આવ્યું હતું.

પ્રમુખોનું આગમન અને સત્કાર

જે મંગળ કાર્યો માટે મહિનાઓ થયા તૈયારીઓ ચાલતી હતી, અને જે મહોત્સવનો ખૂબ જ ધામધુમ ને ઉત્સાહથી આરંભ થયો હતો તે મંગલ કાર્યનો સુવર્ણ દિવસ ફા. વ. ૭ શનિવારનો હતો. આજે જૈન સંઘમાં દરેકનાં હૈયાં હર્ષથી ઉભરાતાં હતાં. જાણીતા શેઠ પુરૂષોત્તમ સુરચંદ ધોગધ્રાવાલા, પં. શ્રીમાન્ ઈશ્વરચંદ્રજી ફા. વદિ ૬ શુક્રવારની રાત્રિ તથા સાતમની સવારે જાણીતા જૈન આગેવાન શેઠ જીવતલાલ પ્રતાપસી તથા શેઠ વાડીલાલ ચત્રભુજ તથા જાણીતા સાહિત્ય પ્રસન્નમુખભાઈ આવી પહોંચતા ડભોઈ સ્ટેશને હારતોરાથી સત્કારવિધિ થયા બાદ શ્રીમાળીવાગામાં આવતાં જૈન બેન્ડે સલામી આપી હતી.

આ પ્રસંગે મુંબઈથી શેઠ કેશવલાલ કીલાચંદ, પ્રાણજીવનદાસ ગાંધી, મોહનલાલ દીપચંદ ચોકસી, વલસાડવાલા બકુભાઈ, શેઠ હીરાભાઈ નગીનદાસ સુરતવાલા, શેઠ સાંકળચંદ ઘડીઆળી સુરતવાલા, વિ. અગ્રગણ્ય મહાનુભાવો ને કાર્યકરો સાતમની સવારે પધારતાં કાર્યકરોએ તેમનું પણ સ્વાગત કર્યું હતું અને સંઘના હર્ષમાં વૃદ્ધિ થઈ. આજે પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજની મૂર્તિને નવીન તૈયાર થયેલા ગુરુમંદિરમાં બિરાજમાન કરવાનો (પ્રતિષ્ઠાનો) મંગલ દિવસ હતો. સમય થતાં પૂ. આચાર્ય શ્રી વિજયપ્રતાપસૂરિજી, પૂ. આ. માણેકસાગરસૂરિજી, પૂ. આ. વિજયધર્મસૂરિજી, પૂ. આ. વિજયજંબુસૂરિજી, પૂ. મુનિશ્રી યશોવિજયજી, શતાવધાની મુનિશ્રી જયાનંદવિજયજી આદિ મુનિવરો સાથે વાજતેગાજતે જયનાદો ગજાવતા સૌ કોઈએ સ્થળે પહોંચ્યા. આખો ય બગીચો અને વિશાલ મંડપ હજારો માણસોથી ચીકાર ભરાઈ ગયો. પૂ. આચાર્યશ્રી તથા પૂ. મુનિશ્રી યશોવિજયજીએ ઉપાધ્યાયજીનું જૈન શાસનમાં શું સ્થાન હતું તે ઉપર સુંદર શબ્દોમાં ખ્યાલ આપ્યા બાદ, મંગલ ગુરુમૂર્તિને બિરાજમાન કરવાની ઉછામણી શરૂ થઈ. છેવટે ગતવર્ષમાં નૂતન ગુરુમંદિરનું શિલારોપણ કરનાર પુન્યવાન શેઠ વાડીલાલ ચત્રભુજે રૂ. ૧૧૧૧ના ચઢાવામાં આદેશ લીધો. બીજી પાદુકાઓ તથા ધ્વજદંડ, કળશ વગેરેના આદેશો પણ અપાયા અને શુભલગ્ને ઘંટાનાદો અને ઉપાધ્યાયજીના જયનાદોના પ્રચંડ ઘોષણાઓ વચ્ચે શ્રીમદ્‌ની ભવ્ય અને મંગળ મૂર્તિની ખૂબ જ ઉલ્લાસથી પ્રતિષ્ઠા કરવામાં આવી. પૂ. આચાર્ય મહારાજોએ તથા મુનિશ્રી યશોવિજયજી વિગેરે મુનિરાજોએ વાસક્ષેપ કર્યો અને પ્રભાવના લઈ સહુ કોઈ વાજતેગાજતે શામળાજીના દેરાસર સામે શ્રી યશોવિજયજી જૈન જ્ઞાનમંદિરમાં ગોઠવાએલા સુંદર–આદિત્ય–પ્રદર્શનના ઉદ્ઘાટન સમારંભમાં આવી

પહોંચ્યા. આત્માનંદ ચોકનો સભામંડપ મુંબઈવાલા શેઠ જીવતલાલ પ્રતાપસી, શેઠ વાડીલાલ ચત્રભુજ, શેઠ પરસોતમદાસ સુરચંદ, પ્રસન્નસુખભાઈ બદામી, સુરતના શેઠ હીરાભાઈ નગીનદાસ, શા. સાંકળચંદ ઘડીઆળી તથા મોહનલાલ ચોકસી તથા અમદાવાદ, વડોદરા, ભરૂચ, શીનોર, પાદરા, આજુબાજુના ગામોથી આવેલા સેંકડો આમંત્રિતો તથા સ્થાનિક આગેવાનોથી ચીકાર ભરાઈ ગયો હતો. ડભોઇની બાળાઓનું મંગલાચરણ થયા બાદ શ્રી ઉમાકાંત પ્રેમાનંદ શાહ કે જેઓ ગુજરાતના શિલ્પ-સ્થાપત્યના ઊંડા અભ્યાસી છે અને જેમનો આ પ્રદર્શન ગોઠવવામાં મુખ્ય ફાળો હતો, તેઓએ શિલ્પ-સ્થાપત્યની પ્રાચીનતા અને જૈન સમાજે સ્થાપત્ય પાછળ અઢળક ધન ખરચીને પ્રભુભક્તિ માટે ઊભાં કરેલાં બેનમૂન કલાત્મક મંદિરોની પ્રશંસા કર્યા બાદ, જ્ઞાનમંદિરના કાર્યકર શા. મગનલાલ છોટાલાલે ધાંગધ્રાનિવાસી શેઠ પુરુષોત્તમદાસ સુરચંદભાઇને પ્રદર્શન ઉદ્ઘાટનની વિનંતિ કર્યા બાદ, શેઠશ્રીએ પોતાનું સુંદર વક્તવ્ય રજૂ કર્યું અને પ્રદર્શનનું ઉદ્ઘાટન કરી પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીના સ્વહસ્તાક્ષરોની કૃતિઓનું સોનામહોરોથી પૂજન કર્યું. શેઠ વાડીલાલ ચત્રભુજે પણ સોનામહોરોથી પૂજન કર્યું. શેઠ જીવાભાઇ, મોરબીવાલા, સંઘવી મોહનભાઈ વગેરેએ પણ પૂજન કરી જ્ઞાનભક્તિનો લાભ લીધો.

મંગલ દીક્ષાવિધિ

બીજી બાજુ ૧૧ા વાગતાં કુ. જાસુદબ્હેનની દીક્ષાનો વિધિ પૂ. આ. શ્રીમદ્ વિજયપ્રતાપસૂરિજી મહારાજે કરાવ્યો ને સાધ્વી યશોભદ્રાશ્રીજી તરીકે જાહેર કરી, સાધ્વી પ્રિયદર્શનાશ્રીજીના શિષ્યા તરીકે જાહેર કર્યાં અને સેંકડો માણસોએ વાસક્ષેપ વિધિ કર્યો.

આ પ્રમાણે પ્રતિષ્ઠા અને દીક્ષાનો મંગલ વિધિ એક વાગતાં સમાપ્ત થયો હતો.

જેની ઘણા દિવસથી રાહ જોવાતી હતી, સત્ર એટલે શું? એની ઉજવણી કેમ થતી હશે? એવું કૌતુક જનતામાં કલ્પનાના અનેક તરંગો ઊભા કરતું હતું, તે ઉજવણી સાતમ શનિવારે બપોરના ૧ાા વાગે રાખી હતી.

સવારના આઠ વાગતાં વડોદરાની ગાડીમાં અનેક વિદ્વાનો, પ્રોફેસરોનું જૂથ તથા સમિતિના મંત્રીઓ, સભ્યો, જૈન-જૈનેતરો, વડોદરા યુનિવર્સિટીના સત્તાવાળાઓના હુકમથી ખાસ સત્રની ઉજવણીમાં ભાગ લેવા આવેલા પ્રોફેસરો શ્રી દીનુભાઈ શાહ તથા શ્રી જયંત ઠક્કર તથા વલ્લભવિદ્યાનગરથી પ્રો. શ્રી કામદાર તથા પ્રો. શ્રી ભોગીલાલ સાંડેસરા વગેરે આવી પહોંચ્યા હતા. અને પૂ. ઉપાધ્યાયજીની પાદુકા ને નૂતન ગુરુમંદિરનું નિરીક્ષણ ને પાદુકાવંદન કરી સ્થળાવલોકન પણ કર્યું.

સત્રનો ભવ્ય પ્રારંભ અને શણગાર

સત્રનો પ્રારંભ દોઢ વાગે થનાર હતો. જૈન પાઠશાળા સામેની શેરીનો રસ્તો આ મંડપમાં જવાનો હતો તેથી બરાબર નાકે જ ભવ્ય કમાન નાંખવામાં આવી હતી. તેના ઉપર પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીનો ઓઇલ પેઇન્ટ ફોટો મૂકવામાં આવ્યો હતો અને તેને સુંદર હારથી સુશોભિત કરવામાં આવ્યો હતો. ત્યાર બાદ પ્રમુખ, વિદ્વાનો અને આમંત્રિતોને સત્કારતા બોર્ડો, ધ્વજાપતાકાઓની લાઈનો, કમાનોથી મંડપ સુધીનો માર્ગ સુંદર રીતે શણગારવામાં આવ્યો હતો. મંડપના નજીકના ભાગમાં સત્રના પ્રેરક ને યોજક મુનિશ્રી યશોવિજયજીને અભિનંદન આપતું બોર્ડ તથા શ્રી યશોવિજયજી સારસ્વત સત્રના વિશાળ બોર્ડો જનતાનું ધ્યાન ખેંચતા હતા. મંડપની નજીકમાં મહોપાધ્યાય શ્રીમદ્ યશોવિજય જ્ઞાનચારિત્રોત્સવનું બોર્ડ શોભતું હતું.

પાંચ હજારની જનતાની હાજરી

શ્રીમદ્ યશોવિજયજીના પુણ્ય પનોતા માતાનું નામ 'સોભાગદે' હોવાથી તે નામનો દરવાજો ઊભો કરવામાં આવ્યો હતો અને શ્રીમદ્ના પિતાના નામ ઉપરથી સત્રના મંડપને 'નારાયણ' મંડપ એવું

ઉપનામ આપવામાં આવ્યું હતું. સત્રની ઉજવણી માટે નવાડીસાના વિશાળ પટાંગણમાં પાંચ હજારની માનવ મેદની બેસી શકે તેવો ભવ્ય મંડપ ખડો કરવામાં આવ્યો અને તેને, જૈનધર્મ અને સંસ્કૃતિની ભાવનાઓ તથા પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીના અર્થ સાથે સંસ્કૃત, પ્રાકૃત અને ગુજરાતી ભાષાના બોધક શ્લોકો, વાક્યો તથા સ્વાગત બોર્ડ વગેરેના સુશોભનોથી શણગારવામાં આવ્યો હતો. મંડપમાં બેઠકો માટે જુદા જુદા વિભાગો પાડવામાં આવ્યા હતા. સર્વોચ્ચ સ્થાને પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીની ધાતુ મૂર્તિની ભવ્ય આનંદથી તેની પ્રતિકૃતિ ગોઠવવામાં આવી હતી અને તેને સુંદર ફૂલહારોથી શોભાવવામાં આવી હતી. હજારો પ્રેક્ષકોનું એ ધ્યાન ખેંચતી હતી. તેની આગળની કમાન ઉપર ઉપાધ્યાયજીના નામનું બોર્ડ મૂકેલું હતું. તે પછીની હરોળમાં સત્રની ઉજવણી નિહાળવા પધારેલા સાધુ મહારાજોની બેઠક, બાજુમાં સત્રના પ્રમુખની અને તેની બાજુમાં આમંત્રિત મહેમાનો, વિદ્વાનો અને પંડિતોની બેઠક રાખવામાં આવી હતી. મંડપની વચ્ચે વક્તાઓને બોલવા માટે 'લાઉડસ્પીકર સ્ટેન્ડ' ખડું કરવામાં આવ્યું હતું. સમય થતાં જનતાનાં ટોળાં મંડપના દ્વાર તરફ ધસી રહ્યાં હતાં. સત્રની ઉજવણીનો પ્રારંભ થતાં વિશાળ મંડપ સંપૂર્ણ ભરાઈ ગયો. પ્રારંભમાં મંગળ સંગીત માટે સુંદરલાલ તથા બાળાઓનું મંગલાચરણ થયું અને સંગીતોના મધુર સ્વરો રેલાયા. ત્યાર બાદ સ્વાગત પ્રમુખ શ્રી ભાઈચંદ કેશવલાલ શાહ જેઓ અતિ પરિશ્રમથી અસ્વસ્થ હોવા છતાં તેમણે સમારંભ સ્થળે આવીને પોતાનું ભાષણ કર્યું હતું.

શ્રી બદામીજીના હાથે સત્રનું ઉદ્ઘાટન અને પ્રેરક પ્રવચન

સ્વાગત પ્રમુખે પોતાનું ભાષણ પૂરું કરતાં મુંબઈની સ્મોલકોઝ કોર્ટના જજ શ્રી પ્રસન્નમુખ સુરચંદ બદામીને સત્રનું ઉદ્ઘાટન કરવાની વિનંતિ કરતાં શ્રી બદામીએ તેનો સ્વીકાર કરીને, પ્રાસંગિક પ્રવચન કરતાં પ્રથમ તો આ માટે આનંદ આભાર માની સુંદર વક્તવ્ય રજૂ કરતાં, ઉપાધ્યાયજીની અલૌકિક જ્ઞાનોપાસનાથી તેમને, એક મહાન તપસ્વી તરીકે ઓળખાવીને જૈન સમાજને કેવળ બાહ્ય તપના ચીલે ન ચાલતાં, સાથે આગળ વધી સ્વાધ્યાય રૂપ તપશ્ચર્યાની ભાવનાને કેળવવાનું ઉદ્બોધન કર્યું હતું. શ્રીમદ્‌ને એક મહાન તપસ્વી તરીકે તેમ જ એક સાચા ક્રિયોદ્ધારક અને શુદ્ધાચાર પ્રરૂપક તરીકે ઓળખાવી એમની વિશાળ દૃષ્ટિને તથા એક મહાન વિભૂતિને ઉચિત શ્રદ્ધાંજલિ અર્પી હતી. (શ્રી બદામીનું ભાષણ આગળ આપ્યું છે.)

ખૂણેખૂણેથી મળેલા જૈનાચાર્યો, શ્રમણો, વડાપ્રધાન, રાજકર્મચારીઓ, અધિકારીઓ, પ્રોફેસરો, વિદ્વાનો, શ્રેષ્ઠીઓ અને ભાવિકોના સંદેશાઓ

ત્યાર બાદ ભારતના નામાંકિત રાજકર્મચારીઓ, અધિકારીઓ, યુનિવર્સિટીઓના પ્રિન્સિપાલો, પ્રોફેસરો, વાઇસ-ચેન્સેલરો, કોલેજના પ્રોફેસરો, જૈનાચાર્યો, જૈન મુનિઓ, સાધ્વીજીઓ, શ્રીમંત ઉદ્યોગપતિઓ, શાહસોદાગરો, અખબારના તંત્રીઓ, જૈન પંડિતો, જૈન સંસ્થાઓ, જૈનેતર વિદ્વાનો વગેરે તરફથી સત્ર ઉપર શુભેચ્છાના આવેલા તાર-ટપાલોના કેટલાક સંદેશાઓનું વાચન શ્રી શાન્તિલાલ શાંતિલાલ શાહે કર્યું હતું.

જેમાં પંજાબના વડાપ્રધાન ભીમસેન સાચર, દાદા સાહેબ માવળંકર દિલ્હી, પં. સુખલાલજી, શેઠ કસ્તૂરભાઈ લાલભાઈ, શ્રી હંસાબહેન મહેતા, નાયબ નાણાપ્રધાન એમ. સી. શાહ. દિલ્હી, શેઠ અમૃતલાલ કાળીદાસ દોશી, શાહ માણેકલાલ વખારિયા ધારાસભ્ય મુંબઈ, જૈન શ્વેતાંબર કોન્ફરન્સ મુંબઈ, ન્યાયાધીશ ટી. સી. મહેતા, શાહ ચંદુલાલ વર્ધમાન મુંબઈ, શેઠ ભોગીલાલ મગનલાલ ભાવનગર, શ્રી મોહનલાલ છોટાલાલ, શાહ ચીમનલાલ ડોસા અમદાવાદ, પં. શ્રી બેચરદાસ દોશી, ભાંડારકર ઇન્સ્ટીટ્યુટ પૂના, ગુજરાત વિદ્યાસભા અમદાવાદ, ભારતીય વિદ્યાભવન મુંબઈ, જૈન આત્માનંદ સભા ભાવનગર, જૈનપત્ર, શા. ગુલાબચંદ લલ્લુભાઈ ભાવનગર, આત્માનંદ જૈન કોલેજ પંજાબ, મહાગુજ, શ્રાવસ્તી અને

છોટાભાઈ સુતરીઆ વડોદરા, સી. ટી. શાહ મુંબઈ, ફતેહચંદ ઝવેરચંદ મુંબઈ, શાન્તિલાલ મગનલાલ શાહ મુંબઈ, રમણલાલ દલસુખભાઈ મુંબઈ, શ્રી મુળચંદ વાડીલાલ દોલતરામ મુંબઈ, શાહ રમણલાલ વસંતલાલ દેસાઈ મુંબઈ, શાહ પરમાનંદ કુંવરજી કાપડીઆ મુંબઈ, શાહ મણિલાલ મોહનલાલ પાદરાકર, શાહ હરિચંદ માણેકચંદ, શાહ ભાઈચંદ નગીનભાઈ મુંબઈ, શાહ મોહનલાલ છોટાલાલ અમદાવાદ, શેઠ અમૃતલાલ જેસંગભાઈ અમદાવાદ, પં. જટાશંકર ઝા તથા દીનાનાથ ઝા અમદાવાદ, શ્રી યશોવિજય જૈન ગુરુકુળ પાલીતાણા, શાહ ધીરજલાલ તુરખીયા બીયાવર, સંસ્કૃત મહાવિદ્યાલય વડોદરા, મહાવીર જૈન વિદ્યાલય મુંબઈ, ગોડીજી જૈન સંઘ મુંબઈ, શ્રી યશોવિજય જૈન ગ્રંથમાળા ભાવનગર, પ્રો. એન. એમ. ઉપાધ્યાય કોલ્હાપુર, શેઠ ભગુભાઈ સુતરીઆ અમદાવાદ, શ્રી રત્નમણિરાવ ભીમરાવ અમદાવાદ, એસ. એમ. કત્રે ડેક્કન કોલેજ પુના, શ્રી ગોવિંદલાલ હ. ભટ્ટ ઓરીએન્ટલ ઇન્સ્ટીટયુટ પ્રિન્સિપાલ વડોદરા, શાહ રસિકલાલ છોટાલાલ પરીખ અમદાવાદ, પં. દલસુખ માલવણીયા બનારસ, પ્રો. એન. એમ. બરોડા યૂનિવર્સિટી, શ્રોફ દલીચંદ વીરચંદ સુરત શ્રી રાજપાલ વોરા, શ્રી ધીરજલાલ ટોકરશી શાહ, ધીરજલાલ ધનજીભાઈ, લલ્લુભાઈ કરમચંદ દલાલ, પી. કે. શાહ અમદાવાદ, વિષ્ણુપ્રસાદ ત્રિવેદી. મોહનલાલ પાર્વતીશંકર દવે, પ્રો. માણેકરાવ, શા છબીલદાસ પંડિત ખંભાત વગેરેના ખાસ હતા. તે ઉપરાંત જામનગર, મોરબી, સુરત, પાલીતાણા, ભાવનગર, માલેગાંવ, ભરૂચ, આણંદ, વાપી, ખંભાત, મહુવા વગેરે શહેરોના તથા અનેક વ્યક્તિઓના સંખ્યાબંધ સંદેશાઓ આવ્યા હતા.

જૈનાચાર્યોમાં આ. શ્રી વિજયવલ્લભસુરિજી, આ. શ્રી વિજયપ્રેમસૂરિજી; આ. શ્રી વિજયલબ્ધિસુરિજી, આ. શ્રી હિમાચલસૂરિજી, મુનિશ્રી પુણ્યવિજયજી, મુનિશ્રી ભદ્રંકરવિજયજી, મુનિશ્રી રમણિકવિજયજી, મુનિશ્રી દર્શન વિજયજી, ત્રિપુટી, તથા સાધ્વીજીઓ વગેરેના હતા.

સત્રના જન્મદાતા મુનિવર શ્રીયશોવિજયજી મહારાજને અભિનંદન

ત્યારબાદ સત્ર–સમિતિના મંત્રી શ્રી નાગકુમાર મકાતીએ સત્રની ઉત્પત્તિ કેમ થઈ તે, સત્રને મળેલો ચોતરફથી આવકાર, સમય થોડો છતાં કૃપા કરીને પૂ. શ્રમણ સંઘે અને જૈન–જૈનેતર વિદ્વાનોએ નિબંધો લખીને અમને આપેલો મમતાભર્યો સહકાર એ બધું આભાર સાથે વ્યક્ત કરીને જણાવ્યું હતું કે– મહાગુજરાતના એક મહાન જ્યોતિર્ધરને પીછાણવાની અણમોલ તક ઊભી કરનાર વિદ્વાન મુનિવર અવધાનકાર શ્રી યશોવિજયજી જેઓ ગ્રન્થસર્જક પણ છે તેમને અભિનંદન આપી હું અભિનંદન કરું છું. આ ઉજવણીનો ખરો યશ તેમને જ ફાળે જાય છે. અમારા સાચા સેનાપતિ એ જ હતા. તેઓશ્રીના ઉદાત્ત વિચારો, વિશાળ આદર્શો, વ્યવહારૂ બુદ્ધિ અને સહુને સમાવી લેવાની શક્તિ અનોખી છે.

તેમના હૈયામાં શાસન અને સમાજસેવાનો એક લાવા ઉકળી રહ્યો છે. જેનું પરિણામ આ સત્રની ઉજવણી છે. અથાગ પરિશ્રમે આ મહાકાર્ય પુરું પાડ્યું છે. તેઓશ્રીની કાર્યક્ષમતા અને વ્યવહારકુશળતાએ ગંગા જમનાના સંગમની જેમ ગુજરાતી સાક્ષરો અને સંસ્કૃત વિદ્વાનોને આ મંચ ઉપર એકઠા કરી શક્યા છે. આ એક શુભ ચિહ્ન છે. પૂ. ઉપાધ્યાયજી સંસ્કૃત ભાષાના ઉપાસક હતા તેથી તેમણે સંસ્કૃત વિદ્વાનો એકત્રિત કર્યા. તેઓના આદર્શો ને ભાવનાઓ ઘણી ઊંચી છે. હું તેમને અને સમિતિના સભ્યોને અને અન્ય શ્રમણોએ આપેલા સહકારને અભિનંદુ છું. વગેરે જણાવ્યા બાદ

સત્રના પ્રમુખશ્રીની દરખાસ્ત

સમિતિના બીજા મંત્રી પં. શ્રી લાલચંદ ગાંધીએ સત્રના પ્રમુખપદ માટેની દરખાસ્ત મૂકતાં પ્રમુખશ્રીને, ષટ્ દર્શનનાં ઊંડા અભ્યાસી, ને બહુશ્રુત વિદ્વાન તરીકેનો પરિચય આપ્યા બાદ, પ્રમુખ સ્થાન સ્વીકારવાની વિનંતિ કરતાં પં. શ્રીમાન ઈશ્વરચંદ્રજી પંડ્યાએ તેનો સ્વીકાર કર્યો. સ્ટેજ

સત્રમંડપમાં ઉપસ્થિત થયેલી વિશાળ માનવમેદની

સત્રસંમેલનની કાર્યવાહી નિહાળવા સત્રસમિતિના ખાસ આમંત્રણથી પ્રેક્ષક તરીકે હાજરી આપવા પધારેલું પૂજ્ય આચાર્યાદિ મુનિવરોનું મંડળ.

ડાબી બાજુએથી ઉપરના ભાગે ૧. પૂ. આચાર્યશ્રી માણિક્યસાગરસૂરિજી મહારાજ જમણી બાજુ, પૂ. આચાર્યશ્રી વિજયપ્રતાપસૂરિજી મહારાજ. ડાબી બાજુ-નીચેના ભાગમાં ૧. પૂ. આચાર્ય શ્રી નંદનસૂરિજી મહારાજ. જમણી બાજુ પૂ. આચાર્ય શ્રી વિજય ધર્મસૂરિજી મહારાજ.

પં. શ્રી કાલિકાપ્રસાદ

ત્યારબાદ વ્યાકરણ સાહિત્યાચાર્ય શ્રી કાલિકાપ્રસાદ શુક્લે ઉપક્રમ કરતાં જણાવ્યું હતું કે—આજે ડભોઈના આંગણે ડભોઈના જ નહીં કિન્તુ ભારતના ઇતિહાસમાં નોંધપાત્ર અને યાદગાર સમારંભ ઉજવાઈ રહ્યો છે. શ્રીમદ્ યશોવિજયજીનાં જીવન ઉપર જોઈએ તેઓ પ્રકાશ પડયો નથી. એમની બહુમૂલ્ય કૃતિઓ આજે ઉપલબ્ધ નથી એ ઘણો ખેદનો વિષય છે. વિકટ કાળમાં તેઓશ્રી જન્મ્યા હતા. સાંપ્રદાયિક દ્વેષના દાવાનળો સળગતા હતા ત્યારે કાશી જેવા વિદ્યાધામમાં જઈને તલસ્પર્શી અભ્યાસ કરી ષડ્દર્શનવેત્તા બન્યા. નવ્ય ન્યાયનો પૂરેપૂરો અભ્યાસ કરીને તેમાં પારંગત થયા. નવ્યન્યાયની ભાષામાં જૈન સિદ્ધાંતો રચીને જૈન સાહિત્યને મોખરે લાવી મૂક્યું. અને અનેકાન્તવાદને સૂક્ષ્મ રીતે છણીને દરેક દર્શનકારો એક નહીં તો બીજી રીતે પણ અનેકાન્તવાદનો સ્વીકાર કરે જ છે; એમ પ્રતિપાદન કરી અનેકાન્તવાદની સર્વોપરિતા સ્થાપિત કરીને જૈનધર્મનો વિજય વાવટો ફરકાવ્યો, તેઓશ્રીના ગ્રન્થોનું વિવેચન તુલનાત્મક છે. સેંકડો વિદ્વાનોના મતોનું તેમને પરિશીલન કર્યું હતું, તેમ તેમના કેટલાક ગ્રન્થોના અવલોકનથી સાફ દેખાય છે. અઢારમી સદીમાં એક જૈન વિદ્વાન ત્રણસો (૩૦૦) ગ્રન્થોનું સર્જન કરે એ જૈન ધર્મ માટે અપૂર્વ ઘટના છે, કિન્તુ ભારતની ભૂમિ માટે ગૌરવભર્યો બનાવ છે. જૈન સમાજ તેમના અપ્રાપ્ય ગ્રન્થો જે જ્ઞાનભંડારમાં ખૂણેખાંચરે સડી રહ્યા છે તેને શોધી કાઢે, તેનું અધ્યયન કરાવે અને તેઓશ્રીના અગાધ દાર્શનિક જ્ઞાનનો લાભ ભારતના વિદ્વાનોને મળે તે માટે જૈન સમાજ સરસ્વતીને આગળ કરે અને લક્ષ્મીને તેની પાછળ ચલાવે શ્રીમદ્‌ની વિદ્વત્તાથી હું ઘણો મુગ્ધ છું. તેમના સાહિત્યના ઉદ્ધાર અને પ્રચાર માટેનું કાર્ય થાય તે ખૂબ જરૂરી છે.

પં. શ્રી મગનલાલ શાસ્ત્રી

આટલું કહ્યા બાદ સંસ્કૃત સભાની કાર્યવાહી ડભોઈ નિવાસી વેદાન્તશાસ્ત્રી સાહિત્યભૂષણ મગનલાલ ગિરિજાશંકરના અધ્યક્ષ પદે શરૂ થઈ હતી.

શ્રી શાસ્ત્રીજીએ તેનો સ્વીકાર કરતાં જણાવ્યું હતું કે—આપની ભારતની ભૂમિ ઉપર કોઈ પણ પ્રકારના વિનાશનો પ્રસંગ આવે છે ત્યારે મહાન્ વિભૂતિઓ અવતાર લે છે. તે પ્રમાણે સાહિત્ય અને સંસ્કૃતિનો વિનાશ અટકાવવા આ મહાન વિભૂતિએ જન્મ લીધો હતો અને જગતના ઉપકાર માટે મહાન્ સાહિત્ય રચી પોતાનાં નામ અમર કરી ગયા.

ત્યારબાદ પંડિત વ્રજકાન્ત ઝા, એ અનેકાન્તવાદ ઉપર સંસ્કૃતમાં પ્રવચન કર્યું હતું અને જયંતિ આવિકાનો દાખલો આપ્યો હતો.

શ્રી સયાજી યૂનિવર્સિટિના પ્રતિનિધિ પ્રો. શ્રી હરિપ્રસાદ છગનલાલ મહેતાએ ધર્મમાં અહિંસાનું શું સ્થાન છે અને તેનું શું પ્રયોજન છે ! તે જણાવી ' અહિંસા પરમો ધર્મ 'ની સિદ્ધિ કરી હતી. યજ્ઞમાં થતા પ્રાણી વધ માટે અરુચિ દર્શાવી હતી.

કુ. ઈન્દુમતી અને કુ. કૌશીલા વગેરે બહેનોએ સંસ્કૃત ભાષા સરળ છે એ વિષય ઉપર સુંદર સંવાદ રજૂ કર્યો હતો.

પં. શ્રી જયનારાયણ પાઠક

વ્યાકરણ કાવ્યતીર્થ શ્રી જયનારાયણ પાઠકે શ્રીમદ્ યશોવિજયજીનું જીવનચરિત્ર વર્ણવ્યું હતું. અને કાશીમાં શાસ્ત્રાર્થ કરીને મેળવેલા વિજયનો સુંદર ચિતાર રજૂ કરીને, એક ગુજરાતી વિદ્વાને કાશીમાં વિજય મેળવીને સાચવેલી શાન બદલ અંજલિ આપી તેમના જીવનપરથી બોધપાઠ લેવાનો આગ્રહ કર્યો હતો.

પં. શ્રી અમીરચંદ શાસ્ત્રી

શ્રી સાહિત્યાચાર્ય શ્રી અમીરચંદ શાસ્ત્રીએ શ્રીમદ્ ઉપાધ્યાયજીએ સંસ્કૃત ભાષાના કરેલા આદરને જણાવીને સંસ્કૃત ભાષા શિખવાની આવશ્યકતા ઉપર સંસ્કૃત ભાષામાં સુંદર પ્રકાશ પાડ્યો હતો.

પં. શ્રી લક્ષ્મીનાથ શાસ્ત્રી

રાજકીય સંસ્કૃત મહાવિદ્યાલય વડોદરાના નિવૃત્ત મુખ્ય અધ્યાપક પ્રો. એ. શ્રી લક્ષ્મીનાથ બદ્રીનાથ શાસ્ત્રીએ જણાવ્યું હતું કે જે સમયમાં બ્રાહ્મણ પંડિતો જૈનેતરવંશીયોને પૂર્ણ રીતે અભ્યાસ કરાવતા ન હતા તે વખતે તેઓએ શ્રી યશોવિજયજીની અપૂર્વ જ્ઞાનશક્તિ જોઈ અભ્યાસ કરાવ્યો. નવ્યન્યાય શાસ્ત્રનો અભ્યાસ કરી લોકોની બુદ્ધિને નિર્મળ કરવા ન્યાયના ગ્રંથો ઉપરાંત ગ્રંથો રચ્યા જે વખતે મતમતાંતરોના કદાગ્રહો હતા તે વખતે પણ સમાધાન દૃષ્ટિએ ઉત્તમ ગ્રન્થો લખી સત્ય વસ્તુને સમજાવનાર એ મહાન વિભૂતિને જેટલી શ્રદ્ધાંજલિ આપીએ તેટલી ઓછી છે અને અલ્પ સમય બહુને બોલવાનો હોવાથી વિશેષ કહેવાનો અવકાશ નથી. હું એટલું કહીશ કે તેમના ગ્રંથોના સંશોધન — પ્રકાશન માટે ખાસ યોજના થવી જરૂરી છે.

પં. શ્રી બાલકૃષ્ણ શાસ્ત્રી

શ્રી બાલકૃષ્ણ શાસ્ત્રીજીએ સંસ્કૃત ભાષાને જીવંત ભાષા જણાવી સંસ્કૃતિના અભ્યાસ માટે તે ભાષાને રાષ્ટ્રભાષા બનાવવાની ઇચ્છા વ્યક્ત કરી હતી.

સત્રના પ્રમુખશ્રીનું પુનઃ ભાષણ

મુંબઈ નિવાસી શેઠ જીવતલાલ પ્રતાપશી, શેઠ વાડીલાલ ચતુર્ભુજ તથા મુંબઈના શ્રી પ્રસન્નમુખ બહાની તથા શેઠ પરસોત્તમ સૂરચંદ બાંગડીવાળા વગેરે આગેવાનો પરદેશ દિવસની બેઠકમાં કોઈનાં અંતરનું સમાધાન કરવાના કાર્યમાં રોકાતાં સત્રના પ્રમુખ શ્રી કસ્તુરચંદજીના ભાષણથી વંચિત રહ્યા હોવાથી પ્રમુખશ્રીને થોડા સમય માટે ભાષણ કરવાનો અતિ આગ્રહ કરતાં, પ્રમુખશ્રીએ અર્ધો કલાક સુધી જોરદાર અને વિદ્વત્તાભર્યા મધુર પ્રવચનનો પ્રવાહ વહાવ્યો હતો. જેમાં ઉપાધ્યાયજીના દાર્શનિક સિદ્ધાંતોનો વિશદ ખ્યાલ આપી જણાવ્યું હતું કે — ઉપાધ્યાયજીના ગ્રંથોમાં જે સિદ્ધાંતો છે તે સંસ્કૃત ભાષા સિવાય બીજી ભાષામાં સમજવી શકાય તેમ નથી. એટલે સભામાંથી તેમને સંસ્કૃત ભાષાની અંદર પ્રવચન કરવાનો આગ્રહ થતાં પાણીના રેલાની માફક પ્રવાહબદ્ધ સંસ્કૃત ભાષામાં ઉપાધ્યાયજીના સિદ્ધાંતો અને તેની ખૂબીઓ સરસ રીતે સમજાવી હતી.

ત્યાર પછી બાળાઓએ સંસ્કૃત ભાષામાં શિક્ષણનું ગીત ગાયા બાદ પ્રમુખ શ્રી મગનલાલભાઈ શાસ્ત્રીએ ઉપસંહાર કરતાં એકમીજ સૂચના આ રીતે પરસ્પર સંસ્કૃત સાથે તો આપણી સંસ્કૃતિને મજબૂત બનાવવા માટે થોડું ઘણું કાર્ય કરી શકીએ. ને પછી અનેકાંતવાદની પ્રશંસા કરી સંસ્કૃત ભાષાને રાષ્ટ્રભાષા બનાવવાનો ઉલ્લેખ કર્યો હતો.

મંત્રી શ્રી કાલિકાપ્રસાદજીનું શ્રી યશોવિજયજીને અભિનંદન

કાર્યવાહીની સમાપ્તિને અંતે પં. શ્રી કાલિકાપ્રસાદે સભાનો આભાર માની આજની વિરાટ સભામાં બોલવાની સંસ્કૃત વિદ્વાનોને જે તક મળી છે તે અભૂતપૂર્વ છે. આ માટે સત્રસમિતિ કરતાં પણ આપણી સામે બિરાજમાન મહારાજ શ્રીયશોવિજયજીને અભિનંદન સહ હું અભિવાદન કરું છું કે, જેમણે આ સત્રનો જન્મ આપીને, એક મહાન પુરુષની મહાનતાનો અમને અને જનતાને પરિચય કરાવવાનો અપૂર્વ

પ્રસંગ ઊભો કર્યો છે. અંતમાં જૈન સિદ્ધાંત તેની માન્યતા વગેરેથી જે કંઈ અણજાણમાં વિપરીત બોલાયું હોય તો સહુ વતી ક્ષમા યાચી લઉં છું.

આ. શ્રી વિજયપ્રતાપસૂરિજી મહારાજ તથા આ. શ્રી ધર્મસૂરિજી મહારાજનું મહત્વનું પ્રવચન

ત્યાર બાદ શ્રી મફાતીએ વિદ્વાનોનો આભાર માની પૂજ્ય આચાર્યશ્રીને બે શબ્દો સંભળાવવા વિનંતિ થતાં પ્રથમ આ. શ્રી વિજયપ્રતાપસૂરિજીએ વિદ્વાનોને પ્રેરણારૂપ ઉત્તેજન કરે તેવું ટૂંકુ પ્રવચન કર્યું હતું. ત્યાર બાદ આ. શ્રી વિજયધર્મસૂરિજીએ ટૂંકુ મનનીય પ્રવચન કર્યું હતું. (પ્રવચન આગળ છાપ્યું છે.)

તેઓશ્રીના પ્રવચનની સુંદર છાપ પડી હતી. સાડાબાર વાગતાં સવારનો સમારંભ પૂરો થયો હતો. બ્હારથી આવેલા વિદ્વાનોનો ફૂલહારથી સત્કાર કરવામાં આવ્યો હતો.

બીજા દિવસની બપોરની બેઠક અને સક્રિય વિચારણા

સત્રની બેઠક શરૂ થાય તે પહેલાં પૂ. મુનિશ્રી યશોવિજયજીની હાજરીમાં, આવેલા વિદ્વાનો, સ્થાનિક તથા બ્હારના આગેવાનો ને શ્રીમંતોની એક બેઠક બપોરના દોઢ વાગે શરૂ થઈ હતી. ઉપાધ્યાયજીના સાહિત્ય અંગે શું કરવું જોઈએ તે તથા પ્રાસંગિક કેટલીક અન્ય વિચારણાઓ પણ કરવામાં આવી હતી. ચર્ચાને અંતે કેટલાક ઠરાવો કરવાનો નિર્ણય લેવાયો હતો.

બીજા દિવસની બપોરની બેઠક

બપોરના અઢી વાગતાં સત્રનો અધૂરો રહેલો કાર્યક્રમ સંગીતમાસ્તર શ્રી મુંદરલાલના મધુર સ્વરોથી શરૂ થયો હતો.

નિબંધ વાચન

પં. શ્રી લાલચંદ્ર ગાંધીએ આવેલા નિબંધોમાંથી કેટલાક નિબંધોના મહત્ત્વના ભાગોનું વાચન કર્યું હતું. કેટલાક નિબંધો એટલા સુંદર હતા કે શ્રોતાઓનું એકધારું ધ્યાન ખેંચી રહ્યા હતા.

શ્રી મોહનલાલ દીપચંદ ચોકસીએ મુનિશ્રી યશોવિજયજીને શ્રદ્ધાંજલિ આપી જણાવ્યું હતું કે મુંબઈને પહેલી જ વાર શ્રી હેમચંદ્રાચાર્યજી, શ્રી હીરસૂરિજી મહારાજ તથા શ્રી યશોવિજયજી મહારાજ માટે કંઈ કરવાનો સચોટ બોધ અત્ર બેઠેલા મહારાજ શ્રીયશોવિજયજીએ જ આપ્યો. તેમણે આ મહાપુરૂષોના સ્મારકોનો ઉદ્ધાર કરવાની પ્રેરણા કરી ત્યારે અમને ઘણું ઘણું નવું જ જાણવા મળ્યું હતું.

ઉપાધ્યાયજી માટે બે વરસ ઉપર મુંબઈમાં ગુણાનુવાદનો પાયો નંખાયો અને તેનું ફળ આજે જોવા મળ્યું છે. આપણે શ્રી હરિભદ્રસૂરિજી અને શ્રી હીરસૂરિજીની જેમ યશોવિજયજી ઉપાધ્યાયને ઓળખી શક્યા નથી. ગુરુમંદિર રચીને આપણે તેમની ભક્તિનું પ્રદર્શન કર્યું. હવે તેમના સાહિત્યના અણમોલ વારસાને માત્ર આપણે જ વખાણીએ તે બરાબર નથી, પણ બહારના વિદ્વાનો વખાણે તે માટે દાનનો પ્રવાહ સાહિત્યની દિશા તરફ વાળી તેમની ખ્યાતિ અમર કરવાની જરૂર છે. અન્ય ખર્ચ કરતાં જૈનસમાજ તેમના સાહિત્યમાં નાણાં ખરચે એ ખૂબ જરૂરનું છે. જગતને શાંતિનો સંદેશો પૂર્વમાંથી નહીં મળે બલ્કે ભારતમાંથી અહિંસાના ચાહકો તરફથી જ મળશે.

પ્રો. શ્રી સાંડેસરા

જાણીતા પ્રો. શ્રી ભોગીલાલ સાંડેસરાએ પ્રવચન કરતાં જણાવ્યું હતું કે ઉપાધ્યાય શ્રીમદ્ યશો-વિજયજી એટલા જ્ઞાની જ ન હતા, પણ એક સાચા અનુભવી સંત હતા. અન્ય ભાષા ઉપરાંત ગુજરાતી

ભાષાના વિકાસમાં તે વખતના સમયમાં તેમણે ઘણો જ ફાળો આપ્યો છે. ગુજરાતના એક પ્રખર વિદ્વાનના સ્વહસ્તાક્ષરે લખાએલ ગ્રન્થ આજે આપણને મળે તે એક મહત્ત્વનો બનાવ છે.

શ્રી મફતલાલ પંડિત

જૈન શાસનના ચાર સ્તંભોમાં શ્રી સિદ્ધસેન દિવાકર, શ્રી હેમચંદ્રસૂરિજી, શ્રી હરિભદ્રસૂરિજી અને ચોથા શ્રી યશોવિજયજી. તેઓ માત્ર વિદ્વાન ન હતા પણ મહાન તત્ત્વજ્ઞાની હતા.

શ્રી યશોવિજયજીનું પ્રેરક પ્રવચન

ત્યાર બાદ સભાના પ્રમુખ શ્રી કસ્તુરચંદજી શાસ્ત્રીએ મહારાજ શ્રી યશોવિજયજીને થોડું પ્રવચન કરવાની આગ્રહભરી વિનંતિ કરતાં મહારાજશ્રીએ ટૂંકું ને મનનીય પ્રવચન કર્યું હતું. [પ્રવચન અહેવાલ પૂર્ણ થયા પછી છાપવામાં આવ્યું છે.] મુનિશ્રીના પ્રવચનમાં એટલે જણાવ્યું હતું કે જુદાજુદા શહેરના જૈન સંઘો ધારે તો તેમના ગ્રંથોનું પ્રકાશન બહુ સહેલાઈથી થઈ શકે એમ છે. અહીંયાં બેઠેલ જુદા જુદા સંઘના પ્રતિનિધિઓ 'પંચની લાકડી ને એકકા બોજ' જેવી મારી આ સૂચના યોગ્ય લાગે તો જરૂર વધાવી લેશે.

એ જ વખતે સભામાંથી નીચેના ગૃહસ્થોએ અને સંસ્થાઓએ પોતાના તરફથી એકેક ગ્રંથની આર્થિક જવાબદારી લેવા સંમતિ દર્શાવી, મહારાજશ્રીએ નાખેલી ટહેલનો સુંદર જવાબ વાળ્યો હતો. (૧) શેઠ જીવનલાલ પ્રતાપસી મુંબઈ, (૨) શેઠ પરસોત્તમદાસ સુરચંદ ધાંગધ્રાવાળા, (૩) શેઠ વાડીલાલ ચતુર્ભુજ ઘાટકોપર, (૪) શેઠ ગુલાબચંદ ગફુરભાઈ ઘાટકોપર, (૫) શેઠ હીરાલાલ નગીનદાસ સુરત, (૬) શ્રી મોરબી જૈન સંઘ હા. શ્રી મોહનભાઈ સંઘવી, (૭) શ્રી યશોવિજય જૈન જ્ઞાનમંદિર ડભોઈ.

મહારાજશ્રીની અપીલનો સુંદર જવાબ મળતાં આનંદ વ્યક્ત કરીને જણાવ્યું હતું કે ઉપાધ્યાયજી ભગવાન અને તેમનું સાહિત્ય અમર છે અને જૈન સંઘ જયવંતો છે.

જૈનાચાર્યો અને મુનિઓએ લીધેલી પ્રેરક પ્રતિજ્ઞા

ત્યાર બાદ આ. શ્રી વિજયપ્રતાપસૂરિજી, આ. શ્રી વિજયધર્મસૂરિજી, મુનિશ્રી યશોવિજયજી, મુનિશ્રી જયાનંદવિજયજી, મુનિશ્રી કનકવિજયજી, મુનિશ્રી મહાનંદવિજયજી, મુનિશ્રી સૂર્યોદયવિજયજી વગેરેએ એક વર્ષમાં શ્રીમદ્ ઉપાધ્યાયજીની કોઈ પણ એક કૃતિનો અભ્યાસ કરવાના નિર્ણયની જાહેરાત કરવામાં આવી હતી. અને આ. શ્રી વિજયધર્મસૂરિજીએ, આ. શ્રી માણેકસાગરસૂરિજીને પોતાના સમુદાયમાં તેઓશ્રીના ગ્રંથોનું અધ્યયન કરાવવાનો સાધુઓને આદેશ કરવાની વિનંતિ કરી હતી. ઉપરોક્ત જાહેરાતોને ઉપાધ્યાયજીના જયનાદથી વધાવી લેવામાં આવી હતી.

ત્યારબાદ શેઠ જીવનલાલ પ્રતાપસી મુંબઈવાળા, શેઠ વાડીલાલ ચતુર્ભુજ તથા શેઠ પરસોત્તમ સુરચંદ ધાંગધ્રાવાળાએ કાર્ય ઉપર હર્ષોદ્ગાર વ્યક્ત કરી ઉપાધ્યાયજીને અંજલિ આપી, વિદ્વાનોના સહકારથી જૈન સંસ્કૃતિને કેવો વેગ મળી શકે છે તે જણાવી, મુંબઈને આંગણે મહારાજશ્રી પધારીને આવા સમારંભો ઉજવે તેવી ભાવના વ્યક્ત કરી હતી.

મહત્ત્વના ઠરાવો

આ બેઠકમાં જુદા જુદા ઠરાવો પણ પસાર કરવામાં આવ્યા હતા. જે અન્યત્ર આપ્યા છે.

પ્રમુખશ્રીનો ઉપસંહાર

છેવટે સત્રના પ્રમુખ શ્રી ઇશ્વરચંદ્રજીએ ઉપસંહાર કરતાં સારસ્વત સત્રને તથા ઉપાધ્યાયજીને ભવ્ય શબ્દોમાં અંજલિ આપી પોતાનો આનંદ વ્યક્ત કરી પૂજ્ય મુનિરાજોનો, સત્રસમિતિનો, સ્વાગત પ્રમુખનો, તથા જુદી જુદી વ્યક્તિઓનો આભાર માન્યો હતો.

અંતિમ આભાર

ત્યારબાદ શ્રી જશુભાઇ જૈને સ્વાગત પ્રમુખ, સ્વાગત સમિતિ, વિદ્વાનો, પ્રૉફેસરો, શેઠ જીવાભાઈ, શ્રી વાડીલાલ આદિનો તથા આમંત્રિત ગૃહસ્થોનો તથા પ્રદર્શનમાં પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી ભગવાનની સ્વહસ્તાક્ષરીય બહુમૂલ્ય કૃતિઓ વગેરે સાધનો પૂરાં પાડનાર પૂ મુનિવર શ્રી પુણ્યવિજયજી મહારાજનો, તથા જુદા જુદા કાર્યકરોનો આભાર માનીને છેવટે સત્રના જન્મદાતા મહારાજ શ્રી યશોવિજયજી મહારાજને ગુજરાત ડભોઇ તથા જૈનસમાજ કદી નહિ ભૂલે વગેરે જણાવી તેમનો પણ આભાર માન્યો હતો. સભામાંથી જયનાદોની ઘોષણાઓ થઇ. પૂજ્ય મહારાજશ્રીએ વિદાયગીરી લીધી.

પ્રમુખશ્રીનો વિદાયસત્કાર

અંતે સત્રના પ્રમુખ શ્રી ઇશ્વરચંદ્રજીનો ફૂલહારથી સત્કાર કરવામાં આવ્યો હતો.

રેડીઓ પર બ્રૉડકાસ્ટ

તા. ૯–૩–૫૩ની રાત્રે આઠ વાગે બરોડા 'રેડીઓ' ઉપર જાણીતા વિદ્વાન ડૉ૦ ભોગીલાલ જે. સાંડેસરાએ સત્રની ઉજવણી અને શ્રીમદ્ યશોવિજયજીના જીવન અંગેના સમાચાર રીલે કર્યા હતા.

ગુરુમંદિરનો દ્વારોદ્ઘાટન સમારંભ

તા. ૮–૩–૫૩ની સવારે શ્રી યશોવિજયજી ગુરુમંદિરના દ્વાર-ઉદ્ઘાટનનો વિધિ શેઠ વાડીલાલ ચતુર્ભુજના શુભ હસ્તે થયો હતો. શેઠ જીવાભાઇએ ગુરુમૂર્તિની તથા શ્રી પુરષોત્તમદાસે ગુરુપાદુકાની પ્રથમ પૂજા કરી હતી. તે પ્રસંગે શેઠ પુરષોત્તમદાસ તરફથી એક હજાર રૂપિયાની તથા શેઠ જીવાભાઈ તરફથી રૂા. ૫૦૧ની સખાવત ઉપાધ્યાયજીના સ્મારક કાર્યમાં જાહેર થઈ હતી અને સત્રના બીજા દિવસે મુંબઈવાળા શેઠ જીવાભાઈ પ્રતાપસી તથા શેઠ વાડીલાલ ચતુર્ભુજ તથા શેઠ પરસોતમદાસ સુરચંદ તરફથી નવકારશી કરવામાં આવી હતી. ફાગણ વદ ૬ તથા ૭ના બન્ને દિવસે ડભોઈવાળા ભાઈઓ તરફથી સ્વામીવત્સલ કરવામાં આવ્યું હતું.

वादांश्च प्रतिवादांश्च वदन्तो निश्चितांस्तथा ।
तत्त्वान्तं नैव गच्छन्ति तिलपीलकवद्गतौ ॥

* * *

सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम् ।
एतदुक्तं समासेन लक्षणं सुखदुःखयोः ॥

ઉપા. શ્રી યશોવિજયજી] [કુ. નિ. તથા સદ્દ્. દ્વાત્રિં.

શ્રી યશોવિજયજી જ્ઞાન–સાહિત્યપ્રદર્શનનું

શેઠ પરસોતમ સુરચંદના હસ્તે થએલું ઉદ્‌ઘાટન

પૂ. ઉપાધ્યાયજીના સ્વહસ્તાક્ષરની બહુમૂલ્યકૃતિઓનું સુવર્ણમ્હોરોથી થએલું પૂજન

હજારો માણસોએ નીહાળેલું પ્રદર્શન

★

ઉપાધ્યાય શ્રી યશોવિજય સારસ્વત સત્ર મહોત્સવ નિમિત્તે એક નાનું પણ વિશિષ્ટ પ્રકારનું સુંદર પ્રદર્શન યોજવામાં આવ્યું હતું. જેનું ઉદ્‌ઘાટન સાતમ શનિવારની સવારે ધર્મપ્રેમી શેઠ પુરસોત્તમદાસ સુરચંદભાઈ પ્રાંગધ્રાવાળાના શુભ હસ્તે કરવામાં આવ્યું હતું. શેઠ પુરસોતમ સુરચંદે જૈન સાહિત્ય અને તેનો પ્રચાર કરવા બાબતનો ખાસ ઉલ્લેખ કરી જૈન ભંડારોમાં ભારતની ભવ્યસંસ્કૃતિ સંઘરવામાં જૈન સાધુઓએ બજાવેલી કીંમતી સેવાને અંજલિ આપી હતી ને આવાં પ્રદર્શનો વારંવાર યોજી પ્રજાને અનેક પ્રકારનું જ્ઞાન આપવાનું સૂચન કર્યું હતું. તે પ્રસંગે ગુજરાતના શિલ્પ સ્થાપત્યના ઉંડા અભ્યાસી ભાઈ ઉમાકાન્ત પ્રેમાનંદ શાહ એમ. એ. એ., જૈન કલા ઉપર ટૂંકું વિવેચન કરતાં જણાવ્યું હતું કે "ભારતીય કલાના ઈતિહાસમાં જૈન સંસ્કૃતિનો ઘણો જ મોટો ફાળો છે. અને ઐતિહાસિક કાળમાં મળતી મૂર્તિઓમાં સૌથી પ્રાચીન–મૌર્ય જમાનાની એક જૈન મૂર્તિ જ છે. જૈન સંઘે ભારતના કોઈ પણ ધર્મ કરતાં વધારે સંભાળપૂર્વક પોતાના પ્રાચીન ગ્રન્થો, દેવાલયો તથા શિલ્પો વગેરેની સાચવણી તથા ઐતિહાસિક નોંધો રાખવા પ્રયાસ કર્યો છે. પ્રાચીન જૈન સ્થાપત્ય અને કલાના હજુ ઘણા અવશેષો શોધી શકાય તેમ છે. આગળ ચાલતાં જણાવ્યું હતું કે ખાસ કરીને ભારતની પ્રાચીન નગરી સાંચી (ભિલસા નજીક)માં જૈન ધર્મની દૃષ્ટિએ તેમજ ભારતવર્ષની કલા, ઈતિહાસ વગેરેની દૃષ્ટિએ સંશોધન થવાની ખાસ જરૂર છે. વળી ખોદકામની આવશ્યકતા ઉપર ભાર મૂકતાં જણાવ્યું હતું કે આવી જ બીજી જરૂર મધ્યકાલીન ગુજરાતની ભવ્ય નગરી ચંદ્રાવતીના અવશેષોને એકત્ર કરવાની, ગુજરાત પાટણ, તેથી જુનું વલ્લભીપુર, તેથી વળી પણ જુનું ભિનમાલ, મારવાડનું શ્રીમાલપુર, 'ખોદકામની ખાસ' જરૂરીઆત માગી લે છે. પ્રાચીન જૈન ઈતિહાસની ખૂટતી કડીઓ મેળવવા માટે આ જગ્યાઓ તેમ જ ભારતનો પશ્ચિમભાગ સંશોધન માગી લે છે. આ પ્રદર્શનમાં ગુજરાતની પ્રાચીન ભવ્ય શિલ્પ શૈલીના, સમય ઓછો મળવાથી બહુ થોડા જ નમૂના રજૂ કરવામાં આવ્યા છે જેમાં ખાસકરીને આકોટા અને વસંતગઢની ધાતુ પ્રતિમાઓના મુખ્ય છે.

પ્રદર્શનમાં ન્યાયાચાર્ય ઉપાધ્યાય શ્રી યશોવિજયજી મહારાજના પોતાના જ હાથે લખેલા ગ્રન્થોની પ્રતો તેમજ તેમના ગ્રન્થોની બીજી હસ્તલિખિત તેમ જ તેમની પ્રસિદ્ધ અને અપ્રસિદ્ધ અન્ય કૃતિઓ પણ રજૂ કરવામાં આવેલી છે. એ સ્વહસ્ત લિખિત મહત્ત્વની પ્રતિઓ જાણીતા સંશોધક મુનિવર શ્રી પુણ્યવિજયજી મહારાજના સંગ્રહની છે. વળી મુનિશ્રી રંગવિજયજી (ખંભાત), પ્રવર્તક શ્રી કાન્તિવિજયજી, મુનિશ્રી

હંસવિજયજી, તેમજ પ્રાચ્ય વિદ્યા મંદિર' (વડોદરા)ના ગ્રન્થ ભંડારોમાંથી આ પ્રતો રજૂ કરવામાં આવી છે. પ્રતો રજૂ કરવામાં પંડિત લાલચંદ્ર ગાંધી, તથા મુનિશ્રી યશોવિજયજી મહારાજે ભારે જહેમત ઉઠાવી છે. તેમજ શેઠ આણંદજી કલ્યાણજી અમદાવાદ, શ્રી મુક્તિ કમળ જૈન મોહન જ્ઞાન મંદિર વડોદરાના સંગ્રહના ફોટાઓ, તથા મુનિશ્રી પુણ્યવિજયજીના સંગ્રહનાં ભવ્ય યન્ત્રપટો, વિનંતિપટો, સુવર્ણ-રૌપ્ય-અક્ષરી સચિત્ર પ્રતિઓ વગેરે ઇતર સાહિત્ય રજૂ કરવામાં આવ્યું હતું. જૈન શિલ્પ અને કલાના થોડા નમૂના રજૂ કરીને તેની વિશિષ્ટ ખૂબીઓનો ખ્યાલ આપવાનો સુંદર પ્રયાસ કર્યો હતો. શ્રી ગોકુલદાસ કાપડીઆએ બનાવેલા અને જૈન સાહિત્ય મંદિરની માલીકીના ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામીના જીવન પ્રસંગોના આકર્ષક સુંદર ચિત્રો સહુ કોઈનું ખાસ ધ્યાન ખેંચે તેવા હતા.

કીંમતી પ્રતિઓ ખાસ કાચના કેસીઝોમાં મૂકવામાં આવી હતી. પ્રદર્શનનો લાભ જૈન-જૈનેતરવર્ગે મોટી સંખ્યામાં લીધો હતો.

એક બાજુ પ્રદર્શનમાં ન્યાયાચાર્ય, ન્યાયવિશારદ પૂ. ઉપાધ્યાયજી શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજની ઉપલબ્ધ મુદ્રિત પ્રતાકાર ને પુસ્તકાકારની તમામ કૃતિઓ ખુલ્લી કરીને મૂકવામાં આવી હતી. જેસલમેરમાં મળેલી પ્રાચીન કલાકૃતિઓના પણ નમૂના મૂકવામાં આવેલા હતા.

પ્રદર્શનમાં સારી એવી સામગ્રી પ્રખર સંશોધક મુનિવર શ્રી પુણ્યવિજયજી મહારાજે આપવા ઉદારતા બતાવી હતી. ને દરેક સંસ્થા અને મોકલાવનારનો પ્રવચનમાં આભાર માનવામાં આવ્યો હતો.

* * *

સત્ર પસાર કરેલા ઠરાવો

ઠરાવ ૧, આ સંમેલન માને છે કે ન્યાયવિશારદ ન્યાયાચાર્ય મહોપાધ્યાય શ્રી યશોવિજય મહારાજનું સ્મારક નીચેની રીતે થવું જોઈએ.

(૧) તેઓશ્રીના ગ્રન્થોનું તુલનાત્મક અને શાસ્ત્રીય પદ્ધતિએ તે તે વિષયના યોગ્ય વિદ્વાનો દ્વારા સંપાદન કરાવવું જોઈએ (૨) તેમણે જે જે વિષયોના ગ્રન્થો રચ્યા હોય તે વિષયોના તથા જૈન તત્ત્વજ્ઞાનના અભ્યાસ માટે સમુચિત યોજના કરવી. (૩) શક્ય હોય તે સ્થળોએ તેઓશ્રીના ગ્રન્થોના અભ્યાસ માટે શ્રી યશોવિજય અભ્યાસ-વર્તુલો સ્થાપવાં. (૪) તેઓશ્રીની અત્યાર સુધી અપ્રાપ્ય ગણાતી કૃતિઓ મેળવી આપનારને યોગ્ય પારિતોષિક આપવું. (૫) તેઓશ્રીનું જીવનચરિત્ર યોગ્ય સ્વરૂપમાં બહાર પાડવું (૬) તેઓશ્રીની જન્મભૂમિ કનોડુમાં યોગ્ય સ્મારકની સ્થાપના કરવી. (૭) આ સારસ્વત સત્રના પ્રસંગે આવેલા નિબંધોનું પ્રકાશન કરવું. (૮) સમયના અભાવે જે વિદ્વાનો પોતાના નિબંધો મોકલી શક્યા નથી તેમને પોતાના નિબંધો ત્રણ માસમાં મોકલવા વિનંતિ કરવી. (૯) ઉપરના હેતુઓ અમલમાં મૂકવા માટે વધુ સભ્યો ઉમેરવાની સત્તા સાથે નીચેના સભ્યોની સમિતિ નીમવામાં આવે છે.

(જૈન મુનિઓ અને ગૃહસ્થ વિદ્વાનો તથા જૈન આગેવાનોની એક સમિતિ નીમવામાં આવી છે જેની યાદી આગળ છાપી છે).

ઠરાવ : ૨ ભારતવર્ષના અને વિશેષતઃ ગુજરાતના સાંસ્કૃતિક વિકાસમાં જૈન સાહિત્યનો વિશાળ ફાળો છે. તે દૃષ્ટિ લક્ષમાં રાખી સદ્‌ગત મહારાજા શ્રી સયાજીરાવ ગાયકવાડે પ્રાચ્ય વિદ્યામંદિર વડોદરામાં જૈન પંડિતદ્વારા જૈન સાહિત્યના સંપાદન માટે લાંબી યોજના કરી હતી, જે લગભગ [illegible] વર્ષ સુધી ચાલુ રહી. હાલમાં સદર જગ્યા [illegible] કરવામાં આવી છે. આ સંમેલન મહારાજા સયાજીરાવ યુનિવર્સિટીને

આગ્રહપૂર્વક ભલામણ કરે છે કે જૈન સાહિત્યના સંપાદનનું કામ થતું રહે તે માટે પૂર્વવત્ યોજના ચાલુ રાખવા માટે ઘટતાં પગલાં તાત્કાલિક ભરવાની વિનંતિ કરે છે.

ઠરાવ : ૩ મુંબઈ રાજ્યમાં આવેલા તમામ વિદ્યાપીઠોમાં બોર્ડ ઑફ સ્ટડીઝ વગેરે અને તેની અંતર્ગતમાં યોગ્ય અર્ધમાગધી (પ્રાકૃત ભાષા)ને પઠનપાઠનનાં પ્રબંધ માટે આ સંમેલન જે તે વિદ્યાપીઠોને આગ્રહપૂર્વક ભલામણ કરે છે.

ઠરાવ : ૪ અર્ધમાગધી ભાષાનું શિક્ષણ સ્કૂલોદ્વારા અપાવવા ભલામણ અંગેનો.

ઠરાવ : ૫ જૈન સમાજમાં અર્ધમાગધી ભાષાનો પ્રચાર થાય તે માટે જૈનોને આ સંમેલન ભલામણ કરે છે કે તેમણે પોતાના બાળકોને આ ભાષાનો અભ્યાસ કરવા યોગ્ય પ્રેરણા કરવી અને ઘટતો પ્રબંધ કરવો.

ઠરાવ : ૬ જૈન જ્ઞાનભંડારોનાં સૂચિપત્રો શાસ્ત્રીય પદ્ધતિથી તૈયાર કરી પ્રસિદ્ધ કરવા આ સંમેલન તે તે જ્ઞાનભંડારોના વ્યવસ્થાપકોને આગ્રહપૂર્વક વિનંતિ કરે છે.

ઠરાવ : ૭ મુંબઈરાજ્ય માટે શ્રી મહાવીર કલ્યાણક-જયંતિનો દિવસ સરકારે ગેઝેટેડ તહેવાર તરીકે જાહેર કરેલો છે. મુલ્કી કચેરીઓમાં તે દિવસે રજા રાખવામાં આવે છે. વડોદરા પ્રાંતમાં વિપુલ જૈનસંખ્યા છે. તેથી વડોદરાની દિવાની કચેરીઓમાં મહાવીર જયંતિના દિવસે રજા પાળવા આ સત્ર વડોદરાના ડીસ્ટ્રીક્ટ જડજને આગ્રહપૂર્વક વિનંતિ કરે છે.

ઠરાવ : ૮ શ્રી યશોવિજયજી સારસ્વત સત્રને પોતાને આંગણે આમંત્રી તેની ભવ્ય રીતે ઉજવી અને શ્રી સંઘમાં સંપ સંગઠન સાધવા બદલ ડભોઈના શ્રીસંઘને હાર્દિક અભિનંદન આપે છે.

ઠરાવ : ૯ આ સત્રના જન્મદાતા અને પ્રેરક સાહિત્યપ્રેમી મુનિશ્રી યશોવિજયજી મહારાજ પ્રત્યે આ સંમેલન પોતાનું ઋણ વ્યક્ત કરે છે અને તેમના પ્રગતિકારક વિચારો અને ભવ્ય આદર્શ બદલ તેઓશ્રીને તથા તેમને સંપૂર્ણ સહાયક તેઓશ્રીના ગુરુદેવો — પૂ. આચાર્ય શ્રી વિજયપ્રતાપસૂરીશ્વરજી મહારાજ તથા પૂ. આચાર્ય શ્રી વિજયધર્મસૂરીશ્વરજી મહારાજને અભિનંદન પૂર્વક ધન્યવાદ આપે છે.

* * *

નોંધ — ૩૦ વરસના જૂના જડએમૂલાક જામેલા ઝઘડાના આવેલા સુખદ અન્તના સમાચારનો "જૈન" પત્રમાંનો ઉતારો.

ડભોઈનું સુખદ સમધાન

ડભોઈમાં વિજયદેવસૂરિ પક્ષ અને સાગર પક્ષ વચ્ચેના દુઃખદ કલેશનો લાંબા વરસે જે સુખદ અંત આવ્યો તે સાંભળીને સ્થાનિક ને બહારના ભાઈઓને આનંદ થયો અને પૂ. ઉપાધ્યાયજી યશોવિજયજી મહારાજનો પ્રભાવ વધુ પ્રશંસનીય બન્યો, કારણ કે આજ સુધીના અનેક પ્રસંગમાં થયેલા પ્રયત્નો સફળ નહોતા બન્યા, તે આજે બની ગયા.
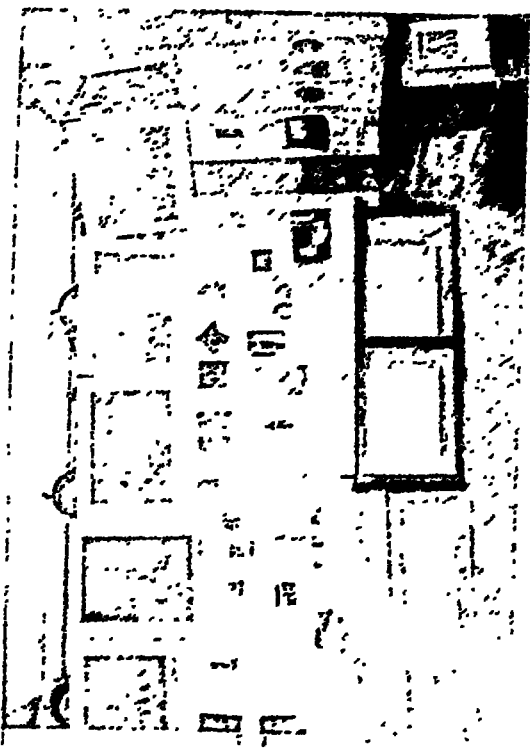
ડભોઈના મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી જૈન જ્ઞાનમંદિરના ભવ્ય મુકામમાં પ્રદર્શન સમિતિ તરફથી જે ભવ્ય પ્રદર્શન ગોઠવવામાં આવ્યું હતું, તેની તસ્વીર : આ પ્રદર્શનમાં પૂ. ઉપાધ્યાયજી ભગવાન શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજના સ્વહસ્તાક્ષરની ભવ્યકૃતિઓ. તેઓશ્રીનું અન્ય હસ્તલિખિત સાહિત્ય, તેમ જ તમામ મુદ્રિત સાહિત્ય. તથા અપ્રગટ કૃતિઓ વગેરે મૂકવામાં આવેલું. તેમજ જૈન શિલ્પ-સ્થાપત્ય તથા ચિત્રકળાની પ્રાચીન અર્વાચીન બહુમૂલ્યકૃતિઓ પણ રજૂ કરવામાં આવી હતી.

આ સંપ સાધવામાં એ તો જાણીતું જ છે કે મહત્ત્વની આદ્ય પ્રેરણા પૂ. વિજયમોહનસૂરિજીના શિષ્યોની હતી. તેઓ ઉલ્લા મહિનાઓથી એ ઇચ્છા રાખતા હતા કે પૂ. ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજીની પ્રતિષ્ઠા તથા સત્રોત્સવ પ્રસંગે એકતા થઈ જાય તો ઉજવણી ઓર દીપી ઉઠે. તેમાં પૂ. મહારાજ શ્રી યશોવિજયજીને તો આ બાબતમાં ખૂબ જ ધગશ હતી. તેઓ સહુ પધાર્યા. બીજી બાજુ પૂ. આ. શ્રી જંબૂસૂરિજી મહારાજ પણ પધાર્યા એટલે બંને પક્ષના આચાર્યોના આશીર્વાદ તો હતા જ, પણ એ શક્ય કેમ બને? તે વિચારો ચાલતા હતા. ત્યાં પૂ. ઉપાધ્યાયજીની પ્રતિષ્ઠા ને સત્રોત્સવ નિમિત્ત જ ખાસ ભાગ લેવા મુંબઈના આગેવાન શેઠ જીવતલાલ પ્રતાપસી, શેઠ વાડીલાલ ચતુર્ભુજ, શેઠ પરસોતમ સુરચંદ, તથા શ્રી ખદામીસાહેબ પ્રસન્નમુખભાઈ આવી પહોંચ્યા. પૂ. આ. શ્રીવિજયમોહનસૂરિજીના શિષ્યોએ આ ત્રિપુટીને પ્રેરણા કરી, એટલે ફાગણ વદિ સાતમની બપોરે પ્રતિષ્ઠાના અને સત્રારંભના પહેલા જ દિવસે બંને પક્ષના આગેવાનો ભેગા થયા. પાંચ વાગતાં સમાધાન થયું. ને તે જ દિવસે બંને પક્ષના આગેવાનો વિજયસભા તરફના જમણવારમાં વિજયસભાની વાડીમાં સાથે બેસીને જમ્યા.

એની ખુશાલીમાં તે જ વખતે સત્ર ને પ્રતિષ્ઠા પર આવેલી મુંબઈવાળી શ્રીમંત ત્રિપુટીએ આઠમના દિવસે સત્રમંડપમાં જ પોતાના તરફથી નવકારસીજમણની જાહેરાત કરી એટલે સંઘમાં વધુ આનંદ પ્રગટ્યો. આમ સત્ર અને પ્રતિષ્ઠાના પ્રસંગે મુંબઈના આગેવાનોનું આવવાનું થતાં આ સમાધાન સુલભ થયું. મુંબઈના આગેવાનોની સજ્જડ મહેનત સફળ થઈ હતી. એ માટે સહુ કોઈ પૂ. ઉપાધ્યાયજીના પુણ્યપ્રભાવને પ્રશંસી રહ્યું છે. આ સમાધાનમાં શીનોરવાળા નાથાભાઈ તથા વડોદરાવાળા વૈદ્ય વાડીભાઈએ પણ ઘણી પ્રશંસનીય મહેનત ઉઠાવી હતી. બાકી, પૂજ્ય ગુરુદેવોની અંતરની નિખાલસ દિલની ભાવનાનું આ સુંદર ફળ આવ્યું.

卐

વિનયનું સ્વરૂપ

त्रैलोक्येऽपि विनीतानां दृश्यते सुखसंगिनाम् ।
त्रैलोक्येऽप्यविनीतानां दृश्यतेऽसुखसंगिनाम् ॥
ज्ञानादिविनयेनैव पूज्यत्वाप्तिः श्रुतोदिता ।
गुरुत्वं हि गुणापेक्षं न स्वेच्छामनुधावति ॥

× × ×

शुश्रूषति विनीतः सन् सम्यगेवावबुध्यते ।
यथावत् कुरुते चार्थं मदेन च न माद्यति ॥

× × ×

दोषाः किल तमांसीव क्षीयन्ते विनयेन च ।
प्रसृतेनांशुजालेन चण्डमार्तण्डमण्डलात् ॥
श्रुतस्याप्यतिदोषाय ग्रहणं विनयं विना ।
यथामहानिधानस्य विमाण(नं)धनमविधिम् ॥
छिद्यते विनयो यैस्तु शुश्रूषोऽपि परैरपि ।
तैरप्यग्रेसरीभूय मोक्षमार्गो विलुप्यते ॥

ઉપા. શ્રી યશોવિજયજી] [વિનયદ્વાત્રિંશિકા

સત્રનાં પ્રમુખનાં ભાષણો તથા પૂ. મહારાજશ્રીનાં પ્રવચનો

※

નોંધ : સ્વાગતપ્રમુખ શા. ચાંદચંદ જેઠાભાઈ આપેલા ભાષણનો ઉતારો અત્ર આપવામાં આવ્યો છે.

॥ श्रीलोढणपार्श्वनाथाय नमोनमः ॥

સ્વાગત પ્રમુખનું વક્તવ્ય,

શ્રીયશોવિજય સારસ્વત સત્રના પ્રમુખ મહોદય, વિદ્વાનો, અને અન્ય સજ્જનો.

શ્રીયશોવિજય સારસ્વત સત્રમાં ભાગ લેવા આપ સૌ દૂરદૂરથી અમારી આ નાનકડી નગરી ડભોઈમાં પધાર્યા છો, તે પ્રસંગે આપને આવકાર આપતાં અને આપનું સ્વાગત કરતાં મને અત્યંત આનંદ થાય છે.

અમારું ડભોઈ લગભગ ત્રીશ હજારની વસ્તી ધરાવતું નાનું છતાં મોટાભાગનું તાલુકાનું મથક છે. તેનો ઇતિહાસ ગૌરવવંતો છે. તેનું પ્રાચીન નામ દર્ભાવતી હતું. લાટ દેશના મુખ્ય નગરોમાં તેની ગણના થતી હતી. પૂર્વે દક્ષિણ ગુજરાતમાંથી ઉત્તરમાં જવાનો અને પૂર્વ દેશમાંથી દરિયા કિનારાના ખંભાત વગેરે બંદરો તરફ જવાનો ધોરી માર્ગ ડભોઈમાંથી પસાર થતો હતો. વેપારના મથક તરીકે તેમ જ ધાર્મિક સંસ્કૃતિની પ્રબલતાને લીધે તેની આબાદી સારી હતી; ગુજરાતની દક્ષિણ સરહદના મથકરૂપ આ નગરના સંરક્ષણ માટે નગરની ચારે ય બાજુ મંત્રીશ્વર તેજપાલે ભવ્ય કિલ્લો બંધાવેલો જે આજે ભાંગી તૂટી હાલતમાં છતાં પ્રાચીન ગૌરવ ગાથા ગાતો હજુ પણ વિદ્યમાન છે આ કિલ્લાના દરવાજાઓની ભવ્ય અને કલાત્મક કોતરણી અને તેનું સુરેખ સ્થાપત્ય, પ્રતિવર્ષ અનેક કલાપ્રેમીઓને ડભોઈના દર્શને ખેંચી લાવે છે. કિલ્લાના તમામ દરવાજાઓ પૈકી હીરાભાગોળનું સ્થાપત્ય અને તેથીએ વિશેષ એ મહાન સ્થાપત્યના સર્જક હીરા કડીયાનો રોમાંચક અને રસિક ઇતિહાસ, તેના પરિણામે બંધાયેલું નેનતલાવ, આ સૌ કોઈ પણ, આજની ડભોઈનો પ્રવાસી તેના જીવંત સ્થાપત્યને નિહાળે છે.

આ ઉપરાંત અહીંના અતિભવ્ય અને કલાત્મક ગગનચુંબિ જૈનમંદિરો, જેમાં બિરાજમાન મહાપ્રભાવક શ્રી લોઢણપાર્શ્વનાથ પ્રભુ વગેરે મંગલમય ભાવોત્પાદક પ્રતિમાઓ

અને તેનો આધ્યાત્મિક, સંસ્કૃતિ પોષક ભૂતકાલીન ઇતિહાસ, પ્રતિવર્ષે સંખ્યાબંધ જૈન યાત્રિકોને આત્મકલ્યાણના અમૃતપાનનું આમંત્રણ આપે છે. મહાગુજરાતના મંત્રીશ્વર તેજપાલે તેમ જ માળવાના મહામાત્ય પેથડશાહે ભૂતકાલમાં આ રમણીય જિનમંદિરો બંધાવેલા; એટલું જ નહિં પરંતુ અહિંનું વૈદ્યનાથ મહાદેવનું મંદિર તેમણે બંધાવી આપેલ; એમ આ નગરીનો પ્રાચીન ઇતિહાસ જણાવે છે તે સમયમાં આ દર્ભાવતી નગરી ગુજરાતની પાંચ મહાનગરીઓ પૈકીની એક નગરી તરીકે ગણના ગણવામાં આવતી હતી.

આ એ જ મહાનગરી છે કે, જ્યાં — જેની ગરબીઓ ગામેગામ ગુજરાતણો હજી ગાય છે તે — ભક્ત કવિ શ્રી દયારામ જન્મ્યા હતા.

આ એ જ મહાનગરી છે કે જેની પુણ્યભૂમિમાંથી પૂ. પંન્યાસ શ્રી રંગવિજયજી મ. તથા પૂ. શ્રી જયવિજયજી મ. તથા પૂ. શ્રી અમરવિજયજી મ. આદિ લગભગ ૧૦ મુનિમહાત્માઓ દીક્ષિત થએલા હતા. અને આજેય સાધુ સાધ્વીઓ થઈને લગભગ ૪૦ પુણ્યાત્માઓ દીક્ષિત તરીકે વિદ્યમાન છે. આજના ઉત્સવના મુખ્ય પ્રેરક અમારા ઉપકારક, અથાગ પરિશ્રમી, સાહિત્યપ્રેમી, અવધાનકાર પૂ. વિદ્વાન મુનિવર શ્રી યશોવિજયજી મહારાજ અહીં જ બીરાજેલા છે, તેઓ પણ જન્મે ડભોઈના જ છે.

આ એ જ મહાનગરી છે કે જ્યાં, આ સત્ર જેના શુભ નામ સાથે સંકળાયેલું છે, તે મહાન ઉપાધ્યાય શ્રી યશોવિજયજી વિ. સં. ૧૭૪૩ માં સ્વર્ગવાસ પામ્યા હતા. સત્તરમી સદીમાં થયેલા ષડ્દર્શનવેત્તા, ન્યાયાચાર્ય, ન્યાયવિશારદ આ 'વાચકજશ'નું નામ તત્કાલીન સંતો, મહાત્માઓ અને વિદ્વાનોમાં મોખરે છે. તેઓશ્રી પોતાની અપ્રતિમ વિદ્વત્તા, વિપુલ સાહિત્યસર્જન અને વિવેચન શક્તિથી લઘુ શ્રી હરિભદ્રાચાર્ય તથા બીજા શ્રી હેમચંદ્રાચાર્ય તરીકે પ્રશંસાને પામ્યા છે. છેલ્લા ત્રણસો વર્ષમાં તેમના જેવી તાર્કિક મહાન વિભૂતિ જૈન સમાજમાં પ્રકટી દેખાતી નથી. તેઓશ્રીએ પ્રાકૃત – સંસ્કૃત – ગુજરાતી અને હિંદી–મારવાડી ભાષામાં ગદ્યપદ્યમાં લગભગ ૩૦૦ જેટલા ગ્રન્થો રચેલા છે. જેમાંના કેટલાક પ્રસિદ્ધ છે જ્યારે કેટલાક અપ્રસિદ્ધ છે અને પ્રાપ્ય છે.

કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રીમદ્ હેમચંદ્રાચાર્ય પછી જૈન સમાજે વિપુલ સાહિત્યના સર્જનકાર અને નવ્યન્યાયના પ્રખર વિદ્વાન તરીકે બીજા 'જ્યોતિર્ધર'ની ગુજરાતને ભેટ આપી છે.

તેઓશ્રીના સ્વર્ગગમન બાદ બીજે જ વર્ષે વિ. સં. ૧૭૪૫ માં પ્રતિષ્ઠિત તેમની પાદુકા અહિં સ્થાપિત થયેલી છે. તે પાદુકા સ્થાને નૂતન ગુરુમંદિરની રચના થઈ છે. તેની પ્રતિષ્ઠાના શુભ ટાંકણે, અહીં જ બિરાજમાન, વર્તમાન શ્રી યશોવિજયજી મહારાજની પ્રેરણાથી ઘણાઓને એવી ભાવના થઈ કે સ્તૂપ – પ્રતિષ્ઠા એ તો આપણી શ્રદ્ધા – ભાવનાનું જીવતું પ્રેરણાત્મક પ્રતીક હોવાથી જરૂરી છે જ; છતાં એ એક બાહ્યભક્તિ કે અંજલિ છે. તેમની સાચી ભક્તિ કે અંજલિ તો તેમની વિદ્વત્તાને છાજે તેવી વિદ્વ.

. . . .

પરિષદ્ દ્વારા તેઓશ્રીની કૃતિઓનો, તેઓશ્રીનાં સાહિત્યની, તેઓશ્રીના સિદ્ધાંતોની ચર્ચા થાય અને જ્ઞાનગોષ્ટિ દ્વારા કોઈ સ્થાયી યોજના ઘડી કઢાય તેમાં રહેલી છે. તે ભાવનાનું પરિણામ એ આજનું "સારસ્વત સત્ર" છે.

સારસ્વત સત્ર એ સંસ્કાર ઉત્સવ છે અને માનવજીવનમાં તેની કિંમત ઘણી છે. આવો ઉત્સવ અમારા ગામમાં ઉજવાય છે તેથી અમે ગૌરવ અનુભવીએ છીએ.

શાસન પ્રભાવક પૂ. આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજયમોહનસૂરીશ્વરજી મહારાજના પટ્ટધર શિષ્ય પૂ. આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજયપ્રતાપસૂરીશ્વરજી, તેઓશ્રીના પટ્ટધર વિદ્વાન આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજયધર્મસૂરીશ્વરજી, તથા તેઓશ્રીના શિષ્ય મુનિશ્રી યશોવિજયજી મહારાજનો હું અભિવાદન સહ આભાર માનું છું. જેઓએ જૈન ઇતિહાસમાં યાદગાર રહી જાય તેવો અનેરો પ્રસંગ ને લાભ અમને અપાવ્યો છે.

દૂર દૂરથી હડમજલ કરી પધારનાર પૂ. આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજયપ્રતાપસૂરીશ્વરજી મ. તથા પરમપૂજ્ય આ. શ્રીમદ્ વિજયમાણિક્યસૂરીશ્વરજી મહારાજ તથા પધારેલા પૂ. સાધ્વીજી મહારાજાઓને પણ હું વંદન કરું છું.

બીજી એક કૃતજ્ઞતા મારે વ્યક્ત કરવી જોઈએ; તે એ કે એક પિતા પોતાના પુત્ર તરફ જેવો વાત્સલ્ય ભાવ ધરાવે તેવો જ ભાવ સ્વ. પૂજ્ય આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજયમોહન-સૂરીશ્વરજી મહારાજ અમારા ક્ષેત્ર પ્રત્યે ધરાવતા હતા. ત્યાર બાદ તેઓશ્રીના વિદ્વાન અને શાસન પ્રભાવક શિષ્ય–પ્રશિષ્યો પણ અમારા પ્રત્યે તેવો જ ભાવ ધરાવતા આવ્યા છે. ડભોઈના દીક્ષિત પુણ્યાત્માઓનો મ્હોટો ભાગ તેઓશ્રીના આજ્ઞાવર્તિ છે. ડભોઈનું આયંબિલ ખાતું, સેવાસદન સંસ્થા તેઓશ્રીની પ્રેરણાનું જ પરિણામ છે અને પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજનું જૈન સંઘ ઉપરના અજોડ ઉપકારનું ઋણ અદા કરવાનો સૌથી વધુ ધગશ, પ્રયાસ તેઓશ્રીના જ સમુદાયનો છે. જે વાત જૈન સમાજને જાણીતી છે. અને પૂ. ઉપાધ્યાયજીનો આજે ઉજવાતો જ્ઞાન–ચારિત્રોત્સવનો મહાન પ્રસંગ પણ તેમના જ ભગીરથ પ્રયત્નને આભારી છે. તેથી તેઓશ્રીને હું ભૂરિ ભૂરિ વંદના કરું છું. પૂજ્યશ્રીઓને, ને અમારા સંઘના ગૌરવરૂપ સાધુરત્ન મહારાજ શ્રી યશોવિજયજીને વિનમ્ર વિનંતિ કરું છું કે આપે જે ઉત્સાહ ને ધગશથી કાર્ય આદર્યું છે, તે આપના ગુરુદેવના શુભાશીર્વાદથી અવશ્ય પૂરું કરશો. અમે અમારો બનતો સહકાર જરૂર આપીશું.

બીજી એક વાત કહું કે, આજથી પંદર વર્ષ ઉપર અમોને આ મહાપુરુષના સમાધિસ્થળનો પુનરોદ્ધાર કરવાની ભાવના જાગી, જંગલમાં ખુલ્લા પડેલા સ્થળને શ્રી સંઘે નવું જીવન આપ્યું અને આજે તો તે સ્થળે, ભવ્ય આદિજિન પાદુકા, ભગવાન મહાવીરની નિર્વાણભૂમિની ભવ્ય યાદ આપતું રમણીય જલમંદિર, પરમવિભૂતિ પૂ. ઉપાધ્યાય શ્રીમદ્ યશોવિજયજીનું ગુરુપાદુકા મંદિર, ડભોઈમાં જ સ્વર્ગવાસી થયેલ પૂ. આચાર્ય શ્રીમદ્

વિજયમોહનસૂરીશ્વરજીનું ગુરુમંદિર વગેરેથી એક પરમ શાંતિના ધામ સમું આધ્યાત્મિક સ્થાન બની ગયું છે. બહારના યાત્રાર્થીઓ ત્યાંની પવિત્ર અને આધ્યાત્મિક હવાનો કોઈ જુદો જ અનુભવ લઈને જાય છે.

આ સ્થળના પુનરોદ્ધારમાં સ્વ. પારેખ શેઠ જીવણલાલ ચુનિલાલ તથા પટેલ શ્રી ચંદુલાલ હીંમતલાલ અને તેમના સાથીદારોનો ફાળો મહત્વનો છે. ઉપદેશદ્વારા આર્થિક સહાય કરાવનારા જુદા જુદા પૂ. મુનિરાજો ને સાધ્વીજી મહારાજાઓ પણ યાદ આવ્યા વિના રહેતા નથી. હજુ અમારું કાર્ય અધૂરું છે. પૂ. ઉપાધ્યાયજી સમસ્ત જૈન સંઘના હતા, તો ચતુર્વિધ જૈન સંઘે જેવો સહકાર આપ્યો છે તેવો. બલ્કે તેથી વધુ સહકાર આપશે તેવી હું વિનંતિ કરું છું.

પૂ. ઉપાધ્યાયજી આપણે માટે મહાન છે. તેઓ નજીકના જ મહાન ઉપકારી છે. ભગવાન ઉમાસ્વાતિવાચકની 'सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः'ની ઉક્તિ પ્રમાણે પૂ. ઉપાધ્યાયજીની મોક્ષપ્રાપ્તિના કારણભૂત કેવી મહાન શ્રદ્ધા, કેવું અગાધ અને અખૂટ જ્ઞાન, અને કેવી અનુપમ ચારિત્રશીલતા હતી; એ અહીં પધારેલા વિદ્વાનોના પ્રવચનોથી સાંભળશો જ. હું તો તેઓને મારા શત શત વંદન કરીને શાસન દેવોને પ્રાર્થના કરું છું કે આવા અનેક ઉપાધ્યાયજીઓ સમાજમાંથી પાકે અને જૈનશાસન અને જગતને પ્રભાવિત બનાવે.

આ સત્રનો હેતુ એક જ છે કે પૂ. ઉપાધ્યાયજી જેવી મહાન વ્યક્તિને બૃહદ્ ગુજરાત અને ભારત ઓળખતું થાય, આટલી ભૂમિકા આ સત્ર ઊભી કરવા માગે છે. જેથી તેમાંથી ભાવિ કોઈ સક્રિય પરિણામો જન્મ પામે.

અમારે આંગણે પધારેલા સજ્જનોની સેવા-ભક્તિ માટે સ્વાગત સમિતિએ ઉચિત તમામ પ્રબંધ કર્યો છે, છતાં મનુષ્ય સર્વશક્તિમાન તો નથી જ. એમ સમજીને અમારી ઊણપો લાગે તો ઉદારભાવે ક્ષમ્ય ગણશો તેવી નમ્ર વિનંતિ કરું છું.

આપ સૌ વિદ્વાનો જે મહાપુરુષના નામ સાથે જોડાએલા આ સત્રમાં ભાગ લઈ રહ્યા છો, તો મારી આપ સહુને વિનંતિ છે કે તેમના અધૂરા રહેલા કાર્યને વેગ મળે, તેમની જ્ઞાન, વિદ્વત્તા અને મહાનતાનો આમ જનતાને લાભ મળે, એવી કોઈ યોજના ઘડી કાઢશો તો આ સત્રની ઉજવણી સાર્થક થશે.

ફરી એક વાર આપ સૌનું અંતઃકરણપૂર્વક સ્વાગત કરી વિરમું છું.

शिवास्ते सन्तु पन्थानः । ॐ शांतिः

ઠે. ભાગોળવાળા
વિ. સં. ૨૦૦૮, શ્રા. વ. ૭-૮, શનિ-રવિ
તા. ૭-૮. ૧૯૫૨
વીર સં. ૨૪૭૮

બાલચંદ જેઠાલાલ શાહ
પ્રમુખ સ્વાગત સમિતિ, ડભોઈ.

卐

નોંધ : સત્રના ઉદ્ઘાટન પ્રસંગે ઉદ્ઘાટનપ્રમુખે કરેલા વક્તવ્યની નોંધ અત્ર રજૂ કરી છે.

શ્રીયશોવિજયજી સારસ્વત સત્ર ઉદ્ઘાટન પ્રસંગનું વક્તવ્ય

प्रमोदमासाद्य गुणैः परेषां, येषां मतिर्मज्जति साम्यसिन्धौ ।
देदीप्यते तेषु मनः प्रसादो गुणास्तथैते विशदीभवन्ति ॥ —શ્રી યશોવિજયજી

[વક્તા : શ્રી પ્રસન્નમુખ સુરચંદ બદામી
બી. એ.; બી. એસસી.; બાર-એટ-લૉ; જે.પી. જજ, સ્મોલકૉઝ કોર્ટ, મુંબઈ.

સજ્જનો અને સન્નારીઓ,

"શ્રી યશોવિજયજી સારસ્વત સત્ર"ના સમારંભનું ઉદ્ઘાટન કરતાં મને ઘણો જ આનંદ થાય છે. હું અત્યારે મારી યોગ્યતા અયોગ્યતાનો પ્રશ્ન ચર્ચતો નથી. હું માનું છું કે આ કાર્ય માટે મારા કરતાં વિશેષ લાયક વ્યક્તિને સત્રના સૂત્રધારો જરૂર મેળવી શક્યા હોત! છતાં પણ તેમણે જે મારા તરફ સદ્ભાવ દર્શાવી આ કામ મને સોંપ્યું છે તે માટે હું તેમનો આભારી છું.

આ સ્થળ (ડભોઈ) એ પૂ. શ્રી યશોવિજયજીના જીવન પ્રવાસનું અંતિમ સ્થાન હોઈ આ સમારંભ અહિં યોજાય એ સર્વ રીતે યોગ્ય જ છે. ઘણા લાંબા કાળે પણ આ કાર્ય હાથ ધરવામાં આવ્યું છે તે માટે સમારંભના યોજકો અને આ સત્રના અન્ય પ્રેરકો તેમ જ પ્રગટ અપ્રગટ સર્વ કાર્યકરોને હું મારા હાર્દિક અભિનંદન આપું છું.

બંધુઓ! શ્રી યશોવિજયજી કોણ હતા, ક્યારે એમનો જન્મ થયો, એમની જીવન ચર્યા શી હતી, એમણે સાહિત્યક્ષેત્રે શું શું કર્યું, એમના સમયમાં દેશકાળ અને ધર્મની કેવી પરિસ્થિતિ હતી અને એ પરિસ્થિતિ પરત્વે એમનો શું ફાળો હતો, એઓ ક્યારે કાળધર્મ પામ્યા? વગેરે વિષયો ઉપર વિસ્તૃત વિવેચન કે વિવરણ કરી હું આપનો સમય નહિ લઉં. એ કાર્ય હું અહિં પધારેલા વિદ્વદ્વર્ગને સોંપું છું. હું ફક્ત ટૂંકમાં એટલું જ કહીશ કે એમની ઓળખ આપણે આજે એમણે કરેલી શ્રુતની ઉપાસનાથી કરીએ છીએ. એ શ્રુતોપાસના એટલી ઉચ્ચ કક્ષાની હતી કે એમને ભગવાન્ શ્રી હરિભદ્રસૂરિ અને કલિકાલ સર્વજ્ઞ શ્રી હેમચંદ્રાચાર્ય પછીના પ્રથમ અને ચરમ શ્રુતધર કહેવામાં આવ્યા છે. ભારતીય દર્શનશાસ્ત્રની તત્કાલીન એક પણ શાખા એવી ન હતી કે જેમાં એમની પ્રતિભાએ ચમકારો ન માર્યો હોય. એમણે સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત ભાષામાં લખ્યું એટલું જ નહિ પણ સામાન્ય જનતા માટે ગુજરાતી વગેરે લોકભાષામાં પણ વિપુલ સાહિત્યનો સ્વાધ્યાય ધર્યો છે. નવ્યન્યાયના એક પ્રખર અને અદ્વિતીય દ્યોતક તરીકે તેઓ ખ્યાતિ પામ્યા છે, અને કૂર્ચાલી શારદ, ન્યાયાચાર્ય વિશારદાદિ અનેક બિરુદોને તેમણે પ્રાપ્ત કર્યાં છે.

જ્ઞાનની એમની અલૌકિક ઉપાસના જોતાં ઉપાધ્યાયજીને હું તો એક "મહાતપસ્વી" કહીને સંબોધીશ. સજ્જનો! આજે આપણે સદ્જ્ઞાનની સુસાધનાને અભાવે ફક્ત બાહ્યતપના ઉપાસકને જ તપસ્વી કહી સંબોધન કરીએ છીએ. આપણે જાણીએ છીએ કે બાહ્યતપ એ તો અભ્યંતર તપની પુષ્ટિને અર્થે જ છે, અને તેથી જ અભ્યંતર તપને બાહ્યતપ કરતાં ઊંચી

કક્ષામાં મૂક્યું છે. છતાં અભ્યંતર તપનો એક પ્રકાર 'સ્વાધ્યાય' છે, તેને આપણે જોઈએ એટલો આજે અપનાવતા નથી. વિચારો, કે ઉપાધ્યાયશ્રીએ પોતાના જીવન દરમિયાન જે વિપુલ સાહિત્ય સર્જ્યું છે તે માટે તેમણે કેટકેટલો સ્વાધ્યાય કર્યો હશે; અને તેમ કરી કેટકેટલી તપસ્યાના ભાગી થયા હશે! એમણે એ મહાન તપસ્યા ફક્ત એકલા પોતાને જ માટે નહિ પણ સ્વ અને પર બન્નેને ઉપકારક નીવડે એ રીતે આદરી અને અપનાવી. એથી જ હું એમને આજે "મહાતપસ્વી" કહી સંબોધું છું અને જૈન સમાજને ભારપૂર્વક અરજ કરું છું કે કેવળ બાહ્યતપના ચીલે ન ચાલી, જરા આગળ વધી, આજના સમારંભ જેવા અનેક સારસ્વત સત્ર યોજી સ્વાધ્યાય રૂપ અભ્યંતર તપની સાચી આરાધના કરે.

જૈન સમાજ ઉપર ઉપાધ્યાયશ્રીનો અનહદ ઉપકાર હોવા છતાં જૈન સમાજનો અક્ષમ્ય અપરાધ એ છે કે અઢીસો વર્ષના ટૂંકા સમય દરમિયાન પણ એ એમના અમૂલ્ય ગ્રંથોને સંપૂર્ણપણે સાચવી શક્યો નથી. અને એમના અનેક ગ્રંથો હજી અલભ્ય રહ્યા છે. આ માટે આપણે ગમે તે બ્હાના કાઢીએ પણ મૂળમાં જોઈએ તો આપણી જ્ઞાનોપાસનાની—સ્વાધ્યાયરૂપ તપસ્યાની — જ ખામી છે. છતાં હજી પણ આશા રહે છે કે આપણે અત્યંત ખંતપૂર્વક શોધ કરતા રહીશું તો આપણે ગુમાવ્યું છે તે પૈકીનું ઘણું પુનઃ પ્રાપ્ત કરી શકીશું.

આ ઉપરાંત એક વાતનો ખાસ ઉલ્લેખ કરવો જરૂરી ધારું છું અને એ, એ છે કે ઉપાધ્યાયશ્રી એક સાચા ક્રિયોદ્ધારક અને શુદ્ધાચાર પ્રરૂપક પણ હતા. તાત્કાલીન શ્વેતાંબર જૈન સમાજમાં જે બગાડો વ્યાપ્ત થઈ ગયો હતો તેને દૂર કરવા એમણે પ્રખર પુરુષાર્થ સેવ્યો હતો. એમના પ્રબળ પ્રતાપી આત્માએ અને એમના સમકાલીન શ્રીસત્યવિજયજી અને શ્રીઆનંદઘનજી મહારાજોએ એ કાર્ય એ વખતે કર્યું ન હોત તો જૈન સમાજ ભ્રષ્ટાચારના ગર્તમાં કેટલો ખૂંચી જાત તે કલ્પવું મુશ્કેલ નથી.

ઉપાધ્યાયજી જૈન શ્વેતાંબર સંપ્રદાયના હોવા છતાં એમની વિદ્યાવિષયક દૃષ્ટિ એટલી વિશાળ હતી કે પંડિત શ્રીસુખલાલજીએ કહ્યું છે તેમ "એ પોતાના સંપ્રદાય માત્રમાં સમાઈ ન શકી." અને તેથી જ એમણે પાતંજલયોગસૂત્ર અને દીગંબર સંપ્રદાયના અષ્ટસહસ્રી નામના ગ્રંથ ઉપર પણ વ્યાખ્યા લખી છે.

એમના સમકાલીન શ્રીમાનવિજયજી ઉપાધ્યાજીએ એમને 'શ્રુતકેવલી' કહી સંબોધ્યા છે. આવી મહાન વિભૂતિ આપણને કલિકાલ સર્વજ્ઞ શ્રીહેમચંદ્રાચાર્ય પછી લગભગ પાંચસો વર્ષે સાંપડે છે. 'હૈમ સારસ્વત સત્ર' પાટણમાં ઉજવાયા પછી થોડે વર્ષે આજે આપણને શ્રી યશોવિજયજી સારસ્વત સત્ર સમારંભનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થયો છે. એનો ઉદ્ઘાટન વિધિ આપની આજ્ઞાને વશવર્તી થઈ કરતાં પ્રારંભિક શ્લોકમાં જણાવ્યા પ્રમાણે હું ઇચ્છું છું કે ઉપાધ્યાયશ્રીના ગુણો વડે પ્રમોદ પામીને અહીં પધારેલ સર્વ વ્યક્તિ સમતા સમુદ્રમાં મગ્ન બને; તેઓના મનની પ્રસન્નતા ખૂબ વિરાજે. તેમ જ તેમના પણ તે તે ગુણો ખૂબ નિર્મળ બને.

અંતમાં આપની મારા તરફની સદ્ભાવનાની લાગણી માટે ફરીથી હાર્દિક ઉપકાર માની, મારા વક્તવ્યની સમાપ્તિ કરતાં આ સત્ર સમારંભને ખુલ્લો થયેલો જાહેર કરું છું. આપ તેને સહર્ષ વધાવી લેશો એમ ઇચ્છી, शिवास्ते सन्तु पन्थानः એ પ્રાર્થના સાથે વિરમું છું.

★

શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્રના પ્રમુખ, તર્ક, ન્યાય, મીમાંસારત્ન

દાર્શનિક પંડિત શ્રીઈશ્વરચંદ્રજીનું પ્રવચન

[વિદ્વદ્વર્ય, અનેક ભાષાવિદ્ શ્રીઈશ્વરચંદ્રજીએ પ્રમુખસ્થાનેથી વિદ્વત્તાભર્યું અને પ્રાણવાન પ્રવચન કર્યું હતું. તે પ્રવચન દરમ્યાન શ્રોતાઓએ મંત્રમુગ્ધ બનીને સાંભળ્યું હતું, અને તે ખૂબ પ્રશંસા પામ્યું હતું. તે ભાષણની પ્રેસ નોંધ અત્ર રજૂ કરવામાં આવી છે. સંપૂર્ણ વક્તવ્ય રજૂ ન કરી શકવા બદલ દિલગીર છીએ. સંપાદક]

भारतवर्षमें बहुत चिरकालसे नाना लोग जीवके कल्याणके लिये विचार करते रहे हैं। इसके लिये लोगोंने जीवका संसारके साथ क्या संबंध है; इस विषयकी गंभीर परीक्षा की। इस परीक्षाके परिणामस्वरूप विचारकोंके प्रधानरूपसे दो विभाग हो गये। एक ओर वे लोग थे, जो वेदको प्रमाण मानते थे, दूसरी ओर वे थे, जिनके लिये वेद प्रमाणभूत नहीं था। दर्शनशास्त्रके गंभीर विचार बादमें प्रगट हुए। पहले पहल जीवनके आचार-व्यवहारको लेकर मतभेद हुआ। जो लोग वैदिक थे; उनमें अनेक इस प्रकारके भी थे जो यज्ञमें पशुहत्याको धर्म मानते थे। उनकी दृष्टिमें यज्ञकी हिंसा पापरूप नहीं थी। यज्ञमें पशुवध करनेसे उनके विचारके अनुसार स्वर्गकी प्राप्ति होती थी। "अग्निषोमियं पशुमालभेत" इत्यादि वेदवाक्यको प्रमाण मानकर भिन्न भिन्न यज्ञोंमें भिन्न भिन्न पशुओंका वध होता था। इसके अतिरिक्त इस कालमें वैदिक लोग जन्मके कारण वर्णोंकी व्यवस्थाको स्वीकार करते थे। यदि कोई ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न हुआ हो; और उसके गुण-कर्म ब्राह्मणोचित न हो, उसको शास्त्रका ज्ञान न हो, और वह मिथ्याभाषणादि दोषोंसे दूषित भी हो. तो भी वे लोग उसको ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न होनेके कारण पूजनीय मानते थे।

इस कालके वैदिक लोगोंमें ब्राह्मण लोगोंकी प्रधानता थी.

दूसरी ओर कुछ स्वतंत्र विचारके लोग थे। जिनका वैदिक लोगोंके इन दो सिद्धान्तों पर प्रधानरूपसे विरोध था। यद्यपि प्राचीन कालमें इस प्रकारके वैदिक लोग भी थे; जो यज्ञमें पशुवधको वेदसे विरुद्ध मानते थे। और वर्णव्यवस्थाको जन्मनिमित्त न मानकर गुण-कर्म निमित्त स्वीकृत करते थे। परंतु इस प्रकारके लोग उस समयमें अल्प संख्यामें हो गये थे। इस लिये वैदिकधर्मके नामसे "यज्ञमें पशुवध" और "जन्ममूलक वर्णव्यवस्था" इन दो सिद्धान्तोंको लिया जाता था। इसी कालमें वेदोंको माननेवालोंमें इस प्रकारके लोग भी हुए जिन्होंने कहा कि वेदके यज्ञोंसे स्वर्गीय फल मिल सकते हैं पर पशुहिंसा के कारण जो पाप होता है उसका कुछ दुःख भोगना पड़ता है। ये विचारक सांख्यमतके अनुयायी थे। महाभारतमें और सांख्यके कुछ ग्रन्थोंमें यज्ञके पशुवधको दुःखका कारण माना गया है। पूर्वमीमांसाके प्रभाकर और कुमारिल भट्ट आदि आचार्योंके मतानुसार यज्ञ की हिंसा सर्वथा धर्म है। उसमें पापका लेश भी नहीं। इन मतभेदोंके कारण भिन्न प्रकारके गंभीर विचार

होने लगे बादमें जब संसारके मूल कर्मों पर विचार होने लगा तब वेदवादी लोग आत्माको और कुछ अन्य पदार्थोंको नित्य कहने लगे। पर जो वेदको नहीं मानते थे; उन्होंने मूल कारणको सर्वथा नित्य नहीं माना। भगवान बुद्ध; जिन्होंने सब पदार्थोंको क्षणिक और अनात्मक कहा। भगवान महावीरने वस्तुमात्रको उत्पाद–व्यय और ध्रौव्यसे युक्त बतलाया। इन वचनों पर बादमें होने वाले बौद्ध और जैन तार्किकोंने क्षणभंगवाद और अनेकान्तवाद–स्याद्वादकी दार्शनिक रूपमें प्रतिष्ठा की इन वादोंको समझने के लिये एक सरल दृष्टान्त देना उचित समझता हूँ। एक वस्तुको देखने पर साधारण लोगोंकी और विचारकोंकी बुद्धिमें बहुत बड़ा अंतर होता है। (जेबमेंसे रुमाल निकालकर) मेरे पास यह रुमाल है। यदि यह पूछा जाय कि इस रुमाल के कारण कौन हैं। और उनका इस रुमाल के साथ क्या संबंध है? तो साधारण लोगोंकी अपेक्षा विचारकोंके उत्तर बहुत भिन्न होंगे। साधारण लोग स्थूल दृष्टिसे देखते हैं और स्थूल वस्तु प्रायः सबको समान दिखाई देती है। रुमाल श्वेत है या पीला है या लाल है? इस विषयमें तो किसीका मतभेद नहीं हो सकता। यदि श्वेत होगा तो श्वेत कहेंगे, पीला होगा तो पीला कहेंगे। परंतु यदि पूछा जाय कि यह रुमाल सुन्दर है या नहीं? तो सबका उत्तर एक समान नहीं होगा। कुछ कहेंगे, 'सुन्दर है,' कुछ कहेंगे, 'सुन्दर नहीं है' और कुछ कहेंगे 'सुन्दरता है सही परंतु कुछ अल्प परिमाणमें।' श्वेत और पीत रूपके समान सुन्दरता सर्वथा आँखोंसे नहीं दिखाई देती। उसका संबंध मनके साथ भी है। मन सबका समान नहीं होता। इसलिये एक ही वस्तुमें सौन्दर्यकी बुद्धि भिन्न हो जाती है। जो वस्तु बाह्य इन्द्रियोंसे अनुभवमें न आवे, जिस पर मनके द्वारा विचार करना पड़े, उसके विषयमें मतभेद हो जाना स्वाभाविक है।

रुमालके कार्य कारण भावका विचार इस प्रकारका है, साधारण लोग इसको उलटा समझ बैठे हैं. वे तो यह कहने लगते हैं कि रुमालमें तन्तु रहते हैं, परंतु यह विचार दार्शनिक–दृष्टिमें संगत नहीं है। तन्तु कारण हैं। पट कार्य है। कारण बिना कार्य नहीं रह सकता। कारण कार्यके बिना रहता है। तन्तु दुकान पर पड़े रहते हैं उस समय न रुमाल होता है, न धोती होती है, न कुरता होता है। जब रुमाल या धोती बनती है, तब रुमाल या धोती बिना तन्तुओंके नहीं दिखाई देती। 'तन्तु पटके साथ होते हैं' इस विषयमें न्याय, वैशेषिक, सांख्य, पूर्वमीमांसा, बौद्ध और जैनोंका कोई मतभेद नहीं।

परंतु प्रश्न हुआ कि तन्तु और पट परस्पर भिन्न हैं या अभिन्न? तो सब लोगोंके विचार भिन्न हो गये।

गौतमीय न्यायको माननेवालोंने कहा – 'तन्तु और पट सर्वथा भिन्न हैं' पट तन्तुओंसे पहले नहीं होता। तन्तु पटको उत्पन्न करते हैं। पट अवयवी है। तन्तु अवयव हैं। अवयवी

अवयवोंसे सर्वथा भिन्न है। जब हमको पट दिखाई देता है तब केवल पटही नहीं दिखाई देता किन्तु तन्तु और पट दोनों ही दिखाई देते हैं. वैशेषिकोंका भी यही मन्तव्य है।

सांख्योंका मत है 'पट तन्तुओंसे सर्वथा भिन्न नहीं परंतु तन्तुओंमें विद्यमान है। केवल अव्यक्त रूपसे है। जब सहकारी कारण मिलते हैं तो जो पट तन्तुओंमें अव्यक्त रूपसे रहता है वही प्रगट हो जाता है। संसारमें अनेक पदार्थ हैं। जो पहिले प्रगट नहीं होते। पर बादमें सहकारी कारणके योगसे प्रगट हो जाते हैं। जैसे दूधमें दही, दहीमें मक्खन, तिलमें तैल। इसी प्रकारसे दूधमें दहीको न देखकर दहीको दूधसे सर्वथा अविद्यमान कहना अनुचित है। यदि दूधमें दही सर्वथा न हो और बादमें उत्पन्न हो जाता हो तो मिट्टीसे भी दही उत्पन्न हो जाना चाहिये। पट भी तन्तुओंमें पहिले अव्यक्त रूपसे रहता है। बादमें सहकारी कारणके योगसे व्यक्त हो उठता है। सांख्योंका यह मत 'सत्कार्यवाद' नामसे प्रसिद्ध है।

बौद्ध तार्किकोंने कहा—तन्तु और पट हैं तो भिन्न, पर नैयायिकोंके मतके समान सर्वथा भिन्न नहीं हैं। तन्तुओंके समूहको पट कहते हैं। तन्तु मिलकर जब विशिष्ट आकार धारण करते हैं तो उनका नाम पट हो जाता है। एक एक तन्तु पटके रूपमें दिखाई देता है, पर उनका समूह पटके रूपमें दिखाई देने आता है। बौद्धोंका पक्ष 'संघातवाद' नामसे प्रसिद्ध है।

जैन तत्ववेत्ताओंने कहा—तन्तु और पट न सर्वथा भिन्न हैं या न सर्वथा अभिन्न हैं। किन्तु भिन्न और अभिन्न हैं। तन्तुओंसे पट भिन्न है इसलिये तन्तु और पटका संबंध है। यदि पट सर्वथा तन्तुओंसे अभिन्न हो तो उनका संबंध नहीं हो सकता। जिस प्रकार तन्तु अपने स्वरूपसे अभिन्न हैं इसलिये उनका अपने स्वरूपके साथ कोई संबंध नहीं प्रतीत होता। पटकी दृष्टिसे उसका तन्तुओंके साथ भेद है। परंतु तन्तुओंकी दृष्टिसे पट तन्तुमय है। अर्थात् उसका भेद नहीं है।

जैन परिभाषाके अनुसार तन्तु और पट द्रव्यकी दृष्टिसे अभिन्न-एक और पर्यायकी दृष्टिसे भिन्न-अनेक हैं। समस्त जैनदर्शन अनेकान्तवाद पर आश्रित है। अनेकान्तवादका प्रतिपादन जैन आगमग्रन्थोंमें संक्षिप्त रूपमें है। उसका विस्तार जैनमतके श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों संप्रदायोंके आचार्योंने अपने अपने ग्रन्थोंमें किया है। श्वेताम्बर संप्रदायके उमास्वाति, सिद्धसेन दिवाकर, जिनभद्रगणि, मल्लवादी, हरिभद्रसूरि, वादिदेवसूरि, हेमचन्द्राचार्य, उपाध्याय यशोविजयजी, आदिने इसका विस्तृत निरूपण किया है। दिगम्बर संप्रदायके समन्तभद्र, पूज्यपाद, भट्टाकलंक, विद्यानंद-स्वामी, प्रभाचन्द्र, आदिने अपने ग्रन्थोंमें उसका विस्तार किया है।

मैं समझता हूँ—प्राचीन कालके वैदिक और अवैदिक अनेक तार्किक अनेकान्तवादको स्वीकार करते थे। गौतमीय न्यायदर्शनके चतुर्थ अध्यायमें कुछ एकान्तवादियोंका मत देकर उनका खण्डन किया है। न्यायदर्शनके अनुसार कुछ एकान्तवादी सब वस्तुओंको अभाव-स्वरूप मानते थे।

कुछ वैसे थे, जो सब वस्तुओंको सत्स्वरूप कहते थे। कुछ कहते थे बिना निमित्त पदार्थोंकी उत्पत्ति होती है। कुछ कहते थे केवल एक तत्व सत् है। इन सब मतोंका निषेध करनेके कारण यह सिद्ध है कि न्यायदर्शनके कर्ता एकान्तवादको युक्त नहीं मानते थे।

निःसन्देह नैयायिकोंके अनेकान्तवादमें और जैनोंके अनेकान्तवादमें भेद है। पर उसमें अत्यंत विरोध नहीं।

नैयायिकोंके अनुसार कुछ पदार्थ सर्वथा नित्य हैं और कुछ पदार्थ सर्वथा अनित्य हैं। परंतु जैन सिद्धान्तके अनुसार प्रत्येक पदार्थ नित्य और अनित्य है। अनेकान्तवादके कुछ अंशोंमें वैदिक दर्शनोंका मत सर्वथा मिलता है। मीमांसक लोग कारण और कार्यको सर्वथा भिन्न और अभिन्न मानते हैं। वास्तवमें मीमांसक ही नहीं सांख्य और पातञ्जल योग सिद्धान्तके अनुसार भी कार्य-कारण भिन्न और अभिन्न हैं। गुण और गुणी, सामान्य और विशेषका भी भेदाभेद है।

अद्वैतसिद्धिकी टीका—लघुचन्द्रिकामें श्रीब्रह्मानन्दजी जैन, सांख्य और पातञ्जल मतको गुण और गुणी आदिमें भेदाभेदवादी मानते हैं। प्राचीन बौद्ध भी इस प्रकारके थे; जिनके अनुसार कारण और कार्यमें भेदाभेद वाद था। अभिधर्मकोशकी आचार्य स्थिरमतिने व्याख्या लिखी है, उसके अनुसार सर्वास्तिकवादी सत्कार्यवादको मानते थे। और सत्कार्यवाद भेदाभेद पर प्रतिष्ठित है।

एकान्तवाद और अनेकान्तवादमें चाहे कितना भी विरोध हो; परन्तु इस विषयमें कोई मतभेद नहीं होना चाहिये कि 'अनेकान्तवाद एक आस्तिकवाद है।' कुछ प्राचीन लोगोंने नास्तिक कहकर जैन सिद्धान्तकी उपेक्षा की है। परन्तु यह उचित नहीं। जिन लोगोंने जैन मतको नास्तिक कहा है उसके दो कारण मुख्य रूपमें थे।

पहला कारण यह था कि जैनाचार्य जगत्के कर्ता स्वरूप परमात्माकी सत्ता नहीं मानते। इस कारण जैन मत उनकी दृष्टिमें नास्तिक मत है। परन्तु जगत्कर्ताकी अस्वीकृतिके कारण नास्तिक कहना अनुचित है।

पूर्वमीमांसा के आचार्य प्रभाकर, कुमारिल भट्ट, मण्डनमिश्र वैदिक और आस्तिक हैं। इसमें किसीका मतभेद नहीं हो सकता। इन तीनों आचार्योंने क्रमसे बृहती श्लोकवार्तिक और विधिविवेकमें जगत् कर्ता ईश्वरका निषेध किया है। इनके अनुसार वेदमें जगत् कर्ताका प्रतिपादन नहीं है। जगत् कर्ताको न मानने पर भी पूर्वमीमांसा के वे आचार्य वैदिक और आस्तिक माने जाते हैं तो जैनमत भी उनके समान आस्तिक माना जाना चाहिये।

दूसरी बात—जिसके कारण जैनोंको नास्तिक कहा जाता है—वह है "वैदिक यज्ञोंका विरोध।" परन्तु वैदिक यज्ञोंका विरोध कई सांख्याचार्य भी करते हैं। फिर भी वे नास्तिक नहीं

माने जाते। उन सांख्याचार्योंके समान जैनमत को भी वैदिक यज्ञों के विरोध के कारण नास्तिक नहीं कहा जाना चाहिये।

ब्रह्मसूत्र के भाष्यमें भगवत्पाद शंकराचार्य 'पाञ्चरात्र' मतकी आलोचनामें एक वचन उद्धृत करते हैं। जिसके अनुसार शाण्डिल्य महर्षिने चारों वेदोंमें परम निःश्रेयसको न प्राप्त कर 'पाञ्चरात्र' शास्त्रका प्रवचन किया था। इतना वेद विरुद्ध कहने पर भी 'पाञ्चरात्र' मत के माननेवाले नास्तिक नहीं माने जाते इस अवस्थामें जैनमत अवैदिक होनेके कारण नास्तिक नहीं हो सकता।

आत्माको सर्वथा नित्य मानने के कारण वेदवादी दार्शनिक अनेकान्तवादसे भिन्न हो जाते हैं। नैयायिक-वैशेषिक हो या सांख्य पातञ्जल, वेदान्ती, मीमांसक या कोई भी क्यों न हो। यदि वैदिक है तो वह आत्माको सर्वथा नित्य मानता है। बौद्ध और जैन इस विषयमें भिन्न मत रखते हैं।

सांख्य कहते हैं "क्षणपरिणामिनो हि सर्वे भावाः, ऋते चिति शक्तेः" अर्थात् सब पदार्थ क्षणक्षणमें परिणामी हैं। केवल चैतन्य स्वरूप आत्मा अपरिणामी है।

बौद्ध कहते हैं सभी भौतिक और अभौतिक पदार्थ क्षणिक हैं। आत्मा भी क्षणिक है।

जैन तार्किकोंका कहना है—सब पदार्थ क्षणिक भी हैं, अक्षणिक भी हैं। नित्य भी हैं अनित्य भी हैं। जिस प्रकार सुवर्ण कटक, कंकण, अंगूठी आदिमें अनुगत है परंतु कटक, कंकण आदि अनुगत नहीं हैं, इसी प्रकार वस्तुमात्रमें द्रव्य अनुगत रहता है और पर्याय परिवर्तनशील भिन्न रहता है। चेतनतत्त्वमें हर्ष-विषाद, सुख-दुःख आदि पर्याय परिवर्तनशील—भिन्न भिन्न हैं और ज्ञान—चैतन्य अंश अनुगत है। ज्ञानका हर्ष-विषादादिके साथ भेदाभेद है।

अनेकान्तवादका अत्यंत विस्तृत निरूपण हरिभद्रसूरि आदि आचार्योंने किया है।

जैनदर्शनके साथ अन्यदर्शनोंका अनेक विषयमें मतभेद भी है। इन सब मतभेदोंके रहते हुए भी आत्मतत्त्वको स्वीकार करनेके कारण अन्य आत्मवादियोंके अनुसार जैन आत्मवाद भी प्राणिमात्रका कल्याणकारी है।

जैनदर्शन के प्रधानतया दार्शनिक आचार्योंमें प्राचीन कालके चार आचार्य प्रधान हैं (१) आचार्य सिद्धसेन दिवाकर (२) समन्तभद्राचार्य (३) जिनभद्रगणिक्षमाश्रमण और (४) आचार्य हरिभद्रसूरि। अपने कालमें इन चारों आचार्योंने अन्य-दार्शनिक मतोंका निराकरण करके जैनतत्त्वकी प्रामाणिकता को प्रकट किया है।

ग्यारहवीं शताब्दीमें मिथिलाके गंगेशोपाध्यायने जब नव्यन्यायका प्रधानरूपसे प्रकाशन करके युगान्तर उपस्थित किया और उसका प्रभाव भारतके परवर्ती समस्त दर्शनों पर पड़ा तबसे द्वैत, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत आदिके मानने वाले सभी विद्वानोंने नव्यन्यायकी शैलीका आश्रय लेकर अपने अपने मतका निरूपण करना आरंभ किया। ग्यारहवीं सदी के अनंतर होनेवाले जैन और बौद्धमतके

विद्वानोंमें कोई इस प्रकारका नहीं हुआ कि जिसने नव्यतर्ककी शैलीका आश्रय लेकर अपने मतका निरूपण किया हो।

परन्तु अठारहवीं सदीमें 'न्यायविशारद' 'न्यायाचार्य' उपाध्याय यशोविजयजी इस प्रकारके विद्वान् हुए; जिन्होंने नव्यतर्कका आश्रय लेकर जैनतत्त्वों—सिद्धान्तोंकी प्रामाणिकता प्रतिष्ठित कर दी।

आचार्य हरिभद्रसूरिजी आदि प्रकाण्ड विद्वानोंने जिस तर्कका—हेतुओंका आश्रय लिया था; उसके साथ नये हेतुओंका आविष्कार करके उन्होंने अनेकान्तवादकी पुष्टि की थी। उसके दो चार उदाहरण लीजिये.।

अनेकान्तवादके अनुसार प्रत्येक वस्तु अपने द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावकी अपेक्षासे सत् है। और पर द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावकी अपेक्षासे असत् है। इस दो प्रकारकी प्रतीतिके कारण आचार्य हरिभद्र-सूरिजी आदिने वस्तुको सत् और असत् बताया। यशोविजयजी उपाध्याय कहते हैं कि भाव पदार्थ अभावके अभाव स्वरूप है; इसलिये सत् और असत् रूप है। साधारण रूपसे घट आदिका भाव-रूप (विना ?) अपेक्षा से प्रतीत नहीं होता। पर यदि उस भावको अपने अभावके अभावरूपसे निरूपण करें तो उसका ज्ञान भी विना अपेक्षासे नहीं हो सकता। अभावका ज्ञान यद्यपि सदा अपेक्षासे होता है, पर जब प्रमेय आदि रूपसे किया जाय तो उसमें प्रतियोगी आदिकी अपेक्षा नहीं होती।

इसी प्रकार यशोविजयजी महाराजने चित्ररूपके दृष्टान्तसे भी पदार्थोंको एकाकार और अने-काकार सिद्ध किया है। जब किसी वस्तुमें नानारूप प्रतीत होते हैं। तब चित्ररूपकी दृष्टिसे वह रूप एक प्रतीत होता है। पर शुक्ल, पीत आदिकी दृष्टिसे वही अनेक प्रतीत होता है। चित्ररूप के समान प्रत्येक द्रव्य एक भी है अनेक भी है।

"श्री महावीरस्तव"की व्याख्या-न्यायखण्डखाद्यमें श्री यशोविजयजी कहते हैं कि दीधिति-कार रघुनाथ शिरोमणि भट्टाचार्यके अनुयायी तार्किक एक द्रव्य में संयोगी के भेदको अव्याप्यवृत्ति मानते हैं। जब अन्य स्थलोंमें भेद व्याप्यवृत्ति होते हुओ भी संयोगी द्रव्यमें अव्याप्यवृत्ति हो जाता है। तब सत्त्व और असत्त्व भी एक वस्तुमें अपेक्षाके भेदसे विना विरोधसे रह सकते हैं।

इस प्रकारके अनेक हेतु हैं। जिनका श्री यशोविजयजी महाराजने अपने ग्रन्थोंमें पहला ही आविष्कार किया है।

महात्मा श्री यशोविजयका पाण्डित्य बड़ा व्यापक था। उन्होंने अनेक ग्रन्थ लिखे; जो अनेक विषयों पर हैं। अनेक विषयों पर विस्तृत गंभीर ग्रन्थोंकी रचना करने वाले विद्वान अन्यमतोंमें भी इने गिने ही हुओ हैं। अद्वैतमतमें माधवाचार्य १५० से अधिक ग्रन्थोंके लेखक हैं। व्याकरण, मीमांसा, वेदान्त। आदिके विषयोंमें इनके ग्रन्थ पाये जाते हैं। अद्वैत मतके विद्वान श्रीअप्पयदीक्षित

भी १०० से अधिक ग्रन्थोंके रचयिता हैं। विशिष्टाद्वैतके श्रीकवि, तार्किक केसरी वेंकटाचार्य भी अनेक दार्शनिक प्रबन्धों और अनेक महाकाव्योंके रचयिता हैं।

इस प्रकारसे श्रीयशोविजयजीने भी ३०० से अधिक ग्रन्थ लिखे हैं। सिर्फ संस्कृत में ही नहीं, प्राकृत, हिन्दी, मारवाडी, और गुजराती भाषामें भी अनेक ग्रन्थोंकी रचना की।

ऐसी पुण्य विभूतिने यदि यूरोप देशमें जन्म लिया होता तो उस महात्माका घर घर पर पूजन होता, और उन्हींके साहित्यके प्रकाशन और प्रचारके लिए पूरा पूरा प्रयत्न करते तो भारत, गुजरात और भारतके जैन समाज ऐसी महान विभूतिके लिए, उसके साहित्यके लिए, कदम उठानेमें क्या आलस्य करेगा?

यह दुःख की बात है कि अठारहवीं सदीमें होने पर भी उनके अनेक ग्रन्थ मिलते नहीं। हम लोगोंकी असावधानी आदिके कारण उनके अनेक ग्रन्थ दुर्लभ हो गये।

यदि आप लोग उनके ग्रन्थों के प्रकाशन और पठन पाठनके लिये सुव्यवस्थित प्रयत्न करेंगे तो उससे जैन समाजका ही नहीं, समस्त भारतीयोंका महान उपकार होगा। ×× [अपूर्ण]

* ગુરુ આશાતના વિષે *

नूनमल्पश्रुतस्यापि गुरोराचारशालिनः।
हीलना भस्मसात् कुर्याद्गुणं वह्निरिवेन्धनम् ॥१॥
शक्त्यग्र ज्वलज्ज्वालसिंहक्रोधातिशायिनि।
अनन्तदुःखजननी कीर्तिता गुरुहीलना ॥२॥

*　　　*　　　*

प्रकृत्या भद्रकः शान्तो विनीतो मृदुरुत्तमः।
सूत्रे मिथ्यादृशाप्युक्तः परमानन्दभागतः ॥

ઉપા. શ્રી યશોવિજયજી]

[દ્વાત્રિંશિકા

*　　　*　　　*

प्रबन्धाः प्राचीनाः परिचयमिताः केवलमिताम्,
नवीना तर्काली इदि विदितमेतत् कविकुले।
अमी जैनः काशीविबुधविजयप्राप्तयशसो,
मुदा यच्छत्यच्छः समय-नयमीमांसितसुधाम् ॥

ઉપા. શ્રી યશોવિજયજી]

[ન્યાયખણ્ડખાદ્ય પ્રશસ્તિ

*　　　*　　　*

પૂ. આચાર્ય શ્રીવિજયધર્મસૂરિજી મહારાજનું પ્રવચન

[બીજા દિવસની સવારની સત્રની બેઠક પૂર્ણ થતાં, સત્રના મંત્રીની ખાસ વિનંતિથી, સત્રસંયોજક મુનિશ્રીના ગુરુજી પ્રખરવક્તા વિદ્વાન આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજયધર્મસૂરીશ્વરજી મહારાજે આપેલા ટૂંકા પ્રવચનનો સાર ભાગ]

મંગલાચરણ કર્યા બાદ–તેઓશ્રીએ જણાવ્યું કે મહર્ષિઓનાં જીવન સુગંધથી મઘમઘતા અને અતિમનોહર બગીચા જેવાં હોય છે. અનેક આત્માઓને તે સુગંધી બગીચો સુંદર સુવાસ આપે છે એટલું જ નહીં પરંતુ એ બગીચાની સુગંધમાં એટલી શક્તિ હોય છે કે કોઈપણ પ્રકારની દુર્ગંધ તેને અસર નથી કરતી, પણ પોતાની તીવ્ર સુવાસથી દુર્ગંધની બદબોનું નિવારણ કરવામાં તેને વિજયની પ્રાપ્તિ થાય છે.

પૂ. મહોપાધ્યાય શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજનું જીવન પણ સુગંધથી મઘમઘતા બગીચા જેવું છે. અનંતકાળથી કામ, ક્રોધ, માન, માયા, મમતા વગેરે બદબો–દુર્ગંધથી આપણા સંસારી આત્માઓનાં હૈયાઓ ઉકરડા જેવાં બની ગયાં છે. એ બદબોનું નિવારણ કરી એ જ હૈયામાં સદ્ગુણોની સુવાસ ઉત્પન્ન કરવા માટે તીર્થંકર ભગવંતોએ ધર્મતીર્થરૂપી સુગંધી બગીચાની સ્થાપના કરી છે. જૈન શાસનમાં છેલ્લા તીર્થંકર શ્રમણ ભગવાન મહાવીર થયા. વિશ્વના ઉદ્ધાર માટે એ મહાપુરુષે ધર્મતીર્થરૂપી બગીચો સ્થાપ્યો, જેને આજે લગભગ અઢી હજાર વર્ષ પસાર થવા છતાંયે તે બગીચો, આજે પણ અમુક પ્રમાણમાં સુવાસિત છે. તેમાં કારણ જો કોઈપણ હોય તો પૂ. શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજ અને તે પહેલાના કાળમાં થયેલા તેમના જેવા શ્રુત અને સંયમસ્થવિર મહાપુરુષો જ છે.

જેમ કોઈ શ્રીમંતની શરાફી પેઢી સાત સાત પેઢીઓથી એક જ નામવાળી અને સારામાં સારી શાહુકારી સાથે ચાલી આવતી હોય તો તેમાં, એ પેઢીની સ્થાપના કરનાર વ્યક્તિનાં વારસદારોની વફાદારી. કુશળતા અને ભાગ્યબળ મુખ્ય હોય છે. તે જ પ્રમાણે પ્રભુશાસનની પેઢી, અઢી અઢી હજાર વરસો પસાર થવા છતાં આજે પણ જે વિદ્યમાન અને વિજયવંતી છે, તેમાં કારણ એ પેઢીના સુવિહિત આચાર્યભગવંતો વગેરેની વફાદારી, અને તેઓની સમ્યક્શ્રુત અને સંયમની અનુપમ આરાધના જ છે.

એ મહાપુરુષની બાલ્યવયમાં દીક્ષા, દીક્ષા બાદ અખંડ ગુરુકુળવાસ, ગુરુકુળવાસમાં જૈન દર્શનનો સુંદરતમ અભ્યાસ, કાશી અને આગ્રા જેવા સ્થાનમાં જઈને ન્યાય, બૌદ્ધ વગેરે છએ દર્શનના અભ્યાસ માટે અવિરત પરિશ્રમ, ધનજી સુરા નામના શ્રાવકે તેઓશ્રીના

એ અભ્યાસમાં કરેલ સંપૂર્ણ સહાય, દરેક સ્થળે સંયમની આરાધનામાં સહાય જાગૃત પૂ. ગુરુદેવ શ્રી નયવિજય મહારાજની છત્રછાયા અને તે કારણે પૂજ્ય શ્રીમદ્ યશોવિજય મહારાજની પણ શ્રદ્ધા અને સંયમમાં ખૂબ ખૂબ અભિરુચિ તથા આરાધના, આ બધા ય કારણે પૂ. શ્રી યશોવિજયજી જૈન શાસનમાં એક મહાન સમર્થ ધુરંધર પુરુષ તરીકે પંકાયા છે.

પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજનું આજે સંસ્કૃત, પ્રાકૃત અને ગુજરાતી ભાષામાં જે વિપુલ સાહિત્ય ઉપલબ્ધ છે, તેમ જ અનુપલબ્ધની જે નામાવલી પ્રાપ્ત થાય છે; તે ઉપરથી તેઓએ પોતાના જીવનમાં સમગ્ર જ્ઞાનની ખૂબ જ ઉપાસના કરી હોવાનું સિદ્ધ થાય છે. કોઈપણ સ્વ કે પરપક્ષના વિષયને વર્ણવવાની તેઓશ્રીની અદ્ભુત શક્તિ, એ ગંગાકિનારે સરસ્વતી દેવીએ પ્રસન્ન થઈ આપેલા વરદાનની પણ પ્રતીતિ કરાવે છે. એમ છતાં શ્રદ્ધા-સમ્યગ્દર્શન અને સમ્યક્ચારિત્રની આરાધના-ઉપાસના પણ એ મહાપુરુષની જરાય ઓછી સમજવાની નથી. એ મહર્ષિએ કરેલ અત્યુત્તમ તીર્થંકર પદ પ્રાપ્ત કરાવનારી શ્રીવિંશતિસ્થાનક તપની અદ્ભુત આરાધના સંયમની ઉપાસના માટે સાક્ષીસ્વરૂપ છે. જૈનશાસન ઉપર શરૂ થયેલા સ્વપક્ષ અને પરપક્ષના આક્રમણો સામે તેઓશ્રીએ ઉપાડેલી ઝુંબેશ, તેમ જ તે અંગે તેઓશ્રી ઉપર આવેલ અનેક આપત્તિઓ વગેરે બાબતો વીરશાસનની વફાદારી સાથેની, તેઓશ્રીની સમ્યગ્દર્શનની અનુપમ આરાધના માટેની સચોટ પ્રતીતિ કરાવે છે. પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી એટલે શ્રદ્ધા, જ્ઞાન અને સંયમ એ ત્રિવેણી સંગમનું જંગમ તીર્થ છે.

શ્રદ્ધા અને સંયમના બળ વિનાનું જ્ઞાન ગમે તેટલા વિશાળ પ્રમાણમાં કોઈપણ વ્યક્તિએ સંપાદન કરેલ હોય તો તે એકલા જ્ઞાનની કોઈપણ ધર્મ કે સંપ્રદાયમાં કીમત અંકાઈ નથી. જ્ઞાન ભલે કોઈનામાં ઓછું કે વધુ હોય, પરંતુ જે મહાનુભાવનું જીવન શ્રદ્ધા અને સંયમથી સુવાસિત બન્યું છે તે મહાનુભાવોનાં જીવન જ ધન્ય છે, અને એવા મહાત્માઓનાં જીવન જ ત્રણેય કાળમાં વંદનીય, પૂજનીય બન્યાં છે. શ્રદ્ધા અને સંયમ વિનાનું જ્ઞાન તો ઉપરથી રળીયામણા દેખાતા સુગંધ વિનાના ફુલ જેવું અથવા ઇમીટેશન આભૂષણો જેવું છે....આ મહાપુરુષમાં તો શ્રદ્ધાજ્ઞાન-ચારિત્રરૂપી ત્રિવેણીનો જે સંયોગ થયો હતો, તેથી તેઓ જીવનને ધન્ય બનાવી ગયા અને અન્ય આત્માઓ ધન્ય બને એ માટે અનુપમ ભવ્ય વારસો અને આદર્શ મૂકતા ગયા. આપણે એ વારસાને દીપાવીએ! અને એમના આદર્શોને અપનાવીએ! એ જ પ્રાર્થના!..[અધૂરું]

卐

સત્રના જન્મદાતા પૂ. યશોવિજયજી મહારાજનું મનનીય પ્રવચન

★

પંચવર્ષીય કે દશવર્ષીય યોજના તળે

ઉપાધ્યાયજીના અક્ષરદેહને પ્રકાશિત કરો !

[પૂજ્ય મુનિરાજ શ્રી યશોવિજયજી મહારાજે સત્રની પૂર્ણાહુતિ પ્રસંગે જે પ્રેરક વક્તવ્ય કરેલું તેનો ઉપયોગી ભાગ 'જૈન' પત્રમાંથી અહીં રજૂ કરવામાં આવ્યો છે.]

આરંભમાં મંગલ શ્લોક બોલી, અન્ય પ્રસ્તાવ કર્યા બાદ મહારાજશ્રીએ જણાવ્યું હતું કે—

પૂ. ઉપાધ્યાયજીનું સ્મરણ એટલે એક દિવ્ય વિભૂતિનાં દર્શન.

પૂ. ઉપાધ્યાયજી એટલે ભૂતકાલીન કુત્રિકાપણ સરખી રત્નત્રયીની જાણે કુત્રિકાપણ.

પૂ. ઉપાધ્યાયજી એટલે જિનશાસનનો વિજય ધ્વજ ફરકાવનાર મહાન જોદ્ધો.

પૂ. ઉપાધ્યાયજી એટલે જીવનચરિત્રનો તેજઃપુંજ.

પૂ. ઉપાધ્યાયજીનું વાઙ્મય-સાહિત્ય એટલે વિવિધ જ્ઞાનરત્નનો અખૂટ ભંડાર.

પૂ. ઉપાધ્યાયજીની યાદ એટલે સાચા મહાન્ ક્રાન્તિકારીનું તેજોમય દર્શન.

પૂ. ઉપાધ્યાયજીનો પુરુષાર્થ એટલે મહાન્ કર્મયોગીની મહાસાધના.

પૂ. ઉપાધ્યાયજીની વાણી એટલે મહાન આર્ષદ્રષ્ટાનો દિવ્ય પયગામ.

પૂ. ઉપાધ્યાયજીનું દર્શન એટલે અવતરેલી સાક્ષાત્ સરસ્વતી.

પૂ. ઉપાધ્યાયજી એટલે શ્રી સિદ્ધસેન દિવાકરજી શ્રીજિનભદ્રગણિ ક્ષમાશ્રમણજી, શ્રીહરિભદ્રસૂરિજી, શ્રીહેમચંદ્રાચાર્યજી, અને શ્રીમલ્લવાદિજીનો જ્ઞાનાવતાર.

પૂ. ઉપાધ્યાયજી એટલે પરસ્પરવિરોધી, અવિરોધી મહાન શક્તિઓનું એકીકરણ.

આવી આવી તો અનેક ઉપમાઓ આપી શકાય.

પૂ. ઉપાધ્યાયશ્રીજીને હું જેટલાં બિરદાવું એટલું ઓછું જ છે. એમના અખૂટ ઉપકારો તરફ જોઉં છું ત્યારે સ્તબ્ધ થઈ જાઉં છું. વધુ કહું તો એમના અગણ્ય ઉપકારોનું અભિવાદન કરવા માટે શબ્દકોષમાંથી શબ્દો પણ મળી શકે તેમ નથી.

ખરી વાત તો એ જ છે કે મહાન્ વિભૂતિઓની મહાનતા, મારા જેવાં વામણા કદિ માપી ન શકે તે તો गगनं गगनाकारंની ઉક્તિ અનુસાર તેમના જ જેવો કોઈ મહાન પુરુષ જ માપી શકે.

પ. ઉપાધ્યાયજીની સાચી વિદ્વત્તા અને તેથી ફલિત સચ્ચારિત્રની પ્રભાથી ઓપતી મહાનતા—એ બન્નેના વિસ્તૃત દર્શન–પરિચયમાં તેમનું સમગ્ર જીવન સમાઈ જાય છે. આજે તેમનું એ જીવન કહેવાનો સમય નથી; છતાં એઓશ્રીનો થોડો પરિચય નિબંધો દ્વારા તમને મલ્યો છે ને મળશે.

હું તો અત્યારે પૂ. ઉપાધ્યાયજી ભગવાનનો વર્તમાન પ્રસંગ જે ઉજવાઈ રહ્યો છે તેનું બીજક શું, તે ? તથા મારૂં જે કંઈ કથયિતવ્ય છે તે જ કહેવા માગું છું.

ભગવાન ઉપાધ્યાયજી માટે 'કંઈક' કરવાનો મનોરથ તો ગૃહસ્થાશ્રમમાંથી જ અસ્પષ્ટપણે જન્મેલો. ચારિત્ર લીધા બાદ તે પુષ્ટ થતો ગયો. તેઓશ્રીના અજર અમર કાર્યની અલ્પ-ઝાંખી થતાં તે સતેજ થયો. અને અન્તે તેમના સમાધિસ્થળનો પુનરોદ્ધાર કરવાની ભાવનાનું બીજારોપણ થયું. એમાંથી તેમનો ગુણાનુવાદ ઉત્સવ ઉજવવાની ભાવનાના અંકૂરો જન્મ્યા વિ. સં. ૨૦૦૦ માં મારા પરમ ઉપકારી શાસનપ્રભાવક પૂ. આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજયમોહન-સૂરીશ્વરજી કે જેઓશ્રીને પૂ. ઉપાધ્યાયજી ભગવંતના ગ્રન્થો પરત્વે અમાપ પક્ષપાત હતો, તેઓશ્રી સાથે આ જ (મારી જન્મભૂમિ) ડભોઈમાં ચાતુર્માસનો પ્રસંગ બન્યો ત્યારે તે ભાવનાને મૂર્તસ્વરૂપ આપવાના પ્રયત્નો પ્રારંભાયા. ત્યાં તો તેઓશ્રીને જીવલેણ જ્વરે ઘેરી લીધા અને આજ ધર્મભૂમિમાં કાલધર્મ પામ્યા અને મારા પ્રસ્તુત પ્રયત્નો સ્થગિત થઈ ગયા.

બે વર્ષ ઉપર અત્ર બિરાજેલા બન્ને પૂજ્ય–ગિરૂઆ ઉભય ગુરુદેવોની મદદથી, તેઓશ્રીની જ છત્રછાયામાં ભારતની મહાનગરી મુંબઈમાં 'કંઈક' કરવાના મારા મનોરથને માર્ગ મલ્યો. સદ્ભાગ્યે ભાયખલાના ચિરસ્મરણીય ઉપધાન તપ પ્રસંગે ભાયખલા દેરાસરના મંડપમાં જ ૨૨, સંસ્થાઓ તરફથી મુંબઈને સદા યાદગાર રહી જાય તેવો એ દિવસનો 'ગુણાનુવાદ મહોત્સવ' ઉજવાયો. ત્યારે મુંબઈના મહાજનોને આ મહાન પુરુષની મહાનતાની ઝાંખી કરવાની પહેલવહેલી જ તક મલી. તે જ ઉત્સવ પ્રસંગે એક સ્મારક સમિતિ પણ નીમાણી અને ડભોઈના સમાધિસ્થળનો જીર્ણોદ્ધાર કરી તેઓશ્રીને છાજે તેવું સ્મારક કરવું અને તેઓશ્રીનું પ્રામાણિક અને આદર્શ જીવન તૈયાર કરાવવું, એવો નિર્ણય કરવામાં આવ્યો. એમાં શ્રદ્ધા અને ભાવનાના પ્રતીક સમું અને સદા ય આધ્યાત્મિક પ્રેરણા આપતું સ્થૂલ સ્મારક તો ભવ્ય રીતે તૈયાર થયું છે. બાકીનું જીવનચરિત્રનું કાર્ય હવે અનુકૂળતાએ હાથ પર લેવાશે. અને અમારા વિદ્વાન મિત્રોના સહકારથી એ ભાવના પણ સફળ થશે.

નૂતન ગુરુમંદિરની પ્રતિષ્ઠાનો નિર્ણય માગશર સુદમાં લેવાયો. જો કે તે અગાઉ પ્રતિષ્ઠા પ્રસંગે વિદ્વાનોનું નાનું સરખું સંમેલન યોજવું એવો વિચાર ઉપસ્થિત થયેલો. પરંતુ અનુકૂળ સાધન અને સંજોગોનો અભાવ વિચારના અમલમાં રૂકાવટ કરતો હતો. છેવટે કંઈક

સંજોગો અનુકૂળ થયા અને પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજની મહત્તા, તેઓશ્રીનું પવિત્ર જીવન, આધ્યાત્મિક ચિંતન, વિશદ પાંડિત્ય, તેજસ્વી શક્તિઓ, તેમનું અગાધ અને સર્વદેશીય પાણ્ડિત્ય અને તેમના સાહિત્યના વિપુલરત્નરાશિને; માત્ર જૈનો જ જાણે–સમજે એમ નહિ, બલ્કે બૃહત્ ગૂજરાત અને યાવત્ ભારત ઓળખતું થાય, એ ભાવનાને મૂર્તરૂપ આપવાનો સંયોગ ઊભો થયો. મારી એ ભાવનાને પરમકૃપાળુ ગુરુદેવો તરફથી આશીર્વાદ અને મિત્ર મુનિઓ અને વિદ્વાનો તરફથી પ્રોત્સાહન મળ્યું અને પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીનો જ્ઞાન-ચારિત્રોત્સવ ઉજવવાનો મંગલ નિર્ણય લીધો. તે માટે એક સમિતિ નીમવામાં આવી. વિચારણાને અંતે પ્રસ્તુત ઉત્સવને 'શ્રીયશોવિજય સારસ્વત સત્ર' એવું નામ આપવામાં આવ્યું. અને પ્રસ્તુત સમિતિએ નિબંધની માગણી સાથે એ પ્રસંગમાં ઉપસ્થિત રહેવાની વિનંતિ કરતું એક પરિપત્ર પણ પ્રગટ કર્યું અને તે ભારત અને ભારત બહારના યોગ્ય વિદ્વાનોને મોકલવામાં આવ્યું હતું. અલબત સમય ઘણો જ ટૂંકો હતો અને તેથી જ અમને પોતાને જ અમારો માર્ગ કંઈક મુશ્કેલીવાળો દેખાતો જ હતો. છતાં જે અને જેવી રીતે બની શકે, તે અને તેવી રીતે પણ, ઉજવણી તો કરવી જ. એ નિર્ણય દ્રઢ કર્યો. કારણ કે કાલની કોને ખબર છે?

અનેક વિદ્વાનોએ અને જનતાએ અમારી યોજના અને તેના કાર્યને હાર્દિક અભિનંદન પાઠવ્યાં. આ રીતે અંકુરામાંથી પત્રો–પુષ્પો ખીલ્યાં.

ત્યારબાદ તેઓશ્રીએ સંસ્કાર અને સંસ્કૃતિની જરૂરિયાત, તે માટે આજની સામાજિક ને રાજકીય પરિસ્થિતિ વર્ણવીને સંપત્તિથી નહીં પણ સંસ્કાર અને સંસ્કૃતિથી ભીખારી ન બનવા જોરદાર શબ્દોમાં અપીલ કરી હતી. આગળ બોલતાં કહ્યું કે—

આજે આપણે ત્યાં બે પ્રસંગો ઉજવાઈ રહ્યા છે. એક છે તેઓશ્રીના વંદનીય સ્થૂલ સ્મારકનો અને બીજો છે શ્રીમદ્ યશોવિજય સારસ્વત સત્રનો એટલે કે તેમનાં જ્ઞાન અને ચારિત્રોત્સવનો.

તેમના સ્થૂલ સ્મારકની પ્રતિષ્ઠા તો સવારમાં કરી અને આનંદમંગળ વર્તાવ્યો, પણ તેટલું જ કરીને સંતોષ માનવાથી આપણું કર્તવ્ય કંઈ પૂરું થતું નથી. તેમની સાચી પ્રતિષ્ઠા તો ત્યારે જ કરી લેખાય કે જ્યારે તેઓશ્રીના અધૂરા કાર્યને પૂરું કરીએ; તેઓશ્રીના આદેશો અને ઉપદેશોની પ્રતિષ્ઠા આપણા હૃદયમંદિરમાં કરીએ અને તેઓશ્રીના પ્રબોધેલા માર્ગને અનુસરીએ; તો જ તેમના તથા તેમના અમૂલ્ય વારસાના વારસદારો બનવાને પાત્ર ઠરીએ. તેઓશ્રીનું સાચું જીવતું જાગતું જંગમ સ્મારક પણ એ જ છે. સ્થૂલ સ્મારકનું કદાચ પતન થાય પણ જનતાના હૃદયમાં થયેલા સ્મારકનું કદી પણ પતન થતું નથી, એ વાત ખૂબ ખૂબ ધ્યાનમાં રાખવા જેવી છે. જો આપણે સાચા વારસદારો બનીને તેઓશ્રીનું સાચું સ્મારક કરવા માગતા હોઈએ તો તેમને જગતના કલ્યાણ માટે નિઃસ્વાર્થભાવે મહાપરિશ્રમે સર્જિત કરેલી જ્ઞાનસમૃદ્ધિ જે ખોવાયેલી; દટાએલી અને વેરવીખેર થયેલી છે તેને તન, મન અને ધનના જોરદાર પ્રયાસો દ્વારા શોધી કાઢીએ. ઉપલબ્ધ મુદ્રિત અને અમુદ્રિત ગ્રન્થસંપત્તિને

પુનર્મુદ્રણ કે, પુનઃ સંપાદન કરાવીને ઠેર ઠેર પહોંચતી કરીએ અને તેમના ગ્રન્થ અધ્યયનનો નાદ ગાજતો થાય એવો કોઈ સક્રિય-સંગીન પ્રયત્ન કરીએ તો જ આપણે તેમનું ચઢેલું ઋણ અંશે પણ અદા કરી શકીશું. બાકી એમનું પૂરું ઋણ અદા કરવા માટે તો અનેક જન્મોની સેવા ઓછી પડે. આજ સુધી ગયે તે બન્યું. પણ હવે આજથી જૈન સંઘની આંખો ખુલી જવી જોઈએ.

બીજો પ્રસંગ છે સત્રની ઉજવણીનો. આ ઉજવણી પાછળ ઉપાધ્યાયજીના ગુણાનુરાગીઓએ ઘણી મોટી મોટી આશા અને યોજના પાર પડવાના અનુમાનો કર્યાં છે, અને કરે તે સ્વાભાવિક છે. પરંતુ આ તકે મારે સ્પષ્ટ કરવું જોઈએ કે અલ્પ સમય અને બીજાં કેટલાંક કારણે પ્રથમથી જ અમોએ અમારું ધ્યેય અને તેનું ફળ મર્યાદિત રાખીને જ કાર્ય કર્યું હતું અને તે એ-કે સત્રની ઉજવણીનું બહુ મોટું ફળ મળે કે ન મળે; પણ અમારા આ પ્રયત્નથી જો જૈન સંઘ અને ભારતના વિદ્વાનોનું લક્ષ ખેંચી શકવા જેટલી ભૂમિકા પણ ઊભી કરી શકીશું, તો ઉજવણીની સફળતાનો સંતોષ માનીશું, અને એ ભૂમિકા ઉપર અમો અમારા ભાવિ કાર્યની ઇમારત ચણી શકીશું. પણ મારે એ પણ સ્પષ્ટ કરવું જોઈએ કે અમારું મર્યાદિત ધ્યેય પાછળથી વિસ્તૃત બની ગયું અને પરિણામે એક મોટી પરિષદના રૂપમાં ફેરવાઈ ગયું. જે આજે સહુ કોઈ પ્રત્યક્ષ જોઈ શકે છે. અત્યારે ભગવાન ઉપાધ્યાયજી અને તેના કાર્ય ઉપર, ગુણાનુવાદ ને પ્રશંસાની જે પુષ્પવૃષ્ટિ થઈ રહી છે, તે જોતાં મને લાગે છે કે અમારી આશામિશ્રિત શ્રદ્ધા જરૂર ફળી છે. ફળી છે એટલું જ નહિ બલ્કે ધારણાથી ઘણી વધુ ફળી છે. અમારા એક ખૂણામાં થયેલા પ્રયત્નથી હવે ભારતના વિદ્વાનો તેઓશ્રીની મહાનતા અને વિદ્વત્તા તરફ જરૂર આકર્ષાશે, તેમના ગ્રન્થોનું પ્રકાશન થશે. અધ્યયન-અધ્યાપન વધશે, જનતાને સત્ય માર્ગની પીછાણ વધતી જશે અને એક વાર્ષીને અન્તે આજના વાવેલાં બીજોનાં સમ્યગ્ ફળો વિપુલ પ્રમાણમાં જોવા મળશે.

આ ધ્યેય જે રીતે પાર પડ્યું છે, તે માટે ખરેખર સત્રસમિતિને, પ્રત્યક્ષ કે પરોક્ષ રીતિએ સહાયક બનેલા જૈન-જૈનેતર વિદ્વાનો, પ્રોફેસરો અને અન્ય કાર્યકરોને હાર્દિક અભિનંદન આપવાના વેગને હું રોકી શકતો નથી.

બીજી વાત એક ખાસ ધ્યાન રાખવી ઘટે કે-ભૂતકાળનો ઇતિહાસ તરફ આછો દૃષ્ટિપાત કરીશું તો સામાન્યતઃ કોઈ યુગ શ્રદ્ધાપ્રધાનનો, કોઈ યુગ જ્ઞાનપ્રધાનનો ને કોઈ યુગ ચારિત્રની પ્રધાનતાનો દેખાશે. આજનો યુગ જ્ઞાનવાદ કે બુદ્ધિવાદનો ચાલે છે. બુદ્ધિવાદી લોકો કોઈ પણ વસ્તુ શ્રદ્ધાથી માની લેવા તૈયાર નથી, તેઓ તો તર્ક-દલીલો દ્વારા વસ્તુ માનવાને તૈયાર હોય છે. આ કારણે તર્કપ્રધાન ઉપદેશ કે પ્રરૂપણાની ખાસ જરૂર પડે છે અને એ જરૂરીયાતને સંપૂર્ણ સંતોષી શકે તેમ હોય તો ઉપાધ્યાયજીનું પાંડિત્ય-ભરપૂર સાહિત્ય અને તેઓશ્રીના વિચારધારાઓ છે.

ઘડીભર એમ પણ વિચારસ્ફુરણા થઈ જાય છે કે ભાવિયુગનાં એંધાણ કલ્પીને જ

તદ્દવિષયક સાહિત્ય સર્જન કરવાનો ભગીરથ પ્રયાસ તો નહીં કર્યો હોય ! અસ્તુ.

આથી વંદનીય જૈન શ્રમણો અને શ્રમણીઓને આ સત્રમંડપમાંથી વિનંતિ કરૂં છું, કે જો જૈન પ્રજાને શ્રદ્ધામાં ટકાવી રાખવી હોય તો તર્કપ્રમાણ ને ન્યાયથી ભરપૂર એવાં ઉપાધ્યાયજીનાં બહુમૂલ્ય ગ્રન્થોનું અધ્યયન કરવાનો અચૂક નિર્ણય કરે.

શ્રદ્ધાવાદનો જમાનો ખતમ થતો આવે છે. સાચો શ્રદ્ધાવાદ કે આત્મવાદ ટકાવવા બુદ્ધિગમ્ય ઉપદેશ અને સમજાવટની અનિવાર્ય જરૂર ઊભી થઈ છે, આ ઉઘાડું નગ્ન સત્ય છે. તો આપણે સહુ તેમના ગ્રન્થોનું અધ્યયન અને પારાયણ કરવામાં લાગી જઈએ અને, તેથી આપણાં પોતાનાં જ્ઞાન, દર્શન ને ચારિત્રની ખૂબ જ પુષ્ટિ કરી શકીશું. શાકચપુત્ર બુદ્ધનાં बहुजन हिताय बहुजनसुखाय સૂત્રને નહીં પણ ભગવાન મહાવીરદેવનાં "सर्वजनहिताय-सर्वजनसुखाय" આ ત્રિકાલાબાધિત પૂર્ણસૂત્રને જીવનમાં ઉતારી સર્વોદયની સાધનાનો ખરેખર સાચો મંગળ આદર્શ ખડો કરી શકીશું, અને એમાં જ આપણું અને પરનું કલ્યાણ સમાએલું છે.

મને અથાગ અને અગાધ શ્રદ્ધા છે કે ઉપાધ્યાયજી ભગવાનની નિર્મલ રચનાનો એક એક અક્ષર અમૃતબિન્દુ જેવો શીતળ અને મધુર લાગશે. એક એક શબ્દ ઝગમગતા અધ્યાત્મના તેજસ્વી દીવડાઓનું ભાન કરાવશે. તેમની એક એક પંક્તિ આત્મિક દીવાળી માટે દીપમાળાઓની યાદ આપશે, ને તેઓશ્રીનો એક એક ગ્રન્થ, અણમોલ રત્નમંજૂષાનું ભાન કરાવશે.

યાદ રાખો કે જડવાદના બળોએ પૂરેપૂરૂં માથું ઊંચક્યું છે. ભારતની આર્ય સંસ્કૃતિના પાયામાં સુરંગ ચાંપનારા જુદાં જુદાં અનેક અનિષ્ટવાદોનાં વિવિધ ઝેરો પ્રજાના વિચારદેહમાં પ્રસરવા લાગ્યાં છે. અશ્રદ્ધા, અજ્ઞાન, અનીતિ, અન્યાય અને અસદ્ આચારનો સૂર્ય સોળે-કલાએ ખીલી ઊઠચો છે. સર્વત્ર દુઃખ, અશાંતિ અને ત્રાસનું ભયંકર સામ્રાજ્ય જામ્યું છે.

જડવાદનાં એ બળોને ઝેર કરવા, અનિષ્ટવાદોનું દફન કરવા અને પ્રજાદેહમાં વ્યાપેલા ઝેરને નીચોવી નાંખવા, આજથી મહાન પ્રયાસ કરવાનો નિરધાર કરીએ ને અજ્ઞાનનાં ઘોર તિમિરોને મિટાવવા સત્ય અને જ્ઞાનનો મહાદીપ પેટાવીએ.

આટલું કહીને, હવે હું જૈન સંઘને ઉદ્દેશીને કેટલાંક ટૂંકા સૂચનો કરૂં છું. તે એ કે-પ્રથમ તો

(૧) ઉપાધ્યાયજીનું જીવન અને કવન પ્રગટ કરવું.

(૨) તેઓશ્રીના ઉપલબ્ધ તમામ ગ્રન્થોનું સમાન ધોરણે, સમાન પદ્ધતિએ વ્યવસ્થિત રીતે સંપૂર્ણ શુદ્ધ પ્રકાશન કરવું. એ પ્રકાશનોને મૂળ ગ્રન્થકારના આશયને વધુ સ્પષ્ટ કરતા ટીકા, ટિપ્પણો અને નિબંધોથી સુવાચ્ય અને સરળ બનાવવા, જેથી અભ્યાસીઓ સુલભતાથી રસપૂર્વક અધ્યયન કરવા પ્રેરાય.

(૩) તેઓશ્રીના સમગ્ર ગ્રન્થોની વિશદ સમીક્ષા કરતું એક પુસ્તક પ્રગટ કરવું, જેથી અનેક વિદ્વાનો તેમના ગ્રન્થોનું અધ્યયન કરવા પ્રેરાય.

(૪) તેઓશ્રીના ગ્રન્થોનું અધ્યયન અને પ્રચાર ત્યારે થઈ શકે કે જ્યારે તેમનાં નામ સાથે સંકળાએલ એક સ્વતંત્ર સંસ્થા સ્થાપવામાં આવે તો જ. વળી એ સંસ્થામાં જૈનદર્શન અને નવ્યન્યાયના પ્રખર વિદ્વાનો પણ તૈયાર કરી શકાય.

એ માટે શ્રી જૈનસંઘને સાગ્રહ અનુરોધ કરું છું કે આ કાર્ય યોગ્ય સ્થળે અવશ્ય કરે અને એનું અધ્યયન વિષયક સંચાલન તદ્‌વિષયક અનુભવી શ્રમણો અને ગૃહસ્થ વિદ્વાનો સંમીલિત થઈને કરે.

(૫) ઉગતી પ્રજાના શ્રદ્ધાના પાયા મજબૂત બને, વર્તમાન અને ભાવિ પ્રજા ચારિત્ર્યવાન બની રહે, તે માટે તેઓશ્રીનાં સંસ્કૃત, પ્રાકૃત કે ગુજરાતી કૃતિનાં આબાલગોપાલોપયોગી સુંદર ભાષાન્તરો, નાની નાની પુસ્તિકા રૂપે પ્રગટ થાય તે ખૂબ જ આવકારદાયક અને જરૂરી છે.

(૬) સંશોધિત અને શુદ્ધતાપૂર્વક પ્રકાશિત પ્રકાશનો બહાર પડ્યા પછી તે ઉપરથી દરેકની હસ્તલિખિત પ્રતિ દરેક ભંડારમાં મૂકાવી જોઈએ, જેથી તેઓશ્રીની કૃતિઓ ચિરંજીવી બને.

(૭) બીજા પણ કેટલાંક ઉપયોગી સૂચનો રજૂ કરી શકાય.

પૂ૦ ઉપાધ્યાયજીના વિદ્યમાન ગ્રન્થોનાં પુનર્મુદ્રણનું કાર્ય પણ ઘણું જ ખર્ચાળ છે. અરે! એમનું એક સર્વાંગ સંપૂર્ણ જીવન તૈયાર કરવું એ કાર્ય પણ ઘણું કપરું અને ખર્ચાળ છે. કપરું એટલા માટે છે કે તેઓશ્રીના અંતરંગ જીવનને અને તેમની આધ્યાત્મિક વાણીને શાબ્દિક અલંકારો કદી ન્યાય આપી શકે તેમ નથી. અને ખર્ચાળ એટલા માટે છે કે તેઓશ્રીનું જીવન તૈયાર કરવામાં તેઓશ્રીના ગ્રન્થોનું ઊંડું અધ્યયન, મનન અને અન્ય વિચારણાઓ માટે પુષ્કળ સમય ખર્ચવો પડે તેમ છે.

શું થાય? જૈન સંઘમાં જોઈએ તેવી એકતા નથી, પરીણામે કોઈ પણ યોજના કે કાર્યક્રમ સફળ રીતે પાર પડી શકતો નથી. આજે સંઘ પાસે પંચવર્ષીય જેવી કે દશવર્ષીય જેવી કોઈ યોજના જ નથી જૈનધર્મ તેના સિદ્ધાંતો અને તેની સંસ્કૃતિનો બહારની દુનિયામાં પ્રચાર કરવાની વિચારણાઓ—આચરણાઓ ઓછી જરૂર નથી. તેમ છતાં આવી બાબતમાં તો ડહાપણનું કાર્ય તો તે જ કહેવાય કે પ્રથમ પોતાના ઘરની મજબૂતી અને સલામતી કરે, ત્યાર બાદ બીજાના ઘરનું ભલું કરવાની વાતો કરે. આજે જૈન સંઘમાં જ્ઞાન, ક્રિયા, સંસ્કૃતિ અને કલાના ક્ષેત્રમાં હજારો જૈનોને તૈયાર કરવા જોઈએ. આ પ્રસંગે એ શબ્દો વધુ કહું તો શ્રી સંઘની વર્તમાન સ્થિતિ જોતાં આપણા ભાવિની કેવી કલ્પના કરવી તે જ નથી કલ્પી શકાતું! અલબત મરવાના તો નથી જ, તે ચોક્કસ વાત છે, પણ કેવી દશામાં જીવવું? એ ખ્યાલ ભારે ચિંતા ઉપજાવે તેવો છે!

શું ચતુર્વિધસંઘનું બાહ્ય અને આભ્યંતર સ્વાસ્થ્ય ચિંતા ઉપજાવે તેવું નથી લાગતું? કોઈ પુણ્યપુરુષ પાકે અને આપણી ચિંતા શીઘ્ર નષ્ટ કરે તેવી શાસનદેવને પ્રાર્થના કરવી જ રહી! અસ્તુ આ તો પ્રાસંગિક વાત કહી.

હવે આપણે મૂલ વાત પર આવીએ, ઉપાધ્યાયજીના ગ્રન્થોનાં પુનર્મુદ્રણનું કાર્ય ખર્ચાળ હોવા છતાં 'પંચકી લકડી એકકા બોજ'ની જેમ ભારતના જુદા જુદા શહેરોના સમૃદ્ધ સંઘો આ કાર્ય ઉપાડી લે તો તે કાર્ય સુલભતાથી પૂર્ણાહૂતિને પામે.

દા. ત. મુંબઈ, અમદાવાદ કે અન્ય સંઘો નક્કી કરે કે દર વર્ષે પોતાની જ્ઞાન-ખાતાની આવકમાંથી સેંકડે સાઠ ટકા પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજીના ગ્રન્થાલેખન કે મુદ્રણ માટે ઉપયોગમાં આપવી, તો દશેક વર્ષમાં તેમના તમામ ગ્રન્થો પ્રકાશિત થઈ જાય. અરે! આ કાર્ય ધારે તો એક મુંબઈ કે અમદાવાદ કરીને અમર અને ધન્ય બની જાય તેમ છે.

પણ મને લાગે છે કે આ માટેની પહેલ તો ડભોઈએ જ કરવી ઘટે. મને આશા છે કે ડભોઈ તેનો સુંદર જવાબ વાળશે જ.

'ચલો ડભોઈ'નો નાદ હિંદના ખૂણે ખૂણે પહોંચતો થયો એટલું જ નહીં, પરદેશી વિદ્વાનોમાં પણ તે જાણીતું થયું એનું કારણ ડભોઈ નહિ પણ ભગવાન ઉપાધ્યાયજી મહારાજ જ છે ને એમના યશસ્વી પુણ્યધેયનામથી ડભોઈ સદાને માટે ઉજળું બન્યું છે. જૈનશ્રમણો માટે તો ખરેખર એક તીર્થરૂપ છે, માટે જ ડભોઈ પ્રતિવર્ષ તેઓશ્રીની સાહિત્યસેવા માટે યોગ્ય ફાળો આપવાનો નિર્ણય જરૂર કરી શકે તેમ છે. ડભોઈ અવસર આવે ત્યારે કમર કસીને નગારા પર દાંડી પીટે છે. અને ખભેખભા મીલાવી, અવસરે ઉજળા બની, પોતાની શાન જાળવે છે. એવો મારો જે કંઈ અનુભવ છે એ અનુભવને સાચો પાડશે જ.

ડભોઈને બાહ્ય સંપત્તિથી ઝાંખું પડવાના પ્રસંગો ભલે ઊભા થાય, તે સંજોગોમાં પણ સંસ્કારસંપત્તિથી તે કદી ઝાંખું નહીં પડે, તે માટે તો સદાય તવંગર રહેશે જ? અને અર્ધ પદ્માસને બિરાજમાન શ્રીલોઢણપાર્શ્વનાથ પ્રભુની કૃપાથી પુનઃ સુખનો તપતો સૂર્ય જરૂર જોશે.

ત્યારબાદ ડભોઈના જિનમંદિરો, જ્ઞાનમંદિરો, શિલ્પ-સ્થાપત્ય, કલાની વિશિષ્ટતાઓ વર્ણવી, ડભોઈમાંથી સંખ્યાબંધ પુણ્યાત્માઓ સાધુ-સાધ્વીજીરૂપે વિચરી રહ્યા છે તે જણાવી ડભોઈને દેવભૂમિ અને ગુરુભૂમિ તરીકે તીર્થરૂપે જણાવી, ડભોઈ ઉપાધ્યાયજી માટે બનતું બધું જ કરે એવી આશા વ્યક્ત કરી હતી.

હું પણ જન્મે ડભોઈનો જ છું, બહુ બોલવા કરતાં કાર્યમાં વધુ માનનારો છું એટલે વધુ ન બોલતાં એટલું જાહેર કરું છું કે પૂ. ઉપાધ્યાયજીની સાહિત્યસેવાને અમર કરવામાં મારી બનતી તમામ શક્તિઓને કામે લગાડીશ. તેઓશ્રીની સેવા મારા ભાવિ જીવનમાં પ્રધાન કાર્યરૂપે રહેશે. શાસનદેવ, પૂ. ઉપાધ્યાયજી તથા પૂ. ગુરુદેવોના મહાન આશીર્વાદથી મારો મનોરથ ફળીભૂત થાય જેથી જૈનશાસન, સંઘ અને તેની પરંપરાની સેવા કરવામાં મારો આંશિક ફાળો નોંધાવી શકું!

પણ અહીં બેઠેલા અન્ય સંઘોના પ્રતિનિધિઓ અને જાણીતા જૈન આગેવાનોને એટલું સાથે જ કહું છું કે. અમારી સફળતાનો આધાર તમારા સહકાર ઉપર જ છે.

એથી અમારા આ કાર્યને સફલ કરવા હું અપીલ કરું છું કે અહીં બેઠેલા જૈનસંઘના આગેવાનો અને જૈન શ્રીમંતો થોડો વિચાર અત્યારે જ કરી લે, અને મને જણાવે કે તેઓશ્રીના ગ્રન્થપ્રકાશન માટે અમો બનતું સહાય કરીશું. દેશનેતાઓના સ્મારકો પાછળ લાખો રૂપીઆ ખરચાય છે. બાપુના નામ પાછળ કરોડો રૂપીઆ ખરચાય છે. તો આ નિઃસ્વાર્થ ઉપકારી આ જન્મ જ્ઞાનયજ્ઞની ધૂણી જગાવનાર, આપણા પરમપિતાના જેવું કલ્યાણ કરનાર મહાન વારસા માટે સમાજે શું ન કરવું જોઈએ? ઘણું જ કરવું જોઈએ. બર્નાર્ડ શોના એક એક શબ્દ માટે યુરોપ એક એક પૌંડ ખરચે, વડોદરાના સ્વ૦ સયાજીરાવના જીવનચરિત્ર લખવા લેખકને એક એક શબ્દે એક એક રૂપિઓ મળે તો જૈન સમાજ એમના માટે શું કરવા તૈયાર છે? મને તો એમ પણ કહેવાનું મન થાય છે કે આવા પુરુષ યુરોપમાં જન્મ્યો હોત તો એનાં નામનાં ઠારેઠાર તોરણો બંધાત અને ઘરે ઘરે એમનાં જ્ઞાનનાં પૂજન થાત! અને ઠેરે ઠેરે જ્ઞાનના દીવડા પ્રગટ થાત!

અહીં બેઠેલા ભાગ્યવાન આત્માઓ! આપણા નિકટના મહા ઉપકારી પુરુષ માટે કંઈ ને કંઈ સેવા કરવાનો દૃઢ નિશ્ચય કરીને જજો.

અન્તમાં મારા પરમ ઉપકારી ગુરુદેવો, સ્વર્ગસ્થ શાસનપ્રભાવક આચાર્યદેવ વિજય મોહનસૂરીશ્વરજી મહારાજ ને વિદ્યમાન અત્રે બિરાજેલા પરમપૂજ્ય આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજય-પ્રતાપસૂરીશ્વરજી મહારાજ, પરમપૂજ્ય આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજયધર્મસૂરીશ્વરજી મહારાજ જેઓ મારી દરેક સત્પ્રવૃત્તિને સહાય ને આશીર્વાદ આપતા આવ્યા છે તેઓશ્રીનો હું પરમ આભાર માનું છું. બે દિવસના કેટલાક વક્તાઓએ આ કાર્ય માટે મને ધન્યવાદ આપ્યા છે. પણ સાચા ધન્યવાદને પાત્ર હું નહિ પણ અહીં બિરાજેલા ગુરુદેવો જ છે. આ સઘળીએ સફળતાનો સુયશ તેમને જ ફાળે જાય છે. હું તો એક નિમિત્તમાત્ર છું. તેઓશ્રીની કૃપા–સહાય સિવાય આ કાર્ય પાર પાડી ન જ શકાત!

અંતમાં અત્રે પ્રતિકૃતિરૂપે બિરાજેલા ઉપાધ્યાયજી ભગવાનને બે હાથ જોડી–વંદન કરી, આજથી ઉપાધ્યાયજી ભગવાનની વાણી સમગ્ર જૈન સંઘમાં જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રની જ્યોતને સવિશેષ પ્રકાશિત કરનારી નીવડે! એવી પ્રાર્થના કરી, શુભેચ્છા સાથે મારું વક્તવ્ય સમાપ્ત કરું છું. ૐ શાંતિઃ

★

મુંબઈ વસતા શેઠ જીવતલાલ પ્રતાપસી પોતાનું વક્તવ્ય રજૂ કરી રહ્યા છે

પ્રદર્શનનું બારીક અવલોકન કરીને પાછું ફરતું મુનિમંડળ
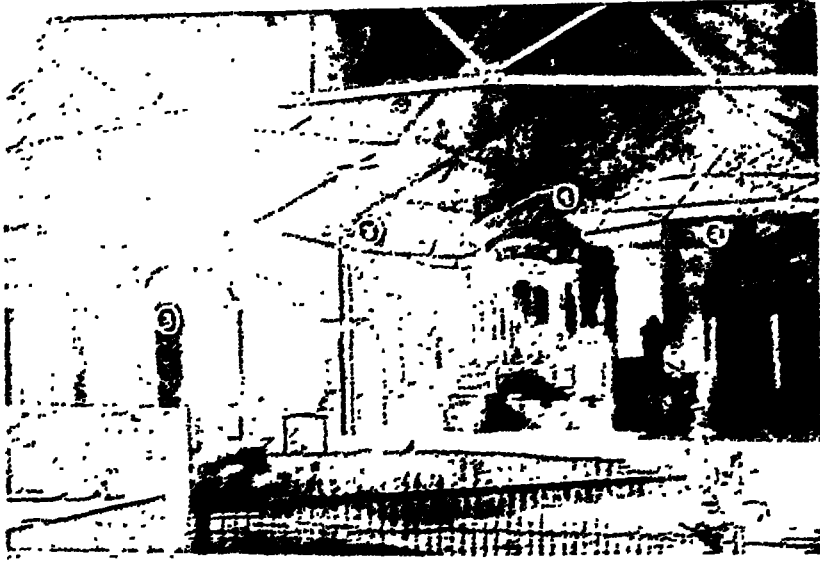
નોંધઃ—સત્રપ્રસંગે જાહેર થએલા નિબંધોની જૈનમાં પ્રગટ થએલી યાદી

શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર પ્રસંગે આવેલા લેખ-નિબંધોની યાદી

	વિષયનામ	લેખકનામ	
૧.	ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ અને તેમની શાસન સેવા	મુનિ શ્રીજંબૂવિજયજી	ચાલીસગામ
૨.	અમર યશોવિજયજી.	શ્રીદલસુખ માલવણિયા	બનારસ
૩.	વાચક યશોવિજયજી.	પં. શ્રી ભદ્રંકરવિજયજી	સુરત
૪.	પૂ ઉ. શ્રીયશોવિજયજી મહારાજના વચનનાં રહસ્યો અને વિશેષતાઓ.	મુનિ શ્રીભાનુવિજયજી	મુંબઈ
૫.	ત્રિષષ્ટિશલાકાપુરુષ ચરિત મહાકાવ્યમાંનું સમાજ દર્શન.	શ્રીજયંત પ્રે. ઠાકર એમ. એ.	વડોદરા
૬.	મહાન યોગીશ્વર શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજની જ્ઞાન દીપિકા (જ્ઞાનસાર અષ્ટક)	શ્રી અમરચંદ માવજી શાહ	ભાવનગર
૭.	તાર્કિક હરિયાળી સ્વોપજ્ઞ વિવરણ સહિત. ન્યાયાચાર્યને વંદન.	પ્રો. શ્રી હીરાલાલ ર. કાપડીઆ એમ. એ.	સુરત
૮.	ઉ. શ્રીયશોવિજયજી ન્યાયાચાર્યનું ભવ્ય જીવન.	શ્રા. નરોત્તમદાસ ભગવાનદાસ.	મુંબઈ
૯.	ન્યાયાચાર્યની વિશિષ્ટતાઓ.	આ૦ શ્રીવિજયલબ્ધિસૂરિજી મહારાજ.	ખંભાત
૧૦.	પ્રાચીન અને નવીન ન્યાય.	સાધ્વીજી શ્રીમૃગાવતીશ્રીજી.	કલકત્તા
૧૧.	(અ) तत्त्वार्थगीत (व) यशोविजय उपा०कृत तत्त्वार्थ गीत, विवेचक श्रीमद् ज्ञानसारजी	શ્રીભંવરલાલજી નાહટા.	બીકાનેર
૧૨.	ઉ. શ્રીયશોવિજયજીનો આપણા જીવન ઉપર અમૂલ્ય ઉપકાર.	સાધ્વીજી શ્રીમંજૂલાશ્રીજી.	ખંભાત
૧૩.	ઉ. મહારાજ અને તત્કાલીન પરિસ્થિતિ	શ્રીરાજપાળ મગનલાલ વૅારા.	ખાખરેચી
૧૪.	પ્રાચીન અને નવ્ય ન્યાયની વિશિષ્ટતા	શ્રીજિતેન્દ્ર જેટલી, એમ. એ.	અમદાવાદ
૧૫.	શ્રીયશોવિજયજી મહારાજની જન્મ-ભૂમિ કનોડા.	શ્રીકનૈયાલાલ ભાઈશંકર દવે.	પાટણ
૧૬.	જૈન સિદ્ધાન્ત અને સંસ્કૃતિનો સાચો પ્રચાર	મુનિ શ્રીમલયવિજયજી.	ખંભાત
૧૭.	(૧) ન્યાયાચાર્ય શ્રીયશોવિજયજી, એમની કેટલીક ગર્જર કૃતિઓની સાલવારી. (૨) શ્રીયશોવિજયજી, એમની મૂર્તિનો અનાવરણ વિધિ. (૩) વિશિષ્ટ પુરવણી.	શાહ ગોરધનભાઈ વીરચંદભાઈ.	મુંબઈ

ન્યાયવિશારદ—ન્યાયાચાર્ય

મહોપાધ્યાય ૧૦૦૮ શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

દર્ભાવતી સારસ્વતસત્ર 'ગીત ગુંજન'

★

સં. ૨૦૦૯ ફાલ્ગુન કૃષ્ણ ૭-૮ શનિ-રવિ

★

પ્રેરક : મુનિશ્રી યશોવિજયજી

રચયિતા—શ્રી મણિલાલ મોહનલાલ પાદરાકર

—: શ્રી સુયશ મંગલસ્તવન :—

(રાગ દુર્ગા)

જય સરસત સરસ ગવૈયા !
નય[1] અજય સુયશ રસવૈયા[2] !

અંજય તું ન્યાયવિશારદ તાર્કિક, શ્રુતધર ધન રસવૈયા !
અદ્‌ભુત જ્ઞાની સુરમણિ લહેરે લઘુ હરિભદ્ર લહરિયા !
હેમચંદ્ર ! સુમરાવત હરપાળ, ગ્રંથ બહુલ રચૈયા !
સતલક્ષણસદ્‌ગુણ, નિજગુણ સ્વાનુભવ નિત્ય રમૈયા !
દ્રવ્ય—ગુણ—પર્યાય—સુનય, નિક્ષેપ ભંગ સમરૈયાં !
ગર્જંત યોગાધ્યાત્મ સ્વગુણ, રસરાસ રમણ રસવૈયા !
ડોલત દિલ આનંદઘન પેખત, આનંદ પંથ ચલૈયા !
શાશનસુભટ, પાઠક, વાચક, ઉપાધ્યાય બિરદૈયા !
ગુર્જર—મહાગુર્જર યશ—બંધુ, પદ્મ પરાગ છવૈયા !
નારાયણ—સૌભાગ્યદેવીકે, કુલાવતંસ કનૈયા !
દેહવિલય દર્ભાવતી ડોલત, જૈનપુરી જયજૈયાં !
નિશ્ચય—અરૂ વ્યવહાર સાધુ શુદ્ધાચારી લખલૈયા !
સારસ્વત સત્રે યશધ્વજ યશ—ધર્મ—પ્રતાપ ગવૈયા !
ગુરુ—ગૌરવ ગાથારવ ગુંજન, ફાલ્ગુન સપ્તમી સૈયા ?
મેધાવી ભક્તન મુનિ સૂરિવર, યશ ચંદન ચરચૈંયા !
દર્ભાવતી દેવી ભૂમિ મણિમય—પ્રસન્ન શારદ મૈયાં !

*

---

૧. શ્રી નયવિજય = યશોવિજયજીના ગુરુ. નય = સપ્તનય. નય = ન્યાય.
૨. જ્ઞાનરસામૃત પીનાર અને પાનાર.

રસરાજલ રસતરસ્યાં ઉતર્યા, ઉજ્જતગિરિ વસનાર !
યશોવિજય સારસ્વત સન્ને, રસ અધ્યાત્મ પીનાર ! પધારો !

ધર્મ-સુયશ રસરાજે ખોલી, જ્ઞાન પરબ પીનાર-
કુંજકુંજ રસતરસ્યાં પીજો, છેડી હૃદય સિતાર ! પધારો !

જ્ઞાનરસામૃતના પીનારા, ભક્ત—સંત—નરનાર !
અભેદ થઈએ આવો ભાઈ, ફરીફરી ક્યાં મળનાર ? પધારો !

મહાકવિ—પંડિત—વાદિવિજેતા, યોગી ન્યાયઅવતાર !
ઉપાધ્યાય જશવિજય ગુણોત્સવ, દર્ભાવતીને દ્વાર ! પધારો !

ગીર્વાણીનો ગરવો ગાયક, ગૂર્જરીનો અવતાર !
મહાગ્રંથ આલેખક, ભાસ્કર શાશન નભ ઝળકાર ! પધારો !

સપ્તમી શ્યામલ ફાગુન શનિચર, ચઢતે પહોર ઉદાર !
પ્રતાપ-ધર્મ-યશોધ્વજ લહેરે, જયઆનંદ મલ્હાર ! પધારો !

કવિ—તત્વજ્ઞાની યોગી કે, હશો ભક્તિઆગાર !
સ્વાગત-મણિમય-દર્ભાવતીનાં, લ્યો શાશન શણગાર ! પધારો !

*

—: દેવભૂમિ દર્ભાવતીને દર્શને: —

(એક જ્વાલા)

રસ રાસ રસે રસી રાસ રમે, આજે દર્ભાવતી બલહાર બને.
શશી-સૂરજ દિવ્યપ્રકાશ રચે, યશ-સ્વર્ગભૂમિ બલહારં બને.

ગતવૈભવ દેવ વિલાસ હતા ! અહા આનંદ ઓર અપાર હતા:
સૂર સંગીત રેલી સિતાર જતા—આજે દર્ભાવતી.

વર જન્મભૂમિ મુનિચંદ્રસૂરિ ઉપાધ્યાય જયંત ને જંબૂસૂરિ.
યશ[2] રંગ[3] અમર[4] જયવિજયતણી—આજે.

દયારામ કવિ અહીં જન્મધરી, સંયમ સાઠ સાધુ ને સાધ્વી ગ્રહી.
શિતલાઈ સરોવરે દૃષ્ટિ ઠરી—આજે.

યશકૂર્ચાલીશારદ[1] યુગસ્રષ્ટા, એતો ત્રિદશગુરુશ્રીબ્રહસ્પતિ શા !
કલિકાલના યુગપ્રધાન હતા—આજે.

પાદુકા વિજયપ્રભ-મોહનસૂરિ, યશ શાસ્ત્રસંગ્રહ જ્ઞાનમંદિરની.
યશોવાટિકા ને જલમંદિરજી. આજે.

દિવ્ય દેવ વિમાન છ મંદિરીયાં, વસ્તુપાલ પેથડશાનાં સર્જનશાં !
અહીં પાધડી—હાટ કંસારા તણું—આજે.

ભવ્ય કોટ ને કિલ્લો પાષાણતણાં, ભવ્ય દરવાજા સ્થાપત્યનાં સ્મરણાં:
હીરાભાગોળ—હીરા કડીયાતણાં—આજે.

---

૧ મૂછાળીશારદા. ૨ શ્રીયશોવિજયજી. ૩ શ્રીરંગવિજયજી. ૪ શ્રીઅમરવિજયજી.

સારસ્વતસત્ર ત્હેં આદરીયાં—યજ્ઞ-ધ્યાન-પૂજન રંગરંગ ભરીયાં !
શોભે રાજહંસોથી સરવરીયાં—આજે.
સરસાગર આજ ઉછાળ સખે—દર્ભાવતી ડોલ ડોલાવ સખે.
કૂંજકૂજે કાળજડાં ખોલાવ સખે—આજે.
ગત ગૌરવ લાવ ફરી તું ફરી, સંપ સ્વાર્પણ સંસ્કૃતિ દેવિભરી !
મણિમય બની જા ફરી દર્ભાવતી—આજે.

*

—: શ્રી સુયશ-જીવન સંજીવની :—

(સૈની—આશા)

ગરવો એ ઉત્તર ગૂજરાત !
આમ્રમંજરી કોયલ ટહુકે, ગાતી રાગ મલ્હાર !
અંબર નીલવરણુ તરુરાજી, ધારે બાર અઢાર ! ગરવો.
સરીતા કોતર વાંઘાં રાયણુ, ઝૂકી રહ્યા સહકાર !
કુંતકાનના ગામ કનોડા, પુનિત તપોવન દ્વાર ! ગરવો.
પુત્ર યુગલ જશ-પદ્મ પિતુ-મા—નારાયણ સૌભાગ્ય !
સોળ ઇક્યાસી નય ગુરુ પાટણ, દીક્ષા ઉભય વિરાગ ! ગરવો.
સોળ નવાણું રાજનગર, દે ધનજી સુરા સ્હાય !
ગુરુ-સહિત કાશી પરવરીયા, કરતા શાસ્ત્ર અભ્યાસ ! ગરવો.
ગંગા—તટ આરાધન શારદ, પ્રસન્ન—પરગટ થાય !
ન્યાયવિશારદ પદ પંડિત સૌ તાર્કિક યશ બિરદાય ! ગરવો.
અકબ્ર આગરા જેસલમેરે—વિજયદેવ સૂરિરાય !
ઉપાધ્યાય પદ દેતા યશ—વાચક—પાઠક કહેવાય ! ગરવો.
ત્રંબાવટી છાણી વટપુર થઈ—નગર પાટણ જાય !
ભરૂચ સુરત શહેર આણુ—યશધ્વજ નભ લહેરાય ! ગરવો.
અવધૂત આતમજ્ઞાની યોગી, આનંદઘન મળી જાય !
યુગલ જ્યોતિર્ધર અદ્ભુત ભેટી, જ્ઞાન ગંગમાં ન્હાય ! ગરવો.
ગીર્વાણી—ગૂર્જરી સુગ્રથે, જ્ઞાન સરીત છલકાય !
જ્ઞાનક્રિયા નિશ્ચય વ્યવહારે, પ્રમાણુ ગ્રંથ ગણાય ! ગરવો.
વિચરંતા દર્ભાવતી દ્વારે, પધારતા જશરાય !
અનશન પૂર્ણ સમાધિ—સત્તર તેતાલીસ યશ પાય ! ગરવો.
પુનિત પાદુકા સ્થાપન, પ્રતિમા, સમાધિ મંદિર થાય !
પુણ્યભૂમિ યશ—યશ પોકારે, શારદસત્ર રચાય ! ગરવો.
લઘુ હરિભદ્ર શ્રી હેમપ્રતિકૃતિ—અજોડ તાર્કિકરાય !
'મણિમય' નત મસ્તક યશ ચરણે, ભક્તિ પુષ્પ અર્પાય ! ગરવો.

*

—: જશ જ્યોત :—

(રાગ—મિશ્ર પટદીપ-એકબાર મુસ્કરા દો !)

એક જ્યોત જશ જગાદો !

બાનીકી એક લહરસે, વો જ્યોતિ ઝગમગાદો ! એક

છલબલકા રાજ શાસન—

દેખોજી હાલ સબકે

આગમ સુનાયકે હમ હુકરાતે, પથ દીખાદો ! એક

આત્માકી જ્ઞાનજ્યોતિ—

રહે જલતી દમબદમ મેં !

જીસ જ્યોતકા કિરનસે, વીરધર્મ કો સિખાદો ! એક

યે સચ્ચી સચ્ચી બતીયાં—

સતજ્ઞાન ઓર ક્રિયાકી

બન બોધીબીજ પલમેં, મુક્તિપંથે પ્હોંચાદો !

ઝંઝટ છૂડાકે 'મણિકા'—અરમાન યે પૂરાદો ! એક

*

—: વિદાય :—

લાડીલાં વીરનંદનીયાં સૌ આવજો.

અમ માનસસર રાજહંસ રસાળજો.

પધારીયા શ્રીયશોવિજય ગુણઉત્સવે,

સુહાવવા યશ—ધર્મ—સુયશ દરબારજો લા૦

આવ્યા આંગણુ રસતરસ્યા રસરાજવી,

નિજાત્મતત્વરસામૃત કરવા પાનજો.

પીધાં પાયાં દિવ્ય રસાયણુ શાશ્વતાં,

હોય કટુતા વિસારસો મહેમાનજો. લાં૦

સાગરદિલ વિદ્યાસંસ્કારી આપ તો,

ચાતક ગુરુવર નયનામૃત અભિરામજો.

ધર્મપિપાસુ બાંધ્યા સ્નેહ નિભાવજો,

થાકયા દિલના વ્હાલા ઓ વિશ્રામજો. લા૦

ધર્મ પ્રતાપે સુયશ જયધ્વજ લ્હેરાતો,

આવ્યા ! સત્કારી ન શકયા મહેમાનજો.

ક્ષમાભર્યાં હૃદયામૃત પાન કરાવજો,

'મણિમય' દ્રવતા દિલની આજ વિદાયજો. લા૦

નોંધઃ—સત્રોત્સવની ઉજવણી અંગે જૈન પત્રમાં પ્રગટ થયેલી તંત્રી નોંધનો ઉતારો.

તંત્રીસ્થાનેથી

ધન્યવાદ

ગત શ્રાવણ વદિ સાતમ-આઠમના દિવસો દરમ્યાન, ડભોઈ મુકામે મહોપાધ્યાય શ્રી યશોવિજયજી મહારાજના ગુરુમંદિરની પ્રતિષ્ઠાના શુભ અવસરે, એ પ્રતિષ્ઠા-મહોત્સવની સાથોસાથ, મહોપાધ્યાયજીના સર્વતોમુખી વિશદ પાણ્ડિત્યને ભાવભરી અંજલિ આપવાના ઉદ્દેશથી શ્રીયશોવિજયસારસ્વતસત્રની ઉજવણી કરવામાં આવી તે બીના પ્રત્યે અમે અમારો હર્ષ વ્યક્ત કરીએ છીએ.

ગુરુમંદિરની પ્રતિષ્ઠાની સાથોસાથ આવો જ્ઞાનોત્સવ યોજવાનો જે મહાનુભાવોને વિચાર સ્ફુર્યો અને જે મહાનુભાવોએ એ વિચારને વધાવી લઈને એને મૂર્ત કરી બતાવ્યો તે બધા ય મહાનુભાવો-મુનિવરો, વિદ્વાનો, વિચારકો અને ધગશ ધરાવતા આપણા કાર્યકરોને આવું અતિ સમયોપયોગી કાર્ય કરવા માટે અમે હાર્દિક ધન્યવાદ આપીએ છીએ. તેઓએ આ કાર્ય કરીને સમાજ ઉપર ઉપકાર કર્યો છે, તેથી તેઓ પ્રત્યે અમે સમાજની વતી આભારની લાગણી વ્યક્ત કરીએ છીએ.

આ સારસ્વત ઉત્સવ કેવા મોટા પાયા ઉપર આપણે ઉજવી શક્યા, અથવા એમાં આપણે કેટલા અંશે સફળ થઈ શક્યા, કે એમાં આપણી ધારણા મુજબ કેટલું કાર્ય પાર પાડી શક્યા વગેરે બીના અમારે મન ઝાઝી મહત્ત્વની નથી. અમારે મન તો આવા જ્ઞાનોત્સવની એક યોજના તૈયાર કરવામાં આવી અને તેને સમય સ્થળ અને સંયોગોને અનુસાર પાર પાડવામાં આવી એ બીના જ ભારે મહત્ત્વની છે; અને આ મહત્ત્વની દૃષ્ટિએ જ અમે આ સારસ્વત ઉત્સવનું મૂલ્યાંકન કરીએ છીએ, એની પ્રશંસા કરીએ છીએ, એનું સ્વાગત કરીએ છીએ.

આપણે ત્યાં દર્શનના એટલે કે શ્રદ્ધાના પોષક અનેક નાનામોટા ઉત્સવો ઠેર ઠેર, વારંવાર યોજવામાં આવે છે, પણ જ્ઞાનના ઉત્સવોની અને તેમાં ય જે ઉત્સવોથી સમાજમાં જ્ઞાન પ્રત્યેનો આદર વધે એટલું જ નહીં પણ દરેક વ્યક્તિને દિલમાં એમ થાય કે જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કર્યા વગર ન તો આપણો પોતાનો ઉત્કર્ષ સધાવાનો છે; કે ન તો સમાજનો ઉત્કર્ષ સધાવાનો છે. એવા ઉત્સવોની અને એવી પ્રવૃત્તિઓની આપણે ત્યાં ભારે ખામી છે. શ્રદ્ધાના ક્ષેત્રને જેમ આપણે સમાજ વ્યાપક બનવા દીધું છે; તેમ જ્ઞાનના ક્ષેત્રને આપણે વ્યાપક બનાવી દીધું નથી; એમાં તો આપણે અમુક વ્યક્તિઓને જગાવીને જ સંતોષ માની લીધો છે. પરિણામે જૈન સંસ્કૃતિની પ્રગતિ રોકાઈ ગઈ છે અને એનું કાર્યક્ષેત્ર વધુ ને વધુ સંકુચિત બનતું ગયું છે. સમાજના યોગક્ષેમની દૃષ્ટિએ આ સ્થિતિને દૂર કરવાની બહુ જરૂર છે. શ્રદ્ધા અને જ્ઞાન—એ બન્ને પલ્લાં સમતુલાવાળાં બને તો જ જૈન સમાજ પ્રગતિ સાધી શકે, અને પોતાની વિશ્વકલ્યાણની છાપ બીજાઓ ઉપર પાડી શકે.

કેવળ શ્રદ્ધાનું રટન કર્યા કરીએ તો પરિણામે જ્ઞાન પ્રત્યે અભિરુચિ જાગવાના બદલે અંધશ્રદ્ધા તરફ જ આકર્ષણ વધી જાય; અને છેવટે જ્ઞાનનું ક્ષેત્ર વધુ ને વધુ ઉપેક્ષિત બની ગયા વગર ન રહે. આપણું જ તત્ત્વજ્ઞાન, આપણો જ ઈતિહાસ કે આપણું જ સાહિત્ય આપણે યથાર્થરૂપમાં ન પિછાણી શકીએ એ બીના આ વાતની જ સાક્ષી પૂરે છે. સમાજમાં ચારે કોર આવી પરિસ્થિતિ પ્રવર્તી રહી છે, અને આપણા આગેવાનોમાંના ઘણાખરા હજુ પણ પોતાની શક્તિઓ આવે માર્ગે જ વાપરતા દેખાય છે ત્યારે આવો એકાદ, ભલે નાનો સરખો પણ, જ્ઞાનોત્સવ ચિત્તને આપમેળે જ આકર્ષી લે છે, અને આપણી પ્રશંસા માગી લે છે. આ સારસ્વત ઉત્સવનું આ દૃષ્ટિએ અમારે મન બહુમૂલ્ય છે.

એક દૃષ્ટિએ કહેવું હોય તો એમ જરૂર કહી શકાય કે, આ સારસ્વત ઉત્સવના યોજકોએ એક નવો ચીલો પાડવાનું શુભ કાર્ય કર્યું છે. આ કાર્ય સહુ કોઈએ અનુકરણ કરવા જેવું ઉત્તમ કાર્ય છે. અમે ઇચ્છીએ છીએ કે, ડભોઈમાં ઉજવવામાં આવેલ આ જ્ઞાનોત્સવને એક શુભ શરૂઆત માનીને ઠેર ઠેર અનુકરણ કરવામાં આવે અને આપણા પ્રત્યેક દર્શન–ઉત્સવની સાથોસાથ, તેમ જ સાવ સ્વતંત્ર રીતે પણ, આવા જ્ઞાનોત્સવો યોજવામાં આવે અને તેની જ્ઞાનના મહિમાને છાજે એ રીતે સંપૂર્ણ ઉદારતાપૂર્વક ઉજવણી કરવામાં આવે. જ્ઞાનની ઉપાસના કરતાં કરતાં શ્રદ્ધા ડગી જવાનો મુદ્દલ ભય સેવવાની જરૂર નથી. ઉલટું જ્ઞાનથી પરિમાર્જિત બનીને શ્રદ્ધા વધુ બળવાન જ બનવાની. અને એમ કરતાં શ્રદ્ધાને વળગી બેઠેલું અંધપણું જો અળગું થઈ જતું હોય તો, તે તો સર્વથા ઈષ્ટ જ ગણાય.

આ સારસ્વત ઉત્સવમાં જ્ઞાનના નિર્ભેળ સગપણથી આકર્ષાઈને મુનિવરો અને ગૃહસ્થોએ તેમ જ જૈન અને જૈનેતર વિદ્વાનોએ આત્મીય ભાવથી ભાગ લીધો એ આ ઉત્સવની બીજી ધ્યાન ખેંચે એવી વિશેષતા છે. બીજા, બીજા ધર્મો પ્રત્યે જ્યારે સહિષ્ણુતા રાખવાની અને એમની સાથે સમન્વય દૃષ્ટિમૂલક બંધુભાવ કેળવવાની ખૂબ જરૂર છે ત્યારે આવા ઉત્સવો બહુ ઉપયોગી સેવા બજાવી શકે, અને માણસ માણસ વચ્ચેની જુદાઈની દીવાલને સારા પ્રમાણમાં દૂર કરી શકે એમાં જરાય શક નથી. આ દૃષ્ટિએ પણ આ ઉત્સવ અનુમોદના માગી લે છે.

અને મહોપાધ્યાયજી સરખી વિભૂતિની વિદ્યાનાં અનેક ક્ષેત્રોનું મૌલિક અને તલસ્પર્શી રીતે ખેડાણ કરવાની વિરલ શક્તિ પ્રત્યે આપણે જનતાનું ધ્યાન દોરી શક્યા અને એમના સર્વવ્યાપી સાહિત્યનું પુણ્યસ્મરણ કરી શક્યા એ આ જ્ઞાનોત્સવની એક વધુ સફળતા છે. ઉત્સવમાં નક્કી કરવામાં આવ્યું છે તેમ, આપણે ઇચ્છીએ કે મહોપાધ્યાયજીના અત્યાર સુધીના અમુદ્રિત રહેલા ગ્રંથરત્નો સુસંપાદિત અને સંશોધિત રૂપમાં વહેલામાં વહેલી તકે જનતા સમક્ષ રજૂ કરવામાં આવે અને જે ગ્રંથો મુદ્રિત થઈ ચૂકેલા છે તેમાં પણ જે ફરી સંપાદિત કરવા જેવાં હોય તેને ફરીથી મુદ્રિત કરવામાં આવે, આ ઉત્સવની ઉજવણીથી જ આવી મહાજ્ઞાની વિભૂતિનો જ્ઞાનખજાનો જનતા સમક્ષ સુયોગ્ય રૂપમાં રજૂ થવાની આશા ઊભી થઈ છે. આ આશા વેળાસર ફળીભૂત થાઓ એમ પ્રાર્થીએ છીએ. આ ઉત્સવના નાના–મોટા બધા પ્રયોજકો અને કાર્યકરોને ફરી ધન્યવાદ આપીએ છીએ, અને આવા સુંદર કાર્યનું સર્વત્ર અનુકરણ થાઓ એમ ઇચ્છી વિરમીએ છીએ.

✶

સત્ર ઉપર સફળતા ઈચ્છતા અને અભિનંદન આપતા આવેલા સંદેશાઓ

[નોંધ—સત્ર ઉપર પત્ર અને તાર દ્વારા પૂજ્ય-જૈનાચાર્યો,-મુનિવરો-સાધ્વીજીઓ, તથા રાજ-કર્માચારીઓ; યુનિવર્સિટી કૉલેજ વગેરે શૈક્ષણિક સંસ્થાના કુલપતિ-ઉપકુલપતિ, પ્રાધ્યાપકો આદિ વિદ્વાનો, પંડિતો, શાસ્ત્રીઓ, તથા જૈન સમાજના સંસ્થાઓ જૈન સમાજના કાર્યકરો, અને બીજી અનેક સંસ્થાઓ વગેરેએ તાર ટપાલદ્વારા જે સંદેશાઓ પાઠવ્યા હતા તેને અહીં રજૂ કર્યા છે. પ્રથમ પત્રદ્વારા આવેલા ને પછી તાર દ્વારા આવેલા સંદેશાઓ, તેના ઉપયોગી ભાગ સાથે મૂક્યા છે. તે એટલા માટે કે પૂ. ઉપાધ્યાયજીના વ્યક્તિત્વ માટે, તેમના કાર્ય માટે સમાજના ન્હાના-મોટા વર્ગોમાં કેવી છાપ પડેલી છે? તેમને અંગે અને તેઓશ્રીના સાહિત્ય અંગે શું કરવું જોઈએ તેને અંગે કેવું દૃષ્ટિબિન્દુ, અને શાં સૂચનો કે ભાવના છે? તે સહુ કોઈ જાણી શકે અને તેમાંથી તેઓશ્રીના અણમોલ અને અદ્ભુત સાહિત્યના અધ્યયન, પ્રચાર અને વિકાસ માટે સહુનો સહકાર સાંપડે અને તે દ્વારા કંઈક ફલદાયક પરિણામો ઊભા થાય. સંદેશા બધા ય ગુજરાતી ભાષામાં જ મૂક્યા છે. ય૦ વિ૦]

*

ટપાલ દ્વારા મળેલા સંદેશાઓ

મહામહોપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજની ચરણપાદુકા—ડભોઈના પ્રતિષ્ઠામહોત્સવ પ્રસંગે એઓશ્રીના સ્મરણાર્થે શ્રીસારસ્વતસત્રની જે યોજના થવામાં આવી છે તે જાણી આનંદિત થયા છીએ અને તે સંપૂર્ણ સફળ થાય એમ અંતઃકરણથી ઈચ્છીએ છીએ.

આ શુભ પ્રસંગે બહારથી પધારેલા ઘણા વિદ્વાનોનો સમાગમ થશે, એઓની વિદ્વત્તાનો લાભ મળશે તો આ શુભ પ્રસંગે તેઓશ્રીજીની ચિરસ્મૃતિ માટે યાદગીરી રહે અને જૈનસમાજ તેઓશ્રીજીનું નામ સ્મરણ કરતી રહે એટલા સારૂં અમે ભારપૂર્વક ભલામણ કરીએ છીએ કે એઓશ્રીજીની ડભોઈની સમીપમાં એ સ્થાને એઓશ્રીજીના શુભ નામથી શ્રીસંસ્કૃત પાઠશાળા સ્થાપન કરવામાં આવે અને એમાં વ્યાકરણ, ન્યાય આદિનો અભ્યાસ કરાવવામાં આવે. એમાંથી નીકળેલા વિદ્વાનો જૈનધર્મનો અને એઓશ્રીજીના શુભ નામનો વિજયવાવટો ફરકાવે એમ અમો શુદ્ધ અંતઃકરણથી ચાહીએ છીએ.

—આચાર્યશ્રી વિજયવલ્લભસૂરિજી, કોટ, મુંબઈ.

* * *

શ્રીયશોવિજયસારસ્વતસત્રની ઉજવણી દ્વારા ન્યાયવિશારદ, ન્યાયાચાર્ય મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી ગણિવરના ગુણાભિવાદન કરવાનો અને તેઓશ્રીના વિપુલ અને વિશિષ્ટ સાહિત્યનો વિદ્વાનોને પરિચય કરાવવાનો તમારો આ પ્રયત્ન ખૂબ સફળ બનો એમ ઇચ્છું છું. બે-ચાર દિન પૂરતાં તેમનાં ગુણગાન કરી સંતોષ ન માનતા, તેમના જીવન અને કવનને લોકભોગ્ય બનાવી લોકોપકારના જે પવિત્ર ઉદ્દેશથી તેમણે સાહિત્ય સર્જન કર્યું છે તેને પૂર્ણ કરવાનું મંગલકાર્ય અનવરત ચાલુ રહેવું જોઈએ.

ડભોઈમાં તેમનાં જીવનની અંતિમ પળો વ્યતીત થએલી હોઈ ડભોઈના શિરે આ જવાબદારી વિશેષ રૂપે રહે છે.

—આચાર્યશ્રી વિજયલબ્ધિસૂરિજી, ખંભાત.

*　　*　　*

મહામના વિદ્વદ્‌વૃંદમાન્ય મહોપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજનો ઉત્સવ જે ડભોઈના સંઘે મનાવવાનો નિર્ણય કર્યો છે અને તેમને માટે અનેક પ્રકારની સામગ્રી સંગ્રહ કરવામાં તત્પર છે એવા પત્રો દ્વારા સમાચાર જાણીને અત્યંત આનંદ થયો છે. કેમકે શ્રીઉપાધ્યાયજી એક સામાન્ય વ્યક્તિ નહિ બલ્કે શાસ્ત્રનિષ્ણાત, ષટ્‌-દર્શનમાં વિખ્યાત અને પૂર્ણપ્રતિભાશાળી હતા, જેમણે અનેક ગ્રંથોની રચના કરીને જૈન સમાજનું ગૌરવ સમુન્નત બનાવ્યું એવા મહાપુરુષોની જૈન સમાજમાં આજે પણ જરૂરત છે. અને એવા પુરુષોનો જન્મ થવાથી જ જૈન જગત પુનઃ પૂર્વ માફક સંસારમાં ચમકી ઊઠશે. વિશ્વહિત-ચિંતક ઉપાધ્યાયજીની જયંતી પ્રતિવર્ષ પ્રત્યેક ગામ અને શહેરમાં શાનદાર રીતે મનાવવી જરૂરી છે. મહોત્સવની સફળતા ઇચ્છીએ છીએ.

—આચાર્યશ્રી વિજયહિમાચલસૂરિજી જામનગર.

*　　*　　*

શાસનના મહાન ઉપકારી પૂ૦ ઉપાધ્યાયજી મહારાજ શ્રીમાન યશોવિજયજી મ૦ નો સારસ્વતસત્રરૂપ મહોત્સવ કરવાનું નિરધાર્યું છે તે જાણી અત્યંત આનંદ થાય છે. આપશ્રીઓના હસ્તે પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજના થૂભ — ગુરુમંદિરની પ્રતિષ્ઠા કરવાનું થાય છે તે મોટો પુણ્યનો ઉદય છે. અમે આ કાર્યને માટે શ્રીવિજયદેવસૂરિ સંઘની કાર્યવાહક કમિટીને આ કાર્ય વધુ યશસ્વી બનાવવા માટે ધન્યવાદ તેમ જ શુભ આશીર્વાદ આપીએ છીએ.

—આચાર્યશ્રી ચંદ્રસાગરસૂરિજી, સાબરમતી, અમદાવાદ.

*　　*　　*

યશોવિજય સારસ્વતસત્ર મહોત્સવની સફળતા ઇચ્છું છું.

—પં. મુનિશ્રી ભદ્રંકરવિજયજી, સુરત.

*　　*　　*

યશોવિજય સારસ્વતસત્રના મહોત્સવના ઉદ્‌ઘાટન પ્રસંગે અભિનંદન.

—મુનિશ્રી પુણ્યવિજયજી, અમદાવાદ.

*　　*　　*

યશોવિજય સારસ્વતસત્રની અમો સફળતા ઇચ્છીએ છીએ.

પૂ૦ યશોવિજયજી મહારાજનું સર્વાંગી ચરિત્ર તથા અપ્રગટ સાહિત્ય જલદી પ્રકાશિત થાય એ પહેલી તકે જરૂરી છે.

—મુનિશ્રી દર્શનવિજયજી ત્રિપુટી, રાણીગામ, રાજસ્થાન.

*　　*　　*

પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજ પ્રત્યે ભક્તિભાવ વ્યક્ત કરવાનો અને તેઓ પૂજ્યશ્રીજીના. દર્શનશુદ્ધિ કરનાર સમર્થ સાહિત્યનો યથોચિતરૂપમાં પ્રકાશમાં લાવવાનો આ પ્રસંગ અનુમોદનીય અને તેઓશ્રી, પ્રત્યે ભક્તિભાવ ધરાવતા આત્માને આનંદપ્રદ છે. એ પ્રસંગને દીપાવવા તમો યથાશક્ય તમારી પ્રવૃત્તિમાં સફળ બનો.

—પં. મુનિશ્રી ધુરંધરવિજયજી ગણિ, મુંબઈ.

*　　　*　　　*

તેઓશ્રીના ઉપકારો આપણા પર દેશ, સમાજ તથા સંસાર પર અનેકવિધ છે. તેઓશ્રીની અદ્ભુત મેધા, અસાધારણ પ્રતિભા તેમ જ પ્રચંડ વિદ્વત્તાએ જૈન શાસનમાં શકવર્તી ઇતિહાસ સર્જ્યો છે.

૧૪૪૪ ગ્રંથ રત્નોના રચયિતા સમર્થ વિદ્વાન સૂરિપુરંદર શ્રીહરિભદ્રસૂરીશ્વર, તથા કલિકાલ સર્વજ્ઞ આચાર્ય ભગવાન શ્રીહેમચંદ્રસૂરીશ્વર, આ બન્ને મહાન પુરુષોના પગલે પગલે જૈનશાસનમાં તેમજ સાહિત્ય સંસારમાં અપ્રતિમ પુરુષાર્થ દ્વારા પોતાની શક્તિઓનો પરમોત્કૃષ્ટ વિકાસ સાધી જે ભવ્ય વારસો આપણી સમક્ષ તેઓશ્રી મૂકી ગયા છે, તે માટે તેઓશ્રીનો આપણા પરનો મહાન ઉપકાર આપણે કદી ભૂલી શકીએ તેમ નથી.

એઓશ્રીએ જે વિકટકાલમાં જ્ઞાનયોગ, કર્મયોગ તથા ભક્તિયોગનો વિશુદ્ધ માર્ગ પ્રચાર્યો, પ્રસાર્યો તેમ જ તેની સામે આવતાં આક્રમણોનો નિજશક્તિથી (એકલપણે) જે પ્રતીકાર કરી, જૈનશાસનની અનુપમ પ્રભાવના તેમણે કરી તે ખરેખર અદ્વિતીય છે.

આવા મહામહનીય, પરમયોગી મહાન પુરુષના ગુણાનુવાદનું જે અનુપમ કાર્ય તમે સહુ ગુણાનુરાગી સજ્જનોએ આરંભ્યુ છે. તે સાચે જ પ્રશંસનીય છે.

પૂ. ઉપાધ્યાયશ્રીના સાહિત્યનો પ્રચાર વર્તમાનયુગમાં વિશેષ રીતે થાય તે ઇચ્છનીય છે. અને તમો જે સત્ર ઉજવી રહ્યા છો અને તે દ્વારા પૂ. ઉપાધ્યાયશ્રીના આપણા પરના ઉપકારને ભવ્ય અંજલિ અર્પણ કરી રહ્યા છો તે અભિનંદનીય છે.

પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજશ્રીનાં જીવન તથા કવનનો ગંભીર અન્વેષણપૂર્ણ અભ્યાસપૂર્વક એક વિશાળ ગ્રંથ આ પ્રસંગે પ્રસિદ્ધ થાય તે ઇચ્છનીય છે.

તદુપરાંત તેઓશ્રીનાં જીવન તથા સાહિત્ય પર વિવિધ દૃષ્ટિકોણથી જુદા જુદા નિબંધો; તુલનાત્મક અભ્યાસરૂપ લેખો, ઇત્યાદિ સામગ્રી તૈયાર કરવા શક્ય પ્રયત્નો થાય તો તે પણ આવશ્યક છે. તો પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજશ્રીના વ્યક્તિત્વનો સંસારના મુમુક્ષુજનોને, અભ્યાસકોને, સંશોધકોને તેમ જ વિદ્વાન વર્ગને પરિચય પ્રાપ્ત થાય.

તમે સહુ પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજશ્રીના જીવન-કવનને જે અંજલી અર્પવા આજે ઉત્સાહ પૂર્વક સજ્જ બન્યા છો, તે માટે મારા તરફથી પુનઃ અભિનંદન આપવા પૂર્વક હું એને અંગે મારી નમ્ર સૂચના તમને આ રીતે સૂચવું છું, જે માટે તમે પણ આ દિશામાં પ્રયત્નશીલ રહેશો જ.

આ સત્રના પ્રોત્સાહક તથા આયોજક વિદ્વાન મુનિપુંગવ શ્રીયશોવિજયજીને મારા તરફથી સાદર-અનુવંદના સુખશાતા.

—પં. મુનિશ્રી કનકવિજયજીગણિના પત્રમાંથી

*　　　*　　　*

યશોવિજય સારસ્વતસત્ર પ્રસંગે અત્યંત આનંદથી તમારી સાથે અંતઃકરણપૂર્વક સહાનુભૂતિ દર્શાવું છું.

—મુનિશ્રી રમણિકવિજયજી, અમદાવાદ.

*　　*　　*

પૂજ્ય ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર મહોત્સવનું જાણી આનંદ તથા થૂભ–ગુરુનીમંદિર પ્રતિષ્ઠા કરવાનું થાય છે. તે માટે પુણ્યનો ઉદય છે. આ મહાન કાર્યની સફળતા ઇચ્છીએ છીએ.

—મુનિશ્રી ચંદ્રોદયસાગરજી, સાબરમતી–અમદાવાદ

*　　*　　*

પૂ૦ મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજીમહારાજનો આપણા ઉપર જેવો તેવો ઉપકાર નથી. તેમની સ્મૃતિ નિમિત્તે તેઓશ્રીના ગ્રંથોનું સંરક્ષણ તથા પ્રકાશન વગેરે જેટલું શક્ય બને એટલું કરી છૂટવું. જ્ઞાન એ તો દીવો છે. તેના ઉપર જ શાસનનો ટકાવ છે. તેની જ્યોત જેટલી વિશેષ ઝળહળે તેટલો શાસનને વધુ લાભ છે.

—મુનિશ્રી રોહિતવિજયજી, વાપી

*　　*　　*

અમે આશા રાખીએ છીએ કે, હજી તમે ઘણાં મોટાં કાર્યો કરીને જેમ બને તેમ જૈન શાસનનો વિજયધ્વજ ફરકાવો અને સાથોસાથ એ અભિલાષા રાખો કે, જેવી રીતે આ મહાન પુરુષે ગ્રંથો રચીને આપણા પર ઉપકાર કર્યો છે, તેવી જ રીતે આપણે પણ તે જ માર્ગે અનુસરી આપણાં બાળકો અને સહધર્મીભાઈઓ પ્રત્યે ઉપકારકવૃત્તિથી વર્તીએ.

—સાધ્વી કેવળશ્રીજી, ખંભાત.

*　　*　　*

તમે જે શ્રીમહામહોપાધ્યાય યશોવિજય સારસ્વતસત્ર મહોત્સવ મનાવવાનો નિશ્ચય કરીને ગુરુભક્તિનો પરિચય આપ્યો છે તે પ્રશંસનીય છે. મહોત્સવ સર્વ પ્રકારે સફળતાને પ્રાપ્ત કરતો કોઈ રચનાત્મક કાર્ય સમાજની સન્મુખ ઉપસ્થિત કરે, એ જ અભિલાષા.

—સાધ્વી શીલવતીશ્રીજી, કલકત્તા.

*　　*　　*

આ મહિનાની તા. ૭–૮ મી એ ઉજવાતા શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર મહોત્સવ માટેની આમંત્રણ પત્રિકા બદલ શ્રી ય. સા. સ. ની સત્કાર સમિતિ અને તેના પ્રમુખનો તેઓ આભાર માને છે. પણ આ પ્રસંગે પહોંચી ન વળવા બદલ દિલગીર થાય છે. તેઓ આ પ્રસંગે મહોત્સવ માટે ભાવભરી ભલી આશાઓ વ્યક્ત કરે છે.

—સેક્રેટરી, ભીમસેન સાચર, ચીફમિનિસ્ટર(વડાપ્રધાન), પંજાબ.

*　　*　　*

શ્રીયશોવિજયજી મહારાજશ્રીના અંતિમ સમાધિ સ્થળે જે ઉત્સવ યોજવામાં આવ્યો છે તે આનંદની વાત છે.

આમંત્રણ માટે ખૂબ આભાર. આકસ્મિક આમંત્રણથી આવવાનું બની શક્યું નથી. તમારો કાર્યક્રમ ઘણો રસપ્રદ છે. તમારા પ્રયત્નોની સંપૂર્ણ સફળતા ઇચ્છું છું.

—જી. વી. માવલંકર, લોકસભા સ્પીકર, દિલ્હી.

*　　*　　*

આપની આમંત્રણ પત્રિકા બદલ આભાર. પણ અહીંના કાર્યભારના કારણે તેઓ આવી શકે એમ નથી એ માટે દિલગીર છે. તેઓ આ પ્રસંગે ઉત્સવ માટે ભલી આશાઓ વ્યક્ત કરે છે.

—મણિલાલ સી. શાહ, ડેપ્યુટી મિનિસ્ટર ફીનાન્સ ઇન્ડિયા, ન્યૂ દિલ્હી

* * *

શ્રીયશોવિજયજી સારસ્વતસત્રનો મહોત્સવ વિ. સં. ૨૦૦૯ ના ફાલ્ગુન માસની કૃષ્ણ પક્ષની સપ્તમી–અષ્ટમીની તિથિઓએ ડભોઈ નગરીમાં ઉજવાનાર પ્રસંગે આપે શ્રીમતી હંસાબહેન મહેતાને જ્ઞાનોત્સવસત્રમાં હાજર રહેવા આમંત્રણ આપ્યું તે માટે તેઓ આપનો આભાર માને છે. પણ તે તિથિઓએ તેઓ ડભોઈ આવી શકે તેમ નથી માટે દિલગીર છે. છતાં ઉપરોક્ત સત્ર બધી રીતે સફળ થાય એમ ઇચ્છે છે.

—હંસાબહેન મહેતા, વાઇસ ચાન્સેલર, સયાજીરાવ યુનિવર્સિટી

* * *

વાઇસ ચાન્સેલરે સને ૧૯૫૨ ના માર્ચની ૭–૮ મી તારીખે ડભોઈમાં ભરાતા શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર પ્રસંગે શ્રી ડી. એમ. પટેલ (દર્શન–શાસ્ત્રના વ્યાખ્યાતા અને કળાવિભાગના નિયોજક) અને શ્રી. જે. પી. ઠાકર (ઓરિએન્ટલ ઇન્સ્ટીટ્યુટના છપાયેલા ગ્રંથવિભાગના સુપરિન્ટેન્ડેન્ટ)ને પ્રતિનિધિ તરીકે મોકલવાની ખુશી બતાવી છે.

—રજીસ્ટ્રાર મહારાજા સયાજીરાવ યુનિવર્સિટી, વડોદરા.

* * *

શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર મહોત્સવમાં હાજરી આપવાના તમારા માયાળુ આમંત્રણ માટે ખરેખર, હું ઘણો આભારી છું. પરંતુ પરિષદમાં હાજરી આપવાને મારા કાબૂ બહારની પરિસ્થિતિઓ હાજરીને અશક્ય બનાવી રહી છે એ માટે મને ભારે ખેદ થાય છે. હું બધી રીતે પરિષદની અગત્ય સમજું છું અને સમગ્રપણે સફળતા ઇચ્છું છું.

—એમ. એન. શ્રીનિવાસ,

પ્રો. મહારાજા સયાજીરાવ યુનિવર્સિટી ઑફ બરોડા, સોશ્યોલોજી અને ફેકલ્ટી ઑફ આર્ટ્સ વિભાગ.

* * *

પૂજ્યપાદ યશોવિજયજી મહારાજ સમસ્ત ગુજરાતનું ગૌરવ છે, એટલું જ નહીં પણ ભારતનું ભૂષણ છે. આવી પંડિત અને પવિત્ર વિભૂતિના માનમાં મહોત્સવની જે યોજના કરવામાં આવી છે તે સર્વથા ઉચિત છે. કેટલાંક વર્ષો પહેલાં પાટણમાં ઉજવાયેલ હૈમ સારસ્વતસત્ર જેવા આ અભિનવ હેમચંદ્રાચાર્યનો સારસ્વતસત્ર સર્વને પ્રેરણા આપનારો બનશે એ વિશે શંકા નથી. ગુજરાતની અસ્મિતાને વેગ આપનારા આ મહોત્સવની યોજના માટે સમિતિ ધન્યવાદને પાત્ર છે.

આ સમારંભ સર્વથા સફળ થાય એવી પ્રભુ પ્રતિ પ્રાર્થના છે.

—ગોવિંદલાલ હરગોવિંદદાસ, ઓરિએન્ટલ ઇન્સ્ટીટ્યુટ ડિરેક્ટર, વડોદરા.

* * *

શ્રીહેમચંદ્રાચાર્યજી પછી ગુજરાતમાં સંસ્કૃત તેમ જ પ્રાકૃત ભાષામાં સંખ્યાબંધ અપ્રતિમ ગ્રંથલેખન દ્વારા જ્ઞાનજ્યોતિ પ્રદીપ્ત રાખી 'કૂર્ચાલી શારદ'નું બિરુદ પ્રાપ્ત કરનાર સાહિત્યસ્વામી ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજીના સારસ્વત સત્રના પ્રથમ દિવસે હું હાજરી આપી શક્યો નથી તે બદલ દિલગીર છું. પણ તે અંગેના વિદ્વત્સભાના અધિવેશનમાં હું અવશ્ય હાજરી આપીશ.

સારસ્વતસત્ર મહોત્સવની સફળતા તેમના ગ્રંથસ્થ વાઙ્મયના અધ્યયન, અધ્યાપન, સંશોધન અને પ્રચારની વ્યવસ્થાને જીવંત બનાવવામાં રહેલી છે.

હું મહોત્સવની સફળતા ઇચ્છું છું.

—હરિપ્રસાદ છ. મહેતા, વડોદરા.
પ્રિન્સિપાલ, બરોડા સંસ્કૃત મહાવિદ્યાલય, એમ. એસ. યુનિવર્સિટી ઑફ બરોડા.

* * *

આપના તરફથી મહોત્સવમાં ભાગ લેવા માટેના નિમંત્રણ બદલ હું આપનો આભારી છું. ન્યાયાચાર્ય શ્રીયશોવિજય ઉપાધ્યાયનું પ્રકાંડ પાંડિત્ય અને સુવિપુલ બહુમુખી સાહિત્યપ્રવૃત્તિ હરિભદ્રસૂરિ અને હેમચંદ્રાચાર્યનું સ્મરણ કરાવે તેવાં હતાં. તેમની અપ્રસિદ્ધ અને અપ્રાપ્ય રચનાઓનો ઉદ્ધાર થાય, તેમની વિદ્વત્તાનું યોગ્ય મૂલ્યાંકન થાય અને તેમની બહુશ્રુતતા પ્રેરણાદાયી બને એવા પ્રશસ્ય હેતુ સાથે સંકળાયેલા શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર મહોત્સવને સંપૂર્ણ સફળતા ઇચ્છું છું. આવી ન શકવા માટે ક્ષમા ચાહું છું.

—હરિવલ્લભ ભાયાણી, મુંબઈ.
પ્રાધ્યા. ભારતીય વિદ્યાભવન

* * *

જેમણે વિવિધ પ્રકારની સાહિત્યિક સેવાથી એ સમયના ક્ષેત્રમાં વણભૂંસ્યાં પાદ ચિન્હો પાડયાં છે, તે ગુજરાતના પ્રખર અભ્યાસી સંત મહાસમર્થ વિદ્વાન મુનિ શ્રીયશોવિજયના માનમાં યોજાતા યાદગાર સારસ્વત સત્ર પ્રસંગે આવવાને તમારૂં માયાળુ આમંત્રણ મળ્યું તે માટે આભાર માનું છું. આ પ્રભાવશાળી વ્યક્તિને અમારી ભાવભરી અંજલિ અર્પવા, આ સંસ્થાવતી હું તમારી સાથે અને તમારા સાથીદારો સાથે જોડાઉં છું અને સત્રની ભવ્ય સફળતા ઇચ્છું છું.

ભલી આશાઓ અને માયાળુ વિનંતિઓ સાથે હું છું આપનો

—આર. એન. દાંડેકર,
ભાંડારકર ઓરિએન્ટલ રિસર્ચ ઇન્સ્ટીટયુટ ઑનરરી સેક્રેટરી, પૂના

* * *

ગુજરાતના મહાવિદ્વાન શ્રીયશોવિજયના માનમાં તમે જે સારસ્વતસત્રની નિયોજના કરી રહ્યા છો તે પ્રસંગે આવવાને તમે માયાળુ આમંત્રણ આપ્યું તે માટે હું આપનો ખૂબ આભારી છું. આ સત્રની સુંદર સફળતા ઇચ્છું છું. આ સત્ર પ્રસંગે કોઈ લેખ વાંચવામાં ભાગ લેવાની વિનંતિ વિશે મારે જણાવવું જોઈએ કે, મહાન યશોવિજયના કાર્યો અને જીવન વિશે અથવા જૈનધર્મ સંબંધી કોઈ વિષય પરત્વે ચર્ચા કરતો કોઈ લેખ હાલ તરત મારી પાસે તૈયાર નથી.

—પી. કે. ગોડે, ભાંડારકર ઓરિએન્ટલ રિસર્ચ ઇન્સ્ટીટયુટ, પૂના.

* * *

ડભોઈમાં સને ૧૯૫૩ ના માર્ચ મહિનાની ૭–૮ મી તારીખે ઉજવાતા શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર મહોત્સવમાં હાજરી આપવાના તમારા માયાળુ આમંત્રણ માટે હું આપનો આભારી છું.

પૂ. ઉપાધ્યાયજી ભગવાનના પુણ્યપ્રસંગ નિમિત્તે ૩૦ વરસથી ડભોઈ જૈનસંઘમાં પડેલા ક્લેશનો અન્ત આવ્યા પછી
શ્રીવિજયદેવસૂર જૈનસંઘના ઉપાશ્રયહૉલમાં બંને પક્ષોની હાજરી વચ્ચે ગોઠવાએલું પ્રવચન અને આનંદ મિલન

ડભોઈમાં નવો તૈયાર થયેલો આરસનો
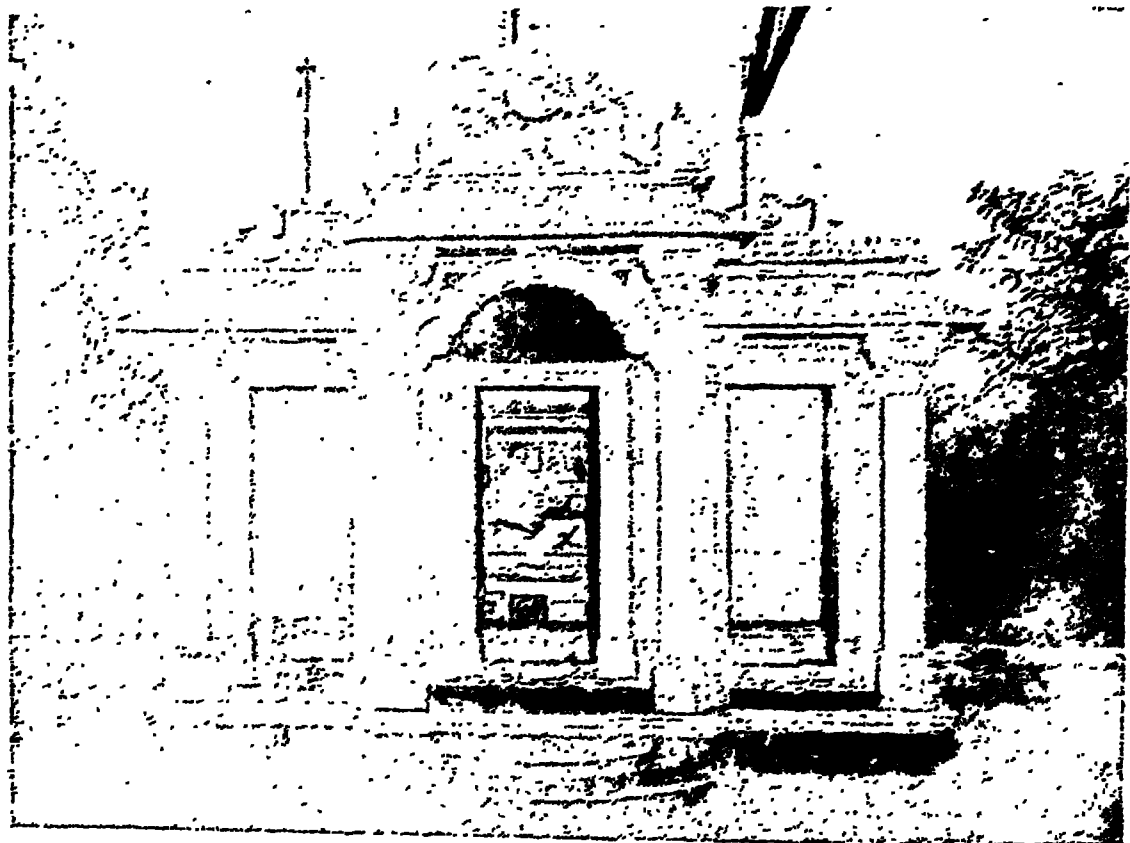
ન્યાયવિશારદ ન્યાયાચાર્ય મહોપાધ્યાય શ્રીમદ્ ૧૦૮ યશોવિજયજી મહારાજનો

—: સમાધિસ્તૂપ:—

દિલગીર છું કે, અન્ય રોકાણોને કારણે મહોત્સવમાં હું હાજર રહી શકીશ નહિ

પુરાણ પ્રસિદ્ધ દર્ભાવતી નગરીનું એવડું સદ્‌ભાગ્ય છે કે, ભક્તકવિ દયારામભાઈ ઉપરાંત એક મહાન દર્શનવેત્તા અને જ્ઞાનની વિવિધ શાખા-પ્રશાખાઓને સ્પર્શતા સંખ્યાબંધ અભ્યાસ ગ્રંથોના રચયિતા, સકલશાસ્ત્રસંપન્ન ઉદારચરિત સાધુપુરુષે પોતાના દેહોત્સર્ગનું પુણ્યસ્થળ બનાવવાનું તેને સદ્‌ભાગ્ય અર્પ્યું!

આજનો પ્રસંગ ડભોઈના સંસ્કારજીવનમાં એક મહાપ્રસંગ છે-ધન્ય પ્રસંગ છે; અને માટે જ એ પ્રસંગની ઉપસ્થિતિમાં કારણભૂત સૌ ધર્માનુરાગી ભાઈ-બહેનો સર્વના અભિનંદનનાં અધિકારી છે.

આ મહાન પ્રસંગનું મહત્ત્વ કાયમી સ્વરૂપે જળવાઈ રહે એ અર્થે, પૂજ્યપાદ ન્યાયાચાર્યજી શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજના સર્વગ્રંથોનું સમ્યક્ પરિશીલન થાય એ માટે તેઓશ્રીના અપ્રસિદ્ધ ગ્રંથોની હસ્તપ્રતો મેળવવાથી માંડીને તેમના પ્રકાશન વગેરેની સર્વ વ્યવસ્થા થવી ઇષ્ટ છે. વળી, આ 'ગુરુમંદિર'ના આશ્રયે શ્રીયશોવિજયજી જ્ઞાનમંદિર જેવી સંસ્થાની સ્થાપના વિચારાય એ પણ અતિયોગ્ય લેખાશે. આશા છે કે, સમિતિ અને અન્ય વિદ્વજ્જનગુણાનુરાગીઓ! આ વિષયમાં ઘટતું કરશો.

જેમની અનન્ય પ્રતિભાશક્તિ અને અપ્રતિમ જીવનસુવાસથી ગુજરાતનાં જૈન અને જૈનેતર નરનારીઓ ધન્ય બન્યાં છે. અને જેમની વિભૂતિમત્તાનાં તેજ કિરણોએ કેટલાયનાં જીવન અજવાળ્યાં છે, એવા ગુજરાતના એ અભિનવ 'કલિકાલ સર્વજ્ઞ' હેમચંદ્રાચાર્યજી સમા પુણ્યાત્મા આ પ્રસંગે આપણને સૌને ધર્માભિમુખ અને પરિશીલનાભિમુખ થવાની પ્રેરણા આપો એજ પ્રાર્થના!

સમારંભની હું સંપૂર્ણ સફળતા ઇચ્છું છું.

—ભાઈલાલ પ્ર. કોઠારી, વડોદરા.

* * *

શ્રી. યશોવિજયજી મહારાજનું સ્મરણ કાયમ રહે તે માટે જૈન સંઘે જે કામગીરી કરી છે તે માટે તે સંઘ ધન્યવાદને પાત્ર જ છે. કારણ, શ્રીયશોવિજયજી જેવા મહાન સાધુને યોગ્ય જે સ્મારક થવું જોઈતું હતું તેઓશ્રીનું મંદિર સ્થાપન કરી આપ તે મહાત્માનું થોડા અંશે ઋણ અદા કરી રહ્યા છો. ઈશ્વર આપના કાર્યની સફળતા અને યશ આપે.

—પ્રો. માણિકરાવ, વડોદરા.

* * *

શ્રીયશોવિજયજી સારસ્વતસત્રની ઉજવણી સંગીન રીતે ઉજવાય ને પરિણામે જૈન સમાજ તેમનું સાહિત્ય વિકસાવે ને જૈન જૈનેતર સમાજમાં ઉપયોગી તેવું પ્રકાશન કરે તેમ ઇચ્છું છું. સત્રના ઉત્સવની સફળતા પાઠવું છું.

—ગુલાબચંદ દેસાઈ, તંત્રી 'જૈનપત્ર' ભાવનગર.

* * *

જ્ઞાનપિપાસુ ડભોઈ શહેરને આંગણે જૈન સમાજનાં એક અત્યંત તેજસ્વી તારકની સ્મૃતિમાં ઉજવાતું સારસ્વતસત્ર સફળ થાઓ તેમજ જૈન સમાજને પથપ્રદર્શક બનો એ હાર્દિક ભાવના.

—રાજપાલ મગનલાલ વોરા, ખાખરેચી.

* * *

પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજશ્રીના ગુરુમંદિરની પ્રતિષ્ઠા માટે આ સભા અને હું સંપૂર્ણ આનંદ વ્યક્ત કરીએ છીએ.

સારસ્વતસત્ર મહોત્સવની સંપૂર્ણ સફળતા આ સભા અને અમો ઇચ્છીએ છીએ.

—વલ્લભદાસ ત્રિભુવનદાસ, મંત્રી. આત્માનંદ સભા, ભાવનગર.

આ સંસ્થાના સંસ્થાપક પૂજ્યપાદ શાસ્ત્રવિશારદ જૈનાચાર્ય શ્રીવિજયધર્મસૂરીશ્વરજી ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજીશ્રીના અકાટ્ય પાંડિત્ય અને ગુણોના અનુરાગી હતા. તેઓશ્રીએ જ્યાં જ્યાં સંસ્થાઓ સ્થાપી છે ત્યાં ત્યાં શ્રીયશોવિજયજીના નામને સૌ પ્રથમ અપનાવેલ છે. અને જૈન સમાજની કાયમ માટે યાદ આપી શ્રીઉપાધ્યાયજીની યાદી સોંપી છે.

આપ આ સત્રના કાર્યવાહકો આ પરમ જ્યોતિર્ધરનું સાહિત્ય જનતાને ઉપયોગી થાય એમ પૂરતા પ્રમાણમાં પ્રસિદ્ધ કરવા પ્રયત્નશીલ બનશો તેવી આશા રાખીએ છીએ.

—ભાઇચંદભાઇ અમરચંદ શાહ
મંત્રી—યશોવિજય જૈન ગ્રન્થમાળા ભાવનગર.

* * *

આપે શ્રીયશોવિજયજી મહારાજની સમાજને પ્રત્યક્ષ—સાચું દર્શન કરાવ્યાં છે.

—ગુલાબચંદ લલ્લુભાઇ, (મહોદય પ્રેસ) ભાવનગર.

* * *

પૂજ્ય પરમઉપકારી ઉ. મ. શ્રીયશોવિજયજી મહારાજશ્રીના સમાધિસ્થાને ગુરુમંદિરની રચના કરવામાં આવી છે તેની પ્રતિષ્ઠા સમયે સારસ્વતસત્રની મહોત્સવરૂપે યોજના કરવામાં આવી છે તે ઘણું જ પ્રશંસનીય છે. આપણો સમાજ એ ગુરુદેવનો પરમ ઋણી છે. જેમણે આપણને પ્રકાશ આપનાં સમગ્ર સાહિત્યનો વારસો આપ્યાં છે. 'જ્ઞાનસાર' 'અષ્ટક' જેવી ગીતા આપી છે. તેઓશ્રીના નામથી ચાલતી સંસ્થા શ્રીયશોવિજયજી જૈન ગુરુકુળનો હું ભૂતપૂર્વ વિદ્યાર્થી છું એટલે મને તો આ પ્રસંગથી એવડો આનંદ થાય છે. તેઓશ્રીના 'જ્ઞાનસાર અષ્ટક'થી મને જે આનંદ, શાંતિ અને સાધનાનો માર્ગ મળ્યો છે તે બદલ હું અત્યંત ઋણી છું. આ અંગેનો એક નિબંધ અમારું વંચાણ મોકલાવેલ છે. આપની સમિતિને હું હાર્દિક અભિનંદન આપું છું. એક આ પ્રસંગનો ખાસ અંક જે સ્મારકરૂપે ચિરંજીવ રહે તેવો તૈયાર થાય તો ખુશી થવા જેવું છે.

—અમરચંદ માવજી શાહ, ભાવનગર.

* * *

પૂ. ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજશ્રીની સાહિત્ય ઉપાસના જગતની હતી એ સાહિત્ય-સર્જનથી જનતાને ઘણો ઉપકાર થયો છે.

સત્ર ઉજવવાનો પ્રયત્ન પ્રશંસનીય છે. અને અનુમોદનીય છે. એથી સમિતિને મારા હાર્દિક અભિનંદન પાઠવું છું

—સોભાગચંદ ટી. શાહ, પાલીતાણા.

* * *

જગત આખું જ્યારે હિંસાના પંથે આંધળી દોટ મૂકી રહ્યું છે ત્યારે જૈન ધર્મે પ્રબોધેલો અહિંસાનો માર્ગ જ જગતમાં શાંતિ સ્થાપી આપણને માનવ કલ્યાણના પંથે લઈ જશે એમ મને લાગે છે. શ્રીયશોવિજયજી મહારાજશ્રીના ગ્રંથોનું અધ્યયન કરી થોડું આચરણ કરવામાં આપણે ફળીભૂત થઈશું તો મને ખાત્રી છે કે આપણું ભાવિ ઉજળું હશે. એમણે ભગીરથ કાર્ય કર્યું છે અને તે સદા અમર રહેશે.

આવા જ્ઞાનસત્રો સમાજમાં સંસ્કારિતા ફેલાવવામાં તથા સાહિત્ય પ્રત્યે લોકોની અભિરુચિ કેળવવામાં ખૂબજ મદદગાર થઈ શકે છે. તમારો આ પ્રયાસ સ્તુત્ય અને અભિનંદનને પાત્ર છે. આ સત્ર સફળ થાય તેવી મારી શુભેચ્છા છે.

—ભોગીલાલ મગનલાલ, (મહાલક્ષ્મીમીલ વાળા) ભાવનગર.

* * *

શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્રની સંપૂર્ણ સફળતા ઈચ્છું છું. આ પ્રસંગે ભાગ લેનાર આપ સર્વેને ધન્યવાદ ઘટે છે.

—શિવલાલ નેમચંદ,
મંત્રી—મુક્તાબાઈ જૈન જ્ઞાનમંદિર, પાટણ.

* * *

શ્રીયશોવિજયજી સારસ્વતસત્ર મહોત્સવ ખૂબ સારી રીતે ઉજવાય તેવી મારી અભિલાષા.

—કસ્તુરભાઈ લાલભાઈ, અમદાવાદ.

* * *

આપ બધા મળીને ત્યાં પૂજ્યપાદ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજનું સારસ્વત સત્ર ઉજવો છો જાણી હર્ષ થાય છે. મારી કૉલેજ ચાલુ છે એટલે હું ત્યાં પ્રત્યક્ષ હાજર નથી રહી શકતો તો જરૂર ક્ષમા કરશો.

પૂજ્યપાદ ઉપાધ્યાયજીના નામને શોભે એવું જ તમે સત્ર ઉજવશો એમ માનું છું. તમને ખબર હશે જ કે તેઓ એક મહાન આધ્યાત્મિક પુરુષ હતા. તેમના દોઢસો ગાથાવાળા સ્તવનમાં તેમના અંતરના વિચારો મૂર્ત થયા છે. 'ધૂમધામે ધમાધમ મચી' એ તેમનું વાક્ય યાદ રાખી વ્યર્થ આડંબર ન કરતાં આત્મભાવને પોષણ મળે એ રીતે તમારી યોજના તમે ઘડી હશે. આજ હજારો વર્ષથી જૈન પરંપરામાં વિદ્યાભ્યાસંગની ઘણી ખામી ચાલતી આવે છે. તે આવા નામી મહાપુરુષોના ઉત્સવને બહાને કંઈ ઓછી થાય અને વિદ્યાની ચિત્તશુદ્ધિકર આંતર પ્રવૃત્તિ થોડી ઘણી પણ ફેલાય તો આ ઉત્સવ જરૂર આદર્શ લેખાશે. તે મહાપુરુષનું સમગ્ર સાહિત્ય પણ આપણે જાળવી શકયા નથી એ આપણી મોટી શરમ છે. છતાં જેટલું જળવાયું છે તે સુંદર રીતે સંપાદિત થઈને લોકભોગ્ય ભાષામાં તૈયાર કરીએ તો યે ઘણું છે. આપનો સમારંભ સફળ થાય અને ઉપાધ્યાયજીની ભક્તિ આપણને પ્રેરણા આપે એ જ ઈચ્છા.

—પં. બેચરદાસ જીવરાજ, અમદાવાદ,

* * *

બિમારીને લીધે તેમાં ભાગ લેવા આવી શકું તેમ નથી માટે દિલગીર છું. જ્ઞાનવારિધિ શ્રી ૧૦૦૮ યશોવિજયજી મહારાજ જેવા આપણા ગુજરાતના વિદ્યાસંસ્કારના મહાન જ્યોતિર્ધરને માટે આવા પ્રકારનો સારસ્વતસત્ર મહોત્સવ આપ ઉજવો છો તે બહુ જ યોગ્ય છે. મહોત્સવમાં આપને સફળતા મળે એવી હું પ્રાર્થના કરું છું.

—રત્નમણિરાવ ભીમરાવ, અમદાવાદ.

* * *

સત્ર ઉપર રૂબરૂ આવવાનો મનોભાવ હતો પરંતુ છેલ્લા થોડા દિવસથી પગે સહેજ ઈજા થઈ છે, તેથી રેલ્વેનો પ્રવાસ મુશ્કેલ બનવાનો ભય લાગવાથી આવવાનો વિચાર બંધ રાખવો પડ્યો છે. સ્મારક ગ્રંથ માટે એકાદ લેખ લખવાનો મનોભાવ તો છે જ.

સત્રનો મહોત્સવ સફળ રીતે ઉજવાશે એવી આશા રાખું છું. મુખ્યત્વે શ્રીયશોવિજયજીની સાહિત્ય કૃતિઓ સંશોધીને પ્રસિદ્ધ કરવામાં આવે એ બહુ જરૂરી કાર્ય છે. આ મહોત્સવમાં એ કાર્યનો આરંભ થવા પામે એવી આશા રાખું છું.

ત્યાં આવવાથી ઘણા સાહિત્યરસિક મિત્રોના સમાગમનો લાભ થાય, તે પણ ગુમાવવો પડે છે તેથી ખિન્નતા અનુભવું છું પણ નિરુપાય.

—ચુનિલાલ વર્ધમાન શાહ, અમદાવાદ

* * *

આપની નિમંત્રણ પત્રિકા મળી. બીજાં રોકાણોને લઈને હું હાજર રહી શકતો નથી તે માટે દિલગીર છું.

મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી, એ જૈન સંપ્રદાયના જ નહિ પણ સમસ્ત ભારતના સંસ્કૃત વિદ્વાનોની હારમાળામાં એક ઉજ્જ્વળ રત્ન છે. તેમનું સ્મરણ તાજું કરવા માટે આપ જે મહોત્સવ ઉજવો છો તે યશસ્વી અને ફળપ્રદ નીવડો એવી પ્રાર્થના કરું છું.

માનું છું કે તમે ઉત્સવ ઉજવીને જ અટકી જશો નહિ પણ સારસ્વત સ્મારક કરશો.

—રસિકલાલ પરીખ, ગુજરાત વિદ્યાસભા નિયામક, અમદાવાદ.

* * *

શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્રમાં ભાગ લેવા માટેનું આપનું નિમંત્રણ મળ્યું. એક જ્ઞાનવારિધિની શાસ્ત્રસેવાનાં વિવિધ અંગોનું જ્યાં સ્મરણ થવાનું છે એવા જ્ઞાનસત્રમાં હાજર રહેવાનો લોભ તો ઘણો છે. પણ માંદગી આડે આવી છે. જે સમારંભમાં સ્થાને સ્થાનેથી વિદ્વાનો ભાગ લેવા આવવાના હોય તે સફળ થયા વિના રહે જ નહીં. છતાં મારા તરફથી સમારંભને સફળતા વાંછું છું.

—યશવંત પ્રા. શુક્લ, પ્રા. ગુજરાત વિદ્યાસભા.

* * *

શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર યોજીને જૈન સમાજની એક મહાન વિભૂતિને વધુ પ્રકાશિત કરી રહ્યા છો એ માટે અભિનંદનને પાત્ર છો. સત્રના કાર્યકર્તાઓની નામાવલિ જોઈને એની સફળતામાં શંકા રહેતી નથી. અર્થપરાયણ જૈન સમાજમાં આવા જ્ઞાનસત્રો જૈનોમાં પ્રવેશી ગયેલ જડવાદને ઉડાડશે.

—બાલાભાઈ વીરચંદ દેસાઈ (જયભિખ્ખુ)
—રતિલાલ દીપચંદ દેસાઈ
—અંબાલાલ પ્રેમચંદ શાહ
} અમદાવાદ

* * *

શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર મહોત્સવ પ્રસંગે હાજર રહેવાનું નિમંત્રણ મળ્યું. આભાર. ગુજરાતના મધ્યકાળના જ્યોતિર્ધરોમાંના એક જ્યોતિર્ધરને અંજલિ આપવાની તક મળી હોત તો ખૂબ જ આનંદ થાત. પરંતુ કેટલાંક અનિવાર્ય કારણોને લઈને હાજર નથી રહી શકતો તો માફ કરશો.

'કૂર્ચાલી સરસ્વતી'. એ શીર્ષક શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ પર એક લેખ તૈયાર કર્યો છે.

જ્ઞાનોત્સવ સત્રની સંપૂર્ણ સફળતા ઇચ્છું છું.

—ધીરજલાલ ધનજીભાઈ શાહ, અમદાવાદ.

* * *

સારસ્વતસત્રની સફળતા ઇચ્છું છું. શ્રીમદ્ યશોવિજયજીએ આપણા માટે સાહિત્ય ને જ્ઞાનનો અમૂલ્ય વારસો મૂક્યો છે. આપણે બધાંએ એ વારસાને અનુરૂપ થવાનો અને એ દીપાવવાનો પ્રયાસ કરવાનો છે. ડભોઈની જનતાએ અને શ્રી સંઘે શ્રીયશોવિજયનું સ્મારક રચી પોતાની શોભા વધારી છે.

—પી. કે. શાહ, અમદાવાદ.

* * *

પ્રાચીન કાળના યજ્ઞસમો આ યજ્ઞ તમે ડભોઈ મુકામે યોજ્યો છે. યજ્ઞની કાર્યસિદ્ધિ તો થાય કે ન થાય પણ જ્ઞાનયજ્ઞની સિદ્ધિ તો જરૂર થાય.

ઉ૦ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ જૈન શાસનના પૂ. આ. શ્રી હરિભદ્રસૂરિ, પૂ. સિદ્ધસેન દિવાકરસૂરિ, કલિકાલ સર્વજ્ઞ શ્રી હેમચંદ્રસૂરિની માફક ચોથા સ્તંભ હતા.

કાળની શાસનસૌરભ અને ઝલકમાં તેમનો અપૂર્વ ફાળો છે.

—પં૦ મફતલાલ ઝવેરચંદ,
તંત્રી 'દિવ્યપ્રકાશ', અમદાવાદ.

* * *

મહોપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજીએ તેમની કૃતિઓ મારફત તેમના અગાધજ્ઞાનનો લાભ જૈનો તેમજ જૈનેતરને આપ્યો છે તે ઉપકારનો બદલો વાળી શકાય તેમ નથી, પણ તેમની સ્મૃતિ તાજી રહે તે માટે આવા મહોત્સવો ઉજવવા ઇચ્છનીય છે અને તે કાર્ય ઉપાડી લેવા માટે શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર સમિતિ ધન્યવાદને પાત્ર છે. આ મહોત્સવની ઉજવણી કાયમને માટે ફળદાયી નીવડે એ આશા સાથે વિરમું છું.

—હેમચંદ જશવીર મહેતા, અમદાવાદ.

* * *

પરમપૂજ્ય ઉ૦ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ સાહેબના આપણે ફક્ત જૈનો નહિ જ પરંતુ સમસ્ત ગુજરાતી ભાષા બોલનાર જનતા ઋણી છે. તેમણે તો ગુજરાતી ભાષામાં સમગ્ર આગમનું દોહન, એટલી સરલ, નાના બાળકો પણ સમજી શકે, છતાં વિવેકી ભાષામાં આપણને પીરસ્યું છે કે તેની જેટલી પ્રશંસા કરીએ તેટલી ઓછી છે અને એ રીતે આપણે આપણું ઋણ યત્કિંચિત અદા કરી શકીએ.

તેઓશ્રી તો અગમબુદ્ધિ વાપરી આપણા ઉપર જે ઉપકાર કર્યો છે, કદી ભુલાય તેવો નથી જ.

તેમની પૂજાઓ, સ્તવનો તથા પદો કોઈ પણ જૈનેતરને વાંચવાનું મન થાય અને સુલભ રીતે જૈન દર્શનનું મહત્ત્વ સમજાય તેવાં છે.

"શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર"ની સંપૂર્ણપણે ફત્તેહ ઇચ્છું છું.

—કાન્તિલાલ લખુભાઈ પરીખ, અમદાવાદ.

* * *

દિલથી અહિંસાને અનુસરનારા કરવા જ પડશે, મતમતાંતરને શમાવનારી સ્યાદ્વાદની દૃષ્ટિ પણ અપનાવવી જ પડશે. આપના સમારંભની સાચી સફળતા એ પરમ ધ્યેયની સિદ્ધિમાં છે.

—મોહનલાલ પાર્વતીશંકર દવે, સુરત.

* * *

ધારાસભા (બોમ્બે લેજીસ્લેટીવ એસેમ્બ્લી) ચાલુ છે એટલે આવી શકાય તેમ નથી તે માટે દિલગીર છું. જિલ્લાના જૈન અને જૈનેતર ગૃહસ્થો જેઓ જૈન ધર્મના અભ્યાસમાં ઘણો રસ લઈ રહ્યા છે અને જેઓની વિદ્વત્તા જગજાહેર છે તેઓ એક સ્થળે મહોત્સવ માટે ભેગા થાય છે તે જાણી આનંદ થાય છે. આવા પ્રસંગે મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજીના ગ્રંથોના અભ્યાસ માટે કંઈક રચનાત્મક કાર્ય હાથ ઉપર લેવાય અને તે ચાલુ રહે તે માટે કંઈક યોજના કરવામાં આવે તો ફળદાયી થશે અને આવી કંઈક યોજના થશે એવી આશા સાથે—

—છોટાલાલ જી૦ સુતરિયા, (વડોદરાવાળા) મુંબઈ.

યશોવિજય સારસ્વતસત્ર મહોત્સવની ભારે સફળતા ઈચ્છીએ છીએ.

શ્રીયશોવિજયજીએ જૈન સાહિત્યના સર્જનમાં મોટો ફાળો આપ્યો છે તેથી આપણે ભારે ઋણી બન્યા છીએ. તેમણે કરેલી જૈન સાહિત્યની અદ્વિતીય સેવા આપણને ન કેવળ આવા ઉત્સવો યોજવાની ફરજ પાડે છે પણ આપણા ફળદાયી ઉદ્દેશને પહોંચવા માટે એક સ્થાયી યોજના માટે બાધ્ય કરે છે.

—મહાવીર જૈન વિદ્યાલય, મુંબઈ.

* * *

આપનો સતત પરિશ્રમ અભિનન્દનીય છે. યશોવિજયજી મહારાજની સાહિત્યગરિમાથી પરિચિત છું.

—નાથુરામ પ્રેમી, મુંબઈ.

* * *

અનિવાર્ય કારણો છે એટલે આપના ભાવભીના નિમંત્રણને માન આપી શકતો નથી મને જરૂર માફ કરશો.

સદ્‌ગત યશોવિજયજી એક મહાન વિભૂતિ છે. હું તો એમનો ખાસ અભ્યાસી છું. વાચક ઉમાસ્વાતિ, સિદ્ધસેનસૂરિ, હરિભદ્રાચાર્ય અને હેમચંદ્રસૂરિ પછી નજર ઠરતી હોય તો તેમના ઉપર જ ઠરે છે. આમ તો કોને નાના અને મોટા ગણવા એ જ સવાલ છે; કારણ કે સૌ વિદ્વાન મુનિઓ એક બીજાને આંટી ખવડાવે એવા થઈ ગયા છે. એટલે કોઈની પણ પ્રશંસા કરવા જતાં અન્યને અન્યાય ન થઈ જાય એ ખાસ તકેદારી રાખવી પડી છે. મને તો સદ્‌ગત યશોવિજયજીમાં જે અવનવું અને અસાધારણ લાગ્યું છે તે તેમની દાર્શનિક અતિતીક્ષ્ણ બુદ્ધિ અને તરલતા. ન્યાયશાસ્ત્રનું એમનું જ્ઞાન એટલું પ્રકાંડ, ગાઢ અને વિસ્તીર્ણ જણાઈ આવે છે કે, આપણને ઘડીભર એમ થઈ જાય છે કે, હવે એમનું સ્થાન લે એવો કોઈ બીજો પાકશે કે નહિ. આટલું જ્ઞાન હોવા છતાં એમનું માર્દવ, આર્જવ અને એમનો વૈરાગ્ય પણ અદ્‌ભુત હતો. આપણે એમના અપ્રગટ સાહિત્યનો પુનરુદ્ધાર કરવો જોઈએ. એ જ એમનું સાચું સ્મારક છે. અને તર્પણ છે. મારે તો આ વાત સાથે જ સંબંધ છે એટલે આટલું જણાવી સત્રની સફળતા ઈચ્છતો—

—અમૃતલાલ સવચંદ ગોપાણી, મુંબઈ.

* * *

સુપ્ત સમાજને ઢંઢોળવા માટે એમણે મારેલા શંખધ્વનિના સ્વર ચારેબાજુ પડઘા પાડી કંઈક ધીરે ધીરે, આપણો સમાજ અંધશ્રદ્ધાની ઘોર નિદ્રામાંથી જાગૃત બની તેમણે અપનાવેલી વિશ્વવ્યાપી વિશાળ તત્ત્વદૃષ્ટિ અપનાવશે તો તે જ શ્રીયશોવિજયજી જેવા મહાવિભૂતિનું જીવતુંજાગતું સ્મારક બની રહેશે.

—ડૉ૦ ભગવાનદાસ મનસુખભાઈ મહેતા, મુંબઈ.

*   *   *

હું તમારા કાર્યને અભિનંદું છું અને તમારા પ્રયત્નની સફળતા ઈચ્છું છું.

—શાન્તનભાઈ વીરચંદ શાહ, મુંબઈ,

*   *   *

શ્રીયશોવિજયજી સારસ્વતસત્રની યોજનાને અંતઃકરણથી આવકારું છું. એવા થયેલા મહાનુભાવ શ્રીમદ્ યશોવિજયના જીવનચરિત્રને સાચા સ્વરૂપે બહાર લાવવા માટે કટિબદ્ધ થશો અને તેમનું સાહિત્ય સુંદર રીતે પ્રકાશન પામે તથા તેનો અવિચ્છિન્ન પ્રચાર થાય તેવી કોઈ સંગીન યોજના અમલમાં લાવશો, કારણ કે તે એમનું સાચું સ્મારક છે.

આ સભાના પ્રેરક પ૦ પૂ૦ આચાર્ય મહારાજ શ્રીવિજયધર્મસૂરીશ્વરજી તથા મુનિરાજ શ્રીયશો-વિજયજીને મારી પુનઃ પુનઃ વંદના.

આપના આ પવિત્ર પ્રયાસને સર્વાંશે સફળતા ઈચ્છું છું.

—ધીરજલાલ ટોકરશી શાહ, મુંબઈ.

*   *   *

આપના પ્રયાસો માટે ઋણી છું.

શાસનદેવ.[illegible] આ સત્કાર્યમાં પૂર્ણ સુયશ આપો.

—મણિલાલ મોહનલાલ પાદરાકર, મુંબઈ.

*   *   *

હું વડોદરે હોત તો જરૂર આવત. પરંતુ થોડી શાંતિની ઈચ્છા હોવાથી હું અહીં એકાદ માસ રહેવા માટે આવ્યો છું અને તબિયતના કારણે આવી શકતો નથી તેથી માફી માગું છું.

આપના સત્રને હું પૂર્ણ સફળતા ઈચ્છું છું. આપની સમિતિનાં પ્રતિષ્ઠિત નામો વાંચી આપના સત્રની સાર્થકતા માટે મને ખાતરી છે.

—રમણલાલ વસંતલાલ દેસાઈ, ગોરેગાંવ.

*   *   *

શ્રીયશોવિજયજીના જીવન અને જીવનકાર્ય વિષે જે થોડીઘણી માહિતી પ્રાપ્ત થઈ છે તે ઉપરથી લાગે છે કે, તેઓ સંકુચિત ધર્માંધ મનોવૃત્તિવાળા નહીં પરંતુ વ્યાપક તત્ત્વવાદી મનોવૃત્તિવાળા હતા. આશા છે કે, એમનું ગૌરવ વધારવા માટે એકત્ર થએલા વિદ્વાનો તે જ દૃષ્ટિકોણ નજરમાં રાખીને પ્રવચનો અને વિવેચનો કરીને રાષ્ટ્રજનોના સંસ્કારના ૬૦૦—૭૦૦ વર્ષ સતત ચાલેલા શુભ કાર્યમાં પોતાનો ફાળો આપશે.

—પ્રબોધચંદ્ર દિવાનજી, મુંબઈ.

*   *   *

આવા મહદ્ જ્ઞાની અને સંત મહાત્માના માર્ગે આપણે સહુ સ્થિર બુદ્ધિથી વર્તીએ તો જ તેમનું માહાત્મ્ય આપણે સમજી શકયા છીએ તેમ ગણાય. શ્રીમદ્ યશોવિજયજીના જ્ઞાન માટે અને આત્મસ્થિરતા માટે નિઃશંકપણે એમ લાગે છે કે, તે એક અજોડ અને અદ્વિતીય પુરુષ હતા.

આવા મહદ્ પુરુષના ગુણગાનાર્થે આવા સત્રો વારંવાર યોજાય એ એક લહાવો છે અને તેમાં ભાગ લેનારા દરેક જીવ પુણ્યવાન ગણાય. —નગીનદાસ ગિરધરલાલ, જૈન સિદ્ધાંતસભા મુંબઈ.

* * *

આવા સારસ્વત સત્રોત્સવ નિમિત્તે ગુજરાતના વિદ્વાનોનું એક સંગઠન સધાય છે એ માટે સંચાલકોને ધન્યવાદ.

શ્રીયશોવિજયજીએ જૈનાચાર્ય છતાં વેદાન્તનિર્ણય, વેદાન્તવિવેક સર્વસ્વ વગેરે વૈદિકધર્મના ગ્રન્થો લખીને અભેદભાવ પ્રદર્શિત કર્યો છે.

ખાસ કરીને બૃહદ ગુજરાતના વિદ્વાનોએ એકત્ર કરવા અને સત્રમહોત્સવ ઉજવવાની કરેલી યોજના આદરણીય છે. સમિતિમાં વૈદિકધર્મ પંડિતોને સ્થાન આપી સત્રને વધુ દીપાવ્યો છે.

—શાસ્ત્રી રેવાશંકર મેઘજી દેલવાડાકર, મુંબઇ.

* * *

નિમંત્રણ માટે તમારો ઉપકાર માનું છું. દિલગીર છું કે આ પ્રસંગે હાજર રહી નહિ શકું. તમોએ યોજેલા સારસ્વતસત્રને હું સંપૂર્ણ સફળતા ઇચ્છું છું. —પરમાનંદ કુંવરજી કાપડીઆ, મુંબઇ.

* * *

આપના કાર્યની અનુમોદના કરું છું અને ઇચ્છું છું કે શાસનદેવ ધર્મની પ્રભાવના સાથે સત્ર પૂર્ણ કરે.

—નગીનદાસ કરમચંદ, મુંબઈ.

* * *

સેંકડો ગ્રંથોના રચયિતા, ગુજરાતના મહાન જ્યોતિર્ધર, ન્યાયવિશારદ મહોપાધ્યાય શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજના પુણ્યસ્મરણ રૂપે પૂજ્ય આચાર્ય પુંગવોની સાનિધ્યમાં ઉજવાતા જ્ઞાનસત્રના ઉત્સવની અંતઃકરણપૂર્વક સફળતા ચાહું છું અને શાસનદેવને પ્રાર્થના કરું છું કે પુણ્યધામ ડભોઈ એ આવા એક-બે જ નહિ પણ જૈન શાસનના અભ્યુત્થાન માટે અનેક યશોવિજયો પ્રગટાવો.

—માવજી દામજી શાહ
બાબુશ્રી પનાલાલ હાઇસ્કૂલ અધ્યાપક, મુંબઇ

* * *

ડભોઈ સત્રના સમાચારો જાણી અત્યંત આનંદ થયો છે. જૈન સાહિત્ય અને સંસ્કૃતિના વિકાસ અને પ્રચાર માટે એની ખાસ જરૂર હતી. તેની પૂર્તિ આપશ્રીએ કરી તે બદલ અભિનંદન ઘટે.

—માણેકલાલ ડી. મોદી, મુંબઇ.

* * *

શ્રીસંઘે ઉચિત કાર્ય ઉપાડેલ છે અને તે યોગ્ય કર્યું છે. ત્યાં હાજરી આપી શકતો નથી માટે દુઃખ થાય છે, પણ તમારાં કાર્યની સફળતા ઇચ્છું છું. કંઈ સ્થાયી થાય અને ઉપાધ્યાયજીના પગલે ચાલનારા મુનિવર્યો વધુ થાય તેમ કરાય તો વધુ ઉચિત થશે.

નિબંધો આવે, વ્યાખ્યાનો થાય, ચર્ચાઓ થાય. તેની નોંધ બરાબર રખાય અને ઉપાધ્યાયજીનું પ્રકાશમાન જીવન તેમાંથી સંપૂર્ણ લેખાય તેવી વ્યવસ્થા કરવાની જરૂર છે.

—લલ્લુભાઈ કરમચંદ દલાલ, મુંબઈ.

* * *

પરમપૂજ્ય શાસન શિરોમણિ સરસ્વતીકંઠાભરણ શ્રીમાન્ મહામહોપાધ્યાય શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજ સાહેબના આરસના નવીન ભવ્ય સ્તૂપ ગુરુમંદિરની કરવામાં આવેલી રચના નિમિત્તે આપે જે સમારંભ યોજ્યો છે તે સમારંભની દરેક પ્રકારે સફળતા અને મુબારકબાદી ઇચ્છું છું.

તેમના જેવા પરમ પ્રભાવક પરમ શ્રુત—સકળ સિદ્ધાંત પારગામી, સાહિત્યના ઉપાસકની સાથે નય, સ્યાદ્વાદ, સપ્તભંગી જેવા તત્ત્વજ્ઞાનના વિષયોને બારીકાઈથી જાણનાર, તેમના જેવા મહાપુરુષો બહુ ઓછા થયા હશે.

આવા પરમ ગુરુદેવનું સત્ર ઉજવી આપે મહાન પુણ્ય સંપાદન કર્યું છે. દ્રવ્યાનુયોગના નિષ્ણાત આચાર્ય શ્રીમદ્ વિજયધર્મસૂરીશ્વરજી અને સાહિત્યપ્રેમી વિદ્વાન શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ સાહેબ આદિની હાજરીમાં આ સત્ર ઉજવાય છે તે જાણીને અત્યાનંદ થાય છે.

શ્રીમદ્ યશોવિજયજી મહારાજ સાહેબને વિનંતિ સાથે લખવાનું કે જૈન શાસનના ભંડાર શ્રીમાન્ મહામહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજનું સત્ર ઉજવી તેમના જેવા થવા આપ ભગીરથ પ્રયત્ન કરશો એ જ અંતિમ ઇચ્છા છે. છેવટે સત્રની દરેક પ્રકારે સફળતા ઇચ્છી વિરમું છું.

—શંકરલાલ ડાહ્યાભાઈ કાપડિયા મુંબઈ.

* * *

પરમપૂજ્ય મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજની મૂર્તિની પ્રતિષ્ઠા, સારસ્વતસત્રનું ઉદ્ઘાટન વ. કાર્યક્રમો તેમ જ કુ. જાસુદબેનના દીક્ષા મહોત્સવ પ્રસંગોની આમંત્રણ પત્રિકાઓ મળી છે એ વાંચી ઘણો આનંદ થયો છે.

—ચંદુલાલ ટી. શાહ, જે. પી. મુંબઈ.

* * *

આ શુભ પ્રસંગે હું હાજર રહી શક્યો હોત તો મને અનહદ આનંદ થાત પણ ધારાસભાની બેઠક ચાલુ હોવાથી અને બીજા કામ પ્રસંગ હોવાથી આવી શકતો નથી. આવ્યો હોત તો પૂ. આચાર્ય દેવશ્રીના દર્શનનો લાભ પણ મળત.

સત્ર મહોત્સવ આનંદથી ઉજવાય અને સફળતા પામે એવી મારી અંતઃકરણ પૂર્વકની શુભેચ્છા છે.

—માણેકલાલ વખારીયા, મુંબઈ. એમ. એલ. એ.

* * *

પ્રયાસ ઉત્તમ અને અભિનંદનીય છે.

—ભારતીય સ્વયંસેવક પરિષદ, મુંબઈ
મંત્રી–મોહનલાલ દીપચંદ ચોકસી

* * *

માંદગીના કારણે હું ત્યાં આવી શકતો નથી તો ક્ષમા કરશો. ઉત્સવને સર્વ પ્રકારની સફળતા ઇચ્છું છું. પૂજ્ય આચાર્ય શ્રીવિજયપ્રતાપસૂરિજી તેમજ પૂ. આ. શ્રીવિજયધર્મસૂરિજી જેવા અત્યંત કાર્યદક્ષ ને જ્ઞાની પુરુષની હાજરી દ્વારા ઉત્સવ સંપૂર્ણ સફળતા પામશે. આજે જ્યારે ભૌતિકવાદને અધ્યાત્મવાદ

વચ્ચે સામસામી યુદ્ધ છાવણીએ જેવી સ્થિતિ પ્રવર્તે છે ત્યારે ઉપાધ્યાયજીની વિભૂતિપૂજા દ્વારા જ અધ્યાત્મ તત્ત્વની ગુણસ્તવના કરી શકીએ તેમ છીએ. એવી વિભૂતિપૂજાદ્વારા જ આપણે સત્યપરીક્ષા ને સત્ય-આરાધનાના તેજ પંથે સફળ પ્રવાસ ખેડી શકીએ. —વસંતલાલ કાન્તિલાલ ઈશ્વરલાલ, મુંબઈ.

* * *

પરમપૂજ્ય મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજની આરસની પ્રતિમાની પ્રતિષ્ઠાના શુભ પ્રસંગ ઉપર ડભોઈ આવવાની ઇચ્છા હતી પણ સંજોગો અનુકૂળ નહીં હોવાથી આવા શુભ પ્રસંગનો લાભ લઈ શકાય તેમ લાગતું નથી.

આ શુભ કાર્ય શાંતિપૂર્વક નિર્વિઘ્નપણે પૂર્ણ થાય એમ ઇચ્છીએ છીએ.

—રમણિકલાલ મોહનલાલ તારાચંદ, મુંબઈ.

* * *

સમારંભમાં હાજર રહી શકતો નથી તેથી મન ઘણું ખિન્ન થાય છે. કેમકે આવા મુનિમહારાજની મૂર્તિ સ્થાપના કરવાનું ભાગ્યશાળીને જ સાંપડે અને આવો અપૂર્વ અવસર કોઈકવાર જ આવે છે. છતાં સમારંભની સફળતા ઇચ્છું છું. —મૂલચંદ વાડીલાલ દોલતરામ એન્ડસન્સ, મુંબઈ.

* * *

પૂજ્યપાદ મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજના પુનિત નામથી જૈનસમાજની કોઈપણ વ્યક્તિ ભાગ્યે જ અજાણ હશે વિદ્વાનો માટે તો તેઓનાં વાક્યો અને સાહિત્ય આગમોના સચોટ પુરાવારૂપે મનાય છે. શાસ્ત્રોના વાક્યના અર્થમાં જ્યાં જ્યાં કંઈપણ વિરોધાભાસ ઊભો થાય ત્યારે પૂજ્ય ઉપાધ્યાયજી મહારાજ જે ફરમાવે છે તે સર્વમાન્ય રહે છે. એવા મહાન ઉપકારી ગુરુદેવના સમાધિસ્થાને ભવ્ય ગુરુમંદિર બંધાય તે ઘણું જ આવકારદાયક છે અને તેમની પ્રતિષ્ઠા સમયે શ્રીયશોવિજયજી સારસ્વતસત્રનો મહોત્સવ યોજાય તે ઘણું જ પ્રશંસનીય છે. અમો તેની સંપૂર્ણ સફળતા હૃદયપૂર્વક ઇચ્છીએ છીએ.

—પાનાચંદ રૂપચંદ ઝવેરી, મુંબઈ.

* * *

પૂ. ઉપાધ્યાયજીના પ્રગટ તથા અપ્રગટ પુસ્તકોનો ખૂબ ફેલાવો થાય અને તેઓશ્રીનું જે ગુરુમંદિર બંધાવ્યું છે તેમાં તેઓશ્રીનાં દર્શન કરી પ્રેરણા મેળવાય, જૈન-જૈનેતર તે લાભ મેળવે એજ ભાવના.

પૂ. ઉપાધ્યાયજીનું ગુરુમંદિર તથા તેઓશ્રીની આ સમયમાં ઓળખ કરાવવામાં અને જૈન તેમજ જૈનેતરોને પૂ. ઉપાધ્યાયજીનો ખ્યાલ ઓછો હતો તેને ખ્યાલ કરવામાં ખરો પરિશ્રમ ઉપાડ્યો હોય તો તેનો યશ શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ સાહેબને ફાળે જાય છે.

આ પ્રસંગ નિર્વિઘ્ને પાર પાડે અને સમાજની કાયમની સેવા થઈ શકે તે માટે અપ્રગટ, પ્રગટ પુસ્તકો બહાર પડે તથા પૂ૦ ઉપાધ્યાયજીનું જીવનચરિત્ર (બધી હકીકતો મેળવી) બધી ભાષામાં પ્રગટ થાય એજ ભાવના. —શાન્તિલાલ મગનલાલ શાહ, મુંબઈ.

* * *

મુંબઈમાં મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી ગુણાનુવાદ મહોત્સવ સમયે પૂ૦ મુનિરાજ શ્રીયશોવિજયજીએ કલ્પેલી ગુરુમંદિરની યોજના સુંદર રીતે પાર પડશે તેવી ગુણાનુવાદ સમિતિના મંત્રી તરીકે મને પણ કલ્પના નહી હતી. જાણીતા જૈન આગેવાન શ્રીજીવતલાલ પ્રતાપશીએ પણ આવા કાર્યો પાર પાડવામાં નડતી મુશ્કેલીઓ વર્ણવી હતી તેની સ્મૃતિ થાય છે, ત્યારે પૂ૦ મુનિશ્રી યશોવિજયજીની સાચી ધગશ અને ડભોઈ તથા અન્ય સ્થળોના ઉત્સાહિત સજ્જનોના સહકારે જે ઈતિહાસ જાગૃત થયો તે બદલ ધન્યવાદ સત્રની સફળતા ઇચ્છું છું. —દીપચંદ મગનલાલ શાહ, મુંબઈ.

* * *

ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજય મહારાજની મૂર્તિનો પ્રતિષ્ઠા મહોત્સવ કરવા માટે લાંબા વખતથી આપશ્રીની બુદ્ધિપૂર્વકની યોજના, જૈન જૈનેતર સર્વની વચ્ચેનું સમ્મિલન, સાહિત્યની દૃષ્ટિએ વિદ્વાન સાક્ષર વર્ગમાં કરાતું સન્માન, તેમ જ ધર્મને પ્રાધાન્ય દૃષ્ટિએ રાખી આવો અપૂર્વ અવસર ડભોઈનો શ્રીવિજયદેવસૂર સંઘ ઉજવી રહ્યો છે તે ગૌરવનો વિષય છે. તે માટે ત્યાંના કાર્યકર્તાઓ ખરેખર ધન્યવાદને પાત્ર છે.

વધુમાં આ સમયે જેવો મહોત્સવ ઉજવાય છે તેવા જ ઉત્સાહથી જગતમાં ઉપાધ્યાયજી મહારાજે આપણને આપેલા વારસારૂપી સાહિત્યને વિકસાવીએ એજ ભાવના અને પરમાત્મા પ્રત્યે પ્રાર્થના.

—રાયચંદ મગનલાલ શાહ, મુંબઈ.

* * *

ચાલુ જમાના તથા વાતાવરણમાં જનસમુદાયમાં આવા મહાન પુરુષોના જીવનની રૂપરેખા ધર્મભાવના અપૂર્વ વિદ્વતા તથા તેમની કૃતિઓનાં દિગ્દર્શન કરાવવા આવા સત્રોની ઉજવણી થાય તે ઘણું જ જરૂરનું છે. જૈન ધર્મના મૂળ પ્રિન્સિપલ્સ અહિંસા અને સત્યને સમજાવવા તથા જૈનધર્મ માટે ઈતર સમુદાયમાં ફેલાયેલી ખોટી માન્યતાઓ દૂર કરવા અને જનતાના નિકટમાં આવવા માટે અન્ય બાબતોની સાથે આવી ઉજવણીઓની ખાસ જરૂર છે. જ્ઞાન તથા ધર્મ બન્નેનો આથી સુંદર પ્રચાર થઈ શકે છે. સત્રની ઉજવણીની સફળતા ઈચ્છું છું.

—કિશનલાલ ચુનિલાલ,
મુનીમ–શ્રી ડાર્વા જૈન દેરાસરની પેઢી.

* * *

આવા પ્રસંગો ઉજવવાથી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજશ્રીના જૈનસંઘ પરના ઉપકાર ભૂલેલી જૈન જનતા જરૂર જાણી શકશે કે શાસનના કોહિનૂર સમા શ્રીમાન મહોપાધ્યાયજી સત્તરમી સદીમાં એક વિરલ મહાન પુરુષ થઈ ગયા છે.

—માસ્તર ઉમેદલાલ જે શાહ, શિનોરવાળા.
શ્રી. ગોધરા વીશાનીમા જૈન પંચ કાર્યકર.

* * *

'My presence would have sewed the purpose' (મારી હાજરી એજ સાચો જવાબ હોય). પરંતુ હાલના સંયોગોમાં સત્ર માટે હાજરી આપી શકતો નથી તેથી ઘણોજ દિલગીર છું. 'Hero worship' ગુણાનુરાગ એ મુક્તિપુરી માટે અનન્ય અને સહેલું સાધન છે. તેને આવા પ્રસંગો પોતાની લાગણી દ્વારા વ્યક્ત કરવાની સુવર્ણતક આપે છે.

પૂ. ઉપાધ્યાયજી જૈનોના જ નહિ, ગુજરાતના જ નહિ, કિન્તુ અખિલ માનવજાતના છે. ગૂર્જરી ગિરાના ભંડારમાં તેઓએ સુચારુ વધારો અવશ્ય કર્યો છે. એટલું વાઙ્મય જ નહિ પરંતુ ગૂર્જરી મારફતે જીવન વિકાસના મહામૂલા મંત્રો આપ્યા છે. પૂર્વ પુરુષોનાં વચનો લોકભાષામાં આલેખી ઘરઆંગણે અમૃત આણી આપ્યું છે. ગુજરાતી જ જાણનારાઓને તે 'Cultural development and spiritual uplift' સાંસ્કૃતિક વિકાસ અને આધ્યાત્મિક ઉન્નતિ માટે અનન્ય સાધન છે. પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજનું જીવનકવન અને સાહિત્ય વગેરે જીવન્ત પ્રેરણા આપે છે. તેમના જેટલું 'Tolerance' ઔદાર્ય, સર્વ દર્શનનો ઊંડો અભ્યાસ, તેમજ સમન્વય કોઈક વિરલ વિભૂતિને જ સાંપડે છે 'સિદ્ધિ'ની કક્ષાએ પહોંચેલા ઘણા મહાત્માઓ જડશે પરંતુ યોગ 'વિનિયોગ' ઘણાજ થોડાને ભાગ્યે હોય છે. ૧૭મા સદીનું ચિત્ર આજે અન્ય ગ્રન્થકારોના ગ્રન્થોમાંથી પણ સાંપડે છે. તેવા Orthodov કઠિન કાળમાં 'કાશી' જઈ જૈનેતર વિદ્વાનો પાસે તેમનો પ્રેમ સંપાદન કરી ભણવું, એ કેટલું કપરું કામ? પૂ. ઉ. મ. ના સાહિત્યમાં વેદ–

ગીતા વગેરેનાં Traces પ્રમાણો ઘણી જગ્યાએ જોવા મળે છે. તે તેમના અન્ય. દર્શનના ઊંડા અભ્યાસનું દ્યોતક છે. તે સદીના તેઓ 'Martin Luther' હતા, ગુજરાતના જ્ઞાનેશ્વર હતા જેઓ મહારાષ્ટ્રીય ભાષા સંપન્ન કરવા માટે ગર્વ ધરાવતા અને 'મ્હારી મરાઠીમાં આખોએ વેદાંત ઉતારીશ' એવી ભાષા વાપરતા એ હતું સ્વભાષા માટે અભિમાન! એ હતી જનતાના અભ્યુદયની કામના! તેવી રીતે પૂ. ઉ. જીએ દ્રવ્યાનુયોગ જેવો ગહન વિષય 'દ્રવ્ય–ગુણ–પર્યાયરાસ' વગેરે ગૂર્જરીમાં ઉતારી ગુર્જરગિરાને શિખરે ચઢાવી અને બીજાની હરોળમાં 'મ્હારી ગુર્જરી' જેવી તેવી નથી એ બતાવી આપ્યું. તેઓ ગુર્જરીના સાચા ભક્ત હતા. ભક્તિ–જ્ઞાન વગેરે વિષયો સહેલીમાં સહેલી ભાષામાં ઉતારી ગુજરાત ઉપર મહાન ઉપકાર કર્યો છે. આજે બધા વિદ્વાનો ડભોઈના આંગણે ભેગા થઈ જાત–સંપ્રદાય અને ધર્મના ભેદ ભૂલી મહાન વિભૂતિના ગુણગાન કરશો અને એ વિભૂતિની શક્તિથી સંગઠિત થવાનું સૌભાગ્ય પ્રાપ્ત કરશો. તેમણે વારસામાં આપેલ સાહિત્યને ફરી સુંદર રીતે સંપાદિત–સંશોધિત કરી પૂ ઉપા.ના 'Compleie works' સંપૂર્ણ ગ્રન્થો છેલ્લી ઢબે બહાર પડે, તો આપણે કાંઈક અંશે તેમના ઋણમાંથી મુક્ત થઈએ અને મહાગુજરાતના સાંસ્કૃતિક–ધાર્મિક વિકાસમાં કાંઈક કર્યું, એમ ગણાય, બૃહદ્ ગુજરાત પોતે 'ભારતના ચરણે' ગુજરાતનો આ રસથાળ પીરસી, પોતાની ઉદારતા અને સહૃદયતાનો પરીચય કરાવશે. જે જે વ્યક્તિઓએ આ કલ્પના સત્ય સૃષ્ટિમાં લાવી આપી સત્ર ઉજવવામાં નિમિત્ત થયા છે, તેઓ સર્વે ધન્યવાદને પાત્ર છે. જૈનો માટે તો તે એક આનંદનો વિષય છે. તેઓએ તન–મન–ધનથી સેવા આપી પોતાના જૈનત્વનો પરિચય કરાવવો જરૂરી છે. "Nothing goes unamarded' કોઈપણ વસ્તુ નિષ્ફળ જતી નથી' એ આધ્યાત્મિક નિયમ છે, પછી ભલે 'Sooner or later' વહેલા યા મોડા હોય. પૂ. ઉપા. મહારાજના જેવાં જન–ઉપકારી કાર્યો વધુને વધુ કરવાનું બળ સત્ર ઉજવનાર સૌ કોઈને પ્રાપ્ત થાઓ અને આ જીવનમાં એ દશ્ય જોવા મળો, એ પ્રબળ ભાવના છે. —ચીમનલાલ લક્ષ્મીચંદ શાહ પુના સીટી

* * *

શ્રીયશોવિજય જ્ઞાનસત્ર ઉજવવાની જે યોજના કરી છે તે માટે હું આપ સાહેબોને હાર્દિક ધન્યવાદ આપું છું. શ્રીયશોવિજયજી જેવા અદ્ભુત જ્ઞાનોપાસક માટે આપણે જેટલું કરીએ તેટલું ઓછું જ કહેવાય. આપણા ઉપર એ વિભૂતિએ જે અનંત ઉપકારો કરી મૂકયા છે તેનો બદલો તો આપણે વાળવો અશક્ય જ છે. તોપણ ઊગતી પેઢીને એ મહાસંતનાં દર્શન આપણે કરાવીએ અને તેમની યથાશક્તિ સેવા અને એમના સારસ્વતનું અધ્યયન કરવાની પ્રેરણા આપીએ એ આપણી ફરજ છે. આપની આ યોજનાને પૂર્ણ યશ મળે એ જ અભ્યર્થના. —બાલચંદ હીરાચંદ, માલેગામ (મહારાષ્ટ્ર)

* * *

સાહિત્યાકાશમાં શ્રીમદ્ સ્વ૦ યશોવિજયજી મહારાજનું પોતાનું એક વિશિષ્ટ સ્થાન છે. તે સ્થાન ક્યાં છે? આપણે તેમના અનુયાયી — તેનાથી હજી સુધી અપરિચિત છીએ — એ કેટલું વિચારણીય છે તે આપણે સમજીએ. આ મહોત્સવની પૂર્ણ સફળતા ઇચ્છું છું અને શ્રી દર્ભાવતી શ્રીસંઘની તેમના આ મહોત્સવ આયોજન માટે સહાનુભૂતિ બતાવું છું. —દોલતસિંહજી લોઢા (અરવિંદ)
ધામણિયા, રાજસ્થાન.

* * *

શ્રીયશોવિજયજી મહારાજના વિશાળ સાહિત્ય અને તત્ત્વજ્ઞાનના સંબંધમાં વિવેચન કરવા, તેનો પ્રચાર કરવા અને આજની પરિસ્થિતિમાં તેનાથી જેટલો વધુ લાભ ઊઠાવી શકાય એ દૃષ્ટિએ આ આયોજન મહત્ત્વપૂર્ણ છે.

આ સમારોહની સફળતા ઇચ્છું છું. અને આશા કરું છું કે આ આયોજનના પરિણામ સ્વરૂપ ગુજરાત અને રાજસ્થાન બંને પ્રાંતો તથા સાંસ્કૃતિક દૃષ્ટિથી એક સૂત્રમાં આબદ્ધ પ્રદેશોને પ્રેરણા અને સ્ફૂર્તિ પ્રાપ્ત થશે.

—જવાહિરલાલ જૈન,
'લોકવાણી પત્ર કાર્યાલય', જયપુર.

* * *

શ્રીયશોવિજયજી મહારાજની સ્વર્ગભૂમિમાં એ યોગનિષ્ઠ મહાપુરુષના સ્મારક તાજાં કરવા અને ફેલાવવા આપે જે સત્પુરુષાર્થ આદર્યો છે એની સફળતા ઇચ્છીએ છીએ.

—ધીરજલાલ કે. તુરખીઆ,
જૈન ગુરુકુળ શિક્ષણ સંઘ, બ્યાવર.

* * *

આપનું નિમંત્રણ મળ્યું, એ વાંચીને અત્યંત આનંદ થયો છે, આપ એક એવા દિગ્ગજ વિદ્વાન તથા વાસ્તવિક અર્થમાં ઉપાધ્યાય–સમ્રાટની પુણ્યસ્મૃતિમાં મહોત્સવનું આયોજન કરી રહ્યા છો જેમની પ્રતિભાએ જૈન સાહિત્યની, એવા મુશ્કેલ સમયમાં, અનુપમ સેવા કરી છે, જ્યારે અનેક બાધાઓ ઉપસ્થિત થઈ ચૂકી હતી. વિવિધ વિષયકુશળ તેમની લેખિનીથી સંભવતઃ સાહિત્યની કોઈ મહત્ત્વપૂર્ણ શાખા અસ્પૃષ્ટ નથી રહી અને નવ્ય ન્યાય જેવા ગંભીર વિષય પર પણ પૂર્ણ અધિકાર મેળવીને તેમણે પોતાની અપ્રતિમ વિદ્વત્તાનો પરિચય આપ્યો છે.

—પ્રિન્સિપાલ પૃથ્વીરાજ જૈન,
આત્માનંદ જૈન કૉલેજ પંજાબ.

* * *

—તે ઉપરાંત નીચેનાં સ્થળોથી પણ સભાની સફળતા ઇચ્છતા પત્રો આવ્યા હતા.

* મુનિશ્રી સુબોધવિજયજી * શા. ફૂલચંદ ઝવેરભાઈ મુંબઈ * પાટડી શ્રાવક મહાજન સંઘ * ભોરોલ જૈન સંઘ (ઓસવાલ) * શ્રી ચીમનલાલ કેશવલાલ કડીઆ અમદાવાદ * શા. મગનલાલ હરજીવનદાસ ભાવનગરી ફ્રુટીઆફેર અમદાવાદ * શા. મોહનચંદ મંગળદાસ–અમદાવાદ * શ્રી વીરચંદ નાગજીભાઈ મુંબઈ * ડૉ. યશવંતરાય દામુભાઈ વૈદ્ય * શ્રી રાયચંદ ગુલાબચંદ ભણ્ડારી ઠા. શાંતિલાલ * પં. શ્રી જટાશંકરજી વ્યાકરણ–ન્યાય–સાહિત્યાચાર્ય તથા પં. શ્રી દીનાનાથજી વ્યા. ન્યાયાચાર્ય અમદાવાદ * માસ્તર શિવલાલ નેમચંદ પાટણ.

卐

તાર દ્વારા મળેલા સંદેશા અને અભિનંદનો

નોંધઃ—તાર દ્વારા આવેલા સંદેશાઓમાંથી જે તારો પૂ૦ ઉપાધ્યાયજી મહારાજ તથા ઉત્સવ આયોજનાદિ અંગે કંઈક વિશિષ્ટ સૂચનો કરતા હતા તેને અહીં અનુવાદિત કરી મૂકયા છે. બાકીના સફળતા ઈચ્છતા અને અભિનંદન આપતા તારોનો ઉલ્લેખ, કરનારના નામ—ઠામ દ્વારા કર્યો છે.

—સંપા૦

સારસ્વતસત્રના આ પ્રસંગે અમારા હાર્દિક અભિનંદન. જૈન સાહિત્ય અને શાસ્ત્રોમાં મહારાજશ્રીની સેવાઓનો અમૂલ્ય હિસ્સો આપણા સંસ્કૃતિ વારસામાં એક ઉજજવળ પ્રકરણનો ઉમેરો કરે છે. જ્ઞાનની જ્યોત પ્રગટે અને આવા મહાન તર્કશાસ્ત્રીના પ્રયાસોને કારણે તે પ્રકાશિત રહે, આપણામાં ઉત્સાહ અને પ્રેરણા આપે અને આ મહાન સેવક પ્રત્યેની આપણી ફરજો અદા કરવામાં સહાયરૂપ નીવડે એમ ઇચ્છીએ છીએ. મહોત્સવ નિમિત્તે એકત્રિત થયેલા મહાન વિદ્વાનોની ચર્ચા–વિચારણા, આ દિશામાં શરૂઆત કરે એવી આશા રાખીએ છીએ.

—શ્રીજૈનશ્વેતામ્બર કૉન્ફરન્સ, મુંબઈ.

*　　　*　　　*

યશોવિજયજી સારસ્વતસત્ર મહોત્સવ ઉજવવા માટે હું હૃદયાનંદપૂર્વક અભિનંદન પાઠવું છું. ગણિવર મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજીના નીડર અને સચોટ જૈન તત્ત્વજ્ઞાનના નિર્દેશો (ખરેખર) દુનિયાભરના સ્કોલરોમાં સ્થાન પ્રાપ્ત કરે છે. તેઓ શ્રી સ્કોલરોમાં પણ સ્કોલરરૂપ (સર્વશ્રેષ્ઠ) હતા અને તેઓશ્રીની ભવ્યસિદ્ધિ જગતના સર્વ ધર્મોનું સાર્વભૌમ સત્ય સમજવામાં હતી. તેમની કૃતિઓ આપણને જૈન તત્ત્વજ્ઞાન અને સાહિત્યમાં મુખ્ય તર્કશાસ્ત્રની ધરીનો સરળ અને સચોટ ખ્યાલ આપે છે. આધુનિક જમાનામાં, આજની રીતે, અદ્યતન ભાષામાં પૌરાણિક જૈન તત્ત્વજ્ઞાનને સમજાવવા માટે આજે તેમની ખાસ જરૂર છે. આપણા બહુ જ વિશાળ અને રહસ્યભર્યા સાહિત્યને જીવતું જાગતું બનાવવા માટે કોઈ એક બંધારણીય યોજના સિદ્ધ કરવામાં ઉજવાએલો સારસ્વત મહોત્સવ સફળ થાવ. પૂ૦ મહાત્મા પુરુષની પુણ્યભરી યાદમાં યોજવામાં અને ઉજવવામાં આવેલો આ મહોત્સવ ખરેખરે બધી જ રીતે ઉચિત છે.

—ચંદુલાલ વર્ધમાન શાહ, મુંબઈ.

*　　　*　　　*

ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજશ્રીનો સ્મારક મહોત્સવ સાંભળી અત્યંત આનંદ થયો. આમંત્રણ માટે આભારી છીએ. પૂજ્ય મહારાજશ્રીના કાર્યોનો દેશપરદેશમાં પ્રચાર થાય અને જનતાનું કલ્યાણ થાય તેમ ઇચ્છીએ છીએ. આચાર્ય મહારાજશ્રી અને અન્ય મુનિમહારાજશ્રીને વંદન.

—ગિરધરલાલ છોટાલાલ, અમૃતલાલ જેસિંગભાઈ

—મોહનલાલ છોટાલાલ, શાન્તિકુમાર જગાભાઈ, અમદાવાદ.

*　　　*　　　*

એમણે ક્યાં ક્યાં અને ક્યારે ક્યારે વિહાર કરતાં સ્થિરતા કરેલી તથા ચોમાસાં કરેલાં, ત્યાં કાળ કેવી રીતે નિર્ગમન કરેલો, તેનો પત્તો મળે છે. કાશીના અભ્યાસ પછીની ચાર કૃતિઓ સં. ૧૭૦૯ની કાળ મર્યાદામાં આવી શકે. તેમાં 'દ્રવ્યગુણપર્યાયરાસ-સ્વોપજ્ઞ સસ્તબક' ગુણક્રમે પ્રથમ છે જ પણ રચનાનું સ્થાન અન્ય લાગતું નથી. એમાં કાશીના અભ્યાસના પરિપાકરૂપે મળેલી સફળતાને જણાવી છે. રચનામાં પણ બહુશ્રુતતા, પ્રચુર પાંડિત્ય, તત્ત્વચિંતન અને તેના સ્વાનુભવનું તાજગીભર્યું સ્ફુરણ દેખાય છે. એમાં એમનો નવો ઉત્સાહ તરી આવે છે. પદ્ય તો ઠીક છે પણ ગદ્ય-જે અત્યારના કાળ જેટલું ખેડાયેલું નહોતું એવા વખતે-એમણે ગૂર્જર ગિરાને પસંદ કરી દર્શનિક પરિભાષાને તેમાં ઉતારવાનો સફળ મનોરથ સિદ્ધ કર્યો, એ આપણા અનુમાનને પુષ્ટ કરે છે.

'એકસો પચીસ ગાથાના સ્તવન'ને અમે છેલ્લું યા સં. ૧૭૧૮ પહેલાંનું માનેલું પણ વિચાર કરતાં તેને બીજું માનવાનાં કારણો પણ છે. સાધુઓના આચારો અને વિચારો વિકૃતપણાને પામેલા અને તેનાથી જે જે સ્થિતિ ઉપસ્થિત થઈ અને દુઃખમાં પરિણમી-એ દુઃખ-પરિણામને લોકોની નજર સમક્ષ લાવવાનો-અને તેના નિવારણનો-અને એ રીતે સ્વચ્છ કરેલા વાતાવરણમાં પવિત્રતા વસાવવાનો એ સ્તવનમાં પ્રયત્ન છે. આ જોડીની અસરથી પોતાનાં દૂષણોને ઢાંકવાના જે દાંભિક બચાવો કર્યા તેનો શ્રીયશોવિજયએ ૩૫૦ ગાથામાં સબળ અને સવિસ્તર ઉત્તર આપી નિરર્થક ઠરાવ્યા છે.

" નવિ નિંદામારગ કહેતાં, સમ પરિણામે ઘટ ઘટના !
કોઈ કહે નવી શી જોડી, શ્રુતમાં નહીં કાંઈ ખોડી.

" જન મેલનની નહીં ઈહા, ઈહાં દૂષણ એક કહાય, જે મલને પીડા થાય...
ખલવચણ ગણે કુણ સુરા, જે કાઢે પયમાંથી પુરા."

આવા પોતાના ઉદ્‌ગારો-ઢાળમાંથી રમતાં કાઢ્યા છે એ એમની રચનાઓ માટે-જે કાંઈ બોલાતું તેની અસરમાંથી ઉદ્‌ભવેલા છે. એટલે આ સ્તવન પહેલાં કેટલીક જોડી જોડાઈ હશે. ૩૫૦ ગાથાના સ્તવન પછી 'સમતા શતક' અને 'સમાધિ શતક'ને મૂકી શકાય.

આ પછી આપણને સં. ૧૭૨૧ સુધીમાં એક-સં. ૧૭૧૮ માં વિજયપ્રભસૂરિએ વાચકપદ આપવા સિવાયના-બીજા બનાવો તથા સં. ૧૭૩૯ થી સં. ૧૭૪૩ કે જે વર્ષમાં તેમનું ડભોઈમાં અવસાન થયું એ ચાર વર્ષનો ગાળો કેવી રીતે નિર્ગમન કર્યો, એ નક્કી કરવા માટેનું સાધન બહાર આવે ત્યારે ખરું.

એમના આંતર જીવનનું ઊંડાણ અમે બીજા લેખમાં જણાવ્યું છે. એની પૂર્તિમાં કહેવા જેવું એ છે કે, આ લેખમાં એમની કૃતિઓને કાલક્રમમાં ગોઠવી છે. તેનો એક હેતુ એ છે કે, એમના આંતર રહસ્યના પ્રકારને જોવા જાણવાનું આથી બની શકે. પાંડિત્ય બતાવવા તેઓ સંસ્કૃતમાં રચના કરતા હોય એવું નથી. તેમણે લોકભાષા પ્રાકૃત, ગૂજરાતીમાં લખવાની અગત્ય કેટલી છે; તે પણ એમણે પ્રમાણસર-'દ્રવ્યગુણપર્યાય રાસ'ના ટબામાં સમજાવ્યું છે તેમ દ્રવ્યાનુયોગ વિષય એ શું છે? એના અનુસેવનથી ફળપ્રાપ્તિ કઈ કઈ થાય એ વિષે તેઓ ઉલ્લેખે છે.

ગેરહાજરી હોવા છતાં માનસિક હાજરી આપી રહ્યો છું. અને પ્રસંગની સફળતા ઇચ્છું છું.

—ચીમનલાલ કઠીઆ, અમદાવાદ.

*　　*　　*

ઉપાધ્યાયજી મેમોરીઅલ સાધુ સંઘને તેમના પગલે ચાલવાની પ્રેરણારૂપ બને!

—ડૉ૦ વલ્લભદાસ, મોરબી.

*　　*　　*

જ્ઞાનોત્સવ—સત્ર મહોત્સવને સંપૂર્ણ સફળતા ઇચ્છીએ છીએ. આ ઉજવણી પર્વ ગોઠવવા માટે સમિતિને ધન્યવાદ ઘટે છે.

—રતિલાલ જીવણલાલ, અબજીભાઈ. વઢવાણ.

*　　*　　*

મહોત્સવની સફળતા અને શ્રીયશોવિજયજી મહારાજશ્રી જૈન યુવાનોને પ્રેરણારૂપ બને એમ ઇચ્છું છું.

—મોતિલાલ વીરચંદ, માલેગામ.

*　　*　　*

તાર કરનાર અન્ય વ્યક્તિઓની યાદી—

* આ૦ શ્રી વલ્લભસૂરિજી તથા આ૦ શ્રી સમુદ્રસૂરિજી, મુંબઇ. * વિજયદેવસૂરિ સંઘ, ગોડીજી દહેરાસર, મુંબઈ. * મણિલાલ નાણાવટી, મુંબઈ. * અમૃતલાલ કાળીદાસ શાહ તથા ધીરજલાલ ટોકરશી શાહ, મુંબઈ. * રમણલાલ દલસુખભાઈ, મુંબઈ. * સકરચંદ મુળજીભાઈ મોતિલાલ, મુંબઈ. * મૂળચંદ વાડીલાલ દોલતરામ, મુંબઈ. * હરિચંદ માણેકચંદ, મુંબઈ. * ભાયચંદ નગીનદાસ, મુંબઈ. * રતનલાલ ચુનીલાલ દાલીઆ, મુંબઈ. * શાન્તિલાલ અને ગોકળદાસ અને દીપચંદ શાહ, મુંબઈ. * પાદરાકર. * જવાહર ગુલાબચંદ અને લીલીબહેન, મુંબઈ. * લક્ષ્મીચંદ સરૈયા, મુંબઈ. * કાન્તિલાલ કુસુમગર, મુંબઈ. * જમનાદાસ ઓધવજી તથા નેમિદાસ અભેચંદ તથા મુળજીભાઈ અભેચંદ, મુંબઈ. * અંબાલાલ નાગરદાસ પરીખ, મુંબઈ. * જૈન સંઘ, કિલ્લાપારડી. * એ. એમ. ઉપાધ્યાય, કોલ્હાપુર. * દલીચંદ વીરચંદ શ્રોફ, સુરત. * દેસાઈ પોળ જૈન પેઢી, સુરત. * છાપરીયા શેરી જૈન સંઘ, સુરત. * ભગુભાઈ સુતરિયા, અમદાવાદ. * ડાહ્યાભાઈ ભાયચંદ, અમદાવાદ. * જૈન સેવા સમાજ મંડળ, મહુધા. * પં. અમૃતલાલ, પાટણ. * સિદ્ધચક્ર આરાધક સમાજ, મુંબઈ. * જેસિંગભાઈ ઉગરચંદ, અમદાવાદ. * ચમનલાલ સકરચંદ ચોકસી, અમદાવાદ. * શાન્તિલાલ શાહ, બારસી. * ગટુલાલ, ધાર. * ભરૂચ, વેજલપુર જૈન સંઘ, ભરૂચ. * ડો. રતિલાલ ભટ્ટ, પાલીતાણા. * શ્રી જૈન સાહિત્યમંદિર, પાલીતાણા. * પ્રપા૦ જમનાદાસ વકીલ, જામનગર. * અમૃતલાલ જાદવજી, રાજકોટ. વગેરે

અને તે માટે પુષ્કળ ખર્ચ પણ કરવો પડે; છતાં કાંઈ પણ ઉજવણીનું તત્ત્વ તો એ રીતે જ સધાશે. અન્યથા સમારંભ એ આરંભ બનશે, ચિરસ્થાયી સાહિત્યનું કામ એનાથી નહીં સરે.

—પં. શ્રીસુખલાલજી, અમદાવાદ.

* * *

શ્રીયશોવિજયજી સારસ્વતસત્રની યોજના પ્રશંસનીય છે. તેમાંએ વિદ્વત્પરિષદ્‌નું સંમેલન ખરેખર રચનાત્મક કાર્ય માટે અત્યંત આવશ્યક છે. આશા છે જૈનસાહિત્યના વિકાસ વર્ધન માટે કોઈ રચનાત્મક યોજના ઘડી કાઢવામાં આવે તો સમાજ માટે ભારે ઉપયોગી થઈ પડશે.

—શ્રમણ

* * *

શાસનપ્રભાવક પુરુષનો, સમાજ ઉપર કરેલ ઉપકારના અંગે આપ જે પ્રવૃત્તિ કરી રહ્યા છો તે અતિ પ્રશંસનીય છે. અને નવી પ્રજાને તેઓની પીછાણ ચાલુ રહે તે અતિ જરૂરી છે. આજ સુધીમાં તેઓશ્રીનું સમાજ કંઈ કરી શકેલ નથી તે દુઃખની વાત છે. આપે આદરેલ કાર્યને શાસનદેવ દરેક રીતે સહાય કરી આપની ભાવના સફળ કરે.

સમાજ તેઓના માટે જેટલું કરે તેટલું ઓછું છે. આવા અતિમહત્વના પ્રસંગ માટે વધુ સમય અગાઉથી લીધો હોત તો ઓર વધુ સારી રીતે ઉજવાત! છતાં આપે ઉપકારીના સ્મરણાર્થે ઘણું જ કિંમતી કાર્ય કરેલ છે.

—શેઠ જીવતલાલ પ્રતાપસી મુંબઇ.

* * *

પૂ. ઉપાધ્યાયજીશ્રીના કાર્યને અને તેઓશ્રીએ જૈનધર્મ ઉપર કરેલા ઉપકારોને ઘણા થોડા જાણતા હતા. આપે આ કાર્ય ઉપાડયું અને તેઓશ્રીને જૈન-જૈનેતર ઓળખતા થયા અને તેમના કરેલા કાર્યને અને અપ્રગટ સાહિત્યને બહાર લાવવા પ્રયત્નો કરો છો તે યથાર્થ જ છે. સત્ર ખૂબ જ પ્રખ્યાતી પામે અને પ્રેરણારૂપ થાય તે જ ભાવના! ઉપાધ્યાયજીના ગુણગાન ગાવા અને ગવરાવવાના કાર્યમાં તેમના નામેરીનો ફાળો છે એ કુદરતનો કંઈક સંકેત છે.

—શ્રીશાંતિલાલ મગનલાલ શાહ, મુંબઈ,

* * *

પૂજ્ય આચાર્યશ્રીને પત્ર લખતાં—

કુનેહ પૂર્વક પોતે ધારેલા કાર્યને પાર પાડવાની અનુકરણીય ખંત, કયા માણસને કયું કામ સોંપવું તેનો યોગ્ય નિર્ણય, ધનિકો પાસેથી ધન વ્યય કરવાની, લેખકોની કલમનો ઉપયોગ કરાવવાની, કાર્યકરોને પ્રોત્સાહિત કરી પોતાને અનુકૂળ કામ હોંશથી કરાવવાની, સાહિત્ય અને કલા રસિકોને સમજવાની જે શક્તિ આપનો સમુદાય ધરાવે છે તે ન ભૂલાય તેવી છે.

—સેવાભાવી કાર્યકર,
દીપચંદ મગનલાલ શાહ, મુંબઈ.

* * *

શ્રીયશોવિજયસારસ્વતસત્રનાં સ્મરણો

લેખક—ડૉ. શ્રીયુત ભોગીલાલ જ. સાંડેસરા. વડોદરા.

(૧)

અઢારમા શતકમાં થઈ ગયેલા મહાન નૈયાયિક, અદ્‌ભુત વિદ્વાન અને અનુભવી સંત ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજના મૂલ્યવાન અને વિપુલ સાહિત્યસર્જનની સ્મૃતિરૂપ સારસ્વતસત્ર એમની નિર્વાણભૂમિ ડભોઈમાં સને ૧૯૫૩ની તા. ૭–૮ માર્ચના દિવસોમાં યોજાયું હતું. આચાર્યશ્રી વિજયપ્રતાપસૂરિજી તથા આચાર્યશ્રી વિજયધર્મસૂરિજીનાં માર્ગદર્શન અને વિદ્યાવ્યાસંગ મુનિરાજ શ્રીયશોવિજયજીની પ્રેરણા અને પુરુષાર્થ આ સારસ્વતસત્રના મૂળમાં હતાં. ડભોઈમાં આ સત્ર ઉજવવાનું ઠર્યું ત્યારથી એક અથવા બીજી રીતે એની આ યોજના સાથે મારો સંબંધ રહ્યો હતો એને એક સદ્‌ભાગ્ય ગણું છું. વડોદરામાં કોઠીપોળના ઉપાશ્રયે મુનિશ્રી યશોવિજયજી મહારાજના નિવાસસ્થાને તેઓશ્રીની હાજરીમાં આ કાર્ય માટેની સમિતિઓમાં અનેક વિદ્વાનો અને કાર્યકરો સાથે આ સત્ર અંગેની વિવિધ યોજનાઓનો પરામર્શ થયો હતો અને એની અનેક ઝીણીમોટી વિગતો નિશ્ચિત થઈ હતી, તથા સત્રને લગતાં પ્રસ્તુત વિગતભરપૂર પરિપત્રો દ્વારા ગુજરાતમાં તેમજ ગુજરાત બહાર આ વિષયમાં એકંદરે જૈન સાહિત્યમાં રસ લેતા વિદ્વદ્‌વર્ગમાં આ સંમેલન અંગેની યોગ્ય ભૂમિકા તૈયાર થઈ હતી.

સત્રના દિવસોમાં સંખ્યાબંધ વિદ્વાન સાધુ સાધ્વીઓની ડભોઈમાં ઉપસ્થિતિ હતી, એટલું જ નહિ અનેક આગેવાન જૈન ગૃહસ્થો તથા સુપ્રસિદ્ધ વિદ્વાનો આ સત્રમાં હાજરી આપવા માટે જ ડભોઈ પધાર્યા હતા.

એમને વિષેની સાહિત્ય સામગ્રીના પ્રદર્શનનું ઉદ્‌ઘાટન ધ્રાંગધ્રા નિવાસી શેઠ પરસોતમદાસ સુરચંદને હસ્તે થયું હતું.

સત્રનો પ્રારંભ તા. ૭ મીએ બપોરે દોઢ વાગે થયો હતો એ માટે વિશાળ અને સુશોભિત મંડપ બાંધવામાં આવ્યો હતો, ઉપાધ્યાયજીના પિતાનું નામ 'નારાયણ' હોવાથી આ મંડપને 'નારાયણ મંડપ' એવું નામ આપવામાં આવ્યું હતું. એમની માતાનું નામ 'સૌભાગદે' હોવાથી એ નામનો પણ દરવાજો ઊભો કરવામાં આવ્યો હતો. એ મંડપમાં ઉપાધ્યાયજી કૃત સંસ્કૃત, પ્રાકૃત અને ગુજરાતી બૌદ્ધિક સુભાષિતો અને ઉપદેશ વાક્યો ટાંકવામાં આવ્યાં હતાં.

*　　　*　　　*

સત્રનાં સ્વાગત પ્રમુખ અને ડભોઈના જૈન આગેવાન શ્રી. બાલચંદ જેઠાલાલ શાહનું સ્વાગત પ્રવચન થયા પછી મુંબઈની સ્મોલ કૉઝ કોર્ટના જજ શ્રી. પ્રસન્નમુખ સુરચંદ બદામીએ સત્રનું ઉદ્‌ઘાટન કરતાં ઉપાધ્યાયજીને અલૌકિક જ્ઞાનોપાસનાવાળા એક મહાન તપસ્વી તરીકે વર્ણવી, જૈન સમાજને કેવળ બાહ્ય તપને ચીલે નહિ ચાલતાં જરા આગળ વધી સ્વાધ્યાય રૂપ તપસ્યાની ખામીને દૂર કરવા પણ ઉદ્‌બોધન કર્યું હતું.

એ પછી, સત્ર નિમિત્તે આવેલા સફલતા ઇચ્છતા સેંકડો સંદેશાઓનું વાચન તથા નામોલ્લેખ શ્રી. શાન્તિલાલ મોતિલાલ શાહે કર્યો હતો. ત્યાર બાદ સત્રસમિતિના મંત્રી શ્રી. નાગકુમાર મકાતીએ સત્રની ઉત્પત્તિ કેમ થઈ તેનો ટૂંક અહેવાલ આપ્યો હતો તથા સત્રને ચૌતરફથી મળી રહેલા આવકારનો

શ્રીયશોવિજયસારસ્વતસત્રનાં સંસ્મરણો

[લેખક—શ્રીયુત નાગકુમાર મકાતી વકીલ, વડોદરા.]

(૨)

શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્રનાં બીજ મુંબઇમાં રોપાયેલાં. ડભોઇમાં ઉપાધ્યાયજીએ વિ. સં. ૧૭૪૩માં પોતાનું અંતિમ ચાતુર્માસ કરેલું અને ત્યાં જ તેમણે પોતાનો નશ્વર દેહ છોડેલો ગામથી થોડે દૂર સીત તલાઈના કાંઠે આવેલા નાનકડા ઉદ્યાનમાં તેમના સ્તૂપ આજે પણ વિદ્યમાન છે. શ્રીઉપાધ્યાયજી ન્યાયશાસ્ત્રમાં એટલા પારંગત હતા કે તેમના સ્તૂપમાંથી તેમના સ્વર્ગવાસના દિવસે આજે પણ 'ન્યાય'નો ધ્વનિ નીકળે છે એમ કવિ કહે છે.

> સીત-તલાઈ પાખતી તિહાં થૂભ અછે સસનૂરોરે,
> તે માંહિથી ધ્વનિ ન્યાયની, પ્રગટે નિજ દિવસિં પડૂરો. (સુજસવેલીભાસ)

ન્યાયનો ધ્વનિ ખરેખર જ નીકળે છે કે તેમના સ્વર્ગવાસ દિને નૈયાયિકો તેમના સ્તૂપ પાસે ભેગા થઈ ન્યાયચર્ચા કરતા હશે એને માટે પ્રમાણભૂત માહિતી એકત્ર કરવી રહે છે. છતાં આ ઉપરથી એટલું તો ચોક્કસ થાય છે કે તેઓ અદ્વિતીય નૈયાયિક હતા. તેઓશ્રીને લગતો કોઈ પણ સમારોહ તેમના અંતિમ શ્વાસોશ્વાસથી પાવન થયેલી ભૂમિમાં ઉજવાય એ સર્વ રીતે યોગ્ય હતું. ત્યાંનો ધર્મપ્રેમી સમાજ પણ પોતાના આંગણે આ પ્રસંગ ઉજવાય તેમાટે ઉત્સુક હતો. ઉપાધ્યાયજીની અંતિમ રાખ ત્યાં પડેલી તે ઘટના ઉપરાંત પણ ડભોઈની આ મહોત્સવની ઉજવણીની, અનેક રીતે યોગ્યતા હતી. ડભોઈ પ્રાચીન ગુજરાતનું એક ઐતિહાસિક શહેર હોઈ લાટ દેશના મુખ્ય નગરોમાં તેની ગણના થતી હતી. દક્ષિણ ગુજરાતમાંથી ઉત્તર તરફ જવાનો ધોરી માર્ગ ત્યાંથી પસાર થતો હતો હોઈ, વેપાર વણજ માટેની તેની ખ્યાતિ અને આબાદી સારી હતી. ગુજરાતના જાણીતા શૂરવીર મંત્રીશ્વર તેજપાલે આ નગરનો પ્રખ્યાત કીલ્લો બંધાવેલો જે હજુ પણ તેમની કીર્તિકથા ગાતો બીસ્માર હાલતમાં ઊભો છે. કીલ્લાની કોતરણી અને સ્થાપત્ય બેનમૂન છે. તેની હીરાભાગોળનો તોતીંગ કલામય દરવાજો, અને તેની આજુબાજુની કીલ્લેબંધી કલાકાર હીરાકડીયાની રોમાંચક પ્રણય કથાની હજુ યાંદ આપે છે. જગતભરમાં પ્રણય ખાતર જાનફેસાની કરી અમરત્વ પામેલા ઘણાખરા ઉપલા થરમાંથી આવેલા છે. કવિઓ અને લોકકથાકારો પણ આવાને જ પોતાના કાવ્યોમાં સ્થાન આપે છે. પરંતુ કડીયા જેવા શ્રમજીવી વર્ગમાંથી આવેલાની પ્રણયકથાને અમર કરનાર ગુજરાતનું ડભોઈ એક અને અનોખું છે. જે આમવર્ગના એક પ્રણયોનું સ્મારક ચિરંજીવ કરવાનું માત્ર ખાટી જાય છે.

શ્રીલોઢણ પાર્શ્વનાથનું મંદિર, શ્રીવૈદ્યનાથનું મંદિર, તેનું સુંદર સરોવર જેવું વિશાળ તલાવ વગેરે ડભોઈની અતિ પ્રાચીનતાનો ખ્યાલ આપે છે. અહીં ગુજરાતના લાડીલા ભક્ત કવિ દયારામ જન્મ્યા હતા; જેમની પ્રેમલક્ષણાયુક્ત ગરબીઓ ગરવી ગુજરાતણો આજેય ઘેરઘેર ગાય છે. આ પવિત્ર ભૂમિમાંથી 'સાઠ' જેટલા નરનારીઓએ ત્યાગ, વૈરાગ્ય અને સંયમનો માર્ગ સ્વીકારેલો છે. આમ લાક્ષણિક રીતે જ ડભોઈ ઉપાધ્યાયજી અંગેના સમારોહ માટે સર્વ રીતે યોગ્ય હતું.

* * *

પણ અમારા જેવાને તો ડભોઈનું એક બીજું પણ આકર્ષણ હતું. પશ્ચિમના દેશોમાં એક એવી માન્યતા પ્રવર્તે છે કે ફીનીક્ષ નામના પક્ષીની રાખમાંથી નવા ફીનીક્ષ પક્ષીનો જન્મ થાય છે. ડભોઈમાં ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજીની રાખમાંથી અઢીસો વર્ષે એક બીજા 'યશોવિજય'નો જન્મ થયેલો છે. સાહિત્યપ્રેમી અને કલાના અનન્ય ઉપાસક છે. ઉપાધ્યાયજી માટે તેમને 'લાગ્યો અવિહડ રંગ' એમ કહીએ તો ખોટું નથી. તેમની 'યશોભક્તિ'ને નરસિંહ કે મીરાંની કૃષ્ણભક્તિ' સાથે સરખાવી શકાય. આ સુકલકડી, એકવડા બાંધાના, નાજુક શરીરવાળા સાધુ ભારે મનોબળ ધરાવે છે. આ સમારોહને ભવ્ય રીતે ઉજવવાની તેમની નમ્રતાએ સૌને મુગ્ધ કર્યા. તેમણે મન ઉપર લીધું ન હોત તો આ સમારોહ શક્ય બન્યો ન હોત. એમણે પોતાની જન્મભૂમિ ડભોઈનું ઋણ અદા કર્યું એટલું જ નહિ પણ ઉપાધ્યાયજી પ્રત્યે આખા જૈનસમાજનું જે મહાન ઋણ છે તે ફેડવા પણ કંઈક અંશે પ્રયત્ન કર્યો. સારો યે જૈન સમાજ આ માટે તેમનો ઓશિંગણ છે.

* * *

વર્તમાન શ્રીયશોવિજયજી ઉજ્જવળ પરંપરાના વારસ છે. તેમના ગુરુવર્ય આચાર્યશ્રી વિજયધર્મસૂરિજી આજે સુવિહિત જૈન સાધુઓમાં આગળ પડતું સ્થાન ધરાવે છે. તેમની વ્યાખ્યાનશૈલી અનોખી અને ચોટદાર છે. તેઓ જ્યાં જ્યાં વિચરે છે ત્યાં ત્યાં પ્રણાલિકાબદ્ધ ધર્મકાર્યોથી 'આનંદ મંગલ' પ્રવર્તાવે છે. જૈન સમાજ ઉપર તેમની ઠીક ઠીક પકડ છે. તેઓ શક્તિશાળી છે અને ધારે તો નવા જુનાનો સુમેળ સાધી ધર્મ અને સમાજની ઉત્ક્રાન્તિની દૃષ્ટિએ નવયુગને દોરવણી આપી શકે તેમ છે. તેમના ગુરુવર્ય આચાર્યશ્રી વિજયપ્રતાપસૂરિજી એક નિરાડંબરી, નિર્દંભી, આત્મલક્ષી આચાર્ય તરીકે સુવિખ્યાત છે. તેમને પગલે પગલે સંઘોમાં શાન્તિ ફેલાય છે અને ઘર્ષણ હોય તો સમી જાય છે. તેમના ગુરુવર્ય આચાર્યશ્રી વિજયમોહનસૂરિજી એક પ્રસિદ્ધ વક્તા અને પ્રતિભાશાળી સાધુ તરીકે જાણીતા હતા. તેમના અગાઉના આચાર્યોને મેં નજરે જોયા નથી પરંતુ આખી પરંપરા અતિ ઉજ્જવળ છે એમ ઇતિહાસ કહે છે. શ્રીયશોવિજયજી પોતે વ્યાખ્યાનકાર છે અને 'શ્રીજયાનંદવિજયજી' સુનાવવાની શિષ્યના ગુરુ છે.

* * *

મુંબઈમાં રોપાયેલું બીજ વડોદરામાં ઉગ્યું અને તેની ફસલ ડભોઈમાં થઈ. વડોદરામાં ઉત્સવની યોજના વિચારવા વડોદરા, ડભોઈ અને બહારના ભાઈઓ એકત્ર થયા લગ્ન પ્રસંગે સ્ત્રીઓ ગાય છે કે "મામા વિના કેમ ચાલશે રે" તેમ કોઈ પણ આધુનિક સંસ્થા કે સમારોહમાં મંત્રીઓ વિના ચાલતું નથી. "શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર સમિતિ"ની રચના કરવામાં આવી. અને બીજાઓની સાથે મને પણ મંત્રી તરીકે જોતરવામાં આવ્યો. હું પોતે મંત્રીપદ માટે લાયક હતો કે કેમ? તે બાબત મને ત્યારે—આજે પણ પૂરી શંકા છે. છતાં તે પદે મને નિયુક્ત કર્યો એટલે હું તે માટે લાયક હોઈશ એમ મારે માની લેવું પડ્યું. મારે માટે આશ્વાસનનું એક બીજું કારણ હતું. બીજા મંત્રીઓમાં ગુજરાતના સુપ્રસિદ્ધ સાક્ષર પ્રાધ્યાપક શ્રીભોગીલાલ સાંડેસરા, લબ્ધપ્રતિષ્ઠ વિદ્વદ્વર્ય પંડિત શ્રીલાલચંદ ભગવાનદાસ ગાંધી અને ડભોઈના એક સુંદર કાર્યકર અને સમાજ સેવાની ભારે ધગશ ધરાવતા ભાઈશ્રી જયુભાઈ જૈન હતા. આ સૌની સાથે કામ કરવાનો લહાવો પણ હું કેમ જતો કરી શકું? વળી ઉપાધ્યાયજીની પ્રતિભાએ હું કોલેજમાં અભ્યાસ કરતો હતો ત્યારથી મારા મન ઉપર જબ્બર અસર કરેલી. મહાત્મા ગાંધીજીની 'આશ્રમ ભજનાવલિ'માંથી વાંચેલી તેમના ભજનોની કડીઓ મ્હારા મગજમાં સતત ગુંજ્યા કરતી હતી.

" ચેતન! અબ મોહિ દર્શન દીજે,
—તુમ દર્શને શિવસુખ પામી જે, તુમ દર્શને ભવ છીજે. ચેતન૦!"

તેમના જીવન, સાહિત્ય અને શક્તિથી પ્રભાવિત થઈ મેં તેમના વિશે એક નાની પુસ્તિકા મારા લૉ કૉલેજના અભ્યાસકાળ દરમ્યાન લખેલી, જે બાલગ્રંથાવળી અને વિદ્યાર્થી વાચનમાળાના સંપાદક મારા પરમમિત્ર શતાવધાની શ્રીધીરજલાલ ટોકરશી શાહે પ્રસિદ્ધ કરેલી. શ્રીહેમચંદ્રાચાર્ય પછી એક પ્રતિભાશાળી પુરુષ તરીકે ઉપાધ્યાયજીનું સ્થાન આવે છે. છેલ્લા અઢીસો વર્ષમાં તેમના જેવો કોઈ મહાપુરુષ અને પ્રખર પંડિત જૈન સાધુસમાજમાં પાક્યો નથી એવી મારી અંગત માન્યતા છે. આવા યુગપુરુષને અંજલિ આપવાનો અનાયાસે પુનઃપ્રાપ્ત થયેલો યોગ હું કેમ જતો કરી શકું ?

* * *

મંત્રીઓ અને સભ્યો તરીકે સૌ ગોઠવાઈ ગયા. પણ રહ્યા એક શ્રીયશોવિજયજી, સારાયે સત્રના ઉત્પાદક અને પ્રેરક ! ગૃહસ્થોના ટોળામાં તેમને ક્યાં મૂકવા ! એક મોટી મુંઝવણનો પ્રશ્ન હતો મને એક વિચાર સૂઝી આવ્યો. મેં સૂચવ્યું કે તેમને 'સરસંચાલક' નીમો, જરા રમૂજ અને હળવા મિજાજમાં 'ડીક્ટેટર'ના અર્થમાં મેં આ શબ્દ સૂચવેલો. તે નહિ સ્વીકારાય અગર હસી કાઢવામાં આવશે એવી મને પાકી ખાત્રી હતી. પરંતુ તેમનું યોગ્ય સ્થાન શોધવામાં મૂઝાએલા સૌને આ શબ્દ કે આ ઉકેલ ગમી ગયો અને વધાવી લીધો. તેઓ 'સર સંચાલક' બન્યા ખરા, પરંતુ 'ડીક્ટેક્ટર'ના અર્થમાં નહિ પણ આખાયે સમારોહના સૂત્રધાર—સુકાનીના અર્થમાં.

* * *

જૈન અને જૈનેતર વિદ્વાનોની એક સમિતિ નીમવામાં આવી. જેમાં ડભોઈની દયારામ સાહિત્ય સભાના પ્રમુખ સાહિત્યભૂષણ શ્રીમગનલાલ ગિરજાશંકર શાસ્ત્રી, વડોદરાની રાજકીય સંસ્કૃત મહાવિદ્યાલયના નિવૃત્ત પ્રિન્સિપાલ પ્રખર વિદ્વાન શ્રીલક્ષ્મીનાથ બદ્રીનાથ શાસ્ત્રી. વડોદરા કૉલેજના અર્થશાસ્ત્ર અને ઈતિહાસના ભૂતપૂર્વ પ્રૉફેસર શ્રીકેશવલાલ હિમતરાય કામદાર વગેરે મુખ્ય કહી શકાય. સમિતિએ એક પરિપત્ર તૈયાર કરી પૂ. ઉપાધ્યાયજીના જીવન, કવન, ન્યાય, સાહિત્ય, જૈનદર્શન અને તેની સંસ્કૃતિના ભિન્ન ભિન્ન વિષયો અંગે નિબંધો તૈયાર કરી મોકલી આપવા સેંકડો વિદ્વાનો ઉપર મોકલ્યો. તેના જવાબમાં ઘણા સારા નિબંધો મેળવવા સમિતિ ભાગ્યશાળી થઈ હતી.

* * *

સારસ્વતસત્ર ધાર્યા કરતાં પણ ઘણી સફળતાથી ઉજવાયું. સત્રના દિવસો સારી રીતે જ જ્ઞાન અને જ્ઞાનાનંદની અમોઘ લહાણીના દિવસો બની ગયા. ડભોઈ ગામના સંઘનો અને ત્યાંના પ્રત્યેક જૈનનો ઉત્સાહ અવર્ણનીય હતો. મ્હેમાનોનું સ્વાગત, ભોજન, ઉતારો, મંડપો, ધ્વજાપતાકા, રોશની, સત્ર અંગેની સઘળી વ્યવસ્થા વગેરે માટે સૌએ ખડે પગે કામ કર્યું. સત્રનાં સ્વાગત પ્રમુખ શ્રીબાલચંદ જેઠાલાલ શાહ ડભોઈના યુવાન અને ઉત્સાહી કાર્યકર છે. ડભોઈમાં સમાજ હિતકારી જાહેર પ્રવૃત્તિઓમાં રસ ધરાવતા કાર્યકરોનું એક સારૂં જેવું જુથ છે. શ્રીશાન્તિલાલ મોતિલાલ શાહ, શ્રીસુંદરલાલ ત્રિકમલાલ શાહ, યુવાન ચિત્રકાર રમણિક ચુ. શાહ, શ્રીચંદુલાલ હિંમતલાલ પટેલ, શ્રીડાહ્યાભાઈ નાથાભાઈ શાહ, શ્રીત્રિકમલાલ સવાઈચંદ વગેરે. શ્રીબાલચંદભાઈ તે પૈકીના એક પ્રમુખ કાર્યકર છે. ઉત્સવની સફળતાના યશમાં તેમનો પણ ઠીકઠીક હિસ્સો છે. આ યુવાનપેઢી સાથે ડભોઈની વડીલપેઢીનો હંમેશા સહકાર હોય છે. શેઠ નગીનદાસ દોલતભાઈ, શાહ ફકીરચંદ મગનલાલ, શાહ હિંમતલાલ બાપુભાઈ, શાહ જીવણલાલ ગુલાબચંદ શાહ જીવણલાલ કસ્તુરચંદ. વગેરે મોટાઓનો ઉત્સાહ પણ યુવાનો સાથે આ ઉત્સવમાં હરિફાઈ કરતો હતો.

* * *

ડભોઈનો શ્રીમાળી વગો એક નાનકડી જૈનપુરી જેવો લાગે છે. ત્યાં બહુધા જૈનો જ વસે છે. જૈન

મંદિરો, ઉપાશ્રયો, જ્ઞાનમંદિરો, અને અન્ય જૈન સંસ્થાઓ આ લત્તામાં જ આવેલી છે. સત્રના દિવસો દરમ્યાન આખા શ્રીમાળીવાડાએ ઉત્સવનો સ્વાંગ ધારણ કરી લીધો હતો. ધજા, પતાકા, સુભાષિતોનાં બોર્ડો, તોરણો, કમાનો વગેરે સુશોભિત રાજમાર્ગો અને ઉત્સવપ્રિય સ્ત્રીપુરુષો, યુવાનો વગેરેની અવરજવર દોડાદોડ, નાના બાળકોની ધમાચકડી, કિલકિલાટ, વાજિંત્રો, ગાયકોના મધુર સંગીત વગેરેથી નવું જ લાગે, આખું વાતાવરણ ઉત્સવમય જ લાગતું હતું. બહારના મહેમાનોના નવીન ચહેરા અને પ્રભાવિક સાધુ સાધ્વીઓની હાજરી પણ ઉત્સવ રંગના વધામણાં દેતી હતી.

* * *

ઉત્સવ ઉત્સવપ્રિય હોય છે. સામાજિક ઉત્સવો કરતાં ધાર્મિક ઉત્સવોનું મહત્ત્વ અનોખું છે, ત્યાં સર્વ આમોદ પ્રમોદનું સ્વરૂપ સાત્વિક હોય છે. અને સર્વ કાંઈ પ્રભુભક્તિ-પ્રીત્યર્થે સમર્પણ ભાવથી થતું હોય છે. જૈનસમાજમાં આવા ઉત્સવો મોટે ભાગે કોઈ એકાદ મુખ્ય સાધુ કે આચાર્યની નિશ્રામાં ઉજવાતા હોય છે. એટલે સર્વપ્રસંગોને ધાર્મિકતાનો 'રંગ'-ઢંગ લાગેલો હોય છે. જૈન સાધુ સાચા અર્થમાં ત્યાગમૂર્તિ છે. ભગવાન મહાવીરે સાધુના આચાર વ્યવહારની જે મર્યાદાઓ બાંધી છે તેને અનુસરીને ચાલનારો સાધુ સદાકાળ વંદ્ય છે. તેને હાથે યોજાતા ઉત્સવો વાતાવરણને આધ્યાત્મિકતાથી સભર કરી દે એ શક્ય છે. તેમ થાય તો જ ઉત્સવનું આયોજન સફળ બને છે. ઉત્સવના યોજકની દૃષ્ટિ પણ શુદ્ધ અને નિષ્કામ હોવી જોઈએ. હાલના ઘણા ઉત્સવો યોજકની યશ-કીર્તિના પ્રચારાર્થે જ જાણે ન હોય એવો ઘણી વખત ભાસ થાય છે. ઉત્સવ, ઉત્સવ મટી આડંબર બની જાય છે. વાદવિવાદમાં જ ફળ પ્રાપ્તિની ઈતિશ્રી થઈ જાય છે. ઉત્સવોનું મૂલ્ય તેનાં નિર્ધારિત હેતુઓ અને પરિણામોની દૃષ્ટિએ આંકવું જોઈએ. જીવનમાં ઉદાત્ત તત્ત્વોની ચીનગારી આ ઉત્સવો જગાડનારા પ્રગટવા જોઈએ. આપણા ઉત્સવોની સફળતા કે નિષ્ફળતા આ દૃષ્ટિએ આંકવી જોઈએ. ઉત્સવ યોજકોની પોતાની દૃષ્ટિ શુદ્ધ અને નિષ્કામ છે કે કેમ તેનું પૃથક્કરણ તેમણે કરવું જોઈએ અને તેમાં રહેજ પણ અશુદ્ધિનો અંશ હોય તો તે દૂર કરવો જોઈએ.

* * *

પધારેલ સાધુ સાધ્વીઓની હાજરી, એ પોતે જ એક પ્રેરક પ્રસંગ હતો. શ્વેતવસ્ત્ર એક સરખા પોષાક વાળા, મૂર્તિમંત ત્યાગના અવતાર સમા, હાથમાં દંડ ધારણ કરેલા, કોઈ પણ જાતના પરિગ્રહ વિનાના મહાત્માના આદર્શ સમા, હંમેશા 'ધર્મલાભ'નો જ આશીર્વાદ આપતા, પંચમહાવ્રતધારી સાધુઓ જૈનસંઘનું ગૌરવ છે. ભગવાન મહાવીરની પરંપરાને સાચવવાનું બહુમાન તેમને મળેલું છે. તેમને સહેજે મસ્તક નમી પડે છે. સત્રસમયની પર્ષદાઓમાં તેમની હાજરી એક અદ્ભુત અને ભવ્ય રૂપ ખડું કરી દેતી હતી.

જૈનસમાજના ગૌરવરૂપ સાધુસમાજે અને ખાસ કરીને આચાર્યોએ વર્તમાન પરિસ્થિતિનું પૃથક્કરણ અને જરૂર લાગે તો શુદ્ધિકરણ કરવાની જરૂર જેવું ખરું ? સાધુ સંસ્થાની ભવ્યતા ને વધુ ભવ્ય બનાવવામાં કંઈક ખૂટતું હોય એવું નથી લાગતું શું ?

* * *

સત્રના પ્રમુખ તરીકે દાર્શનિક પં. પંડ્યા શ્રી ઈશ્વરચંદ્રજીની વરણી થઈ હતી. કહેવું જોઈએ કે તેમણે સત્રનું સુકાન સારી રીતે સંભાળ્યું હતું. તેમના પ્રકાંડ વિદ્વત્તા અને ન્યાય-દર્શનશાસ્ત્ર ઉપરના અનન્ય પ્રભુત્વે સત્રને યોગ્ય પ્રમુખ મળ્યાની ખાત્રી કરાવી આપી. સંસ્કૃતગિરામાં તેમજ હિંદીમાં તેમના અસ્ખલિતવાગ્ધારાબદ્ધ વ્યાખ્યાન પ્રવાહે સૌને મંત્ર મુગ્ધ કર્યા હતા

* * *

સત્રનું ઉદ્ઘાટન જૈન સમાજના જાણીતા વિદ્વાન અને મુંબઈની સ્મોલકોઝ કોર્ટના જજ શ્રીયુત

પ્રસન્નમુખ સુરચંદ્ર બદામી બી.એ.બી.એસ.સી. બાર એટલોના હસ્તે થયું તે પણ યોગ્ય હતું. સમાજસેવા અને વિદ્વત્તા તેમને તેમના પિતાશ્રી તરફથી વારસામાં મળેલ છે. આ વારસાનું જતન કરવા તેમણે મુંબઈથી વડોદરાનો પ્રવાસ પ્રસન્નમુખે ખેડયો હતો. નવ્યન્યાયના મહાન ધુરંધર પંડિતના સત્ર સમારંભનું ઉદ્ઘાટન એક ન્યાયાધીશના હસ્તે થાય એમાં પણ કોઈ સંકેત હશે?

* * *

આજુબાજુના ગામોમાંથી આવેલા સેંકડો નિમંત્રિત–અનિમંત્રિત સ્ત્રી પુરુષો ઉપરાંત જૈન સમાજની અનેક નામાંકિત વ્યક્તિઓની આ સમારોહમાં સારી હાજરી હતી. શિલ્પ–સાહિત્યનું પ્રદર્શન જેમના હાથે ખુલ્લું મૂકાયું તે ધાંગધ્રા નિવાસી શેઠ પુરુષોત્તમદાસ સુરચંદ, જૈન સમાજના જાણીતા અગ્રણી અને વિશિષ્ટ વ્યક્તિત્વવાળા શેઠ જીવતલાલ પ્રતાપસી, સખી શ્રીમંત શેઠ વાડીલાલ ચત્રભુજ, સમાજ કલ્યાણની નિરંતર ધગશવાળા શ્રીપ્રાણજીવનદાસ ગાંધી, જૈન સમાજની અનેક સંસ્થાઓના પ્રાણરૂપ જૈન શ્વેતાંબરકોન્ફરન્સ અને સ્વયંસેવક પરિષદના મોવડી શ્રીમોહનલાલ દીપચંદ ચોકસી, પીઢ સાહિત્યકાર પ્રો. હીરાલાલ ર. કાપડીયા, આપણા ગણ્યા ગાંઠયા પંડિતો પૈકીના એક પ્રખર પંડિત શ્રીલાલચંદ્ર ભગવાનદાસ ગાંધી, પંડિત શ્રીમફતલાલ સંઘવી વગેરેની હાજરીથી ઉત્સવમાં જોમ અને જોશ આવ્યું હતું. જૈન–જૈનેતર સમાજમાંથી બીજી પણ ઘણી નામાંકિત વ્યક્તિઓની હાજરી આગળ તરી આવતી હતી. જાણીતા ગુજરાતી સાક્ષર પ્રાધ્યાપક ડૉ. ભોગીલાલ જે. સાંડેસરા, શિલ્પ અને મૂર્તિશાસ્ત્રના પ્રખર અભ્યાસી અને સંશોધક ડૉ. ઉમાકાન્ત પ્રેમાનંદ શાહ, ઈતિહાસ અને અર્થશાસ્ત્રના નિષ્ણાત પ્રો. કેશવલાલ હિંમતલાલ કામદાર, મહારાજા સયાજીરાવ યુનિવર્સિટીના પ્રતિનિધિ પ્રો. દીનુભાઈ, ઓરીએન્ટલ ઈન્સ્ટીટ્યુટવાળા શ્રીજયંત ઠક્કર, રાજકીય સંસ્કૃત પાઠશાળાના પ્રિન્સિપાલ શ્રીહરિપ્રસાદ મહેતા વગેરેની હાજરી ખાસ પ્રેરણાદાયી બની હતી. ડભોઈની જૈનેતર પ્રજામાંથી વકીલો, ડોકટરો, વેપારીઓ વગેરેનો ઉષ્માભર્યો સાથ પણ અમને મલ્યો હતો.

* * *

તા. ૭–૩–૫૩ ના રોજ બપોરના સત્રનો પ્રારંભ થયો. સ્વાગત પ્રમુખે ભાષણમાં ડભોઈનો ટૂંકો ઈતિહાસ આપી સૌને સત્કાર્યા. બહારગામથી આવેલી જાણીતી વ્યક્તિઓ સંસ્થાઓ, આચાર્યો, મુનિવરો વગેરેના સંદેશા વંચાયા. સત્રસમિતિના મંત્રી તરીકે સત્રની ઉત્પત્તિનો ટૂંકો ઇતિહાસ મેં પણ રજૂ કર્યો અનેક વિદ્વાન લેખકોના નિબંધો આવેલા, તેનો સવિસ્તૃત પરિચય પંડિત લાલચંદ્રજીએ આપ્યો. થોડા નિબંધો વંચાયા. પ્રો. દિનુભાઈ, શ્રીજયંત ઠક્કર, પ્રો. હીરાલાલ ર. કાપડીયા અને શ્રીહંસરાજજી શાસ્ત્રીએ પ્રસંગાનુરૂપ પ્રવચનો કર્યાં અને ઉપાધ્યાયજીને માનભરી અંજલિ આપી.

* * *

આ સત્રની કાર્યવાહી વિવિધ અંગોમાં વહેંચાયેલી હતી. શિલ્પ સાહિત્યનું પ્રદર્શન, ઉપાધ્યાયજીના જીવન પ્રસંગોનું પ્રદર્શન, ઉપાધ્યાયજીની મૂર્તિ પ્રતિષ્ઠા, સત્ર સમારોહ, સંસ્કૃત વિદ્વત્પરિષદ, ઉપરાંત ધાર્મિક પૂજાઓ, પ્રભાવનાઓ, વરઘોડા, જમણવારો વગેરે પરંતુ આ સૌમાં સંસ્કૃતવિદ્વાનોની પરિષદે ખાસ આકર્ષણ જમાવ્યું હતું. આ પરિષદ્ એટલે શ્રમણ સંસ્કૃતિ અને બ્રાહ્મણ સંસ્કૃતિનો સુભગ સમન્વય. જૈન સંસ્કૃતિ અને વૈદિક સંસ્કૃતિ વચ્ચે કોઈ અભેદ્ય દિવાલ નથી. બન્ને એક બીજા તરફ પૂંઠ ફેરવીને બેઠેલાં નથી. બન્નેને બાપે માર્યાં વેર નથી, પરંતુ બન્ને વચ્ચે કેટલુંક સામ્ય છે. અમુક બાબતોમાં તો અદ્ભુત સામ્ય છે અને બન્ને અરસ પરસ સખી ભાવે સાથે બેસી શકે છે, એનું ખાસું ઉદાહરણ આ પરિષદ્ હતી. સ્યાદ્વાદ દૃષ્ટિવાળાને કોઈની સાથે મમત, દ્વેષ કે કદાગ્રહ હોઈ શકે નહિ. તે હંમેશા સામાનું દૃષ્ટિબિન્દુ સમજવા અને પોતાનું દૃષ્ટિબિન્દુ પ્રેમપૂર્વક સમજાવવા તૈયાર હોવો જોઈએ. આવો સ્યાદ્વાદી હંમેશા

(૩૩) એ પ્રમાણે તાર્કિકશિરોમણિ ન્યાયાચાર્ય ન્યાયવિશારદ ઉપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજનું આ જીવનચરિત્ર–ઉપાધ્યાયજી મહારાજના સદ્‌ગુણોના અનુરાગથી અને તેમના અપાર જ્ઞાનાદિ ગુણોનું અનુકરણ કરવાની ઇચ્છાથી અતિસંક્ષેપમાં કહ્યું છે. વર્તમાન સમયમાં ઉપાધ્યાયજીનું અથથી ઇતિ સુધીનું સવિસ્તર યથાર્થ જીવનચરિત્ર મળતું નથી, જેથી જેટલું મળી શકે છે તેટલામાંથી ઉદ્ધરીને સારભૂત આ જીવનચરિત્ર બહુ ટૂંકમાં કહ્યું છે. આ સંક્ષિપ્ત જીવનચરિત્ર વાંચીને અથવા સાંભળીને અને તેવા ગુણોની સેવના કરીને, હે ભવ્ય જીવો ! તમે પરમ ઉન્નતિ એટલે પરમ કલ્યાણને પામો !

(૩૪–૩૫) વિ. સં. ૧૯૯૩માં જે દિવસે શ્રીગૌતમસ્વામીને કેવળજ્ઞાન પ્રગટ થયું તે પવિત્ર દિવસે અતિઉત્તમ શ્રીજૈનશાસનની આરાધના કરવામાં રસિક એવો ઘણો શ્રાવક સમુદાય જેમાં વસે છે તે જૈનપુરી સરખા રાજનગર–અમદાવાદમાં પરમપૂજ્ય ગુરુવર્ય આચાર્ય શ્રીવિજયનેમિસૂરીશ્વરના શિષ્ય આચાર્ય વિજયપદ્મસૂરિએ પ્રિયંકરવિજયજી નામના સાધુને ભણવા માટે આ ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજના જીવનચરિત્રની રચના કરી.

મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયજી મહારાજે બનાવેલા ગ્રંથોની હકીકત એક સ્વતંત્ર નિબંધમાં જ આવી શકે એમ હોવાથી અહીં ન આપતાં તેમની સાહિત્ય રચનાઓ સંબંધી હકીકત આ ગ્રંથમાં જ મારા બીજા લેખ (પૃષ્ઠ; ૧૮૯) માં આપવામાં આવી છે.

*

आत्मायमर्हतो ध्यानात्, परमात्मत्वमश्नुते ।
रसविद्धं यथा ताम्रं, स्वर्णत्वमधिगच्छति ॥३०॥

જેમ રસથી વેધાયેલું તાંબુ સુવર્ણ બને છે તેમ અરિહંતના ધ્યાનથી આ આત્મા પરમાત્મપણાને પામે છે.

દ્વાત્રિંશિકા] [શ્રીમદ્ યશોવિજયજી

★

ફાળો આપ્યો છે. આવી સંસ્થાઓ ફુલેફાલે અને તેના લાભ લેનારા આપણા સમાજમાંથી સારા પ્રમાણમાં નીકળે એ જરૂરી છે. આવી ઉપયોગી સંસ્થાની પ્રેરણા આપવા બદલ આચાર્યશ્રી વિજયજંબૂસૂરીશ્વરજીને અભિનંદન ઘટે છે. તેઓશ્રીની જન્મભૂમિ ડભોઈ જ હોઈ પોતાની જન્મભૂમિ જનની પ્રત્યેનું ઋણ અદા કરી, ત્યાંના શ્રીસંઘને આવી અમૂલ્ય સંસ્થા આપી ઋણી બનાવ્યો છે.

* * *

આ બે ઉત્સવો પ્રસંગે ડભોઈના સંઘમાં એક બીજો પણ શુભ પ્રસંગ બની ગયો. સંઘમાં લાંબા વખતથી બે તડ પડી ગયાં હતાં. તે શ્રીજીવાભાઈ પ્રતાપશી, શ્રીવાડીલાલ ચત્રભુજ, વડોદરાવાળા શ્રીવાડીલાલ મગનલાલ વૈદ્ય, શ્રીપુરુષોત્તમ સુરચંદ, શ્રીગુલાબચંદ ગફલભાઈ વગેરેના પરિશ્રમથી અને સૌ આચાર્યો અને મુનિવરોના આશીર્વાદથી સંધાઈ ગયાં અને સૌ ભેગા બેસી નવકારશી જમ્યા.

* * *

આ ઉત્સવે મહોપાધ્યાયશ્રી યશોવિજયજી મહારાજના સર્વતોમુખી પ્રકાણ્ડ પાંડિત્યનો પરિચય જૈન સમાજને કરાવ્યો. આપણા સમાજને પૂરી ખબર નથી કે તેણે કેટકેટલી મહાન વિભૂતિઓ, જગતના મહાન પુરુષો અને જ્યોતિર્ધરોની હરોળમાં બેસી શકે એવા પરમ અર્હતો તેણે પેદા કર્યા છે. ભૂતકાળની આ ગૌરવભરી યાદ આ ઉત્સવે સૌને તાજી કરાવી.

* * *

આ કેવળ વ્યક્તિપૂજાનો ઉત્સવ ન હતો. એ જ્ઞાનનો — નિર્ભેળ જ્ઞાનનો પરમ મહોત્સવ હતો. વિદ્વાનોનો, ત્યાગીઓનો અને જ્ઞાનપિપાસુઓનો સાત્વિક મેળો હતો. સર્વધર્મ પ્રત્યે સહિષ્ણુતા કેળવવાનો તેણે સંદેશ આપ્યો. જ્ઞાનચર્યામાંથી પ્રગટતા પરમ આનંદના અમૃતરસનો સ્વાદ કેવો હોઈ શકે? તેનો અહીં ખ્યાલ આવતો હતો. આવો રસ ચાખ્યા પછી તે રસ ચાખનારને બીજા રસમાં સ્વાદ આવે તેમ નથી. ઉપાધ્યાયજીએ ખરું જ કહ્યું છે કે: —

'જે માલતી ફુલે મોહીયા, તે બાવળ જઈ કેમ બેસે રે.'

卐

આત્મા શુદ્ધક્રિયા ક્યારે કરી શકે ?

પાઠ ગીત નૃત્યની કલા રે, જિમ હોય પ્રથમ અશુદ્ધ રે; મન૦
પણ અભ્યાસે તે ખરી રે, તિમ કિરિયા અવિરૂદ્ધ રે. ગુણ૦ ૨
મણિશોધક શત ખારના રે, જિમ પુટ સકલ પ્રમાણ મન૦
સર્વક્રિયા તિમ યોગને રે, પંચવસ્તુ અહિનાણ રે. ગુણ૦ ૩

ઉપા. શ્રીયશોવિજયજી] [સીમંધર સ્તવન. ઢાળ ૨

નોંધ—મહોત્સવની ઉજવણી બાદ પૂ. ઉપાધ્યાયજી મહારાજના ગ્રન્થ પ્રકાશન માટે એક સમિતિ નીમવામાં આવેલી તેની નોંધ; કાર્યવાહી અને તે પ્રસંગે મૂકેલી પ્રસ્તાવના અહીં રજૂ કરી છે.

॥ શ્રીવીરાય નમઃ ॥

સમય :
સવારે સ્ટા. ટા. ૯–૦

સ્થળ :
કોઠીપોળ, શ્રીમુક્તિકમલ જૈન મોહન જ્ઞાનમંદિર
મુ. વડોદરા

નિવેદન નં. ૧

આથી જણાવવાનું કે, ગત ફાગણ વદ ૮ તારીખ ૮–૩–૧૯૫૩ના રોજ ડભોઈ મુકામે ઉજવાએલ શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્રમાં જૈન. યશોસા. ન્યા. ન્યા. પૂ. ઉપાધ્યાયજી શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ સ્મારક સમિતિના પ્રથમ ઠરાવ ઉપર બોલતાં શ્રીયુત્ જીવનલાલ પ્રતાપસીભાઈએ જણાવેલું કે, અનિશ્ચ મોટી અને જુદા જુદા સ્થળોના નીમાએલા સભ્યોની સ્મારક સમિતિમાંથી એક કાર્યવાહકસમિતિ ૭ કે ૯ સભ્યોની બનાવવી જોઈએ; જેથી સઘળું કાર્ય વ્યવસ્થિત અને ઝડપી બને. સદર સૂચનને સભાના મંત્રીઓએ આવકાર્યું હતું અને માન્ય કરવા જણાવ્યું હતું.

તેની કાર્યવાહક સમિતિ અંગે અને પૂ. ઉપાધ્યાયજીના ગ્રંથ પ્રકાશન વગેરે બાબતોનો નિર્ણય કરવા સ્મારક સમિતિના સભ્યોની એક સભા તા. ૩–૬–૫૩ ને મંગળવારે ઉપરના સ્થળે અને સમયે રાખવામાં આવી છે, તો આપ અવશ્ય પધારશો.

સદર સભામાં પૂ. મુનિવર શ્રીપુણ્યવિજયજી મહારાજ તથા સાહિત્ય પ્રેમી પૂ. મુનિવર શ્રીયશોવિજયજી મહારાજ હાજર રહેનાર છે

તેમજ પ. પૂ. આચાર્યશ્રી વિજયપ્રતાપસૂરીશ્વરજી મહારાજને હાજરી આપવા વિનંતિ કરેલ છે.

તા. ૭–૫–૫૩
વડોદરા

લી. આપના,
લાલચંદ ક. ગાંધી
નાગકુમાર ના. મકાતી
મંત્રીઓ, શ્રી ય. સા. સ. ડભોઈ

તારીખ ૩૦–૫–૫૩ ના ઉપરોક્ત નિવેદન પ્રમાણે મળેલી સભામાં નીચે પ્રમાણે કાર્યવાહી થઈ છે.

નામ:— આ સંસ્થાનું નામ "શ્રી યશોભારતી પ્રકાશન સમિતિ" રહેશે.

સભાએ, સમિતિના સભ્યોની નીચે પ્રમાણે બે વિભાગમાં, સર્વાનુમતે વરણી કરી હતી

કાર્યદક્ષ મુનિ સમિતિ—૧. પૂ. મુનિવર શ્રી પુણ્યવિજયજી મહારાજ
૨. પૂ. મુનિવર પં. શ્રી ભદ્રંકરવિજયજી મહારાજ
૩. પૂ. મુનિવર શ્રી યશોવિજયજી મહારાજ
૪. પૂ. મુનિવર શ્રી જંબૂવિજયજી મહારાજ

કાર્યવાહક સમિતિ:— ૧ શા. બ. શેઠ જીવનલાલ પ્રતાપસીભાઈ ૨ વકીલ નાગકુમાર ના. મકાતી (મંત્રી) ૩ શા. લાલચંદ નંદલાલ (મંત્રી) ૪ શેઠ વાડીલાલ ચત્રભુજ ગાંધી જે. પી. ૫ પંડિત ઈશ્વરચંદ્રજી પંજાબી ૬ પંડિત લાલચંદ ભ ગાંધી ૭. ડૉ. ભોગીલાલ જે. સાંડેસરા ૮ શ્રી જશુભાઈ મ. જૈન ડભોઈવાળા.

સહાયક સભ્યો :—પંડિત શ્રીસુખલાલ સંઘવી, શેઠ પુરૂષોત્તમ સુરચંદ, શેઠ રમણલાલ દલસુખભાઈ જે. પી., પ્રો. હીરાલાલ ર. કાપડીઆ, પંડિત શ્રીદલસુખ માલવણીઆ, પ્રો. કેશવલાલ હિ. કામદાર, શ્રી. ચુનિલાલ વર્ધમાન શાહ, શ્રીરસિકલાલ છોટાલાલ પરિખ, શ્રીધીરજલાલ ટોકરસી શાહ, શ્રીફત્તેહચંદ ઝવેરચંદ, શ્રીજિતેન્દ્ર જેટલી, શ્રીપ્રસનમુખ સુરચંદ બદામી (સ્મોલ કૉઝ કોર્ટ જજ), શ્રીમોહનલાલ દી. ચોકસી, શ્રીરતિલાલ દીપચંદ દેસાઈ, શ્રીબાલચંદ જેઠાલાલ ડભોઈ, શેઠ છગનલાલ લક્ષ્મીચંદ વડુવાળા, શ્રીવાડીલાલ મગનલાલ વૈદ્ય.

જરૂર પડે કાર્યવાહક સમિતિને વધુ સભ્યો ઉમેરવાની સત્તા આપવામાં આવે છે.

ઉદ્દેશ :—ડભોઈખાતે 'શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્ર'ના પ્રથમ ઠરાવ મુજબ, જે અગાઉ જાહેર થયેલ છે.

ઠરાવ :— ૧ શ્રીયશોવિજય સારસ્વતસત્રનું અધૂરું રહેલું કાર્ય હવે "શ્રીયશોભારતી પ્રકાશન સમિતિ"એ કરવું એમ ઠરાવવામાં આવે છે.

ઠરાવ :— ૨ શ્રીયશોભારતી પ્રકાશન સમિતિના **સરસંચાલકો** તરીકે પૂ. મુનિવર **શ્રીયશોવિજયજી** મહારાજ તથા પૂ. મુનિવર **શ્રીપુણ્યવિજયજી** મહારાજને નિયુક્ત કરવામાં આવે છે.

ઠરાવ :— ૩ શ્રીયશોભારતી પ્રકાશનસમિતિના બંધારણનો કાચો ખરડો મંત્રીઓએ તૈયાર કરી કાર્યવાહક સમિતિમાં મંજૂરી માટે રજૂ કરવાનું ઠરાવવામાં આવે છે.

ઉપર મુજબની કાર્યવાહી સર્વાનુમતે થયા બાદ હાજર રહેલા ત્રણે પૂ. ગુરુવર્યોએ માંગલિક સંભળાવ્યું હતું. તત્પશ્ચાત્ સભાની કાર્યવાહી આનંદના વાતાવરણમાં પૂર્ણ થઈ હતી.

વિશેષ વિજ્ઞપ્તિ

સવિસ્તર રૂપમાં સઘળી કાર્યવાહી આપની સમક્ષ રજૂ કર્યા બાદ આપશ્રીને વિશેષ વિજ્ઞપ્તિ કરવાની કે સંસ્થાના કાર્ય અંગે આપણને કોઈ પણ જાતની વધુ સલાહ-સૂચના અને માર્ગદર્શન કરાવવાનું ઇષ્ટ લાગે તો તે સમિતિને જરૂર આવકારદાયક થઈ પડશે. સમિતિ આપના કીંમતી સહકારની અપેક્ષા રાખે છે એ ઉમેરવાની ભાગ્યે જ જરૂર છે.

પત્રવ્યવહારનું સાંપ્રત સ્થળ :
શ્રીનાગકુમાર ના. મકાતી
ઠે. હાથીપોળ, વડોદરા

લી. સેવકો,
નાગકુમાર ના. મકાતી
લાલચંદ નં. શાહ
મંત્રીઓ, શ્રીયશોભારતી પ્રકાશન સમિતિ, વડોદરા.

न्यायविशारद न्यायाचार्य महोपाध्याय श्रीमद् यशोविजयजीकृत ग्रन्थोनी यादी [वि. सं. २०१३]

★

संस्कृत–प्राकृत भाषाना उपलब्ध ग्रन्थो

१ अध्यात्ममतपरीक्षा
स्वोपज्ञटीकासह
२ अध्यात्मसार
३ अध्यात्मोपनिषद्
४ अनेकान्त [मत] व्यवस्था
[अपरनाम–जैनतर्क]
५ अनेकान्तवादमाहात्म्य
विंशिका
६ अस्पृशद्गतिवाद
[वादमालानुं एक प्रकरण]
७ आध्यात्मिकमतपरीक्षा
[अपरनाम आध्यात्मिकमतखण्डन]
स्वोपज्ञटीकासह
८ आत्मख्याति*
९ आराधकविराधक–
चतुर्भंगी स्वोपज्ञटीकासह
१० आर्षभीय महाकाव्य*×
११ उपदेश रहस्य
स्वोपज्ञटीकासह
१२ ऐन्द्रस्तुतिचतुर्विंशतिका
स्वोपज्ञटीकासह
१३ कूपदृष्टान्तविशदीकरण
स्वोपज्ञटीकासह
१४ गुरुतत्त्वविनिश्चय
स्वोपज्ञटीकासह
१५ जैनतर्कभाषा
१६ ज्ञानबिन्दु
१७ ज्ञानसार
१८ ज्ञानार्णव×
स्वोपज्ञटीकासह
१९ तिङन्वयोक्ति*×
२० देवधर्मपरीक्षा
२१ द्वात्रिंशद्द्वात्रिंशिका
स्वोपज्ञटीकासह
२२ धर्मपरीक्षा
स्वोपज्ञटीकासह
२३ नयप्रदीप
२४ नयरहस्य
२५ नयोपदेश
स्वोपज्ञटीकासह
२६ न्यायखण्डनखाद्य टीका
[स्वकृत 'महावीरस्तव' मूल उपर]
२७ न्यायालोक
२८ परमज्योतिः–
पञ्चविंशतिका
२९ परमात्मपञ्चविंशतिका
३० प्रतिमाशतक
स्वोपज्ञटीकासह
३१ प्रतिमास्थापनन्याय
३२ प्रमेयमाला*×
३३ भाषारहस्य
स्वोपज्ञटीकासह
३४ मार्गपरिशुद्धि
३५ यतिलक्षणसमुच्चय
३६ वादमाला
३७ वादमाला बीजी*×
३८ वादमाला त्रीजी*
३९ विजयप्रभसूरिस्वाध्याय
४० विजयप्रभसूरि उपर पत्र*
४१ विषयतावाद*
४२ वैराग्यकल्पलता
४३ वैराग्यरति*×
[अपरनाम मुक्ताशुक्ति]
४४ सामाचारी प्रकरण
स्वोपज्ञटीकासह
४५ स्तोत्रावली
१ आदिजिनस्तोत्र
[शत्रुञ्जयमंडन]
२ गोडीपार्श्वनाथ स्तोत्र
[का. सं. १०८]
३ वाराणसी पार्श्वनाथ स्तोत्र
[का. सं. २१]
४ शंखेश्वरपार्श्वनाथ स्तोत्र
[का. सं. ११३]
५ शंखेश्वरपार्श्वनाथ स्तोत्र
[का. सं. ९८]
६ शंखेश्वरपार्श्वनाथ स्तोत्र
[का. सं. ३३]
७ शमीनपार्श्वनाथ स्तोत्र
[का. सं. ९]
८ महावीरस्तव स्तोत्र
४६ स्याद्वाद पत्र

---

* आवुं चिह्न हवे पछी मुद्रित थनारा ग्रन्थोनुं छे. × आवुं चिह्न खण्डित कृतिओ माटेनुं छे.

पूर्वाचार्यकृत सं. प्रा. ग्रन्थो उपरना उपलब्ध टीका ग्रन्थो

+

श्वेताम्बरग्रन्थ उपरनी टीकाओ

१ उत्पादादिसिद्धिप्रकरण टीका
२ कम्मपयडि (कर्मप्रकृति) बृहद् टीका
३ कम्मपयडि लघुटीका [प्रारंभ मात्र]
४ तत्त्वार्थसूत्रटीका [उपलब्ध प्रथमाध्याय मात्र]
५ योगविंशिका-टीका
६ वीतरागस्तोत्र-अष्टमप्रकाशनी वर्णटीकाओ*%
[बे अपूर्ण, 'स्याद्वादरहस्य'पूर्ण]
७ शास्त्रवार्तासमुच्चय टीका
८ षोडशक टीका

*स्याद्वादमञ्जरी टीका (?)

दिगम्बर ग्रन्थ उपर टीका

१ अष्टसहस्री टीका

जैनेतरग्रन्थ उपर टीका

१ काव्यप्रकाश टीका*%
२ पातञ्जलयोगदर्शन टीका
३ सिद्धान्तमञ्जरी टीका

★

अन्यकर्तृक—स्वयं संशोधित ग्रन्थो

+

१ धर्मसंग्रह
२ उपदेशमाला बालावबोध*
[प्राकृत-गूर्जर]

★

संपादित ग्रन्थो

+

द्वादशारनयचक्रोद्धार—आलेखनादिक

✱

स्वकृत सं.-प्रा. अलभ्य ग्रन्थो अने टीकाओ

+

१ अध्यात्मबिन्दु
२ अध्यात्मोपदेश
३ अनेकान्तवादप्रवेश
४ अलङ्कारचूडामणी टीका
[हेम काव्यानुशासननी स्वोपज्ञ 'अलंकारचूडामणि' टीका उपर टीका]
५ आत्मख्याति
६ आलोकहेतुतावाद
७ छन्दश्चूडामणी टीका
[हेम छन्दोनुशासननी स्वोपज्ञ छन्दश्चूडामणि टीका उपर टीका]
८ ज्ञानसार अवचूर्णी
९ तत्त्वालोक विवरण
१० त्रिसूत्र्यालोक (विधि) विवरण
११ द्रव्यालोक स्वोपज्ञ-टीकायुक्त
१२ न्यायबिन्दु
१३ प्रमारहस्य
१४ मङ्गलवाद
१५ वादार्णव
१६ वादरहस्य
१७ विधिवाद
१८ वेदान्तनिर्णय
१९ वेदान्तविवेकसर्वस्व
२० शठप्रकरण
२१ श्रीपूज्यलेख
२२ सप्तभंगीतरङ्गिणी
२३ सिद्धान्ततर्कपरिष्कार

२३ थी ४५–१०. त्रिशत्प्रकरणो (हरिभद्रीय) उपरना १० टीकाग्रन्थो, ते उपरांत अन्तमां "रहस्य" पदथी अंकित ग्रंथग्रन्थो, अने ते सिवायनी अन्य कृतिओ अप्राप्य बनी गई छे.

★

ગુર્જર, મિશ્રભાષાની ઉપલબ્ધ કૃતિઓ

અગિઆર અંગ સજ્ઝાય
અગિઆરગણુધર નમસ્કાર
અઢારપાપસ્થાનક સજ્ઝાય
અધ્યાત્મમતપરીક્ષા—બાલાવબોધ
અમૃતવેલીની સજ્ઝાયો
આનન્દઘન અષ્ટપદી
આઠદષ્ટિ સજ્ઝાય
એકસો આઠ બોલસંગ્રહ*
કાયસ્થિતિ સ્તવન*
ચડયા પડયાની સજ્ઝાય
ચોવીશીઓ ત્રણ [પદ્ય સં.૩૩૬]
જશવિલાસ=આધ્યાત્મિક પદો [પ. સં. ૨૫૨]
જંબૂસ્વામિરાસ
જિનપ્રતિમાસ્થાપન સજ્ઝાયો
જેસલમેરપત્રો—હરરાજ શ્રાવકવાળા
જ્ઞાનસાર—બાલાવબોધ
તત્ત્વાર્થાધિગમસૂત્ર-બાલાવબોધ*
તેરકાઠીયા નિબંધ*
દશમત સ્તવન
દિક્પટ ચોરાસી બોલ
દ્રવ્યગુણપર્યાયરાસ—સ્વોપજ્ઞ ટબાર્થસહ

નવપદપૂજા
નવનિધાન સ્તવન [પ. સં. ૪૫]
નયરહસ્યગર્ભિત સીમંધરસ્વામિ વિનંતિરૂપ સ્તવન. બાલાવબોધ સહ [પ. સં. ૧૨૫]
નિશ્ચય—વ્યવહારગર્ભિત સીમંધર જિનસ્તવન [પ. સં. ૪૧]
નિશ્ચય—વ્યવહારગર્ભિત શાંતિ—જિનસ્તવન [પ. સં. ૪૮]
નેમ—રાજૂલ ગીત
પંચપરમેષ્ઠિ ગીતા [પ. સં. ૧૩૧]
પંચગણુધર ભાસ
પ્રતિક્રમણુહેતુગર્ભ સજ્ઝાય
પાંચકુગુરુ સજ્ઝાય
પાંચમહાવ્રત ભાવના
પિસ્તાલીશ આગમ સજ્ઝાય
બ્રહ્મગીતા [જંબૂસ્વામિની]
મૌનએકાદશી સ્તવન
યતિધર્મ બત્રીસી
વિચારબિન્દુ [ધર્મપરીક્ષાનું વાર્તિક]*

વિહરમાનજિનવિંશતિકા [પ. સં. ૧૨૩]
વીરસ્તુતિરૂપ હુંડીનું સ્તવન સ્વોપજ્ઞ બાલાવબોધ સહ [પ. સં. ૧૫૦] [જિનપ્રતિમાસ્થાપનસ્વરૂપ]
શ્રીપાલરાસ—ઉત્તરાર્ધ ભાગ
સમાધિ શતક
સમુદ્ર—વ્હાણુ સંવાદ
સંયમશ્રેણી સજ્ઝાય સ્વોપજ્ઞ ટબાર્થસહ*
સમ્યક્ત્વના સડસઠબોલની સજ્ઝાય [પ. સં. ૬૫]
સમ્યક્ત્વ ચોપાઈ—સ્વોપજ્ઞ ટબાસહ*
સાધુવંદના
સામ્યશતક
સ્થાપનાચાર્ય સજ્ઝાય
સીમંધરજિન સ્તવન સિદ્ધાંત-વિચારગર્ભિત [પ.સં. ૩૫૦] સ્વોપજ્ઞ ટબાસહ*
સુગુરુ સજ્ઝાય

—अन्यकर्तृक ग्रन्थउपर अनुवादित गूर्जरभाषानी अप्राप्य कृति—

૧. આનન્દઘનબાવીશી — બાલાવબોધ

---

૧. ઉપરની ગૂર્જર કૃતિઓનો મોટો ભાગ ‘ગૂર્જર સાહિત્ય સંગ્રહ’ ભા. ૧-૨માં છપાઈ ગયો છે.
૨. સજ્ઝાય એટલે સ્વાધ્યાય સમજવું.
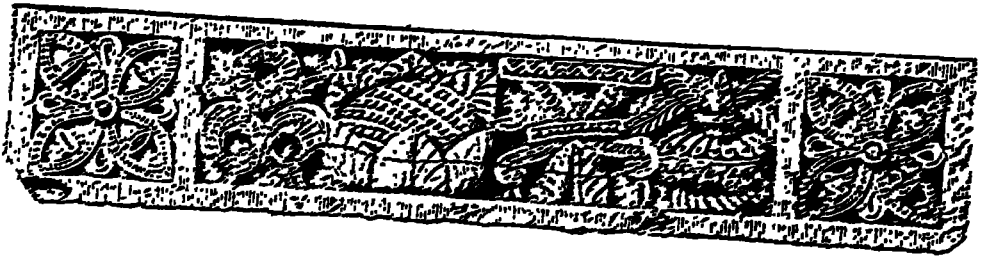
सुन्दार्यं जीवनं यस्य लिखितं यत्र लेखकैः ।
समाप्तोऽयं स्मृतिग्रन्थः सर्वकल्याणकारकः ॥